Volume I , Issue III
July - Sept. 2013

Reg. No.- MPHIN/28519/12/1/2012- TC
ISSN 2320-8767

Naveen Shodh Sansar

(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

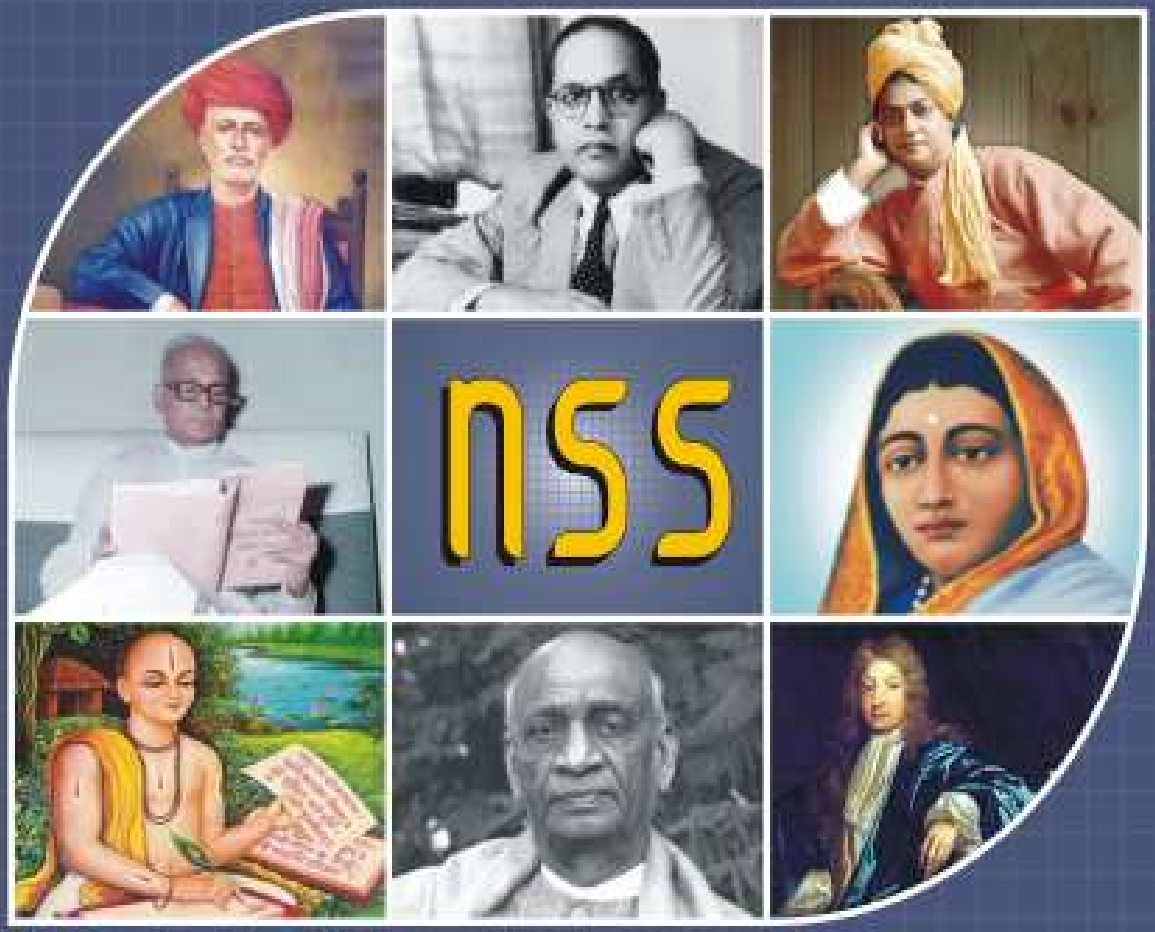

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795 - Vikas Nagar Extension 14/2 , NEEMUCH (M.P.) 458 441, (INDIA)
Mob. 09617239102 Email nssresearchjournal@gmail.com Website www.nssresearchjournal.com

सम्पादक की अभिव्यक्ति

सम्माननीय शोधार्थियों

सादर वन्दे,

मैं, आप सभी के असीम स्नेह, सहयोग एवं मार्गदर्शन से अभिभूत हूँ। आपसे अनेक बहुमूल्य सुझाव प्राप्त हो रहे है, जिन्हें हर कदम दर कदम लागू करने का हमारा प्रयास रहेगा।

विज्ञान, वाणिज्य, कला, गृह विज्ञान के साथ साथ चिकित्सा विज्ञान के भी शोध पत्र प्राप्त होना पत्रिका के लिये गौरव की बात है। मध्यप्रदेश, राजस्थान के साथ साथ छत्तीसगढ़ एवं महाराष्ट्र से भी शोध पत्र प्रकाशन हेतु प्राप्त हो रहे है जो हमारे जर्नल के लिये विशेष उपलब्धि है।रूपये के गिरते मूल्य एवं मूल्य वृद्धि ने हमें भी प्रभावित किया है अत: इस सदस्यता शुल्क विवरण में कुछ संशोधन करना हमारी मजबूरी बन गई है, किंतु फिर भी आपका सहयोग हमें पूर्ववत मिलता रहेगा, ऐसी मैं आपसे आशा करता हूँ। शोध पत्रों के उच्च स्तर व सामाजिक उपयोगिता हेतु शोध कार्य करने का विनम्र अनुरोध करता हूँ।

सहयोग हेतु बहुत-बहुत सधन्यवाद ।

आपका

Ashish Sharma

आशीष शर्मा

'नवीन शोध संसार' का छोटा-सा अनुरोध-

- पेड़-पानी, ऊर्जा और बेटी बचाएँ
- गुटखा, बीडी, सिगरेट एवं शराब को ना कहें, इनसे कैंसर होता है।

इस शोध पत्रिका को प्रकाशित करते हुए पूर्ण सावधानी बरती गई है, फिर भी किसी प्रकार की त्रुटि के लिये सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक जिम्मेदार नहीं होंगे। समस्त विवादों का न्यायक्षेत्र नीमच होगा।

'श्री गणेशाय नम:'

नवीन शोध संसार

Reg. No.- MPHIN/28519/12/1/2012- TC

ISSN 2320-8767

Volume I , Issue III, July - Sept. 2013

संरक्षक एवं अध्यक्ष निर्णायक मण्डल
डॉ. एल.एन. शर्मा 09425974314
प्राध्यापक वाणिज्य
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच

सम्पादक
आशीष शर्मा
मो. 09617239102

प्रबंध सम्पादक
अपूर्व शर्मा
मो. 08989670811

अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय मार्गदर्शक एवं संरक्षकगण

(1) **श्री अशोककुमार**
एम्प्लॉयबिलिटी ऑपरेशन्स मैनेजर एट एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लंदन (यूनाईटेड किंगडम)

(2) **श्री खगेन्द्रप्रसाद सुवेदी** सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट
पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू (नेपाल)

(3) **श्री जे.एन. कांसोटिया** प्रमुख सचिव
उच्च शिक्षा म.प्र. शासन, मंत्रालय, भोपाल (म.प्र.)

(4) **प्रो. डॉ. शिवनारायण यादव** (पूर्व कुलपति) प्राचार्य
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

'नवीन शोध संसार' का अगला अंक दि. 10 दिसम्बर 2013 को प्रकाशित होगा।

सदस्यता शुल्क विवरण

- संस्थागत वार्षिक- ₹ 1200/-
- शोधार्थी वार्षिक – ₹ 700/–
- आजीवन – ₹ 11000/-

शोधपत्र सहयोग राशि (सदस्यता अनिवार्य है)

- एक शोधार्थी- ₹ 800/- (प्रति शोध पत्र)
- दो शोधार्थी- ₹ 1600/- (प्रति शोध पत्र)
- तीन शोधार्थी- ₹ 2400/- (प्रति शोध पत्र)

(प्रति शोध पत्र अधिकतम 2000 शब्द/4 पेज)

अतिरिक्त प्रति पेज ₹ 200/-

(शोध पत्र सहयोग राशि में वार्षिक सदस्यता शुल्क सम्मिलित नहीं है)

प्रिन्ट - ... नीमच ...

अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 05

03. निर्णायक मण्डल 06

04. प्रवक्ता साथी 07

05. The Enhancement Of Lattice Polarization In Piezoelectricity And Electrostriction Coupling 09
Semiconducting Crystal (K.L. Jat, Arun Shukla)

06. Rotational Energy Transfer In HCl-Ar System And The Variation Of The Parameters 13
Of The Power-Gap Model (Akhilesh Jadhav)

07. Oxidative decarboxylation of tartaric acid by pyridiniumdichromate in aqueous 17
perchloric acid media- A kinetic and mechanistic study (B. K. Dangarh)

08. Advances in Microscopy - Confocal Microscopy (Sarika Tundele) 21

09. Exotic Plant Kigelia Africana Found In Dhar (M.P.) India 24
(Prof. Nirbhay Singh Solanki, Prof. S.C. Mehta)

10. Exprerience Of Fiberoptic Bronchoscopy In A Rural Hospital 26
(Dr. Namrata Dubey, Dr. H.G.Varudkar)

11. Application And Role Of Biofunctional Electronic Wearables To Improve The Quality Of Life 28
(Dr. Kanchan Dhingra, Dr. Shaleen Dhingra)

12. Use Of Style Manual : An Analysis Of Ph.D. Theses Submitted To DAVV, Indore 33
(Dr. Kishor John, Dijendra Gain)

13. Cultural Heritage of Panna- A Historic Mythological centre with 39
special reference to Pran Nath temple (Dr. Vinay Shrivastava)

14. Regression Analysis on Industries in the West Vidharba of Maharashtra (Dr. B.S. Zare) 42

15. A study Of Micro Finance And Self-Help Group (SHG)-Bank Linkage Program In India 46
(Dr. Dnyaneshwar N. Khadse)

16. Study Of General Sports Injuries Among Handball Players (Dr. Jogendra Singh, Pankaj Sahu) 50

17. Study Of Copper Coating Formed By Electroplating (Prof. Bindu Gandhi) 52

18. Air Quality In Urban Atmospheres And Its Biological Effects (Prof. Bindu Gandhi) 53

19. Farmer's Diversification into Non-Farm Employment Income in Rural Economy 56
(Dr. Rakesh Dhand, Dr. Balveer Singh Thakur,Dr. Kusum Vaskel)

20. Prevalence of Anemia in Working and Non-Working Menopausal Women 61
(Ankita Dixit, Dr. Meenakshi Mathur)

21. Animal Husbandry in Arid Area of Western Rajasthan During 2003-07 (Gunraj, Madan Mohan) 64

22. The World Of A Mentally Retarded Child (Dr. Rashmi Shrivastava) 67

23. Importance of Ergonomic in Daily Life & Workplace Design (Dr. Rashmi Verma) 70

24. Female Consciousness in Rama Mehta's "Inside the Haveli" (Dr. Kehkashan Khan) 72

25. The Mechanics of Myths in Girish Karnad's Nagamandala (Dr. Swati Chandorkar) 74

26. The Father Of English Criticism : DRYDEN (Dr. Supriya Paithankar) 76

27. Language and Technique in Anita Desai's Novels Baumgartner's Bombay 79
and Journey to Ithaca (Dr. Manisha Sharma)

28. The Women - Protagonists In Amitav Ghosh's Novel "The Hungry Tide": A Study 81
(Dr. Manisha Joshi)

29. Need Of Updation Of Banking & Other Related Laws (Dr. Aruna Sethi) 84

30. Important & Necessity of Registration of Marriage (Dr. Aruna Sethi) 87

31. Urban Growth & Urbanization In Madhya Pradesh (India) (Dr. Dharam Das Vishwakarma) 88

32. Creating Path Out of the Maze: Role of Value Based Teaching In Higher Education 92
(Iris Ramnani, Deepa Kumawat)

33. Four Indo-English Poets : Diasporic Contexts (Dr. Manisha Joshi) 95

34. Bottlenecks of Investing in India : Comparative Analysis of India and China 98
(Usha P Oomman, Dr. Sujata Parwani)

35. Economically important Regionally Threatened plant species (NIMAR & MALWA) 101
(Govind waskel)

36. A Strategic Model For Influencing Consumer Behaviour (Dr. Rashmi Gupta) 105

37. A Comparative study of mental health among adolescent and old age people (Dr. Rashmi Singh) ... 107

38. Social Perceptions On Women Education (Case Study Of Mandsaur, Madhya Pradesh) 109
(Hajra Member Sahab)

39. Violation Of human Rights And Women Education 111
(A Case Study Of Mandsaur, Madhya Pradesh) (Hajra Member Sahab)

40. Khap Panchayat : Custom V. Law (Critical Jurisprudential analysis on Khap Panchayat) 113
(Prachi Tyagi)

41. झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत हितग्राहियों को प्रदत्त वित्तीय सहायता/ऋण का विश्लेषण 116
(डॉ. लक्ष्मण परवाल, प्रो. गेन्दालाल चौहान)

42. प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत जातिगत आधार पर हितग्राहियों को प्रदत्त वित्तीय सहायता/ऋण 118
का विश्लेषण (म.प्र. के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. लक्ष्मण परवाल, प्रो. गेन्दालाल चौहान)

43. 'एस.ओ.एस.' बालग्राम के बालकों की पालन–पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ने 122
वाले प्रभाव का अध्ययन (डॉ. कल्पना पारीख)

44. आधुनिक भारत के निर्माण में समावेशी विकास (डॉ. रिखबचंद्र जैन) 126

45. ''वैदिक वाड्.मय में मानवमूल्य''वेदोऽखिलों धर्ममूलम्' (डॉ. भावना श्रीवास्तव) 128

46. ''मध्यप्रदेश के आर्थिक विकास में लद्यु उद्योगों का योगदान (एक मूल्यांकनात्मक अध्ययन्)'' 130
(डॉ एस.के. शर्मा, डॉ गणेश प्रसाद दावरे, डॉ एम.आर.महाले)

47. उज्जैन संभाग के कृषि वित में सहकारी बैंको के प्रदर्शन की क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको से तुलना (खुशबू राठी, डॉ. सुरेश कटारिया) ... 133

48. धर्मनिरपेक्षता के लिए कट्टरवाद और आतंकवाद एक चुनौती है (डॉ. प्रदीपसिंह राव) 135

49. औद्योगीकरण का आदिवासियों के सामाजिक–आर्थिक जीवन पर प्रभाव (डॉ. दिलीपसिंह मंडलोई) 138

50. ग्राम विकास का सशक्त माध्यम स्व–सहायता समूह–एक अध्ययन (डॉ. संजय खरे) 143

51. परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर के मध्य अन्तर्क्रिया का बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किये जाने 145
वाले व्यय पर प्रभाव का अध्ययन (डॉ. रश्मि वर्मा)

52. ''भुखमरी की समस्या तथा खाद्य सुरक्षा अधिनियम''(डॉ. आभा दीक्षित) 149

53. जल प्रदूषण की समस्या : कारण, प्रभाव एवं निदान (डॉ. लक्ष्मण परवाल) 152

54. खंगार राजवंश का इतिहास 'गढ़कुण्डार' (डॉ. कृष्णा मोरे, डॉ. एस.आर. अहिरे) 154
55. गरीबों के उन्नयन हेतु मध्य प्रदेश सरकार की योजनाएँ (नेहा चौरसिया) 155
56. Impact of Gender Difference and Level of Education on Academic Achivement Motivation ..... 159 (कमलेश उपाध्याय)
57. आर्थिक संकट निवारण में प्रमुख वैश्विक आर्थिक मंचों पर भारत की बढ़ती भूमिका (डॉ. सुनील मोरे) 162
58. सामाजिक उत्तरदायित्व तथा सामाजिक सुरक्षा के लिए नये कंपनी बिल एवं पेंशन बिल के प्रावधान – एक अध्ययन ..... 164 (डॉ. अमरकुमार जैन)
59. भारतीय समाज एवं धर्म व्यवस्था में अंग्रेजी हस्तक्षेप का परिणाम विप्लव 1857(डॉ. वन्दना मण्डोर) 166
60. सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन हेतु ज्योतिराव फुले द्वारा किये गये प्रयासों का अनुशीलन (डॉ. सौदानसिंह मकवाना) 168
61. ''आदिवासी ग्रामीण परिवारों की महिलाओं की व्यवसायिक सहभागिता का पारिवारिक..... 170 सम्बन्धों पर प्रभाव का अध्ययन'' (डॉ. मंजु शर्मा, ममता खपेड़िया)
62. मध्यप्रदेश सरकार की औद्योगिक नीति का आकलन (डॉ. मनोहरलाल गुप्ता) 172
63. छत्तीसगढ़ की खैरवार जनजाति का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन (डॉ. अनूप परसाई) 174
64. म.प्र. में ''पंच परमेश्वर योजना'' 2012 ग्रामसभा सशक्तिकरण हेतु एक सार्थक पहल (डॉ. लता जैन, डॉ. रामबाबु गुप्ता) . 176
65. भारत और एफडीआई :– एक अध्ययन (डॉ. विवेक कुमार पटेल, प्रो. नियाज अंसारी) 179
66. 'कन्या' : स्त्री जीवन का नया अध्याय (डॉ. लक्ष्मीकान्त चंदेला) 181
67. ''प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक कालगणना का विश्लेषण'' (डॉ. नितिन सहारिया, डॉ. सुरेश कुमार विमल)..... 184
68. चन्द्रकान्त देवताले की कविताएँ : सिसकियों का अनुनाद (उमेश कुमार चरपे) 186
69. '' भिलाली सामाजिक लोकगीतों की उपादेयता ''(धार जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. के.एस. बघेल) 188
70. स्त्री से मनुष्य बनती सौगंधी (डॉ. विनीता रघुवंशी) 190
71. मध्यकालीन मालवा के शिल्प एवं दस्तकारी कस्बों का ऐतिहासिक अध्ययन (डॉ. मलिका खान) 193
72. बढ़ती महंगाई का समाज व्यवस्था पर प्रभाव (प्रो. प्रिशिला अन्द्रेय्स) 194
73. आदिवासियों की वर्तमान परिस्थितियॉ और विकास की आवश्यकता (डॉ. आर.के. यादव, प्रो. गीता मेहरा) 195
74. मुक्तिबोध की प्रासंगिकता (डॉ. श्रीमती सरोज खरे) 196
75. म.प्र.की बैगा जनजातियों के लिए परिवार मूलक योजना का लाभ (उमरिया जिले के विशेष संदर्भ में)..... 198 (डॉ. विवेक कुमार पटेल, डॉ. राजेश कुमार)
76. महिला शिक्षा : महिला सशक्तिकरण की आधारशिला (डॉ. आशा साखी गुप्ता)..... 201
77. रतलाम जिले के ग्रामीण परिवारों में सामाजिक परिवर्तन (डॉ. राजश्री शाह)..... 203
78. सन् 1857 की क्रांति में बुन्देलखण्ड का योगदान (सागर एव दमोह जिले के विशेष सन्दर्भ में) (डॉ. विजय त्रिपाठी)..... 204
79. इन्दौर राज्य की कुशल प्रशासक अहिल्याबाई होल्कर (डॉ. हेमलता आचार्य)..... 207
80. अश्वगंधा – औषधीय पादप (डॉ. मन्जुलता शर्मा,प्रतिमा श्रीवास्तव, पुनीत शर्मा) 209
81. भारतीय लोक चित्रकला –'बुन्देली लोक चित्रकला के संदर्भ में' (डॉ. यतीन्द्र महोबे) 211
82. टी.वी. विज्ञापन प्रसारण का महिलाओं एवं बच्चों पर प्रभाव (डॉ. अंजना जैन) 213
83. सूचना क्रांति ग्रामीण महिलाओं की बदलती स्थिति ''दूरदर्शन के संदर्भ में (प्रो. प्रेमलता तिवारी) 215
84. आदिवासी– बारेला उपजाति की अनोखी परम्पराएँ खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में (प्रो. आर. आर. आर्य) 218

85. ''रामचरित मानस में नारी विमर्श'' (डॉ. बीना चौधरी) 220
86. जयप्रकाश नारायण और भारतीय समाजवाद (डॉ. अनिल कुमार जैन) 223
87. दलित चेतना के अग्रदूत – डॉ. अम्बेडकर (डॉ. पंकज माहेश्वरी) 225
88. भूमण्डलीकरण और ट्रिप्स – एक एतिहासिक व राजनैतिक दृष्टि (डॉ. मंगलेश्वरी जोशी) 227
89. मप्र के ग्रामीण समुदायों में मध्यम वर्ग एवं सामाजिक परिवर्तन (नीमच जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. संजय जोशी) 228
90. धूम्रपान का युवाओं के चिंता स्तर पर प्रभाव का मनोवैज्ञानिक अध्ययन (डॉ. रेखा बख्शी) 230
91. नवीन भारत के निर्माता : लौह पुरूष सरदार पटेल (डॉ. अनिल कुमार जैन) 232
92. जनमाध्यमों से सामाजिक परिवर्तन (डॉ. सोनाली नरगुन्दे) 234
93. समाजवादी चिन्तक स्वामी विवेकानन्द (डॉ. सुनीता त्रिपाठी) 237
94. सामाजिक वानिकी और पर्यावरण (डॉ. अर्चना भार्गव) 239
95. लोकतंत्र और राजनीतिक सुधार (डॉ. अनिल दीक्षित) 241
96. 1857 का स्वतंत्रता संग्राम ''जनक्रांति की वास्तविकता एवं दलित'' (डॉ. वन्दना मालवीया) 243
97. ई–कामर्स में कॅरियर के अवसर (डॉ.लक्ष्मण परवाल) 245
98. भारत में ई–न्याय पद्धति (डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन) 246
99. ''उच्च शिक्षा में गुणवत्ता एक चुनौती'' (डॉ. सुमन रोहिला) 248
100. राजशाही में लेखा व्यवस्था विधान (कौटिल्य के अर्थशास्त्र के संदर्भ में) (डॉ. विम्मी बहल, डॉ. अनिल शिवानी) 250
101. शौर्य एवं पराक्रम के प्रतीक – आल्हा – ऊदल (डॉ. वन्दना जैन) 253
102. भारत की अर्थव्यवस्था में शहरी–ग्रामीण अंतर को कम करने में ग्रामीण पर्यटन की भूमिका (डॉ. बिन्दू श्रीवास्तव) 255
103. समाजवादी दर्शन : एक दृष्टि (डॉ. पुष्पा कपूर) 257
104. प्राचीन वर्णाश्रम व्यवस्था में नारी शिक्षा की समीक्षा (प्रो. के.आर. सूर्यवंशी) 258
105. डॉ. बाबा साहेब का दर्शन– समतामूलक समाज की स्थापना (डॉ. एच.एल. फुलवरे) 260
106. मालवी कहावतों में कृषि विज्ञान (कु.रचना जैन) 261
107. आलेख: भारत में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के अंतर्गत गठित स्व सहायता समूह का योगदान (डॉ.आर.सी. गुप्ता) 263
108. अपभ्रंश साहित्य में भारत की सभी भाषाओं का अधिकार : एक अवलोकन (डॉ. अमित शुक्ल) 265
109. आलेख: मध्यान्ह भोजन योजना का मूल्यांकन (म.प्र. के विशेष सन्दर्भ में) (डॉ. रविप्रकाश पाण्डेय) 266
110. आलेख : व्यक्तित्व विकास में शिक्षकों की भूमिका (डॉ. हरिकृष्ण बडोदिया, डॉ. किशोर कुमार डावर) 268
111. आलेख : ''गुणवत्ता एवं बेस्ट प्रेक्टिसेस'' में पाठ्यक्रम के पहलू या दृष्टिकोण का महत्व (प्रो. एस. के. सिकरवार) 270
112. महिला सशक्तिकरण दशा एवं दिशा– मानव अधिकार एवं उनके अनुपालन के सन्दर्भ में (डॉ. सीताराम गोले) 273
113. सोश्यल नेटवर्किंग एवं समाज (डॉ. निशा जैन) 275
114. आलेख: आध्यात्मिकता और आधुनिकता (दिनेश तिवारी) 277
115. तृतीय संस्करण के सम्माननीय सदस्यों की सूची 278
116. Membership Cum Author's Bio-data Form 282
117. COPYRIGHT AGREEMENT FORM: 283
118. Guideline for Authors/Research Scholars 284

****

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल (Regional Editor Board) मानद्

(01) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(02) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव .... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.)
(03) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(04) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(05) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात)
(07) प्रो. डॉ. तपन चौरे ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, विक्रम विश्व विद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र)
(09) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा)
(10) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर
(11) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(13) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(14) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र)
(16) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. शिव कुमार दुबे ..... प्राध्यापक, भूगोल, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्नाटक)
(20) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.)

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board) मानद्

(01) प्रो. डॉ. संदीप जोशी ..... निदेशक, म.प्र. सामाजिक शोध संस्थान उज्जैन (म.प्र.)
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.)
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.)
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय .... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(07) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्व विद्यालय भोपाल (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. बी.के. मेहता ..... अध्यक्ष, रसायन एवं जैविक रसायन अध्ययनशाला, विक्रम विश्व विद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. एस.एस. चौहान ..... उपप्राचार्य,NIMS इन्यू ऑफ मैनेजमेंट, अजमेर (राज.)
(11) प्रो. डॉ. बी.एल. हिरण ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, श्री मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(12) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(15) प्रो. डॉ. के.एल. जाट ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:– ..... **प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)
भौतिकी:– ..... **प्रो. डॉ. एन.के. डबकरा**, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
रसायन:– ..... **प्रो. डॉ. बी.के. दानगढ़,** समन्वयक राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, केन्द्र नीमच (म.प्र.)
वनस्पति:– ..... **प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
प्रो.डॉ. अखिलेश आयायी, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
प्राणिकी:– ..... **प्रो.डॉ. आर.के. भट्ट,** प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
प्रो.डॉ. मंजु शर्मा, एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (म.प्र.)
सांख्यिकी:– ..... **प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
सैन्य विज्ञान:– ..... **प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
जीव रसायन:– ..... **डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
भूगर्भ शास्त्र:– ..... **प्रो. डॉ. वी. कुलश्रेष्ठ,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
चिकित्सा विज्ञान:– ..... **डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :– ..... **प्रो. डॉ. बी.एस. मक्कड़,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
प्रो. डॉ. प्रतापराव कदम, प्राध्यापक, माखनलाल चतुर्वेदी शा.कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)

**** प्रबंध संकाय ****

प्रबंध :– ..... **प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा ,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:– ..... **प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:– ..... **प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
राजनीति:– ..... **प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
समाजशास्त्र:– ..... **प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
हिन्दी:– ..... **प्रो. डॉ. राजीव शर्मा,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय इन्दौर (म.प्र.)
अंग्रेजी:– ..... **प्रो. डॉ. अजय भार्गव**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
संस्कृत:– ..... **प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
इतिहास:– ..... **प्रो. डॉ. मदनलाल पंवार,** पूर्व प्राचार्य शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
भूगोल:– ..... **प्रो. डॉ. देवेन्द्र कौर,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
दर्शनशास्त्र:– ..... **प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
मनोविज्ञान:– ..... **प्रो. डॉ. ए.आर. लोहिया,** राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
चित्रकला:– ..... **प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)

**** गृह विज्ञान संकाय ****

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** प्राध्यापक, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
मानव विकास:– ..... **प्रो.डॉ. मीनाक्षी माथुर,** प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
प्रो.डॉ. आभा तिवारी, विभागाध्यक्ष शासकीय एम.एच. महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **प्रो.डॉ. मंजु शर्मा,** प्राध्यापक, शासकीय माता जीजाबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ.बी.आर. नलवाया..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(05) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(06) प्रो. क्षीतिज पुरोहित..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(07) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर..... शासकीय महाविद्यालय, जावद (म.प्र.)
(08) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ.सी.एम. मेहता ..... शासकीय महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.)
(10) प्रो. डी.एस. फिरोजिया ..... शासकीय महाविद्यालय, रामपुरा (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ. राजेंद्र श्रीवास्तव..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ.गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ.सुरेशचंद्र जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर (म.प्र.)
(20) प्रो. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. नटवरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ.रवींद्र कान्हेरे..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)
(23) प्रो. डॉ. बी.एस. सिसोदिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. एन.एस. भाटी ..... शासकीय महाविद्यालय, अलीराजपुर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. मंजुला जोशी ..... शासकीय महाविद्यालय, अंजड़ (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. अरूणा दुबे ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(30) प्रो. आभा दीक्षित..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(32) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. डॉ. संजय अग्रवाल..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. लता जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(37) डॉ. दिलीप गर्ग ..... शासकीय महाविद्यालय पचोर, जिला–राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली
(40) श्रीमती सुमन वशिष्ठ..... राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(41) प्रो. प्रदीप सिंग ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़
(42) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(43) डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(44) प्रो. डॉ. के.एल. साहू ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)

(46) प्रो. डॉ. आर.के. जैन ..... जिला संगठक, राष्ट्रीय सेवा योजना, राजगढ़, जिला–धार (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. शशीप्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(48) प्रो. डॉ. विवेक कुमार पटेल ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(50) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. विनीता रघुवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(53) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(54) प्रो. डॉ. कहकशा खान ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(55) प्रो. डॉ. अमरकुमार जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. आनंद तिवारी ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(60) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल (म.प्र.)
(61) डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(62) डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(64) प्रो. डॉ. आर.सी. गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना (म.प्र.)
(65) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(66) डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(67) डॉ. अदिति देसाई ..... श्री अरविन्दो इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साईन्स, इन्दौर (म.प्र.)

****

मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा विभाग, भोपाल द्वारा 'स्व. श्री लक्ष्मणसिंह गौड़ पुरस्कार' से

प्रो. डॉ. भावनाजी श्रीवास्तव
शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

एवं

प्रो. डॉ. लक्ष्मणजी परवाल
शासकीय विवेकानन्द वाणिज्य महाविद्यालय , रतलाम (म.प्र.)

को **सम्मानित होने** पर

हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ

शुभेच्छू– 'नवीन शोध संसार' परिवार, नीमच

The Enhancement Of Lattice Polarization In Piezoelectricity And Electrostriction Coupling Semiconducting Crystal

K.L. Jat * Arun Shukla **

Abstract

Using the coupled mode scheme, the expression for lattice displacement (**u**) is obtained in various couplings for magnetized semiconducting crystal. The origin of nonlinear interaction lies in nonlinear lattice polarization arising from the crystal properties such as piezoelectricity and electrostriction stain.

The effect of wave number, on the lattice displacement in various couplings has been critically analyzed. Numerical estimates are made for an n-InSb crystal at 5K duly irradiated by a pulsed 10.6 μ m (wave length) CO_2 laser. The analysis shows that **u** can be significantly enhanced in semiconductors by the proper selection of wave number, which are used in material for the fabrication of nonlinear optical devices. The results predicts that the phenomena of resonance is occurs in lattice displacement with wave number in piezoelectricity and electrostriction coupling.

Key words :Nonlinear optics ,Piezoelectricity, Electrostriction strain , Polarization, and Semiconductor.

Introduction

The origin of induced lattice polarization (ILP) arising the crystal properties such as piezoelectricity and electrostriction. A enhancement of ILP has always been a subject of great interest in nonlinear optics because ILP play an important role in fabrication of efficient optoelectronic devices and provide important information about optical properties of the materials[1,2]. Semiconductors offer considerable flexibility for optoelectronic devices because (i) carrier concentration times can be altered through design of materials and device structure; (ii) either absorption changes or refractive index changes can be utilized ; (iii) devices are integrative with other optoelectronic components[3].

The origin of fundamental nonlinear phenomena (for example: frequency conversion, frequency tuning, parametric oscillation/amplification, filtrations, pulse compression and cascaded nonlinear process) , lies in second and third order optical susceptibility via lattice vibrations has been utilised in the fabrication of fundamentals optoelectronic devices[4,5]. Optical nonlinearities of semiconductors can be modified by externally applied electric and magnetic fields. This property can easily be exploited to understand the mechanism involved in several nonlinear process such as electro-optic and magneto-optic effects[6,7].

Electrostriction is the tendency of the material to become compressed in the response of an electric field. Electrostriction is of interest both as mechanism leading to a third order nonlinear optical response through lattice polarization and as a coupling mechanism that lead to stimulated Brillouin scattering which is often an extremely strong process. For the case of optical fibers, Buckland and Boyd (1996,1997) found that electrostriction can make an approximately 20% contribution to the third order susceptibility via induce lattice polarization.

For electromagnetic treatment , we assume that there are many photons in the pump wave and it can be described by the plane wave. The pump wave produces stress in the medium and the linear relationship between stress and electric field described by piezoelectricity. The origion pf piezoelectricity lies in the first order force (f = $\beta \frac{\partial E}{\partial x}$) , β is the piezoelectric coefficient. Here it is worth mentioning that the piezoelectric behaviour of the ferroelectric materials has been treated extensively due to their application in sensors, electromechanical actuator and acoustic transducers [8-9].

It is a well known fact that the piezoelectric force drives the acoustic wave in the crystalline medium. The presence of an acoustic wave (ω_a , k_a) modulates the optical dielectric constant and thus can cause an exchange of energy between the electromagnetic waves whose frequencies differ by an amount equal to acoustical frequency.

Theoretical Formulation :

We consider a sample irradiated by a strong pump wave with photon energy slightly below the band gap energy. This assumption allows the optical properties of the

*** Department of Physics, Swami Vivekanand Govt. Post Graduate College , Neemuch (M.P.) India**
**** School of studies in physics,Vikram UniversityUjjain(M.P.) India**

pump wave is $\frac{\partial u}{\partial x}$, the net force acting in positive x direction on a unit volume may be defined as

$$F_e = \frac{\partial}{\partial x}\left[-\beta E_1 + \frac{\gamma}{2}|E_1|^2\right], \quad (1)$$

where β and γ are the piezoelectric and electrostriction coefficients of crystal, respectively. The equation of lattice motion for u(x, t), can be expressed as :

$$\rho\frac{\partial^2 u}{\partial t^2} - C\frac{\partial^2 u}{\partial x^2} + 2\Gamma\frac{\partial u}{\partial t} = \hat{x}F_e \quad , \quad (2)$$

where ρ , C and Γ are the mass density, elastic constant and phenomenological damping parameter of the crystal, respectively. Here , we assumed that the acoustic wave is in the form of a plane wave traveling in x direction with

$$\vec{E}_2 = E_0 \exp\left[i(\omega_2 t - k_2 \hat{x})\right] \quad , \quad (3)$$

The acoustic wave scatters the incident pump wave at a frequency ω_3 corresponding to the frequency of excitation of the crystal, which in turn modulate the optical dielectric constant and thus can cause an exchange of energy between the electro magnetic waves whose frequencies differ from each other by an amount equal to the acoustic phonon frequency. The field associated with the scattered electro magnetic wave can be expressed as .

$$\vec{E}_3 = E_3 \exp\left[i(\omega_3 t - k_3 \hat{x})\right]$$

The equation of motion of charge carriers in the presence of optical (pump wave) and external dc magnetic field is given by zero and first order momentum transfer equations as

$$\frac{\partial \vec{v}_0}{\partial t} + \nu\vec{v}_0 = -\frac{e}{m}\vec{E}_e, \quad (4a)$$

$$\frac{\partial \vec{v}_1}{\partial t} + \nu\vec{v}_1 + \vec{v}_1\frac{\partial \vec{v}_0}{\partial x} = -\frac{e}{m}\left[\vec{E}_1 + \vec{v}_1 X \vec{B}_q\right], \quad (4b)$$

where v_0 and v_1 are the equilibrium and perturbed fluid velocities of an electron with effective mass m and charge –e , respectively; ν is the electron collision frequency . $\vec{E}_e = -\frac{e}{m}\left[\vec{E}_1 + \vec{v}_0 X \vec{B}_q\right]$, represents the effective field which include the lorantz force ($\vec{v}_1 X \vec{B}_q$) due to external magnetic field. At very high frequency, the effective field exerts strong force on electrons due to their low effective mass.

The other basic equations of the formulation are

$$\frac{\partial n_1}{\partial x} + n_0\frac{\partial v_1}{\partial x} + n_1\frac{\partial v_0}{\partial x} + v_0\frac{\partial n_1}{\partial x} = 0 \quad , \quad (5)$$

$$\frac{\partial E_{sc}}{\partial x} = \frac{1}{\varepsilon}\left[n_1 e - \beta\frac{\partial^2 u}{\partial x^2} - \gamma\frac{\partial^2 u}{\partial x^2}E_1\right], \quad (6)$$

equation (5) is the continuity equation, in which n_0 and n_1 are the equilibrium and perturbed carrier densities, respectively. The induced special electric field E_{sc} due to the density perturbation, piezoelectric and electrostriction strain can be determined by Poisson's eq.(6), in which ε is dielectric function of semiconductor expressed as $\varepsilon_0\,\varepsilon_l$, with , ε_0 and ε_l being the absolute permittivity and static dielectric constant of the crystal, respectively.

The origin of optical non linearity via lattice vibrations lies on the interaction between the acoustics wave and the conducting electrons in the presence of dc magnetic field. The condition implies that sound wavelength is much greater than average distance the

sample to be influenced considerably by the free charge carriers and to remain unaffected by the photo-induced inter band transition mechanism. The nonlinearity in the semiconducting crystal arises due to the force exerted by the laser wave. Our theoretical formulations is based on the well known hydro dynamical model of semiconductor plasma (in which, wave length associated with the lattice vibrations is much larger than the lattice spacing). The time variations in the pump field give rise to piezoelectricity and electrostriction strain and thus derive the acoustic wave in the crystal. Let the deviation of a lattice point x from its equilibrium position is u(x, t), so that the strain along the direction of the

electrons travels between collisions so that the motion of the carriers under the influence of the external fields is averaged out. In a magnetized doped semiconductor, the equations of density fluctuation of the driven electron- cyclotron plasma wave is obtained from eqs. (1) – (6) and the linearised perturbation theory as :

$$\frac{\partial^2 n_1}{\partial t^2}+\nu\frac{\partial n_1}{\partial t}+\omega_p^2\delta_1 n_1-i\frac{k^3\omega_p^2\delta_1}{2\rho e|D|^2}\left[\beta\gamma E_1E_3^*-\gamma^2|E_1|^2E_3\right]=\frac{e}{m}\delta_0E_1\left(\frac{\partial n_1}{\partial x}+ik_1n_1\right) \quad (7)$$

where $\omega_p=\sqrt{n_0e^2/m\varepsilon}$ (electron-plasma frequency) ,

$\omega_c=-\frac{e}{m}B_q$ (electron cyclotron frequency) ,

$\delta_0=1-\frac{\omega_c^2}{\Delta_0^2+\omega_c^2}$,

$\delta_1=1-\frac{\omega_c^2}{\Delta_1^2+\omega_c^2}$,

$\Delta_0=\nu-i\omega_1$, and $\Delta_1=\nu+i(\omega_3-ik_3v_1)$

$D^2(\omega,k)\left[=(\omega_2^2-k_2^2v_2^2+2i\Gamma\omega_2\right]$ (represents the acoustic dispersion , $v_2\left[=(C/\rho)^{0.5}\right]$ is the acoustic velocity in the crystal.

In deriving Eq. (7) , the Doppler shift is neglected under the assumption $\omega_1\rangle\rangle k_2v_2$. Intransparent regime (i.e. $\hbar\omega_1\langle\langle\hbar\omega_g$) one can safely neglect the anti stokes field and only the Stokes field of scattered electromagnetic field need be considered.

The resonant stokes component of the scattered electromagnetic wave can be singled out from various waves by employing phase matching condition

$\omega_3=\omega_1-\omega_2$ and $k_3=k_1-k_2$.

Using Eq.(2) one can easily obtained the lattice vibrational displacement as:

$$\vec{u}=\frac{(-ik_2)(-\beta E_1+\frac{\gamma}{2}E_1^2)}{(\omega_c^2-k_2^2v_2^2)+2i\Gamma\omega_2} \quad (8)$$

Using Eq.(8) one can easily obtained the lattice amplitude for both couplings (Piezoelectric and Electrostrictive strain) and real and imaginary parts of **u** as :

$$\left|\vec{u}\right|_{both}(=\left|\vec{u}\right|_r+\left|\vec{u}\right|_i)=k_2(-\beta E_1+\frac{\gamma}{2}E_1^2)/|D|^2 \quad (9)$$

where $$\left|\vec{u}\right|_r=k_2\Gamma\omega_2\left(-\beta E_1+\frac{\gamma}{2}E_1^2\right)/|D|^2$$

(10)

and

$$\left|\vec{u}\right|_i=k_2\left(-\beta E_1+\frac{\gamma}{2}E_1^2\right)(\omega_2^2-v_2^2k_2^2)/|D|^2 \quad (11)$$

The different aspect of $\left|\vec{u}\right|$ for various situation for practical interest are obtained as :

(1) For piezoelectric coupling ($\beta\neq0,\gamma=0$)

$$\left|\vec{u}\right|_\beta=k_2\beta E_1/(|D|^2) \quad (12)$$

(2) For electrostrictive strain coupling ($\beta=0,\gamma\neq0$)

$$\left|\vec{u}\right|_\gamma=k_2\gamma E_1^2/(2|D|^2) \quad (13)$$

Results and Discussion

The analytical results obtained above have been applied to a semiconductor such as n–type InSb. The physical parameters are used as

$E_1=10^5V/m,\beta=0.054\,Cm^{-1},\gamma=5X10^{-10}Fm^{-1}$, $\varepsilon_0=8.85X10^{-12}F/m, c_l=3X10^8m/sec$, $e=1.6X10^{-19}C, m=0.015X9.1X10^{-31}Kg, n_0=2.44X10^{24}m^{-3}, \eta_0=3.9, \rho=5.8X10^3Kgm^{-3}$, $v_2=4.8X10^3ms^{-1}, \omega_g=1.78X10^{14}s^{-1}, w_2=10^{11}s^{-1}, k_0=5.92X10^7m^{-1}, k_2=2.08X10^8m^{-1}$ and $\varepsilon_l=15.8$ $2X10^{11}s^{-1}, \omega_1=1.77X10^{14}s^{-1}$, $\nu=2X10^{11}s^{-1},\Gamma=2X10^{10}s^{-1}$.

The nature of variation of lattice displacement ($\vec{u}$) in various coupling with wave number (k) is tabulated in table no. 01 . It is found that wave number plays a crucial role in modifying the lattice displacement. both coupling ($\vec{u}_b$) increases with k and gets resonance at $k\approx21X10^7m^{-1}$ and again decreases on higher values of k. This feature indicates that resonance state is obtained by adjusting the values of k. Table no. 01 also Shows the variation of lattice displacement in piezoelectricity coupling ($\vec{u}_\beta$)

and in electrostriction coupling ($\vec{u}_{\gamma}$) with k. It shows that ($\vec{u}$) also varies as in both couplings , i.e. piezoelectricity is more effective in compared to the electrostriction coupling. In these cases the resonance state are also occurs at $k \approx 21X10^{7} m^{-1}$.

Conclusions :

The results predicts that the phenomena of resonance is occurs in lattice displacement in piezoelectricity and electrostriction coupling with wave number (k). It is observed that the piezoelectricity strain is very large in compared to electrostriction couplings. At resonance the maximum value of lattice displacement is $6X10^{-34} m$ at wave number $2.1X10^{8} m^{-1}$.

The above results are in good agreement with the experimental observations. It may be stated that the present analytical investigation of lattice displacement in piezoelectricity and electrostriction coupled mechanism in magnetized semiconductors establishes the usefulness of the fabrication of parametric devices and in developing the new laser sources

References:

1. Royd R.W., nonlinear optics,3/e,academic press(USA) P.69, 2008.
2. Bloembergen N., nonlinear optics, Benjamin, New York(1964).
3. Shen Y.R, The principal of nonlinear optics, pp. 117-140, John wiley, New York (1984).
4. Seeger K., Semiconductor physics, p.183,springer Berlin (1989).
5. Sen P.K., Sen P., and Vivek S., J.phys. D: Appl.phys 29, 1 (1996).
6. . Jat K.L., phys. stat.sol.(b) 203 . 479 (1997).
7. Nimje N., Yadav N. and Ghosh S., phys.Lett.A, 376, 850-853 (2012).
8. Yariv A., A quantum eletronics (New York.Wiley,1975), PP. 491-497.
9. Shukla A. and Jat K.L., Res. J. Physical sci. Vol.1(3), 1-8, April (2013).

Table no. 01 : Show the Variation of lattice polarization in both couplings ($\vec{u}_{b}$) , in piezoelectricity coupling ($\vec{u}_{\beta}$) and in electrostriction coupling ($\vec{u}_{\gamma}$) with wave number(k).

Table No. 1

$k(X10^{7} m^{-1})$	$u_b(X10^{-36} m)$	$u_{\beta}(X10^{-36} m)$	$u_{\gamma}(X10^{-40} m)$
2	0.1098	0.1098	0.5085
3	0.1686	0.1687	0.7.808
4	0.2323	0.2325	1.076
5	0.3033	0.3035	1.405
6	0.3843	0.3845	1.780
7	0.4791	0.4794	2.219
8	0.5928	0.5931	2.74
9	0.7325	0.7328	3.393
10	0.9088	0.9093	4.210
11	1.138	1.138	5.271
12	1.445	1.446	6.695
13	1.874	1.875	8.679
14	2.499	2.500	11.58
15	3.467	3.468	16.06
16	5.085	5.087	23.55
17	8.102	8.106	37.53
18	14.75	14.76	68.32
19	34.29	34.30	158.8
20	139.4	139.4	645.4
21	**610.0**	**610.3**	**2826.0**
22	79.93	79.97	370.2
23	25.09	25.10	116.2
24	11.93	11.93	55.25
25	6.913	6.916	32.02
26	4.492	4.494	20.81
27	3.144	3.146	14.56
28	2.319	2.320	10.74
29	1.777	1.778	8.231
30	1.403	1.404	6.498

Rotational Energy Transfer In HCl-Ar System And The Variation Of The Parameters Of The Power-Gap Model

Akhilesh Jadhav *

Abstract

The computed integral inelastic cross section, $\sigma(j_i \to j_f)$, for various value of initial translational energy (T_i), and initial (i) and final (f) rotational states (j) for HCl-Ar system have been used to test the validity of the two parameter proposed power –gap law :

Further it is noted that perameter γ increases with the increase in j_i but decrease with the increase in T_i. The reverse trend is observed for the parameter α . The computed cross section for $HCl - {}^4Ar$ (${}^4Ar$ is a hypothetical atom having mass equal to 4 units.) have also been analysed to study the variation of parameters with mass. It is found that γ increases and α decreases with the increase in mass. The result are compared with those for $HF - Ne, Ar \text{ and } CO_2 - Ar.$

Introduction

In recent years the study of rotational energy transfer (RET) in molecular collisions has generated widespread interest[1]. One of the important outcomes of recent experimental and computational efforts has been the evolution of empirical and semi empirical scaling and fitting laws [2-28] which attempts to fit the entire matrix of integral inelastic cross section (IICS) $\sigma(j_i \to j_f)$ for the transition from molecular rotational state j_i to state j_f in terms of a few parameters.

One of the most successful fitting law is the power-gap (PG) law that may be expressed as [9]

$$\sigma(j_i \to j_f) = \alpha(2j_f + 1)\left(\frac{T_f}{T_i}\right)^{1/2} |\Delta E|^{-\gamma} \quad \ldots\ldots\ldots\ldots (1)$$

Here $|\Delta E|$ is the rotational energy change of the molecules due to collision with an atom having initial relative translational energy T_i. T_f denotes the translational energy of the system after collision, and α and γ are fitting parameters which may depends on T_i and j_i but not on j_f .

The validity of equation (1) has been noted for a large number of systems over a wide range of T_i , j_i and j_f [5, 6, 9, 10, 19, 20] . Burnner et. al.[10] attempted to drive Eq(1). Using a few assumptions they show that the value of γ is nearly 1.2.

In view of its validity for a large number of systems it is very important to study the dependence of fitting parameters α and γ on the nature of the system and on T_i and j_i . Agrawal and Agrawal[5] studied the dependence of such fitting parameters on T_i and j_i for $CO_2 - Ar$ system by fitting the computed cross section for T_i , j_i and j_f in the range $0.069 \leq T_i \leq 0.425\ (eV), 1 \leq j_i \leq 33$ and $1 \leq j_f \leq 65$. Polyani and Sathyamurthy[23] performed quasi-classical trajectory (QCT) calculations to compute IICS for HCl-He, Ar systems and studied the dependence of the fitting parameter c of the exponential gap (EG) law [14-16] that states as follows:

$$\sigma(j_i \to j_f) = b\,(2j_f + 1)\left(\frac{T_f}{T_i}\right)^{1/2} exp(-c\,|\Delta E|) \quad \ldots.(2)$$

Here b and c are fitting parameters. The elaborate work of Polyani and Sathyamurthy[23] include not only the study of variation of parameter c with j_i , T_i and potential

* Department of Physics, Government J. Yog

reduced mass but would also lead to a direct comparison of parameter c of EG law and γ of PG law.

In this paper, we first report the results of our analysis of IICS data for HCl-Ar, HCl-^{4}Ar system. The results are then discussed and compared with those for other systems such as CO_2-Ar and HF-X (X=Ne, Ar).

Result and Discussion

Eq (1) may be rewritten in the following form-

$$y = \gamma x + d \quad (3)$$

Where $y = \ln\left[\sigma(j_i \to j_f)\left(\frac{T_f}{T_i}\right)^{1/2} / (2j_f + 1)\right]$ (4)

$$x = ln|\Delta E| \quad (5)$$

And

$$d = \ln a \quad (6)$$

For each set of T_i , j_i and interaction potential Y versus X curve has been plotted using the $\sigma(j_i \to j_f)$ values given by Polanyi and Sathyamurthi[23]. A least square straight line fit is then obtained. Typical plots are shown in Figs, 1 and 2. From the intercept and slops of the least square fit d and γ have been determined. These are listed in Table 1.

Three sets of data listed in group A of the table show j_i dependence of γ and a. We see that γ increases and a decreases with the increase in j_i. Similarly, groups A, B1, B2, and B3 give T_i dependence of γ and a. These seven sets of data clearly indicate the decrease in γ and increase in a with the increase in T_i. Group C demonstrates mass dependence of γ and a. we see that γ increases and a decreases with the increase in mass.

Agrawal and Agrawal[5] analysed IICS data for CO_2-Ar system. Their results show reverse trend i.e. they noted increase in γ and decrease in a with the decrease in j_i or increase in T_i. However, one feature is common to both the systems. The present study on HCL-Ar as well as that of Agrawal and Agrawal[5] on CO_2-Ar indicates that the factors responsible for increasing γ decrease a and vice versa. This information may be helpful in developing a theoretical model to explain the origin of the power-gap law.

Barnes et.al.[19-20] studied the power-gap law by analysing their experimental IICS data on HF-X (X=Ne, Ar). They found that γ is weakly dependent on T_i and the collision partner. This behavior is different from that of HCL-Ar system noted here. This difference may probably lead to the importance of the moment of inertia of the molecule in varying the parameter γ.

The superiority of the PG law over the EG law has been demonstrated by several studies[9,24-25]. A comparison of the present analysis of the PG law and that of the EG law by polanyi and Sathyamurthy[23] using same IICS data also reveals the superiority of the PG law.

Polanyi and Sathyamurthy[23] found that the EG law is valid for this system only for moderate value of $|\Delta E|$ ($|\Delta E| \sim 2K.$ Cal/ mole).

The parameter c of Eq. (2) (EG law) is analogous to the parameter γ of Eq. (1) (PGlaw). Polanyi and Sathyamurthy[23] observed that c decrease with the increase in T_i and is weakly dependent on j_i. This decrease in c with the increase in T_i corresponds to the decrease in γ with T_i corresponds to the decrease in γ with T_i noted here.

Determination and analysis of more experimental and theoretical data over a wide range of T_i, j_i, j_f, and the collision partner would be useful in studying the variation of γ and a for better understanding of the mechanism of RET.

Table – 1: Variation of parameters γ and a with T_i , j_i and reduced mass (Units of γ and a are such that in Eq. (1) $|\Delta E|$ is in eV and σ is in Å

Group	System	Potential Surface	J_i	T_i/eV	γ	$a*10^3$
A	HCL+Ar	NG-IV[a]	0 4 8	0.654 0.654 0.654	1.00 1.32 1.61	5.79 2.57 1.19
B_1	HCL+Ar	GGK[b]	8 8 8	0.218 0.654 1.308	1.86 1.50 1.21	0.408 1.40 3.37
B_2	HCL+Ar	GGK(-W)[c]	8 8	0.218 0.654	1.65 1.35	0.733 2.08
B_3	HCL+Ar	NG-I[a]	8 8	0.654 1.308	1.99 1.42	0.414 2.25
B_4	HCL+Ar	NG-IV[a]	8 8	0.654 1.308	1.61 1.25	1.19 3.80
C	HCL+^{4}Ar HCL+Ar	GGK[b] GGK[b]	8 8	0.654 0.654	1.18 1.50	2.88 1.40

(a) Neilsen-Gordon potential [Reference (23), (27) and (28)]
(b) Green's gordon-Kim Potential [Reference (23) and (29)]
(c) GGK Potential with No well [Reference (23)]

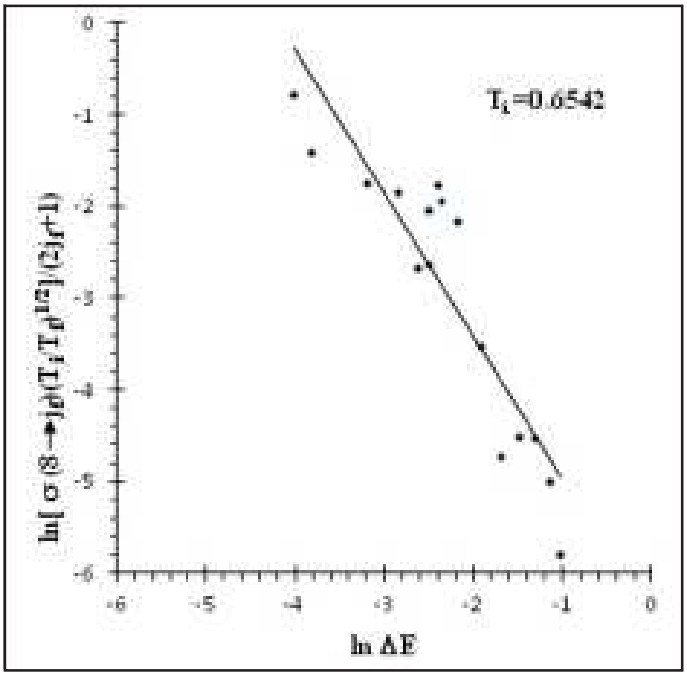

Figure1: $\ln\left[(8j_f)\left(\frac{T_f}{T_i}\right)^{1/2} / \ (2j_f+1)\right]$ vs $ln|\Delta E|$ for $T_i = 0.6540\ eV$ and σ in Å

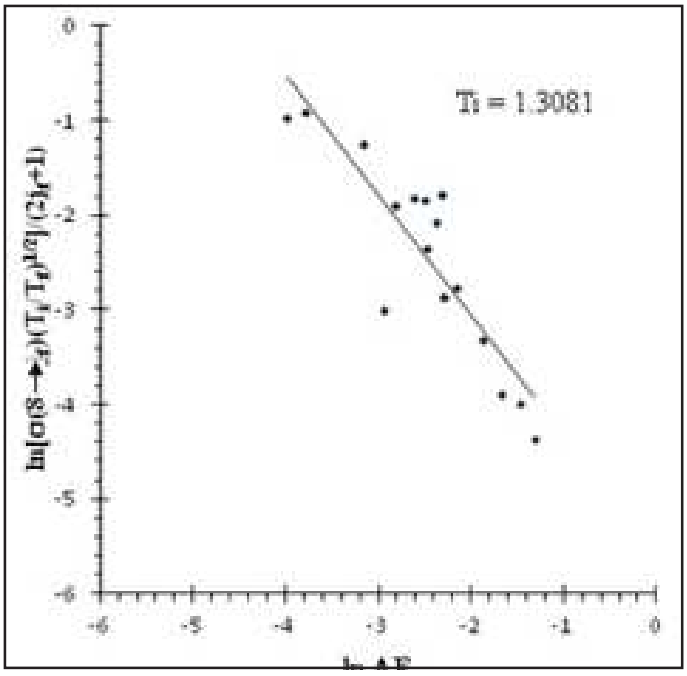

Figure2: same as figure1 but $T_i = 1.3081\ eV$

REFERENCES

01. Schinke R, in Electronic and Atomic Collisions, Edited by Eichler, J. Hertel V & Stollerfont N (North-Holland, Amasterdam, 1984) p. 429.
02. Agrawal P M & Agrawal N C. Chem. Phys. Lett. (Netherlands) 122 (1985) 37.
03. Agrawal P M Agrawal N C. & Garg V, J. Chem, Phys. (USA) 83 (1985).
04. Agrawal P M Agrawal N C. & Garg V, Chem, Phys. Lett. (Netherlands) 118 (1985) 213.
05. Agrawal P M & Agrawal N C. Chem. Phys. Lett. (Netherlands) 117 (1985) 451.
06. Agrawal P M & Agrawal N C, Current Science (India) 54 (1985) 689.
07. Agrawal P M & Garg V, Indian J. Pure & Applied Phys (India) 23 (1985) 392.
08. Dexheimer S. L., Durand M Burnner T A & Pritchard DE, J. Chem. Phys. (USA) 76 (1982) 4996.
09. Burnner TA, Smith N, Karp AW & Pritchard DE., J. Chem. Phys. (USA), 74 (1981) 3324.
10. Burnner T A, Scott T P, & Pritchard D E, J. Chem Phys (USA) 76 (1982) 5641.
11. Whitaker B J & Brechingna C Ph, Chem Phys Lett (Netherlands) 95 (1983) 407.
12. Ramaswamy R, Depristo A E & Rabitz H, Chem Phys Lett (Netherlands) 61 (1979) 495.
13. Depristo A E, Augustin S D Ramaswamy R & Rabitz N, J Chem Phys (USA), 71 (1979) 850.
14. Polanyi J C & Woodall K.B.J. Chem Phys (USA), 56 (1972) 1563.
15. Levine R D & Bernstein R B in Dynamics of molecular Collisions, edited by W H Miller (Plenum Press, New York), 1975.
16. Heller D F, Chem. Phys Lett (Netherlands) 45(1977) 64.
17. Noor Batcha I & Sathyamurthy N, Chem Phys Lett (Netherlands) 79 (1981) 264.
18. Deroured J & Sadeghi N, J. Chem. Phys (USA),81 (1984) 3002.
19. Barnes J A, Keil M, Kutina R E & Polanyi J C, J. Chem Phys (USA) 72(1980) 6306.
20. Barnes J A, Keil M, Kutina R E & Polanyi J C, J. Chem Phys (USA), 76 (1982) 913.
21. Brunner T A, Driver R D, Smith N & Pritchard D E, Phys Rev Lett (USA), 41 (1978) 856.
22. Brunner T A, Smith N & Pritchard D E, Chem. Phys Rev Lett (Netherlands), 71 (1980) 358.
23. Polanyi J C & Sathyamurthi N, Chem Phys 29 (1978) 9.
24. Wainger M. Al-Agil I. Burnner T.A. Karp A.W. Smith N & Pritchard D E, J.Chem Phys (USA), 71 (1979) 1977.
25. Brunner T A, Driver R D, Smith N & Pritchard D E, J. Chem Phys (USA), 70 (1979) 4155.
26. Neilsen W B & Gordon R G, J. Chem Phys (USA) 58 (1973) 4749.
27. Dunker A M & Gordon R G, J. Chem Phys (USA) 64 (1976) 354.
28. Green S, J. Chem Phys (USA) 60 (1974) 2654.

****

Oxidative decarboxylation of tartaric acid by pyridiniumdichromate in aqueous perchloric acid media- A kinetic and mechanistic study

B. K. Dangarh *

Key words: Kinetics, Oxidation, Tartaric acid, Pyridiniumdichromate.

Abstract: A two stage oxidative decarboxylation of tartaric acid by pyridiniumdichromate (PDC) in perchloric acid medium has been studied. Active oxidizing species involved is protonated PDC. First order plot log (a-x) versus time is broken in two straight lines. Some induction period is also observed. Effect of concentration of substrate, PDC, $HClO_4$, Mn (II), Ce (III) and ionic strength has been investigated. Thermodynamic parameters have been evaluated. Energy of activation is 53.14 and 56.58 kJ mol^{-1} for two successive stages of oxidation. Entropy of activation is low and negative. Although the activation energy does not correspond to C-C bond breaking, but the reaction products indicate C-C bond breaking.

Introduction:

Compounds containing carboxylic group can undergo a wide variety of reactions, of which decarboxylation has its great importance and extensive use in degradative and synthetic procedures of organic chemistry. Oxidation of tartaric acid was carried out by chromic acid[1]. The oxidation of tartaric acid by $HCrO_4$- ions probably accounts for the anomalous behavior of tartaric acid. The transfer of three electrons to Cr (VI) for the overall reaction does not take place in one step; either they transferred one by one or by two-electron transfer process. The present study deals with the title reaction. PDC is a mild and selective oxidizing agent and soluble in water and many organic solvents.

Experimental:

All solutions were prepared in double distilled water. All chemicals used were of AR grade or were purified before use. Pre-determined volume of known concentration of tartaric acid, perchloric acid and water mixed in a glass-stoppered flask were allowed to reach thermostat temperature (±0.1K). Reaction was initiated by adding pyridiniumdichromate solution. Aliquots (2.0ml) were withdrawn at known intervals of time and concentration of the oxidant was determined iodometrically. It was observed that the logarithm of concentration of PDC decreases linearly with time, indicating first order with respect to PDC.First order rate constants were determined graphically. The first order plot is straight line but in two parts as shown in graph (fig-). Some induction period is also observed. Log (a-x) versus time gives a straight line up to 70-80 percent reaction. There is a good agreement between calculated and graphical values.

Product Study and Stoichiometry:

The qualitative product study was made under kinetic conditions. The gas produced from reaction mixture turned limewater milky indicated CO_2. On completion of the reaction, reaction solution was neutralized by $NaHCO_3$ and extracted with ether. Ether layer was treated with 2, 4-dinitro-phenylhydrazine in 1N HCl to get hydrazone precipitate. Formation of glycolaldehyde was confirmed by spot test [Feigl.1966]. It was further observed that the aldehyde did not undergo further oxidation under the present kinetic conditions.

There was no effect on rate by addition of acrylonitrile and reaction mixture did not turned milky confirmed absence of free radical. Stoichiometry study was carried under kinetic conditions but taking large volume and quantitative measurement of reaction products. It was concluded that one mole of oxidant require two moles of substrate.

Results and Discussion:

Effect of oxidant concentration:

The PDC concentration varied in the range $1x10^{-3}$ to $3x10^{-3}$ mol dm^{-3}. Linearity of plots of log [PDC] versus time indicated a reaction order in PDC as unity (Table-1). The first order plot is straight line but in two parts as shown in graph (fig.1).

This shows that intermediate formed is also reactive with oxidant, that a consecutive type of reaction. We have not treated it as consecutive type of reaction as the calculations done by Jebakumar Jeevanandanam[2].

In case of tartaric acid oxidation, it was observed that there is some induction period; therefore rate constants were calculated after this induction period.

Effect of substrate concentration:

*** P.G. Deptt. of Chemistry, Govt. P. G. College, Neemuch-458441,India**

The tartaric acid concentration was varied in the range $1.0x10^{-2}$ to $5.0x10^{-2}$ mol dm^{-3} at 308 K; keeping all other reactant concentration and conditions constant. In tartaric acid rate of oxidation slightly increases with increase in substrate concentration (Table-1). Even increasing concentration by five fold, rate increases nearly 10 to 15 %. This slight increase may be due to supply of hydrogen ion from tartaric acid. The apparent reaction order with respect to tartaric acid was found to be approximately zero. The oxidation of tartaric acid in tamarind (natural form) by chromium(VI) shows that the rates of reaction are first order dependence, each in [Cr(VI)],[substrate][3].

Effect of initially added Pyridine:

The effect of initially added pyridine in the concentration range 2.0×10^{-2} to 2.0×10^{-1} mol dm^{-3} keeping all other conditions constant did not show any significant effect on the rate of reaction. It shows that there is no hydrolysis of PDC in kinetic condition and hence oxidant is quite stable in kinetic condition.

Effect of varying acidity:

The effect of acid on the reaction was studied by using perchloric acid at constant concentration of tartaric acid and PDC. The rate of oxidation was studied in presence of added $HClO_4$ in the range 0.0 M to 1.6 M. It was observed that rate increased with increase in hydrogen ion concentration (Table-3). Log k versus log $[H^+]$ is a straight line. The observations are similar to oxidation of hydroxy acids by quinolinium dichromate.[4] The plot of k versus $[H^+]$ are linear and intercept at y-axis is nearly zero. It confirms that the reaction is acid catalyzed. Since protonation of the acid is not possible, therefore, it can be concluded that protonated oxidant is active species in this oxidation.

An attempt was made to correlate the rate of oxidation with hydrogen ion concentration. Zucker-Hammett, Bunnett and Bunnett-Oleson plots do not conclusively indicate role of water molecules as proton abstracting agent in the rate-limiting step.

Effect of ionic strength and solvent polarity:

Effect of ionic strength in range of Debye-Huckel Limiting Law (below 0.01 M) studied to find out the interacting species in rate determining step. Addition of salt such as sodium sulphate and sodium nitrate does not affect the rate constant (Table-2a). It proves that the reaction does not proceed via ion-ion type of interaction[5] in rate-determining step.

Effect of solvent polarity was studied by changing proportion of water and 1,4 dioxane; percentage composition was varied from 0 to 10 % dioxane v/v. Considering an ideal solution of dioxane and water, mole fraction were calculated. Since there is no literature value of water-dioxane solution of different composition, therefore we have calculated dielectric constant using law of mixture and data for pure dioxane and water[6,7] assuming a linear relationship in the limited range 0 to 30 % of solvent compositions used in our studies. Wieberg and Evans[8] have made a similar approximation with regard to the same binary solvent system. Looking to the nature of reaction, it can be either ion-dipole or dipole-dipole[9]. Many workers like R. Jain4, and Hiran et. al[10] suggested ion-dipole type of interaction in the oxidation of organic substrates by Cr(VI)-complexes. Although the dielectric constants of the medium by itself is inadequate to account for the solvent influence[11], the relative solvation and greater electrostatic attraction of solute for the more polar compounds of mixed solvent may produce a field of dielectric constant near the solute particle, which is entirely different from the average dielectric constants. Solvent-solute interaction therefore may be more important factor in affecting the reaction rate compared to the dielectric constants[12].

It was observed that log k versus 1/dielectric constant is straight line in most of the cases with the positive slope. This indicates that reaction is ion-dipolar and further by positive slope, we can say it is cation-dipole interaction in rate determining step4,[13].

Effect of temperature:

Rate of reactions were determined at different temperature (298 to 323 K). A plot of log k_{obs} versus 1/T (inverse of absolute temperature) is a straight line (Table-2b). Energy of activation is 53.14 and 56.58 kJ mol-1 for two successive stages of oxidation. Entropy of activation is low and negative.

Energy of activation does not correspond to carbon-carbon bond fission in the decomposition of organic substrate by Cr (VI) in rate determining step[14]. But the reaction products indicated C-C bond breaking. This may be due to lowering of activation energy ($\Delta E^{\#}$ = 52.51 kJ mol^{-1}) due to involvement of large number of equilibriums. Decrease in entropy suggests formation of cyclic complex (may be unstable). Calculation of activation parameters showed that these reactions are not enthalpy controlled.

Variationof rate with Mn (II) and Ce (III) ion: -

In case of tartaric acid rate increases by addition of Mn(II) and Ce(III) ions(Table-2c). Such observations were also

reported by Hiran et al[15]. This is due to formation of Mn (II) complex with tartaric acid, which is more reactive than corresponding acid. Effect of Mn(II) and Ce(III) also prove involvement of Cr (IV). Kabir-Ud-Din[16] explained that the effect of externally added manganese (II) in DL-tartaric acid is complex. Due to its involvement in a series of reactions, it is not possible to predict exact dependence of rate constants on [Mn(II)].

Conclusion:

In oxidation of tartaric acid first order plot log (a-x) versus time is broken in two straight lines. First part is slow and second part is slightly faster.

This shows that intermediate formed is more reactive than substrate. It was pointed out by workers that these oxidations take place via keto-acid formation from -CHOH group, H is lost as proton and it changes to keto acid, which on oxidative hydrolytic fission breaks to give CO_2 etc. This process is quite fast. Proposed mechanism satisfies all the observed results.

Fig.- 1
OXIDATION OF TARTARIC ACID BY PDC
A TYPICAL RUN

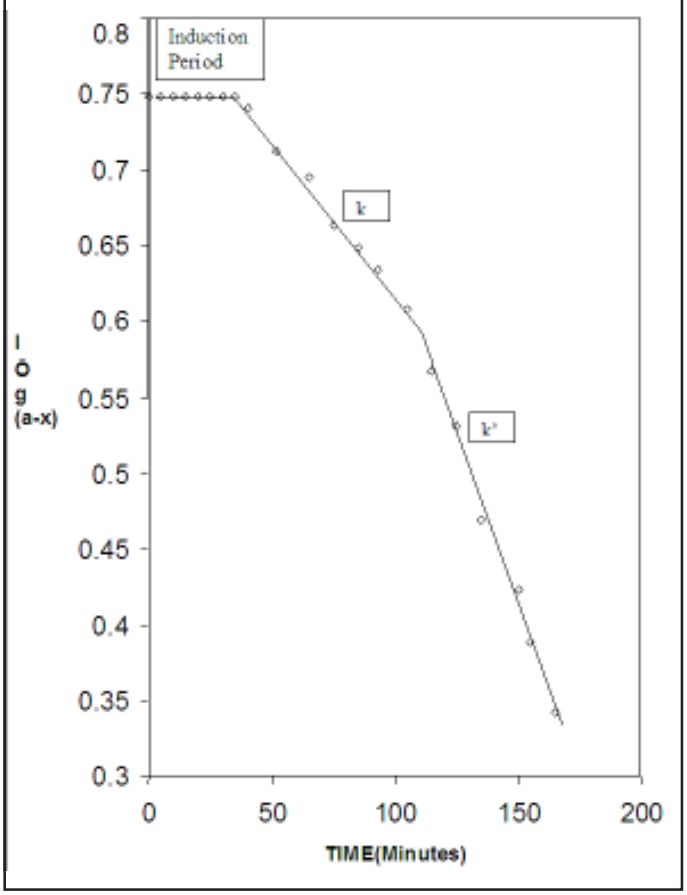

Table-1:
Effect of tartaric acid , PDC and perchloric acid concentration on the oxidation of Tartaric acid by Pyridiniumdichromate in aqueous medium

Temp= 308 K

10^2[Tartaric acid] mol dm^{-3}	10^3 [PDC] mol dm^{-3}	10[$HClO_4$] mol dm^{-3}	10^5 k_{obs} s^{-1}	
			k_{obs}	k'_{obs}
2.0	2.0	5.0	25.9	62.37
2.5	2.0	5.0	26.3	63.59
3.0	2.0	5.0	26.89	65.05
3.5	2.0	5.0	27.34	67.02
4.0	2.0	5.0	27.63	68.77
4.5	2.0	5.0	28.25	69.93
5.0	2.0	5.0	28.72	71.45
2.0	1.0	5.0	25.9	62.37
2.0	1.25	5.0	25.56	62.43
2.0	1.5	5.0	25.63	62.14
2.0	1.75	5.0	25.98	62.83
2.0	2.0	5.0	26.21	61.85
2.0	2.5	5.0	26.03	62.28
2.0	3.0	5.0	25.85	62.46
2.0	2.0	2.0	13.25	31.32
2.0	2.0	3.0	17.27	43.06
2.0	2.0	4.0	22.26	54.66
2.0	2.0	5.0	25.9	62.37
2.0	2.0	6.0	30.89	84.44
2.0	2.0	7.0	35.64	93.49
2.0	2.0	8.0	43.61	112.12
2.0	2.0	9.0	55.17	153.53
2.0	2.0	10.0	63.33	169.69
2.0	2.0	11.0	69.99	195.11
2.0	2.0	12.0	74.41	209.4

Table-2:
Effect of solvent polarity, [Mn (II)] and temperature on the oxidation of Tartaric acid by Pyridiniumdichromate in aqueous perchloric acidic medium

[Tartaric acid] = 2.0 x 10^{-2} mol dm^{-3} [PDC] = 2.0 x 10^{-3} mol dm^{-3}

[HClO4]=5 x 10^{-1} mol dm^{-3} Temperature 308 K

Table-2a: Effect of solvent

Dioxane % v/v	10^5 k_{obs} s^{-1}	
	k_{obs}	k'_{obs}
0.0	25.9	62.37
2.0	32.59	77.59
4.0	46.22	110.17
6.0	63.26	156.20
8.0	93.02	229.32
10	107.38	263.35

Table 2b: Effect of temperature

Temp K	10^5 k_{obs} s^{-1}	
	k_{obs}	k'_{obs}
298	12.14	28.26
303	16.75	41.02
308	25.9	62.37
313	33.58	88.73
318	45.69	123.45
323	66.66	181.90
328	91.16	230.3
333	125.21	331.52

Table 2c: Effect of Mn (II)

10^5 [Mn(II)] mol dm^{-3}	10^5 k_{obs} s^{-1}	
	k_{obs}	k'_{obs}
0.0	25.9	62.37
2.0	26.68	64.25
4.0	27.48	66.17
6.0	29.10	67.84
8.0	29.92	70.04
10.0	30.15	71.82

REFERENCES:

01: Vijay P. Singh, Indira M. Pandey and Subhas B. Sharma:J. Indian Chem. Soc LXII, 64, 1 (1985)

02: J Jeevanandanam, R. Gopalan and R. Sivaramkrishnan: J.Indian Chem.Soc. 74, 3,190 (1997)

03. M.Mali, S.N.Knodaskar, N.T.Patel: Asian Journal of Chemistry, 16,2, (2004)

04: B. L. Hiran, R. Jain and N. Nalwaya: Oxid. Commun.26 (4), 561 (2003)

05: E. Grunwal, A. Heller and F. S. Klein: J. Chem. Soc., 2064 (1957).

06: H. E. Zimmermans: Physico-Chemical Constants of Pure Organic Comp. Elsevir P.383 (1950)

07: Le Fevre: Trans Faraday Soc. 34.1127 (1938)

08: K. B.Wieberg and T. R. Evans: J. Am. Chem. Soc., 80, 3019 (1958)

09: K. J. Laidler and H. Eyring: Acad. Sci. New York 39,303 (1940)

10: Niranjan Nalwaya, Kailash Chand and B. L. Hiran; Afinidad 60,503 (2003)

11: B. L. Hiran and G.Chaturvedi: Oxid. Commun., 26(4) 553 (2003)

12: R. A. Robinson and R. H. Stokes: "Electrolytic Solutions "Butterworth Scientific Publications, London (1955)

13: A.Thangarajan and R. Gopalan: J. Indian Chem. Soc., 67,453(1990)

14: G.V. Bakore and S. Narain : Z.Physik. Chem. (Leipzig) 8,227, (1964)

15: B. L.Hiran, N. Nalwaya and S.L.Bikaneria: Afinidad 60 (505) 227(2003)

16: Kabir-Ud-Din, Shakeel Iqubal S. M.; Zaheer Khan; Indian Journal of Chemistry, Sect. A 44,12 2455-2461(2005)

Advances in Microscopy - Confocal Microscopy

Sarika Tundele *

Abstract - In light microscopy, the illuminating light passes through the specimen. The light is delivered as uniformly as possible over the field of view of the microscope. It was evident to users of the light microscope that there were still unsolved problems with thick, highly scattering specimens. The use of the fluorescent light microscope together with fluorescent, thick specimens was difficult; moreover, light from above and below the focal plane contributed to a blurring of the image and a general loss of contrast.

These problems were also evident during in vivo microscopy of embryos, tissues, and organs. On the other hand, these problems did not exist for very thin, fluorescent specimens. Real biological specimens have internal structures that vary with depth and position. Prior to the use of three-dimensional computer reconstructions, in order to obtain a valid understanding of the heterogeneous specimen, it was necessary to use the light microscope to image many focal planes from the top to the lower surface, and then to reconstruct either a mental three-dimensional visualization of the specimen, or use computer techniques to make this visualization.

If the specimen is thicker than the depth of focus of the objective lens, light coming from structures above and below the plane of focus will also enter the detector (eye or camera). In fluorescence microscopy, any dye present in the specimen above and below the plane of focus will be stimulated and the fluorescent light will enter the detector. This light coming from out-of-focus structures will be added to that coming from the plane of focus and will tend to blur the image and make it difficult to resolve detail, especially where overlapping structures are present.

To solve this problem a technique called Confocal microscopy which is an optical imaging technique was invented to increase optical resolution and contrast of a micrograph by using point illumination and a spatial pinhole to eliminate out-of-focus light in specimens that are thicker than the focal plane was developed.

It enables the reconstruction of three-dimensional structures from the obtained images. This technique has gained popularity in the scientific and industrial communities and typical applications are in life sciences, semiconductor inspection and materials science.

Keywords: Confocal microscopy, fluorescence, focal plane, pinhole, AOD, FLIP, FRET

Introduction: The confocal microscope is a relatively new system which enables the optical sectioning of a 3D specimen without the need to employ some of the invasive methods used traditional histology. Information can be collected from a single focal plane of a fluorescently labelled biological specimen. A confocal pinhole excludes out-of focus light from above and below the focal plane resulting in an increase in image resolution. By moving the focal plane of the instrument step by step through the depth of the specimen a series of optical sections can be recorded. The sections collected can subsequently be reconstructed in 3D, surface rendered etc.

Evolution of Confocal Microscopy:

The invention of the confocal microscope is usually attributed to Marvin Minsky, who produced a working microscope in 1955. The development of the confocal approach was largely driven by the desire to image biological events as they occur in living tissue (in vivo), and Minsky had the goal of imaging neural networks in unstained preparations of living brains.

The principle of confocal imaging advanced by Minsky, and patented in 1957, is employed in all modern confocal microscopes. Figure 1 illustrates the confocal principle, as applied in epifluorescence microscopy, which has become the basic configuration of most modern confocal systems used for fluorescence imaging.

The Confocal Principle and Microscope Design:

"Confocal" is defined as "having the same focus." What this means in the microscope is that the final image has the same focus as or the focus corresponds to the point of focus in the object. The object and its image are "confocal."

The microscope is able to filter out the out-of-focus light from above and below the point of focus in the object. Normally when an object is imaged in the fluorescence microscope, the signal produced is from the full thickness of the specimen which does not allow most of it to be in focus to the observer. The confocal microscope eliminates this out-of-focus information by means of a confocal "pinhole" situated in front of the image plane which acts as a spatial filter and allows only the in-focus portion of the light to be imaged.

Light from above and below the plane of focus of the object is eliminated from the final image. A diagram of the confocal principle is shown below.

*** Assistant Professor of Botany, J.N Govt. Deg. College, Barwaha (M.P.)**

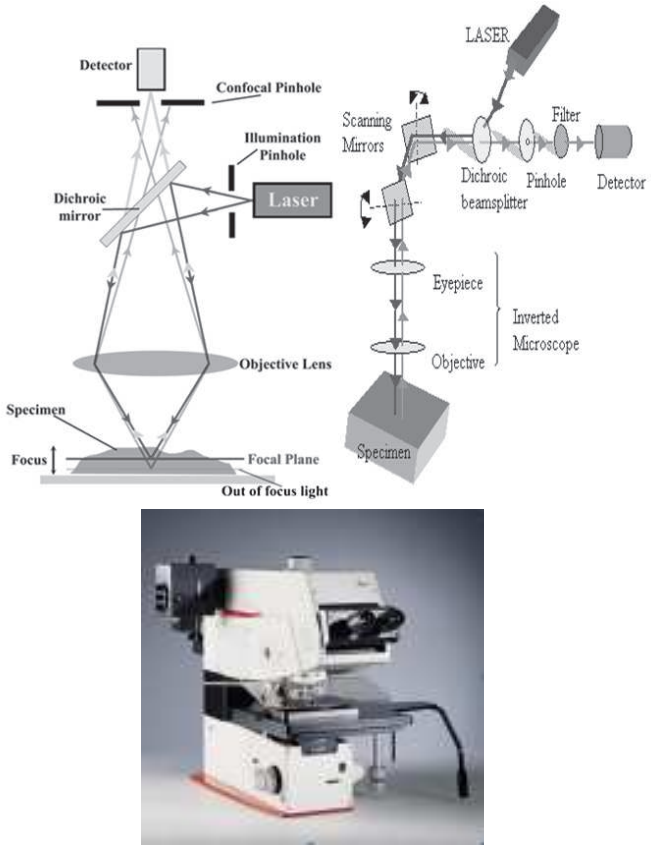

Figure 1 : Confocal microscope design of Minsky. The condenser forms an image of the illumination pinhole onto a spot in the object. The objective lens forms an image of the spot in the object onto the detector pinhole. The two pinholes and the spot in the object are confocal. Any other spot in the object would be poorly illuminated and its emission would not pass efficiently through the pinhole.

How does a confocal microscope work:--

To image the specimen point by point, a collimated, polarised laser beam is rastered stepwise in the x- and y-direction onto a dichroic mirror (beam splitter), through the objective lens of the microscope, and focused onto the specimen. The emitted, longer-wavelength fluorescent light collected by the objective lens passes through the dichroic mirror (transparent for the longer wavelength) and any necessary emission filters and then focused into a small pinhole (i.e., the confocal aperture) to eliminate all the out-of-focus light, i.e., all light coming from regions of the specimen above or below the plane of focus. Therefore, the confocal microscope does not only provide excellent resolution within the plane of section (0.25 mm in x- and y-direction), but also yields similarly good resolution between section planes (0.3 mm in z-direction). The in-focus information of each specimen point is recorded by a light-sensitive detector (i.e., a photo-multiplier) positioned behind the confocal aperture, and the analogue output signal is digitised and fed into a computer. A laser is used to provide the excitation light (in order to get very high intensities). The laser light (blue) reflects off a dichroic mirror. From there a laser hits two mirrors which are mounted on motors ; these mirrors scan the laser across the sample. Dye in the sample fluoresces , the emitted light gets descanned by the same mirrors that are used to scan the excitation light (blue) from the laser.

The light that passes through the pinhole is measured by detector , i.e a photomultiplier tube. So there never is a complete image of the sample-at any given instant, only one point of the sample is observed. The detector is attached to a computer which builds up the image, one pixel at a time. In practice , this can be done perhaps 3 times a second , for a 512x512 pixel image.

The limitation is in the scanning mirrors. Noran confocal microsope uses special Acoustic Optical Detector in place of one of the mirrors, in order to speed up the scanning. This uses a high-frequency sound wave in a special diffraction grating, which deflects the laser light.. By varying the frequency of sound wave, the AOD changes the angle of the diffracted light, helping scan the sample quickly , allowing to take 512x480 pixels images 30 times per second. If we want to look a smaller field of view , we can go even faster i.e 480 frames per second, although 240 frames per seond is a good practice.

Figure 2: Lily pollen labeled with acridine orange. The left image was taken with an aperture (pinhole) of 1600 ?m diameter to simulate nonconfocal operation and the right image was taken with a 40-?m-diameter aperture. The improvement with confocal operation is dramatic.

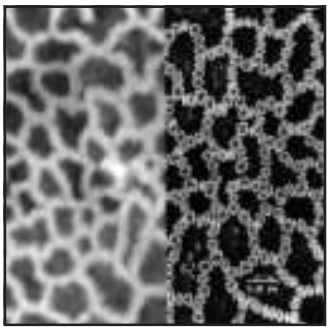

These images were provided through the courtesy of Edwin de Feijter, Insight Biomedical Imaging (Lansing, Mich.).

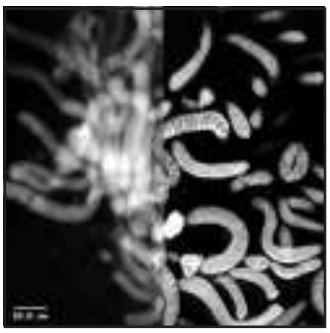

Figure 3: Rod photoreceptors from the frog Xenopus laevis labeled by the lectin wheat germ agglutinin conjugated to the fluorochrome Cy3. Images were collected as in Figure 2.8.3. These images were provided through the courtesy of Edwin de Feijter, Insight Biomedical Imaging (Lansing, Mich.).

TYPES OF CONFOCAL MICROSCOPES:

Two basic types of confocal microscopes are in use today: fluorescence and reflection. A third mode, transmission, which is the original one developed by Minsky, is seldom used owing to difficulties in maintaining optical alignment for the large number of components. obtaining surface topography maps. Differential interference contrast techniques have also been successfully applied to confocal microscopy

(Cogswell and Sheppard, 1992) and are proving useful in obtaining phase information from largely transparent objects. New techniques used in confocal microscopy are: Laser scanning confocal microscopy, Two photon confocal microscopy, Multiphoton confocal microscopy..

Applications of confocal microscopy:

The broad range of applications available to laser scanning confocal microscopy includes a wide variety of studies in neuroanatomy and neurophysiology, as well as morphological studies of a wide spectrum of cells and tissues. In addition, the growing use of new fluorescent proteins is rapidly expanding the number of original research reports coupling these useful tools to modern microscopic investigations. Other applications include resonance energy transfer, stem cell research, photobleaching studies, lifetime imaging, multi-photon microscopy, total internal reflection, DNA hybridization, membrane and ion probes, bioluminescent proteins, and epitope tagging. Confocal microscopy in mycological research. Laser scanning confocal microscopy can be successfully applied to a variety of fungal problems including cell dynamics, fungus-host interactions, organelle structure and function, or cytoskeletal localization and cytochemistry using an array of various reporters, in virtually any sample that can be viewed by conventional light microscopy. It is particularly advantageous for examining thick fungal samples or in host-pathogen interactions where the fungus is embedded deep within the host tissue.

- **Embryonic Stem Cells**

Embryonic stem cell lines, which were originally produced from the inner core of human blastocysts as well as those of other mammals, are now widely established in the research community using traditional in vitro culture.

- **Epitope Tagging**

An epitope (also known as an antigenic determinant) is a biological structure or sequence, such as a protein or carbohydrate, which is recognized by an antibody as an antigen.

Colocalization of Fluorophores in Confocal Microscopy

During the digital recording of labeled fluorescent specimens, two or more of the emission signals can overlap in the final image due to their close proximity within the microscopic structure, this is known as colocalization.

Fiber FISH (Fluorescence in situ Hybridization)

The term Fiber FISH (acronym for Fluorescence in situHybridization) refers to the common practice of fluorescence in situ (FISH) conducted on preparations of extended chromatin fibers.

Fluorescence Lifetime Imaging Microscopy (FLIM)

Discussions reviewed in this section involve several important aspects of fluorescence lifetime imaging microscopy (FLIM), a new fluorescence microscopy technology.

Fluorescence Resonance Energy Transfer (FRET) Microscopy

The technique of FRET, when applied to optical microscopy, permits determination of the approach between two molecules within several nanometer, a distance sufficiently close for molecular interactions to occur.

Conclusion :- Confocal fluorescence microscopy is a powerful tool to get a high contrast image of a thin slice of the sample in a noninvasive way. Has number of application in biology (and the number is growing every day). Confocal fluorescence microscopy can be combined with other techniques such as FRET, FLIM, optical trapping etc. to reveal further information from the sample.Two photon excitation instead of single photon excitation provides high contrast image upto a depth of 1mm. It is useful for imaging in cellular environment.

References:--

- Handbook of Biological Confocal microscopy by James B.Pawley
- Confocal Fluorscence microscopy of Plant cells by P.K Hepler & B.E.S Gunning
- Confocal Microscopy (Methods & Protocols) by Stephen W. Paddock
- www. Sciencemag.org/site/products/ist-20100618xhtml
- Biotechnology by Yanka Gupta
- Biotechnology by S.N Jogdand
- www.olympusmicro.com/primer/techniques/confocal/index.html
- www.phys.org/news352.html
- www.ou.edu/research/electron/mirror/web-org.html
- www.videomicroscopy.com

****

Exotic Plant Kigelia Africana Found In Dhar (M.P.) India

Prof. Nirbhay Singh Solanki * Prof. S.C. Mehta **

ABSTRACT

Exotic species Kigelia pinnata found in dhar District,City dhar & Mandu(city of joy).This Plant has many use for cure the Diseases . Kigelia Plant mainly native of South Africa.This plant is use as beautiful ornamental plant.The price of kigelia powder is R 400/kg (R=cent, cent means currency of south Africa).

INTRODUCTION

Kigelia is a genus of Flowering plant in the family Bignoniaceae,kigelia Africana which occur throughout tropical Africa from Eritrea & chand south of northern south Africa.

STUDY AREA

Dhar district :-Dhar district is located at 22degree to 22degree 49 minute north latitude and 75degree 6 minute to75degree 42 minute east longitude, average altitude of Dhar district is 588 meters above the sea level.

A. Dhar city :-The city lies between latitude 22º 35 minute N & longitude 75degree 20 minute E with an average elevation of 559 meter an area of 8,153km square. It is located 53km west of Mahow 908 ft above the sea level.

B. Mandu :- (historical palace -City of joy)

The hill fort of mandu 22º2 minute N &75degree 26 minute E is situated about 35km south of dhar found this plant in campus of forest rest house in mandu.

METHODOLOGY

I took some photographs by Digital Camera.

GEOGRAPHICAL DISTRIBUTION

The Sauge plant is found across subtropical Africa and as far south as South Africa .It is used as an ornamental tree in Australia the USA and part of south East Asia and it is cultivation in other tropical countries.

* ***KIGELIA AFRICANA***- Other Name :- Cucumber tree, sauge tree.
* **Hindi Name :-** Balam kheera
* **Synonyms:-** Kigelia pinnata, Bignoia Africana, K. abyssinica, K. acutifolia, K. aethopum, K. Africana, K.ellioti, K.elliptica, K. impressa, K. spragueana.

SCIENTIFIC CLASSIFICATION

* **Kingdom** - Plantae - plant's .
* **Subkingdom** -Tracheobionta- Vascular plant .
* **Super division** - Spermatophyta- seed plant .
* **Division-** Magnaliophyta-Dictyledons .
* **Class**-Magnoliopsida
* **Order-** Scrophulariales .
* **Family-** Bignoniaceae .
* **Genus-** Kigelia D.C. (sauge tree).
* **Species**- kigelia Africana (Lam) Benth.

BOTANICAL DISCRIPTION

Semi-evergreen medium to tall sized tree Normally 10-15 meter tall occasionally up to 25 meter with low branching trunk up to 80 cm in Diameter and a rounded crown .Bark is grey thinly flaky leaves are opposite and compound with 3-5 pair of leaflets plus a terminal leaflet . Each leaflet is 6-10 cm long and with rough hair on both sides . The showy flowers are bisexual and unpleasantly scented. Velvety Mahroon Colour up to 10cm long in 6-12 Flowered dropping Sprays.

FRUIT- The Fruit are sauge shaped ,up to 1 meter long 18-19 cm in diameter and weighing up to 4 to 6kg. They are grayish brown when ripe and contain a hard fibrous inedible pulp in which many seed are embedded. The fruit don't open at Maturity.

SEED- pale,hard,obovoid,10*7 mm there are a typically 9000-10,000 seeds/kg.

FLOWERING &FRUITING HABIT- The trees flowers at the end of the Dry season, southern Africa Flowering occurs from June to November Africa the tree flower in November to December.The Flowering period for a single tree continues for several month.

***Asst. prof. of Botany Govt. P.G. College Dhar (M.P.) ** Prof. of Botany Govt. P.G. College Jaora (M.P.)**

USES

EDEBILITY:-In Nigeria , fruit is sold as medicine.

In Nyasaland in times of scarcity ,native and eat the seeds.

FOLKLORIC

- No reported medicinal use in the philippins.
- In Africa , fruit used as laxative and for dysentery .Fruit also used for acne ; fruit powder for wound &ulcers powdered solution used as Disinfectent . Fruit powder or seice used for best Firming ;also used to reduce swelling and mastitis of breast. Plant has been used for its anti implantation activities.
- In the Gild coast the Fruit ,cut up and boiled with peppers, is given for constipation and piles while the bark and fruit are used to heal sores and restore taste .
- Traditional use as an antileprotic.
- In South Nigeria ,the bitter bark is use for both Syphillis and Gonorrhea.
- In Southern Nigeria , it is similarly used the Fruit is used as a wash and Drink for Young Children.
- In the Gold coast, the bark is used for rheumatism & dysentery.
- The tongas use the powdered Fruit as a dressing for Ulcer.
- In central Africa, the Unripe Fruit is used as a dressing for Rheumatism & Syphillis .
- Shona, people use the bark or root powder or Inflution for application to Ulcers or drink for the treatment of pneumonia , as gargle for toothache. Leaf compound applied to backaches.
- In west Africa , Unripe Fruit used as Vermifuge and as treatment for piles & rheumatism.
- Other traditional African healers use it for a wide range of ailments :- Fungal Infection, abscesses , psoriasis and eczema; Internally , used for dysentery , ring worm, tapeworm. Post-partum heamorrhage , malaria, diabetes ,pneumonia and toothaches .The Fruit is used to increase flow of milk in lacting women.

ANTICANCER ACTIVITIES

The root bark is recommended for the treatment of cancer of the uterus (msouthi and manombo 1083). The extract has been tested against melanoma cells (a tumour of pigmented skin cells , which can develop into malignant melanoma the potentially total from of skin cancer. In Malawi , roasted Fruit are used to flavour beer add Fermention . Roots are said to Yield a bright yellow dye. Fresh Fruit can't be eaten it is said to be a strong purgative and causes blisters in the mouth & on the skin . Green fruit are said to be poisonous .In time of scarcity seeds are roasted and eaten .

PRODUCT & PRICE-

* Kigelia shampoo- £14.00
* 10 seed-$ 1.60
* 100 seed $7.20
* Kigelia powder-100g ($11.00)
* Kigelia face cream £ 29.00 (100ml)
* Kigelia soothing body milk 200 ml £ 24.00

DISCUSSION

This species is growing well in the study area Dhar District ,Dhar city & Mandu, so by this advantage we can give benefit to poor people like local tribes , farmers for their economic growth. By this plantation our environment become clean and beautiful.

REFERENCES

- Academicjornals.org/AJPAC/pdf/pdf2009/olatunjiatolani pdf
- C.M.S herbalgram.org kigelia plant
- En.wikipididia.org/wiki/kigelia
- Huxley.A.ed(1992). Kigelia in the new RHS Dictionary of gardening
- Ntbg.org National botanical garden . kigelia plant
- Patil D.R.(2004) Archiological survey of India New
- plants Usda.gov kigelia plant
- WWW. rarexotic seeds.com…….kigelia plant
- WWW.Indianet zone.com/49/Dhar-district htm.
- WWW.hoperoundindia.com
- WWW.plantszAfrica.com……./kigelia plant
- WWw.kigelia.com /product.
- www.google.com. in

Exprerience Of Fiberoptic Bronchoscopy In A Rural Hospital

Dr. Namrata Dubey * Dr. H.G.Varudkar **

INTRODUCTION:

Fiberoptic bronchoscopies (FOB) are now routinely done in rural hospitals with limited facilities.FOB is an important diagnostic as well as therapeutic procedure. It can be easily performed in outpatient settings by taking adequate precautions & without having serious complications. Most common indications of FOB in our setup are diagnosis & staging of lung cancer, identification of infectious organism & diagnosis of diffuse lung disease. The therapeutic indications include removal of foreign body, tamponade for haemoptysis, aspirations of secretions, insertion of endotracheal tube & relieving tracheobronchial obstruction. To obtain good yield from the procedure proper case selection & skillful technique is required .Samples are collected by biopsy, brush cytology & transbronchial needle aspiration. Majority of the cases presenting to our hospital are from rural area & we get variety of indications for bronchoscopy. So we studied retrospectively the bronchoscopies done in our hospital to know the major indications of FOB & their results in our hospital to evaluate the future scope of the procedure.

AIMS & OBJECTIVES:

Aim was to assess the diagnostic utility of fiberoptic bronchoscopy in our setting.

Objectives were to know the following in our setting -

1. The indications for FOB.
2. The radiological findings of patients.
3. The FOB findings of the patients.
4. To assess the complications associated with the procedure.
5. The evaluation of microbiology & pathology reports.
6. To assess the diagnostic yield of the procedure.

MATERIAL & METHOD:

It is a retrospective study. After taking informed written consent, patients admitted in our ward with undiagnosed respiratory diseases were subjected to bronchoscopy under local anaesthesia with proper premedication which included i.m inj. atropine, nebulization with 4% lignocaine solution & spraying of lignocaine over the posterior pharyngeal wall. After instilling lignocaine jelly in the nostrils the bronchoscope is passed through the nostril or if not possible through the mouth to visualize the vocal cords & the tracheobronchial tree. All the findings & complications were noted. Material was collected as bronchoalveolar lavage (BAL) or brush cytology or biopsy or transbronchial needle aspiration (TBNA) & subjected to laboratory evaluation. We collected & evaluated the data from previous records of FOB done in R.D.Gardi Medical College / C. R. Gardi hospital Ujjain during a period of 16 months (March 2011-July 2012).

OBSERVATIONS & RESULTS:

Total 125 bronchoscopies were done during the period. Out of 125 cases 100(80%) patients were males & 25(20%) were female. Patients were of age between 20 & 80 years, majority 90(72%) people were in age group 40-70 years. The patients with suspected malignancy were 91(72.8%) which included 79(63.2%)cases of lung mass, 6(4.8%) cases of mediastinal mass, 3(2.4%) cases having hoarseness of voice, 2(1.6 %)cases of non resolving pneumonia, & 1(0.8%) case of metastasis. Cases of parenchymal diseases other than malignancies were 17(13.6%) which included 8(6.4%) cases of pneumonia, 4(3.2%) necrotizing pneumonia, 3(2.4%) eosinophillic lung disease & 2(1.6 %) cases of ILD. Cases of tracheobronchial diseases were 9(7.2%) which included 8(6.4%) cases of COPD, 1(0.8%) case of bronchiectesis. 15(13.6%) cases were having pleural diseases & 6(4.8%) cases were having haemoptysis. Chest radiography showed mass in 48(38.4%), parenchymal diseases apart from malignancy in 26(30.8%), tracheobronchial diseases in 22(17.6%), pleural disease in 17(13.6%), mediastinal diseases in 8(6.4%), fibrocavitory diseases in 3(2.4%), congenital abnormalties in 2(1.6%) & normal in 6(4.8%) cases. On FOB intraluminal lesion was present in 60(48%) cases in which mass was seen in 35(28%),nodule in 6(4.8%),purulent secretions in 15(12%) ,blood in 3(2.4%) & foreign body in 1(0.8%) cases. 62(49.6%) cases showed lesion in the wall which included stenosis 33(26.4%),mucosal abnormality 28(22.4%) & plaques 1(0.8%).Extraluminal lesion was present in 3(2.4%) visible as blunt carina. Upper respiratory tract lesions were seen in 15(12%) cases it includes vocal cord paresis 11(8.8%),nasal polyp 2(1.6%),mass on vocal cord & pharyngeal mass in 1(0.8%) cases each, congenital

*** Post Graduate student, Department of Pulmonary Medicine**

**** Professor and head, Department of Pulmonary Medicine, R.D. Gardi Medical College Ujjain (M.P.)**

abnormalities were detected in 4(3.2%) & findings were normal in 18(14.4%) cases. 7(5.6%) cases had complications like haemoptysis & correctable hypoxia, So procedure was discontinued.BAL & Biopsy reports revealed malignancy in 40(32%)cases, out of this 22(55%) squamous cell carcinoma, 6(15%) adenocarcinoma, 4(10%) anaplastic carcinoma, 1(2.5%) undifferentiated carcinoma & 7(5.6%) positive for malignant cells were reported.

Inflammatory disease was present in 48(38.4%), eosinophillic lung in 1(0.8%), fibrous tissue 3(2.4%), pigment laden macrophages in 2(1.6%) & no conclusion in 24(14.4 %) cases. 17(13.6%) cases showed growth of microorganisms. Pseudomonas was detected in 6 (4.8%) cases,Acinetobacter 2(1.6%) , E.coli 2 (1.6%), yeast 2 (1.6%). Klebsiella, citrobacter, staphylococcus aureus , enterococci, AFB & pneumococcus were identified in 1(0.8%) case each .

DISCUSSION:

In a period of 16 months 125 bronchoscopies were done. Majority of the patients were male. 72% of the patients were in age between 40 and 70 years, majority in 51-60 y. Major indication of bronchoscopy in our study was cases of suspected malignancy 72.8%. However in studies done by Sawy MS & colleagues major indications was suspected PTB cases (51.6 %).[1] Other studies showed haemoptysis (21.12%) & chronic cough (59%) as major indication for FOB. [2,3] Most common finding in chest X ray & FOB was mass lesion. On lab evaluation inflammatory smear suggesting infection was the report in 38.4% cases followed by detection of malignancy in 32% cases. We were able to confirm malignancy in 43.9% of suspected malignancy cases. These results are similar to the study done in govt. medical college Jammu & higher than that reported by SK Sharma & colleagues i.e 30%. [3,4] Most common malignancy detected was Squamous cell carcinoma in 55% cases followed by adenocarcinoma 15%,anaplastic carcinoma in 10% , undifferentiated carcinoma in 2.5% & in 17.5% cases malignant cells were present but typing could not be done. The squamous cell carcinoma is the predominant type which is according to the present trend of lung cancer in India.[5]These results are different from the study done by Kaparianos et al as well as from present trends of malignancy worldwide.[2,5]Microorganism was identified in 70% cases of suspected infections..Only 3.2% therapeutic bronchoscopies were done which included therapeutic lavage & foreign body removal. The quantity & indications for which therapeutic bronchoscopies were done are less as compared to other studies. [2] Overall diagnostic yield was 80% higher than reported in other studies done by Sawy MS & colleagues, Rajinder Singh & colleagues and Alzeer et al.[1,3,6] Overall rate of complications was 5.6% similar to that reported by Rajinder Singh & colleagues and Alzeer et al (5%).[3,6] No mortality occurred as also reported by Pue et al.[7] However some studies have reported mortalities due to procedure. [1,8,9]

CONCLUSION:

On FOB abnormalities were detected in 80 % cases helping in correct diagnosis & management of patient. Thus fiberoptic bronchoscopy is a safe procedure which can be performed in rural hospitals with good results & further interventional bronchoscopies can also be tried in future.

REFERENCES:

1. Sawy MS, Jayakrishnan B, Behbehani N, Abal AT, El-Shamy A, Nair MG. Flexible fiberoptic bronchoscopy. Diagnostic yield. Saudi Med J 2004; 25(10):1459-63.
2. A. Kaparianos, E. Argyropoulou, F. Sampsonas, A. Zania,G. Efremidis, M. Tsiamita, K. Spiropoulos. Indications, results and complications of flexible fiberoptic bronchoscopy: a 5-year experience in a referral population in Greece.European Review for Medical and Pharmacological Sciences 2008; 12: 355-363
3. Rajinder Singh, Harneet Kaur, Gurmeet Singh. Dignostic Yield of Fiberoptic Bronchoscopy in a Teaching Hospital. JK SCIENCE Vol. 10 No. 4, Oct-Dec 2008, 178-81.
4. Sharma SK, Pande JN, Dey AB, Verma K. The use of diagnostic bronchoscopy in lung cancer. Natl Med J India. 1992 ; 5(4):162-66
5. D Behera. Lung cancer in India. Medicine Update 2012; Vol. 22:401-7.
6. Alzeer AH, Al-Otair HA, Al-Hajjaj MS. Yield and complications of flexible fiberoptic bronchoscopy in a teaching hospital. Saudi Med J 2008; 29(1):55-59.
7. Pue C A, Eric R. Pacht E R. Complications of Fiberoptic Bronchoscopy at a University Hospital. Chest 1995; 107; 430-32
8. Credle WF, Smiddy JF, Elliott RC. Complications of fiberoptic bronchoscopy. Am Rev Respir Dis1974; 109: 67-72.
9. Dresein RB, Albert RK, Talley PA, Kryger MH, Scogginch, Zwillich CW. Flexible fiberoptic bronchoscopy in the teaching hospital. Chest 1978;74:144-149.

****

Application And Role Of Biofunctional Electronic Wearables To Improve The Quality Of Life

Dr. Kanchan Dhingra * Dr. Shaleen Dhingra **

ABSTRACT:

In today's competitive & hectic way of life, stress is very common which may deteriorate human health and adversely affect the Quality of Life Hence , keeping in view the ways to improve the quality of life , by the way of sound health entertainment ,leisure and fun to ease out stresses-there is involvement of smart innovative , interactive and intelligent electronic wearables , This is made possible by the convergence of various technologies and experts at one platform ,viz: these high- tech wearables are smart light weight , cost effective ,real time helpers and time saving to biomonitor vital biochemical parameters in the body fluids as well as physiological functions like monitoring heart rate, blood pressure ,body temperature ,respiration etc. These biofunctions of the E-textiles are made possible by the integration of biosensors & various nano-micro electronics in to the textile's microstructures which make this branch of trade a growing innovative health -care management market-keeping in view the Quality of life.

INTRODUCTION

After technical and functional wearables-smart wearables came in to force a few years ago .The term smart wearables covers a broad range and its application possibilities are only limited by our imagination and creativity [1] The name "Smart wearables" itself activates a quick reflex of curiosity and surprise . Smart wearables are electronic clothes - a combination of mobile multimedia technology with wireless communication, portable computers biosensors attached permanently to the textile through integrated woven connections conductive , fibers .which provide active functions like sensing , actuating & processing [2] U.S. market for smart textiles was worth an estimated US Dollers 70.9 millions in 2006& is expected to reach s391.7 millions in 2012 i.e. an annual growth rate of 37.9% Europeans estimate their market to be worth over 300 million Euros .today with annual growth rate of 20%[3] Clothing, the second skin is the surface we come in contact with most often-we wear them , sit on them walk on them & sleep on them . They represent 70% of the material we come in contact with each day. New potential is open to this most important fiber of our lives that could possess biofunctions, namely -injury protectives, haemostatic, antibacterial cardiotex, wound -healing, odor absorbing, insulating clothes etc.[4] Biosensors embedded in smart electronic wearable uses biological parameters to detect change in its environment i.e it converts a biological response in to a signal. Development of wearable mother board as a platform for sensors & monitoring devices that can unobtrusively monitor the health Eg. Biodsensors are capable of measuring healing process, pH and C- reactive proteins of the wound by the way of triggered alar ming signals - without requiring the removal of the dressing from the wound -which greatly reduces the risk of infections, especially in skin -graft cases or ulcer treatment, when integrated in wound dressing material [5]. Similarly, glucose biosensors determine blood glucose level in the diabetics [6]. Biosensors are stimuli sensitive, pick-up the senses e.g. heart rate, BP, or temperature & then transmit the data to the monitor through a transmitter [7].Electric-conductivity is the best functionality of every electronic circuit & is required in E-wearable/ Textile,achieved by integrating wires or metal plated yarns-into fabrics made up of conductive polymers [8].

Keeping in views the functionalities of E-wearables by the help of biosensors & conductive fibers- the potential , scope & advancement in the field of integrated technologies there is inclined focus on the intelligent imagination , hybridization & creativity of high tech future textiles/wearables to improve the quality of life of humans by the way of health management, comfort,fun & convenience, there is need to know the existing trends in E-wearables & imagine & create the new ones

REVIEW OF LITERATURE

The key challenges facing the practice of medicine today is represented along with the need for high-tech ,non invasive , cost -effective solutions that can prevent the problem [9].We are at the beginning of new revolution ,with the high tech technologies ,one of them being merging of textiles and electronics ie E-textiles for health care management .In this context-the intelligent use of biosensors, actuators ,processors monitoring devices & electronic components to use biological parameter s for the detection of changes in the environment & convert these biological responses into signals[10]. Smart wearables are interactive textiles with integrated electronic structure sensing, actuating &

*** Asst. Prof. Biochemistry, Govt. Home Science College, Jabalpur (M.P.) ** M.D. Anesthesiology, Jabalpur (M.P.)**

communication functions. Their multifunctional wearable devices are flexible & comfortable to the human body promoting quality of life. Wires and micro metal plates are integrated into fabric, conductive pigment are printed into fabric surface[11].The embedded sensors are completely comfortable & cannot be felt in the body, have ambulatory use, are light weight, machines washable-form a non-invasive monitoring system E-textiles bears core technology including fibers, films ,coating that react to electrical, optical and magnetic signals-providing embedded intelligence to the knit , woven or non-woven textile structures. .This technology brings intellectual property encompassing unique variations of these innovation material & systems, by the way of biosensors [12].

METHODOLOGY "Preparation of conductivity yarn"

To prepare and develop E-textiles 1.5mm thick cotton yarn is dipped in to a solution of carbon - nanotubes in water and then into solution of a special stickly polymer in ethanol. After being dipped just for a few times into both the solutions & dried, the yarn is able to conduct enough power from a battery to illuminate a light emiting diode device (LED) Just after few repetitions of the process - the normal cotton becomes a conductive material coz. carbon nano tubes are conductive.The only change in yarn is that it turns black due to carbon , but remains soft and pliable Yarn coated with electrically conducting carbon nanotubes can be woven into smart textiles .This concept of electricially sensetive cothing made up of carbon nanotubes coated cotton is flexible, light weight & can be adapted for a variety of health monitoring tasks as well as high performance garments [13]. conductive materiasl have high metallic content in the textiles- like nickel, copper, silver coating with versatile combination of physical & electrical properties for a vareity of demanding applications in many areas.[20]

ELECTRONIC INTEGRATION-

Nextiles are the textile of next generation with embeded integrated electronics that increase the IQ of the textiles .These seamlessly integrated conductive polymers couple , electronic functionality into the innovative interactive textile. Conductive textiles are first prepared & then they are embeded with electronic devices light micro computers , flexible TV screen , Micro cellular phones, Solar cells , energy recovery system , flexible keyboard circuitory, Audio-Video systems by a sensor and other products that can make the textile more smart & intelligent. Embeded electronics allow communication , store information, receive functions once activated by outside signal. Digital information processors produce extermely valuable applications[14].

INTELLIGENCE OF THE FUNCTINAL TEXTILES

- Impulses coming from inside and outside the body are sensed by the sensitive devices embed in the textile, relayed & conducted at the molecular level of the fiber of the textile structure[15].

CHEMISTRY OF FIBRES & FABRICS USED IN ELECTRONIC TEXTILES -

A family of highly conductive elastic fibres are used to weave or knit conductive optical fabric structure which are textile friendly for easy knitting & weaving .These are elastomeric polymers Nylon/ Lycra, which gives a second skin feel, is used in heat sensing bra and heart strap. Metal plated yarns conductive polymers- used in electro active fabrics in which metals like nickel, coper and silver is used as coating shape memory polymers are alloys Eg. Nickel-Titanium, which provides protection against extreme heat . Cuperous - Zinc alloys are used to protect changeable weather condition . Polyurethane films are incorporated between adjecent layers. Glass fibers , silk fibers,ceramic fibers , raw and regenarated bamboo fibers , cotton fibers, Linen , Ramie , Jute , Sisal , Flax , Soyabean fibers , hemp, Lyocel, wool lactide and glycoside polymers , Silicate fibers , polyamide fibers , Zeolite fibers, acetate fibers etc. in haemostatic textiles .Shape-memory alloy & shape memory polymers have been modified to allow the materials to be incorporated in to the woven structure consisting of nano layers of polymer based organic compounds into flexible poly propylene fibres layer by layer . Polymer foam material such as silicone or urothane used for bedsore prevention mattress [16].

INNOVATIVE APPLICATION OF E-TEXTILES IN HEALTH CARE MANAGEMENT-

Application and impact of the integrated technologies are innovative, non-invasive & useful in the continuum of life,by preventing various illnessess aimed at improving the quality of life

E-TEXTILE IN HEART & RESPIRATION MONITORING E-textiles for monitoring heart & respiratory functions of the wears are available under the brand name "TEXTRONICS" . Biosensors in these textiles form non invasive physiological monitoring of heart -rate & respiration by electrical signal sensing or optical method to sense motion by heart beating. By these wearable E- textiles as bra in females & chest strap in males mechanical signalling is given to the system. This motion signal is monitored which is generated by the geometric change in the body surface in response to physiological rhythmic activity i.e. heart beat & lung expansion & contraction. The measurents are non-invasive & do not require electrodes to contact the skin .This system

consists of a fabric which exhibits light transmission & reflection properties that can be placed strategically in a garment .The amount of light transmitted through the fabric relative to the amount of light reflected by the fabric , changes , when the fabric stretches in response to a dramatic motion like respiration or a subtle motion like beating of heart .This is a method of sensing the electrical signal generated by the body via textile elecrodes in a unique design configuration which produces high quality signal sensing. Flexible sensing fiberas pickup the heart rate and transmit the data to a fitness watch through a transmitter.Sensors for ambulatory use are crafted into a light weight , machine-washable garment , a non - invasive monitoring system that continuously collects , records ,analyses-a broad range of cardio-pulmonay information(17).Integrated peripheral devices additionally measure parameters such as B.P., blood oxygen saturation , end -tidal CO2 to provide a real time view of the wearer's physiological state. Reflective oximetry users biotex probe for measuring O2 satuartion in the blood around thorax in this technique.Intra red light is used for the oximeter sensor embeded & integrated into the wearable biotextile

ELECTROLYTE MEASUREMENT :

Ionic biosensors in biotex-tiles are capable of measuring potassium, Sodium & Chloride ions in the tiny sweat droplet .This non-invasive technique - thus measuring electrolytes in blood , just by wearing high -tech sensor embeded wearable E-textiles

IMMUNOSENSORS FOR THE MEASUREMENT OF SPECIFIC PROTEINS -

Specific proteins named immunoglobulins are present in our blood for the defense mechanism & immunity of our body against many diseases. E-textilesare developedwhich have integrated immuno-sensors into the wound dressing or bandage to detect the specific protein & immunoglobulins in our blood .This defines & decides the immune - health of our body

pH SENSORS

pH biosensors use colour changes or other optical measurements Eg. As the sweat passes through the pH sensor , it causes an indicator to change the colour , which is detected by a portable spectrometer device .Plastic optical fibres are woven onto the fabric so that light can be supplied to the optical sensors & the reflected light is directed to the spectrometer .So by this simple technique ,acidity or alkalinity of the blood can be found out.

ANTIMICOBIAL & ODOUR ABSORPTION TEXTILES :Textiles with build in integredients - seamlessly integrated into manufacturing process - kill or inhibit the growth of micro organisms by antimicrobial technology .This technology helps protect treated products against damage causing bacteria ,mold , mildew & fungi , that can cause stain , odour or product .deterioration . By inhibiting the growth of micro-organinsms - this antimicrobial technology helps the product remain -cleaner & fresher between cleaning . These textiles also absorb -airborne compounds responsible for odour .Built in antimicrobial technology & odour absorption offers cutting edge solutions for consumer, commercial and industrial application to tackle the growth of unwanted microoraganisms . Fabric polymer is prevented from deterioration by controlling and eleminating the cultivation & growth of bacretria .(18).

HEMOSTATIC TEXTILES;

These textiles comprise of materials which are combination of glass fibre & one or more secondary fibres selected from the group consisting of silk fibre, raw or regenerated bamboo fibres , linen, ramie, jute, flex, Sisal , Soyabean fibre , corn, hem, Lyocel, lactide polymers , Silicate fiber , polyamide fibers , Zeolite fibres, acetate fibres & its intregation with hemostatic textile capable of activating hemostatic system in the body .When applied to the wound. Additional cofactors such as thrombin & hemostatic agent like RL-platelets , RL-blood cells, fibrin fibrinogen & combinatin there of may also be incorporated into the textile to stop bleeding. Hemostatic bandages contain chitosan molecules extracted from shrimp shells. These bangades are infused with kaolin that triggers blood clotting upon application. Chitosan rapidly allows the blood to clot & is hypo-allergenic as well as antibacterial **(19)**.

INSUALATION TEXTILES

These are intelligent textiles with textile materials that think for themselves. They keep us warm in cold environment & cool in hot environment .Specially important for Military industry Eg. Garments for exterme winter condition & uniforms that changes colour for camoflage effect .The quantity of heat produced by humans depends very much on the physical activity & can vary from 100 watt while resting & 1000 watt during maximum physical performance . Thermal insulation of clothing system primarily depends on physical activity , surrounding conditions and humidity . Polyethylene & polyolefins are used for this purpose as component fibres . High thickness low density improves insulation .Thermal insulation is provided by the gaps between garments layers.Phase change materials & shape memory materials are used in these garments to provide superior protection, comfort ,light weight and freedom for movement. Brand name hydroweave is available in garments that cools through evaporation, designed with three layers , when soaked or immersed in water, the central layer absorbs & retains

moisture, as the water evaporates from this layer .

The fabric cools the wearer while its braethable outer shell & conductive water proof inner linning keeps the wearer dry .Super water absorbing polymer fiber s blended with fibrous matting.,Outer shell is madeup of neoprene & is breathable , woven or knitted fabric .Middle layer is water absorbing matting made up of hydrophilic & hydrophobic blended fibres which are evaporable .Inner thermally conductive waterproof linning which is micro porous memberance allows prespiration to escape keping the wearer cool.

There is evenly distributed cooling effect over the entire fabric which is flexible.Wearer remains dry .These textiles are machine washable, reuseable, cools without excess water , cools dry without feeling of moisture .Best applications are for policemen, pit-crews, road-crews ,contruction workers , airport ground,personnels fire fighters & in sports . These garments descipate large amount of radiant heat energy. Around fire it provides effective barrier & shielding [20]

TEXLITE FOR MONITORING SIDS:

A sudden unexpected death of a young body without any specific cause is offen attributed to breathing failure probably coz. of suffocation, over heating or choaking is defined - sudden infant death syndrome (SIDS) . Today the intelligent textiles under the name Mamagoose.SIDS monitor is developed consisting normal washable textile pajamas with built in sensors to track baby's heart rate & breathing pattern plus an electronic signal processing & data collection unit to sound on alarm in case of a failure [21].

E-TEXTILE FOR PREVENTIN OF BED SORES

There are pressure & displacement sensor specifiacally designed for installation beneath the mattress, on a bed at home or nursing home for measuring patient's motion & agitation in a complete unobstrusive way.Textile material for mattress is common polyner- foam material such as silicone or urothane. A biosensor is fabricated in the mattress .

Any deformation of the foam generates a change in the optical properties proportional to the extent of deformation & a simple optical transducer senses & records the change .Another applicatin produces a pressure image of the patient ie increasing pressure between the mattress & the patient.This information is used to assess the bed ridden patient's risk of devoloping decubitus ulcers[22]

GLUCOSE - INTERACTIVE WEAR FOR DIABETES MELLITUS TYPE-II

According to WHO India would have around 57million diabetic patients by the year 2025. Type-II diabetes mellitus is the most common form of diabetes. Novel drug delivering technnologies have been developed for optimal & controlled drug delivery for diabetics . In the field of medical textiles - glucose sensitive interactive wears are being developed for borderline type-II diabetics,where the potent herbal drug delivery system is incorpotayed into the wear & the drug is delivered in a controlled & optimal way. The technology is based on the reaction of glucose in the blood with the glucose oxide (GOD). This reaction is immobilized on polymers.The glucose -GOD reaction causes a lowering of pH in polymer drug delivery specific area .

It causes an increase in the swelling of the polymer drug delivery system , leading to an increased release of anti-diabetic herbal drug into the blood, by the transdermal drug delivery device, which permeates the skin. The polymers are pH-sensitive & degradable in the acidic medium, non- toxic, biodegradable, bio compatible to the skin.Incorporation of the novel transdermal drug delivery device in a T - Shirt , integrated with requird sized patches at certain skin contact points .Patch is laminated on the T-shirt .A patch can be worn for 3-5days, as it is detachable[23]

Benefits of glucose interactive wears: is that

1. There is freedom from oral drug intake
2. Needle free , painless , non-invasive treatment
3. controlled release of the drug
4. steady blood glucose level profile
5. Reduce systematic side effect
6. By passes the first phase heptic metabolism so, reduces gastric troubles.
7. User friendly & convenient
8. Improves the patients compliance

WOUND CARE TEXTILES:

Today worldwide wound care market has exceeded to $11.8 billion by 2009 Bio-polymers used in wound care management are bacteriostatic , biocompatible, antiviral , fungistatic , non toxic, highly- absorbant , non allergenic , breathable. Hemostatic & manipulative to incorporate medication. For wound care management . the traditional textiles are blended with or are modified , based on alginates, which absorb exudates from wound and forms gel. Chitosan is deacetylated form of chitin.Chitin is a valuable natural polymer with excellent bioactive properties.Sources of chitin are shells of crabs , shrimps , lobsters , instects wings etc. It is antibacterial , antifungal, non toxic , non allergic , breathable & absorbent chitosan-absorbs antibiotic molecules from aqueous solution .Alginate fibres are coated with chitosan & used for advanced wound-healing. Branan-ferulate-carbon fibres - are the polymers of carbohydrates, extracted from corn - bran ,that can infiltrate biological activities in the body & so accelerate wound healing [24]. Modern world -care dressings are silver-

yarn, woven , non woven , knitted , crochet braided & composite material & they employ hydrogel , matrix - tissue engineering , films, hydrocolloids , foams , specialized additives with special functions in advanced wound healing eg. to absorb odour , provide strong anti- bacterial properties, ease -out pain & relieve irritation .

They are made - up of highly porours , light weight , nano scale fibres .Porous silicone bandage -containing probe molecules engineered to bind fat molecule on the surface of bacteria. Nano- crystals are present on the porous materials that are luminiscent in the visible range of the spectrum at room temperature.

When bandage is placed over the infected area bacteria from the wound move into the porous silicon & are attached there-in altering the optical properties of the silicon .The change in optical activities is detected by using handheld laser device .Smart bandages are under development with embeded biosensors to detect the presence of bacteria, Enzymes & drug are added to the nano-fibres. Poly-amide flexible textiles, with evenly spaced holes are developed for skin healing , having net structure coated with silicon[25].

CONCLUSION:

Our day to day lives in the next few years will be regulated significantly by intelligent functional E-devices integrated in textiles -clothings,that will start a whole new era in textile industry . E- textiles represent a paradigm shift from high cost patient monitoring in the hospital to affordable unobstrusive , remote & personalized monitoring at home , or on the go. So, it can be concluded that the pace at which new developments & converegence of innovative technologies are progressing - the day is not far when these electronic - products would be found & purchased over the counter with the buying capacity of the consumer. So application & impact of E- textiles in the continuum of life - is a preventive measure from various illnesses , in the improvement of quality of life

SUGGESTIONS:

Textile industry must work together in co-operation with other innovative sectors, partner- industries as well as consumer sectors to provide safety from adversities & protection from unwanted conditions

REFERENCES:

01. Fisher , G "Technical textiles" int. July / Aug 2003 ,19G
02. "Future of modified fibres"in boook. Google.co.in/books
03. Ishihara , k ., "Biomedical Application of polymeric materials" in Tsuruta, T .CRC press 1993
04. Hench,L.L.Ethridge. E.C. "Biomaterials an interphase approach ,Academic press ,NV 1982"
05. Stan Little John , "Medical textiles" IFAI Nashville ,1991
06. www.azosensors.com
07. www.newsmwdical.com , "Textiles material for medical & health care application " J.Tex Ins 1997 88(part3):83-93
08. S.Adanur in "Medical textiles", willington sears, Aubum university .USA Albama ISBN No. 1.556716-3401
09. www.innovationintextiles
10. www.smartsecondskin.com
11. www.inventorspot.com
12. Textronics -3825 , Lancaster pike suite 2011 , wilmington ,Dalaware :19805
13. Lennox - kerr,P ., "Medical textiles- poised for massive growth "textiletechnology International ,1988
14. Rigby, AJ etal "Medical textiles, textiles material in medicines &surgery ", Textiles Horizon , May 1994 prince , T.R. Croghan .J.E. in "Enhancing efficiency & Quality of embulation care through telehealth technology. Kellogg School of management , North west Unioversity Evanston IL USA
15. Kirker , K.R. Luo, Y , Nielson J.H. "Glucosamino glycan - hydrogel films as bio-interaction dressing for wound healing - " Biomaterial 2002:23;3661-71"
16. Hayashi ,T. "Interaction between polymer & biosystem " in Tsuruta , T , etal eds . "biomedical applications of polymeric material "CRC press1993
17. "Park , S Jayaraman,S . "E health & Quality of life - The role of wearable motherboard geogia Institute of Technology, Atlanta Geoegia, US
18. www.newsmedical.com
19. Tamura,H.,Tsuruta, Y. Tokura,S. "Preparation of chitsan -coated alginate filament " - "Material - science & engineering" 2002; 20(1-2) : 143-7
20. www.stomatex.com
21. "Studies in health technology & information"- pp -344-352. ISSn 0926-9630 vol. 108 / 2004 by Lievavan - Langenhove in "wearable E-health system for personized health management : state of art & future challenges"
22. www.physioorg.com
23. Rajendran , S ., Anand ,S .C."Contribution of textiles to medical & Healthcare products & developing innovation medical devices" in "Indian Journal of Fibre & textiles Research"2006, 31:215-25
24. Shills. R. "The explosive growth of woundcare market " .WWW.nerac.com
25. Eaglstein , W.H. "Moist-wound healing with occlusive dressing " a clinical focus " in Dematetologic surgery 2001;27 :175-81

****

Use Of Style Manual : An Analysis Of Ph.D. Theses Submitted To DAVV, Indore

Dr. Kishor John * Dijendra Gain **

ABSTRACT

This paper summarizes the fundamental information regarding style manuals like why style manual is inferred to be used; functions of the style manuals and introductory information of APA, MLA and Chicago Style Manual. This study is basically aimed to find out the pattern of using style manual by the Ph.D. scholars of Devi Ahilya Vishwavidhyalaya (DAVV), Indore particularly in the field of English Literature, Education and Chemistry. It explains objectives, scope and limitations, hypothesis of the study and appropriate methodology used to find out the answers of the hypothesis. The analyses of the data collected on certain variables have been made available in text, table and graph. On the basis of the analysis of data collected in order to know the pattern of use of the style manual by the research scholars of DAVV, Indore, certain inferences have been made and some suggestions also have been specified to develop standard practices of using the style manuals for citing references and making bibliographies.

INTRODUCTION

A style manual is a set of standards for designing, writing and presenting of a report or document, either for general use or for a specific publication or an academic research report. Style guides are not meant to teach one how to write, they were rather created to define the rules and guidelines of proper writing in order to present the written material in a clear and consistent format. In addition to this style manuals teach scholars how to use elements such as punctuation, abbreviations, table construction, heading selection, reference citations, statistics presentations, and other elements in an academic kind of document.

WHY STYLE MANUAL

In the process of writing, author(s) find several authentic information sources from where s/he lifted some ideas related to his/her subject, which are not his / her original ones. It is presumed that the writer should acknowledge the author and source in proper manner. These are the some points which state that why an author should use style manual:-

- To acknowledge the work of other writers,
- To demonstrate the body of knowledge on which you have based your work,
- To enable other researchers to trace your sources.[1]
- To acknowledge other writers' words and ideas,
- To demonstrate the range of sources used and provide some authority to your conclusions,
- To enable readers of your work to locate and verify your sources,
- To avoid plagiarism.[2]

The additional usage of style manuals are:-

- How to prepare a Research Report or Article (the instructions covered from first page to last page)
- Indentation Style
- Use of a parenthetical system of documentation
- How to cite references of:
- Book, and chapters in a book
- Periodical article.
- Electronic resources
- Broadcast media
- Miscellaneous, which includes book reviews, lectures, oral history, reports from conference proceedings, and dissertations.
- How to make bibliography, etc.

Style manuals provide an accurate description of the layout of a document. A document may be a book, a journal article, a video recording, an email, or an internet site etc. A citation or an entry of a bibliography should include and represent sufficient descriptions to identify and locate the document. An author when writing a piece of academic work ought to provide sufficient information within his text about sources cited. These references facilitate anyone reading the work to identify and find the material which author has referred to. Author needs to be consistent in citing references by following international standards and rules for reference and citation.

STANDARD STYLE MANUALS

There are several systems for citing references. From time to time several standards for writing academic and general documents and citing references have been designed and developed to facilitate writers. These are namely:-

- ACS Style Guide [3]
- Associated Press Stylebook [4]
- Chicago Manual of Style [5]
- APA Style [6]

*** Asst. Pro. (Lib.& Inf. Sc.), Indore ** Head Librarian, Renaissance College of Commerce & Management, Indore**

- ISO 690 [7]
- MHRA Style Guide [8]
- MLA Handbook [9]
- Harvard System [10]
- Vancouver System [11]
- New York Times Manual of Style and Usage [12]
- Oxford Guide to Style [13]
- GPO Style Manual. [14]

The above mentioned standards are dynamic, they not only provide guidelines about using and citing references, but also cover all important aspects of preparing academic and general documents. The Style Manuals "concerns with uniform use of elements such as punctuation and abbreviations, construction of tables, selection of headings, citation of references, presentation of statistics, and, many other elements that are a part of a manuscript"[15]. Citing references and making bibliographies is not difficult if you follow the guidelines. The most important thing is to be consistent and follow just one system.

APA, MLA AND CHICAGO STYLE MANUAL

* **APA Style**[16]: "The American Psychological Association (APA) style is widely accepted in the social sciences and other fields, such as education, business, and nursing. The APA citation format requires parenthetical citations within the text rather than endnotes or footnotes"

* **MLA Style**[17]: "MLA style for documentation is widely used in the humanities, especially in writing on language and literature. Generally simpler and more concise than other styles, MLA style features brief parenthetical citations in the text keyed to an alphabetical list of works cited that appears at the end of the work."

* **Chicago Style**[18]: "The Chicago Manual of Style presents two basic documentation systems, the humanities style and the author-date system. The humanities style is preferred by in literature, history, and the arts.

The more concise author-date system has long been used by in the physical, natural, and social sciences. In this system, sources are briefly cited in the text, usually in parentheses, by author's last name and date of publication. The short citations are amplified in a list of references, where full bibliographic information is provided."

USE OF STYLE MANUAL IN Ph.D. THESES IN DAVV, INDORE

A study was undertaken to identify the use of style manuals by Ph.D. research scholars of Devi Ahilya Vishwavidhyalaya, Indore (M.P.) [19]. The area of study encompassed main branches of Knowledge i.e. Science, Social Science and Humanities, and one subject each of these branches was taken for study i.e. Chemistry, Education and English Literature.

OBJECTIVES OF STUDY

The following objectives of the study were taken into consideration:-

- To identify types of style manuals used by the researcher in Ph. D thesis.
- To prepare ranked list of most frequently used style manual.
- Whether instructions given in style manuals are being used or not.
- To know which style was extensively used by research scholars in university.
- Research guides are following style manuals or not.

SCOPE AND LIMITATION

The scope and limitation of the study are as follows:-

- Theses submitted up to the year 2006 in the fields of Chemistry, Education and English literature by Ph.D. scholars in Devi Ahilya University, Indore were taken for study.
- Citations and bibliographies given in the theses have been analyzed and compared with the standards given in style manuals of APA, MLA and Chicago
- The study has covered only citations and bibliographies given by the scholars in their theses, other aspects have not been considered.
- The study analyzed only Chemistry, Education and English literature thesis submitted in Devi Ahilya Vishwavidhyalaya, Indore.
- Theses available in the Central Library, DAVV, Indore were taken in to consideration.

HYPOTHESIS

It is presumed that background information regarding any subject drawn together from a variety of information sources, and the sources used to develop background of a subject must be acknowledged in proper manner. This acknowledgment counts the citation given in the piece of academic research or document.

These presumptions lead me to conduct the study about how the research scholars of DAVV are acknowledging the citations or references. To get an answer of hypothesis analysis of the theses of English, Chemistry and Education by using the standards provided in Chicago, APA and MLA styles has been made. It was also presumed that Ph.D. is being treated as Highest Academic Degree in the field of education and the scholars ought to have used any style for citing the references and making bibliographies.

METHODOLOGY

Reference and Bibliography in Chemistry, Education and English literature thesis are the basic source of information to assess the information used by the researchers.

The references and bibliographies given at the end of a chapter and a Ph. D. thesis respectively have been taken as the source data. Data has been entered into MS-Excel and tabulated according to the objectives of the study and further classified according to APA, MLA and Chicago style manual. To understand the analyses of data, the data has been presented in text, tables and graph forms.

DATA ANALYSIS

Data collected from the Ph.D. thesis submitted to the University for Award of doctorate in Chemistry, education and English literature. Total 133 theses have been analyzed according to the guide lines given in APA, MLA and Chicago manual regarding citing references.

YEAR WISE DISTRIBUTION OF THESES

Table No. 1

Year	Chemistry	Education	English Literature	Total
1970-1979	06	00	02	08
1980-1989	07	00	07	14
1990-1999	22	09	29	60
2000-2006	06	14	24	44
TOTAL	41	23	62	126

The data given in table regarding year wise distribution of theses expresses that maximum 60 (i.e. 47.63%) theses submitted for award of doctorate during the period 1990-1999, however, minimum 8 (i.e. 6.35%) theses were submitted during the period 1970-1979. Total 126 theses have been submitted for the award of the Ph.D. during the period 1970-2006 in the Chemistry, Education and English literature respectively. (See Graph No. 1)

USE OF STYLE MANUAL

Table No. 2

Subject	APA	%	MLA	%	Chicago	%	Other	TOTAL
Chemistry	0	0.00	3	2.38	0	0.00	38	41
Education	1	0.79	3	2.38	0	0.00	19	23
Eng. Literature	0	0.00	28	22.22	0	0.00	34	62
Total	1	0.79	34	26.98	0	0.00	97	126

The analyses according to the use of APA, MLA and Chicago Manual in Chemistry, Education and English Literature for citing references and making bibliography has been carried out and established that out of 41 theses in Chemistry only 03 (7.32%) theses have followed MLA Style and 38 (92.68%) theses have not followed any standard. In education discipline out of 23 theses only 01 followed APA Style and 03 MLA Style, and 19 (82.60%) theses not followed any standard. Interestingly established that out of 68 theses 28 (45.16%) theses in English Literature followed MLA Style Manual and 40 (54.84%) theses did not follow any style for citing references and bibliography. (See Graph No. 2)

STYLE MANUAL USED BY PH.D. SCHOLARS OF COLLEGES/INSTITUTES

Table No. 3

Name of College	No. of Theses	%tage	Style Used	%tage	%tage of 70
Holkar Science College, Indore	12	17.14	3	25.00	4.29
Indore Christian College , Indore	10	14.29	8	80.00	11.43
Govt. Art and Com. College, Indore	25	35.71	8	32.00	11.43
Govt. Girls P.G. College, Indore	16	22.86	3	18.75	4.29
Other Colleges/Institutes	7	10.00	2	28.57	2.86
Total	70	100.00	24	34.29	34.29

There are more than 200 colleges affiliated with DAVV, and their research scholars (Students and Teaching Staff) are conducting doctoral research under its jurisdiction.

The data collected expresses that highest number of theses submitted by the Government Arts and Commerce College, Indore during the period of consideration i. e. 25 (35.71%) and lowest number of theses submitted by the Other Colleges/Institutes affiliated to the DAVV, Indore i.e. 7 (10%) theses. The data also expresses that the Ph.D. scholars of Indore Christian College, Indore are highest with 8 (i.e. 80%) theses out of 1

0 theses and Ph.D. scholars of the Govt. Girls P.G. College are lowest with 3 (i.e. 18.75%) theses out of 16 theses in respect of use of style manual. (See graph No. 3)

STYLE MANUAL USED BY UTDs

Table No. 4

Name of UTDs	No. of Theses	% tage	Style Used	Individual %	% of 56
Vice Chancellor	1	1.79	1	100.00	1.79
School of Advanced Liberal Studies	20	35.71	4	20.00	7.14
School of Education	14	25.00	2	14.29	3.57
School of Chemistry Sc.	17	30.36	2	11.76	3.57
Other UTDs	4	7.14	2	50.00	3.57
Total	56	100.00	11	19.64	19.64

There are 35 Schools/Institutes (UTDs) of DAVV, and their research scholars (Students and Teaching Staff) are conducting doctoral research under its jurisdiction.

The data collected expresses that highest number of theses submitted by the School of Advanced Liberal Studies during the period of consideration i. e. 20 (35.71%) and lowest number of theses submitted by the Vice Chancellor Office i.e. 1 (1.79%) thesis. The data does not reveal any trend in respect of use of style manual by the Ph.D. scholars,

because it is scattered. (See raph No. 4)

COMPARISON OF UTDS AND THE COLLEGES/INSTITUTES

Table No. 5

UTDs V/s Colleges/Institutes	No. of Theses	%tage	Style Used	%tage	Overall %tage
UTDs	56	44.44	11	31.43	8.87
Colleges/Institutes	70	55.56	24	68.57	19.35
Total	126	100.00	35	100.00	28.23

The data regarding comparison of UTDs and the Colleges/ Institutes states that out of 70 (i.e. 55.56%) Ph.D. scholars of affiliated colleges/institutes total 24 (68.57%) used style manual for citing references and making bibliographies, and out of 56 (i.e. 44.44%) scholars of UTDs total 11 (i.e. 31.43%) used style manual for citing references and making bibliographies. The overall data also clears that colleges/ institutes are above in using style manual. (See graph No. 5)

STYLE MANUAL USED BY RESEARCH GUIDE

Table No. 6

Name of Guide	No. of Theses	Style Manual Used	Subject
Anuradha Joshi	2	0	Education
Ashok Kumar	2	0	Chemistry
Ashok Mahashabde	8	4	English
B K Passi	3	0	Education
D N Sansanwal	4	0	Education
Manik Sambre	4	4	English
R C Ojha	4	3	English
R K Bajpai	20	3	English
R Moses	5	3	English
R N Sharma	4	2	English
R Prasad	3	0	Chemistry
S L Garg	3	0	Chemistry
S S Chandel	3	0	English
S Samtini	2	2	English
Umesh Chand Vashisth	2	0	Education
Usha Chandel	6	1	English
Chemistry Guide	33	3	Chemistry
Education Guide	12	4	Education
English Lit. Guide	6	6	English
Total	126	35	

Above table shows that the highest number of Ph.D. was awarded under the guidance of Dr. R. K. Bajpai, which is 20 but only 3 (9.38%) Ph.D. Scholars have used style manual for citing references and making bibliography. It can also be analyzed from the above table that only English scholars are more inclined towards using style manual to present citations and bibliographies. In this table the names of supervisors who have guided two or more then two Ph.D. have been included.

LANGUAGE USED IN THESES

Table No. 7

Language	Total No. of These	% tage	Style Manual Used	%tage
English	120	95.24	34	26.98
Hindi	6	4.76	1	0.79
Total	126	100.00	35	27.78

Above table shows that maximum number of theses in the English Language have been submitted for the award of Ph.D. degree which is 120 (i.e. 95.24%), and least numbers of theses in the Hindi Language have been submitted for the award of Ph.D. degree which is 6 (i.e. 4.76%) in DAVV during the period of consideration of the study. The average of citing references and making bibliographies according to the any standard style manual among the scholars of English language is higher in comparison to the scholars of Hindi language. (See graph No. 6)

FINDINGS

1. It can be visualized from the data of Ph.D. scholars that highest number of theses submitted during the period of 1990-1999.
2. The data collected for the study of style manual indicates that since 1990-1999 the number of Ph. D in Chemistry, education and English literature are increasing.
3. It seems that theses submitted in the field of English literature are more appropriate and according to the MLA style. It also speaks that the MLA style for citing references and bibliography are more popular in researchers of DAVV, comparatively to other styles like Chicago and APA.
4. The mean value of the theses submitted and style manual used by the Ph.D. Scholars of Colleges/ Institutes is 14 and 4.8 respectively. The overall use of style manual by the research scholars of colleges/ institutes is 34.29% out of 70 theses.
5. The mean value of the theses submitted and style used by Ph.D. scholars of UTDs is 11.20 and 2.2 respectively. The overall use of style manual by the research scholars of UTDs is 19.64% out of 56 theses.
6. The data regarding Ph.D. guides indicates that the guides of English Literature are more sincere then Chemistry and Education in citing references and making bibliographies according to the style of manuals.
7. Use of different style manual in theses submitted in Chemistry, Education, and English literature explains that the research scholars are neither aware of style manual nor followed the instruction given by the university

in Ordinance 18.

08. Researchers in Chemistry have not use any guides line of style manual in their research.
09. Out of 19 Ph.D. theses in the field of education only 1 used APA and 3 used MLA.
10. Out of 62 Ph.D. theses of English literature only 28 scholars used MLA.
11. "Indore Christian Collage" research scholars are following style Manual properly.
12. DAVV awarded Ph. D in many subjects but supervisors are not following style manual in their Research Work.
13. Majority of theses have been submitted in English language.
14. Analysis of the data collected from the theses of chemistry, Education and English Literature clearly express that use of style manual is not being made appropriately.
15. The research guide and the Ph.D. research scholars are not considering this aspect gravely.
16. The ordinance No. 18 20 neither provides complete information about style manual nor does it guide research scholars in this regard.

SUGGESTIONS

Based on the analysis of Ph.D. theses of chemistry, education and English literature submitted by the Ph.D. scholars during the year 1970-2006, the following suggestions can be made:

1. Researchers should properly follow the patterns of any standard style manual to prepare their research reports.
2. Supervisors should also necessary to be trained for the use of style manual in regular manner.
3. The University should also amend its ordinance and provided complete information about physical and manual lay out of theses or use any standard style manual like MLA, APA and Chicago.
4. We felt that there is a need of a refresher course or a course capsule/workshop for Ph.D. Scholars on "How to Cite References" or on "Standards of Style Manual", because style manual is an effective tool for the researchers and it facilitates to represent any academic work in a standard format.
5. In most cases, the uses of style manual are not made properly, this habit should be avoided.
6. The guide of Ph.D. Scholars should be encouraged to use subject style manual.
7. The standards style manual should properly be studied before preparing research report.
8. Inaccurate and incomplete references and bibliography should be avoided.
9. The DAVV, Indore is an NACC accredited University and sincerely looking ahead in R&D activities. It must not overlook this important aspect of using standard style manuals, because habit of not using style manual will affect R&D activities. Thus it requires an immediate stride to eradicate this irregularity.

REFERENCES

01. http://wwwlib.murdoch.edu.au/find/citation/citewhy.html
02. http://www1.aston.ac.uk/EasySiteWeb/GatewayLink.aspx?alId=2518.
03. http://chemistry.library.wisc.edu/writing/acs-style-guidelines.html.
04. http://www.apstylebook.com/
05. http://www.chicagomanualofstyle.org/home.html
06. http://www.apastyle.org/
07. http://www.iso.org/iso/
08. http://www.mhra.org.uk/Publications/Books/StyleGuide/
09. http://www.mla.org/style/style_top_index.htm
10. http://libweb.anglia.ac.uk/referencing/files/Harvard_referencing.pdf
11. http://www.library.uq.edu.au/training/citation/vancouv.pdf
12. http://en.wikipedia.org/wiki/The_New_York_Times_Manual_of_Style_and_Usage
13. http://www.ritter.org.uk/AboutOGS.html
14. http://www.gpoaccess.gov/stylemanual/browse.html
15. http://apastyle.apa.org/
16. http://www.calstatela.edu/library/guides/3apa.pdf
17. http://www.mla.org/style/
18. http://www.chicagomanualofstyle.org/tools_citationguide.html
19. http://www.dauniv.ac.in/
20. http://www.dauniv.ac.in/Ordinance.php

(Graph No. 1)

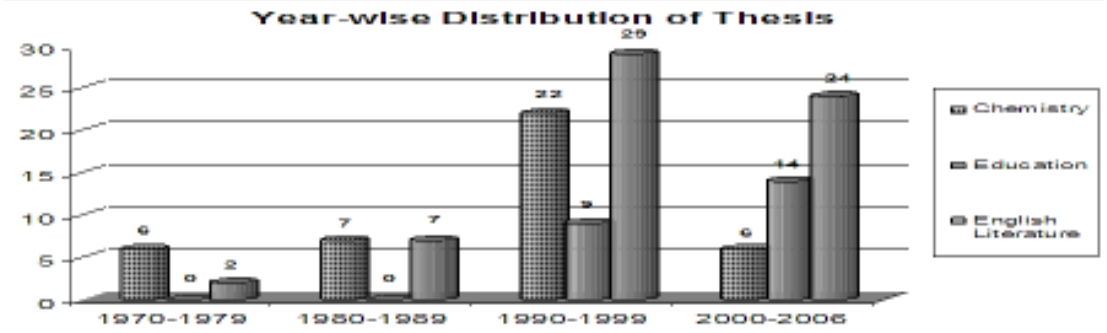

(Graph No. 2)

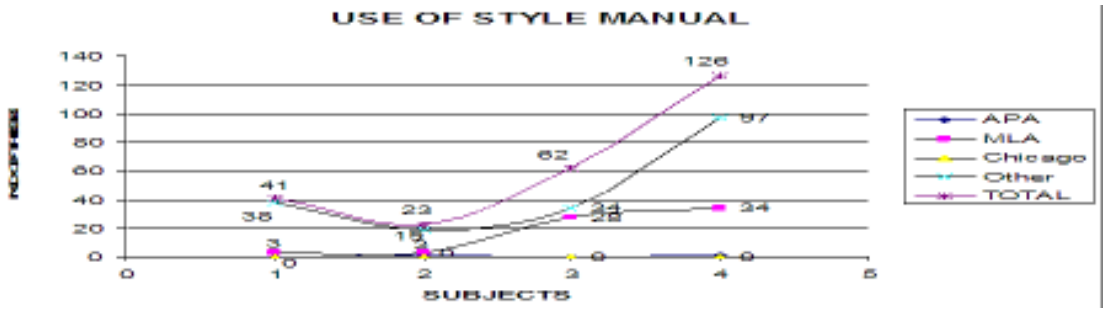

(Graph No. 3)

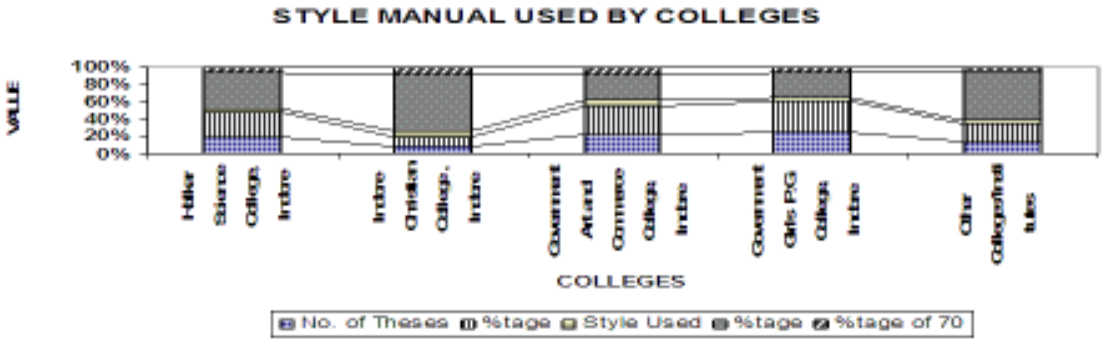

(Graph No. 4)

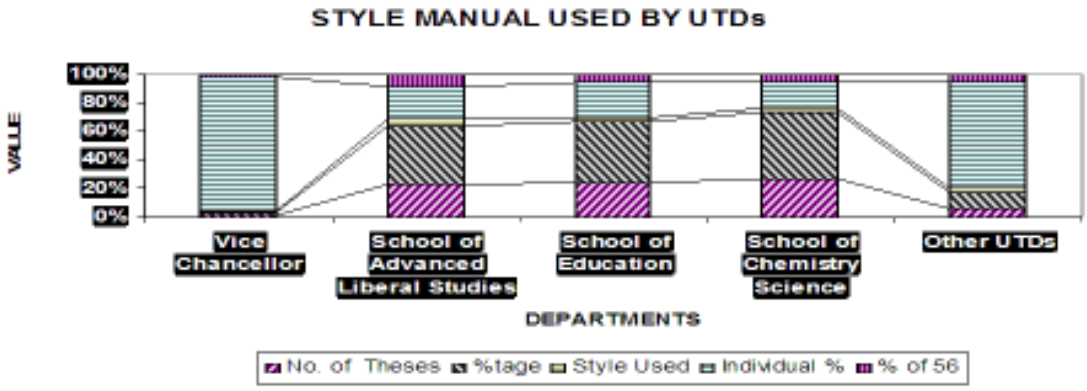

(Graph No. 5)

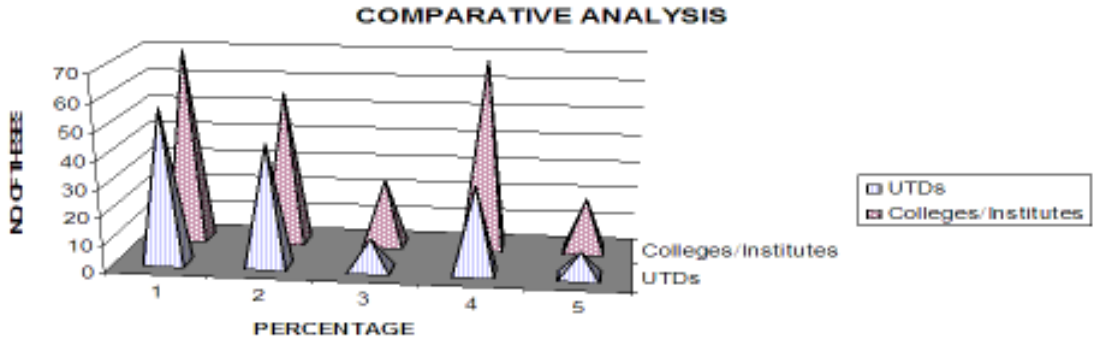

Cultural Heritage of Panna- A Historic Mythological centre with special reference to Pran Nath temple

Dr. Vinay Shrivastava *

Bundelkhand is situated in the centre of India. The traditional, Geographical, cultural $ bilingual boundaries have been decided in the North from river Yamuna, in the south from river Narmada, in the west from Chambal river and in the east from Tones river since antiquity.[1] Bundelkhand was known as the centre part between the kalindi (Yamuna) and Narmada in Gupta period . Bundelkhand was known as Jaijakbhukti during Chandela period. The inscription of 954 A.D. indicates that the boundaries of Chandel King Dhang were extended from Maswat (Bhelsa), situated on the river Malwa (Betwa), up to Tames (Tones) river from Yamuna to Narmada river. The fort of Gopagiri (Gwalior) and Kalinger were also under the rules of chandela kings. [2] This Janpada was known as Bundelkhand in the mid of 16th century, just after the rise of Bundela Power. This region was known as different names in ancient period such as Puling, Dasharn, Chedi, Madhya Desh etc.[3] This region was ruled by Chandelles before the rise of Bundela Power.[4]

Panna is a sanad state in the Bundelkhand Political charge of the central India Agency, lying principally between north latitude 23^0 50' and 25^{0}2' and east longitude 79^0 45' and 80^0 42'. The state covers an area of 2,371 sq.miles.[5] The chief town of the state Panna situated in 24^0 43' north latitude, and 80^0 12' east longitude. The town laying about 800 feet above sea level and 300 feet below the neighbouring hills in a valley containing several lakes.[6]

The early History of the tract in which the dominions of Maharaja Chhatrasal of Panna lay have been dealt with already in the Gazetteer of the Orcha and Rewah states. The History of Panna is intimately connect with that of Orcha in conjunction with which it should be read.[7]

After the revolt and death of Maharaja Jujhar Singh in 1634 A.D. the Orcha state territories were incorporated in to the Mughal Empire.[8] The Bundela, however, irritated by the extinction of their principal chief ship, rose in all directions, and, added by the rugged nature of the country defied all attempts on the part of the Mughal authorities to reduce them to order. At this juncture, moreover, a leader appeared in Champat Rai Bundela.[9] Champat Rai was a grandson of Udayaditya, or Udayajit, the third son of Raja Rudra Pratap, the founder of Orcha, who had ,on his father's death, received Mahewa(240 24' N,800 10' E) in Jagir.[10]

Panna was originally a 'Gond' settlement, but fell apparently to the Beghela chiefs of Rewah in the 13th or 14th century.[11] It was in 1494, in the time of Raja Bhira and again in 1499, the object of an attack by Sikander Lodhi.[12] In 1555 it was held by Raja Ram Chandra of Rewah. In the 17th century it was taken by Chhatrasal, and became a place of importance in 1675, when he made its capital.[13]

Tieffenthaler, who visited the place about 1765, calls Panna a populous village of the Dangahi chief, famous for its diamond mines.[14]

Panna is very well known for its architectural heritage and beautiful historical Temples. The temples of Panna district presents a fine blend of Hindu$ Muslim architecture. Panna is the most sacrosanct pilgrimage for the followers of the Pranami sact world over. The dominant architecture schemes of a majority of the temple are informally homogenous.[15]

The temple buildings in the Panna town are largely constructed of local stone which gives it a clear and substantial appearance .The most important edifice are the palace, the temples to Jugal Kishore, Shri Baldeoji, Pran Nath ji etc.[16] This Paper deals with the historical and architectural importance of Bundeli temple architecture of Panna with special reference to the Pran Nath temple.

Mahamati Shri Pran Nath Temple (Gummathji Temple)

The temple of Pran Nath belongs to the interesting local sect of the Dhamis or Pran -Nathis.[17] The exact date of Pran Nath's arrival in Panna is very uncertain. From the best accounts he appears to have come in the time of Raja Sabha Singh in about Vikram Samvat 1742, and not as popular tradition has it in the time of Chhatrasal.[18] Another source reflects that the meeting of Mahamati Pran Nath and Chhatrasal was held in Mau, near Chhatarpur by the efforts of Devkaran, the nephew of Chhatrasal in Vikram Samvat 1740.[19]

Pran Nath appears to have risen to favour by being instrumental in causing the diamond mines to be re opened.[20] Pran Nath was native of Jamnagar in Kathiawar, and was of Kshatriya caste.[21] He is said to have settled down on the bank of Kundia river.[22] Pran Nath, like Kabir, was well versed in the lore of both the Hindu and Muhammadan faiths and

*** Asst. Professor (History) Govt. P.G. College, Panna (M.P.)**

endeavored to show that no essential difference existed between them.[23] To this end he collected a large number of sayings from the Vedas and from the Kuran, which he compiled in to fourteen books, all in verse. The language is very uncouth.[24] The disciples of Pran Nath prove their acceptance of his doctrines by eating in a mixed assembly of Hindu and Muhammadans.[25] It does not appear, however, that with this exception and the resulting abolition of all east's, that the two classes in any way confound their civil or religious distinctions, the unity of belief consisting merely in admitting that the God of the Hindu and of the Musalman or any other faith is in reality one and same.[26]

Those who follow this faith are known as Pran -Nath's, or Dhamis.[27] The object of worship in the temple of Pran Nath is one of Pran Nath's Book, which is kept, on a gold embroidered cloth.[28]

Pran Nath temple is one of the most famous temples in Panna District. It is located in the west side of Panna. This huge and beautiful temple was constructed under the rule of Maharaja Chhatrasal and under the supervision of Seth Lal Das. This is the most important temple of Pranamies, which reflects their social life.Shree Banglagi temple was constructed in Panna by Mahamati Pran Nath ji in 1683 A.D.The followers of Pran Nath have converted this temple in to 'Sabha Bhawan' by hard physical labour. Pran Nath was used to deliver his Spiritual Speech called 'Brahmvani' regularly. This place was the pious residence of Mahamati Pran Nath.[29] The construction of this temple have started in 1688 A.D.[30] and completed in 1692 A.D.[31] This temple is also called shree Gummat ji temple.[32]

The Garbha Grah of this temple is Octagonal. It has eight corners,(Pahlu) in North, South, East ,West, Agni, Nairatya,Vayavya $ Ishan direction.[33] The Shikhar (Dome) of this temple has constructed with Golden Kalash.[33] The main central Dome has constructed with eight additional Domes.[34] These Domes are the symbol of Ideology of Pran Nath ji's 'Sarvadharm Sambhav'.[35] The interior decoration of this temple is according to the Bundeli style.[36] Bundeli style have come in to an existence with the mixing of Rajasthani, Mughal, and the local architectural style.[37] inner walls of this temple decorated with "Pachhikari" and beautiful paintings which reflects the Ras Leila of Lord Krishna.[38]

It is believed that Pran Nath ji lived here and will remain here and thus became the highest Pranami tirtha as Mahamati's Punyasthali, and hence Panna is the Param Dham for Pranamies.[39] This temple reminds one of the great Taj Mahal. The Rang Mahal has eight Pahals. The spherical central Dome is as Muslim architecture and the lotus form on this Dome is according to Hindu tradition. The glistering divine Golden Kalash is accompanied by the divine Panja, which denotes Mahamati's blessing and signifies the Aksharatita Purna Brahmanl.[40] The main entrance of central Dome is called Kamani Darwaza, which is made of Silver.[41] on Sharad Purnima, every year, thousands of people gather here to celebrate the Mahotsava.The 'Tartam Sagar' Grantha is present in this temple, which is collection of the 'Spiritual Speeches' of Pran Nath.[42]

After the decline of Mughal Empire, Muslim architectural wisdom appeared in this temple like Domes of temples are plain as well as onion shaped. Pran Nath temple of Panna have Kalash on the top $ and most of the tallest Dome have a lotus form.[43]

Thus, the heritage of Bundelkhand architecture has reflected in Pran Nath temple of Panna, which reflects the architectural glory of Bundeli style.[44] This temple represents the Hindu, Muslim unity, religious strength and mutual love and affection of the people of Panna.[45] The Pran Nath temple reminds the beauty of Medieval architecture and mix with Bundeli architecture. This temple reflects the new ideas and ideology of society of this region.[47] The temple of Pran Nath is the important source of beautiful paintings, decorative features, and cultural Haritage of Bundelkhand.[48] The Pran Nath temple of Panna creates a cultural fusion in religion, art and architecture in Medieval period of Bundelkhand.

References-

01. R.K.Dixit, Chandelles of Jaijakbhukti, Lucknow, 1977, P-12.
02. N.S.Bose, History of the Chandelles, Calcutta, 1956, P-42.
03. Hemchandra Rai Choudhary, Political History of Ancient India, PP-68, 93, 95,128-131.157, R.C.Mazumdar and Altekar, The Vakatak Gupta Age, PP-36-39,102,112,143,169.
04. B.D.Gupta,'Mugalon ke Antergat Bundelkhand ka Samajik aur Arthik Itihas, Hindi Book Centre, New Delhi, 1997, P-24.
05. Captain C.E.Luard (Compiled) The Central India State Gazetteer Series, Eastern States (Bundelkhand) Gazetteer (Called after this E.S.G.), Vol.VI-A Text, Published by Central India Agency, Indore and Printed by Newul Kishore Press, Lucknow, 1907, P-163.
06. Ibid, P-198.
07. Captain C.E.Luard and Munshi Shambhu Dayal,'The Central India State Gazetteer series, Panna State Gazetteer' (Text and Tables), Printed by Newul Kishore Press, Lucknow, 1907, P-6.
08. Elliot's Muhammadan Historians, "The History of India as told by its own Historians by Sir H.M.Elliot, K.C.B...Edited by Prof. J.Dowson, London, 1877, Vol.VII, PP, 7, 19, and 47.
9. Captain C.E.Luard, Op.Cit, P-168.
10. Elliot'sMuhammadan Historians, Op.Cit. Vol VII, P-61.
11. Capt.C.E.Luard, Op.Cit. P-198.
12. Capt.Luard and Munshi Shambhu Dayal, Op.Cit.P-36.
13. Elliot's Muhammadan Historians, Op.Cit, Vol.V. P-462, and Vol.V, PP-89, 93, 95.
14. Ibid, Vol VI, P-31.32,(Patna),5,7,117. Note- It should be noted that in some manuscripts Panna or Patna is certainly put for Bhats the name of the district in which Panna lies, Manuscript of Tieffenthaler, P-1-246.
15. Dr.Vinay Shrivastava, Field Survey and under the Major Research Project of U.G.C. New Delhi, (2013-2015), Entitled-"A Study and

Documentation of Historical Monuments and its decorative features of Medieval Bundelkhand.
16. Capt.C.E.Luard and Munshi Shambhu Dayal, Op.Cit; P-36.
17. Ibid, P-37.
18. Ibid, P-37, and Capt.G.E.Luard.Op.Cit. P-199. Note- It should be remarked that dates obtained locally vary by 100 years, but those adopted are apparently the most accurate.
19. Dr.Mahendra Pratap Singh(Edited), Contemporary Historical Documents and Chhatrasal(1649-1731),Shri Patel Publication ,New Delhi ,1975, P-118, Saqi Mustaq Khan, Maasir -i- Aalamgiri,(English Translation, J.N.Skarkar),P-106.
20. Capt.C.E.Luard, (E, S.G.), Op.Cit; P-199.
21. Ibid, P-199.
22. Capt.C.E Luard and Munshi Shambhu Dayal, Op.Cit, P-37.
23. Capt. C.E.Luard, (E.S.G.), Op.Cit; P-199.
24. Ibid, P-199.
25. Capt.C.E.Luard and Munshi Shambhu Dayal, Op.Cit; P-199.
26. Ibid, P-37, and C.E.Luard (E.S.G.), Op.Cit; P-199.
27. Ibid, P-37 and Ibid, P-199, Note-From Dham Name of Parmatma, or Supreme spirit.
28. Field Survey by Dr. Vinay Shrivastava under Major Research Project, U.G.C.New Delhi, (2013-2015).
29. Pt. Brajlal Dubey,'In Vidh Sathji Jagiye, Panna Param Dham Me seva Pooja evam Parva Sanskriti; Published by Pran Nath Academy, Panna, 2010, P-13.
30. Ibid, P-14.
31. Virasat Published by District Archaeological Society, Panna, P-25.
32. Pt. Brajlal Dubey, Op.Cit; P-14, and Field Survey by Dr.Vinay Shrivastava under Major Research Project, U.G.C.New. New Delhi (2013-2015).
33. Dr.Vinay Shrivastava, Ibid.
34. Ibid.
35. Ibid.
36. Ibid.
37. B.D.Gupta, Op.Cit; P-152.
38. Dr. Vinay Shrvastava, Op.Cit.
39. Information from Pran Nath temple of Panna.
40. Dr.Vinay Shrivastava, Op.Cit.and Field Survey.
41. Ibid.
42. Ibid.
43. Ibid.
44. Ibid.
45. Ibid.
46. Ibid.
47. Ibid,
48. Ibid.
49. Ibid.

****

Regression Analysis on Industries in the West Vidharba of Maharashtra

Dr. B.S. Zare *

1.0 Introduction:

There are five districts covered in west Vidharba namely Akola, Amravati, Buldhana, Washim and Yeotmal. Present research study is on the basis of entrepreneurship intensification, tribulations and elucidation in the same region.

2.0 Data Collection:

Present research study is focused on the entrepreneurship development in the Vidharba after globalization, for this purpose the figure are taken into consider for 20 years i.e. 1991-92 to 2010-11.

3.0 Research Methodology:

For this research paper t test and ANOVA is used with the help of SPSS software.

4.0 Data Interpretation:

Table No. 1 & 2 shows that the total population as the census of 2011 are 1,12,58,117. There are 7169 industrial unit working in the Vidharba out of these 91 are large and medium units in 33 industrial areas. Daily workers are employed the small scale and large & medium industries are 24,200 & 11,405 respectively in Vidharba region of Maharashtra. Total 34,354 industries were registered and provided of 2,03,634 employment with 2,23,731 lakhs rupees investment by entrepreneurs during the study period.

Table No. 1 Population of West Vidarbha Region as per Census 2011 (See Table No. 1)

Table No. 2 Year-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba (See Table No. 2)

Table No. 3 ANOVAa test forYear-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba (See Table No. 3)

a. Dependent Variable: Year

b. Predictors: (Constant), Yeotmal, Buldhana, Akola, Amravati, Washim

The ANOVA table reports a significant F statistic, indicating that using the model is better than guessing the mean.

Table No. 4 Model Summaryb

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
1	.998[a]	.996	.987	.282

a. Predictors: (Constant), Yeotmal, Buldhana, Akola, Amravati, Washim

b. Dependent Variable: Year

As a whole, the regression does a good job of modeling Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba. 99% variation in registered units is explained by the model.

Table No. 5 T test forYear-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba

Model		Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.
		B	Std. Error	Beta		
1	(Constant)	1987.858	1.105		1799.487	.000
	Akola	.004	.002	.095	1.812	.212
	Amravati	.008	.000	1.067	17.300	.003
	Buldhana	.013	.008	.075	1.545	.262
	Washim	-.003	.005	-.058	-.539	.644
	Yeotmal	-.003	.006	-.053	-.449	.697

Even though the model fit looks positive, the first section of the coefficients table shows that there are too many predictors in the model. There are several non-significant coefficients, indicating that these variables do not contribute much to the model.

Amravati contributes significant as per t test and others are insignificant at 95% confidence level.

Table No. 6 Correlation coefficientsforYear-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba

Places	Correlations			Collinearity Statistics	
	Zero-order	Partial	Part	Tolerance	VIF
Akola	-.420	.788	.079	.694	1.440
Amravati	.991	.997	.752	.497	2.012
Buldhana	.257	.738	.067	.794	1.259
Washim	.256	-.356	-.023	.165	6.064
Yeotmal	.474	-.303	-.020	.134	7.447

The above coefficients table shows that there might be a problem with multicollinearity. For most predictors, the values of the partial and part correlations drop sharply from the zero-order correlation. This means, the variance in year that is explained by Akola is also explained by other variables.

The tolerance is the percentage of the variance in a given predictor that cannot be explained by the other predictors. Thus, the small tolerances show that 80%-90% of the variance

* Shri Shivaji College, Akola, Mahrashtra.

in a given predictor can be explained by the other predictors.

When the tolerances are close to 0, there is high multicollinearity and the standard error of the regression coefficients will be inflated. A variance inflation factor greater than 2 is usually considered problematic, and the smallest VIF in the table is 1.259. It shows that high multicollinerarity.

Table No. 7

Collinearity Diagnostics forYear-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba

Model	Dimension	Eigenvalue	Condition Index
1	1	5.064	1.000
	2	.596	2.915
	3	.247	4.531
	4	.067	8.693
	5	.022	15.209
	6	.004	34.956

The collinearity diagnostics confirm that there are serious problems with multicollinearity. Several eigenvalues are close to 0, indicating that the predictors are highly inter correlated and that small changes in the data values may lead to large changes in the estimates of the coefficients. The condition indices are computed as the square roots of the ratios of the largest eigenvalue to each successive eigenvalue. Values greater than 15 indicate a possible problem with collinearity; greater than 30, a serious problem. One of these indices are larger than 30, suggesting a very serious problem with collinearity. To fix the collinearity problems can be solved by rerunning the regression using z scores of the independent variables.

The eigenvalues and condition indices are vastly improved relative to the original model.

Table No. 8

CoefficientsforYear-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba

Model		Correlations			Collinearity Statistics	
		Zero-order	Partial	Part	Tolerance	VIF
1	(Constant)					
	Zscore: Akola	-.420	.788	.079	.694	1.440
	Zscore: Amravati	.991	.997	.752	.497	2.012
	Zscore: Buldhana	.257	.738	.067	.794	1.259
	Zscore: Washim	.256	-.356	-.023	.165	6.064
	Zscore: Yeotmal	.474	-.303	-.020	.134	7.447

However, the collinearity statistics reported in the Coefficients table are unimproved. This is because the z-score transformation does not change the correlation between two variables.

Table No. 9

Year-wise Employment Provided by Entrepreneurs in West Vidharba

Year	Akola	Amravati	Buldhana	Washim	Yeotmal	Total
1991-92	632	3063	301	N.A.	215	4211
1992-93	574	3333	197	N.A.	345	4449
1993-94	432	3424	209	N.A.	222	4287
1994-95	641	4256	229	N.A.	563	5689
1995-96	675	4865	262	N.A.	566	6368
1996-97	760	5285	278	N.A.	495	6818
1997-98	367	5748	474	N.A.	475	7064
1998-99	395	6313	547	N.A.	510	7765
1999-00	259	6918	392	N.A.	429	7998
2000-01	504	7325	683	N.A.	390	8902
2001-02	--	7818	248	244	512	8822
2002-03	--	8416	139	29	611	9195
2003-04	1294	9672	456	187	905	12514
2004-05	153	11326	374	187	950	12990
2005-06	492	11538	715	257	386	13388
2006-07	422	12003	453	222	536	13636
2007-08	560	13429	647	219	318	15173
2008-09	336	15371	585	662	1651	18605
2009-10	235	15739	512	228	607	17321
2010-11	398	16813	304	244	680	18439
Total	8497	169592	7704	2479	11151	203634

Source : Consolidated data from respective DICs.

Table No. 10

ANOVAa test forYear-wise Employment Provided by Entrepreneurs in West Vidharba

Model		Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
1	Regressi	641.525	1	641.525	491.894	.000[b]
	Residual	23.475	18	1.304		
	Total	665.000	19			

a. Dependent Variable: Year

b. Predictors: (Constant), Amravati

The ANOVA table reports a significant F statistic, indicating that using the model is better than guessing the mean.Inauguration

Table No. 11

Model Summaryb

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
1	.985[a]	.970	.960	1.188

a. Predictors: (Constant), Yeotmal, Akola, Buldhana, Amravati, Washim

b. Dependent Variable: Year

As a whole, the regression does a good job of modeling employment provided in West Vidharba for Amravati at 97% variation is explained by the model.

Table No. 12

T test forYear-wise Employment Provided by Entrepreneurs in West Vidharba

Model		Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.
		B	Std. Error	Beta		
1	(Constant)	1989.513	1.175		1693.299	.000
	Akola	-.001	.001	-.050	-1.012	.329
	Amravati	.001	.000	.997	12.187	.000
	Buldhana	.002	.002	.067	1.179	.258
	Washim	-.003	.004	-.095	-.930	.368
	Yeotmal	.001	.001	.030	.407	.690

Even though the model fit looks positive, the first section of the coefficients table shows that there are too many predictors in the model. There are several non-significant coefficients, indicating that these variables do not contribute much to the model.

Amravati contributes significant as per t test and others are insignificant at 95% confidence level.

Table No. 13 Year-wise Investment of Entrepreneurs in West Vidharba (Lakh Rs).

Year	Akola	Amravati	Buldhana	Washim	Yeotmal	Total
1991-92	517.0	1354.73	169.76	N.A.	180.59	2222.08
1992-93	389.1	1517.23	155.67	N.A.	110.4	2172.4
1993-94	392.44	1871.04	115.71	N.A.	99.97	2479.16
1994-95	764.4	2466.16	187.24	N.A.	180.35	3598.15
1995-96	84.55	3159.2	322.13	N.A.	325.35	3891.23
1996-97	730.69	3628.48	340.37	N.A.	364.15	5063.69
1997-98	542.67	4272.34	593.51	N.A.	417.36	5825.88
1998-99	675.4	5328.13	1184.74	N.A.	422.25	7610.52
1999-00	549.43	6500.94	554	N.A.	279.7	7884.07
2000-01	509.58	7942.95	1036.81	N.A.	562.21	10051.6
2001-02	--	9599.66	237	100.83	217	10154.5
2002-03	--	10579.7	230.56	14	360	11184.3
2003-04	2094.05	11977.9	1338.81	14	941	16365.8
2004-05	206.25	13199.3	599.66	120	79	14204.2
2005-06	587.16	13601.7	664.31	240	947	16040.2
2006-07	2150.2	13807.7	1404.04	351	196.6	17909.5
2007-08	2788.82	15205.8	2743.66	178	952	21868.3
2008-09	1430.54	16077.9	1835.81	268.45	843.65	20456.4
2009-10	485.67	16570.6	2609.82	513.5	890	21069.6
2010-11	885.38	20114.8	1642	348	690	23680.2
Total	15266.3	177422	17795.9	2147.78	8877.99	223731.1

Source : Consolidated data from respective DICs'

Table No. 14

ANOVA test for Year-wise Investment of Entrepreneurs in West Vidharba

Model		Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
1	Regression	653.141	5	130.628	154.216	.000[b]
	Residual	11.859	14	.847		
	Total	665.000	19			

a. Dependent Variable: Year

b. Predictors: (Constant), Yeotmal, Washim, Akola, Amravati, Buldhana

The ANOVA table reports a significant F statistic, indicating that using the model is better than guessing the mean.

Table No. 15

Model Summaryb

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
1	.991[a]	.982	.976	.920

a. Predictors: (Constant), Yeotmal, Washim, Akola, Amravati, Buldhana

b. Dependent Variable: Year

As a whole, the regression does a good job of modeling investment of entrepreneurs in West Vidharba for Amravati at 98% variation is explained by the model.

Table No. 16

T test for Year-wise Investment of Entrepreneurs in West Vidharba

Model		Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.
		B	Std. Error	Beta		
1	(Constant)	1992.634	.451		4422.353	.000
	Akola	.000	.000	-.031	-.597	.560
	Amravati	.001	.000	.924	12.628	.000
	Buldhana	.001	.001	.115	1.365	.194
	Washim	-.001	.003	-.015	-.215	.833
	Yeotmal	.000	.001	.007	.114	.911

Even though the model fit looks positive, the first section of the coefficients table shows that there are too many predictors in the model. There are several non-significant coefficients, indicating that these variables do not contribute much to the model.

Amravati contributes significant as per t test and others are insignificant at 95% confidence level.

Conclusions:

" The ANOVA table for Year-wise Registered Units of

Entrepreneurs in West Vidharba reports a significant F statistic, indicating that using the model is better than guessing the mean.

" As a whole, the regression does a good job of modeling Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba. 99% variation in registered units is explained by the model.

" Amravati contributes significant as per t test for Year-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba and others are insignificant at 95% confidence level.

" The small tolerances show that 80%-90% of the variance in a given predictor can be explained by the other predictors for Year-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba

" There is high multicollinerarity for Year-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba.

" The ANOVA table reports a significant F statistic for year wise employment provided by entrepreneurs in west Vidharba, indicating that using the model is better than guessing the mean.

" As a whole, the regression does a good job of modeling for employment provided in West Vidharba for Amravati at 97% variation is explained by the model.

" Amravati contributes significant as per t test for employment provided in west Vidharba and others are insignificant at 95% confidence level.

" The ANOVA table reports a significant F statistic for year wise investment in west Vidharba , indicating that using the model is better than guessing the mean.

" As a whole, the regression does a good job of modeling investment of entrepreneurs in West Vidharba for Amravati at 98% variation is explained by the model.

" Amravati contributes significant as per t test for investment of entrepreneurs in West Vidharba and others are insignificant at 95% confidence level.

References :

1. Akola, Amravati, Buldana, Washim&Yeotmal D.I.C. Reports
2. Brief Industrial Profile ofAkola, Amravati, Buldana, Washim&Yeotmal District, MSME-Development Institute, (Ministry of MSME, Govt. of India,), Nagpur
3. www.censusindia.gov.in/2011census/
4. www.dcmsme.gov.in/
5. www.msmedinagpur.gov.in/
6. Outlook Express, 2nd May, 2009.

Table No. 1 Population of West Vidarbha Region as per Census 2011

Description	Buldana	Akola	Washim	Amravati	Yavatmal	Total
Total Population Person	2586258	1813906	1197160	2888445	2772348	11258117
Total Population Male	1337560	932334	620302	1480768	1419965	5790929
Total Population Female	1248698	881572	576858	1407677	1352383	5467188

Source : http://www.censusindia.gov.in/2011census/

Table No. 2 Year-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba

Yearzz	Akola	Amravati	Buldhana	Washim	Yeotmal	Total
1991-92	83	551	63	N.A.	38	735
1992-93	80	633	31	N.A.	44	788
1993-94	67	708	43	N.A.	45	863
1994-95	93	813	61	N.A.	35	1002
1995-96	100	894	48	N.A.	40	1082
1996-97	89	966	57	N.A.	45	1157
1997-98	65	1039	55	N.A.	40	1199
1998-99	78	1127	54	N.A.	48	1307
1999-00	68	1212	45	N.A.	52	1377
2000-01	57	1265	73	N.A.	28	1423
2001-02	--	1330	32	13	57	1432
2002-03	--	1540	3	4	60	1607
2003-04	217	1827	22	18	33	2117
2004-05	25	2040	26	14	63	2168
2005-06	63	2070	68	41	60	2302
2006-07	91	2196	34	34	54	2409
2007-08	114	2341	48	36	106	2645
2008-09	68	2554	45	169	189	3025
2009-10	47	2616	46	28	56	2793
2010-11	75	2708	34	17	89	2923
Total	1397	29879	825	374	1144	34354

Source : Consolidated data from the respective DICs.

Table No. 3 ANOVAa test forYear-wise Registered Units of Entrepreneurs in West Vidharba

Model		Sum of Squares	df	Mean Square	F	Sig.
1	Regression	41.841	5	8.368	105.464	.009[b]
	Residual	.159	2	.079		
	Total	42.000	7			

A study Of Micro Finance And Self-Help Group (SHG)-Bank Linkage Program In India

Dr. Dnyaneshwar N. Khadse *

INTRODUCTION:-

In the year 1980 a new revolution paved a major change in the economic scenario of India. India's first Microfinance Institution 'Shri Mahila SEWA Sahkari Bank' was set up as an urban co-operative bank, by the Self Employed Women's Association (SEWA) in Ahmadabad, Gujarat. The first Self-Help Groups emerged in the year 1985 with the help of MYRADA project in the city of Mysore. MYRADA (Mysore Resettlement and Development Authority) a NGO focused on promotion of self-help groups , micro enterprise generation and other socio-economic activities started SHG credit system wherein the members of the SHG were responsible for the payment for interest and repayment of credit and stand surety for other members who had not credit potentials. In the Year 1987 NABARD formally acknowledged the existence of the SHG credit system and identified the potential and performance of NGO's initiative to promote SHG and supported the program by granting MYRADA 1 Million Indian Rupees to enable the NGO to invest and build the capacity of members of SHG groups within a period of 3-6 months as based of the NGO'S previous experiences . After initially testing its project with MYRAD and analyzing the effectiveness of the program based on feedback received from deprived section of society NABARD launched an action research project with similar grants provided to other NGOs in different parts of India. After analyzing the reports of success of the project in the 1990 and in consultation with the pioneer NABARD, Reserve Bank of India accepted the SHG strategy as an alternative credit model in the year 1990. In the year 1992, NABARD formalized a strategy of allowing banks of providing direct lending to SHGs, and issued guidelines for the SHG-Bank Linkage Program thus officially launching the program in the year 1992. Accordingly in the Master Circular on Micro Credit of Reserve Bank of India (2005), the criteria for selecting the Self-Help Groups are stated as follows:

1. The SHG should be in existence for at least six months.
2. The SHG should have actively promoted he savings habit
3. SHG could be formal (registered) or informal (unregistered)
4. Membership of the group could be between 10 to 25 people.

It also stated that any advances given by the banks to the groups are to be treated as advances to weaker sections under the priority sectors. However Reserve bank of India stressed on the fact that SBLP program was to be treated as a credit innovation rather that a targeted credit program. NABARD vide its circular letter No. NB.DPD.FS.4631/92-A/ 91-92 Dated 26th February 1992 issued detailed operational guidelines and framework to banks for implementing the SBLP. According to reports of NABARD the two important models of microfinance involving credit linkages are

(i) SHG - Bank Linkage Model: This model involves the SHGs financed directly by the banks viz., CBs (Public Sector and Private Sector), RRBs and Cooperative Banks.
(ii) MFI - Bank Linkage Model: This model covers financing of Micro Finance Institutions (MFIs) by banking agencies for on-lending to SHGs and other small borrowers.

OBJECTIVE OF THE STUDY:-

The primary objective of this research is to study the effectiveness of the Self Help Group Bank Linkage Program in implementation of the bank inclusion program of including people with limited resources or no credit collateral into formal institutional credit system thereby effectively alleviating them from the vicious cycle of poverty.

LIMITATIONS:-

This study is based on descriptive research based on secondary reports of various government organizations such as NABARD, SIDBI and Reserve Bank of India and very other pioneer reports and research based on the same field. The figures and data have been compiled from official reports of various organizations and research reports.

LITERATURE REVIEW:-

In the year 1980s it was noticed by Government of India that a large number of population had no access to institutionalized banking credit system. These masses all depended upon local money lenders and private creditors for monetary support. This dependency on moneylenders and private creditors lead to increase in the exploitation of the mass and further deepening of the poverty issues. These masses were evolved into a vicious unending poverty cycle thereby weakening the socio-economic status of the individual and ultimate impact on the whole household. Thus leading

* Asst.Professor Dept. of Commerce Dhanwate National College, Nagpur (M.S.)

to widespread poverty and deepening poverty related issues. These masses were left to the mercy of the private lenders and largely ignored in the process of economic growth. With Liberalisation, Globalisation and Privatization of Indian Economy in the year 1990 many opportunities arose for the Indian Population to alleviate the economic status, but it was noticed that the Indian poor did not have access to banking sector mainly due to the following reasons:

a. Lack of Small Loan Packages offered by Banks
b. No-Collateral or Lack of collateral with the poor
c. Widespread illiteracy among the Indian Poor

The World Bank had identified that the credit requirement of Indian poor to be around Rs.50, 000 crore per annum in 2002. Against this requirement, the credit outstanding of the poor with the formal banking sector is stated to be Rs.5000 crore or ten per cent of the total demand (The Eleventh Planning Commission Report). It was identified that the major requirement of credit by the poor nearly 2/3rd were related to consumption needs which was further bifurcated to nearly 3/4th of the consumption needs spend on emergencies like illness and to meet expenses during lean season. Remaining 1/3rd of the requirement of loan related to production loans for economic activities such as farming, animal husbandry, poultry, small establishments, small shops, portable enterprises etc. The production loan requirement ranged from Short term, medium term to long term loans. With no access to formal banking credit these poor entrepreneurs looked towards private lenders for consumption as well as production loan which took a life time to repay. It was hardly impossible for the poor debtors to be released from the iron talons of these private lenders.

Since there was constant requirement of money for either setting up of small enterprise or for household consumption needs like marriage , illness, and unforeseeable accidents loss in entrepreneurial activities due to lack of knowledge and illiteracy these poor were entangled in the vicious poverty cycle. Any new birth, marriage, loss, illness, accidents amounted to more credit with higher repayment rates and conditions. With no other means of relief from this cycle the poor migrated to cities in search of jobs or easier means of earning thus increasing the burden of unemployment and leading to increase unscrupulous activities. In order to improve the situation various programs were initiated by banks under the preview of NABARD and Reserve Bank of India to inculcate the habit of savings and provide financial assistance to the poor. The initiatives were as follows:

1. Pigmy Deposit Scheme
2. Mobile Banks
3. Regional Rural Banks (RRBs)
4. Local Area Banks (LABs)

In 1974 a formal lending program was started by the SEWA Co-operative Bank . The origin of microfinance can be traced to the establishment of the SEWA Co-operative Bank which was one of the pioneer institutions to provide banking services to poor women employed in unorganized sector in Ahmadabad, Gujarat. Microfinance in India started in the early 1980s and has grown significantly since.

Bodies such as Small Industries Development Bank of India (SIDBI) and the National Bank for Agriculture and Rural Development (NABARD) are devoting significant time and financial resources to microfinance in the field of agriculture , industry , service and business.

'Microfinance refers to small scale financial services for both credits and deposits- that are provided to people who farm or fish or herd; operate small or micro enterprise where goods are produced, recycled, repaired, or traded; provide services; work for wages or commissions; gain income from renting out small amounts of land, vehicles, draft animals, or machinery and tools; and to other individuals and local groups in developing countries in both rural and urban areas'. (Marguerite S. Robinson.)

DATA ANALYSIS AND INTERPRETATION

TABLE 1: NUMBER OF SHGs LINKED WITH BANKS FROM THE YEAR 1992 TO 2009

Year (end - March)	No. of SHGs linked During the year
1992-93	255
1993-94	365
1994-95	1502
1995-96	2635
1996-97	3841
1997-98	5719
1998-99	18678
1999-00	81780
2000-01	149050
2001-02	197653
2002-03	255882
2003-04	361731
2004-05	539365
2005-06	620109
2006-07	1105749
2007-08	1227770
2008-09	1609586

Source: NABARD Report 2008-09

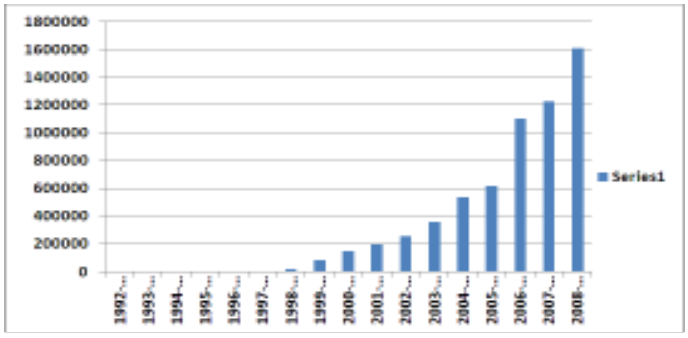

Fig: 1 Graphical representation of Number of Groups linked with Bank Linkage Program from the year 1992 to 2009.

On representation of the data in graphical form it can be very clearly seen that there has been a tremendous increase in the number of SHG linking with the SBLP program. In the year 1992-93 225 SHG were linked but by the year 2008-09 the groups linking with this program increased manifold to approximately 16 lakhs groups. This highlights the tremendous response to the program by the common mass thereby effectively bringing institutional credit mechanism to the reach of masses with limited or no collateral background thereby effectively implementing the inclusion program.

Table2. Savings Of Shgs With Banks (as at end of march)

Agency	2008-09		2009-10	
	No. of SHGs (in'000) *cumulative figure from 1992 to 2009	Amount (Rs. In Crores) *cumulative figure from 1992 to 2009	No. of SHGs (in'000) *Cumulative figure from 1992 to 2010	Amount (Rs. In Crores) *cumulative figure from 1992 to 2009
Commercial Banks	3550	2773	4053	3674
Regional Rural Banks	1629	1990	1821	1299
Cooperative Banks	943	783	1079	1226
Total	6122	5546	6953	6199

Source: Status of Microfinance in India 2009-10: a NABARD publication

**From 2006-07 onwards, data on number of SHGs financed by banks and bank loans are inclusive of 'Swarnajayanti Gram Swarozgar Yojna' (SGSY) SHGs and exisiting groups receiving repeat loans. Owing to this change, NABARD discontinued the publication of data on a cumulative basis from 2006-07.*

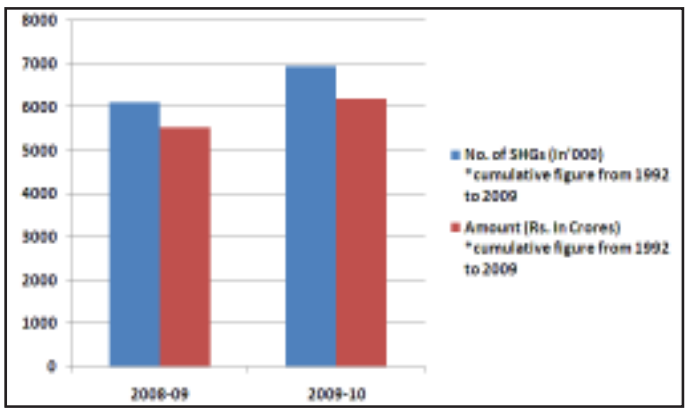

Fig 2: Graphical representation of savings of SHGs with banks (as at end of March)

The above figures effectively indicates that with the introduction of SBLP there has been an effective rise in the tendency of savings among members of SHGs. Out of the total number of saving linked and credit linked SHGs, exclusive women SHGs with banks were 76.4 per cent and 81.6 per cent, respectively. In the year 2009-210 there has been an approximately 12% increase in the amount of savings of SHGs as compared to last year. This indicates that easy access to credit for these groups also increased the efficiency of the groups to effectively monitor the savings of the members of the groups thereby initiating the habit of savings among the groups members and giving them access to uniform method of savings and institutionalized savings thereby reducing their dependency on other private sources of credit such as money lenders and private creditors .

Table 3.bank Loans Outstanding Under Linkage Programed

	BANK LOANS OUTSTANDING UNDER SHG-BANK LINKAGE PROGRAMME		DETAILS OF BANK LOAN DISBURSEMENT TO AND OUTSTANDING AGAINST MFIS	
	No. of SHGs (in'000)	Amount (Rs. In Crores)	No. of MFIs	Amount (Rs. Crores)
2008-9	4224	22679	779	10729
2009-10	4851	28038	1659	13956

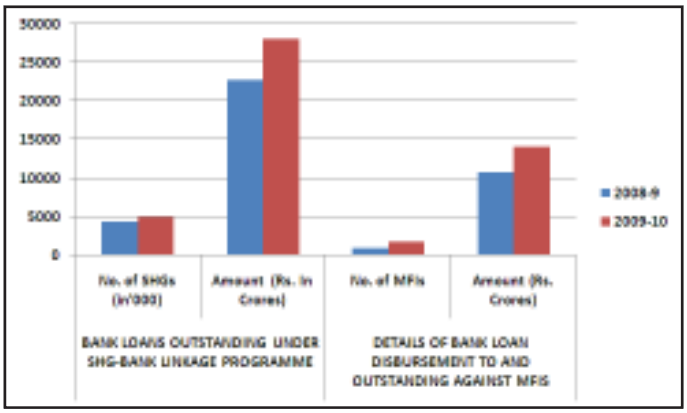

In the 2009-10 it has been estimated that a total of 15.87 lakhs SHGs have received assistance by way of loans including repeat loan by the Banks amounting to approximately Rs.14,453 croroes. By the year 2010 March, banks have financed 15.87 lakh SHGs, including repeat loan to the existing SHGs, with bank loans of Rs. 14,453 crores. Out of the total loans disbursed during 2009-10, SHGs financed under SGSY accounted for 2.67 lakh (16.9%) with bank loan of Rs. 2198.00 crore (15.2%). As on March 2010, the average loan amount outstanding per SHG and per

member were Rs. 57795/- and Rs. 4128 /-respectively. The estimated number of families/households covered under the Self Help Group (SHG)-Bank Linkage Program was 9.7 crores up to 31 March 2010. The bank loans outstanding under SHG-bank linkage program from the year 2008-09 to 2009-10 is 23% whereas the details of bank loan disbursement to and outstanding against MFIs is 30% indicating a higher rate of return or repayment by the SHGs than the MFIs. This is attributed to the fact that by linking the SHGs directly to the Bank NABARD has fulfilled the requirements of the priority sectors which were unbanked .

Before starting of the linkage program the Banks would lend money to MFIs who would further lend funds primarily to poor women across rural India. However the interest rates charged by MFIs were on an average 12-13% and also they would benefit from 100 % repayment rates. But this scheme were not actually helping the needy or the poor people as they had to bear the excess burden of high interest rates and strict terms of loan repayments. Further it was also estimated that the outreach of SHG-Bank Linkage Program was far greater than that of the MFIs as the top 10 private sector microfinance providers in India together served less than 5% of the unbanked population in India.

CONCLUSION

For any economy to grow financial inclusion is a very important element . It is necessary to improve the conditions of the poor and give them a chance to sustainable living therby improving their socio-economic condition. By increasing small entrepreneurship of self earning models among the poor we can very effectively decrease unemployment and dependence in the economy. For the same SHG-Bank Linkage Program has been an effective credit innovation model implemented by the banks which can effectively contribute to poverty alleviation programs. For continuation of same flexibility in credit packages and protection of the borrowers has to prime consideration. Regulatory procedures needs to be pushed forward to protect the micro-borrowers from any sort of manipulation because majority of these borrowers are illiterate and mainly function on trust and commitment. Also measures should be initiated for proper utilization of savings among the SHGs for internal lending.

Refrence:-

1 Bansal, H. (2003), 'SHG-Bank Linkage Program in India - An Overview', Journal of Microfinance,

2 Department of Information Technology (Ministry of Communication & Information Technology), 'ICTs for Micro-Finance Activities at Grass Root Level', New Delhi, 2006.

3 Department of Posts (Ministry of Communication & Information Technology),

4 Ministry of Finance, Task Force on Revival of Cooperative Credit Institutions (Draft Report), New Delhi, 2004.

5 NABARD (2010), Status of Micro Finance in India 2009-10, National Bank for Agriculture and

6 Planning Commission, Report of the Working Group on Agricultural Credit, Co-operation and Crop Insurance for the Tenth Five Year Plan (2002-07), New Delhi, 2001.

7 RBI, 'The Evolution of Central Banking in India', Report on Currency and Finance (2004-05), Mumbai, 2005.

8 Reserve Bank of India (2010), Handbook of Statistics on the Indian Economy 2009-10, Mumbai.

9 Credit Access for the Poor in India', Economic and Political Weekly, April 23

10 Dr. Lipishree Das 'Micro nance in India: self help groups -bank linkage model' Ravenshaw University, Department of Economics 26. February 2012

11 Indian Women: A Self-Help Group Approach', International Journal of Rural Management, 2(2):

12 Mayoux, L. 2001. "Tackling the Down Side: Social Capital, Women's Empowerment and Micro-Finance in Cameroon." Development and Change, 32(3)

13 MICRO-FINANCE AND POVERTY ALLEVIATION REPORT OF THE STEERING COMMITTEE THE ELEVENTH FIVE YEAR PLAN (2007-08 - 2011-12)

14 Ministry of Finance, Expert Committee on Consumption Credit (Ch. B. Shivaraman), New Delhi, 1976

15 Ministry of Rural Development (GoI), Annual Report (2004-05), New Delhi, 2005.

16 Ministry of Urban Employment & Poverty Alleviation (GoI), Report of the Task Force on Micro-Credit to the Urban Poor /Informal Sector, New Delhi,2006.

17 Ministry of Women & Child Development, Rashtriya Mahila Khosh, New Delhi, 2006.

18 MYRADA (2002): Impact of Self Help Groups (Group Processes) On the Social/Empowerment Status of Women Members in Southern India, NABARD

19 NABARD (2000): Task Force on Supportive Policy and Regulatory framework for Micro Finance in India

20 NABARD (2010-11): Annual Report

21 Planning Commission, Approach Paper to the Tenth Five Year Plan (2002-07), New Delhi, 2001.

22 RBI, 'Report of the Internal Group to Examine Issues Relating to Rural Credit and Microfinance', Mumbai, July, 2005.

23 Reserve Bank of India (2011), Handbook of Statistics on the Indian Economy 2010-11, Mumbai.

24 Reserve Bank of India Occasional Papers, 29(3):119-138.

25 World Bank,' India : Scaling-up Access to Finance for India's Rural Poor' (Report no. 30740-IN), New Delhi, December, 2004.

****

Study Of General Sports Injuries Among Handball Players

Dr. Jogendra Singh * Pankaj Sahu **

ABSTRACT Sports is an activity concerning physical energy and skill in which an individual or team competes against another or others for entertainment. Millions of people around the world contribute in sports and physical actions at different levels on a usual basis. All physical activities and sports take some risk of injury. It may be an injury of hand, wrist, calf, hips etc. Injuries are the unavoidable result of demanding competition and determined to push one's body to its limits entails the risk of exceeding that limit. Environment and climatic conditions play an important role in mechanism of handball injuries. The purpose of the study is to determine the common injuries of players while playing handball. It is also explained the causes and occurrence of injuries. The study is conducted on the forty two male students of handball match practice group. Frequencies and Percentage method is used to portray the relative incidence of the common sports injuries of handball players with respect to the unusual anatomical areas. This study concludes the percentage of sprain, strain, and fracture among handball players. High percentage was found in the incidence of sprain (97.61%), 9.52% were found in the incidence of strain and no incidence of fracture was observed among players of handball.

KEY WORDS: Sprain, Strain, Injuries, Handball, Anatomical areas.

INTRODUCTION: Sports is an activity concerning physical energy and skill in which an individual or team competes against another or others for entertainment. Millions of people around the world contribute in sports and physical actions at different levels on a usual basis. Sports and physical activities of approximately any sort are usually painstaking favorable for the individual as well as for the humanity because it helps us to keep fit and life longer and amongst them exercise is an important element in health promotion.

Injuries are expected to occur frequently with higher rate. The sports injuries are considered the most imperative reasons that show the way to end the opportunity of sports player; as a result the observable fact of sports injuries has a great consideration from specialists in the field of sports and physical activities where the injuries of all kinds take place. It affects the society in direct and indirect way. Hence the incidence of injury levels can be reduced by concentrating on preventive measures.

All physical activities and sports take some risk of injury. Injuries are the unavoidable result of demanding competition and determined to push one's body to its limits entails the risk of exceeding that limit. Environment and climatic conditions play an important role in mechanism of handball injuries. The most common handball players' injuries are

- Sprains and strains
- Knee injuries
- Swollen muscles
- Achilles tendon injuries
- Pain along the shin bone
- Fractures
- Dislocations

As it is proved that handball game requires fit body which is to be successful in the field and if they get injury then they could show the way to a unexpected break in their career

REVIEW OF RELATED LITERATURE:

Ajami explained that physical injury may cause psychotherapy to injured players due to aggravate of their condition as a result of fear. The enormous expansion in the widespread practice of sports with increasing of the number of practitioners resulted in increasing in numbers of injuries which made them to be important in the field of sports medicine in terms of assessing the level of players physically and prepare them to do overburdened required physical burdens. FIRER in his paper entitled "Effectiveness of Taping for the Prevention of Ankle Ligament Sprains" revealed that taping can protect against injury. The mechanism by which taping works is not precise but mechanical factors play a role which decreases with exercise. He said that the major effect of taping may be its prospective on underlying muscle groups. Tysvaer in his case report explained that cervical disk herniation occurs in close association with playing handball. He said that handlings of neck injuries in Handball players are also outlined.

OBJECTIVE: The purpose of the study is to investigate the common sports injuries like sprain, strain and fracture among handball players.

RESEARCH METHODOLOGY:

SAMPLE OF THE STUDY: The study is conducted on the forty two male students of handball match practice group of pacific university.

*** Sports Secretary, Pacific University, Udaipur. ** Research Scholar, Pacific University, Udaipur.**

SELECTION OF VARIABLES: The present survey of injuries among handball players took into account the incidence of common injuries to the ankle, knee, thigh, calf, back, head, neck, and wrist. The incidences of injuries were classified on sprain, strain, and fracture.

COLLECTION OF DATA: The data were collected from the medical records available at the health centre and physiotherapy section. Interviews were carefully taken from the players for getting that information which was not available on medical records.

DATA ANALYSIS: The data is analyzed using frequencies and percentage of the various injuries with respect to the different body area and location.

RESULT OF THE STUDY: The percentage incidence of the common sport injuries namely sprain, strain, and fracture on the different anatomical regions of the handball players are presented in tables below. The percentage incidence of sprain on the different anatomical regions of the handball players is shown in table1.

TABLE 1

PERCENTAGE INCIDENCE OF SPRAIN ON DIFFERENT ANATOMICAL REGIONS OF HANDBALL PLAYERS

S. No.	Regions	No. of Players	Total No. of Injuries	Percentage
1.	KNEE	42	14	33.30
2.	ANKLE	42	23	54.76
3.	WRIST	42	03	07.14
	TOTAL	42	30	95.20

Table 1 shows percentage incidence of sprain on various anatomical regions of players which shows that out of the forty two players, 30 (95.2%) of them have incidence of sprain . 33.3% have a sprain in knee, 54.76% have on ankle and 7.14% have sprain in the wrist. The percentage wise incidence of sprain on the different anatomical regions of Handball players is shown in figure 1: Figure 1: percentage incidence of sprain on the different anatomical regions of handball players. The incidence of strain on different regions of handball players is shown in table 2

TABLE 2

S. No.	Regions	No. of Players	Total No. of Injuries	Percentage
1.	BACK	42	04	09.52
2.	NECK	42	02	04.76
3.	CALF	42	02	04.14
	TOTAL	42	08	19.04

This table indicates that a total of 8 case of strain are found among handball players, four in case of back, and two each in case of neck and calf. This observation is shown graphically in figure 2: Figure 2: percentage incidence of strain on the different anatomical regions of hand ball players.

From the above findings it is proved that the common sports injuries among handball players are sprain, strain, and fracture. The percentage incidence is 97.61% for sprain, 19.04% for strain and no incidence of fracture are found. These injuries might be due to improper equipments and physical fitness of players.

CONCLUSION AND RCOMMENDATION: With view to results of the presented study, the researcher explained the percentage of sprain, strain, and fracture among handball players. High percentage was found in the incidence of sprain (97.61%), 9.52% were found in the incidence of strain and no incidence of fracture was observed among players of handball. Future research could be conceded out by using the same research mechanism as in this study, therefore providing more comparable studies in the field of injuries among different sports players.

REFERENCES:

- Emily Lehman (2011): Year-round sports lead to injury epidemic among athletes. http://redwoodbark.org
- Magali, Majid, and Majid Saleh, (2007). Analytical Study Of The Causes Of Sports Injuries When National Team Players Depending On The Periods Of The Sports Season In Jordan, Journal of Studies, Educational Sciences, University of Jordan, unpublished Master, Amman, Jordan, Volume 24, Issue 2, September 2007.
- Al-Ajmi, Mohammad Fahad, (2006). Psychological Factors Associated With Injury In Sports Activities Of Individual And Collective. Zagazig University, Faculty of Physical Education.
- Jalal al-Din, Ali, (2005), Sports Injuries, Prevention, And Treatment. (I 2).
- Zahir, Abdul Rahman Abdul Hamid, (2004). Encyclopedia Of Sports Injuries And Primary Asaavadtha, (I 1), Cairo, Egypt.
- Page, D. (2002). Sports Figures As Positive Influence In Lives Of Teen Admirers. Archives of Pediatric Adolescent Medicine, Online. Retrieved November 6, 2002, from the World Wide Web: http://www.newswise.com/articles/2002/isports.ucl.html.
- Riad, Osama, (2002). First Aid for Sports Injuries, the Arab Thought House, Cairo, Egypt.
- Riad, Osama, (2002). Sports medicine and sports injuries, Secretariat of Sports Medicine, Riyadh.
- FIRER, P "Effectiveness Of Taping For The Prevention Of Ankle Ligament Sprains." British Journal Of Sports Medicine 24:1(march 1990).
- TYSVAER, A.T." Case Report :Cervical DISC Herniation Of A Football Players " Sports medicine 19:1(march 1985):43

BOOKS:

- HETAL, BASIL, KING, J.B AND GRANGE, W.J. Sports Injuries and Their Treatment London: Chapman and Hall, 1986.
- VINGER, PAUL F. AND HOERNE, FAST F. Sports Injury the Unthrusted Epidemic, Littleton: P.S.G. publication Company Inc.1981.

Study Of Copper Coating Formed By Electroplating

Prof. Bindu Gandhi *

Metallic coatings provide a layer that changes the surface properties of the work piece to those of the metal being applied. The work piece becomes a composite material exhibiting properties generally not achievable by either material if used alone. Coating operations that coat an object with one or more layers of metal improve its resistance to wear and corrosion, alter its appearance, control friction, impart new physical properties or dimensions and protect surface from degradation. Applications range from common hardware items, automotive parts, defense, and medical to sophisticated communication equipment and aerospace technologies etc. Out of all these applications surface protection is the most important ,because surface degradation is an uncontrolled process without restriction on interactions between seemingly unrelated events. Environmental conditions also exert a strong effect on surface degradation.It is generally considered that the surface of an object is much more vulnerable to damage than the interior of the component and that surface originated damage will eventually destroy the component.A solution to the problem of surface degradation is to try and shield the surface from hostile agent.Shielding is usually achieved by coating material with another substance which is more durable than the original material.There are many methods of surface coating but electroplating is cheaper,faster and reliable.

Properties of electrodeposits are important for a broad spectrum of application. The properties of electrodeposited metals often differ from those of cast or wrought metals. The former may have finer grains, higher hardness, better mechanical properties (tensile strength, ductility and young's modulus). Many products are plated to achieve definite physical and chemical properties such as printed circuit boards and other electronic devices. Plating specific coating greatly enhances the function of particular items.

The properties of electrodeposited metals may be varied by altering the conditions of deposition. Most of the properties of electrodeposits depend on their structure. The structure is determined by substrate surface, the composition of plating solution and the deposition parameters. By adjusting the plating variables, it is possible to control to some extent the structure of the deposit and thereby its properties

Dullness adhesion, thickness peeling effects, pitting, hardness porosity, wear and abrasion resistance, corrosion resistance, tensile strength and ductility are properties measured in order to detect possible imperfections in the deposits and they find its origin in the electroplating processes. Today the focus is on preserving raw materials and natural resources, protecting the environment and saving energy whenever possible. Electroplating is step in right direction. Extremely thin layers of just few microns are deposited onto the base materials, so valuable resources are used sparingly and only in places where they are really needed.Electroplating is an electrodeposition process for producing a dense, uniform, and adherent coating, usually of metal or alloys, upon a surface by the act of electric current.

The objective of an electroplating process is to prepare a uniform deposit which adheres well to the substrates and which has the required mechanical, chemical and physical properties. Many metals may (by modifications of the bath and electroplating conditions) be deposited with different properties. It is for this reason it is not possible to define a single set of conditions for electroplating of each metal; the bath, current density, temperature etc. these will depend to some extent on the deposit properties required.

Metals commonly used in plating include copper, nickel, zinc, chromium, lead, cadmium, tin, brass and bronze as well as precious metals such as gold, silver and platinum.

Mild steel specimens were plated with copper using AR grade chemicals and distilled water at varying voltage and plating time. It has been observed that increase in the amount of current, increases the amount of metal deposited in a fixed time, as there is more energy available to move ions to the cathode from anode. The thickness is also increased with increase in voltage. The current density also influences plating adherence and plating quality.At low current densities grains of the deposit are smaller, regular and no porosity is found in the coatings. With increasing current density, coarse grained deposit having irregular crystal size results and at the same time numerous porosities become visible in the coating. Effect of time on electroplating showed that plating thickness and deposition weight increased with increasing time.The hardness of electrodeposited specimens increases with thickness. The results of corrosion study revealed that the unplated specimens showed indication of corrosion where as coated samples appear to be unaffected by exposure to atmosphere because of the formation of thin protective film.

Conclusion-Work demonstrated influence of operating parameters on copper coating.Voltage,plating time influence the quality of deposit.Plating process decreases corrosion.

References-

1 Kanani, N., Electroplating: Basic principles, Processes and practice, Elsevier Advanced TTechnology: Oxford, U.K., (2004).
2 Canning, W., The Canning Hand Book: Surface Finishing Technology, 23rd ed. (2005).
3 ASTM international, In B 376 - 96 standard terminology relating to electroplating. (2003).
4 Schlesinger, M., Paunovic, M., "Modern electroplating (4th edition) Wiley, New York (2000).
5 Kallithrakas - Kantos, N., Mushohoritou, R. et al., Thin Soild Films, 326, 166-170 (1998).
6 Karayianni, C., Vassiliou, P., Mater. Sci. Lett., 17, 389-390 (1998).
7 Holm, M. et al., J. Appl. Electrochem., 33 1125 - 1132 (2000).

*** Asst.Professor Chemistry, M.J.B.Govt.P.G.Girls College, Motitabela INDORE (M.P)**

Air Quality In Urban Atmospheres And Its Biological Effects

Prof. Bindu Gandhi *

Systematic investigation on the effects of human exposure to environmental pollution using scientific methodology only began in the 20th century as a consequence of several environmental accidents followed by an unexpected mortality increase above expected mortality and as a result of observational epidemiological and toxicological studies conducted on animals in developed countries

Pollution is the introduction of contaminants into an environment that causes instability, disorder, harm or discomfort to the ecosystem i.e. physical systems or living organisms. Pollution can take the form of chemical substances, or energy, such as noise, heat, or light energy. Pollutants, the elements of pollution, can be foreign substances or energies, or naturally occurring; when naturally occurring, they are considered contaminants when they exceed natural levels.

Air Pollution

Air pollution is the introduction of chemicals, particulate matter, or biological materials that cause harm or discomfort to humans or other living organisms, or damages the natural environment, into the atmosphere.

The atmosphere is a complex, dynamic natural gaseous system that is essential to support life on planet Earth. Stratospheric ozone depletion due to air pollution has long been recognized as a threat to human health as well as to the Earth's ecosystems.

Usually, the people of India mainly depend on agriculture works from the ancient age of the nation. After Indian independence in 1947, human lifestyle was gradually changed and they search for new sources of income to survive. From the year of 1981 Indiân government provided many facilities to set up private industries. With the cooperation of government, last 30 years Indian private firms or industries increased vastly. Now, India is one of the best economically growing countries in the world.

The rapid growing industrialization is leading lots of environmental issues by its uncontrolled polluted emission. Other reasons of pollutions in India are the destruction of forests, emotions of vehicles, land degradation due to use of poisonous insecticide for agriculture, shortage of natural resources, rampant burning of wood-fuel and many more. Pollution is the main reason to lead lots of disease, health issues and long term livelihood impact.

Indian pollutions can broadly classify into four major types namely Air, Land, noise and Water Pollution. There are several industries in India which are marked as highly polluting like Áluminum smelter industriés, Cement, Chlor Âlkali, Copper smelter, Distillery indústry, Fertilizer, Iron and Steel, Oil refinery, Petrochemicals, Pharmaceuticals, Pulp and Paper, Thermal power plants and Zinc smelter industries.

Normal component of fresh air are consist of 78.1 percent Nitrogen, 21 percent Oxygen, 0.95 percent Argon and 0.04 percent Carbon dioxide. When these normal percentage of Air component irregular due to the influence of several harmful gases then our surrounding environment become polluted. There are some example of harmful elements of air like hydrocarbon gases, carbon monoxide, nitrogen oxides, sulfur dioxide, hydrogen sulfide and some greenhouse gases including carbon dioxide, nitrous oxide, methane and many more.

Though urban atmospheres are not universal around the world,the poor air quality over cities often has major impacts on adjoining regions.A combination of primary and secondary pollutants from several urban atmospheres may have significant consequences from long range transport.Cities with major air quality problems occur on every continent.Measurements of pollutant concentrations are difficult because of the complexities of urban physical structures.A massive growth in the size and population of cities over the past 25 years has contributed to the air quality problems.Cities are now the major source of anthropogenic emissions affecting global air quality.Bombay,Indore,Pune,Bangalore etc.are cities rapidly increasing in population,many have very high population densities.The air quality problems of the future are likely to come from these cities rather than the cities in developed countries.

It is well known that with rapid industrialization, urbanization and migration, particularly in the developing world, there is a general deterioration of environmental

Asst . Prof. Chemistry Govt. M.J.B.Govt. P.G. Girls College, Moti Tabela, Indore (M.P.)

conditions. In addition to inadequate housing, sanitation, poor water supply and malnutrition populations have been exposed to raising levels of 'Air Pollution' (SR Kamat).Despite the vast improvements in health globally over the past several decades environmental factors remain a major cause of sickness and death in many regions of the world. In the poorer regions one in five children does not live beyond five years of age, largely because of environmentally related-and preventable diseases. That number translates into 11 million deaths each year, mostly due to illnesses such as diarrhoea and acute respiratory infection.Insect borne diseases like malaria alone claims one to three million lives in a year, again most of them children.

Urban air pollution has worsened the health in the cities of both developed and developing countries. The health impacts in developing world have driven by population growth, industrialization and increased vehicle use. These conditions along with the personal habits and living style (tobacco smoking and internal pollution) and living environment of the population have become the major interacting factors in influencing health morbidity (De'Souza). Of the three million premature deaths in the world that occur each year due to outdoor and indoor air pollution, the highest number are assessed to occur in India. According to WHO, Delhi is one of the top ten most polluted cities in the world and Mumbai is next to it in air pollution levels (Sharma, Anju).

In India, the urban agglomerations are restricted to a selected few cities. According to the paper, from 2002 to 2010, Bangalore saw the second highest increase in air-pollution levels in the world at 34%, and Indian cities including Pune, Mumbai, Nagpur and Ahmedabad, among others, also saw double-digit increases. Because the pollution measured reflects a combination of industrial and weather-related particles like dust, it's not possible to say this is entirely a man-made problem. But the fact that India's population grew faster than China's in the past decade means that the air in India's cities is doomed to get worse before it gets better.

Urban pollutants are an important factor that influence the climate of cities.The factors sulphur dioxide,particulates, carbon mono,nitrogen oxides,hydrocarbon compounds all contribute to the climate and air quality problems in cities.

The effects of urban air pollution present some complex and specific local characteristics, stemming not only from the specific sources of pollutants (industrial and economic activities, type of fuel used, urban traffic, etc.) but also from conditions for their dispersion. It is important to recognize the various cycles of concentration-dispersion: day and night, weekly and yearly variations, etc. (Schwartz, 1994b; WHO, 1996a).

Atmospheric dispersion depends on the pollutants' own characteristics, how they are emitted into the environment (vehicle exhaust, high or low smoke stacks, etc.), meteorological conditions (wind direction and speed, rain, thermal inversions), and local topographic characteristics. During the dispersion process, in addition to dilution, pollutants can also change as a result of their chemical reactivity. Particulate matter may be removed from the air by deposition (due either to gravity or rainwash) or interception by plants or other obstacles (WHO, 1996a). Measuring and recording pollutant concentrations are extremely important components of environment epidemiological research, and discontinuous measurements due to equipment malfunctioning is the most frequent problem affecting data base quality.

The harmful effects of atmospheric pollution are widespread and varied.There is no doubt whatever that atmospheric pollution in the concentrations in which it has been allowed to occur, particularly in urban areas,caused damage to property and made living conditions generally less pleasant Although the damage caused by pollution has been reduced during the recent years,human health,animal and plant growth and survival are still affected detrimentally.New causes for concern have arisen:increased road traffic has enhanced NOx concentrations which together with sunshine has increased the incidence of photochemical smogs,supersonic planes chlorofluorocarbons and the ozone layer in the stratosphere.increasing carbon dioxide may disrupt the stability of the global climate.

How much harm is done to public and individual health by urban atmospheric pollution is not exactly known but authorities consider the total harm to be very serious indeed.

Numerous studies of the effects of gaseous pollutants and particulates on animals have been carried out.Most such studies have been done at very high concentrations and thus have no direct significance for humans and also there is a wide variety of response by different animal to the same concentration of pollutant.

Adverse effects of air pollutants on human health can be acute or chronic.Acute effects manifests themselves immediately upon short term exposure to high concentrations of air pollutants whereas chronic effects become event only after continuous exposure to low levels of pollutants.The chronic effects are difficult to gauge and demonstrate.hence most air pollution health effects are an outcome of the study of acute air pollution episodes.Deaths from air pollution disaster are measured by comparing the number of deaths

normally occurring in the area and the period in question with those that occur during the air pollution disaster.The difference is referred to as"excess deaths".

Pollutants can enter the body through a number of ways.They can cause eye and skin irritation,particulate matter may be swallowed as aresult of respiratorycleaning action.An important feature ofair pollution and health, is that those people who are already in a poor state of health are most susceptible.

The relationship between air pollution and health is established on the basis of statistical examination of the health records of urban populations.The main difficulties arises due to large number of variables involved,and the dominant influence of smoking on lung diseases in surveys.

Chronic bronchitis is characterised by a persistent cough and the exuding muco-pus.Studies have shown that atmospheric pollution is the major cause of chronic bronchitis.Both smoke and sulphur dioxide is involved and their association together is more dangerous.Although in isolation sulphur dioxide is not particularly toxic,in the urban air it is present with a number of other trace components which amplify its toxic effect.

Nitrogen dioxide is an oxidising agent and is associated with photochemical pollution.The toxicity of ozone vary with temperature,a three fold increase in sensitivity observed for the change from 297K to 305K.Although ozone is not an eye irritant it is frequently associated with oxidants such asPAN which causes eye irritation at .1 ppm.Asthma,coughs,chest discomfort and headaches have been reported to increase when the oxidant concentration exceeds .25 ppm.

Lead originating from tetraethyl and tetramethyl lead added as an anti-knocking agent to petrol is emitted into the environment.Recent medical evidence suggests that lead accumulated in the body can decrease a child's I.Q.Other vehicular emissions such as carbon monoxide are also harmful.

Animals may be expected in general to suffer similarly to human beings.Cattle are found to be less resistant than sheep .Cattle and sheep are sensitive to fluorine.

Plants are more sensitive than animals to atmospheric smoke and sulphur dioxide,though this is not true for all type of pollution. Conclusion- air pollution is harmful to public health, not only among susceptible groups but also in the general population, even when the concentration of pollutants is below the limits set by environmental legislation. The study provides valuable information to support the political and economic decision-making processes aimed at preserving the environment and enhancing quality of life.

References-

1 Health and Environmental consequences.John Wiley and Sons.England.

2 Air quality in selected urban areas,Global Environmental monitoring system.WHO.

3 Chemistry of the Atmosphere.McEwan.M.J.& Phillips.L.F.

4 ELSON, D. M., 1987. Atmospheric Pollution: Causes, Effects, and Control Policies. Oxford: Basil Blackwell Ltd.

5 FARHAT, S. C. L., 1999. Effects of Air Pollution in São Paulo City on Lower Respiratory Disease in a Pediatric Population. Tese de Doutorado, São Paulo: Faculdade de Medicina, Universidade de São Paulo.

6 Sharma, Anju et. al., (1996) "The Deadly Story of Vehicular Pollution in India". Centre for Science and Environment. New Delhi.

****

Farmer's Diversification into Non-Farm Employment Income in Rural Economy

Dr. Rakesh Dhand * Dr. Balveer Singh Thakur ** Dr. Kusum Vaskel ***

Abstract - This paper explains the factors which affect rural non-farm employment in four villages; using primary data from the Indian state of Madhya Pradesh, it analysis the reasons for the variations between Farmers and farmers who engaged in non farm income activity in villages. The survey, conducted 300 households in Dhar district of Madhya pardesh. This paper seeks to test 'distress diversification' against 'agricultural growth linkages' as explanations of employment of the propensity of rural people to be involved in the rural non-farm employment. This paper brought together these hypothesis into a single framework. The data analysis by a detailed household survey on the nature and determinants of the rural non-farm employment supports the hypothesis that growth linkages are the main explanation for high shares in, and the growth of, 'modern' rural non-farm employment, and distress diversification for 'traditional' rural non-farm employment. It also demonstrates a strong, significant association between traditional rural non-farm employment and higher family member. These problems and certain deliberate policy decisions - creation of social infrastructures, changes in the present rural policies.

Key words: *Agriculture, Non-Agriculture, Employment, Income, Consumption, Family size*

Introduction- The Indian Human Development Indicator ranks 128th among 182 countries in 2008 portraying the country among the poorest countries in the world, majority of whom resides in the rural areas with farming as their primary occupation. *(Jean O. Lanjouw, Peter Lanjouw 2001)* It has been established that agriculture alone does not provide sufficient livelihood opportunities hence diversification into non-farm activities is seen as coping mechanism. Level of non-farm income diversification, its effect on welfare status of farming households and factors that determine level of non-farm income diversification were therefore investigated. *(David Rider Smith, 2001)*

The recent Agriculture Census data shows that around 84 per cent of agricultural holdings in India are of less than two hectares. Most of these agriculture holdings are not viable; as a consequence many farmers are either leaving agriculture or living in penury. Any improvement in viability of these farm households requires that sizeable proportion of their household income comes from off-farm sources. Interestingly, sectors other than agriculture in the last three decades have grown rapidly, as a result the share of services in the aggregate economy (gross domestic product) has increased by around 20 percent while that of agriculture has decreased by similar percentage point; the secondary sector also improved its share marginally (4 per cent) during the same period. The above growth in services and manufacturing industries largely bypass the rural sector. *(Brajesh Jha, 2011).* In rural areas, given the constraints on farm expansion and continuing growth of the rural population, greater attention is being given to non-farm activities in view of their potential for economic development and poverty reduction It is now well recognized that rural economies are not purely agricultural and that farm households across the developing world earn an increasing share of their income from non-farm activities. *(Simrit Kaur, Vani S. Kulkarni, Raghav Gaiha & Manoj K. Pandey, 2010)*

The expansion of off-farm income for farm households however requires growth of non-agriculture sector in rural vicinity; loosely referred as the rural non-farm sector. The rural non-farm sector includes all non-agricultural activities: mining and quarrying, household and non-household manufacturing, processing, repair, construction, trade and commerce, transport and other services in villages and rural towns undertaken by enterprises varying in size from household own-account enterprises (OAEs) to factories. *(Brajesh Jha, 2011).* This continuing dominance of agriculture in the rural occupational structure can he explained, first, by the linkages between the agricultural and non-agricultural sectors and, secondly, by the lack of resilience on the part of such village non-farm as do exist to meet the demands of the more affluent sections of the peasantry. *(Siti Hadijah Che-Mat, and Roslan Abdul-Hakim, 2011)*

Diversification of occupations in rural areas has many advantages, and there is extensive literature that elaborates these gains However, up-scaling informal rural sector activities (off-farm and non-farm activities), This continuing dominance of agriculture in the rural occupational structure can he

*** D. S. W. Vikram University, Ujjain. [m.p.]**

**** Post Doctoral Fellow, [ICSSR], School of Studies in Commerce, Vikram University, Ujjain. [m.p.]**

***** Post Doctoral Fellow, [ICSSR], School of Studies in Economic, Vikram University, Ujjain. [m.p.]**

explained, first, by the linkages between the agricultural and non-agricultural sectors and, secondly, by the lack of resilience on the part of such village non-farm as do exist to meet the demands of the more affluent sections of the peasantry. *(Hazel Lim-Applegate, Gil Rdriguezand Rose olfert, 2002)*

The study concludes that farming households that are not involved in non-farming activities are more vulnerable to poverty when compared with farming households that engaged in non-farm income. Therefore, in order to alleviate poverty among households in the study area, there is the need to develop the level of human capital base of the farmers in the study area in order to enhance the amount of income derived from non-farming activities.

In this paper the problems of transformation and diversification of the rural economy in general and the rural farm economy in particular are quantitatively studied. Discusses the factors influencing transformation and diversification of the rural economy of India. The methodology of measuring diversification and transformation (indices) is discussed. Discusses the estimates while concluding remarks are contained.

Employment generation programme :

In India, employment generation programmes aimed at eradicating poverty in two different ways: first, by removing chronic unemployment by providing economic assets to the beneficiary and secondly through programmes providing supplementary employment during lean agricultural period. The self-employment generating programmes have been modified frequently; Swarnajayanti Gram Swarozgar Yojana (SGSY) for instance, was launched in 1999 after review and restructuring the IRDP and allied schemes. However, the broad objective and instruments of the programme remain the same as that of the IRDP. A high non-willful default rate of the SGSY beneficiaries in fact, suggests that the assets provided to them in the self-employment generating programme do not remain viable in the long run. The wage-based employment generating programmes were also modified frequently, for example in 2001; all wage-based employment generating programmes were combined into the Sampoorna Grammen Rozgar Yojana (SGRY). Unlike many other programmes, SGRY is implemented through the Panchayati Raj Institutions (PRI). In 2001, the food-for-work programme was also launched in some backward regions of the country. In SGRY or similar wage-based employment generating programmes, the rural asset is an important component. These programmes need to be addressed in such a way that apart from providing short-term employment they also help in building the productive capacity of the region. Among rural assets, the programme should prioritize community assets whose benefits can be shared by a large number of people. However, in spite of the large emphasis on different wage-based employment generating programmes, the scale of employment provided by these programmes has been inadequate. Considering the grim unemployment scenario in rural areas, the Parliament recently, enacted the Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) that would legally guarantee employment to one person in every poor household for a minimum of 100 days on asset-creating public works. *(D Gangopadhyay)*

Objective of the Study :

- Employment generation programmes by Government and Condition.
- Socio-Economic and village features reduce or increase these prevalence rates?
- Employment Measure growth and change in Rural areas.
- Identify the availability and types of Employment provide services (public, private, traditional, etc.) and the range of services they provide;
- What factors link exposure with Employment?
- Structure and growth of employment in different non-farm activities and the level of contribution of these activities in providing employment and income opportunities to different socio-economic groups of households.
- The extent and nature of participation of different socio-economic groups of population in different non-farm activities, reasons for lacking participation, differences existing in the socio-economic condition among the households engaged and those who are engaged in non-farm activities.
- Impact and contribution of non-farm activities (I) household economy and (ii) economy of sample areas.

Methodology : General Description of the Study Area -

The Dhar district which is situated in the south-western corner of Madhya Pradesh is home to the Bhil adivasi or indigenous people with the various sub-tribes like Bhil, Bhilala, Barela, Patelia and Mankar together constituting 86.8 % of the total population (Census, 2001). The district forms an unique agro-climatic zone called the Vindhya hill ranges and drains into the river Narmada. The northern part of the district forms the undulating hilly edge of the Malwa Plateau and the Southern part of the district forms the undulating hilly edge of the Nimar Plateau the eponymous agro-climatic zone and drains into the river Man and other. The topsoil's are mostly light and lateritic with some fertile patches of the medium black variety. The sampling sites for the study were Two Tribal blocks namely Sardarpur and Kukshi were selected in Dhar district of State Madhya Pradesh. These sites were selected based on random sampling technique.

The present study was carried out in different villages of Sardarpur and Kukshi blocks in Dhar district of State Madhya Pradesh, with main objective being to assess and observe the Employment status and family history of the people inhabiting the villages in Dhar. In the present survey research administered survey or interviews were used to collect and gather information from the respondents.

Sampling Technique -The respondents were selected using a multi-stage sampling technique. Stage one is the selection of two Tehsil with the least which are Dhar District. Stage two is the random selection of 5 villages from the selected one Tehsil in Dhar District. Stage third is the selection of 150 respondents was Farm Households from each of the tehsil. Totaling 300 respondents fully completed questionnaires were retrieved which served as the sample size.

As a whole 300 households have been selected for in depth study. Information was collected by personal interviews using structured questionnaires. The questionnaire was designed so as to garner information about the various parameters that could influence the indicated by the information gathered from the earlier group meetings and was pre-tested before being administered Information that were elicited from the respondents includes their socio-economic characteristics-

- Such as age, gender, marital status, household, size, & others
- Household Social characteristics like education, employment and family size.
- Landholding characteristics like size of landholding, irrigated land.
- Irrigation sources whether from streams tanks or wells.
- Cropping pattern.
- Income characteristics.
- Debt characteristics like type amount and sources.

Analytical Techniques -The data obtained were analyzed using descriptive statistics, Diversification Index and Linear regression analysis.

Descriptive Statistics: the descriptive statistics employed involved the use of tables, frequency, percentages and mean. The descriptive statistics was used to present the result of the socio-economic characteristics of the respondents. Linear regression model is-

$Q^* = \hat{a}_0 + \beta$ explanatory Variable + 0_i……..(i)

Where i is normally distributed with zero mean and constant variance.

Q* the dependent variable is household Family Size.

Thus, the explanatory variables used in the linear regression analysis were and measured as;

A_i = Age (in years)

G_i = Gender (Male = 1, Otherwise= 0)

M_i = Marital status (Married = 1, Otherwise= 0)

H_i = Household size (Actual number)

E_i = Educational status (Formal = 1, Otherwise= 0)

I_i = Income (Different Occupation and Total Income)

C_i = Access to credit facility (No = 1, Yes = 0)

S_i = Members of social organization (1 = Members, 0 = Non-members)

SC= Change your Social condition (No =0, Yes = 1)

EC= Change your Economic condition (No =0, Yes =1)

F_i = Farm Size (Bighas)

β = Regression parameters or coefficient

0_i = Error term.

Results and Discussion:

Socio- Economic Characteristics of the Sampled Rural Farm Households Table 1 shows the results of the socio-economic characteristics of the rural farm households.

Table 1: Socio-Economic Characteristics of Rural Farm Households/Heads

No	Characteristics	Dominant Indicators	Mean Value
1	Age	87.3% between 25 – 58 years	38.84
2	Gender	95% Males	–
3	Household Size	78.7% between 5 to high persons	8.7
4	Household Education Index	75.3% had formal education	3.8
5	Household Working Member	78% between 1-3 persons	2.7
6	Major Occupation	72.67% into Farming	–
7	Hhd. Landholding Size (Bighs)	43.7% between 1-4 Bighas	6.83
8	Irrigated Landholding (Bighs)	43.7% between 1-4 Bighas	5.68
9	Unirrigated landholding (Bighs)	36% between 8.5 Bighas to highest	9.9
10	Cropping Pattern	55.3% Two Crop in year	–
11	Farming Experience	81.5% having 11 – 30 years	–
12	Household Debt Rs. per capita	55.67% persons Annual	6228.47

Source: Primary data 2010.

An average rural farm household size consists of six members with dependency ratio of 0.6 and means working member of 2.7. Most (78%) of the households were headed by male with average age of 38.8 years and their mean years of formal education was 3.8 years with as much as 75.3% of the household heads having some form of formal education. many of the farm households do not have access to electricity and pipe-borne water. Even fewer households have access to formal or informal credit, and the distance to the nearest urban market place is quite far on average. While the majority had farming as their primary occupation, as much as 59.67% of the heads of rural farm households were involved in non-farm activities and 43.67% non-farm labour work as their major occupation. This confirms evidence is showing that involvement in non-farm activities is growing in importance among farm households in Dhar district.

Farm and Non-farm Income Levels:

The income level and share of total income derived from various livelihoods activities by rural farm household as well as the overall level of income diversification measured by the inverse of the index were shown in table 4, the mean rural farm household gross income was 58009.77 per annum.

Income received from non-farm self employment activities livelihood sources contributes an average of 53.27% of the total income while farm activities contributed 41.73% and The income share derived from household farm activities summed up to livestock share 10.79% of the total income. The largest share of 10.92%, from the farm labour rural farm households derived the largest proportion of their farm income and this is significantly higher. A sizeable chunk of the income from non-farm sources was derived from non-farm while only 26.43%. Of the total rural farm households' income was obtained from urban-type employment as a non-farm skilled labour actives contributed Income Share among Farm and Non-Farm Rural Households.

Table 2: Income Share among Farm and Non-Farm Rural Households

no	Income	N	Mean	Std. Deviation
1	Farm	300	24210.00	6654.33
2	Farm Labour	282	6334.04	3423.46
3	Livestock	130	6260.12	4210.50
4	Non-Farm Labour	131	15331.22	14305.92
5	Self-Employment	179	30902.37	35637.89
6	Total Income	300	58009.77	38256.00
7	Debit	167	6228.4192	4866.5934

Source: Primary data 2010.

The income share derived from oriented non-farm Self-Employment income diversification activities by the rural farm households was significantly higher and different (53.27%) from what was obtainable among the farm households, while the rural farm households derived a significantly larger share (26.43%) of income from non-farm labour than the average farm labour household (10.92%). The result shows that non-farm activities contributed substantially to the rural farm households' income in Dhar District.

53.27 per cent of the households in the study area participate in off-farm employment activities. Among these, agricultural wage employment and self employment are the most important ones. Non-agricultural wage income from activities such as Driving, fruits selling, handicrafts, food processing, shop-keeping (petty-trading) accounts for total household income. 26.43 per cent of the households also participate in non-agricultural wage employment, albeit this source only contributes average income. It includes formal and informal jobs in construction, manufacturing, civil service and other.

It is however worthy of note that the overall level of income diversification is significantly much higher among the Non-Farm (53.27%) than the Farm (41.73%). This suggests that the observed pattern of non-farm diversification is most likely a copious strategy for poverty reduction among the predominantly rural economy in dhar district.

Strikingly, the importance of farm income slightly decreases with farm size, while the importance of off-farm income increases; indicating that farm and off-farm income are complementary rather than substitutive. off-farm activities in dhar district help households to improve their farm production through higher input use, including more employment of hired labour. Among the off-farm sources, the smallest farms derive higher shares from agricultural wage employment and remittances than the larger farmers, for whom non-agricultural wage and self-employed incomes are more important. *(Babatunde, R.O.1*; Olagunju, F.I.2; Fakayode, S.B.1 and Adejobi, A.O.3)*

It is worth noting that both nonfarm self-employment and nonfarm wage employment are quite heterogeneous. In nonfarm self-employment, retail dominates over brewing and manufacture. Nonfarm unskilled wage employment takes mainly the form of construction work, road labour, and other poorly-paid manual labour. Teaching, work for the government, and transportation are the main activities within the nonfarm skilled wage employment.

Income inequality is linked to under-investment in social and economic-promoting resources such as education, medical services, transportation and environmental controls (i.e., the neo-material interpretation); and (2) income inequality leads to the erosion of social capital and stressful social comparisons, which diminish health via painful individual psychosocial processes and ensuing detrimental physiological mechanisms. *Sharma R.K. and Dhawan Saroj (1986)*

The Findings:

Due to complete information 300 respondents (questionnaires) are used and analyzed. Table reports the results of the estimated linear regression model. The estimated parameter are reported together with the likelihood value, R-squared, as well as the percent correctly predicted. The estimated logit model show that the value of R-squared is 0.39 The F change correctly predicted is 0.88, which indicates that the estimated linear regression model is generally good.

Table 3: Estimated Linear Regression Model

Constant	2.638	1.28	2.06
Gender	.158***	.347	.456
Age	-3.259***	.006	-.505
Education	-1.118***	.030	-.371
Change your Economic condition	.103**	.151	.139
Change your Social condition	2.001***	.144	.269
Member of social organization	3.241***	.120	.269
Irrigated land	-.476*	.164	-2.90
Unirrigated land	-.517*	.169	-3.05
Total Agriculture Land	.503*	.167	3.01
Total Income	-7.113**	.000	-1.62
Livestock Income	2.164***	.000	.124
Farm labour Income	-1.688**	.000	-1.10
Self-Employment Income	2.936***	.000	.144
Non farm labour Income	-6.708**	.000	-1.30
Debit	3.417***	.000	.269
R-Squared= 0.52 Adjusted R Square= 0.27 Std. Error of the Estimate= 0.3165 F Statistic = 0.96 Prob. (F Statistics) = 0.51			

Dependent Variable- Family Size (Dummy- 4 to lower=0, 5 to higher=1)
****Coefficients significant at 10% **Significant at 5% *Significant at 1%*

The coefficients of the variables that reflect the ownership of assets and access to the results show that gender are not statistically significant to explain the probability of a family size. However, as expected, the level of age and education is significant, and has a negative relationship with the probability of family size. This implies as the level of education of the farmer increases, the probability of the farmer family size decreases. In fact, the education implies that if education of the farmer increases by one year, the likelihood of the farmer being family size decreases. The explanation for this result is quite obvious. Education increases human capital and hence, increases the chances of the farmer to secure non-farm jobs.

It is also interesting to find that the variable of interest in this study, i.e. Change of Economic condition, Social condition and Member of social organization is found significant and has a positive relationship with the probability of the farmer family size. This result implies that if farmers are to diversify their income sources by participating in non-farm activities, their probability of being family size will increase.

This study also discovers that all variables of the household economic characteristics -household farm size is found significant and has a positive relationship with the probability of the farmers family size. But Irrigated land and UN Irrigated land size is found significant and has a negative relationship with the probability of the farmer's family size. Besides, the results also show that the size of land cultivated by the farmer is important to explain their likelihood of being poor. The larger the size of land cultivated by the farmer, the lower their probability of being poor.

Household total income, Farm labour Income and Non farm labour Income is found significant and has a negative relationship with the probability of the farmer's family size. But Livestock Income and Self-Employment Income are found significant and have a positive relationship with the probability of the farmer's family size. And the loan of farmers is found significant and has a positive relationship with the probability of the farmer's family size.

Basically, these results suggest the individual's need a level of experience to have an independent job is not significant in the probability of self-employment, but is significant in the self-employment income in equation.

Conclusion: - The analysis confirms that, controlling for differences in household characteristics (e.g. education, land ownership, sex, caste, age, gender) and infrastructure support, impacts households differently, depending on their main source of income is size of family. Expansion of non-farm activities has some potential for consumption enhancement in times of crises. However, the opportunities for increasing consumption by diversifying into rural non-farm activities may be limited for farm households due to their lack of assets (human and physical) required for starting a new activity, limited access to credit and lack of entrepreneurial ability. This paper significant examines the prospects for expansion of employment in farm and rural non-farm activities are related to size of family.

References:

- Simrit Kaur, Vani S. Kulkarni, Raghav Gaiha & Manoj K. Pande, (2010), "Prospects of Non-Farm Employment and Welfare in Rural Areas", ASARC Working Paper 2010/05, Revised: 13 February, 2010.
- Brajesh Jha (2011) "Policies for Increasing Non-Farm Employment for Farm Households in India" IEG Working Paper No. 310, 2011
- Jean O. Lanjouw, Peter Lanjouw (2001), "The rural non-farm sector: issues and evidence from developing countries" Agricultural Economics 26 (2001)
- David Rider Smith (2001), "Gender and the Rural Non-Farm Economy in Uganda" NRI Report No: 2657
- Siti Hadijah Che-Mat and Roslan Abdul-Hakim (2011), "Does Farmer's Diversification into Non-Farm Employment Reduce Their Likelihood of Poverty Evidence from Malaysia" Journal of Business and Policy Research Vol. 6. No. 1. July 2011 Pp. 145-155
- Hazel Lim-Applegate, Gil R driguezand Rose olfert, (2002), "Determinants of non ferm labour participation rates among farmers in a Australia" The Australian journal of Agricultural and resource Economics, 46:1, pp 85-98.

Prevalence of Anemia in Working and Non-Working Menopausal Women

Ankita Dixit * Dr. Meenakshi Mathur **

ABSTRACT

INTRODUCTION- Present study sought to assess the prevalence of anemia amongst working and non-working perimenopausal and postmenopausal women. **OBJECTIVE-** The main objective of this study was to assess the prevalence of anemia in working and non-working perimenopausal and postmenopausal women. **METHOD-** Blood samples were collected and hematology examination was done to assess the prevalence of anemia by SYSMEX KX-21 method. **RESULT-** Regarding anemia among respondents around equal percentage of respondents from working and non-working group of menopausal women were non anemic (16.67%, 15.00%) and mildly anemic (61.67%, 56.67%), under the category of moderate anemia non-working menopausal women excel working menopausal women (28.33%, 18.33%). **CONCLUSION-** There was no significant difference observed in the mean values of hemoglobin of working and non-working perimenopausal and postmenopausal women. This indicated that irrespective of menopausal stage or working condition of women, they suffer equally from anemia.

Keywords: Anemia, Hemoglobin, Perimenopause, Postmenopause, Working, Non-working, Women.

INTRODUCTION: Health of women has been a global concern for many decades United Nations (1995), WHO (1996). In recent times, the health of elderly women has drawn attention of the researchers and policymakers because there is a global trend of increase in number and life expectancy of this population WHO (1998), WHO (2000). In India, during the last 10 years, there has been a numerical increase in elderly population (aged 45 years and above) and presently around 20.1% of women fall in this age group International Institute for Population Sciences (IIPS) (1995), International Institute for Population Sciences (IIPS) (2007). Anemia is a state in which a deficiency in the size, number, and hemoglobin concentration of an erythrocyte exists, impairing oxygen and carbon dioxide exchange between the blood and body tissues Mahan, L.K. & et al (2008). The World Health Organization has defined anemia in women as hemoglobin concentrations less than 12.0 mg/dL WHO (1968). Up to the age of 75 years, women are disproportionately affected by anemia and the prevalence in females 65 years of age and older in the United States is approximately 10% Guralnik J.M. & et al (2005) and Olivares M & et al (2000). Physiological variations are observed in several parameters in the body system which includes hematological profiles. These variations can be within subject, seasonal or diurnal Thirup (2003). In a study of the variations of the hemoglobin concentrations with age, sex and in blood donors, it was observed that from the fifth decade to the age of 65 there was a progressive and significant increase of hemoglobin concentration in women. Reasons for the difference were related to the effects of the hormonal environment of menopause Cruikshank (2008).

METHODS: Samples of the Study: The purposive random sampling technique was used in the selection of sample for the present study. Samples of 120 subjects were selected from the district Jodhpur. The sample consist of 60 working (30 perimenopausal and 30 postmenopausal) and 60 non-working (30 perimenopausal and 30 postmenopausal) menopausal women, between 45 years to 55 years. Locale of the Study: The study was conducted in district Jodhpur at different work places for women, such as schools (govt. and private), university, hospitals (govt. and private) and door to door household too. Tools: Blood samples were collected and hematology examination was done to assess the prevalence of anemia by SYSMEX KX-21 method. Analysis of Data: a) Measures of percentage, standard deviation, t-test and significance of differences were calculated and discussed with the help of reviewed literature. b) The results were interpreted and explained with the help of proposed contentions and relevant research in field.

RESULTS

Table 1: Prevalence of anemia in Working and Non-working Menopausal women (See Table 1)

Table-1 shows the prevalence of anemia in working and non-working menopausal women. Regarding anemia among respondents around equal percentage of respondents from working and non-working group of menopausal women were non anemic (16.67%, 15.00%) and mildly anemic (61.67%,

*** Research Scholar , Department of Home Science (Human Development)**
****Professor , Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Rajasthan)**

56.67%), under the category of moderate anemia non-working menopausal women excel working menopausal women (28.33%, 18.33%). Only two (3.33%) respondents from working menopausal women fall under the category of severe anemia. Study conducted by Harrow BS, Eaton CB. & et al (2011) was in line with the present study and they found that anemia was identified in 3,979 women. in this present study out of 120 respondents overall 101 women were suffering from mild to severe anemia where only 19 women were fall under the category of normal hemoglobin level. Therefore, it can be concluded that the problem of anemia among menopausal women is very-very severe.

GRAPH - 1 Hb of Working Menopausal Women

(See GRAPH - 1)

Graph-1 depicted that percentage of mild anemic (hemoglobin) working postmenopausal women were higher in comparison to other levels of menopausal women.

GRAPH - 2 Hb of Non- Working Menopausal Women

(See GRAPH - 2)

Graph-2 depicted that percentage of mild anemic (hemoglobin) non-working perimenopausal and postmenopausal women were higher in comparison to other levels of menopausal women.

Table 2: Comparison (Mean) of assessment of hemoglobin in blood of Working and Non-working Menopausal women.

GROUPS		N	Mean Hemoglobin
WORKING	Perimenopausal	30	10.69
	Postmenopausal	30	10.60
TOTAL (a)		60	10.64
NON WORKING	Perimenopausal	30	10.15
	Postmenopausal	30	10.64
TOTAL (b)		60	10.34
TOTAL (a+b)		120	10.52

Table-2 represents comparison (Mean) of assessment of hemoglobin level in blood of working and non-working women. There were minor differences between the mean value of working and non-working menopausal women. The hemoglobin level for working and non-working menopausal women was 10.64 and 10.34.

Table 3: Showing Mean, SD, and't' scores between working menopausal and Non-working menopausal women for assessment of hemoglobin in blood.

Measure	Groups	N	Mean	Std. Deviation	Std. Error Mean	"t"
HEMOGLOBIN	Working	60	10.64	1.45	.18813	.98
	Non-working	60	10.39	1.45	.18724	

Table 3 depicting the mean, SD and t scores of working menopausal and non-working menopausal women for assessment of hemoglobin in blood. There was no significant difference observed among all the measures for working and non-working menopausal women.

CONCLUSION

" The middle years of life is important not only because it is the preparatory period that precedes old age but also a period most individuals pass through stresses and strains connected with their own physique and with their professions. There is a need to pay due attention by family and society on changes occurring in women during 40-60 years of age preferably in working women due to her dual role responsibility. Singh, M. and Kaushik, S. S., (2000) was in line with the findings of the present study who emphasized that in the absence of such efforts these women may find it difficult to maintain good health, which in turn may start affecting overall well being of the family. Some suitable intervention and modification in their life style and coping strategy may help in improving and maintaining their good health.

- This can be concluded that the problem of anemia amongst menopausal women was very high (84.25%).
- No significant difference was observed.

REFERENCES

- Cruikshank, J.M., (2008). Some variations in the normal haemoglobin concentration. Br. J. Haematol., 18(5): 523-530.
- Guralnik JM, Ershler WB, Schrier SL, Picozzi VJ (2005). Anemia in the elderly: A public health crisis in hematology. Hematology Am Soc Hematol Educ Program. 528-532.
- Harrow BS, Eaton CB, Roberts MB, Assaf AR, Luo X, Chen Z. (2011). Health utilities associated with hemoglobin levels and blood loss in postmenopausal women: the Women's Health Initiative. NCBI. 14(4):555-63
- International Institute for Population Sciences (IIPS) (1995). National family health survey (MCH and Family Planning), India 1992-93. Mumbai: IIPS.
- Indian Institute of Population Sciences (IIPS) and ORC Macro. (2007). National family and health survey -3, 2005-2006. Mumbai: IIPS, Vol. 1.
- Mahan LK, Escott-Stump S. (2008). Krause's Food & Nutrition Therapy. 12th ed. St Louis, MO: Saunders/Elsevier.
- Olivares M, Hertrampf E, Capurro MT, Wegner D. (2000). Prevalence of anemia in elderly subjects living at home: Role of micronutrient deficiency and inflammation. Eur J Clin Nutr; 54:834-839.

- Singh, M. and Kaushik, S. S. (2000). "A comparison of relaxation, meditation and cognitive therapy for enhancing stress-coping skills of depression at risk middle aged women". Indian Journal of Clinical Psychology. Vol. 27 (1): 89-96.
- Thirup, P., (2003). Haematocrit: Within subject and seasonal variation. Sports Med., 33(3): 231 -243.
- United Nations. (1995). The world's women, 1995: trends and statistics. (Social Statistics and Indicators, Series K, No.12) New York: United Nations.
- World Health Organization, (1968). Nutritional anemia: Report of a World Health Organization Scientific group. Geneva, Switzerland: World Health Organization.
- World Health Organization, (1996). Research on the menopause in the 1990s (Report of a WHO scientific group, WHO Technical Report Series, 866). Geneva: World Health Organization.
- World Health Report, (1998). Life in the 21st century: a vision for all. Geneva: World Health Organization.
- World Health Organization, (2000). Women Aging and Health. Fact Sheet No. 252. Geneva: WHO.

Table 1: Prevalence of anemia in Working and Non-working Menopausal women

GROUPS			Non-anemic		Anemic					
			Normal (12 g/dl)		Mild (10-<12 g/dl)		Moderate (7-<10 g/dl)		Severe (>7 g/dl)	
		N	N	%	N	%	N	%	N	%
WORKING	Perimenopausal	30	7	23.33	16	53.33	6	20.00	1	3.33
	Postmenopausal	30	3	10.00	21	70.00	5	16.67	1	3.33
TOTAL (a)		60	10	16.67	37	61.67	11	18.33	2	3.33
NON WORKING	Perimenopausal	30	4	13.33	16	53.33	10	33.33	-	-
	Postmenopausal	30	5	16.67	18	60.00	7	23.33	-	-
TOTAL (b)		60	9	15.00	34	56.67	17	28.33	-	-
TOTAL (a+b)		120	19	15.83	71	59.17	28	23.33	2	1.67

GRAPH – 1 Hb of Working Menopausal Women

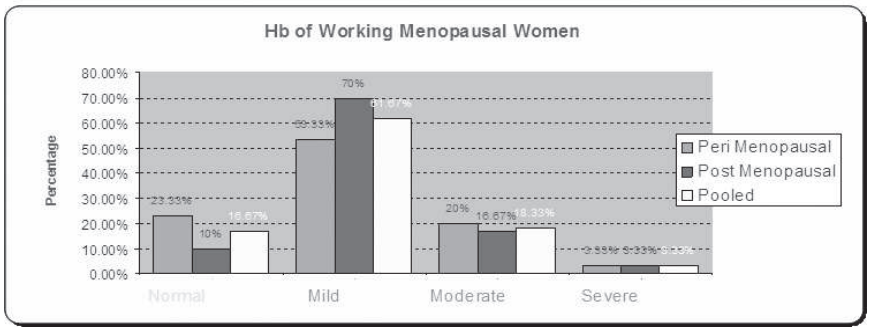

GRAPH - 2 Hb of Non- Working Menopausal Women

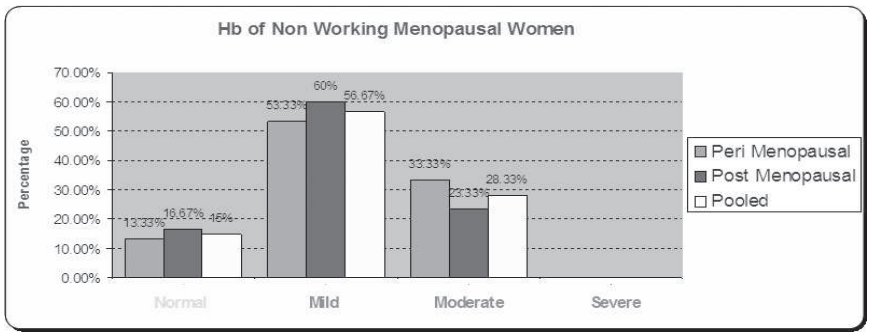

Animal Husbandry in Arid Area of Western Rajasthan During 2003-07

GUNRAJ* AND MADAN MOHAN**

ABSTRACT

The rural economy of Rajasthan has traditionally been based on livestock kept on common property resource. Livestock includes sheep, cattle, goat, buffalo and camel. Animal Husbandry is a major economic activity of the rural peoples, especially in the arid regions of the Rajasthan cattle have remained a gift of nature to the arid west part of Rajasthan. Nations total arid area 61% area only in western Rajasthan. Their productive and reproductive performances have been reviewed. The animals in their natural habitat are maintained at minimal inputs by migratory practices. The animals have a high tolerance to withstand extremes of climate and are highly disease resistant. There is an urgent need to summarize the existing steps to conserve the breed and formulate practices and policies to conserve and propagate the breed.

INTRODUCTION- Rajasthan is a state in north-western India, It covers 342,239 square kilometers and is the second largest state in the country. The state has a long border with Pakistan, and contains a large area of desert. It covers 68% of the state's geographical area and represents 61% of the area covered by desert in India. The state capital is Jaipur. Geographically Rajasthan comprises of two distinct regions divided by the Aravalli range. The Aravalli Range runs from Mount Abu in the south-west to Khetri and beyond in the north-east. They divide the state in half and rise to 5,577 feet (1,700 meters). To the north-west is the Thar Desert. The area west of Aravalli ranges comprises eleven districts of western Rajasthan, namely - Jaisalmer, Barmer, Bikaner, Churu, Jodhpur, Nagaur, Jalore, Pali, Jhunjhunu, Sikar and Ganganager.

MEANING - ARID AREA- In India 9 state describe these arid area. Nations total arid area 61% area only in western Rajasthan. Obviously arid area says that where rain and water sources very shortly western Rajasthan mostly areas years average short to 300 mm.

MEANING - LIVESTOCK- Western Rajasthan livestock is the major source of livelihood for the poor and they are heavily dependent on the common postures for grazing their animals. It has been estimated that the poor in these regions derive about 20% of their annual income from the common pastures while the wealthier families generate about 2%of their income from these resources.

MEANING - ANIMAL HUSBANDARY- Animal husbandry is the science of taking care of domestic animals that are used primarily as food or product sources.

OBJECTIVE OF ANIMAL HUSBANDRY/LIVESTOCK

1. To make available the high quality and productive livestock and poultry breeds for multiplication and supply to the needy farmers of the state by providing advanced breeding services for up gradation of indigenous cattle and buffaloes.
2. Delivery of necessary livestock health care through timely immunization against total diseases, proper diagnosis and rational treatment for optimization of livestock production.

GOVERNMENT POLICIES OF ANIMAL HUSBANDRY

Selective breeding of indigenous breeds of Gir, Hariyana, Malvi, Rathi, Kankrej, Nagauri and Tharparkar will be carried out in areas where these animals are found in their true forms. Two exotic breeds will be used for breeding in Rajasthan viz. Holstein & Jersey.

METHODOLOGHY

Rising of livestock is the most important occupation as subsidiary and supplementary to cultivation in most parts of the region. The Table below gives the percentage of livestock by district.

Table 1 ANIMAL DISTRIBUTION OF ARID ZONE RAJASTHAN IN 2003
CATTLE OF PERCENTAGE

DISTRICT	CATTLE	BUFFALO	SHEEP	GOAT	CAMEL
BARMER	537242	130863	1067210	1460772	69712
BIKANER	608597	132732	928892	686507	61861
CHURU	215234	194524	381005	595899	46822
GANGANAGAR	432727	269087	338962	268853	21694
HANUMANGARH	342624	307615	261284	192179	46946
JAISALMER	243250	2205	890191	588000	36952
JALORE	246939	356496	563130	451248	9304
JHUNJHUNU	122858	378942	162537	490318	24477
JODHPUR	519972	180087	884191	1036696	30240
NAGAUR	363013	420007	747003	1082967	17148
PALI	288187	285992	892895	632287	11935
SIKAR	195972	507678	237225	879601	20538

Source: livestock cencus of Rajasthan, 2003 state volume (prov.) Borad of Revenue for Rajasthan, Ajmer

Research Scholar* and Assistant professor Department of Economics, Jai Narain Vyas University, Jodhpur (Raj.)**

DISTRICT	CATTLE	BUFFALO	SHEEP	GOATS	CAMEL
BARMER	4.9	1.3	10.6	8.7	13.9
BIKANER	5.6	1.3	9.2	4.0	12.5
CHURU	1.9	1.9	3.8	3.6	9.40
GANGANAGAR	3.9	2.6	3.3	1.6	4.4
HANUMANGARH	3.2	2.9	2.6	1.2	9.5
JAISALMER	2.3	0.02	8.9	3.5	7.5
JALORE	2.3	3.5	5.6	12.7	1.9
JHUNJHUNU	1.2	3.7	1.7	2.9	4.9
JODHPUR	4.8	1.8	8.8	6.2	6.1
NAGAUR	3.4	4.1	7.5	6.5	3.5
PALI	2.7	2.8	8.9	3.8	2.4
SIKAR	1.8	4.9	2.4	5.3	4.2

It is apparent that cattle, sheep, goats and buffaloes are the important animals raised. Cattles in the northern part (Bikaner, Barmer, Churu). Nagaur cattle are of all India fame for fine breed. Sheep are the most important Barmer, Bikaner, Jaisalmer, Jodhpur, Pali) while goats gain importance in jalore where they account for nearly one-fourth of the regional total. Camels are important in almost all the district.

RESULT

1 Goats are maximum in Barmer.

2 Buffalo are minimum in Jaisalmer.

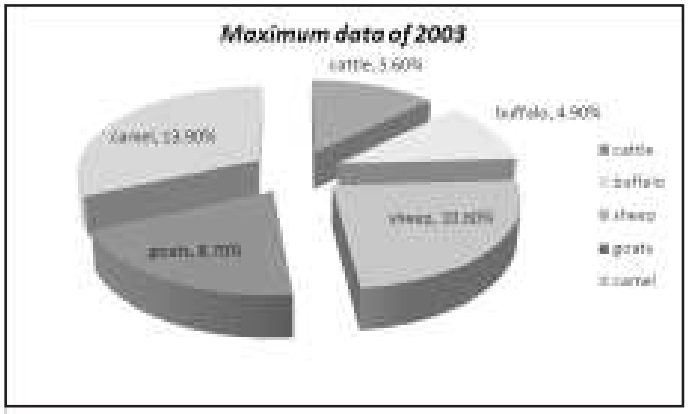

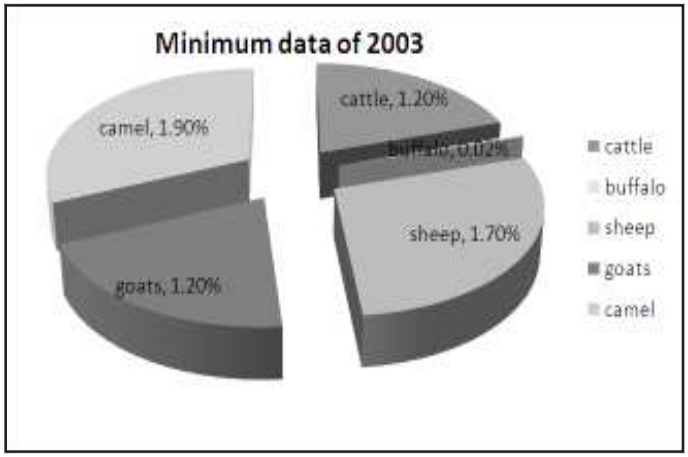

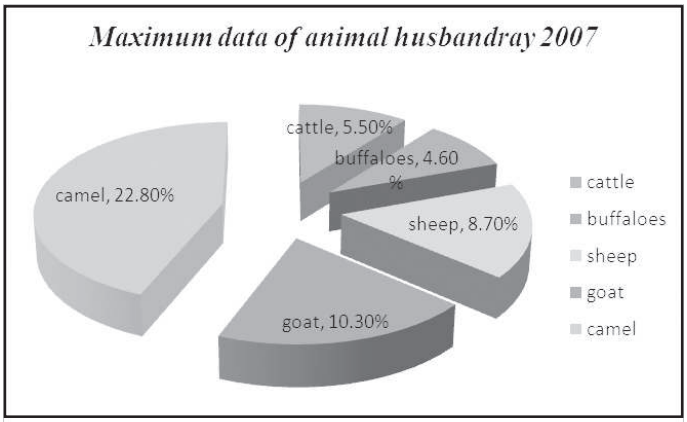

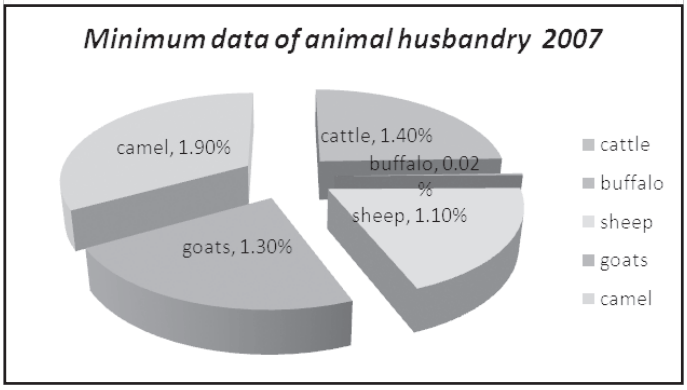

Table 2 ANIMAL DISTRICTION OF ARID ZONE RAJASTHAN IN (2007)

DISTRICT	CATTLE	BUFFALOES	SHEEP	GOAT	CAMEL
BARMER	637510	156477	1371217	2221007	58766
BIKANER	671078	131272	799728	909622	49615
CHURU	256223	214673	452293	919579	41279
GANGANAGAR	585504	282815	379667	377670	19622
HANUMANGARH	404324	326423	285868	279895	46607
JAISALMER	348950	2664	1303774	1131910	39142
JALORE	294124	411602	632951	547217	8181
JHUNJHUNU	175236	370476	190272	640300	21993
JODHPUR	654167	263019	976749	1402242	25377
NAGAUR	418134	460324	795595	1420605	14091
PALI	355045	315418	924553	701932	8289
SIKAR	254485	515717	319237	1150691	15451

Source: livestock census of Rajasthan. 2007 state volume (prov.) Board of Revenue for Rajasthan, Ajmer.

CATTLE OF PERCENTAGE

DISRICT	CATTLE	BUFFALOES	SHEEP	GOAT	CAMEL
BARMER	5.5	1.1	7.1	4.2	22.8
BIKANER	5.2	1.4	2.2	10.3	13.9
CHURU	2.1	1.9	4.0	4.2	9.7
GANGANAGAR	4.8	2.5	3.3	1.7	4.6
HANUMANGARH	3.3	2.9	2.5	1.3	11.1
JAISALMER	2.8	0.02	1.1	5.2	9.3
JALORE	2.4	3.7	5.6	2.5	1.9
JHUNJHUNU	1.4	3.3	1.7	2.9	5.2
JODHPUR	5.3	2.3	8.7	6.5	6.0
NAGAUR	3.4	4.1	7.1	6.6	3.4
PALI	2.9	2.8	8.2	3.2	1.9
SIKAR	2.0	4.6	2.8	5.3	3.7

It is apparent that cattle, sheep, goats and buffaloes are the important animals raised. Cattle are numerically the most important in the northern part (Bikaner, Barmer, Ganganagar). Nagaur cattle are of all India fame for fine breed. Sheep are the most important in (Barmer where they account for nearly one-fourth of the regional total. Camels are important in almost all the district. The desert region comprising of the district of Jalore, Barmer and Jaisalmer has Predominance of drought animals, sheep, goats, Buffalo is as important owing to easy availability of water particularly required for the latter and partly also because of the proximity to Haryana.

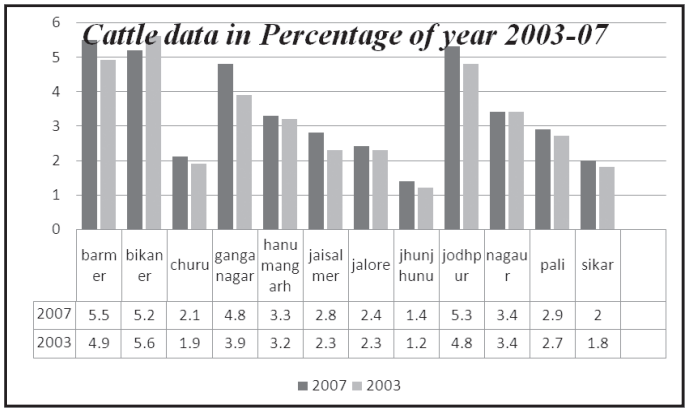

Increase the growth of cattle 2007 against 2003. Fall the cattle2003 against raining 2007.

RESULT- Sheep's are maximum in Jodhpur and camels are maximum in Bikaner.

CONCUSION

1. The arid region comprising of the districts of Jalore, Barmer and Jaisalmer has predominance of animals, sheep , goats, Buffalo is as important owing to easy availability of water particularly required for the latter and partly also because of the a proximity to Haryana.

References

1. Agrawal, A. (1992), The Grass is Greener on the Other Side: A study of Raikas, Migrant- Pastoralists of Rajasthan, International Institute for Environment and Development, Paper No. 36, England.
2. Anno (1974-2006) - central Arid zone Research Institute, Annual Reports 1974-2006 CAZRI, jodhpur
3. Anon 1963 "Techno Economic Survey of Rajasthan", National Council of applied Economic Research (NCAER), New Delhi.
4. Asian livestock: monthly, English, Pub. : FAO regional animal production and health commission for Asia and the pacific (APHCA)
5. Butterworth, m. f.: Beef Cattle Nutrition and Tropical pastures, orient Longman, London, 1985.

Report

1 Report on the livestock census of Rajasthan, 2003 state volume (prov.) Borad of Revenue for Rajasthan, Ajmer.
2 Report on the livestock census of Rajasthan. 2007 state volume (prov.) Borad of Revenue for Rajasthan, Ajmer.

****

The World Of A Mentally Retarded Child

Dr. Rashmi Shrivastava *

Mental retardation refers to related of underdeveloped functioning of mind and intellect. The most widely accepted definition of mental retardation today is that given by the American Association on Mental Deficiency (AAMD) "Mental retardation refers to significantly sub-average general intellectual functioning existing concurrently with deficits in adaptive behavior and manifested during the development period."

Causes and Indicators of Mental Retardation

The causes of mental retardation can be grouped into three categories-prenatal causes are chromosomal abnormality , genetic disorder, infection in the mother, especially in the first three months of pregnancy, maternal diseases such as diabetes, endocrine disorders etc., exposure to radiation of drugs. Lack of oxygen during or immediately after birth, head injury during the birth process and severe jaundice constitute the main perinatal causes while malnutrition, infections like meningitis, epileptic fits during infancy or head injury are the major postnatal causes.

It is easier to recognize this condition with increase in age.

The smaller the child, the more the caution required in making a judgment. Inordinate delay in the developmental milestones, an I.Q. below 70 and inability to meet the minimal expectation appropriate to that age group are broad indicators of mental retardation. Any one of these indications by itself, though, is not sufficient for diagnosis, they have to be seen in combination, caution is required in interpreting these indicators as conditions such as extreme emotional deprivation and malnourishment may also bring about these symptoms. Further, conditions such as autism may also be confused with mental retardation.

Levels of Attainment

The general practice is to use the AAMD classification of mild, moderate, severe and profound categories which give a rough estimate of the child's potential to benefit from training and education. Functionally it is convenient to categories such persons into two broad groups: (i) educable (ii) trainable. The children scoring 50 I.Q. points and above are considered to be educable. They have fully developed language though vocabulary is limited as compared to a normal person; they can look after their personal needs; can learn simple vocational skills, basic academic skills, social adaptation and lead an independent life with little supervision. However, their capacity for learning abstract concepts is limited and therefore functions like reasoning, logic and insightful learning remain highly underdeveloped. Children scoring below 50 I.Q. points ranging from moderate to severe retardation are considered to be trainable. Persons with moderate retardation can learn elementary communication, self-care, rudimentary reading and very simple vocational skills.

Emotional and Psychological development

An important fact of development in a child is his/her emotional and psychological well-being and it becomes crucial for a child with mental retardation. He/she is more vulnerable to emotional difficulties due to lack of self-sufficiency in many areas. His/her emotional and psychological needs e.g. need for approval, appreciation, achievement and social needs often do not find fulfillment. He/she faces a tough situation as enormous demands have to be met with limited cognitive capacities. His/her emotions and needs are like that of any other person, though, intellectual functions are much underdeveloped.

Common Problem Behaviors

Sometimes problem behavior may occur for a very short time like restlessness or irritability after prolonged physical illness. Short lasting episodes of problems are not labeled as problem behavior. Following criteria is used to assess whether a particular behavior is maladaptive or not.

(a) **Age Appropriateness:** A child's age and developmental status are very important in determining the normality of the child's behavior. For example bed wetting at night is normal till the age of five years but certainly not at 10 years.

(b) **Intensity:** If a particular behavior occurs in an intense form it becomes a problem e.g. during a temper tantrum the child may hit his head on the wall, break articles and beat other people.

(c) **Frequency:** If the problem persists more or less all the time or it can be called a problem behavior e.g. bed wetting by a seven year old child every night as compared to wetting once in a month.

(d) **Severity, Number and Diversity:** Some behaviors may occur once in a while but are dangerous for the child

*** Asst. Professor, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)**

and the people around him e.g. setting fire to things. Sometimes the child may have problems in more than one area like poor attention, destructive aggression and disobedience.

Here are some of the commonly encountered problem behaviors.

Problems Related to Specific Developmental Aspects:

Enuresis :

Wetting of bed or clothes by a child over five years of age.

Encopresis:

Regular soiling of clothes due to incorrect bowel habits or fear of toilet.

Pica:

Children with mental disability tend to chew upon inappropriate objects like mud, toothpaste, toys, button, pencil, dirt, plaster, hair, wood, paper, which cause physical complications in the form of constipation, anemia, intestinal obstruction and lead poisoning.

Speech Disorder:

Delayed speech, articulation defects are common in retarded children, speech disorders are partly due to the developmental immaturity.

Body Manipulation:

Thumb sucking, nail biting or lip sucking. Generally the child gets into the habit of sucking due to boredom or inability to do difficult tasks or when he feels insecure.

Masturbation:

Playing with genitals in inappropriate places may interfere with his meaningful activity.

Temper tantrums:

Temper tantrums are a part of normal development around the age of two years. Holding of breath is the first sign of temper tantrum seen in young babies Hitting, kicking and screaming are the expressed tantrums of the older child.

Hyperactivity/Destructiveness:

Hyperactive children have poor attention span, are over active and impulsive by nature. Such children do not sit still, are restless and highly distractible. The child constantly changes what he is doing his movements are numerous and purposeless. Hyperactive children may also break or throw objects around.

Poor concentration:

This is a very frequent complaint from the parents of retarded children. They may not be over active but have short attention span. Poor concentration often results when the task given is too difficult, monotonous or force upon.

Aggressiveness:

Negativism and disobedience are mild forms of aggressive behaviors. While temper tantrums, head banging and destructiveness are more severe forms. No matter what the degree is, this type of behavior is very distressing for parents and other members of the family. Aggression is a means by which the child expresses his anger at the world around him. Thus, management of such types of behaviors would require the parents to examine the situations in which aggressive behaviors tends to surface.

Poor Eye Contact:

Eye contact serves three functions in communication recognizing, showing interest and providing affectional basis for smooth interaction. Many children with mental disability are unable to make eye contact, some of them have infantile autism, and others may not make eye contact due to improper training or shyness.

Infantile Autism:

Autism is a mental disability appearing in infancy or early childhood. Because of its manifestation early in life, a child's social behavior is severely affected. An autistic child does not relate to other persons, may be obsessed with one pair of clothes, song, toy, or activity. His language is severely retarded and would rarely produce few words. There are no drugs to manage; only psycho-education training is given.

Self Injurious Behaviours:

Self injurious behaviors bother the parents, teachers and caretakers of retarded children, as it not only harms the child but also deprives him from the opportunity to learn. Common self-injurious behaviors seen in mentally retarded children are biting their own hand, lips or tongue, hitting part of their body, digging at wound. Head banging is characterized by repeated striking of the head against a social object like wall, floor or bed.

Characteristics of persons with various degrees of mental retardation (See Table no. 1)

How to help them grow and learn:

Psychological research as well as personal experience of working with mentally retarded children bring out the following suggestions:

1. The most important task is to accept the child with his/her disabilities. It is difficult because he/she is not going to meet our usual expectations. A feeling of being wanted and loved unfolds the potentials for growth.
2. Mental retardation is invariably accompanied by attentional deficit, i.e. inability to concentrate on a given task for long duration. However, it can be overcome to a great extent by making the task attractive, interesting and simple. Frequent appreciation and encouragement %1 is essential %0

3. Mental retardation restricts greatly the scope of abstract conceptual learning. The learning goals should be chosen keeping this factor in mind along with the preparedness of the child for a particular task. All learning is sequential; educational and training goals can be sequenced by a careful observation of the steps involved in learning of a task. Simple instructions should be used to make sure that the child understands them.
4. Practice is the essence of learning and mental retardation prolongs excessively the duration of practice required in acquiring a skill.
5. Every child is unique in terms of potential, temperament and aptitude. Specific disorders may bring in their own hazards for the child, which need to be understood for ensuring effectiveness of a training programme.
6. A mentally retarded child experiences much more failures than successes in his/her attempts. Therefore, to build up confidence and initiative for learning, he/she must be given enough success experiences focusing upon what he/she can do rather than what he/she cannot do. However small the achievement, applaud it and compliment him/her on his/her success.
7. Expectations should be matched with what can be achieved.
8. A frequent complaint about mentally retarded children is that they are obstinate and do not comply with instructions. It is quite probable that the demands make no sense to him/her because he/she does not understand what is required of him/her and why. Loving, firm and patient handling of the child in such situations brings better results than frequent scolding or other forms of punishment.
9. He/she too is an individual with his/her own needs, interests and likings. Due importance should be given to his/her uniqueness.

Caring and bringing up such a child is not without its own rewards. My son Puneet has taught me some invaluable lessons:

- By accepting and being compassionate towards the frailities and vulnerabilities in oneself and others we can understand others and ourselves better and thus come closer to people.
- Cultivation of patience. This is highly valued armour to face all kinds of difficulties in life.
- It is possible to be happy without attaching too many conditions to it. We destroy our chances of happiness by worrying about what we do not have than what we have- even an intact body is a great blessing.
- Dignity and reverence towards life. Who are we to pass judgment over somebody's existence?

References:

1. Special Child, M K Bhatia
2. ICCW News Bulletin, Volume XXXXNo.1
3. Mentally Retarded child, Yogendra ji

Severity level	Mild	Moderate	Severe	Profound
Description				
Preschool 0-5 yrs	Can develop social and communication skills, minimal retardation in sensori motor areas, often not distinguished from normal until late age.	Can talk or learn to communicate; poor social awareness; fair motor development, profits from training in self held; can be managed with moderate supervision	Poor motor development, speech minimal; generally unable to profit from training in self-help; little or no communication skills.	Gross retardation; minimal capacity for functioning in sensori-motor areas; needs nursing care.
School age 6-20	Can learn approximately 6th grade level by late teens; can be guided toward social conformity.	Can profit from occupational skills; unlikely to progress beyond 2nd grad level in academic subjects; may learn to travel alone in familiar places.	Can talk or can be trained in elemental health habits; profits from systematic habit training.	Some motor respond to minimal or limited training in self help.
Adult 21 and over social and vocational adequacy	Can usually achieve social and vocational skills adequate to minimum self support but may need guidance and assistance	May achieve self maintenance in unskilled or semiskilled work under sheltered conditions; needs	May contribute partially to self maintenance under complete supervision; can develop self protection skills to a	Some motor and speech development; may achieve very limited selfcare; needs nursing care.
	when under unusual social or economic stress.	supervision and guidance when under mild social or economic stress.	minimal useful level in controlled environment.	

Importance of Ergonomic in Daily Life & Workplace Design

Dr. Rashmi Verma *

Ergonomics is designing a job to fit the worker so the work is safer and more efficient. Implementing ergonomics solution can make employees more comfortable and increase productivity. Ergonomics is important because when you're doing a job and your body is stressed by an awkward posture, extreme temperature, or repeated movement your musculoskeletal system is affected. Your body may begin to have symptoms such as fatigue, discomfort, and pain, which can be the first signs of a musculoskeletal disorder.

Musculoskeletal disorder (M S Ds) are condition that affect your body's muscles, joints, tendons ligaments, and nerves .musculoskeletal disorder can develop over time or can occur immediately due to overload

Ergonomics is a term thrown around by health professionals and marketing mavens with a cavalier attitude. For some it has a very specific meaning. For others it covers everything under the sun. With all this different verbiage flying at you, you are probably starting to wonder, "What is Ergonomics?"

What is Ergonomics? At its simplest definition ergonomics literally means the science of work. So ergonomists, i.e. the practitioners of ergonomics, study work, how work is done and how to work better. It is the attempt to make work better that ergonomics becomes so useful. And that is also where making things comfortable and efficient comes into play. Ergonomics is commonly thought of in terms of products. But it can be equally useful in the design of services or processes. It is used in design in many complex ways. However, what you, or the user, is most concerned with is, "How can I use the product or service, will it meet my needs, and will I like using it?" Ergonomics helps define how it is used, how it meets you needs, and most importantly if you like it. It makes things comfy and efficient.

What is Comfort? Comfort is much more than a soft handle. Comfort is one of the greatest aspects of a design's effectiveness. Comfort in the human- machine interface and the mental aspects of the product or service is a primary ergonomic design concern. Comfort in the human- machine interface is usually noticed first. Physical comfort in how an item feels is pleasing to the user. If you do not like to touch it you won't. If you do not touch it you will not operate it. If you do not operate it, then it is useless. The utility of an item is the only true measure of the quality of its design. The job of any designer is to find innovative ways to increase the utility of a product. Making an item intuitive and comfortable to use will ensure its success in the marketplace. Physical comfort while using an item increases its utility.

What is Efficiency? Efficiency is quite simply making something easier to do. Efficiency comes in many forms however. Reducing the strength required makes a process more physically efficient. Reducing the number of steps in a task makes it quicker (i.e. efficient) to complete. Reducing the number of parts makes repairs more efficient. Reducing the amount of training needed, i.e. making it more intuitive, gives you a larger number of people who are qualified to perform the task. Imagine how in-efficient trash disposal would be if your teenage child wasn't capable of taking out the garbage. What? They're not? Have you tried an ergonomic trash bag? Efficiency can be found almost everywhere. If something is easier to do you are more likely to do it. If you do it more, then it is more useful. Again, utility is the only true measure of the quality of a design. And if you willingly do something more often you have a greater chance of liking it. If you like doing it you will be more comfortable doing it.

Definition of Ergonomics Ergonomics derives from two Greek words: ergo meaning work, and nomoi, meaning natural laws, to create a word that means the science of work and a person's relationship to that work. The International Ergonomics Association has adopted this technical definition: ergonomics (or human factors) is the scientific discipline concerned with the understanding of interactions among humans and other elements of a system, and the profession that applies theory, principles, data and methods to design in order to optimize human well-being and overall system performance.

That is not the most efficient definition of what ergonomics is. Let us keep things simple. Ergonomics is the science of making things comfy. It also makes things efficient. And when you think about it, comfy just another way of making things efficient. However for simplicity, ergonomics makes things comfortable and efficient.

History Of Ergonomics Ergonomics grew into a distinct scientific discipline during World War II. What began as a form of basic human engineering now encompasses a wide range of disciplines, including psychology, industrial design, medicine, and computer science .Its practitioners' range of focus includes concept modeling and product design, job performance analysis, functional analysis, workspace and

***Assistant Professor of Home Science, Govt. Girls College Neemuch (M.P)**

equipment design, computer interfaces, and environment design.

Characteristics Of Ergonomics The basis of ergonomics understands the physical and cognitive/perceptual limitations of human performance relative to interaction with products. Such interface analysis is crucial to establishing a safe and effective system of operation for the user.

Cognitive Ergonomics Proper fit of a product to a user does not end with physical interfaces. The perceptual and cognitive demands that a product places on the user must also be examined. Note that a great misconception regarding these areas of human functioning is that they relate to emotive - and therefore qualitative - responses of users. But rather, both perceptual and cognitive behaviors offer fact-based, quantitative data that can be used in product development.

Physical Ergonomics A thorough understanding of the physical characteristics of a wide range of people is essential in product development. When analyzing design relative to human performance, ergonomists study anthropometric data, which includes size percentiles of a wide range of populations defined along such lines as gender and age. Ranges of joint motions, strengths, and grips for various populations are also reviewed. These data serve as valuable information to designers and help ensure that the final product will physically fit the targeted endusers.

Ergonomics Principles That Contributed To Good Workplace Design The goal for the design of workplaces is to design for as many people as possible and to have an understanding of the Ergonomic principles of posture and movement which play a central role in the provision of a safe, healthy and comfortable work environment. Posture and movement at work will be dictated by the task and the workplace, the body's muscles, ligaments and joints are involved in adopting posture, carrying out a movement and applying a force. The muscles provide the force necessary to adopt a posture or make a movement. Poor posture and movement can contribute to local mechanical stress on the muscles, ligaments and joints, resulting in complaints of the neck, back, shoulder, wrist and other parts of the musculoskeletal system. Ergonomic principles provide possibilities for optimising tasks in the workplace Joints must be in a neutral position - In the neutral position the muscles and ligaments, which span the joints, are stretched to the least possible extent

Work in Neutral Postures:- Your posture provides a good starting point for evaluating the tasks that you do. The best positions in which to work are those that keep the body "in neutral."

Reduce Excessive Force: - Excessive force on your joints can create a potential for fatigue and injury. In practical terms, the action item is for you to identify specific instances of excessive force and think of ways to make improvements.

Keep Everything in Easy Reach: - The next principle deals with keeping things within easy reach. In many ways, this principle is redundant with posture, but it helps to evaluate a task from this specific perspective.

Work at Proper Heights: - Working at the right height is also a way to make things easier.

Reduce Excessive Motions: - The next principle to think about is the number of motions you make throughout a day, whether with your fingers, your wrists, your arms, or your back.

Minimize Fatigue and Static Load:- Holding the same position for a period of time is known as static load. It creates fatigue and discomfort and can interfere with work.

Minimize Pressure Points: - Another thing to watch out for is excessive pressure points, sometimes called "contact stress."

Provide Clearance: - Having enough clearance is a concept that is easy to relate to.

Move, Exercise, and Stretch: - To be healthy the human body needs to be exercised and stretched.

Maintain a Comfortable Environment: - This principle is more or less a catch-all that can mean different things depending upon the nature of the types of operations that you do.

Make display and controls understandable

Improve work organization

Advantages of Ergonomics

(1) **Increased savings -** a - Fewer injuries, b-more productive and sustainable employees.

(2) **Fewer employees experiencing pain-** implementing ergonomics improvements can reduce the risk factors that lead to discomfort.

(3) **Increased productivity -** Ergonomics improvement can reduce the primary risk factors for MSDs ,so worker are more efficient, productive, and have greater job satisfaction.

(4) **Increased Morale -** Attention to ergonomics can make employees feel valued because they know employer is making their workplace safer.

(5) **Reduced absenteeism -** Ergonomics leads to healthy and pain - free worker who are more likely to be engaged and productive.

References

- Web service
- Wikipedia
- Junglee.com
- Websites
  http://www danmacleod.com
  http://www ergonomics-info.com

****

Female Consciousness in Rama Mehta's 'Inside the Haveli'

Dr. Kehkashan Khan *

Rama Mehta was a sociologist by profession and she had researched deeply into the lives of the western educated Hindu women and the Hindu divorced women, which were the subject of two books written by her. When she wrote "Inside the Haveli", she wrote as an informed critic of Indian society. In her sociological study 'The Western Educated Hindu Women', she observes: "Developing countries in the process of modernization want to maintain their way of life and want change but on the foundations of their cultural values"1

The novel shows the dilemma of a young educated girl Geeta, the only child of educated parents and a product of co-ed Bombay College. She is spontaneous, vivacious and used to mixing with boys. But after marriage she enters the Haveli of Jeewan Niwas as its daughter-in-law and as a wife of Ajay who is professor of Physics in Udaipur University. Initially Geeta thinks that they are not going to stay permanently in Udaipur because Ajay has applied at Delhi University, but one day he informs Geeta. "I have been made Head of the Department of Physics in the Udaipur University. I prefer to stay here than go to Delhi".2

Geeta brought up in a liberal atmosphere has her own view of life and aspirations for her husband. The novelist, being herself a woman, succeeds in understanding with an unerring instinct the limitations of her heroine in changing the world to her heart's desire. Geeta is bewildered to find that the time honoured customs and traditions are very precious to her husband and in-laws. She is baffled by the poverty, illiteracy superstition and ignorance of the people around her.

Udaipur becomes the local for the narrative as well as a symbol for contemporary India after 25 years of independence. Sangram Singh ji's haveli is three hundred years old. It has been compared to 'a banyan tree', which symbolizes strength, roots antiquity and security. The haveli represents a tradition that has matured and developed over a long period of time. It is founded on years of varied experience and provides support, sustenance and a sense of belonging to its residents. The haveli has a large number of servants who have different code of conduct than their masters.

Bhagwat Sing Ji and his wife took a daring step by selecting Geeta as their daughter-in-law. Ajay's mother is confident that even an educated girl can be moulded to carry on the traditions of the haveli. Outwardly, Geeta tries to adjust but inwardly she rages, frets and fumes and longs for freedom. She finds that in the haveli men were regarded with awe as if they were gods. They were master and their slightest wish was a command. She also discovers that although the supremacy of the male was unquestioned, her mother-in-law was also a force that could not be ignored. She managed the entire haveli to keep man free from household worries. Being an educated man Ajay understands Geeta's Problem, he says:

"I Know it is difficult for you here, but Geeta by being depressed, you will not change things. You must always have confidence in me that I will support you in whatever you decide to do.3

Inside the haveli education for girls or women is not perceived as essential for their development, but Geeta struggles to send a servant's daughter Sita to school as her mother Laxmi escapes from haveli because of false allegations of her husband. Sending Sita to school is a revolutionary idea and meets opposition but Geeta stands firm. To get rid of boredom and monotonous life, she starts teaching the boys and girls from servants' quarters. The classes gather popularity and are joined by the daughters of maids and neighbouring illiterate women. She provides the facility of learning, sewing and embroidery to those women who find it difficult to master the alphabet.

Geeta unwittingly brings about a change in the consciousness of the haveli inmates. In this venture she finds full support of her husband and her noble and generous father-in-law. Ajay congratulates her on bringing new ideas in the haveli and her father-in-law says; "I am proud of Binniji; tell her to let me know if she needs any help."4 Her project proves great success and those who criticized her initially, begin to appreciate her for bringing the gift of learning to the poor and making them self-reliant through vocational training.

While Geeta brings about a visible transformation in the members of the haveli, she herself undergoes a metamorphosis. Gradually she begins to realize the meaning of tradition and importance of values. In place of frustration and alienation, she begins to experience pride and affection for the haveli. At last comes a time, when she can honestly tell herself that the haveli has such abundance of love and care that she would like her children to grow up in that

*** Asst. Professor of English, Govt. MLB P.G. Girls College, Indore (M.P.)**

atmosphere enjoying those emotions. She admits:

"The haveli has made me willing prisoner within its walls. How stupid I was not to see all that it holds. Where else in the world I get this kind of love and concern? The children must grow up here. They must learn to love and respect this ancient house."5

She becomes appreciative of the other positive aspects of the haveli traditions as well, in particular the emphasis on poise, courtesy, respectfulness towards elders, concern for all members, the warm relationship between servants and masters. But in the process, she also clears away the deadwood of tradition by removing the prejudice against the education of women and children of the servant class.

When the novel begins, Geeta and her in-laws stand at two ends of a straight line, by the time the book concludes, both parties have made a conscious effort to come closer and tried to understand, tolerate and appreciate each other's views and needs.

The novel ends with the description of calm and quiet death of Bhagwat Singhji, Geeta's Father-in-law. Geeta becomes the mistress of the haveli. The journey of Geeta's life begins with frustration but ends with complete realization of the values of life.

The acquiescence in to tradition is achieved by Geeta without either disrupting harmony of the life in haveli or violating any of her own basic integrity. By educating her daughter Vijay, Sita, other girls and women of haveli, she points towards the new world and new era. She finds the haveli to be a living, thriving centre of harmony, mutual love and personality nurture. She creates a living relationship with the residents of haveli, for she shares with them her regard for knowledge and freedom and learns from them the value of one's own tradition.

REFERENCES

1. Rama Mehta, 'The Western Educated Hindu Women' (Bombay: Asia, 1970), P. 207.
2. Rama Mehta, 'Inside the Haveli' (New Delhi: Arnold Heinemann, 1977), P. 138
3. I bid, P. 44
4. I bid, 128
5. I bid, 137

****

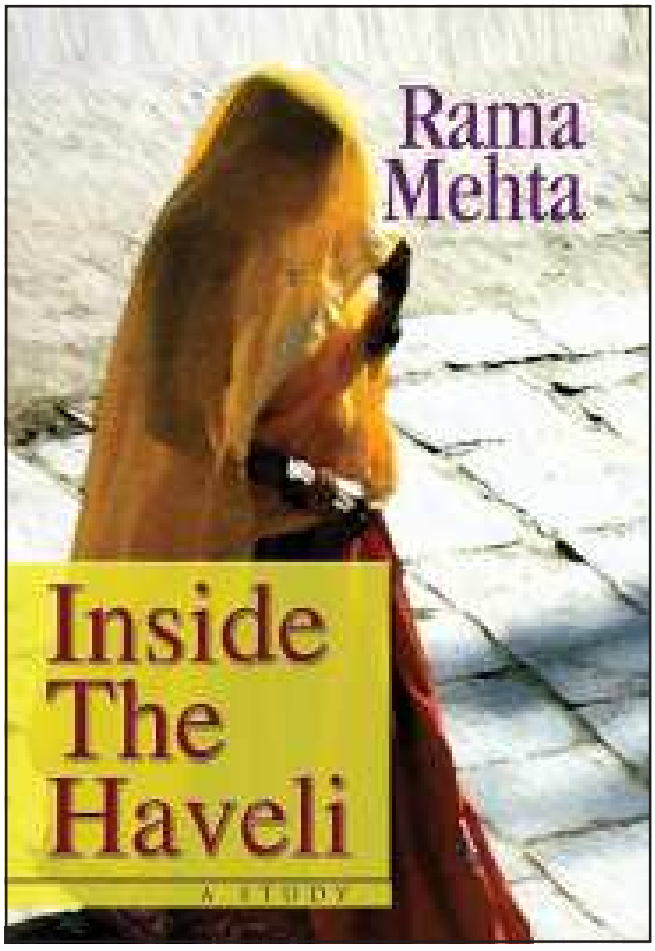

The Mechanics of Myths in Girish Karnad's Nagamandala

Dr. Swati Chandorkar *

Girish Karnad is man of varied geniuses - he is a playwright, poet, actor, critic and translator. His contribution to Indian English drama is unique, earning him a global recognition. His dramas are indeed his efforts to preserve the Indian Culture in the native folk theatre. Karnad makes a selection of myths and folktales, for his dramatic purpose. His mythical characters emerge as manifestations of general human characteristics, placed in a contemporary context and dealing with contemporary situations. He takes his inspiration from the rich tradition of India's past and weaves it through the web of his imagination into tales of his own.

Karnad's first play *Yayati* is a story taken from the Mahabharata. The mythical story is a tale of responsibilities, sacrifice and self-realization. The play *The Fire and the Rain* is also taken from (the Forest canto of) *Mahabharata.* It is based on the myth of *Yavakiri* and includes the conflict between *Indra, Vishwarupa* and *Vritra*. Rangan's characterization of folk imagination and folk play and their interplay with magic is easily applicable to Karnad's plays:

> Folk imagination is at once mythopoeic and magical. In the folk mind, one subsumes the other. Folk belief, besides being naïve, has a touch of poetry about it which works towards a psychic adjustment. All folklore is religious, often based on animism because the primitive imagination extends its vision from the natural, in which it is steeped and with which it is saturated, to the supernatural, which to the folk mind is only an extension of the former. (Rangan, p- 199)

The inexhaustible lore of myths, parables and legends that pattern and define our culture offers immense scope for the Indian dramatists as Shastri says, "Myth, at all events, is raw material, which can be the stuff of literature". (Shastri, J.L., *"The Shiva Purana"* pp - 229-230.) Our early playwrights writing in English like Sri Aurobindo and Kailasam selected their themes from the myths and legends of Indian Literature.

Karnad took refuge in the myths and legends and made them the vehicle of a new vision. Issues of the present world find their parallels in the myths and fables of the past, giving new meanings and insights reinforcing the theme. They form an internal part of cultural consciousness of the land, with different meanings and it reflects the contemporary issues. By using these myths, he tried to reveal the absurdity of life, with all its elemental passions and conflicts and man's eternal struggle to achieve perfection. Vanashree Tripathy has said that "Literature and Myth merely dramatize, heighten and highlight what is theoretically possible in nature and science. (*Tripathi, Vanashree ,Three Plays of Girish Karnad: A Study in Poetics and Culture,* p.89.)

Karnad does not take the myths in their entirety, he takes only fragments that are useful to him and the rest, he supplements with his imagination to make his plots interesting. Like masks worn by actors that allow them to express otherwise hushed truths, Indian theatre enables immediate, manipulative representations of reality.

Girish Karnad's *Hayavadana* and *Nagamandala* source their origin from the folklore tradition of India. *Hayavadana* is based on Thomas Mann's translation of the Sanskrit *'Vetal Panchavimashati',* which forms part of Kshemendra's *Brihat Katha Manjari* and Somadeva's *Kathasaritsagara*. Karnad's *Nagamandala* is inspired by the snake myths prevalent in South India. It is a dramatization of two folktales of Karnataka. In fact, Naga Cult is widely practiced in many parts of India.

Karnad's *Naga-Mandala* is based on two oral tales from Karnataka as we know from what he says in his "Introduction" to *Three Plays:* … these tales are narrated by women-normally the older women in the family-while children are being fed in the evenings in the kitchen or being put to bed. The other adults present on these occasions are also women. Therefore these tales, though directed at the children, often serve as a parallel system of communication among the women in the family."

The title of the play is not the name of a human character, but it is that of a snake. As the name suggests, it revolves around a woman and a serpent. As this play is based on a folk tale it could be observed that the serpent plays an important role as in most such narrations all over the world. It is believed that snake myths are very popular in Brahmanism, Buddhism and Japanese writing.

The folk-tale element of *NagaMandala* and the magical power, which the cobra possesses continually, remind the spectators that they are only watching a play. The play deals with a 'self-involved' hero, who undergoes a test, put to him by his wife in order to survive. The psychological inadequacy, he is trapped in, causes acute lack of understanding and communication between him and his wife. It is a threat to family and society.

*** Assistant Professor & Head Deptt. of English, Govt. Girls' College, Narsinghpur (M. P.)**

NagaMandala is not only about the male difficulty to trust and love women, it seems to be about the socialization process of both men and women, particularly in the Indian society, where marriage is more often than not the first experience of sex and love for most people. *Naga-Mandala* probes into the female and male growth into selfhood, and their mature adjustment with the social roles appointed for them by the traditional society.

Myths and folk tales in a patriarchal society represent primarily the male unconscious fears and wishes and are patriarchal constructs and male-oriented. In these stories, the women's experiences and inner feelings are not given importance. It is a remarkable achievement of Karnad that he adapts this male-oriented folk tale in such a manner that it becomes a representation of the experience of man and woman in the psychologically transitional phase. In a folk tale, there is a magician or a snake that assumes the form of the Prince, enters the palace and woes the beautiful Princess, locked up in the palace. When the Prince becomes aware of this, he gets the snake/ magician killed and the Princess then sets him a riddle. If he fails to answer, he has to die.

In Karnad's play, the story takes a happy turn, both Rani and Appanna adjusting to the family and community in a socially useful manner. But this is achieved after upsetting the male egoism and exaggerated sense of power over women. The male assumption of keeping full control over the body, sexuality and virtue of women through the insinuations of family and values like chastity are mocked in the story.

Appanna's violent reaction to his wife's infidelity does not make him consider for a moment his infidelity towards her. The other villagers also ignore this lapse on his part but they emphasize the institution of marriage and the procreative function of the couple. The importance of the family and progeny are established. The husband and the wife run towards each other, with a greater sense of relationship. The girl-bride now becomes the mother to be and as such gains a social recognition. This stage of Rani's social integration brings her a new sense of respect and her own worth. This is another significant aspect of the Indian social and cultural life in its treatment of women. In Kiranth's words, "… an Indian woman knows that motherhood confers upon her a purpose and identity that nothing else in her culture can". (Kiranth B.V. *Translation of Hayavadana into Hindi,* p.57.)

As a mother, Rani is seen in the last part of the story to be in command of the household with some authority and decision making power. Appanna even agrees to her rather strange demand that their son should perform an annual *"pinda-daan"* in the memory of the dead snake. In the alternate end to the play suggested by the playwright, the snake does not die. It is allowed by Rani to live in her dark, long and cool tresses.

The lover is always present; he lives with her, within the family. The danger to male authority as a husband and patriarch lives on constantly at close quarters but mostly within the woman's imagination. The dutiful and loyal wife may observe the social, moral code entirely; yet within her, live the memories of the perfect lover who had given her first emotional and erotic experiences. These desires may haunt her or lie dormant within. Rani can understand emphatically why Kappanna, the young man, who was bound by filial duty to his old and blind mother, runs away one night. He had been pursuing his dream of a beautiful woman. Though he resisted the alluring voice and presence of the dream girl, he was trying to be a dutiful son carrying his old mother on his back. Finally he is pulled away when the dreams become too powerful. Rani has gone through these new desires, the daydreaming and fantasizing about love and she understands their power over the social and moral duties.

The unique challenge of *Naga-Mandala* lies in its exposure of its own limitations as a work of art. In this sense, the play is attuned to its contradictions with regard to women's experiences of desire, and the modes of self-expression available to them within existing discourses.

Works Cited

- Karnad, Girish, *Collected Plays : Tughlaq, Hayavadana, Nagamandala (Play with a Cobra),* Vol. One. Oxford: Oxford UP, 2005.
- Kiranth B.V., *Translation of Hayavadana into Hindi,* Delhi: Radhakrishna Prakashan,1975.
- Kumar, Nand. *Indian English Drama: A Study in Myths.* New Delhi : Sarup Sons, 2003
- Rangan, V. *"Myth and Romance in NagaMandala or their Subversion." Girish Karnad's Plays:*
- *Performance and Critical Perspectives. Ed. Tuntun Mukherjee.*
- Shastri, J.L., ed., Ancient Indian Tradition and Mythology, Vol. 1: "The Shiva Purana", Delhi:
- Motilal Banarsidas, 1970.
- Tripathi, Vanashree , Three Plays of Girish Karnad: A Study in Poetics and Culture, New Delhi: Prestige, 2004.
- G.A. Ghanshyam http://www.languageinindia.com/april2009/ghanshyamkarnad.html. 18/01/2013

****

The Father Of English Criticism : DRYDEN

Dr. Supriya Paithankar *

ABSTRACT:

Dryden considered as the 'The father of English criticism' set the fashion of criticizing just as Shakespeare set the fashion of dramatizing.

The last quarter of the 17th century witnessed the maturing of the critical genius of Dryden, who developed a wider outlook, which resulted in work that overshadowed the sporadic efforts of his contemporaries and confirmed his position as the most vital critic of his generation. After 1674, however, his critical pronouncements assumed a more general and a firmer character, as a result of his assimilation of what was most valuable in the new French teaching. Through the work of Rapin, Bailcau, Le Bossu and Dacier he had become acquainted with the newly organized neo-classical doctrine, and he has something to say on the rules and kinds.What however was more important was his assimilation of more fruitful ideal gathered with a shrewd instinct from the same and other sources, ideas which represented the less familiar part of French theory. As we have seen, his contemporaries had expounded some amount of neo-classical doctrine, often in verse form after Boilcans fashion, and had replied directly to persault and other. The effects on Dryden , however ,were of a different order from Rapin and Dacier, he desired a closer acquaintance with Aristotle, from Boilcau a shrewd idea of Longinus's illuminating doctrine, and from saint Evermond a sense of the need for an active and open mind in all critical inquiries. Such influences found a ready response in his own nature, for free speculation, fostered by corncille, had marked his earlier critical efforts.The result was a marked expansion of Dryden's critical horizon, fresh literatures being brought under examination and further opportunity afforded for viewing native achievements in the light of ancient standards.Dryden's first important critical work was his essay on Dramatic poesie (1668), a dialogue on the nature of poetic drama and the respective merits of classical modern french, Elizabethean, and Restoration plays, in which everyone agrees to define a play as " a just and lively image of human nature representing its passions and humours, and the change of fortune to which it is subject for the delight and instruction of mankind. The very fact that Dryden cast this essay into dialogue form, where different people, each representing a different point of view, where allowed their full

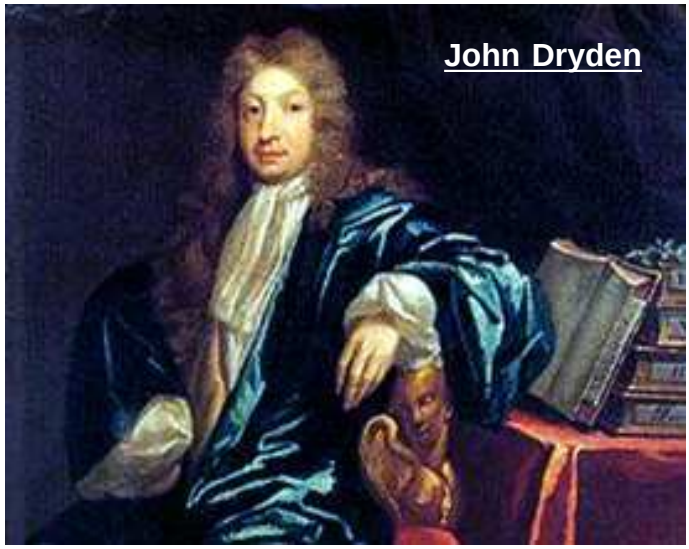

John Dryden

say, is evidence of his tolerant and inquiring mind. The characters, who have classical names, represent real people, and Dryden himself is introduced as Neander; crites begins by trying to prove that the Ancients were superior to the moderns, in that they kept to the so-called Aristotelian unities of time, place and action and also had better style. Eugenius urges the superiority of the moderns on a variety of grounds, including the threadbare plots of classical tragedy and the superior ' regularity' of modern drama. Lisideius the champions neo-classic French drama and attacks the English Elizabethean and Jacobean drama for its irregularity, improbability and general lack of artistry. Neander (Dryden) defends the English against the French: liveliness is better than cold formality. He praises the 'Variety of copiousness' of the English plays as opposed to ' the barrenness of the French plots' and defends 'variety, if well ordered' Dryden includes in this essay a careful examination of Jonson's play, Epicoene, or the Silent Women, one of the first detailed pieces of practical criticism in English.Much of Dryden's critical prose is found in his dedications and prefaces. A defence of Essay of Dramatic Poesie was included in the second edition of his play, The Indian Emperor (1668). His preface to An Evenings love discussed comedy, force and tragedy; this essay of Heroic plays was prefixed to The conquest of Granda (1672), and his essay On the Dramatic poetry of the Last Age appeared the same year with the second part of the same play. An Apology for Heroic Poetry

*** Asst. Prof. & Head English Dept. Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)**

and poetic License was prefixed to the State of Innocence (1677). The preface to All for Love (1678) discussed the nature of tragedy and his own intensions in writing the play this essay on The Grounds of criticism in Tragedy was the preface to Troilus and Cressida 1679. His preface to a volume of translations from Ovid in 1680 discussed Ovid and the art of translations. And so it went, each new literary venture provoking new reflections on the theory and practice of his art. If he was at his best as an, 'Occasional poet', he was also at his best as an occasional critic, discussing questions as they arose from the point of view of a practitioner this favorite role is that of the professional writer discussing his craft. It was Dr. Johnson who first called Dryden, 'the father of English criticism, as the writer who first taught us to determine upon principles the merit of composition'. And critic after critic has agreed with his estimate. Not that there was no criticism in England before Dryden. There had been critics like sir Philip Sydney and Ben Jonson. But they were critics merely by chance. Their critical works were merely occasional utterances on the critical art. Sydney's Apology arose out of the need to defend poetry against Puritan attacks, and the learned Ben's critical utterances are in the nature of jottings of just a few things that interested him. 'It is Dryden who begin a regular era of criticism.

It is for the first time in him that criticism becomes self consious, becomes aware of itself, analyses its objects with sympathy and knowledge, and knowing what kind of thing it is looking for. Sainttbury very aptly remarks that "Dryden said the fashion of criticising just as Shakespeare said the fashion of dramatising". There is a difference between Johnson and Dryden. While Johnson is ruthless, Dryden is tolerant. Johnson's criticism is sketchy and relatively small in output; "Dryden with a diverse literary tradition behind him and a much greater critical output remains the true father of English practical criticism". Dryden is the first English critic who took to criticism seriously and thought deeply over all the problems connected with literature. He possessed the power of going to the heart of a problem without any mental confusion. He was also broadminded enough to admire the merit of different literary traditions, and to see nobility in all literary. Camps. Dryden wrote criticism at frequent intervals throughout a career of about 40 years. There is a natural development in his critical outlook. In the early stage he favoured Elizabethan romanticism, but with the progress of years he advanced toward neo-classical orthodoxy. But in general Dryden did not stick to any particularly formulated doctrine. His prefaces are gems of literary criticism and valuable for their own aesthetic content. Though his criticism is also scattered, he has written on almost all the literary problems like the nature and function of poetry, dramatic art, epic, satire translations respective merits of rhyme and blank verse, prose and criticism itself. Besides his theoretical criticism we have his judicial criticism also. He has given us brilliant appreciations of Chaucer, Shakespeare, Beaumont and Fletcher and Ben Johnson. In this way criticism in all its aspects has been done in all of them. Moreover, the earlier criticism was majisterial' or dogmatic. They claimed to lay down rules for the guidance of poets and writers, rules which were dogmatically asserted. Criticism considered that they alone were in the right, while all others were in the wrong. Dryden, on the other hand, is never majesterial or pontific; he is sceptical, he does not lay down the rules, he rather sets out to discover the rules for his guidance in writing plays, as well as in judging of those written by others. It is seen at once that his field of inquiry has visibly broadened, and that here are something more than discussions of immediate problems or laboured and conventional exposition of cut-and-dried theory. They are works intended, as he himself explains, not for mere scholars, but for cultured circles. And he further confesses, 'I have not engaged myself to any perfect pattern, neither am I loaded with a full cargo'. Therefore eschewing both system and pedantry. The method was possessed of abvious advantages, and it was one that commended itself to his courtly readers, enlivened as it was by his easy and picturesque style, and by intimate revelations concerning his decaying fortunes or his ill-treatment at the hands of hostile critics. Dryden's views emerge with tolerable clarity, but in a careless, unregulated fashion, so that his exposition is littered with repetitions inconsistencies, digressions and the like. And to his desultory manner of writing and its attendant disabilities he is fully conscious, while elsewhere ha has scruples concerning his hasty and loose writing suggesting, that there was probably ' more spirit than judgement' in the unconsidered thoughts thus submitted. Hence his attempts to defend his choice of methods. His criticism derived much of its power and impressiveness from his directness of expansion. He is never tedious. The clauses are never balanced, as in an artificially ornamental expression. Every word seems to drop by chance, thought it falls into its proper place. Every thing that he writes is vigorous, what is little is gay; what is great is splendid. Dryden was a great scholar, and enriched his prose with knowledge and a wealth of illustrations. There is scarcely any science or faculty that does not supply him with images and happy smilies. Every page shows a mind very widely acquainted both with art and nature and in full possession of great intellectual wealth.

Dryden wrote much, but he had no sterotyped style. 'Dryden, ' says Dr. Johnson, is always another and same, he does not exihibit a second time tha same elegances in the same form. He knows no art except that of thinking with sincerity and vigour, and expressing with clearity and straight forwardness. The most important quality of Dryden as a critic is his liberal outlook on literature. He lived at a time when people relied completely on the classical rules. Dryden himself admired the ancient writers and accepted mainly of their principles. But he was never a servile imitator and change the classical rules when either he did not agree with them or found them unfit for modern condition. R. A. Scott James remarks in this connection; He clears the round for himself by brushing away all the arbitary bans upon freedom of composition and freedom of thought. He refused to be cowed by the French play wrights and critics. He sees no reason why tragi-comedy should be forbidden because it mingles mirth with serious plot, nor will be join in blaming the variety and copiousness of the English plays , with their under plots or by concernments, because they do not conform to the French ideal of singleness of plot. Even to Aristotle he refuses to render slauish homage. 'It is not enough that Aristattle has said so, for Aristatle drew his models of tragedy from Saphocles and Euripides, and, if he had seen ours, might have changed his mind.

David Daiches also appreciates his freedom of Dryden from the classical rules and his independent judgement and says that his, 'changing tastes and interests helped to make his responsive of different kind of literary skill and of artistic conventions, thus giving him that primary qualification of the good practical critic, the ability to read the work under consideration with full and sympathetic understanding it was Dryden who inaugurated the era of descriptive criticism. He was qualified for the funcition by his wide reading and learning. It is in his criticism that literary analysis, the dominant concern for the modern critic, emerges for the first time. It is in Dryden's examen of the silent woman that we get the first claborate criticl analysis of a literary work in English. Both saintsbury and George Watson agree that the, 'examen is something quite new'. In the history of English literary criticism. In his prefeces will be found a host of scattered utterances that throw new light on literature and literary criticism as well. There are, for instance, his remarks on the nature and art of poetry, as well as on the forms that poetry may assume; there is also his more liberal conception of the critical function, together with a host of fresh and striking appreciations of literature in the concrete. The light thus thrown is mostly intermittent and incomplete, but it is always illuminating, and it marks something new in the sphere of critical activities. Dryden is also a pioneer in the field of historical criticism. Critics upto the time had a very rudimentary sense of literary history. Dryden, on the other hand, shows a well developed historical sense. He recognizes that the genius and temperament differ from age to age and hence literature in different periods of history is bound to be different. He traces the decay of literature in the pre-restoration era of historical causes and its revival 'to tha restoration of our happiness'. Dryden recognises the truth that literature is not static, but a dynamic process, it is ever growing and changing and the 'rules' and literary judgements also must, as a consequence change accordingly. Dryden is not greatly concerned with abstract questions relating to the nature of poetry, whereas his remarks on the poetic art are both extensive and practical. From Bollesan's Longinus he had gathered a new conception of how best to imitate great masterpieces, and this conception of 'imitation' he explains in his preface to Troilus and Cressida. The effect of such imitation was therefore that of inspiration and illumination, an imaginative stimulus derived from earlier models; and this pronouncement of Dryden is a special critical method of Dryden- the comparative method of criticism. When he wants to analyse the merits and demerits of any writer, he places him in comparison with some other ancient or modern writer. The method followed by his predecessors was to compare modern literature with ancient Greek and Latin. They were of the opinion that Homar and Virgil were the best models for all times and in all languages. But Dryden did not follow this method. He found a difference more deeply rotted than that of language alone. Indeed he is the father of comparative criticism in England. In the Essay there is constant weighing and balancing of the qualities of the England drama as against those of the French. As Saintsbury points out- he was the greatest man of letters of the time in his country, as well as in all Europe and his strong. Clear commonsense and and faculty of argaing a point well, fitted him to the task of comparative criticism. He is the first in England to analyse English and foreign plays and examine their comparative merit and demerits. It is another matter that his 'cultuzal nationalism' (Watson) makes him biased and prejudiced and vitiates a little his comparative estimates.

References

1. H. James Jensen A Glossary Of John Dryden's Critical Terms -1969
2. Helen & Kinsley Kinsley John Dryden ; The Critical Heritage - 1996
3. John Richetti The Cambridge History Of English Literature - 2012
4. www.wikipedia.com and www.google.com

Language and Technique in Anita Desai's Novels Baumgartner's Bombay and Journey to Ithaca

Dr. Manisha Sharma *

Among the Indian women novelists, who have been able to see the Indian complexities from close quarters, Anita Desai happens to be the leading voice. The usual themes are missing in her novels, but she has fascinating tales to tell about individuals who have to tread a treacherous and lonely ground. Anita Desai depicts the psychic states of her protagonists at some crucial juncture of their lives. Her 'stream of consciousness' technique is perfectly suitable for the expression of her views.

The choice of language is very important to any writer. Anita Desai admits that her choice of English is not deliberate, but natural. Anita Desai believes that English is an immigrant in India. It is a refugee and so it tends tender care. Desai expounds on the advantages of English language :

I am willing to expose myself in relation to language, in so far as to say that I am very glad to be writing in a language as rich as flexible, supple, adaptable, varied and vital as English. It is the language of both reason and instinct, of sense and sensibility. It is capable of poetry and prose. It answers my every need. I do believe it is even capable of taking on an Indian character, an Indian flavour, purely by reflection.1 (Desai.p.8)

The Indian English writer belongs to the stream of bilingual writers and this raises a pertinent question - namely to which literary or cultural tradition does one belong when writing in a language other than the mother-tongue. But Anita Desai does not go into any of these aspects in detail. Her answer to the problem of socio-cultural transference is to write the novel of the inner world. She admits that she has side-stepped the problems writing in English is supposed to have created for her:

". . . again, not deliberately, but unconsciously and intuitively - by not writing the kind of social document that demands the creation of realistic and typical dialogue by writing novels that have been catalogued by critics as psychological and that purely subjective, I have been left free to employ, simply, the language of 'interior'.2 (Desai p.9)

Anita Desai does not deny the importance of social novel. In fact she appreciates G.V. Desai, Ruth Prawer Jhabwala and R.K. Narayan who have written in this genre. But, according to Desai subjective writers like her have an easier time of it.

Baumgartner's Bombay deals with the modern phenomenon of displaced persons. The novel covers a long period of time of almost fifty years beginning with the rise of Nazism in Germany to the late 1960s and 1970s. The locale of the novel are Germany and India. The epigraph of the novel is taken from T.S. Eliot's East Coker :

"In my beginning is my end. In succession Houses rise and fall, crumble are extended are removed, destroyed, restored."3 (Desai Epigraph)

The epigraph is significant since in Baumgartner's life, after leaving Germany, there is neither a family nor familiar relationships, therefore "Houses rise and fall", has no significance for him except in memories. The first chapter of the novel uses flashback technique from the present to past and show Baumgartner's contrasting life in the two stages.

Baumgartner's childhood is recalled through many of German songs and poems which are scattered throughout the novel. It is difficult to make out the meaning of these songs and poems because no English paraphrase is given. Ye one can safely guess that some songs are about his childhood and some are about Baumgartner's experiences in later life. In Chapter four there is an English rendering of Nazi song which is very significant. It is a song celebrating the fatherland along with the description of Rhine. Ironically, Baumgartner is forced to sing this song though his race has been persecuted by the Nazis.

Like a deft, Desai shows many varieties of English spoken in India. When Baumgartner arrives in Bombay he comes across a queer variety of English and fails to comprehend it. Anita Desai shows her skill in transcribing Indian pronunciation of English. While traveling in a train, Baumgartner listens the English spoken by two British soldiers and their English too is foreign to him :

"Yet Baumgartner could not understand a word, was not certain even that it was English. They rolled their words in their mouths, like potatoes. The were as foreign as those children on the platform, black, naked, raucous."4 (Anita Desai p.90)

When in Calcutta he comes across another variety of English spoken by the prostitutes standing on the street. Anita Desai transcribes their variety of English :

"Hoo-hoo, To-many . . . less have drink, Tommy, come

*** Professor, Dept. of English, M.J.B. Govt. P.G. Girls College, Moti Tabela, Indore (M.P.)**

awn".5 (Desai p.92)

These transcriptions give realistic touch to different kinds of characters portrayed by Desai in the novel. And this is a part of her fictional technique.

In Where Shall We Go This Summer? also Desai portrayed the gloomy scenario of city like with reference to Bombay. There is an interval of thirteen years in the two novels during which life in Bombay has declined further. There are plenty of beggars, overcrowded pavements, sewage drains, tins, rags etc. in the novel. Desai's description of life in Bombay and in Calcutta almost has a cinematic impact as her language has the quality of a painting. Baumgartner's Bombay adds a richer and an essentially positive dimension to Anita Desai's creative imagination.

Anita Desai makes known to her readers the unconscious motifs of human psyche, the protagonists quest for identity in almost all her novels. From Journey to Ithaca there are definitive movements in her structural and visionary perspectives. The entire structural scheme is divided into four well-balanced chapters and is patterned skillfully on a new device of Prologue and Epilogue. The inclusion of Prologue is helpful in disclosing the inner human motives for higher values of life.

The three characters Laila, Sophie and Matteo come to India as the seekers after truth. Their search is not a search for identity of existence but a search for truth, ultimate reality, joy, ecstasy or whatever for truth has. As Anita Desai analyses the psychic depth of the characters, her language tends to be contextual. For example, the conversation between Sophie and Matteo becomes a good piece of symbolic language. While reading the story of Katha Upnishad, Matteo comes across two kinds of paths : the path of Joy and path of pleasures. For Sophie the meaning of these two words is more or less the same. She gets perplexed when Matteo distinguishes the linguistic properties of these two words.

Sophie expresses her contempt towards other people in the ashram through non-verbal language. In place of learning the language of the ashramites, Sophie tires to understand the language of birds and animals through their gestures, motions etc. Thus Sophie willingly ignores to learn the language of people at the ashram. Here is an example by which Sophie comprehends the language of the animals through sound :

"The pai dogs that barked in the village and in other villages, plaintively or aggressively, pleasingly or even conversationally as though addressing each other over great distance in the dark, were more comprehensible to her: she listened to their dialogues with greater understanding and sympathy. Once, she was certain she heard a pack of jackals howling, as eerily as wolves and this roused the dogs to frenzy : she felt their fear in her own veins."6 (Desai, p. 63)

The animal images are symbolic of turmoil in Sophie's mind. The fear of her conscious mind creates the fear in her unconscious mind. Sophie becomes obsessed and she begins to see her newborn babe as a snake.

The different images use in the novel make the language of the writer symbolic and suggestive. There are mages like a "the graveled path", "dust-filmed glass," "a velvet tassel", "a cream flecked smile" etc. Sophie uses the images of "a monster spider" for the Mother and also the image of spinning web to catch these silly flies.

The Mother exemplifies an ideal life of high attributes while teaching her disciples. She talks of honey made from spiritual nectar to nourish the souls. The nectar symbolizes the essence of life. In the manner of a linguist, Anita Desai distinguishes between native and non-native variety of English. The regional pronunciation of English is not clear to Sophie. Matteo hears a woman, speaking the typical regional variety of English :

"She was speaking very slowly and clearly, enunciating each word very precisely. Almost as if it were a lesson in elocution, but it took Matteo sometime to make out that she spoke in English, for her voice and accent sounded so Indian in its pronunciation of "ds" and "ts" rolled "rs" and having emphasis in the first syllable."7 [Desai, p.74]

The title itself is symbolic. Anita Desai has taken the spiritual concept of 'Ithaca' from her favourite poet Cavafy's poem. Ithaca becomes a trope for all kinds of human longing. In the novel Ithaca symbolizes spiritual India. Journey to Ithaca is a beautiful combination of the spiritual occult and poetry.

The work of Anita Desai can be categorized as one belonging to the subjective writing. Anita Desai proceeds to delineate character and situation from the personal angle and enters into the world of the mind. The subjective learning is very prominent in her two earlier novels but later she moves to other modes also. Most of the time Desai has resorted to third person narration which closely identifies with the consciousness of one or more characters. The point of view and perspectives may change but the authorial presence remains non-obtrusive. Her use of the language can be called global.

Work Cited

1. Desai, Anita. Baumgartner's Bombay.London: Vintage, 1988), Epigraph.
2. Desai, Anita.Journey To Ithaca London: Vintage, 1988
3. Dhawan,R.K. ed. The Indian Writer's Problems in Indian Women Novelists, Vol. II, p.8.

The Women - Protagonists In Amitav Ghosh's Novel 'The Hungry Tide': A Study

Dr. Manisha Joshi *

The Novel 'The Hungry Tide', rich and enthralling, keeps its readers glued to it throughout its voluminous canvas. Amitav Ghosh's excellence and the depth with which he deals each of his novels is simply remarkable. There are a number of aspects that are note-worthy in this novel leaving immense scope for the lovers of literature.

In it we witness Amitav Ghosh as a great adventurer, a lover and keen observer of nature, an environmentalist, a spiritualist, a cetologist and above all, he has also added a distinctive sociological note to his fiction. One of the most dominant aspects of this novel which needs to be focussed is the analysis of his women characters. Consciously or unconsciously the novelist has presented a somewhat stronger woman. The four dominant female characters, from the diverse strata of society, whether she is an uneducated Kusum or Moyna, or Nirmala or the cetologist Piyali Roy.

The story begins with meeting of the two chief characters - Kanai, an interpreter and a businessman from Delhi and Piyali Roy (Piya), a Non-Resident Indian, basically a cetologist, in a train to Canning. Kanai was on his way to Lusibari to his aunt Nilima's place, to receive a packet left for him, by his late uncle Nirmal(a Leftist and a retired school teacher), that was to be handed over to him only after his uncle's death. Kanai had spent only one summer as a school-boy at Lusibari as a punishment when he had been rusticated from school. On the other hand, Piya had come solely on an academic expedition to collect data on the life of rare Irrawddy dolphins for her research work. Kanai's aunt was involved in social-work and ran a charity for local people.

The story then revolves round the characters where Piyali eager to pursue her research work hires a motorboat with the nationalist forest guard and the owner of the boat. But as the fate would have it, she was almost drowned, when was saved by Fokir, a poor fisherman of Lusibari who literally proves to be her saviour throughout the novel. As it was Fokir, who though an illiterate, leaves this U.S. research scholar awestruck by his vast and in-depth knowledge, not only of the river but also, seemed to understand the knowledge of the river dolphins.

The writer weaves the story very realistically, as Piya, when proceeds on a longer expedition realizes the indispensability of Fokir, but at the same time needed, Kanai's help as a translator. A very light triangular love story is woven. Although Kanai, Fokir, Horen and Nirmal Babu are major male characters of the novel but, except Fokir, the rest of them appear to be very weak whencompared to the female characters like Piya, Nilima, Kusum, and Moyna who leave deep impression on the psyche of their readers.

Piya as spoken earlier was on an educational visit to India, the only child of her Bengali parents. She could hardly recall anything of her childhood, except for her parents' continuous mutual grievances, her mother being diagnosed from cervical cancer, and her ultimate seclusion and death.

Despite these odds Piya persuaded her career as a cetologist(a study of marine mammals). Amitav Ghosh has portrayed her as a very strong, determined and mature girl. Her passion towards her profession, was to such an extent that she considered her research not less than a 'kind of cetacean pilgrimage'.[1] As the story revolves round Piya's expedition, her devotion, her methodological approach, her genuine adoration for aqua-animals is wonderfully depicted by novelist through her child-like excitement on seeing the dolphins and recording their movements. However, the natural human aspect like romance could also not be overlooked by Amitav Ghosh. Piya's one-time romance, which she thought could have led somewhere at Kratie, had ended in a disaster. Still, she gathered herself courageously, and once again completely engrossed herself in her career. Since, strange are the ways of destiny, Piya, despite Kanai's subdued romantic advances towards her, found herself attracted towards the uneducated, Fokir. Inspite of this emotional bondage with Fokir, she was so passionate about her work that, once she proceeded on her expedition, no one could digress her from her basic motive. The triangular love story ultimately ended in tragedy, with Piya's polite refusal to Kanai,s proposal and Fokir's death. Piya, guilty of Fokir's death held herself morally responsible for it, and tries to do whatsoever she could for Moyna (Fokir's Widow) and Tutul(Fokir's son). She took it as a mission through internet and her friends in raising money for Moyna and Tutul to buy a house for them and 'may be even provide college education for Tutul'.[2] Job for Moyna (apart from her Nursing) along with

* Professor (English) M.L.B. Govt. Girls' P.G. College, Indore (M.P.)

her. As for her own life she decided to devote it to further her project at Badabon, dedicating it to Fokir (by giving his name to her project), and finally when Nilima quizzed her that how could she consider 'Lusibari' as her home, Piya said 'for me home is where Orcaella are, so there's no reason why this could not be,[3] certainly a very balanced , sensible and rationale character has been painted by Amitav Ghosh.

Another very well framed and a strong character is the seventy-five years old Nilima, Kanai's aunt. Nilima had been Nirmal's (originally from Dhaka, had come to Cacutta as a student and then became professor in college) student in college. She hailed from a renowned family. Through Nilima Amitav Ghosh has presented a real feministic character. For she, in those tough days revolted against her family and married Nirmal. Though Nilima was very young then, her love for Nirmal was no infatuation, for she almost proved to be the pillar of strength for her husband throughout the novel. Immediately after their marriage, when Nirmal, due to his minor communist insurgency was detained by the police for a day or two and suffered from severe depression. Nilima, forgetting the humiliation and rejection that she suffered from her family, reached them for help. Eventually they, helped them to settle down at Lusibari. Nilima, is a portrayal of an ideal Indian woman, who could stand by her husband in all the phases of life and if need be stand as a shield to protect him from danger. Childless herself, she was very affectionate, a dedicated and remarkable human being. Even Kanai confessed about the trust she ran in Lusibari ,"The trust was not for profit. He remembered, from her first visit, the dire poverty of the tide country and he thought it both inexplicable and remarkable that she had chosen to dedicate her life for the betterment of the people who lived there. "[4] Better known as 'Mashima', Nilima commanded 'prompt' and 'unquestioning obedience', but at the same time her maternal nature showered love and affection on one and all. A very powerful character who due to her strong will power and devotion had succeeded in getting a hospital in Lusibari, educating women, fighting for their causes, in a nut-shell completely involved in their lives. Nirmal could never understand the depth of her love for him or the sacrifices that she made.

All her efforts in protecting her husband from going to Morichjhapi proved to be futile. Her lonliness, after Nirmal's death becomes painful for her as she says, " when you get to my age Kanai, she said you'll see it is not easy to deal with the reminders of the loved ones who've moved on and left you behind. That's why I wanted you to come".[5] She could handle the situations with great dexterity. Though she was well aware of Nirmal's bent towards Kusum, she handled it gracefully. She had immense love and respect for Nirmal, as she treated her husband's last wish and never thought of opening the packet left by him for Kanai. Although, she was hopeful that it contained Nirmal's articles on Sunderbans which, she would be able to use for one of her brochures. What pained her was, that she could never fathom why Nirmal could not trust her with the packet, which he had left for Kanai. At one occasion, hearing of Piya's casual reference, that she was the sole mediator between her parents because of their continuous tiffs, Nilima's eyes were filled with tears as she said "..... I was thinking of you as a little girl, carrying your parents' word from one to the other. But your parents were lucky as they had you running between them. Imagine if they had no one".6 Apart from this softer feelings she was very clear and practical in her approach, she warned Piya of Kanai's advances towards her. Nilima possessed such an indominitable personality that even at such an advanced age, people like Piya, depended on her, for their future.

Amitav's excellence in character portrayal becomes all the more evident with the portrayal of an illiterate yet powerful character like Kusum who succeeds in bringing a smile on the face of its readers, despite her wretched condition. The vivacious spirit of this girl ever since her childhood, whether when she lost her father who was killed by a tiger, or her mother who was taken away to the city on the pretext of a job, but was sold off, is highly remarkable. Not once throughout the novel does she indulge in self-sympathy. It certainly is her strong will-power and the self-dependent attitude that, almost all the major characters of the novel find themselves attracted towards her at some stage or the other. Whether it is Kanai, during his first visit to Lusibari as a boy, or Rajen at Dhanbad who eventually married her (and had a son, Fokir), or Horen, who had initially acted as her protector and saviour but years later when he meets her, could not help but fall in love with her. As for Kanai, he spoke of Kusum- " What I remember is her 'Tej' even at that age she was very spirited",[7] to which Moyna asserted that people said that Kusum was like a storm. Though an illiterate, Kusum was a very sensible and devoted mother, who almost starved herself to feed Fokir. She was an epitome of confidence and courage.

She was completely devoted towards the people of Morichjhapi and their cause to protect forest or tigers but, at the same time she wondered at the irony where the life of human being was considered cheaper than that of animals. She almost died a death of a martyr handing over her son Fokir, in the secure hands of Horen.

Finally, Moyna Mandol, a trainee to be to be a full-fledged nurse in the hospital at Lusibari and Fokir's wife is another

finely sketched character. As described by Nilima, "Moyna was both ambitious and bright. Through her own efforts, with no encouragement from her family, she had managed to give herself education."[8] Ironically this well educated and ambitious girl was married to a completely illiterate fisherman, Fokir. Despite her husband's illiteracy, Moyna was determined to pursue her career and had constant argument with Fokir regarding Tutul's(their only son) future. She was a completely devoted wife and loved Fokir.

She was well aware of her husband's charm and felt insecure when he accompanied Piya on her expeditions. She almost rebuked Kanai, when he tried to make advances towards her exhibiting her strong character. Moyna was very ambitious and took evident pride in the institution where she worked. Her hopes, aspirations and dreams have been beautifully expressed through her moving dialogues, as looking the equipments in operation theatre she dreamily says - " I just like to look at all the new equipment, 'she said with a laugh' who knows? May be if I finish this course one day. I will be working in there myself."[9] Such powerful words show the passion she had for her career.

Her helplessness and frustration, in handling her husband in many ways remind us of Nilima's helplessness in dealing with Nirmal. History almost seem to repeat itself, for just as Nirmal had lost his life, when he had developed a sort of infatuation for Kusum, similarly Moyna too loses Fokir when he was overhearing all her persuasions and had accompanied Piya, eventually losing his life in storm.

After analysing almost all the characters of the novel, the women characters outshine out and out. Facing the 'Jowar' and 'Bhata' of life, without a flinch of an eyebrow, they triumphantly comes out of all odds exhibiting an amazing mental and spiritual strength, leaving an indelible mark on the psyche of its readers.

References

1. Amitav Ghosh, The Hungry Tide, (London, Harper Collins Publishers, 2008), p. 227
2. Ibid. , p. 396
3. Ibid. , p. 400
4. Ibid. , p. 20
5. Ibid. , p. 23
6. Ibid. , p. 250
7. Ibid. , p. 131
8. Ibid. , p. 129
9. Ibid. , p. 134-135

****

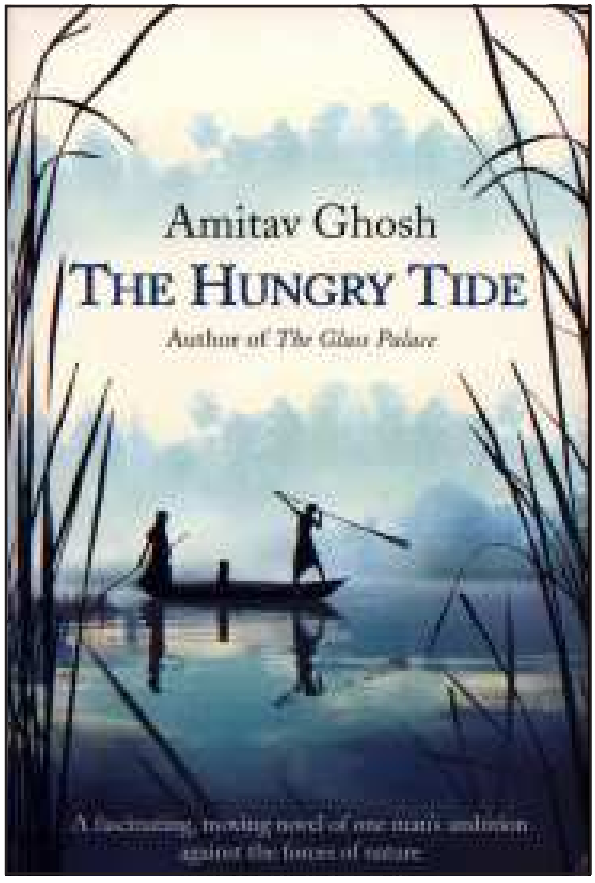

Need Of Updation Of Banking & Other Related Laws

Dr. Aruna Sethi *

Finance is the lifeblood of trade, commerce and industry and now- a-days, Bank money acts as the backbone of modern business and therefore development of any country mainly depends upon the Banking system of that Country. A Banking institution is indispensable in a modern society and Banking Sector occupies an important place in a Nation's Economy as, it forms the core of the money market in any country. The Banking Sector, which constitutes the core of the financial sector, plays a critical role in transmitting monetary policy impulses to the entire economies system. A healthy Banking system, besides undertaking the role of financial intermediation also serves as an engine of growth. The Banking Sector in India, have played an important role in the development of Indian Economy and also these Banks have been taking care of all segments of our socio-economic set up. The modern Banking and its networking is the product of modern western civilization, which rapidly developed with the advent of new economic policy of liberalization, Privatization & Globalization. Banking in India has made outstanding progress & has acquired new dimensions in the present Global Scenario.

Though, the Banking in India has made outstanding progress and also played an important role in the development of India economy, yet it is felt that, the Banking Sector is suffering with certain shortcomings, irregularities largely due to Malpractices, prevailing in the Banking Sector. Here, it is pertinent to note that, Indian Banks, which were operating in a highly comfortable and protected environment till the beginning of 1990s, have been pushed into the choppy waters of intense competition. With the greater liberalization of the Banking sector, it is often questioned, how are our Banks going to

Survive in present Global Scenario and will Banks be able to face challenges posed from new economic policies. Banking Sector in India is facing following challenges/ problems:

i. Banks are facing problem of Bad Debt. Banks are experiencing considerable difficulties in the recovery of its loans. Recovery from the influential defaulter is very difficult.
ii. Banks are burdened by a large percentage of Non Performing Assets. Prudential Norms fixed for reducing NPA are not followed in the Banks.
iii. System of the Securitization of the Assets is not developed fully in India.
iv. Offences related with the Banking Sector are increasing. Cyber crime affects functioning of the Banking Sector considerably.
v. Banks are also suffering due to problem of Siphoning off / Diversion of Funds.
vi. Customer Services have been suffered due to negligence, inefficiency and lack of competitive spirit of employees and officers of public sector Banks.
vii. Frauds and Scams are often noticed in the Indian Banks. The mismanagement of the Banks and various malpractices resulted into various Frauds/Scams.
viii. Banks are indulged in various non-Banking functions and it affects regular Banking functions considerably.
ix. The Customers/Borrowers are defrauded Banks for obtaining Loans by mortgaging single property to two different Banks.
x. Banks are facing challenges from the foreign and private Banks.
xi. Viability of Some of the Banks is questioned.
xii. Operational expenses of the Banks are high.
xiii Banks are lacing Man Power.
xiv. Banks are deviating from the very object/goals of social welfare.

Law is a powerful instrument of social change and social control and the true nature and purpose of the law is to put an effective control on the wrongs committed in the various aspects of the society. Society is therefore looking towards law for controlling Banking and financial Institutions. Necessity of regulatory framework for the financial system was in the past, primarily to safeguard the interest of a large number of savers/depositors and also to ensure proper and efficient functioning of the institutions that are part and parcel of the financial system. Earlier, in the past the legislatures in India have enacted various Banking and Commercial Laws, on considering the need for the same. The Banking and other related laws regulate the Banks and thereby regulate social interests, arbitrate conflicting claims and demand security of property of the people, who have shown trust in the Bank by depositing their assets. For maintaining the trust of the people proper functioning of the Bank is essential and that could be achieved through instrumentality of law and by their

Asst. Prof. of law Govt. Madhav Arts,Com.& Law College. Ujjain(M.P)

timely up gradation and up gradation.

On analysis of the causes and consequences of the aforesaid problems and challenges and that of the role of the Banking and other related laws, it is felt that, the present laws and regulations are either insufficient to put an effective control over Banking sector or requires to be updated and upgraded. Further, in an era of liberalization, globalization and privatization, Banks have a vital role to play and therefore there is a need for further strengthening of the regulatory and supervisory regime to ensure stability of the financial system. Here it is pertinent to mention that, in India, existing Banking and other related Laws were framed according to the need of the then Society/Economy but now the whole concept has got sea changes. Now the place of Socialism based economy has been taken by the capitalistic based economy and also WTO norms needs to be followed and therefore there is a need to review, update and upgrade Banking and other related laws so as to face present challenges of new economic policies.

Unfortunately, it is quite often felt that, the Banking Laws have failed to some extent in order to control the existence of gross and serious irregularities and malpractices and it is felt that, our legal framework for Banks and financial institutions do not adequately provide to control influential defaulter and their supporters in government and Banking sector. The current decision makers are rarely neutral and professionals are rarely votaries of ethical conduct. Therefore, dependence on the neutral body of decision makers, supervisors, monitors and controllers has become very critical. It is also noticed that, surrounding social factors are primarily responsible for failure of Banking laws in removing malpractices in Banking Sector.

Banks exist to provide service to customers and therefore improvement in customer service is the need of the day. Banks are alleged for poor customer services however, with the introduction of technology, there has been a significant change in the way Banking operates and the induction of technology has enabled several transactions to be processed in a shorter period of time. Transmission of funds to customers takes less time now. ATMs provide easy access to cash. Nevertheless, it is not very clear whether the customers as depositors and users of other Banking services are fully satisfied with the services provided when they come to a Bank. This is an area, which must receive continuous attention. The interface with the customers needs to improve.

In India, the Reserve Bank of India (RBI) is a Principal Regulatory Authority, which is entrusted with the responsibilities of development and regulation of the money market. The financial system thus functions within the regulatory framework. Earlier, efforts have been made to strengthen Banking and Financial Sector by undertaking various financial Sector reforms. Improvements in the regulatory and supervisory framework encompassed a greater degree of compliance with"Basel Norms". Some recent initiatives in this regard include consolidated accounting for Banks along with a system of Risk-Based Supervision (RBS) for intensified monitoring of vulnerabilities.

Further, the facing forthcoming challenges and for prevention of prevailing Malpractices, it is therefore felt that, necessary amendments in some of the provisions of the existing Banking law should be made. It is realized that meaningful reform and rights-based approach in the present Banking Laws and legal system is required to protect Banks. Earlier, much has been written focusing on judicial reform, legal training and code writing, legal transplantation, anti-corruption efforts and much more for removing Banking Malpractices. The legal environment for conducting Banking business has also been strengthened. Debt Recovery Tribunals were part of the early reforms process for adjudication of delinquent loans. The Securitization Act was enacted in 2003 to enhance protection of creditor rights; the Prevention of Money Laundering Act was enacted in 2003 in order to combat the abuse of financial system for crime related activities; The Negotiable Instruments Amendments and Miscellaneous Provisions. Act 2002 expands the erstwhile definition of 'cheque' by introducing the concept of 'electronic money' and 'cheque truncation'.

Despite Financial and legal Reforms, the expected results could not be achieved and hence it appears that, various Financial and Legal Reforms by way of updating existing Banking Laws and Regulations has been felt.

Undoubtedly, there is a cross cultural conflict where living law must find answer to the new challenges and the legislative & Judiciary are required to mould the present system to meet the upcoming challenges. The contagion of lawlessness would undermine social order and lay it in ruins. Protection of Banks and stamping out Banking Malpractices must be the object of these laws, which must be achieved by necessary amendments in the existing laws if they fail to do so. Therefore, law as a corner stone of the edifice of "Order" and should meet the challenges confronting the Banking Sector. The social impact of the Banking malpractices and other related offences involving moral turpitude or moral delinquency which have great impact on the functioning of the Banks and public interest, cannot be lost sight of and per se require exemplary treatment. Hence updation and up gradation of

the existing Banking and other related Laws is must for keeping pace with the time.

Need for the updation and up gradation of the Banking and other related Laws has also been felt by the Hon'ble Supreme Court and it is rightly held that, the Banking and other commercial laws in India were enacted in late Nineteenth Century and Twentieth Century and although they have stood the test of time and formed the foundation of commercial law in India, no major change in such laws have been made to meet the demands of globalization and market-oriented economy. There is a need to modify our commercial laws to reduce the legal barriers faced by individuals operating in the market on their own terms to produce wealth. In this connection, views of the Hon'ble Supreme Court expressed in the case of **Mardia Chemicals Ltd. Union of India and Other (AIR 2004 Supreme Court 2371) needs to be quoted. The Hon'ble Supreme Court while examining the** provisions of Transfer of Property Act as, contained in section 58 & 69 had recognized the situation which has undergone a change.

As against the need for the updation and up gradation of the existing Banking and other related Laws, it is stated that, though the Law is an instrument of social change and control but for every minor new situation, cry for the change in the law may not be practicable. In a country which is facing the problem of "poverty", "unemployment", "starvation", etc, it is not a wise idea to agitate again and again for every minute

Discomfort by invoking the "legislative machinery" of the country. The time, money and resources spent on these "unproductive initiatives" should be used for productive purposes only. One may agree with above but in view of the prevailing Malpractices. Irregularities and changing scenario of the world economy and challenges posed by the new economic policies, the Bank Sector in India should undertake reformative measures to keep pace with time. In view of above, it appears that, there is an urgent need for the updation and up gradation of the existing Banking and other related Laws.

Reference:-

1. Tanna's Banking Law and Practice in India- M.L.Tanna
2. Banking and Public Financial Institution- S.K.Katari
3. Indian Law Reporter
4. Financial Markets Institutions' and Service- N.K.Gupta, & Monika Chopra, 2nd Edition
5. Present Day Banking in India- Prof. Ramchandra Rao.

****

Important & Necessity of Registration of Marriage

Dr. Aruna Sethi *

The Marriage constitutes the core of the Life & society is the life blood of family. As we know Marriage is a touchy issue. most marriage are conducted under personal laws or according to religious rites than the legal requirements. Such registration of marriage gives legal approval to marriage also registration of marriage existing the social evils like child marriage, polygamy, Bigamy, Dowry system, domestic violence, illegal trafficking of the girls and fraud marriages etc, and make people aware of legal requirements of registration of marriage.

Now a day the registration of marriage has become very important in almost all the countries of the world. If one of the partners dies, such registration authorizes the second remaining partner to claim for the property and the investment like insurance, Stock and shares, fixed deposits and provident fund amount of the dead partner.

Where two persons are socially recognized as a married couple. A strong presumption is raised in favor of their lawful marriage (In case of Ashok Kumar V/S Usha Kumari AIR 1984 Delhi 347) In the light of this presented case the supreme court has ordered that registration of marriages would be "is the interest of Society" if the record of marriage is kept, to a large extent, the dispute concerning solemnization of marriage between two persons is avoided.

Certain advantages for the compulsory registration of marriages are as:-

(1) To Empower the Women.
(2) The certificate is a Government document, which provides valuable evidence of marriage.
(3) It will prevent child marriages and ensuring minimum age of marriage.
(4) Registration would prevent child marriages and thereby prevent sale of girls and trafficking.
(5) It will help to check illegal bigamy of polygamy.
(6) It will help to prevent the exchange of the dowry.
(7) It will help to prevent of marriages without consent of the parties.
(8) It will help to Secure NRI bride future
(9) It will help to reduce the crime against women.
(10) It will help deterring parents/guardians from selling daughters/young girls to any person including a foreigner under the garb of marriage.
(11) It will be enabled married women to claim their rights to live in the matrimonial houses, maintenance etc.
(12) It will help in enabling widow to claim their inheritance rights and other benefits and privileges which they are entitled to after the death of their husbands.
(13) It will help Deterring men from deserting women after marriage.
(14) It will help to prevent the innocence by the fraud of marriages under the garb of marriages and to stop the fake and speedy marriage.
(15) It will help to spread awareness among men and women about there marriage rights.
(16) If a person dies without nomination for bank deposit or life insurance policy, it will be useful to get such money in the name of husband/wife
(17) It is useful whi8le accompanying wife/husband to foreign country.
(18) Registrar will verify whether the marriage had in fact taken place in accordance with the personal law applicable to the spouses. He will specifically mention, in a special column, the presence of the spouses before issuance of marriage certificate.

Above describe ensure clear glance of merits of compulsory marriage registration law. So it is necessary to make marriage registration an important part of marriage system, and it is biggest need of time.

References:-

(1) Special marriage Act, 1954 & Registration Rules, 2008- Premkumar Agarwal
(2) Bharat Ka Savidhan - Prof. Narandra Kumar
(3) Women and Legal Protection - Parasdeewan
(4) Status of Registration of Indian Marriage (Thesis) Namita Vyas

****

*** Asst. Prof. of law Govt. Madhav Arts,Com. & Law College. Ujjain(M.P)**

Urban Growth & Urbanization In Madhya Pradesh (India)

Dr. Dharam Das Vishwakarma *

Introduction

Urbanization is a process characterized by more and more people living in the urban areas and it is one of the most important transformations, the world has witnessed in recent decades. India is an integral part of the process. In 2010 India accounted for 11 per cent of the world's population; United Nations projects it to be 15 per cent by 2030 (Census of India, 2011. Increase in population and economic activities in the urban areas leads to further development of towns and agglomerates to contain this rising population. Further, these urban centers are points of concentration of non-agricultural workers and their development has associated with the growth of tertiary and secondary economic activities. It has become more pronounced, due to inadequate infrastructure and transportation facilities, high values of land under services, partial success of the planning efforts and so on. Therefore, it is necessary to work out a stringent policy to optimize the size of the urban population. It is more so for a state like Madhya Pradesh, where the sustainable living environment is increasing being pressurized by the rapid population growth, with the little appreciation efforts to support to indigenous efforts to tackle the problem of urban development effectively. The present paper aims to analyze the present status of development in Madhya Pradesh in the context of planning for formulation a state urban policy for sustainable development.

Data & Methodology

For the investigating the fact of the present urban scenario of the state, the secondary data of the census of India 1901 to 2011 have been used and these data have been converted rates and ratio. Accordingly, aspects of urban growth, distribution and change have been considered at the district level.

Discussion

Temporal Change of Urban Growth and Urbanization

The increase in total population during decade is higher than the total population of Greece (1.3 crore). The increase in rural population during decade(81.6 lakhs) is slightly less than Austria(83.72 Lakhs) but higher than the total population of Switzerland(77.82 lakhs); Israel (76.02 Lakhs).The increase in urban population during decade (41.0 Lakhs) is slightly less than New Zealand (43.83 Lakhs); Lebanan (42.55 Lakhs) but higher than the total population of Bosnia (37.60 Lakhs); Congo(Rep.)(37.59 Lakhs) .

The status of urban agglomerations and out-growths in the state, for 2001 and 2011 is outlined .It is seen that both the urban agglomerations and out-growths have decreased. For the first time since Independence, the absolute increase in India's population is more in urban areas that in rural areas. Rural - Urban distribution is 68.84% & 31.16%. Level of urbanization increased from 27.81% in 2001 Census to 31.16% in 2011 Census. The proportion of rural population declined from 72.19% to 68.84%, while in Madhya Pradesh, the absolute increase in population is just double in rural areas compared to urban areas. Rural - Urban distribution is 72.37% & 27.63%. Level of urbanization increased from 26.46% in 2001 Census to 27.63% in 2011 Census .The proportion of rural population declined from 73.54% to72.37% . Urban areas witnessed a growth from 1,329,445 in 1901 to 20,059,666 in 2011.

The population growth rate in the urban areas is much higher than that observed in the rural areas.. For Chambal division ,the rural growth rate is 19.1 percent while the urban growth rate is 31.1 per cent .Urban population growth rate of 25.6 percent has shown the maximum increase as compared to the respective growth rate of total and rural population for Census 2011. Indore division has shown the highest growth of 33.9 percent followed by Chambal division with 31.1 percent and Bhopal division charting a growth of 30.6 percent.

The divisions which have recorded lower urban growth rate are Shahdol 11.7 percent growth rate, Narmadapuram 17.8 percent and Jabalpur 19.7 per cent . that of Madhya Pradesh (Chandramouli, 2011)

Table1: Decadal Urban Population Growth Rate (Persons) in PercentageMadhya Pradesh & India (See Table1:)

A higher urban growth rate is indicative of an increasing trend in urbanization and an upward swing in migration. As per 2011 figures, the state has a total population of 72,597,565 persons of which the urban population comprises of 20,059,666 persons accounting for an urban population more than one -fourth (27.6 percent) of the total population which

*** Prof. Of Geography, Govt. Autonomous P.G. College Chhindwara (M.P.)**

is an increase from the urban population of 26.5 percent reported in 2001. This is an increase only 1.1 points per cent. The decadal growth rate of the country is 17.6 percent where the rural growth rate is 12.2 percent while in the urban areas, it is 31.8 percent. For Madhya Pradesh, the total growth rate is 20.3 per cent while the rural growth rate is pegged at 18.4 per cent and

the urban growth is reported as 25.6 per cent Table.

Table 2: Growth Of Urban Center In Madhya Pradesh & India (1901-2011) (See Table 2)

Maximum percentage of urban population is observed in Bhopal (80.8%), Indore (74.1%) and Gwalior (62.7%); while Dindori (4.6%), Alirajpur (7.8%) and Sidhi (8.3%) have reported the lowest percentages. Dindory and Alirajpur are the newly created districts which also have a greater area under high altitude; urban population is the lowest in the state. The numbers of towns in the state have increased from 394 in 2001 to 476 in 2011. There is one town for every 647.57 sq km of geographical area in the state. A look at the decennial status of towns, from 1901-2011, reveals that the number of towns in Madhya Pradesh has grown more rapidly in comparison to the national average figures. Migration towards urban areas has increased in interstate analysis and rural to urban migration shows a sizable increase among male and female migrants whereas urban to urban migration has shown a declining trend (Singh, 2009).

Distribution of Towns &Urban Population

Geographer's primary interest in the spatial dimension of a phenomenon is natural as their major concern is the pattern of distribution (Singh, 2008;89)For an analysis on state level data is considered with greater accuracy. In this section an attempt is made to highlight patterns of distribution and find out the change during last two census years, i.e., 2001 and 2011.

Distribution of towns and, therefore, of urban population has been very sporadic. The upward trend in urbanization is evident from the fact that now there are 33 towns where more than 100,000 populations resides and this includes four major cities of Indore, Bhopal, Jabalpur and Gwalior which houses a million plus population. These towns are classified into six standard classes according to population size. On the other hand, they are 60 tahsils of the state with zero urban population. Major proportion is occupied by three to fifth size class towns which have 5000 to 20000 populations (Table3).

Table 3: Size Class Wise Distribution of Cities / Towns and Urban Population in Madhya Pradesh, 2001&2011 (See Table 3)

It is evident from the table that percentage of the total population number of cities and towns and percentage of the total population has an inverse relationship within the different population range. Cities more than 1 lakh population occupies more than half (53.0per cent) of the population. It is interesting to see the position of the towns in terms of their respective share in the state's urban population. The urban situation seems to be on improving side after a decade as revealed by data. In 2001, along with the total population growth, urban population too grew. In absolute terms, 628308 persons were added to the 1991 figure and thus it denotes over 4.1 per cent increase in the urban population between 1991-2001 and 0.40 crore(25per cent) from 1.60 crore in 2001 to 2 crore in 2011.It is not that there tremendous natural growth of population growth in these cities . The contiguous poring in of people from the country side, both from the immediate surroundings as well as for off places, adds into already large size of population in the state as also early study has been conducted in third world by Wahba(1996). There was about 21.0 per thousand natural growth rate for total population of state in 2000.

Participation in Urbanization

District's participation in the urbanization is worth mentioning. This type of analysis determines the comparative behavior of every and each district's position in the on going development their policies and future prospects. There is top five districts and bottom five districts in respect of per cent of share urban population in the state like Madhya Pradesh (Table3). Indore is on top to have been participated about 12.1 per cent share in state's urbanization followed by Bhopal (9.5) , Jabalpur (7.5), Gwalior(6.3),and Ujjain (3.9 Per cent share).On the contrary ,Dindori as a newly crated and tribal district is on bottom followed by Alirajpur, Jhabua, Sidhi, and Sheopur district(Table 4).

Table 4: Top Five Districts& Bottom Five Districts in State Urban Population, 2011

Source : Compiled and Calculated by the Author from the Census of India sources

In fact, these districts have very small population of state's urban population , compared to Indore and Bhopal districts which lie on the Malwa plateau for as the regional patterning of urbanization is concerned , this plateau has pioneer place on the whole

Top Five Districts		Bottom Five Districts	
Districts	Per cent Share	Districts	Per cent Share
Indore	12.1	Didori	0.2
Bhopal	9.5	Alirajpur	0.3
Jabalpur	7.2	Jhbua	0.5
Gwalior	6.3	Sidhi	0.5
Ujjain	3.9	Sheopur	0.5

state's urbanization level.

Conclusion

Accepting urbanization an index of development, it can be said that these districts have lower development and fall under backward districts in the states. This district wise number is related to the size of districts, a number of lower administrative units, industrial and mineral exploitation. Though urbanization acts as catalyst in economic development it can prove to be a deterrent as well since such a vast population inflow tends to create added pressure on the existing urban public services. This is a major concern which is also being taken up and addressed by policy makers and planners. It is written, discussing on development of small towns in India by Mukherji (1996) that the economic functions of the small towns are still very weak and in most cases they are not growing, except in the tertiary sector, Further, due to their small size, they often fail to operate as economically viable centers to capable of propagating development waves to the surrounding villages. It would be proper to quote Hashim that higher degree of urbanization is seen associated with lower levels of poverty with the exception of states like Karnataka and West Bengal. Poverty levels in small size towns are higher than medium and large towns. Quality of employment, productivity and returns on education are likely to be better in large cities than small towns (Hashim, 2009). Therefore, it is an urgency that special attention should be given to combat these urban problems and the other hand employment and basic amenities need to have increased in rural settlements.

References

- Census of India, (2011), Growth Of Urban Center In Madhya Pradesh & India (1901-2011) , Office of the Registrar General, India data. Gov. in/sites/default/files/office_of_registrar_general_india.pdf.
- Census of India ,(2011) The Census Results (Provisional), India's Urban Demographic Transition,www.indiaurbanportal.inwww.niua.org.
- Chandramouli,C (2011) Rural Urban Distribution of Population. census of India 2011, (Provisional Population Totals)
- Hashim, S. R., (2009) Economic Development And Urban Poverty. India: Urban Poverty Report.india_under_poverty_report_2009_pdf.
- Mukherji, Sekhar ,(1996), Development of Small Towns in India : A alternative viewpoints. Annals of the National association of geographers, India Vol. XVI No.2 (December) pp9-24.
- Sing, D.P. (2009) Poverty And Migration: Does Moving Help? India: Urban Poverty Report. india_under_poverty_report_2009_pdf.
- Singh,Ravi S.(2008) Urbanization in Arunachal Pradesh Tren and Geograaphicl Patterns. Annals of the National association of geographers, India Vol. XXXVIII No.1(June) pp83-96.
- Wahba , Jackie,(19960, Urbanization and Migration in the third World . Economic Review,14(2), November.
- Kulkarni, Nisha Kumari ,(2011) Real Story Behind Urban Growth. Treking Urban Poverty trends in India, bangle Desh and Pakistan. http://gmpg.org/xfn/11

****

Table1: Decadal Urban Population Growth Rate (Persons) in PercentageMadhya Pradesh & India

Years	Urban (M.P.)	Total (M.P.)	India (Urban)
1901	---	------	---
1911	-11.8	12.4	00.35
1921	8.9	-2.4	08.27
1931	22.6	10.2	19.12
1941	31.5	12.1	31.97
1951	34.5	8.4	41.42
1961	39.6	24.7	26.41
1971	44.3	29.3	38.23
1981	59.9	27.2	46.14
1991	43.9	27.2	36.44
2001	30.1	24.3	31.51
2011	25.6	20.3	31.80

Source: Census of India of Different Years.

Table 2: Growth Of Urban Center In Madhya Pradesh & India (1901-2011)

Census year	Numbers of Town		As Percentage of India in state	Census year	Numbers of Town		As Percentage Of India in state
	India	Madhya Pradesh			India	Madhya Pradesh	
1901	1827	105	5.76	1961	2365	181	7.65
1911	1815	106	5.84	1971	2590	204	7.88
1921	1949	106	5.49	1981	4029	271	6.72
1931	2072	130	6.27	1991	4689	370	7.89
1941	2250	150	6.67	2001	5161	394	7.63
1951	2843	175	6.20	2011	7935	476	6. O0

Source: Compiled and calculated by the author from the Census of India sources.

Table 3: Size Class Wise Distribution of Cities / Towns and Urban Population in Madhya Pradesh, 2001&2011

Size Class	Population Range	Number of cities & towns			%age to total Population no. of cities and towns			Population			% age to total Population		
		1991	2001	2011	1991	2001	2011	1991	2001	2011	1991	2001	2011
I	1 lakh & above	24	25	33	5.16	6.3	6.93	73,66,232	84,66,818	11918474	48.02	53.0	59.42
II	50,000 - 99,999	26	26	NA	5.59	6.6	NA	18,81,678	18,93,954	NA	12.27	11.9	NA
III	20,000 - 49, 999	80	94	NA	17.2	23.9	NA	23,13,692	27,48,187	NA	15.08	17.2	NA
IV	10,000 - 19,999	191	154	NA	41.08	39.1	NA	26,89,514	21,32,441	NA	17.54	13.4	NA
V	5,000 - 9,999	136	85	NA	29.25	21.6	NA	10,55,380	6,86,170	NA	6.88	4.3	NA
VI	Less than 5000	8	10	NA	01.72	2.5	NA	32,341	39,575	NA	0.21	0.2	NA
	TOTAL	465	394	476	100.0	100.0	100.0	1,53,38,837	1,59,67,145	20,059,666	100.0	100.0	100.0

Source: Census of India, 2011.

Creating Path Out of the Maze: Role of Value Based Teaching In Higher Education

Iris Ramnani * Deepa Kumawat **

Abstract: The present scenario of education leads us to analyze and evaluate the social, psychological, emotional as well as the moral standards of the students. In this age of globalization and technical advancements, the youth are mostly directed towards their peer groups and the demands pertaining to the society. Highly fascinated by media, communication they are guided by their materialistic motives. A child doesn't have the sense of values from his birth. It is the influence of the environment which determines his path towards the future. Everyone has to prepare individually in the present for their future but certain props are surely needed. The educators play a vital role for the betterment of the society - a society which is constituted by these youth. Education is the combination of literacy and moral values but a good quality of education can't be achieved in isolation. The efforts and determination of a good teacher can aid in the imparting of moral values to the students bring about their internal transformation. The moral and value based education system is the basic need of the institutions today. Due to the lack of moral values, we are confronting many problems such as terrorism, poverty, corruption etc. Value based education is an effective weapon to win over these casualities. Now it becomes our responsibility to impart the strength and integrity to our students, mould up their character, develop their psychological and moral status so that they may become better citizens of the world.

Keywords: *globalization, peer groups, transformation, props, casualities etc.*

"The three hardest tasks in the world are neither physical feats nor intellectual achievements, but moral acts: to return love for hate, to include the excluded, and to say, "I was wrong."

Sydney J. Harris, Pieces of Eight Pa

Morals are the "motivation based on ideas of right and wrong." The inner growth of an individual is not linear and cannot be explained or guided by rigid formulas. Values provide a framework, a guide, quick and efficient movement through life. They give a reason to live and if needed, a reason to die. The wonderful part about being human is that we can learn from our mistakes and catapult ourselves out of the orbit created by the sum-total of our past motivations. A person who is value-driven neither wavers in his judgements nor experiences dilemma in his life. But where is our present generation heading to? Do they have a particular role in their lives or they are only guided by the false motives ascertained by their social spheres? Who can be held responsible for the grooming up of the youth and for their better future - parents, society or the education system? Though all the mentioned aspects have a significant role but their influence varies at different phases in an individual's life. As a child steps out of his parental sphere he becomes fascinated by the external environment and tries to assimilate with the different individuals belonging to different communities with varying set of code and values. The young lack neither aspiration to the moral life nor capacity for it ; they lack only experience, and the knowledge and understanding that experience yields. When we confuse virtue with innocence, we deny the young the fruits of our own experience, except by way of producing in the young an unthinking conditioning. (Dennis 1991:27). The present paper endeavors to focus on the significance of value based teaching in higher education and evaluate how it is responsible in creating right path for the future.

A person's morality is influenced by a variety of internal and environmental factors. In one conception, moral action is determined by four components: (1) moral sensitivity (comprehending moral content when present in a situation), (2) moral judgment (determining what is the moral thing to do), (3) moral motivation (choosing to do what moral rather than other values dictate), and (4) moral character (having qualities such as strength of ego, perseverance, and courage to act) (Rest & Narváez, 1994; Rest, Narváez, Bebeau, & Thoma, 1999).

Religion plays an important role in imparting moral strength. It teaches courage, tolerance, respect and advocates never to be discouraged by failures. The youth is aware of a long record of moral duties but how many of them are followed by them? They consider themselves

*** Gest Faculty (English) ** Asst. Professor (English) Govt. P.G. College , Neemuch (M.P.)**

to be very busy and they don't even take out time to read the religious scriptures. They don't like any exhortations by the parents rather they accept the philosophy of their peers. Where can they be taught about the morals and their use lives for success and prosperity? Moral education should not end up with family. The colleges and universities should take up this responsibility after parental and school education. A person can adopt better ways of living at any stage of his life. Therefore the educators at higher education should impart knowledge to them through literature and their own particular subjects. The attainment of education enlightens him and differentiates him from the uncivilized ones. The institutional education enhances the realization of responsibilities in the youth. In the opinion of Wilcox and Ebbs 'Responsibility for individual and social welfare is part of the institutional landscape, a daily occurrence manifested in decision making on all levels of the college or university and in the goals toward which the decision making is directed.' (Wilcox and Ebbs 1992:1) The higher education can help in negotiating the ethical issues and experiences of the upcoming generation by evoking a sense of responsibility in them.

At a certain conjuncture of his life the rising youth faces so many questions which he finds difficult to answer. How should one live? Should one aim at virtue, knowledge or happiness? Is it right to be dishonest for a wrong cause? How can he live a full and meaningful life? Do his obligations vary according to the nature of his relationships with others? Does human life have transcendent meaning? Such questions can be dealt at all levels through an understanding of moral values. Carr proposes that there are two questions involved: the 'proper direction' of moral education and whether what happens in our educational institutions can improve public behaviour. The problem is when moral education focuses only on issues of social order and the inculcation of desirable social habits. Although this is generally seen as part of the moral educational process, it is problematical to consider an education that goes beyond this and tackling issues of 'absolute and universal moral significance.'(Carr 1999:26) Value based education in HEIs help in overlooking the moral flaws of others and focusing on the individuals own shortcomings. More importantly it concentrates on transforming the generation to prevent moral failings in the future. It helps in building a foundation to stand on and achieve the real motive in life. The aim of the educators is to nurture the development of a student's consciousness by well equipping them in taking the right decisions. Anscombe is of the view that "Decision-making on whether an action is moral or not should be based on the consequences of that action only." (Anscombe, 1958). They should visualize the consequences of their deeds before performing them. The educators should therefore strive to put the religious and moral education to a better use and bring out the best in the student's personality over the long run. By attaining the right education the young people will inculcate right attributes of character. Elizabeth Berger mentions,

What we mean by character, perhaps foremost, is the capacity to know right from wrong and to act from a position of moral conscience…Beyond that we mean courage and ability to accept the loss squarely. We also mean creativity, empathy and the capacity to love. We mean respect for the human condition, a commitment to other human beings And to our ideals. These qualities are what prepare a young person for the eventual demands of adulthood, for being a good parent and a fine citizen."(Elizabeth Berger 2)

The function of true education is to build an integrated personality. An inner process, however, shows that outer actions derive their value only in relation to the inner motive and the inner consciousness from which those actions emerge. The business of education, as of religious teaching, is to destroy idols, whose worship defies both reason and experience. To provide a place for moral values in higher education does not imply turning the university into such a school or asylum. Moral values do demand faith, but faith in the values, not faith that something or other is the case. What is called for is commitment, trust and hope, not a substitute for reason. (Dennis 23). Our present generation is heading towards an imminent moral collapse and hence it is the need of the hour to illuminate them regarding the inner qualities behind their actions. The given right quality may express itself in different forms of actions. Organizational arrangements can become the instruments of purposive change, the vehicles through which we seek to fashion a good society. However in considering the relationship between organizational arrangements and moral development, it needs to be set at the outset that the relationship is not a direct one: it acts through the medium of social life (Gerald Collier 192). The teachers at the university level must be morally advanced and capable of inculcating spiritual awareness in the students. They should aim at making a difference in their lives, embedding an explicit examination of values

and morals. By encouraging them in exploring the values they uphold, and the values they express by their choices and behaviour, the teachers will allow them to become better informed about their own selves and redefine their future. By doing so, the humble endeavour of our institutions - i.e. to ensure the moral prosperity in the students can be fulfilled and the dreams for an educated and enlighten India may come true.

References

1. Anscombe, G.E.M. 1958.Modern moral philosophy Philosophy, Vol. 33.pp. 38-40
2. Berger, Elizabeth. 2006. Raising Kids With Character: Developing Trust And Personal Intergrity in Children. U.S.A: Rowman & Littlefield Pub.
3. Carr, D. 1999.Cross questions and crooked answers: contemporary problems for moral education. In J. Mark Halstead and T. H. McLaughlin Education in Morality London: Routledge.
4. Collier Gerald, Peter Tomlinson and John Wilson. 1974. Values and Moral Development in Higher Education. Croom Helm Ltd.
5. Rest, J., Narváez, D., Bebeau, M. J., & Thoma, S. J. 1999. Postconventional moral thinking: A neo-Kohlbergian approach. Mahwah, NJ: Erlbaum.
6. Rest, J. R., & Narváez, D., (eds.) 1994. Moral development in the professions: Psychology and applied ethics. Hillsdale, NJ: Erlbaum.
7. Sandolow, T. 1991.The Moral Responsibility of Universities. In D. L. Thomson (ed) Moral Values and Higher Education New York: Suny Press.
8. Thomson, Dennis L. 1991. Moral Values and Higher Education: A Notion at Risk. U.S.A: Brigham Young University.
9. Wilcox, J.R. and Ebbs, S.L. 1992. The Leadership Compass. Values and Ethics in Higher Education ASHE-ERIC Higher Education Rep. No. 1
10. Wilson, J. 1990. A New Introduction to Moral Education. London: Cassell Education.

****

Four Indo-English Poets : Diasporic Contexts

Dr. Manisha Joshi *

"The Creator of Poetry, even if he is not a very good one but provided he is authentically a creator and not merely a cultural imitator, is bound to see poetry as knowledge in his own special way…..He must insist on the integrity, the uniqueness, the primacy of experience in poetry, which is the experience, so to speak of being on fire and not the experience of studying the flame that has cooled down".[1] Nissim Ezekiel's viewpoint of poetry and the crucial phrase 'of being on fire' suggest the stringency of the question of history, culture and identity in diasporic contexts. In the pieces of poetry like 'The Egoists', 'Prayers' and 'Background Casually', 'When a native alien', Nissim Ezekiel wrote "Confiscate my passport. Lord, / I don't want to go abroad. Let me find my song/ where I belong"2 and "I have made my commitments now. This is one : to stay where I am / As others choose to give themselves. In some remote and backward place. My backward place is where I am" 3, an earnest wish almost charged with a religious fervor and a note of defiance voice themselves in our times of global village when questions of historical ties, ethnic identity and cultural integrity are yet to be answered in entire socio-cultural and political perspectives. Of course, art and literature are great synthesizing forces and advocate with a beauteous vehemence and love the essential unity of human beings and religious creeds, but a sense of drift and rootlessness has dogged and tormented the human species right from the biblical days of 'Exodus'. And poets and writers, as members of the common humanity have been terribly exposed to the psychic and traumatic experiences of cultural displacement and linguistic rootlessness. But theirs is an Odyssey of human soul. There is no denying the fact that the situations have been baffling, but the force of art and a deep understanding have enabled them to shield brilliantly their individuality on the one hand and their cultural identity on the other. Many a time they make a deep and a sincere move to the roots reminiscing their soils and seasons and sets of values, growing nostalgic but often with a fine critical sense experiencing the thrust of reality, reassess and revaluate the contemporary questions and situations in the light of continum that is history and vice versa. 'Let all good thoughts come from all sides', the poets and fiction - writers of Indian continent writing in English affirmed and with a cosmopolitan look in foreign climes, planted and watered tree-like their own cultural values imbued in autochthonous tints and thus fought out a sense of 'unhousedness' and a linguistic rootlessness. Thanks to the genuine and desperate moves of these poets and writers that the world, once strange and foreign unto them, takes their notice and the flux of human civilization keeps on unimpeded.

At the threshold of the 21st Century when the world talks of internet and global market, when the lust of flesh, silver and power unmake the inner beauty and impair the beautiful frame, when exodus and refugees, and shell-shocked sections of people raise a finger at us, when seminars and debates are being held on questions of diaspora, poets like A.K. Ramanujan, R. Parthsarthy, Adil Jussawala and Zulfikar Ghose make a delightful study.

"How long can foreign poets/provide the staple of your lines? Turn inward/ Scrape the bottom of your past" 4, and "My tongue in English chains,/ I return, after a generation, to you, / I am at the end/ of my dravidic tether,/ hunger for your unassuaged. /I falter, stumble,/ speak a tired language"5, and "I confess, I am not myself/ in the present/ I only endure/ a reflected existence in the past" 6. Mr. Parthsarthy's yearnings and protests not merely underscore the predicament of an Indo-anglican poet, but also suggest the deep and inexhaustible reservoirs, the fountain head of imperishable human values, where a poet or a writer, writing in English is free to have a bee-mouth sip and in a happy position to invigorate the cells and the tissues of his creative life. It's the question of Indianness that is of paramount value and Mr. Parthsarthy strives at it. When he speaks of his 'dravidian' roots, he envisions India, in her gorgeous age-defying religious and spiritual trends Mr. Parthsarthy abhors a cultural imitator. Mr. Parthsarthy's 'Rough Passage' consisting of three sections 'Exile', 'Trial' and 'Homecoming' is an artistic iconography of the poet's adolescent dallyings with a foreign tongue, his youth spent 'Whoring/after English gods' and 'his ultimate union with his Dravidic past' Of course Mr. Parthsarthy, despite his noble passions, it seems offers no remedy as such to the questions that trouble the contemporary world and remain unanswered. "Mortal, as I am,/ I face the end/ with unspeakable relief,/ knowing how I should feel/ If I were stopped and cut off" 7, and "Love, I haven't the key/ to unlock His gates/ Night curves/ I grasp your hand/ in a rainbow of touch/ of the dead/ I speak nothing

*** Professor (English) Govt. M.L.B. Girls P.G. College, Kial Bhavan,Indore (M.P.)**

but good." 8 are Mr. Parthsarthy's deeply poetical expressions of the fear of death, night, helplessness and an ultimate hope in the good of things.

"In my own poems mostly written abroad, I have tried to show the effect of living in lands I can neither leave nor love nor properly belong to" 9 Mr. Adil Jussawala's words possess a connotation of the crises that a sensitive poetic soul having its abode in the great Asia, writing and breathing under a distant sky is exposed to Dr. H.L. Amga comments, "Jussawala's rather wilful self exile allows him a certain insight into his own predicament caught implacably in bicultural situation" 10. It is significant to note that there is much in common between Jussawala and A.K. Ramanujan, though thematically he is not aligned with him.

Adil Jussawala's two collections 'Lands', and 'Missing Person' depict the 'dialectic of tension' implied in the whole of Indo-English situation. In the Prefatory note to his first collection of poems 'Lands' End', he wrote: "All the poems in this book were written in England, or some part of Europe: that is away from the land where I first learnt what a poem is ; what poetry, and what brings both to fruition" 11. Jussawala's poems are frescoes of experiences and sensations called under a vast sky, where the two, the 'Orient' and the 'occident' merge in each other. Jussawala's poetry is an expression of a man who quarrels torn with violence and hatred and war. "Violence is a culture found on playgrounds./Cities fall to let their Children breathe !" 12 His is a desperate search for identity. In 'The Exile's Story' he writes. "I thought it was my life's one task, you see, / to disabuse the west of fantasies/ about the ways my life's one task, you see, / to disabuse the west of fantasies/ about the ways of prophets, what they taught; / to prove a gentler vision to my own/ than Neitzsche seemed to see." 13 Of course he finds himself surrounded by the intellectual classes with a fractured vision and a Prufrockian sense of failure. In a piece like 'Nine Poems on Arrival' he erects a bastion of hope and home-coming. He writes, "Dry clods of earth/ tighten their tiny faces/ in an effort to cry. / Back where I was born,/ I may yet observe my birth" 14.

The writers born in the sub-continent of Asia and composing in a foreign tongue with a sense of contemporariety, weave the experiences and. the sensations of their soil in a global perspective. India as emerges or Pak as it gets an expression in their creations is a nation with its questions and concerns, hopes and anxieties at par with a troubled world. Thanks to these writers that the two different cultures with their manifold strands are knitted in their works and a deeper harmony is realized in a realm of discord and disharmony.

Zulfikar Ghose was born in Pakistan in 1935 and emigrated to England in 1952. Since 1969 he has been living in the U.S.A. He has published three 'books of poems 'The Loss of India' (1964), 'Jets of Orange' (1967) and 'The Violent West' (1972).

Zulfikar's nostalgia is earth-born, not ethereal. The sense of estrangement torments him. He breathed in India enjoying deep communal ties, fighting for her independence and India torn apart in India and Pakistan. The torn India impressed a deep scar on his soul. The brutal political realities grieved his heart. He writes, "India was at Civil War,/ The crow excreted where he pleased,/ And I/reborn from a fairy-tale/ saw bones charred / in mounds on pavements/ It was no country/ for princes, and the eagle soared/ above the darker clouds/ The undergrowth/ heaved uneasily with poison of snakes/ 'The heart is free !' people cried. ' What if truth runs out like blood ?/ We have our independence. 'The blood of India ran out with my youth." 15

Zulfikar's soul is deeply rooted in India. "The long arm of the sun wipes India's brow…../ India makes me breathless", he writes "The mystique of roots worries me"17, writes Zulfikar Ghose. Zulfikar, an Expatriate at first, is all at ease under a foreign sky. In his poem 'This Landscape, These People', he unfolds his predicament, "A child at a museum. England for me/ is an exhibit within a glass case/ The country, like an antique chair, has a rope/ across it/ I may not sit, only pace/ its frontiers/ I slip through ponds, jump ditches, / through galleries of fearns see England in pictures" 18. He grows nostalgic, "My seventeen years in India I swam/ along the silver beaches of Bombay/ pulled coconuts from the sky and tramped/ red horizons with the swagger and sway/ of Romantic youth; with the impudence/ of a native tongue, I cried for independence"19. But by degrees Zulfikar comes to have a close relationship with England. He writes, "Now I am intimate with England; we meet secret as lovers…../ To this country I have come / Stranger or an inhabitant,/ This is my home" 20.

"Ramanujan is a peculiar phenomenon in himself, one who has two mother-tongues, writes in three languages, teaches in four faculties, lives in someone else's country and dreams much about his own" 21. Mr. C. Dasgupta makes his comment on A.K. Ramanujan, another towering figure in the realm of Indo- English poetry. There is no denying the fact that English as a medium of expression has got into the bones of Ramnujan, but his sensibilities are essentially that of an earnest Hindoo's and his bonds with the native soil are intact. The set of traditional values, the unageing patterns of

a Southern Indian life, the house hold aura, the incomings and no outgoings, the gods and all that India is haunts his poet and he makes poems out of it. The 'hindu' doctrine of life has taken a root in him. He writes, "I do not marvel/ when I see good and evil. / I just walk/ over them as over the irredescense / of horsepiss after rain. When Scandal/ knives, or cowdung fall on women in wedding lace/ I say nothing./ I take care not to gloat/ I have learned to watch lovers without envy/ or memory as I'd watch under a lens,/ houseflies rub hands or kiss/ I look at wounds calmly" 22. There is a deep ring of irony in Ramanujan that possess many a nuance of meaning. Ramanujan's significant collections like 'The striders' and 'The Relations' are the wondrous vignettes of the family life. One so deeply experiences the beat and pulse of Indian life in his poetry. Mr. M.K. Naik, brilliantly comments,. "One hopes Ramanujan will some day reach the very tap root of his heritage, and then his poetry could really flower as never before" 23

Beauty is the cardinal principal of Art & Art is the creation of beauty. In diasporic contexts, when the questions of history and culture and identity assail a sensitive mind, poets and writers the uncrowned legislators of the world, the creators of beauty as they are, emerge with a robust hope for future. We are indebted to them.

References:

1. Poetry As knowledge, (Quest Vol. No. 76 May June 1972) pp. 43-44
2. The Egoists Prayers - Hymns in Darkness p. 49
3. Background casually Nissim Ezekiel : Hymns in Darkness (Oxford University Press London 1936) p. 71
4. R. Parthasarthy : Rough Passage (Oxford University Press, New Delhi 1977) p. 140
5. Ibid p. 139
6. Ibid p. 138
7. Ibid p. 130
8. Ibid p. 131
9. Quoted by G.S. Amur Images and Impressions p. 55
10. Dr. H.K. Amga : Indo English Poetry (Saurabh Publicatons Jaipur India) p. 134
11. Adil Jussawala : Land's End, (Writers Workshop Calcutta, 1962), No pagination.
12. Adil Jussawala : No pagination
13. Adil Jussawala : Missing Person, (Clearing House Bombay 1957)
14. Adil Jussawala : Missing Person p. 44
15. Zulfikar Ghose : The Body's Independence, (Zulfikar Ghose included in Penguine

Modern Poets, pp. 64-65-66 Published in 1975).
16. Zulfikar Ghose : The Mystique of Roots (Penguin Modern Facts) p. 67
17. Ibid p. 67
18. This landscape these people p. 71 (Penguin Modern Poets)
19. Ibid p. 71
20. Ibid p. 73
21. Chidanand Das Gupta : Suddenly a phrase begins to sing, (Spar W. XXIV, No. 11 November 1983), p. 32
22. A.K. Ramanujan : Relations, (Oxford University Press, London 1971) p. 23
23. M.K. Naik : Dimensions of Indian English Literature p. 23

****

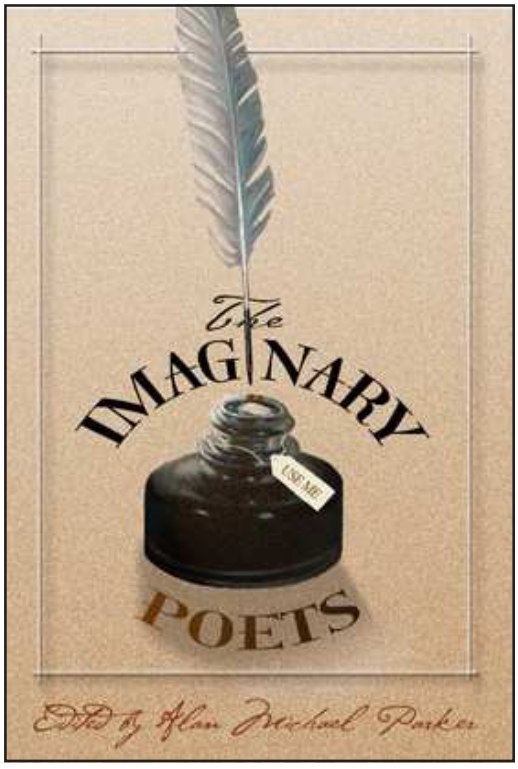

Bottlenecks of Investing in India : Comparative Analysis of India and China

Usha P Oomman * Dr. Sujata Parwani **

Introduction

India and China together account for 37.5% of the world's population and 6.4% of the total value of world output and income at current prices and exchange rates. As the two countries play an increasingly weighty role in world economy, their expansion is having a noticeable impact on global growth, through a number of channels, with trade being arguably the strongest and most direct (Winters and Yusuf, 2007).

The World Bank Report, 2005 states that China's GDP grew the fastest at an average rate of 10.3% per year during 1980-90, while India's grew at 5.7%.In 2003-04, India's GDP growth rate jumped to 8.5%, fuelled by recovery from a severe drought in the previous year. The estimated growth rate for 2004-05 was 7.5% and the projected rate for 2005-06 was 8.1%. China's GDP growth rates, based on revised data, were 10.1% and 9.9% respectively in 2004 and 2005 and the projected rate for 2006 was 9.2% (World Bank, 2006). In 2006-07 India's GDP growth rate was 9.5% and 2007-08 it was 9.3%, 2008-09 growth rate was 6.7% which is decrease but in the year 2009-10 it was increased 6.7% to 7.9% Thus both countries continue to grow rapidly.

The World Prospectus Survey 2010-2012, released by the United Nations Conference on Trade and Development (UNCTAD), showed that China has once again retained title of the world's most important FDI destination. India, meanwhile, overtook the United States to claim the survey's second spot as the U.S. economy continues to struggle. As has already been discussed China has been receiving substantial FDI compared to India.

This paper "Bottlenecks of Investing in India : Comparative Analysis of India and China"

is an attempt to seek reasons for the slow inflow of foreign investment into the country. The study also attempts to suggest sectors in the economy along with policy changes required to enhance the inflow of world finances into India.

Objectives of the Study

1. To understand the meaning of FDI.
2. To study the need for FDI.
3. To study the inflows of FDI into India and China.
4. To study the reasons for larger inflows into China in comparison to India.
5. To recommend areas/sectors that require changes to attract FDI.

1. Capital Inflows into the Two Asian Mega Emergers

Definition of FDI - The IMF definition of FDI includes as many as 12 different elements namely: equity capital, reinvested earnings of foreign companies, inter- company debt transactions, short- term and long term loans, financial leasing, trade credits, grants, bonds, non- cash acquisitions of equity, investment made by foreign venture capital investors, earnings data of indirectly held FDI enterprises and control premium, non competition fee and so on.

Difference in the Definition of FDI in India and China- However, with the singular exception of equity capital reported on the basis of issue/ transfer of equity/preference shares to foreign direct investors, India's current definition of FDI does not include any of the other above elements. China instead includes all these in its definition of FDI. UNCTAD statistics show that in 2000-2001, foreign affiliates reinvested earnings accounted for one third of all China's FDI inflows (UNCTAD,2003). China also classifies imported equipment as FDI while India lists these as imports in the trade data.

FDI Inflows into India and China

FDI is an area where India appears to lag behind China.Foreign direct investment (FDI) in the country stood at US$ 2.04 billion in January 2010, with total FDI inflows reaching US$ 22.96 billion during April-January 2009-10. The Government is now going ahead with several reforms in the FDI policy, starting with revamping of the policy into a single framework. In the Press Note No.1 (2010 Series) dated 25th March, 2010, the Government of India has reviewed the FDI policy and it has been decided, with immediate effect, various approval levels shall operate for proposals involving FDI under the Government route i.e., requiring prior Government approval.

Foreign Direct Investment in China has grown by 24.7% in April 2010 as compared to the April 2009. This amounts to $7.35 billion in a month. The increase is 12.1% in the foreign direct investment in March 2010. FDI inflows in October 2010 dipped by about 40 percent to USD 1.4 billion over the year ago period. In November too, it fell by 7 percent to USD 1.6 billion. After falling consecutively in October and November 2010, in December last year, foreign direct

* Asst. Professor,Smt. CHM College, Ulhasnagar, Mumbai (Maharashtra) ** Asst. Professor, IIPS, DAVV, Indore (M.P.)

investment in India increased by about 31 percent to USD 2 billion over the same period last year.

Present Business Scenario in India and China

According to Stern it is the —— policy, institutional, and behavioural environment, both present and expected, that influences the returns, and risks, associated with investment in a specific location. From this definition and the available literature, business environment can be analysed on the following aspects: (a) quality of physical infrastructure, (b) skill level of local workforce, (c) access to finance, (d) flexibility in labour market, and (e) the deal environment.

Quality of Physical Infrastructure- Good infrastructure (e.g., roads and power) would reduce transaction, logistics and production costs for firms. While poor infrastructure is often cited as one of the key bottlenecks to growth in India (Pinto, Zahir, and Pang 2006), China has invested heavily on infrastructure. Since the mid-1990s, China has invested between 15-20 percent of its GDP on infrastructure. Infrastructure investment in India, in contrast, has averaged less than 7 percent of GDP. In absolute terms, China's infrastructure investment is about 8 times that of India's since the mid-1990s to the early 2000s. Within the category of infrastructure, studies have focused in particular on expensive and unreliable power supply as a source of development bottleneck in India. In China, reliability of power supply has also been of concern.

Skill Level of Local Workforce -The level of skills in a locality influences productivity of local firms for several reasons. It makes hiring qualified staff members easier and, therefore, reduces or eliminates the skill bottlenecks for local firms. Moreover, human capital externality at the local level may increase the productivity of individual firms, and may also encourage entrepreneurship and innovations. Finally, if product quality is determined by the probability of not making mistakes in each task (the O-ring theory), the level of production efficiency would depend on the distribution of skills for all staffs (Kremer 1993).

The picture that emerges from comparing conventional indicators of labour force skills between the two countries is rather mixed. China has the advantage on adult literacy and school enrolment rates (including those for tertiary education), but some believe India has more qualified engineers.

Access to Finance- The ease with which firms can obtain short-term bank loans, as well as other forms of finance, determines firm productivity. Since both countries share a basic feature of their financial system- a high level of government ownership of the banking system and high levels of government intervention. Indian firms report easier access to finance than their Chinese counterparts: 26 percent of Chinese firms vs. 59 percent of Indian firms report having an overdraft facility. The given data does not explain the ease with which firms can obtain external finance for long-term investment.

Flexibility in Labour Market- Labour inflexibility is likely to reduce productivity. It increases the costs of adjusting a firm's scale of operation. When hit by adverse demand shocks, firms would optimally reduce their workforce.

Labour inflexibility would delay or prevent such adjustments and, increase operating costs and reduce firm profitability. Anticipating this, firms may become reluctant to expand and, therefore, fail to capture the economy of scale otherwise possible.

China started liberalizing its labour market and the immediate consequence of China's labour market reforms is that firms can hire temporary workers. Chinese firms have taken advantage of this flexibility by increasing the proportion of workers on temporary contracts.

In India, the existing labour laws require businesses that have more than a threshold of employees to seek permission from state governments for closing a business or downsizing. Permissions are rarely granted. Moreover, the threshold differs across states since both central and state governments are empowered to act on legislations related to trade unions and labour disputes.

The Deal Environment-The extent to which deals can be made, is measured as the share of senior managers' time that is used in dealing with government regulators (the average time cost). Since managers choose how much time they are willing to spend to lobby regulators, they would choose to spend more time lobbying if the expected gains from lobbying exceed the opportunity cost of their time.

When firms have to go through decentralized corruption- that is, when firms have to bribe multiple, decentralized government regulators, and each regulator has discretion to stop the deal-the effect of regulatory burden and arbitrariness may be more pronounced. Many observers of corruption have viewed India's corruption and regulation as typical of a decentralized setup, while China as being typical of a centralized setup. China features both higher time costs and deal uncertainty. While Indian firms on average spent 14% of their senior managers' time on dealing with regulators, the corresponding number of China is 20%.

Remarks

This study aims to explore the role of the local business environment in explaining the China-India productivity difference. It can be seen that India has worse skills,

infrastructure, and labour flexibility, but has better access to finance and lower regulation uncertainty. China's large firm sizes along with better skills are the major factors behind its productivity advantage. Infrastructure appears to be a key constraint for India: it lags significantly behind China, yet it has important indirect effects for the effectiveness of labour flexibility. Labour flexibility also appears to be a major constraint for India.

To summarize the majority of the foreign investors prefer China over India for investment opportunities as China has a bigger market size than India, offers easy accessibility to export market, Government incentives, developed infrastructure, cost-effectiveness, and macro-economic climate. India on the other hand has skilled and efficient work force, talented management system, rule of law, transparent system of work, cultural affinity and regulatory environment.

Conclusion

The fast economic growth of China and India is not unusual in Asia. Previous examples include Japan, South Korea, Hong Kong and Taiwan. The fundamental weakness in these two giants are political constraints and legal systems. China's successful strategy in the past twenty years has been the transfer of its surplus labour from agricultural to manufacturing industry, from low-efficiency state sectors to highly efficient commercial sectors. The Indian economy is also expanding, but so far the process of transferring cheap labour from low-value agriculture to higher-value manufacturing industry has been slow.

China and India have achieved relatively successful outcomes, following their own growth tracks. However, one of the current distinctions between China as the 'factory of the world' and India as the 'world's back office' in international trade may be changing in the coming decade, since China is aiming to develop its service sectors whereas India hopes to strengthen its manufacturing industry.

References

- Ackerberg, Daniel, Kevin Caves, and Garth Frazer. 2006. Structural Identification of Production Function. Mimeo, UCLA.
- Amin, Muhammad. 2009a. Labor Regulation and Employment in India's Retail Stores. Journal of Comparative Economics 37, 47-61. 2009b. Are Labor Regulations Driving Computer Usage in India's Retail Stores? Economics Letter 102, 45-8.
- Bardhan, Pranab. 2006. Awakening Giants, Feet of Clay: A Comparative Assessment of the Rise of China and India. Working paper, UC Berkeley.
  Kremer, Michael. 1993. The O-Ring Theory of Economic Development.? Quarterly Journal of Economics 108, 551-575.
- Postigo, Antonio. 2008. Financing Road Infrastructure in China and India: Current Trends and Future Options. Journal of Asian Public Policy 1, 71-89.
- Srinivasan, T. N. 2003. India's Economy: Current Problems and Future Prospects," Stanford Center for International Development, Working Paper No. 173. July.
- Stern, Nicholas. 2002. A Strategy for Development. Washington, DC: The World Bank.
- Sun, Yan, Michael Johnson. 2009. Does Democracy Check Corruption? Insights from China and India.? Comparative Politics, 1-19.
- Thomsen, S. (2007b), 'Infrastructure and Indian Development; Reform First, Invest Later'
- IEP Briefing Paper, London, January,
- http://www.chathamhouse.org.uk/pdf/research/ie/BPindiaeconomy.pdf.
- Urata S. (2007), 'India and China: Trade, Investment and Development Strategies',
- Powerpoint presentation for Chatham House - Japan Economic Foundation workshop
- 'The Expansion of China and India: Impact and Consequences for Japan, UK and the World Economy', 2 March, London,
- http://www.chathamhouse.org.uk/pdf/research/ie/020307urata.pdf.
- Winters, L. A. and S. Yusuf (2007), Dancing with the Giants: China, India and the World Economy (Washington, DC: World Bank and Institute of Policy Studies).
- World Bank. 2004. India: Investment Climate Assessment 2004-Improving Manufacturing Competitiveness. Finance and Private Sector Development Unit, SAR, Washington, D.C.
- World Bank. 2010. India's Employment Challenge: Creating Jobs, Helping Workers. Washington, D.C.: The Oxford University Press.

****

Economically important Regionally Threatened plant species (NIMAR & MALWA)

Govind waskel *

Keywords:- Economically, Important, Regionally, Threatened, Species,

Brief History of Dhar- Historically and with culturally. Dhar District has occupied an important place throught its epoch -ancient, mediaeval and morder. Dhar known as Dhar Nagari in ancient period and piran Dhar in mediaeval period,s had the privilege of being of the capital city, both in the ancient and in the early mediaeval periods.

Variety of factors contribute to the diversity of plants in a region. Plant species diversity is affected by several topographic gradients and climatic variations. It is generally observed that areas with high species diversity are found in the middle latitudes particularly in the tropics because of the congenial climatic, Edaphic and other factors prevailing therein Among different types of forest (Champion and Seth 1968) Tropical dry deciduous forest occupy larger are in central India. Madhya Pradesh including has largest area under forest Consisting of 34.84%M in the last few decades forest area in Madhya Pradesh has been depleted quantitatively and quantitatively as per the state forest report October-December 2004-05 is 76,013km2 of forest .survey of India.

The forest cover in country B. 678,333KM2 and constitute 20.63% of its geographical area of this dense forest constituted 390.564km2 (11.88%) and open forest 287,769 (8.75%) Madhya Pradesh with 76429km2 of forest cover has the maximum forest cover among all stated's by A.P.(68.01959KM) and chattishgarh(55.998-59km).

The major aspects covered under these workshops were use pattern and conservation of local biodiversity as ethno-medicine, food and for other purposes. It was observed that majority (94.56%) of Gaon NILDA showed concern about overexploitation of indigenous plant biodiversity. The people of Nilda village have categorized local forests into five major classes, viz. Nilda, Mandu, Surani, Dhar, and Dhamnod, and shown the location -specific role of kebang institution in forest biodiversity management. Now a mission- mode participatory programme is required to sustain these local forest resources as perceived by about 73.43% of the participants. Women participants of Nilda and surani village demonstrated some of the domesticated ethnic vegetables such as aksap (Mussaaenda roxburgghii) in their kitchen garden for immediate use in food and medicine. Conservation is led by the motives of meeting the demand of local food, medicine and cultural demands during festivals. The forest tracts sustain a rich diversity of flora and fauna. The forests to a great extent seem to be secondary in nature, probably due to extensive shifting cultivation practiced by local tribal people. The proposed bauxite mining activity by Madhya Pradesh Mineral Development Corporation Limited in these areas would not only wipe out the virgin forests, but also destroy the pristine habitats of several endangered flora and wildlife. The forest spotted owlet Blewitt,s owl a little- known critically endangered, rare endemic bird species of India, The plant population is now facing devastating effects of human interference. Slash and burn cultivation intimidate the natural habitats of these species. Since we could locate the fern species growing on the road fringes, extra care should be taken regarding this aspect in order to conserve the ecofragile ecosystem.

Geographical- The majority of the population in Dhar District belongs to the scheduled tribes. The main tribes in the District are Bhils and bhilalas. Their highest concentration is in kukshi Tehsil, population 2001, 815359km.population 1740527,29% Ten Years growing per 54 km 213, Languages percentage of population Dhar District Hindi 60%, Bhil/Bhilala 25% Nimari 08%, other 07% The tolal geographical area of the district is 8153 square km's and mainly consists of medium black soil. The district is predominately agricultural with 505.3 thousand hectares of net sown area and 731.6 thousand hectares of of gross cropped area. Net irrigated area was 232.6 thousand hectares in 1998 and the proportion of double cropped area to net sown area was 44.8%. The average land holding of the district was 3.07 hectares and the fertilizers consumption per hectare was 64.37kms in 1998-99

In2001 the total population of the district was 17.40 lakhs, about 3% of the state's total population. The urban population of the district was 16.6% and the density of population was 213 persons per square km's. The total number of habitations in the district were 6438 with total inhabited villages are 1487, 14 forest village and nine towns.geographic area of the Dhar Distric It lie between lat 22o1' and 23o 9' 49N and long 74o

*** Govt.J.N.D.College Barwaha (M.P.)**

28, 27" and 75o 42 43 E and forest area 1300.24159km as the geographical area 15.95% 8153 59km very dense forest 0, mod dense forest 176, open forest 419, Total 595, percent of G.A. 730 Change 0, scrub 22 (2005 Assessment).The District extends over three physiographic divisions. They are the malva in the north, the vindhyachal range in central zone and the Narmada Valleybalong the Southern boundary. How wever the valley is again closed up by the hills in the south western part

Economically important Aspect- The tribal population is integral of the biodiversity of the forest since ages. A large number of ethnic aboriginal tribal are there who live in and around forest in Madhya Pradesh. The main tribal are Bhil and Bhilala. A tribal people are inhabiting different parts of India. Majority of them are more or less isolated form modern influence and continue to live in close association and vital dependence on their surrounding vegetation. These Tribal people have very unique and best knowledge of plants. Which is Important not just for the selves but also provide medicines and minor forest products like flowers, fruits, fibers, honey, Tannins Gums, Resins, along edible and wild plants .Hides and horns of wild animals. Today these minor forest products have become the livelihood for the tribal. The plants of the natural surrounding of the tribal have been responsible in organizing their Socio-cultural and economic setups. In this regard the state of Madhya Pradesh. Occupies unique position as it has a large number of tribal and their folk-lore taboos and traditions about plants (Jain 1965).This makes the statie especially sited for ethno botanical studies. Madhya Pradesh has a rich and varied flora due to its diversities topography and variable climatic condition. It is the haven of many tribal and forest dwellers. Areas rich in biodiversity and encompassing unique and representative ecosystem have been identified and designated as biosphere Reserve by Govt. of India. So as to facilitate conservation of India Immense biological diversity and unique land scopes.

Economically important Regional Regionally Threatened plants Species Nimar and Malwa area

PLANTS	Critically Endangered	Endangered	Vulnerable	Total
TREES	5	8	13	26
CLIMBERS	1	4	11	16
HERBS	1	7	7	15
SHRUBS	-	1	1	2
Total	7	20	32	59

TREES

S.NO.	Botanical name	Local name	Family
	CRITICALLY ENDANGERED		
1	Cordia macleodil (Greff.) Hook. f. & Thomson	Gadaplas dahi	Boraginaceae
2	Oroxylum indicum (L.) Venten.	sonpatha	Bignoniaceae
3	Stereospermum chelonoides	Mocha pader	Bignoniaceae
4	Radermachera xylocapra (Roxb.) K.	Khariha garud	Bignoniaceae
5	Dillenia pentagyna Roxb.	Kail, sagone, bhut, khaker, kalla, bakella	Dilleniaceae
	ENDANGERED		
1	Semecarpus anacadium	bhilma	Anacardiaceae
2	Soymida febrifuga (Roxb.) A. Juss	rohina	Meliaceae
3	Daibergia latifolia Roxb.	'sisam	Fabaceae
4	Spondias pinnata	khatamda	Anacardiaceae
5	Grewia tilifoial vahl.	dhaman	Tiliaceae
6	Garuga pinnata Roxb.	Kakad, kapsuwa	Burseraceae
7	Sterculia villosa Roxb.ex Sm.	khodla	Sterculiaceae
8	Gardenia latifolia Ait.	Tilpapda, papra, papry	Rubiaceae
	VULNERABLE		
1	Hardwickia binata Roxb.	anjan	Caesalpiniaceae
2	Pterocarpus marsupium Roxb.	Bija ,biya	Fabaceae

3	Ougeinia oojeinensis (Roxb.)	tincha	Fabaceae
4	Haldina cordifolia Roxb.	haldu	Rubiaceae
5	Buchanania lanzan Sperng.	chirongi	Lecythidaceae
6	Gmelina arborea Roxb.	Sivan ,khamer	Verbenaceae
7	Acacia catechu (Roxb.) Willd.	khair	MImosaceae
8	Kydia calycina Roxb.	Barga,kapasia	Malvaceae
9	Erythrina suberrosa Roxb.	Gaddapalas	Fabaceae
10	Careya arforea Roxb.	kumbhi	Lecythidaceae
11	Morinda pubescens Sm.	aal	Rubiaceae
12	Schleichera oleosa (Lour.)Oken	kusum	Sapindaceae
13	Dalbergia paniculata Roxb.	fhansi	Grewiatiliaefolia

CRITICALLY ENDANGERED CLIMBERS

1	Rubia manjith Roxb. Ex. Fleming	majista	Rubiaceae

ENDANGERED CLIMBERS

1	Gloriosa superb L.	redagadi	Liliaceae
2	Sarcostemma acidum(Roxb.) Voigt	somvati	Ascepiadaceae
3	Butea parviflora Roxb.	Murdha bel	Fabaceae
4	Cissus repanda Vahl.	Pani bel	vitaceae

VULNERABLE CLIMBERS

1	Abrus precatorius L.	ghunghachi	Fabaceae
2	Aristolochia indica L.	ishavermool	Aristolochiaceae
3	Asparagus racemosus	satawer	Liliaceae
4	Calastrus paniculatus Willd.	malkangani	Celastraceae
5	Gymnema sylvestre (Retz.)	gudmar	Apocynaceae
6	Pueraria tuberose	vidharikhand	Fabaceae
7	Bauhinia vahlii wight annott.	mahol	Caesalpiniaceae
8	Argyreia involucrate C.B. Clarke	budiyara	convolvulaceae
9	Celastrus paniculatus Willd.	kagad	Caesalpiniaceae
10	Dioscorea pubera Blume	Kasria khand	Dioscoreaceae
11	Marsdenia tenacissima (Roxb.)	dhudapan	Ascepiadaceae

HERBS CRITICALLY ENDANGERED

1	Alectra parasitica A. Rich subsp.	nirgundikhand	Scrophulariaceae

ENDANGERED HERBS

1	Costus speciosus	kavkhand	Costaceae
2	Geodorum densiflorum	samalmishree	Orchicaceae
3	Nervilia aragona Gaud.	Dhud gola	orchidaceae
4	Tacca leontoloides(L.)Kuntze	Badwa badwi	Taccaceae
5	Euphorbia acaulis Roxb.	Jangali muli	Euphorbiaceae
6	Uraria picta (N.jacquin) Desvex D.C.	PITWON	Fabaceae
7	Rauvolfia tetraphylla L.	Char chinka	Apolynaceae

VULNERABLE HERBS

1	Centella asiatica	brahami	Apiaceae
2	Cholorophytum tuberosum	sapedmusli	Liliaceae
3	Curculigo orchiodes Gaerth	kalimusli	Hypoxidaceae
4	Curcuma amada Roxb.	Amma haldi	zingiberaceae
5	Eulophia nuda Lindi.	malakhand	orchidaceae

Reference-

- Muller-Dombois D, Ellenberg H (1974). Aims and methods of vegetation Ecology . John & Sons, Inc.
- Bankoti NS (1990). Woody vegetation analysis along elevational gradient (2000-3600m)of pindari catchment (kumaun Himalaya) Ph.D. thesis. Kumaun University, Nainital, India.
- Givnish TJ (1999). On the causes of gradients in tropical tree diversity . J. Ecol. 87:193-210.
- Singh JS, Singh SP (1987).Forest vegetation oh the Himalaya Botanical Review.53:80-192.
- Tiwari JC (1982) Vegetation analysis along altitudinal gradients around Nainital. Ph.D.thesis. kumaun University, India.
- Rawat,G.S. and Bhainsora.N.S., woody vegetation of siwaliks and outer Himalaya in north- western India. Trop. Ecol. 1999. 40.119-128.
- Dr.H.K.Sahu (1999-2000).A study of Effectiveness of protective Labour to Dhar District of M.P.
- Dr.Swati Tiwari (2002-2003) An analytical study of the Impact of Rajeev Gandhi Universalization of Education in Tribal dominant of Dhar District
- Dr.Dilip Singh Mandloi (2000-2003) .The Impact of Industrialization on the Socio-economic Industrial area of har District, M.P.
- Dr.J.Kannoje (2004-2005) Adootion of modern Agricultural Techniques Dhar District,M.P
- Dr.Ritu George (2004-2005).Economic exploitation of tribals and Effective of Dhar District, M.P.
- Jain,S.P. (2004) India is having a rich vegetation with a wide variety of plants.. view within Article this sanctuary is very popular with botanists and… Jain, Ethno, medico- botanical survey of Dhar District, M.P.
- Dhar,B.B. and Saxena, N.C.(eds),(2005),These are important tools for studying the pattern of vegetation dynamics..coal mine overburden in M.P.. Journal of tropical forest . 1:79-84.. In socio-economic Impact of..
- Vegetation classification and mapping for Assessment of forest resources in India, (1981-82) Shajapur, Rajgarh, Dewas,Jhabua, Ujjain, Dhar District of M.P. (1985), Report on Land use pattern of India,1988
- Vegetation of the area comprises tropical pattern has undergone drastic change replacing.. Jhabua,Dhar(M.P.) and panchmahal (Godhra),
- Dr.P.C.DUBE (2011) Chief conservator of Forests Indore zone
- State of forest report 2005, Dhar District (M.P.)
- Gyandoot net-Dhar District- people of Dhar .M.P.
- Flora and fauna of M.P. -WIKIPEDIA, The free ENCYCLOPEDIA.
- IUCN 2008, Red List of Threatened Species; www.iucnredlist. Org, accessed on 17 October 2008
- Pullaiah, T., Biodiversity in India, Regency Publications, New Delhi, 2004

****

A Strategic Model For Influencing Consumer Behaviour

Dr. Rashmi Gupta *

Abstract

Based on the consumer and market analysis, a strategy to influence consumer responses is selected and implemented. The strategy may involve any or all of the marketing mix elements and may be designed to accomplish both short-term and long-term objectives. Many sales promotions have short-term objectives of generating sales to new customers which hopefully lead to long-term loyalty. Advertising campaigns may increase short-term sales, but are often designed to create long-term brand equity and deep meanings for consumers that will also lead to long-term loyalty. Most product strategies involving changes in quality, packaging or branding include long-term objectives as do strategies involving new or different distribution methods. Pricing strategies most often incorporate short-term changes to influence sales, but long-term strategies are also used.

Marketing managers develop strategies to accomplish particular objectives. Often these objectives deal with maintaining or increasing sales or market share by a particular amount or percentage, subject to a budget constraint. In order to accomplish these objectives, managers focus on influencing consumer's affect, cognitions, and behaviors. Influencing these can involve both long-term and short-term strategies. For example, building brand equity-consumers' beliefs about positive product attributes and favorable consequences of brand use- is usually a long-term strategy designed to influence long-term sales and the ability to charge higher prices. Brands like Harley-Davidson. Titelist, and Sony have developed high brand equity and market share by influencing Consumers' affective and cognitive responses, which had led to long-term purchase and use behavior. Stores like the Gap and Wal-Mart also develop store images and store equity to influence consumers to shop at their stores. American Express has developed a prestige image for its Credit Cards to influence consumers to use them.

In other cases, marketing managers use strategies to influence consumers in the short run but, at the same time, they hope that these consumers will also become long-term, loyal customers. Many of the sales promotion tactics discussed in the paper are designed to increase sales quickly for a short period of time.

Regardless of whether the strategy is for the short or long run, managers need to understand consumers' affect, cognitions and behaviors to develop strategies to influence them. The following, presents a general model managers can use to help develop successful influence strategies.

Steps in Developing Consumer Behavior Influence Strategies.

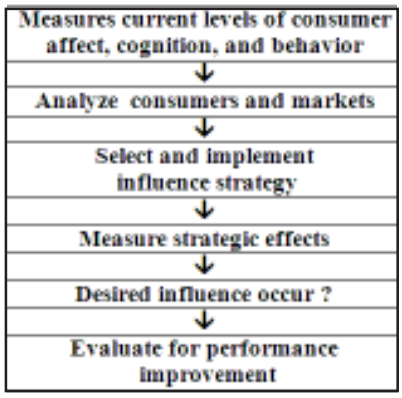

Measure Current Levels of Consumer Affect, Cognition, and Behavior.

In order to design successful strategies, marketers should first know what consumers think, feel, and do about a company's products, stores, or other offerings. Marketers should also know these same things about competitive offerings. In other words, consumers' affect, cognitions, and behaviors should be measured to form the basis for successful strategies. Following lists some ways of measuring overt consumer behaviors. As shown, for each of the seven types of behavior identified, there are a variety of ways of measuring them. Although all of these methods are commonly used in marketing and consumer research, they are not always used sequentially to investigate all of the behaviors consumers must perform to purchase and use products correctly.

Types of Behavior

* Asst. Prof. (Economics) M.J.B. Govt. P.G. College, Indore (M.P.)

One approach that allows a number of stages in a purchase sequence to be monitored is the Scanner Cable method available from research companies such as Information Resources. IRT's research systems are used by many leading companies including General Foods, Procter & Gamble, General Mills. The systems are designed to predict which products will be successful and which ads work best to sell them. They have been expanded from use in grocery stores to include drugstores and mass merchandisers. IRI has constructed consumer panels in a number of cities and monitors house-holds nation-wide. It monitors purchases in grocery stores in many markets ranging from big cities to small towns.

Panel members provide information about the size of their families, their income, their marital status, how many TVs they own, what types of newspapers and magazines they read, and who does most of the shopping. IRI provides a special bar-coded identification card that shoppers present to the cashier when they pay for products in grocery stores, drugstores and others. By passing the card over the scanner or entering the digits manually into the register, the cashier records everything each shopper has purchased.

A number of behaviors in the purchase sequence can be monitored and influenced because media habits of households are monitored, and commercials can be changed until contact occurs. Funds access can be monitored on the cash register tape by recording prices and the method of payment. Because every purchase in the store is recorded. Store contact, product contact, and transaction information are available, as well as the dates and times of these behaviors. As such the effectiveness of various sales promotions and other marketing strategies on specific consumer behaviors can be determined. Successful promotions can be offered again to encourage store and brand loyalty. Because the time between purchases can be determined, information is also available on consumption and usage rates.

There are two reasons to start strategy development by measuring consumers' affect, cognition and behavior. First, these measures provide baseline data for determining the effectiveness of the influence strategy after it has been implemented. A baseline is the level of consumer's responses prior to implementation of a new strategy. Second these measures help identify opportunities and threats in the market. For example, if consumers know more about a competitive retail chain, like it better, and shop there more frequently, then strategies must be developed to increase these responses for the company's stores. Hopefully, the research also identities the reasons why consumers shop at the competitive chain so that a strategy could be developed to increase consumers' acceptance and purchases at the company's stores.

Analyze Consumers and Markets

After baseline data have been collected, the next step is to analyze the information by evaluating consumer response from various current and potential markets. Consumers may not purchase a product for many reasons and consumer research is designed to uncover the reasons. Perhaps they do not know about the product, do not like it, or do not know where to buy it. Perhaps they purchase a competitive product with which they are highly satisfied. The strategies that are appropriate depend on the levels of consumers' affective, cognitive, and behavioral responses to the company's products relative to competitive products.

For existing products, marketers often seek strategies for doing so, including developing advertising to highlight superior benefits of competitive offerings, developing more convenient packaging, lowering prices through sales promotions, or expanding distribution outlets. Strategies for existing products may also focus on increasing purchases by current users. These strategies involve finding new uses for a product, new occasions for its use, or decreasing the cost of using it. Finally strategies for existing products involve expanding markets geographically, such as seeking global markets where opportunities may be better because there are so many consumers who are nonusers, competition is weaker, or the product has strong affective appeal.

Conclusion:-

After implementation the strategy, its effects must be measured to see whether and how much it influenced consumers' affect, cognition, and behavior and whether it did so enough to achieve objectives. If not, considerable analysis and evaluation need to be done to determine why the strategy failed. This is a complicated problem because there are a number of potential reasons why influence strategies fail.

Bibliography:-

1. Macro Economics
   Theory And Policy
   H.L. Ahuja
2. Macro Economics
   Theories And Policies
   Richard T. Froyen
3. Economics of Marketing
   Cooperatives
   M.V. Kapde
4. Economics
   Problems and issues
   Thomas J. Hail Stone,
   Frank V. Mastrinna.

A Comparative study of mental health among adolescent and old age people

Dr. Rashmi Singh *

ABSTRACT-

Mental Health is a state of well being in which every individual realizes his or her own potential, can cope with the normal stresses of life, can work productively and fruitfully, and is able to make a contribution to her or his community. The aim of this study is to investigate the significance between mental health of adolescent and old age people. The sample selected for the present study comprised of 60 samples [30 adolescent (age group 13 - 20 yrs) and 30 old age people (age group above 65yrs.)] that were selected randomly. Mental Health inventory (MHI) by Dr. Jagdish and Dr. A. K. Shrivatav was used for data collection. Result shows that there is a significant difference between the mental health of adolescent and old age people.

Key words- mental health, adolescent, old age people

INTRODUCTION-

Health is an indispensible quality in human being. It has been described as soil from which finest flowers grow. Health indicates psychosomatic well being.

Bhatia (1982) "Health is a state of being hale, sound or whole in body and mind." Thus health is a broader concept including physical, social and mental health. The term mental health is often used loosely, but it means to convey the idea of psychological well being, or absence of mental health, in terms of what is going on its mind. Mental health has been reported as an important factor influencing individual's various behavior, activities, happiness and performance. It is a person's way of living which is ultimately the central theme of the so called field of mental health. Laddell "mental health is the ability to make adequate adjustments to the environment, on the plane of reality." Mental health is a crucial dimension of overall health and an essential source for living. Bhatia (1982) considers mental health as the ability to balance feelings, desires, ambitions and ideals in one's daily living. It means the ability to face and accept the realities of life. Mental health is about how we think, feel and behave.

OBJECTIVE-

The aim of the study is to investigate significant difference of mental health between adolescent and old age people.

HYPOTHESIS-

There is no significant difference between the mental health of adolescents and old age people.

METHOD-

SAMPLE- In accordance with the aim of the present research sample 30 adolescents and 30 old age people is taken from Udaipur city (Raj.)

TOOLS- For present study Mental Health inventory by Dr. Jagdish and Dr.A.K.Shrivastav was used. It measures the mental health on six dimensions namely positive self evaluation, perception of reality, integration of personality, autonomy, group oriented attitude and environment mastery. Reliability of the inventory by split half method is 0.73 and validity of the scale is 0.57.

PROCEDURE-The test was administered after establishing a proper rapport with the subjects. Brief instructions were given to them. The answered questionnaires were collected and score as per manual.

RESULT TABLE-

S.	Group	Mean	S.D.	SEm	CV	t
1.	Adolescent	164.50	18.91	3.51	11.49	3.19**
2.	Old Age	149.23	18.21	3.38	12.20	

RESULT-

Table shows mental health of adolescent and old age people. According to the table mean for adolescent are 164.50 and that for old age is 149.23. The t value is 3.19. The level of significance is 0.05 and 0.01. The t score of adolescent and old age is 3.19. So it is significant.

DISCUSSION-

As the adolescent stage in human life is that stage when rapid changes takes place. Due to this growth, human personality develops new dimensions. Mental health I adolescence may be characterized by a roller coaster of emotional and psychological highs and lows. Intense feelings are a normal and healthy part of the psychological landscape of youth. The adolescent starts to control their desire according to standards by the society.

They also begin to realize their social responsibilities. Adolescent age group have adequate feeling of security, adequate life goals, ability to satisfy the requirements of the group, adequate bodily desires and the ability to gratify them.

*** Guest Faculty, Department of psychology, Govt. Meera Girls College, Udaipur (Raj.)**

Relationship with caring adults, development of positive life goals, and belief in a positive future have all been consistent linked to healthy and social and emotional functioning in youth and adults (Eccles and Gootman,2002).

They have more positive emotion, including joy, contentment and love. Adolescents have the sense that one's own life is good which correlates with the characteristics such as self esteem, resiliency, optimism, self reliance, healthy habits, prosaically behavior. The character strength like curiosities, kindness, gratitude, humor is the characteristics.

They have healthy competencies in the social, emotional, cognitive, behavioral, and moral realms. They have the much more ability to get along with others, work with others and depend for their own development rather than dependence on other people. Children and young people participate in 2 key policy areas, their own mental health care and the planning and deliver of child and adolescent mental health services. Children and young people play a unique contribution to clinical care and examine current knowledge and practice that encourages their involvement in clinical process and service development. (Crispin Day 2007). As a part of the national public health initiative healthy people 2010 (NIIAH) has identified 21 critical health objectives for adolescent and young adults, including objectives within the category of mental health and substance use.

"Everybody wants to live long" but "nobody wants to be old". Elderly individuals suffer from chronic life strain involving economic deprivation, illness disability and the activity of daily living impairment. Whatever their ages, those with physical limitations caused by chronic illness were less satisfied with their lives and had more emotional symptoms. Certain types of life strain act on one another to increase mental health problems, and that those with chronic disabilities suffer increased distress and decreased satisfaction with life. (Revicki, Dennis A., Mitchell,Jim P.1990). The elderly people are self centered, egoistic and have the limited world towards their family and society. They have reduced feeling of self identity and worthwillness. They feel lonely because not having adequate life goals. They suffer from restlessness, irritability, difficult in concentrating, forgetfulness, indecisiveness, decreased energy, insomnia, early morning awakening or oversleeping and this leads to depression, anxiety and worries. Living alone is also a major cause for poor mental health in elderly people. Some people outlive their spouses and children may migrate for economic reasons. Mental health was significantly related to frequency of contact with relatives, friends and neighbors in the higher IADL group. Moreover, mental health was significantly associated with contact with children living separately in the lower IADL group. (Shimanuki Hidiki, Sakihara Seizo, Haga Hiroshi et.all 2003) So adolescents are found to be more mentally healthy than old age people.

REFERENCES-

- www.google.com
- www.wikiepedia.com
- www.actforyouth.net
- Eccles,J.S. & Gootman, J.A. (2002). Community programs to promote youth development. Washington D.C.: National academy press.
- Crispin day (2007). 'Children & young people involvement & participation in mental health care'; child and adolescent mental health; volume 13 issue 1; pages 2-8, published online- 23 July 2007
- Improving health of adolescents and young adults: a guide for states and communities. Retrieved December 15, 2008 from http://nahic.ucsf.edu/index.php/companion/index#chapters
- Revicki, Dennis A., Mitchell, Jim P. (1990) "strain, social support and mental health in elderly individuals"; journals of gerontology. Issn: 0022-1422
- Shimanuki Hideki, Sakihara Seizo, Haga Hiroshi ET. All (2003) Journal of health and human ecology; volume 69; no.6; pg 195-204

Social Perceptions On Women Education
(Case Study Of Mandsaur, Madhya Pradesh)

Hajra Member Sahab *

In spite of certain outstanding examples of individual achievement of Indian woman and a definite improvement in their general condition over the last one hundred years, it remains true that our woman still constitute a large body of under - privileged citizens. Women of course do not form a homogenous group in class or caste terms. Nevertheless, they face distinctive problems that call for special attention. The Backward Classes Commission set up by the Government of India in 1953 classified women of India as a backward group requiring special attention.

It is well known fact that the condition of women in the state is far from satisfactory, the state government is fully determined to improve their standard of life. Government is also taking steps to open up all the opportunities to women so that they can be able to realize their potential. Different plans and interventions have been beneficial for changing social perceptions regarding women education.

Mandsaur is the place where total Literacy rate is 72.7%. Male Literacy of Mandsaur is 86.8% while female literacy stands at 58.3%. Sex-ratio of Mandsaur is 966 female per thousand male.

There have been controversies in the opinion regarding girls and their education in India. Religion says to give honor to women but society does not give. But a long period of time has changed the trend. Now women are getting education.63.5% women, in the survey of Mandsaur said society favors that girls should be educated. Statements given in favor are:

- Girls have more responsibilities then boys
- Our society is willing to give high education to girls
- Only villagers think that girls should not get education. In cities people think them to give high education.
- To educate girl is not only social perception but it dream of society
- They want to give good education and then marry them.
- Society doesn't keep discrimination between boys and girls and gives equal weight age.
- So that they can also become something

Each mother keeps this wish if she has not done something she will make her daughter to do that. Even if mother has done something she thinks that daughter will get even higher and better education. 'I will make her something' Says mothers. Girls glow name of both maternal and in-laws family if she does something whereas boy relate to one family only. Educated women educate her children and whole family. She is the key of progress of any family. No children of literate mother can be illiterate.

17.5% society is not in favor of much education they keep following opinion:

- As they have to look after the family.
- They favour marriage and say's what have you to do by studying, ultimately u have to do household chores.
- Our society allows girls to study up to 12th after that want her to marry.
- Our society thinks that if girls get more education they fly in the sky so they should be educated and marry as soon as possible and that's all. In their words-"padhai kerne se ladhkiya zyada hawa me udhti hay"

9% of society has lake of awareness about girl's education. 1% society says that if subject and school, colleges are available in same place then only we will favour girl's education. Sending girls far and out of city is risky. It will blame their character even if they are virgin for their whole life will be affected and none will marry her so better not to educate her. "What is the benefit of such education what makes her life worst then making it good"? One of girl candidate told about social perceptions.

Virginity before marriage is must because in Indian society virginity is most regarded and considered as an essential criterion for marriage. Hence the safe keeping of girl's sexuality becomes major factor underage marriage and leads to departure of girls from school. Girls are big responsibilities of them and parents have to be vigilant so that nothing can go wrong with them. In case they get any bad reputation then their future is gone. Girls can be protected if from the danger of premarital sex if they are married at a right time according to them. By the age of 18 to girls cannot complete their graduation. Once they are married their career has gone.

Girls are women's independent thinking and deciding for themselves are not approved by the community up to some extent with the fear that it would go against the customary

* Singhania University, Pacheri Bari Jhunjhunu (Raj.)

practises. The goal of education that inflicts independent thinking and questioning certainly go against the pattern of tradition and thus parents tend to avoid it.

The ideology of "control of female sexuality to protect female chastity, virginity and family honour". Works behind these concerns.

Because of lack of awareness of girls education, daughters are taken as big responsibilities and burden. As they tell her "paraya dhan" they devalue their daughter's education. Priority is given to honour in society.

One should move in line with changing society and to change conventions to fit today's world. Fear to community doesn't allow to send girls (daughters to go out to get education. As a result traditional practises take precedence education.

Only 1% social perception to send daughter to get education only when subject, school and colleges are available in the same city shows people are open and willing to send their daughters out. Though some social hindrance stop them from doing so. 1.5% social perceptions are that if girls take high education, it becomes difficult to find match. 2% responded have shown their ignorance about prevailing traditions in society about girls. The Shivraj Singh Chouhan government in Madhya Pradesh has turned out to be a messiah for girl children. The innovative scheme - Ladli Laxmi Yojana - has proved to be corner stone for women folk.

Refrence:

1. Census of India 2011.
2. Women status in MP and panned interventions 2010 Tyagi
3. Great boon for girls in MP
   May 6, 2011 | Ataullah Faizan Bhopal

****

Violation Of Human Rights And Women Education
(A Case Study Of Mandsaur, Madhya Pradesh)

Hajra Member Sahab *

For many generations woman has been treated as property. Women were never treated as self-individual in any civilization. Their independence was discouraged in almost all the civilizations and religions. But now the principle of gender equality is enshrined in the Indian Constitution in its Preamble, Fundamental Rights, Fundamental Duties and Directive Principles. The Constitution not only grants equality to women, but also empowers the State to adopt measures of positive discrimination in favor of women. Within the framework of a democratic polity, our laws, development policies, Plans and programmes have aimed at women's advancement in different spheres. India has also ratified various international conventions and human rights instruments committing to secure equal rights of women. Key among them is the ratification of the Convention on Elimination of All Forms of Discrimination Against Women (CEDAW) in 1993.

Article 14 of the Constitution in India says that no person will be denied equality before the law. Article 42 states that women should be provided just and human work atmosphere and maternity relief.

Women's Rights Education and Advocacy Project Leader, Claudia Donati, emphasizes the importance of human rights in reaffirming the self worth of women who experience domestic abuse. 'When you talk about violence against women as a human rights issue, I think this is very empowering for women. We want to educate women on human rights and let them know that the government has obligations to protect these rights.'

In Mandsaur enrolment of girls continuously increased from 2005 to 2010 in all the classes from class 1 to 8. In2005-06 girls" overall enrolment in class to class 8 was 108,239 and in 2009-10 it was 125,750 but girls enrolment is lower than boys and still it is not 100%.genger discrimination still exist in the selection of schools and subjects.

For girls of Mandsaur marriage is also an obstacle in education. As girls reach to the age of marriage, they are married because of tradition, because of insecurity of age and because of social pressure upon family. After marriage a number of responsibilities come upon girls. Girls don't feel comfortable with studies and loose interest. After having children responsibility increases more and long gap in education break their education completely. Average age of marriage of girls in Mandsaur is 17 .2 what is below. It is the big obstacle in girl's education.

For girl's education in Mandsaur parents concern about security too. In distant schools and colleges if girls are going alone they are not secure.

Prevailing social perceptions regarding girls education as when girls reach puberty she shouldn't go out alone, girls cannot be sent out alone, if they go out alone for study question comes upon her character and no one will marry her. It is the matter of family image in society still persist in Mandsaur so all the parents of different strata are not completely free towards girls education. Getting education is human rights so need are to bring awareness among women.

A survey of women in Mandsaur says 73.5% girls have no problem in getting higher education. 6.5% girls faced problem of absence of teachers in the classroom and 6% had economical problem but they had very less family restrictions for getting education.

Millennium goal efforts through education and campaign for removing discrimination and providing equal opportunity have brought gender achievement. Girls are getting equal opportunity for getting education. It raises level of education among girl's women and in whole society. Girls are preferred for higher education as they are more sincere. Sex discrimination has gone very low.

Women education has proved so beneficial that educated women strongly support girls for higher education family, Gather and even in-laws support their daughter in law's education strongly. So there is much to cheer about in India, Madhya Pradesh and Mandsaur. Steady progress over the last two decades has put the region of Mandsaur to achieve no discrimination and equal tights. Girl's education is not a very big problem. Enrolment and retention of girls have not only been increased but also gender gap is getting reduced and it will soon reach to finish line. Chances of enrolment of girls, below poverty line are slim comparatively though awareness has aroused even in this strata. Only little more government support is going to lead them towards full favoritism of girls education otherwise fear of traditional pressure may keep them off the mark for meeting the deadly

*** Singhania University, Pacheri Bari Jhunjhunu (Raj.)**

of achieving universal primary education by 2015. Gender parity in education is on track throughout all of the classes and religions and categories.

Disparity still persist but with favoritism of girls over boys in school. However discrimination problem has been till now but equality in enrolment is found in Mandsaur. The millennium development Goal of gender parity in education seems to be achieved nearly in Mandsaur Gender gap in enrolment in general, OBC, SC & ST persistently decreasing. At secondary level more girls get enrolment then boys. 63.5% society percepts that girls should get education 100 % Girls and women kip education on priority over marriage.

For bringing awareness towards women education, for changing social attitude toward girl's birth and supporting girl's health and education Shivrajsingh Chouhan government in Madhya Pradesh has turned to be a messiah for girl's children. The innovative scheme - ladli laxmi yojna has proved to be corner stone for women folk. So far, over 7 lakh 45 thousand girls have been benefited under the scheme.

REFRENCE:

1. Women and Men in India 2011
   13th Issue
   Central Statistics Office
   Ministry of Statistics and Programme Implementation
   Government of India
   Sardar Patel Bhavan, Sansad Marg, New Delhi
   www.mospi.gov.in
2. Human Rights for Women in India
3. Women Reservation Bill An empowerment to Ordinary Women
   Monday, February 7, 2011
4. Women's rights are human rights
   BY PENNYPOST · NOVEMBER 15, 2011 NO COMMENTS CARDIFF EWS · TAGGED: 16 DAYS OF ACTIVISM CARDIFF, SLIDER, WELSH WOMENS AID
5. District level household and facility survey 2007-08 Madhya Pradesh 2010
6. District Elementary Education Report Card 2005-06 and 2009-10

****

Khap Panchayat : Custom V. Law
(Critical Jurisprudential analysis on Khap Panchayat)

Prachi Tyagi *

People usually think according to their inclinations, speak according to their learning and ingrained opinions, but generally act according to custom. -Francis Bacon –

1- INTRODUCTION

The Indian social fabric was organized around the village unit, from time immemorial, as making shifted from nomadic to settled agricultural practices. Throughout the last few millennium the society of the Indian sub continent, was organized in various forms, tribal, village, monarchical or republican the mode of governing was that of a council of five, which in time was called a Panchayat. We find that this republican form of society existed from the most ancient times known to us. We find references to the republican sources in our ancient literature, some of the most ancient as being the Rig Veda.

2- WHAT IS THIS WHOLE PHENOMENON CALLED KHAP PANCHAYAT?

In general terms khap panchayat means cluster of villages united by reason of customs and geography. It is as old as 14th century started by upper caste Jats to consolidate their power and position. Khap panchayats are prevalent in Haryana, western Uttar Pradesh and Parts of Rajasthan and Madhya Pradesh. It is actually a political organisation. Typically every village has its own Panchayat or council. Whenever there is a problem or dispute in the village, a gathering of the Panchayat is called for every member of the village has a right to attend, express his views and vote for or against a proposal. There are no elected or nominated Panchayat officials. Some persons, by the virtue of their wisdom and eloquence are accepted as Panches (one of the five). Khap Panchayat or Caste Council covers 84 villages. The Sarv Khap (or all Khap) Panchayat (council) represented all the Khaps.

3- ISSUES INVOLVED

3.1 AUTHORITY OF KHAP PANCHAYAT-ON STILTS ?

Khap Panchayats are not recognised under any of the existing Indian laws. The Khap Panchayats have unwritten laws, and their decisions are clearly extra-constitutional or extra-judicial. The Khap Panchayat is basically a creation of the Jats. The question of rights for women does not exist anywhere in the territories ruled by Khap panchayats. Khap's justice is based on age old customs and traditions which they are following from several centuries because according to them these customs and traditions are even thicker than their blood and this is the only way they can preserve their culture and society which are being followed from their forefather 's times.

3.1.1 UNVERSALITY OF KANT AND OF DICTUM OF KHAP

The philosophical concept of a categorical imperative is central to the moral philosophy of Immanuel Kant. Acc. to Universal Law Formulation of Kant's Categorical Imperative:

"Act only on that maxim through which you can at the same time will that it should become a universal law."

Since Khap Panchayat is clearly an extra-judicial body having no authority under any of the existing Indian laws all its "dictum" are not universally applicable because only those rights can be protected which law recognises and law does not recognise extra-judicial authorities and if any such rights are not protected under the law then it cannot have a universal application.

3.1.2 WE ARE RATIONALE AND AUTONOMOUS BEINGS

Again according to Kant we all are rationale beings, we are beings capable of reason. We are also autonomous beings, having right to act and choose freely. It is our rationale capacity which makes us distinctive which makes us special, sets us apart from mere animal existence. Therefore, as rationale and autonomous beings we have right to reason and question the extent of correctness of dictums delivered by Khap at the same time having freedom to choose and act what we want to do not out of necessity but according to law that we give ourselves.

3.1.3 WHAT GIVES AN ACTION ITS MORAL WORTH?

Kant says that only those action done for the sake of moral law for the sake of duty-only those actions have moral worth. Motive confirms moral worth in an action, that is, doing right thing for the right reason. Khap panchayat in such manner are doing their duty of preserving their age old customs and traditions deriving such duty from the law which they have given themselves but then they are performing their duty with the wrong motive creating hindrance in the exercise of persons right to liberty, right to reason, right to freedom and right to express and such duty cannot be justified because it is morally incorrect.

*** National Acadmey of Legal Science & Research, Hydrabad (A.P.)**

3.2 CONSEQUENCES OF EXTRA JUDICIAL DECISIONS OF KHAP

Khap panchayat is often in fact always connected with the phenomenon of "honor killing", though it is one of the biggest aspects of khap. The main rule is that all boys and girls within a khap are considered siblings. Khap panchayat governs the khap formed by same gotra (clan) families from several neighbouring villages. Love marriages are considered taboo in areas governed by Khap panchayats. Those living in a Khap are not allowed to marry in the same gotra or even in any gotra from the same village. Many young couples have been killed in the past defying khap rules.

Khap panchyat imposes its writ through social boycotts and fines and in most cases end up either killing or forcing the victims to commit suicide. All this is done in the name of brotherhood and its honour. It is due to the inherent weakness of democratically elected Panchayati Raj institutions, Khap panchayats have been powerful. Even the government has not done much to control their power.

The 10-15 men who constitute a Khap settle disputes and control the lives of young people. Many village people also defend these caste panchayats as they deliver the verdict in one sitting whereas court cases drag for years. According to them, in many cases innocent people get harassed in the court and by police. Here as everyone is known so they cross check everything to ensure neutrality.

3.2.1 WHAT IS HONOR KILLING?

Honour killing, also called customary killing, is the murder of a family or a clan member by one or more fellow family or clan members, where the murderers (and potentially the wider community) believes the victim to have brought dishonour upon the family, clan or community. These killings result from the perception that defending honour justifies the killing of a person whose behaviour dishonours their clan or family. They believe that by committing this inhuman act they have removed the stain from their

apparently "spotless" previous record of so called honour, and have set an example for everyone to look at and follow. Men and women are murdered across the country specially villages of northern side for daring to marry outside their caste. These societies are deeply patriarchal, where caste purity is paramount and marriages are arranged to sustain a status quo. Anyone who transgresses these social codes is killed brutally in the name of honour.

3.2.2 NOZICK'S VIEW ON LIBERTY VIS-À-VIS HONOR KILLING

Nozick is a libertarian who talks about principle of self ownership. That the only purpose for which power can be rightfully exercised over any member of a civilized community, against his will, is to prevent harm to others. His own good, either physical or moral, is not a sufficient warrant. He cannot rightfully be compelled to do or forbear because it will be better for him to do so, because it will make him happier, because, in the opinions of others, to do so would be wise, or even right. To justify that, the conduct from which it is desired to deter him must be calculated to produce evil to someone else. The only part of the conduct of any one, for which he is amenable to society, is that which concerns others. In the part which merely concerns him, his independence is, of right, absolute. Over himself, over his own body and mind, the individual is sovereign. Khap panchayat by imposing their extra-judicial dictum and not allowing the people to marry the partner of their choice (inter caste marriages, marriages of people of same village) is going against the Nozick's theory of liberty because they own themselves and have right to choose partners of their choice as long as such choice is not harming any third person.

Ours is a free and democratic country, and once a person becomes major he or she can marry whosoever he/she likes. If the parents of the boy or girl do not approve of such inter-caste or inter-religious marriage the maximum they can do is that they can cut off social relations with the son or the daughter, but they cannot give threats or commit or instigate acts of violence and cannot harass the person who undergoes such inter-caste or inter- religious marriage. Constitution of India also guarantees freedom of life liberty and equality and freedom of expression under article 21, article 14 and article 19(1) (a) respectively which clearly permits to choose or marry the person of their choice. As it is also well said by Justice Katju :

"We hold these truths to be self-evident, that all men are created equal, that they are endowed by their creator by certain inalienable rights that among these are life, liberty, and the pursuit of happiness"

3.2.3 ARISTOTLE'S POLIS, GOOD LIFE AND FEAR OF KHAP

"Polis" is a Greek term used to refer Greek cities and states. In present scenario it is referred in terms of SOCIETY. Habit is the first step in moral education but habit, however essential, can't be the whole of moral virtue. New situations always arise, and we need to know which habit is the appropriate under the circumstances. Moral virtue therefore requires judgement, a kind of knowledge Aristotle calls "practical wisdom" .

People with practical wisdom can deliberate well about what is good, not only for themselves but for their fellow citizens,

and for human beings in general. Deliberation is not philosophizing because it attends what is changeable and particular. It is oriented to action here and now. But it is more than calculation. It seeks to identify the highest human good attainable under the circumstances.

Polis is essential gateway to good life according to Aristotle. First, because the laws of the polis inculcate good habits, form good character, and set us on the way to civic virtue. Secondly, the life of the citizen enables us to exercise capacities of deliberation and practical wisdom that would otherwise lie dormant.

We become good at deliberating only by entering the arena, weighing the alternatives, arguing our case, ruling being ruled- in short by being citizens which is not possible under the deterrence way of punishment and violence done by the members of Khap Panchayat because in such a situation people will never deliberate out of their fear and if they will not deliberate a GOOD LIFE and GOOD CHARACTER can never be attained.

4- CONCLUSION- BANGING ON THE TABLE

After reading khap panchayat from the point of view of Kant ,Nozick and Aristotle following conclusion could be drawn out of it:-

- No universal application of khap's dictum(Kant's Universal Law Formulation)
- Not recognised under any of the existing Indian laws(Kant's Universal Law Formulation)
- Nothing is moral in khap's action (Kant's concept of morality)
- Hindrance to right to reason and freedom (Kant's rationale and autonomous being)
- No liberty to choose ones' own partner(Nozick's principle of self ownership)
- No deliberation no good life.(Aristotle's polis and good life)

Then functioning of such institutions should be stopped in our society because we don't need such extra judicial bodies as we already have Judicial, Administrative and Quasi-judicial bodies to govern our rights, duties and actions. Running of such extra-judicial bodies parallel to judicial bodies interfere in the module of law of our state and also let people lose their confidence in our judicial system by letting such bodies to function with full action and grace despite of such lawless unconstitutional and illegal dictum given by them.

"We have a democratic system here. We have a judiciary. The law is in the hands of judiciary and nobody else."

****

झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत हितग्राहियों को प्रदत्त वित्तीय सहायता/ऋण का विश्लेषण

डॉ. लक्ष्मण परवाल * प्रो. गेन्दालाल चौहान **

प्रस्तावना :- 'वित्त' व्यवसाय का मूलाधार है। कोई भी उद्योग, सेवा व व्यवसाय वित्त के बिना न तो प्रारंभ किया जा सकता है और न ही उसका विकास संभव है। व्यवसाय की सफलता वित्त की पर्याप्त पूर्ति तथा वित्त के प्रभावपूर्ण प्रबंध पर निर्भर करती है। वित्त का तात्पर्य मुद्रा से होता है तथा वित्त में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि किस प्रकार परिवार, व्यवसायी, विनियोक्ता, सरकारें तथा वित्तीय संस्थाएं अपनी मुद्रा का प्रबंध एवं संचालन करती हैं। व्यावसायिक वित्त में सभी प्रकार के व्यावसायिक संगठनों की सभी क्रियाओं की वित्तीय व्यवस्था की जाती है। व्यावसायिक वित्त में व्यावसायिक आवश्यकताओं के लिए विभिन्न साधनों से उचित शर्तों पर वित्त प्राप्त करना तथा व्यावसायिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु उसका उपयोग एवं प्रबंध करना शामिल होता है।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता प्राप्त करने की प्रक्रिया को इतना सरल बनाया गया है कि आवेदक आसानी के साथ सामान्य शर्तों पर मात्र 5प्रतिशत से 16.25 प्रतिशत मार्जिन मनी जमा करने के पश्चात् बिना किसी गारंटी के ऋण प्राप्त कर सकते हैं। इस योजना में चुने हुए शिक्षित बेरोजगार जिनकी आयु 18 वर्ष से 35 वर्ष के बीच हो तथा जिनकी समस्त स्रोतों से प्राप्त पारिवारिक आय 1 लाख रूपये वार्षिक से कम हो, को किसी भी उपक्रम को प्रारंभ करने के लिए व्यवसाय एवं सेवा इकाईयों में ऋण की अधिकतम राशि 2 लाख रूपये तक एवं उद्योग इकाईयों में ऋण की अधिकतम राशि 5 लाख रूपये तक दी जाती है।

अध्ययन का उद्देश्य :- प्रस्तुत शोध पत्र में इस बात का अध्ययन किया गया है कि झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने में वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा किये गये प्रयास कितने सार्थक रहे हैं। वस्तुत: यह अध्ययन निम्न उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए किया गया है :-

- प्रधानमंत्री रोजगार योजना कें अंतर्गत अध्ययन अवधि में कितने हितग्राहियों को वित्तीय सहायता/ऋण दिये जाने का लक्ष्य था ?
- निर्धारित लक्ष्य की तुलना में बैंकों द्वारा कितने हितग्राहियों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये ?
- बैंकों द्वारा स्वीकृत ऋणों एवं वितरित ऋणों का लक्ष्य से प्रतिशत क्या रहा ?
- बैंकों द्वारा स्वीकृत ऋण राशियों की तुलना में वितरित ऋण राशियों का प्रतिशत कितना है ?

प्रणाली :- यह अध्ययन मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले में किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक समंकों पर आधारित है, जो झाबुआ के जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र से संग्रहित किये गये हैं। समंक वर्ष 2003-04 से वर्ष 2007-08 तक कुल 5 वर्षों के ही संग्रह किये गये है, क्योंकि वर्ष 2008-09 से प्रधानमंत्री रोजगार योजना का विलय प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम में कर दिया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में उपर्युक्त 5 वर्षों के समंकों के आधार पर औसत, प्रतिशत एवं अनुपात जैसी सांख्यिकीय एवं गणितीय विधियों का प्रयोग कर अपेक्षित परिणाम ज्ञात किये गए हैं।

विश्लेषण एवं परिणाम :- प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वर्ष 2003-04 से लेकर वर्ष 2007-08 तक झाबुआ जिले में लक्ष्य के अनुपात में बेरोजगार हितग्राहियों को स्वीकृत व वितरित वित्तीय सहायता/ऋण राशि का विश्लेषण शोधार्थी द्वारा अग्र तालिका में किया गया है। यह विश्लेषण हितग्राहियों की संख्या व ऋण राशि के आधार पर किया गया है, साथ ही स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरणों एवं ऋण राशियों का औसत एवं प्रतिशत भी ज्ञात किया गया है। (देखिए तालिका क्रं1 व ग्राफ)

उपर्युक्त तालिका एवं चित्रों से स्पष्ट होता है कि झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत गत 05 वर्षों (2003-04 से 2007-08) में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र द्वारा निर्धारित 2,387 बेरोजगारों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के लक्ष्य के अनुपात में वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा कुल 2,039 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये तथा वितरण 1,401 बेरोजगारों को किया गया है।

औसत के आधार पर प्रतिवर्ष 477 बेरोजगारों के लक्ष्य के अनुपात में 408 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये हैं, जो कि लगभग 85 प्रतिशत के बराबर है, जबकि वितरण मात्र 280 बेरोजगारों को ही हो पाया है। यह वितरण लक्ष्य की तुलना में लगभग 59 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों की तुलना में लगभग 69 प्रतिशत के बराबर है।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत गत 05 वर्षों में कुल 2,039 बेरोजगारों को 10 करोड़, 47 लाख, 18 हजार रूपये की वित्तीय सहायता/ऋण राशि जिले की राष्ट्रीयकृत बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा स्वीकृत की गई थी, किन्तु इसमें से वितरण मात्र 1,401 बेरोजगार हितग्राहियों को लगभग 07 करोड़, 54 लाख, 06 हजार रूपयों का ही हो पाया है। औसत रूप से प्रतिवर्ष 408 बेरोजगारों को 02 करोड़, 09 लाख, 44 हजार रूपये स्वीकृत किये जाकर वितरण मात्र 280 हितग्राहियों को 01 करोड़, 50 लाख, 81 हजार रूपये का ही किया गया है। यह वितरण स्वीकृत राशि की तुलना में लगभग 72 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2003-04 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 364 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 382 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये, जो लगभग 105 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 284 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 78 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों के तुलना में लगभग 74 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 01 करोड़, 80 लाख की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 01 करोड़, 67 लाख, 50 हजार रूपये का ही किया गया जो लगभग 93 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2004-05 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 419 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 419 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये, जो लगभग 100 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 289 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 69 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों के तुलना में

* प्रा. वाणिज्य संकाय, शासकीय वाणिज्य महा., रतलाम ** सहा.प्रा., वाणिज्य संकाय, शास. विक्रम महा., खाचरौद, जिला- उज्जैन (म.प्र.)

लगभग 69 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 2 करोड़, 60 हजार की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 01 करोड़, 31 लाख, 70 हजार रूपये का ही किया गया जो लगभग 66 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2005-06 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 502 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 407 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये, जो लगभग 81 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 272 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 54 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों के तुलना में लगभग 67 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 02 करोड़, 86 लाख, 64 हजार की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 01 करोड़, 80 लाख रूपये का ही किया गया जो लगभग 63 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2006-07 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 525 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 570 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये, जो लगभग 109 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 358 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 68 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों के तुलना में लगभग 63 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 02 करोड़, 80 हजार की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 01 करोड़, 65 लाख, 71 हजार रूपये का ही किया गया जो लगभग 82 प्रतिशत के बराबर है।

वर्ष 2007-08 में विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य संख्या 577 हितग्राहियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की तुलना में बैंकों द्वारा 261 बेरोजगारों के ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये, जो लगभग 45 प्रतिशत के बराबर है, लेकिन वितरण मात्र 198 बेरोजगारों को ही किया गया। यह लक्ष्य की तुलना में लगभग 34 प्रतिशत एवं स्वीकृत प्रकरणों के तुलना में लगभग 76 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार स्वीकृत राशि 01 करोड़, 79 लाख, 14 हजार की तुलना में इस वर्ष वितरण मात्र 01 करोड़, 09 लाख, 15 हजार रूपये का ही किया गया जो लगभग 61 प्रतिशत के बराबर है।

निष्कर्ष :- अध्ययन के अंत में यह कहा जा सकता है कि झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत गत 05 वर्षों में निर्धारित लक्ष्य संख्या 100 के अनुपात में 85 प्रकरणों में ऋण स्वीकृत किया जाकर 59 प्रकरणों में ऋण वितरण की प्रक्रिया पूरी की गई है। इसी प्रकार बैंकों द्वारा प्रत्येक 100 स्वीकृत प्रकरणों में से 69 प्रकरणों में ऋण वितरित किया गया है। वित्तीय सहायता/ऋण राशि के अनुसार प्रत्येक 01 लाख रूपये की स्वीकृति में बैंकों द्वारा लगभग 72 हजार रूपये वितरित किये गये हैं।

संदर्भ सूची :-शोध पत्र की सम्पूर्ण सामग्री शोधार्थी प्रो.गेंदालाल चौहान, सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद-जिला उज्जैन के शोध प्रबंध ''प्रधानमंत्री रोजगार योजना का झाबुआ जिले के आदिवासियों के आर्थिक विकास में योगदान'' विषय से ली गई है। यह शोध प्रबंध डॉ.लक्ष्मण परवाल, प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम के निर्देशन में पूर्ण किया गया है, तथा विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि हेतु वर्ष 2012-13 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका क्रं. 1: प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत स्वीकृत व वितरित वित्तीय सहायता का विवरण

वर्ष	लक्ष्य संख्या	कुल प्रकरण (हितग्राहियों की संख्या)					कुल राशि (लाख रू. में)		
		स्वीकृत प्रकरण		वितरित प्रकरण					
		संख्या	लक्ष्य से प्रतिशत	संख्या	लक्ष्य से प्रतिशत	स्वीकृत से प्रतिशत	स्वीकृत	वितरित	प्रतिशत
2003-04	364	382	104.95	284	78.02	74.34	180.00	167.50	93.05
2004-05	419	419	100.00	289	68.97	68.97	200.60	131.70	65.65
2005-06	502	407	81.08	272	54.18	66.83	286.64	180.00	62.79
2006-07	525	570	108.57	358	68.19	62.80	200.80	165.71	82.25
2007-08	577	261	45.23	198	34.32	75.86	179.14	109.15	60.92
योग	2,387	2,039	85.42	1,401	58.69	68.71	1,047.18	754.06	72.01
औसत	477	408	85.00	280	59.00	69.00	209.44	150.81	72.00

स्रोतः- जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, झाबुआ

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत लक्ष्य, स्वीकृत एवं वितरित प्रकरणों की संख्या

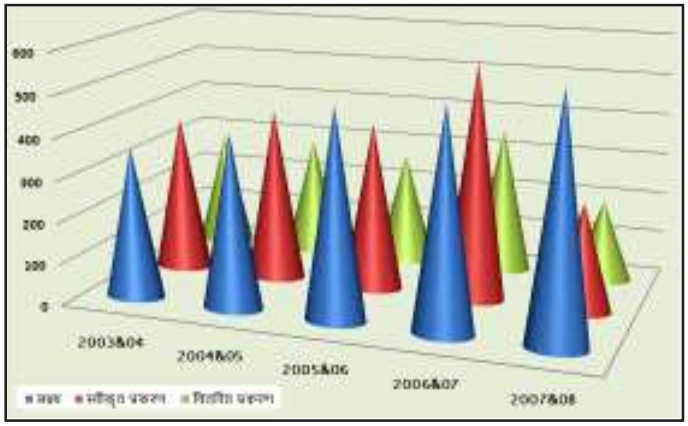

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत, स्वीकृत एवं वितरित ऋण राशि (लाख रू.में)

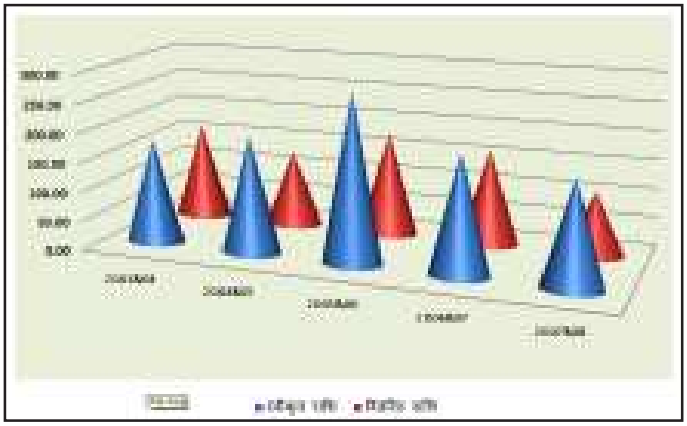

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत जातिगत आधार पर हितग्राहियों को प्रदत्त वित्तीय सहायता/ऋण का विश्लेषण (म.प्र. के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. लक्ष्मण परवाल * प्रो.गेन्दालाल चौहान **

प्रस्तावना :-

वित्त आधुनिक औद्योगिक व्यवस्था का जीवन रक्त है। यह समस्त क्रियाओं का आधार है। इसके अभाव में न तो उपक्रम को प्रारंभ किया जा सकता है और न ही उसे सफलतापूर्वक संचालित किया जा सकता है।

व्यावसायिक सफलता मूल मंत्र, आवश्यकतानुसार वित्त की व्यवस्था करना होता है। किसी भी व्यापार एवं उद्योग को चाहे वह बड़े पैमाने पर हो या छोटे पैमाने पर, प्रारंभ करने एवं उसके भावी विस्तार के लिए पर्याप्त वित्त की आवश्यकता होती है। वर्तमान समय में देश की औद्योगिक उन्नती वित्त प्रबंध पर ही निर्भर है। वित्त प्रबंध की उचित व्यवस्था के अभाव में अनेक औद्योगिक विकास की योजनाएं मात्र कागजी योजनाएं बनकर रह जाती हैं। जिस प्रकार एक इंजिन को चलाने के लिये कोयले अथवा बिजली की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार प्रत्येक व्यापार एवं उद्योग को स्थापित करने तथा चलाने के लिए वित्त की आवश्यकता होती है।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के माध्यम से देश के लाखों शिक्षित बेरोजगार युवाओं को लाभांवित करने का लक्ष्य रखा गया था, जिससे वह आत्मनिर्भर बन सके। इस योजना का क्रियान्वयन 2 अक्टूबर, 1993 से प्रारम्भ किया गया था। वर्ष 1993-94 में यह योजना केवल शहरी क्षेत्रों तक सीमित थी, किन्तु 1 अप्रैल, 1994 से इसे ग्रामीण व शहरी दोनों क्षेत्रों में लागू कर दिया गया। इस योजना के अन्तर्गत उद्योग, सेवा तथा व्यवसाय में सात लाख लघुत्तर इकाईयाँ स्थापित करके लगभग 10 लाख से भी अधिक व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया है।

इस योजना में चयनित हितग्राहियों को कुल परियोजना लागत का 15 प्रतिशत भाग या अधिकतम 12,500/- रूपये सरकार द्वारा अुनदान के रूप में प्रदान किया जाता है। चयनित हितग्राही को इक्विटी का 5 प्रतिशत से 16.25 प्रतिशत तक अंश स्वयं लगाना होता है तथा परियोजना की शेष लागत का वित पोषण बैंक ऋण द्वारा किया जाता है। इन लघुत्तर इकाईयों के साहसियों को 15 व 20 दिवसीय प्रशिक्षण दिया जाता है, आवश्यकता होने पर कच्चा माल व विपणन सहायता भी दी जाती है।

इस योजना के अन्तर्गत प्रत्येक जिले में प्रतिवर्ष लाभान्वित किये जाने वाले युवकों की जो संख्या निर्धारित की जाती है उसमें कम से कम 22.5 प्रतिशत हितग्राही अनुसूचित जाति/ जनजाति वर्ग में से तथा 27 प्रतिशत हितग्राही पिछ़डा वर्ग में से तथा शेष सामान्य श्रेणी के हितग्राही चयनित किये जाते है।

अध्ययन का उद्देश्य :-

प्रस्तुत शोध पत्र में झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत जातिगत आधार पर हितग्राहियों को प्रदत्त वित्तीय सहायता (ऋण प्रकरणों एवं ऋण राशियों के आधार पर) उपलब्ध करवाने में नोडल एजेन्सी जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र एवं वाणिज्यिक बैकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा किये गये प्रयासों की सार्थकता का अध्ययन किया गया है। मुख्य रूप से यह अध्ययन निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया गया है :-

- प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत अध्ययन अवधि में जातिगत आधार पर कुल कितने ऋण प्रकरण स्वीकृत एवं वितरित किये गये ?
- प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत अध्ययन अवधि में जातिगत आधार पर कुल कितनी ऋण राशियां स्वीकृत एवं वितरित की गई ?
- बैंकों द्वारा जातिगत आधार पर स्वीकृत ऋण प्रकरणों की तुलना में वितरित ऋण प्रकरणों का प्रतिशत कितना रहा ?
- बैंकों द्वारा जातिगत आधार पर स्वीकृत ऋण राशियों की तुलना में वितरित ऋण राशियों का प्रतिशत कितना रहा ?

प्रणाली :-

यह अध्ययन मध्यप्रदेश राज्य के आदिवासी झाबुआ जिले में किया गया है। अध्ययन में संग्रहित किये गये द्वितीयक समंक झाबुआ जिले के व्यापार एवं उद्योग केन्द्र से प्राप्त किये गये हैं। वर्ष 2003-04 से वर्ष 2007-08 तक कुल 05 वर्षों के ही आंकडे संग्रहित कर विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में उपलब्ध समंकों के आधार पर औसत, अनुपात एव प्रतिशत जैसी सांख्यिकीय एवं गणितीय विधियों का उपयोग कर शोधार्थी द्वारा सार्थक परिणाम प्राप्त किये गये हैं।

विश्लेषणात्मक विवेचन :-

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत जातिगत आधार पर हितग्राहियों को प्रदत्त वित्तीय सहायता/ऋण का विश्लेषण शोधार्थी द्वारा हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित ऋण प्रकरणों एवं स्वीकृत एवं वितरित ऋण राशियों के आधार पर निम्न प्रकार से किया गया है :-

1. प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत जातिगत आधार पर हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित ऋण प्रकरणों का तुलनात्मक विश्लेषण :-

झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वर्ष 2003-04 से लेकर वर्ष 2007-08 तक आदिवासी वर्ग एवं अन्य श्रेणियों के बेरोजगार हितग्राहियों को स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरणों का विश्लेषण शोधार्थी ने अग्र तालिका में किया है।

इस विश्लेषण में आदिवासी वर्ग में अनुसूचित जनजाति के पुरुष एवं महिला हितग्राही तथा अन्य श्रेणियों में सामान्य, पिछ़डा वर्ग, अनुसूचित जाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग के पुरुष व महिला हितग्राही शामिल है। यह विश्लेषण हितग्राहियों की संख्या के आधार पर किया गया है, साथ ही स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरणों का औसत एवं प्रतिशत भी ज्ञात किया गया है।

* प्राध्यापक वाणिज्य, स्वामी विवेकानन्द शास. वाणिज्य महा. रतलाम ** सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य, शास. विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद (म.प्र.)

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत हितग्राहियों को स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरणों का तुलनात्मक विवरण (जातिगत आधार पर)

वर्ष	आदिवासी हितग्राही				अन्य श्रेणियों के हितग्राही				कुल योग			
	स्वीकृत		वितरित		स्वीकृत		वितरित		स्वीकृत		वितरित	
	संख्या	योग से प्रतिशत	संख्या	योग से प्रतिशत	संख्या	योग से प्रतिशत	संख्या	योग से प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
2003-04	245	64.00	164	58.00	137	36.00	120	42.00	382	100.00	284	100.00
2004-05	257	61.00	130	45.00	162	39.00	159	55.00	419	100.00	289	100.00
2005-06	262	64.00	166	61.00	145	36.00	106	39.00	407	100.00	272	100.00
2006-07	347	61.00	184	51.00	223	39.00	174	49.00	570	100.00	358	100.00
2007-08	168	64.00	121	61.00	93	36.00	77	39.00	261	100.00	198	100.00
योग	1,279	63.00	765	55.00	760	37.00	636	45.00	2,039	100.00	1,401	100.00
औसत	256		153		152		127		408		280	

स्रोत :- जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, झाबुआ

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत आदिवासी हितग्राहियों को स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरण

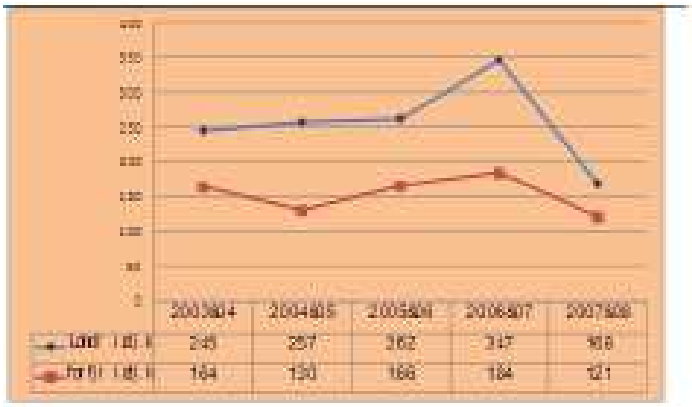

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों को स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरण

उपर्युक्त तालिका एवं चित्रों से स्पष्ट होता है कि झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत गत 05 वर्षों में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र के माध्यम से राष्ट्रीयकृत बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा कुल 2,039 बेरोजगारों के ऋण प्रकरणों में वित्तीय सहायता स्वीकृत की गई, किन्तु वितरण मात्र 1,401 ऋण प्रकरणों में ही हुआ।

इस प्रकार जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वाणिज्यिक बैंकों द्वारा ऋण प्रकरणों की स्वीकृति एवं वितरण में 10:07 का अनुपात पाया गया है, अर्थात बैंकों द्वारा 10 बेरोजगारों के ऋण प्रकरणों में स्वीकृति के पत्तत् उसमें से 07 प्रकरणों में ही ऋण वितरित किया जा रहा है।

योजनांतर्गत बैंकों द्वारा स्वीकृत कुल 2,039 ऋण प्रकरणों में से आदिवासी वर्ग के हितग्राहियों के लिए 1,279 एवं अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों के लिए 760 ऋण प्रकरण स्वीकृत किये गये हैं। अनुपातिक दृष्टि से आदिवासी एवं अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों में ऋणों की स्वीकृति का अनुपात 06:04 है, अर्थात् बैंकों द्वारा स्वीकृत कुल 10 प्रकरणों में से लगभग 06 प्रकरण आदिवासी वर्ग के एवं 04 प्रकरण अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों के स्वीकृत किये जा रहे हैं।

इसी प्रकार प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत बैंकों द्वारा वितरित कुल 1,401 ऋण प्रकरणों में से आदिवासी वर्ग के हितग्राहियों के लिए 765 एवं अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों के लिए 636 ऋण प्रकरणों में वितरण किया गया है।

आनुपातिक दृष्टि से आदिवासी एवं अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों में ऋणों के वितरण का अनुपात 11:09 है, अर्थात् बैंकों द्वारा वितरित कुल 20 प्रकरणों में से 11 प्रकरण आदिवासी वर्ग के एवं शेष 09 प्रकरण अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों को वितरित किये जा रहे हैं।

2. प्रधानमंत्री रो.यो. अंतर्गत जातिगत आधार पर हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित ऋण राशि/वित्तीय सहायता का तुलनात्मक विश्लेषण

झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत गत 05 वर्षों (वर्ष 2003-04 से वर्ष 2007-08 तक) में आदिवासी वर्ग के बेरोजगार हितग्राहियों एवं अन्य श्रेणियों के बेरोजगार हितग्राहियों को स्वीकृत एवं वितरित ऋण राशि/वित्तीय सहायता का विश्लेषण शोधार्थी द्वारा अग्र तालिका में किया गया है। इस विश्लेषण में आदिवासी वर्ग में अनुसूचित जनजाति के पुरुष एवं महिला हितग्राही तथा अन्य श्रेणियों में सामान्य, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति एवं अल्पसंख्यक वर्ग के पुरुष एवं महिला हितग्राही शामिल हैं।

यह विश्लेषण हितग्राहियों को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में व्यवसाय/सेवा/उद्योग क्षेत्र के अंतर्गत इकाईयों की स्थापना हेतु प्रदान की गई ऋण राशि/वित्तीय सहायता के आधार पर किया गया है, साथ ही स्वीकृत व वितरित ऋण राशियों का औसत एवं प्रतिशत भी ज्ञात किया गया है।

प्रधानमंत्री रो.यो. के अंतर्गत हितग्राहियों को स्वीकृत व वितरित ऋण राशि/वित्तीय सहायता का तुलनात्मक विवरण (जातिगत आधार पर)

वर्ष	आदिवासी हितग्राही				अन्य श्रेणियों के हितग्राही				कुल योग			
	स्वीकृत		वितरित		स्वीकृत		वितरित		स्वीकृत		वितरित	
	राशि (लाख रु.में)	योग से प्रतिशत	राशि (लाख रु.में)	योग से प्रतिशत	राशि (लाख रु.में)	योग से प्रतिशत	राशि (लाख रु.में)	योग से प्रतिशत	राशि (लाख रु.में)	प्रतिशत	राशि (लाख रु.में)	प्रतिशत
2003-04	119.15	66.19	112.55	67.19	60.85	33.81	54.95	32.81	180.00	100.00	167.50	100.00
2004-05	84.30	42.02	61.85	46.81	116.30	57.98	70.05	53.19	200.60	100.00	131.70	100.00
2005-06	147.20	51.35	90.85	50.47	139.44	48.65	89.15	49.53	286.64	100.00	180.00	100.00
2006-07	128.90	64.19	96.41	58.18	71.90	35.81	69.30	41.82	200.80	100.00	165.71	100.00
2007-08	85.85	47.92	61.09	55.97	93.29	52.08	48.06	44.03	179.14	100.00	109.15	100.00
योग	565.40	53.99	422.55	56.04	481.78	46.01	331.51	43.96	1,047.18	100.00	754.06	100.00
औसत	113.08		84.51		96.36		66.30		209.44		150.81	

स्रोत :- जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, झाबुआ

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत आदिवासी हितग्राहियों को स्वीकृत व वितरित ऋण राशि (लाख रू. में)

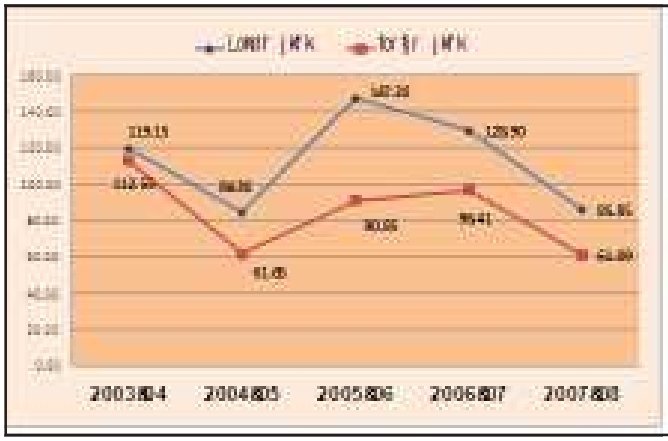

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों को स्वीकृत व वितरित ऋण राशि (लाख रू. में)

उपर्युक्त तालिका एवं चित्रों से स्पष्ट होता है कि झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत गत 05 वर्षों में जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र के सहयोग से राष्ट्रीयकृत बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा कुल 10 करोड़, 47 लाख, 18 हजार रूपये की वित्तीय सहायता/ऋण राशि स्वीकृत की गई किन्तु वितरण केवल 07 करोड़, 54 लाख, 06 हजार रूपये का ही किया गया। इस प्रकार जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वाणिज्यिक

बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा बेरोजगार हितग्राहियों को अपना स्वयं का रोजगार स्थापित करने हेतु प्रति 01लाख रूपये की स्वीकृत राशि के बदले में औसत रूप से लगभग 72 हजार रूपये का वितरण किया गया है।

योजनांतर्गत बैंकों द्वारा स्वीकृत कुल वित्तीय सहायता/ऋण राशि में से आदिवासी वर्ग के बेरोजगार हितग्राहियों के लिये 05 करोड़, 65 लाख, 40 हजार रूपये एवं अन्य श्रेणियों के बेरोजगार हितग्राहियों के लिये 04 करोड़ 22 लाख 55 हजार रूपये की राशि स्वीकृत की गई है। आनुपातिक दृष्टि से आदिवासी वर्ग एवं अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों में वित्तीय सहायता/ऋण राशि की स्वीकृति का अनुपात 04:03 है, अर्थात् बैंकों द्वारा स्वीकृत कुल 07 लाख रूपये की वित्तीय सहायता में से 04 लाख रूपये की वित्तीय सहायता आदिवासी हितग्राहियों के लिये एवं 03 लाख रूपये की वित्तीय सहायता अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों के लिये स्वीकृत की गई है।

इसी प्रकार प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत बैंकों द्वारा वितरित कुल वित्तीय सहायता/ऋण राशि में से आदिवासी वर्ग के बेरोजगार हितग्राहियों को 04 करोड़, 22 लाख, 55 हजार रूपये एवं अन्य श्रेणियों के बेरोजगार हितग्राहियों को 03 करोड़, 31 लाख, 51 हजार रूपये की राशि वितरित की गई है। आनुपातिक दृष्टि से आदिवासी वर्ग एवं अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों में वित्तीय सहायता/ऋण राशि के वितरण का अनुपात 05:04 है, अर्थात् बैंकों द्वारा वितरित कुल 09 लाख रूपये की वित्तीय सहायता में से 05 लाख रूपये की वित्तीय सहायता आदिवासी हितग्राहियों को एवं 04 लाख रूपये की वित्तीय सहायता अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों को वितरित की गई है।

निष्कर्ष :-

- औसत रूप से जिले में प्रतिवर्ष 408 बेरोजगारों के ऋण प्रकरणों को वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा स्वीकृत किया जा रहा है। इसमें से 256 ऋण प्रकरण आदिवासी हितग्राहियों के एवं 152 ऋण प्रकरण अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों के स्वीकृत किये गये हैं। प्रतिशत के आधार पर लगभग 63 प्रतिशत ऋण प्रकरण आदिवासी हितग्राहियों के एवं 37 प्रतिशत ऋण प्रकरण अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों के स्वीकृत किये गये हैं।
- औसत रूप से जिले में प्रतिवर्ष 280 बेरोजगारों के ऋण प्रकरणों में वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा वितरण किया जा रहा है। इसमें से 153 ऋण प्रकरणों में राशि का वितरण आदिवासी हितग्राहियों को एवं 127 ऋण प्रकरणों में राशि का वितरण अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों को किया जा रहा है। प्रतिशत के आधार पर लगभग 55 प्रतिशत ऋण प्रकरणों में वितरण आदिवासी हितग्राहियों को एवं 45 प्रतिशत ऋण प्रकरणों में वितरण अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों को किया गया है।
- औसत रूप से जिले में प्रतिवर्ष 02 करोड़, 09 लाख, 44 हजार रूपये की वित्तीय सहायता/ऋण राशि बैंकों द्वारा बेरोजगार हितग्राहियों के लिये स्वीकृत की गई है, जिसमें से आदिवासी वर्ग के बेरोजगार हितग्राहियों के लिये 01 करोड़, 13 लाख, 08 हजार रूपये व अन्य श्रेणियों के बेरोजगार हितग्राहियों के लिये 84 लाख, 51 हजार रूपये की ऋण राशि स्वीकृत की गई है। प्रतिशत के आधार पर लगभग 54 प्रतिशत ऋण राशि आदिवासी हितग्राहियों के लिये एवं 46 प्रतिशत ऋण राशि अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों के लिये स्वीकृत की गई है।
- औसत के आधार पर जिले में प्रतिवर्ष 01 करोड़, 50 लाख, 81 हजार रूपये की वित्तीय सहायता/ऋण राशि बैंकों द्वारा बेरोजगार हितग्राहियों को वितरित की गई है, जिसमें से आदिवासी वर्ग के बेरोजगार हितग्राहियों को 84 लाख, 51 हजार रूपये व अन्य श्रेणियों के बेरोजगार हितग्राहियों को 66 लाख, 30 हजार रूपये की ऋण राशि वितरित की गई है। प्रतिशत के आधार पर लगभग 56 प्रतिशत ऋण राशि आदिवासी हितग्राहियों के लिये एवं 44 प्रतिशत ऋण राशि अन्य श्रेणियों के हितग्राहियों को वितरित की गई है।

संदर्भ सूची :-

शोध पत्र की सम्पूर्ण सामग्री शोधार्थी प्रो.गेंदालाल चौहान, सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद-जिला उज्जैन के शोध प्रबंध ''प्रधानमंत्री रोजगार योजना का झाबुआ जिले के आदिवासियों के आर्थिक विकास में योगदान'' विषय से ली गई है। यह शोध प्रबंध डॉ. लक्ष्मण परवाल, प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम के निर्देशन में पूर्ण किया गया है, तथा विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि हेतु वर्ष 2012-13 में प्रस्तुत किया गया है।

****

'एस.ओ.एस.' बालग्राम के बालकों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

डॉ. कल्पना पारीख *

प्रस्तावना:-शिक्षा समाज की रक्षा एवं उत्थान का एक मात्र आधार है। बालक समाज, राज्य अथवा देश किसी के भी विकास एवं उत्थान का रहस्य उसकी शिक्षा है। शिक्षा के अनेक औपचारिक व अनौपचारिक अभिकरण है, जिसमें परिवार बालक की शिक्षा का प्रथम तथा सक्रिय अनौपचारिक अभिकरण है। परिवार में हम सम्बंधों की इस व्यवस्था को समझते है जो माता-पिता उसकी संतानों के मध्य पाई जाती है। अत: परिवारों में माता-पिता और संतानों के मध्य सम्बंधों की तथा एक-दूसरे के प्रति कर्तव्य की व्यवस्था होती है। इस प्रकार परिवार न केवल बालक की शिक्षा में वरन् उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

बालक में भाषा का अध्ययन ज्ञान, आचरण व व्यवहारों की नींव परिवार ही रखता है। परिवार में विशेषकर माँ का बालक के विकास और शैक्षिक प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान होता है। माँ का स्नेह, दुलार व प्रोत्साहन व्यक्तित्व का संतुलित विकास करने में उसे शैक्षिक उपलब्धि के शिखर पर पहुंचाने में प्रमुख भूमिका निभाता है।

वर्तमान शिक्षा शास्त्री पेस्तालॉजी, फ्रोबेल, मॉन्टेसरी, हैण्डरसन तथा रेमॉण्ट बालक के विकास में परिवार के संस्थान को सर्वोच्च मानते है। फ्रोबेल के अनुसार माताएं आदर्श अध्यापिकाएं तथा घर द्वारा प्रदत्त अनौपचारिक शिक्षा सर्वाधिक प्रभावशाली व स्वाभाविक है।

सर्व विदित है कि शिवाजी ने अपने पारिवारिक वातावरण में ही वीरता का पाठ पढ़कर जीवन भर साहस के साथ संघर्ष किया था। इस प्रकार गांधीजी ने भी अपने माता-पिता के आचरण से प्रभावित होकर सत्य, अहिंसा और प्रेम के सिद्धांतों को अपनाया था।

परिवार में माँ के प्रेम व दुलारभरी देखभाल बालक को आत्मिक संतोष व सुरक्षा प्रदान करती है जिससे बालक अपने मूल्यों के प्रति आश्वस्त होकर वह समूह के बीच अपने मूल्य के प्रति जागरूक रहता है।

एक सामान्य बालक के बाल्यकाल के अनुभव उन आधारभूत नियमों व मूल्यों को सीखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है जो कि उनके नैतिक स्तर के रूप में पाए जाते है। आदर्श परिवारों के सदस्य बालक में जीवनउपयोगी मूल्यों व आदर्शो का विकास करने के लिए इन मान्यताओं के प्रति बचपन में पड़े संस्कार अमिट होते है। परिवार के सदस्यों के नैतिक व चारित्रिक गुणों का प्रत्यक्ष प्रभाव बालक के नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ता है और उसमें जाति व राष्ट्र के प्रति प्रेम के स्थाई भाव बनते है, जिसमें बालकों में आज्ञापालन, कर्तव्य पालन, सत्यता, ईमानदारी, परोपकार, स्वतंत्रता, सहिष्णुता, बलिदान, अहिंसा जैसे उत्तम गुणों का विकास होता है जो चारित्रिक व नैतिक दृढ़ता के लिए आवश्यक है।

आदर्श परिवारों के सदस्य बालक में जीवनपयोगी मूल्यों व आदर्शो का विकास करने के लिए सदैव सजग व प्रत्यनशील रहते है, परिवारजनों के मूल्यों से सम्बंधित इन मान्यताओं के प्रति बचपन में पड़े संस्कार अमिट होते है। परिवार के सदस्यों के नैतिक व चारित्रिक गुणों का प्रत्यक्ष प्रभाव बालक के नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ता है और उसमें जाति व राष्ट्र के प्रति प्रेम के स्थायी भाव बनते है जिससे बालकों में आज्ञापालन, कर्तव्यपालन, सत्यता, ईमानदारी, परोपकार, स्वतंत्रता, सहिष्णुता, बलिदान, अहिंसा जैसे उत्तम गुणों का विकास होता है जो चारित्रिक व नैतिक दृढ़ता के लिए आवश्यक है। बालक विद्यालय के नियम- जैसे समय से विद्यालय जाना, गुरूओं का आज्ञापालन, समय-समय पर आयोजित सांस्कृतिक तथा साहित्यिक कार्यक्रमों में भाग लेना, अध्ययन कार्यो में रूचि लेना, विद्यालय का काम समय पर पूरा करना आदि परिवार की प्रेरणा से ही सीखता है।

इसके विपरित परिवारों का दूषित वातावरण जैसे परिवारजनों की कथनी करनी में अंतर, उनके बीच असहयोग, घृणा एवं असंभावित व झगड़ालू प्रवृति के माता-पिता इत्यादि का बच्चों पर अस्वास्थ्यकर प्रभाव पड़ता है। परिणामस्वरूप बालक अपराधिक प्रवृतियों की ओर बढ़ता है, जिससे उसमें नैतिक मूल्यों का यथोचित विकास नहीं होता है ।

इसके अलावा अभिभावकों द्वारा बालकों को अधिक दण्ड देने व उनसे निरंकुश व्यवहार करने पर भी वे भयभीत, विद्रोही हो जाते है, जिससे बालकों में आत्मग्लानी, असुरक्षा व हीन भावना उत्पन्न हो जाती है जो उनमें नकारात्मक सोच व तनाव बढ़ाती है।

आवश्यकता एवं महत्व:-

बालक की व्यक्तिगत देखभाल की गुणवत्ता उसके भविष्य के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जब भी हम बालक के बारे में सोचें तो हमें उसकी आधारभूत आवश्यकताओं के बारे में पहले सोचना चाहिए क्योंकि इस समय वह विकास की अवस्था में है।

अत: बालक के जीवन के सभी प्रमुख आयामों का विकास भली प्रकार तभी संभव होगा जब उसके विकास की शुरूआत सुरक्षात्मक व उत्साहित वातावरण में करें। हालांकि विकास के आनुवांशिक व वातावरणीय दोनों ही कारक प्रभावित करते है। यदि इन दोनों कारकों में तारतम्यता नहीं है तो बालक के विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। आनुवांशिकता बालक के सामर्थ्य की पूर्ण संभावना का विकास करता है। शिक्षा के क्षैत्र में बालक की विकास अवस्था में पारिवारिक वातावरण के महत्व को देश-विदेश के सभी शिक्षा शास्त्रियों ने स्वीकार किया है।

परिवार का प्रदत्त वातावरण दो रूपों में कार्य करता है एक तो प्राथमिक शिक्षा संस्था के रूप में दूसरे शिक्षा के अनौपचारिक अभिकरण के सहयोगी के रूप में। बालक में शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने में भी परिवार प्रमुख रूप से सहयोग करता है। इस प्रकार बालक के पूर्ण विकास में अभिभावकों की स्वीकृति व्यक्तिगत देखरेख, सजगता, स्वयं की क्षमताओं व योग्यताओं के प्रति सकारात्मक सोच विकसित करती है। जबकि नकारे गए बालकों में अभिभावकों की अस्वीकृति से स्वयं के प्रति नकारात्मक सोच बनती है जिससे उन बालकों का विकास व उपलब्धियां प्रभावित होती है। अत: बालक को उन्नति के शिखर पर पहुंचाने के लिए अभिभावकों व संरक्षकों का प्रोत्साहन बहुत आवश्यक है। इसके सम्बंध में बेबेरला निस टूरल ने 1974 में कहा कि हम अपनी अनेक भूलों पर पश्चाताप कर सकते है किंतु बालक को उसकी विकासवस्था की नींव के समय नकारना हमारा सबसे बड़ा अपराध है लेकिन बालक का बचपन इंतजार नहीं कर सकता है और हम उसे आज के नाम के लिए उत्तर नहीं दे सकेंगे। यही वह समय है जब हम उसके विकास को सही दिशा दे सकते है, इस समय बालक में इंद्रिय ज्ञान विकसित होता है जिससे वह वातावरण के प्रति चौकन्ना रहता है एवं जिज्ञासा रहती है।

इसलिए शोधकर्ता को यह जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हुई है कि बालग्राम

* वरिष्ठ व्याख्याता, शिक्षा एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)

के परिवारों में परवरिश व उनका प्रशिक्षण प्राप्त हो रहा है या नहीं? इन बालकों व सामान्य परिवार के बालकों की अनत:क्रिया के अवसरों में क्या अंतर है? इन बालकों व सामान्य परिवार के बालकों की अन्त:क्रिया के अवसरों में क्या अंतर है? यदि एस.ओ.एस. बालग्राम व सामान्य परिवारों के पारिवारिक वातावरण में क्या अंतर है तो सम्बंधित परिवार के बालकों के विकास व व्यवहारों की दशाओं में भी भिन्नता होगी।

इसी दृष्टिकोण से दो भिन्न वातावरण में परवरिश पाने वाले बालकों के नैतिक मूल्यों तथा आपसी सम्बंधों को अध्ययन के लिए शोध समस्या के रूप में चुनने की आवश्यकता अनुभव की गई।

समस्या का औचित्य:-

संसार में बच्चों की जनसंख्या वाला दूसरा बड़ा देश भारत है। देश की पूर्ण जनसंख्या में से 0 से 19 वर्ष के बालकों की 50 प्रतिशत सहभागिता है। आज के ये बालक कल के राष्ट्र निर्माता है, मानवीय ऊर्जा का एक बड़ा शक्तिशाली स्त्रोत है एवं ये भारत के सामाजिक व आर्थिक भविष्य के भी निर्माता है। किंतु दुर्भाग्यवश इन बालकों की बड़ी जनसंख्या का एक प्रमुख भाग अनाथ, असहाय व तिरस्कृत तथा नकारे गए बालकों का है एवं देश के बढ़ते हुए शहरीकरण व पाश्चात्यकरण से इन बालकों की संख्या बढ़ती जा रही है। यदि हम मानवता के इतने बड़े भाग को नकारते है, तो देश के भविष्य के लिए अनेक समस्याएं उत्पन्न हो जाएगी। अत: समाज के लोगों में इन बालकों के पूर्ण विकास के लिए अपने कर्तव्यों को निभाने व उपलब्धि हेतु अभिप्रेरित करने में यह अध्ययन महत्वपूर्ण है क्योंकि आज का बालक ही कल के राष्ट्र का भविष्य है।

अनेक सामाजिक स्वयंसेवी संस्थाएं, राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएं घर से वंचित/तिरस्कृत/नकारे गए/असहाय बालकों की देखभाल कर रही है। इनमें प्रमुख एम.ओ.एस. बालग्राम संस्था है जो भारत में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व की उन आत्माओं की रक्षा करने के लिए प्रयत्नशील है जो बाल्यकाल से स्वजनों के सानिध्य व दूलार से वंचित है। जिससे यह बालक भी अपनी शक्ति की संभावना का पूर्ण विकास कर सकें। बालक के जीवन से सम्बंधित सभी आयामों के पूर्ण विकास में संस्था द्वारा प्रदत्त पारिवारिक वातावरण प्रमुख है। इन बालकों के जीवन की उपलब्धियों व शैक्षिक प्रगति में संस्थागत पारिवारिक वातावरण शिक्षा के अनौपचारिक अभिकरण की भूमिका निभाता है, जो विद्यालय के सहयोगी के रूप में कार्य करता है जिसका बालक के विकास पर स्थाई प्रभाव पड़ता है।

अत: संस्था में रह रहे बालकों के नैतिक मूल्यों का सामान्य बालकों में विकास से तुलनात्मक अध्ययन करना आवश्यक है, क्योंकि देश के विकास में ये बालक भी उतने ही भागीदार है जितने कि सामान्य बालक है।

इस संदर्भ में भी इस समस्या का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन करना आवश्यक है। समाज के लोगों में इन बालकों के प्रति अपनी कर्तव्य भावना को जागृत करने में अभिभावकों व अध्यापकों, शिक्षाविदों तथा मनोवैज्ञानिकों, अनुसंधानकर्ता को बालकों के कल्याण के लिए योजना बनाने के निर्देश देने व सहयोग प्रदान करने की दृष्टि से भी पीएच.डी. स्तर पर इस समस्या में अध्ययन की प्रासंगिकता स्पष्ट है।

समस्या अभिकथन:-

प्रस्तुत अध्ययन द्वारा शोधार्थी यह जानना चाहती है कि एस.ओ.एस. बालग्राम संस्था द्वारा प्रदत्त पारिवारिक वातावरण किस हद तक सामान्य परिवारों सामान्य परिवारों के समान बालकों के नैतिक मूल्यों के सम्बंधों के विकास में शिक्षा के प्राथमिक व अनौपचारिक अभिकरण की भूमिका निभा रहा है। एस.ओ.एस. बालग्राम की पालन-पोषण की पद्धति का इसमें परवरिश पा रहे बालकों के जीवन के विभिन्न आयामों (नैतिक मूल्यों) के विकास पर कैसा प्रभाव पड़ता है? का अध्ययन करने हेतु शोधकर्ता ने निम्नलिखित शोध विषय का चयन किया। ''एस.ओ.एस. बालग्राम के बालकों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन।''

शोध के उद्देश्य:-

1. एस.ओ.एस. बालग्राम के बालकों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन।

शोध की परिकल्पनाएं- प्रस्तुत शोध की समस्या हेतु निम्नलिखित परिकल्पनाएं निर्धारित की गई है-1. सम्प्रत्यात्मक 2. क्रियात्मक

1. **सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना:-** एस.ओ.एस. बालग्राम (संस्थागत) व सामान्य परिवार के बालकों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।
   - ✱ **क्रियात्मक 1.1-** संस्थागत व सामान्य परिवारों के बालकों के नैतिक मूल्यों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं है।
   - ✱ **क्रियात्मक 1.2-** संस्थागत व सामान्य परिवारों के बालकों के नैतिक मूल्यों की विचलनशीलता में सार्थक अंतर नहीं है।
2. **सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना-** सामान्य परिवारों के बालकों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर लिंगभेद के कारण सार्थक प्रभाव है।
   - ✱ **क्रियात्मक 2.1-** सामान्य परिवारों के लड़के-लड़कियों के नैतिक मूल्यों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं है।
   - ✱ **क्रियात्मक 2.2-** सामान्य परिवारों के लड़के-लड़कियों के नैतिक मूल्यों की विचलनशीलताओं में सार्थक अंतर नहीं है।
3. **सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना-** संस्थागत की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर लिंगभेद के कारण सार्थक प्रभाव पड़ता है।
   - ✱ **क्रियात्मक 3.1-** एस.ओ.एस. बालग्राम (संस्थागत) के लड़के-लड़कियों के नैतिक मूल्यों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं है।
   - ✱ **क्रियात्मक 3.2-** संस्थागत के लड़के-लड़कियों के नैतिक मूल्यों की विचलनशीलताओं में सार्थक अंतर नहीं है।
   - ✱ **क्रियात्मक 4.1-** संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़के-लड़कियों के नैतिक मूल्यों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं है।
   - ✱ **क्रियात्मक 4.2-** संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़के-लड़कियों के नैतिक मूल्यों की विचलनशीलताओं में सार्थक अंतर नहीं है।
5. **सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना-** संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कियों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।
   - ✱ **क्रियात्मक 5.1-** संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कियों के नैतिक मूल्यों पर प्राप्तांकों के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं है।
   - ✱ **क्रियात्मक 5.2-** संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कियों के नैतिक मूल्यों की विचलनशीलताओं में सार्थक अंतर नहीं है।

अनुसंधान की विधि:-

अनुसंधान की प्रकृति तथा प्रस्तावित उद्देश्य के स्वरूप को देखते हुए शोधकर्ता द्वारा सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। भारत में एस.ओ.एस. बालग्राम की 32 संस्थाएं कार्यरत है, जिसमें बालकों की जनसंख्या लगभग 2,00,000 हैं। शोधकर्ता के लिए सम्पूर्ण जनसंख्या का अध्ययन करना संभव नहीं था। इसलिए दिल्ली व जयपुर (उत्तर प्रदेश) के एस.ओ.एस. व दो सामान्य राजकीय विद्यालय जयपुर (राजस्थान) के बालकों को सद्दोश्य

न्यादर्श विधि द्वारा 269 लड़कों व लड़कियों को अध्ययन हेतु न्यादर्श में चुना है, जिनकी आयु 12 से 18 वर्ष है। प्रस्तुत शोध में लिए जाने वाले न्यादर्श का स्वरूप निम्न प्रकार निर्धारित किया गया है-

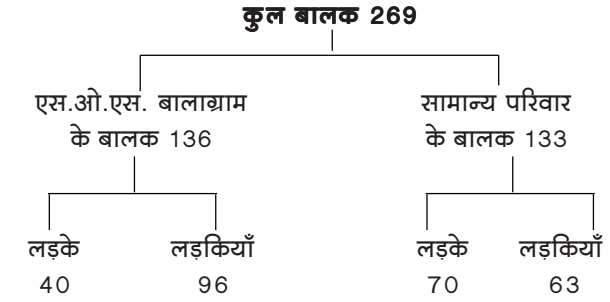

चर : प्रस्तुत अध्ययन में निम्नलिखित स्वतंत्र व आश्रित चर है

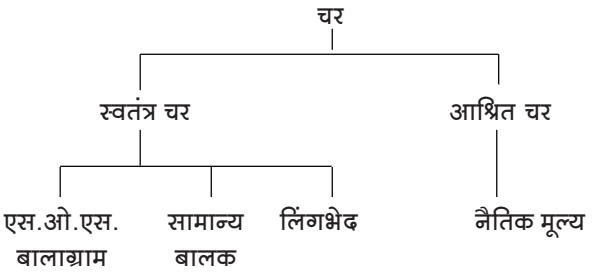

न्यादर्श सारणी निम्न प्रकार है-

क्र.	संस्था का नाम	लड़के	लड़कियां	कुल
1	एस.ओ.एस. बालग्राम, जयपुर	15	40	55
2	एस.ओ.एस. बालग्राम, दिल्ली (बयाना)	25	56	81
3	पं.दीनदयाल उपाध्याय, रथखाना जयपुर	70	-	70
4	बालिका राजकीय विद्यालय, बनीपार्क जयुपर	-	63	63
	कुल	110	159	269

प्रयुक्त उपकरण:- शोध विषय तथा अध्ययन उद्देश्यों के आधार पर इस अध्ययन की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत उपकरणों का प्रयोग किया गया है- ***नैतिक मूल्यों के मापन हेतु:- लीना जे.पूरनचन्द वनस्थली विद्यापीठ द्वारा मूल्य मापनी।***

प्रयुक्त सांख्यिकी:-

प्रस्तुत अधययन से सम्बंधित परीक्षणों का विधिवत प्रशासन करके विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में प्रयुक्त की गई सांख्यिकी इस प्रकार है- 1. मध्यमान 2. 'टी' अनुपात परीक्षण 3. 'एफ' रेशा

शोध में प्रयुक्त शब्दावली की व्याख्या:-

1. **एस.ओ.एस.:-** एस.ओ.एस. का अर्थ हमारी आत्माओं की रक्षा है। (सेव ऑवर सोल्स) जीवात्मा परमात्मा का अंश है। आत्मा अविनाशी, अप्रमेय, नित्य स्वरूप अजन्मा, शास्वत है व मनुष्य में श्रेष्ठ आत्मा है इसकी रक्षा करना।
2. **एस.ओ.एस. बालग्राम:-** एक ऐसी संस्था जो राजनीति से पूर्णत: स्वतंत्र है, जिसमें परिवारों से वंचित/अनाथ/असहाय/तिरस्कृत व नकारे गए 8-10 बच्चे, माँ द्वारा निर्मित छोटे-छोटे 20 परिवारों के घरों का परिसर एस.ओ.एस. बालग्राम कहलाता है।
3. **पालन-पोषण पद्धति:-** शिशु जन्म से असहाय होता है, यदि उसकी देखभाल न की जाए तो उसका जीवित रहना असंभव है।
4. **एस.ओ.एस. बालक:-** एस.ओ.एस. बालग्राम के घरों के विभिन्न परिवारों में परवरिश पाने वाले लड़के-लड़कियां।
5. **सामान्य बालक:-** प्रकृति प्रदत्त परिवारों में अपने स्वजनों, अभिभावकों के सानिध्य में पालन-पोषण प्राप्त करने वाले लड़के-लड़कियां
6. **वंचित,नकारे, तिरस्कृत बालक:-** वे बालक जो जानबूझकर या किसी घटनावश अपने अभिभावकों द्वारा उपेक्षित किए गए है।
7. **जीवन के आयाम:-** बालक के व्यक्तित्व के वे सभी पक्ष जो उसकी पहचान, उपलब्धियों व सफल सामाजिक जीवन के लिए आवश्यक है। प्रस्तुत अध्ययन में नैतिक मूल्यों को सम्मिलित किया गया है।
8. **नैतिक मूल्य:-** नैतिक मूल्यों से तात्पर्य हमारा उन मूल्यों से है जिन्हें मानवीय व्यवहारों से सम्बंधित करने पर जीवन उज्जवल तथा स्तर को संस्कृति ने किया है या जो हमारी सांस्कृतिक मान्यताओं, परम्पराओं व आदर्शो के अनुकूल हो।

एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका के अनुसार:-

नैतिकता व्यक्तित्व का एक ऐसा गुण है जिसे अर्जित किया जाता है, यही कारण है कि इसे हम प्राय: व्यवहार से अनुभव करते हैं। बालक में अच्छी या बुरी भावना का विकास स्वत: नहीं होता, वरन् यह तो अपने मित्रों, संगी-साथियों, अपने से बड़ों या परिवार के दूसरे सदस्यों के सम्पर्क में आकर नैतिक मूल्यों को समझने का तथा उनके अनुकरण का प्रयास करता है। बालक इतना परिपक्व नहीं होता है कि वह स्वतंत्र नैतिक मूल्यों का निर्माण कर सकें या स्वयं नैतिक बन जाए इसके लिए सतत् प्रयत्नों और नैतिक शिक्षा की महती आवश्यकता है। नैतिकता ही मानवता है बिना नैतिकता के न मानवीय, न सामाजिक और न राष्ट्रीय विकास संभव है।

किंग्सले डेविड:-नैतिकता के अंतर्गत किसी नियम को मानने के प्रति मनोभाव और कुछ मात्रा में व्यक्ति के व्यवहार से सम्बंधित चारित्रिक दृढ़ता तथा सिद्धांतों का पालन मानते है। नैतिक मूल्यों के विकास का सम्बंध उन प्रक्रियाओं से है जिसके द्वारा बालक अच्छे-बूरे सिद्धांतों में अंतर करने में समर्थ होता है।

नैतिकता आत्मचेतना से प्रेरित होती है इसका आधार मनुष्य जीवन के मूल्य होते है इसमें स्थायित्व की भावना होती है। जो व्यवहारिक नियमों पर अधिक जोर देते है इसमें सत्य, न्याय, त्याग,ईमानदारी, पवित्रता, सच्चाई, कर्तव्य परायणता, सहिष्णुता, राष्ट्रप्रेम, सादगी जैसी धारणा सम्मिलित है ये किसी वर्ग के सामाजिक प्रतिमान से सम्बंधित है ये बौद्धिक और दार्शनिक स्तर पर आवश्यक नीतिशास्त्र सम्बंधित गतिविधियों में वास्तविक व्यवहार को दर्शाता है।

अध्ययन की परिसीमायें:-

1. वर्तमान अध्ययन हेतु भारत के उत्तर, पश्चिम, पूर्व, दक्षिण में से केवल उत्तर क्षेत्रीय (दिल्ली व जयपुर के) एस.ओ.एस. बालग्राम को ही चुना है।
2. केवल जयपुर के 2 राजकीय विद्यालयों के लड़के व लड़कियों को ही न्यादर्श में सम्मिलित किया है।
3. पर्याप्त संख्या में बालक उपलब्ध न होने के कारण न्यादर्श में 269 बालकों का ही चयन किया गया।
4. एस.ओ.एस. बालग्राम में लड़कों की संख्या व उपस्थित कम होने के कारण न्यादर्श में अधिक लड़कियों को सम्मिलित किया गया।
5. न्यादर्श में 12 से 18 वर्ष के बालकों का ही चयन किया गया है।
6. अध्ययन हेतु केवल नैतिक मूल्यों को ही सम्मिलित किया गया है।
7. बालकों का पालन-पोषण करने वाली अनेक संस्थाओं में से केवल एस.ओ.एस. बालग्राम संस्था को ही अध्ययन हेतु चुना गया है।
8. एस.ओ.एस. बालग्राम के लड़के व लड़कियों का केवल सामान्य परिवारों में परवरिश पाने वाले लड़के-लड़कियों से ही तुलनात्मक अध्ययन किया है।

शोध के निष्कर्ष:- शोधकर्ता द्वारा अपने उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए बनाई गई परिकल्पनाओं के आधार पर निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए:-

सम्प्रत्यात्मक परिकल्पना-1

एस.ओ.एस. बालग्राम व सामान्य परिवार के बालकों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

परिवार की पालन-पोषण पद्धति का उनके बालकों के नैतिक मूल्यों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 1.1 व 1.2 का प्रयोग किया जो अस्वीकृत हुई है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि एस.ओ.एस. बालग्राम व सामान्य परिवार के बालकों की पालन-पोषण पद्धति उनके नैतिक मूल्यों के विकास को प्रभावित करती है। एस.ओ.एस. बालग्राम के बालकों में नैतिक मूल्यों का विकास अपेक्षाकृत कम है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि एस.ओ.एस. बालकों को बालग्राम परिवरों में आदर्शात्मक नैतिक मूल्य प्रदान, अनुकरणीय पारिवारिक वातावरण प्राप्त नहीं हो रहा है, न ही इस हेतु सकारात्मक प्रयास किए जा रहे है। सामान्य परिवार में परवरिश पाने वाले बालकों के नैतिक मूल्यों के विकास में अधिक विचलनशीलता इन बालकों की पारिवारिक पृष्ठभूमि में अंतर को दर्शाती है, अर्थात अलग-अलग घरों में परिवारजनों, अभिभावकों के नैतिक व चारित्रिक मान्यताओं में अंतर है।

समप्रत्यात्मक परिकल्पना-2

सामान्य परिवारों के बालकों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर लिंगभेद के कारण सार्थक प्रभाव पड़ता है।

सामान्य परिवारों का पालन-पोषण का लिंगभेद के कारण उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 21. व 2.2 का प्रयोग किया है, जो अस्वीकृत हुई है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि परिवारों के पालन-पोषण पद्धति का बालकों के नैतिक मूल्यों के विकास पर लिंगभेद के कारण प्रभाव पड़ता है।

लड़कियों में नैतिक मूल्यों का उच्च स्तरीय विकास हो रहा है। इससे ऐसा प्रतित होता है कि लड़कियों के घरों का पारिवारिक वातावरण अपेक्षाकृत अधिक मूल्य प्रधान है एवं अनुशासन व अभिभावकों की आज्ञापालन में लड़कियां लड़कों की अपेक्षा अधिक गंभीर भी होती है। लड़कों में नैतिक मूल्यों सम्बंधी आचरण, व्यवहार की मान्यताओं एवं चारित्रिक स्तर में भिन्नता ही प्रमुख कारण है।

समप्रत्यात्मक परिकल्पना-3

संस्थागत बालकों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर लिंगभेद के कारण सार्थक प्रभाव पड़ता है।

संस्थागत परिवारों के बालकों की पालन-पोषण पद्धति का लिंगभेद के कारण उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 3.1 व 3.2 का प्रयोग किया है, जो अस्वीकृत हुई है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि पालन-पोषण पद्धति बालकों के नैतिक मूल्यों के विकास को लिंगभेद के कारण प्रभावित करती है। अर्थात संस्थागत के लड़के व लड़कियों के नैतिक मूल्यों के विकास में अंतर है। इसका संभावित कारण यह है कि लड़कियां, लड़कों की अपेक्षा अधिक आज्ञाकारी एवं कर्तव्यपरायण होती है और नियम पालन में गंभीर होती है।

लड़कों के नैतिक मूल्यों के विकास में नियम पालन में अधिक विचलनशीलता संभवत: संस्थागत के परिवार के सदस्यों या निर्देशकों के नैतिक आचरण व मान्यताओं में अंतर के परिणामस्वरूप हैं।

समप्रत्यात्मक परिकल्पना-4

संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

संस्थागत व सामान्य परिवारों के लड़कों की पालन-पोषण पद्धति का उनके लड़कों के नैतिक मूल्यों के विकास पर प्रभाव का अध्ययन करने के लिए दो नकारत्मक क्रियात्मक परिकल्पना 4.1 व 4.2 का प्रयोग किया है, जो अस्वीकृत हुई है। जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि संस्थागत व सामान्य परिवारों की पालन-पोषण पद्धति मूल्यों के विकास को प्रभावित करती है, अर्थात संस्थागत लड़कों में नैतिक मूल्यों का विकास अपेक्षाकृत कम है, अभिप्राय यह है कि संस्थागत के परिवारों में संस्थागत माँ की लड़कों में नैतिक मूल्यों के विकास के प्रति सजगता कम हैं। जिससे इन बालकों को मूल्य प्रधान अनुकरणीय पारिवारिक वातावरण उपलब्ध नहीं हो रहा है। सामान्य परिवारों के बालकों के नैतिक मूल्यों के विकास में अधिक विचलनशीलता संभवत: उनके अभिभावकों की मूल्य मान्यताओं व दृष्टिकोणों में अंतर के कारण है।

समप्रत्यात्मकता परिकल्पना-5

संस्थागत व सामान्य परिवारों की लड़कियों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

संस्थागत व सामान्य परिवारों की लड़कियों की पालन-पोषण पद्धति का उनके नैतिक मूल्यों के विकास पर अध्ययन करने के लिए दो नकारात्मक क्रियात्मक परिकल्पना 5.1 व 5.2 का प्रयोग किया है, जो अस्वीकृत हुई है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि सामान्य परिवार व संस्थागत की पालन-पोषण पद्धति मूल्यों के विकास को प्रभावित करती है, अर्थात संस्थागत लड़कियों में नैतिक मूल्यों का विकास अपेक्षाकृत कम है। इसका अभिप्राय यह है कि संस्थागत के घरों के पारिवारिक वातावरण में नैतिक मूल्यों की प्रधानता अपेक्षाकृत कम है।

संस्थागत लड़कियों के नैतिक मूल्यों में अधिक विचनलशीलता से ऐसा प्रतीत होता है कि संस्थागत के घरों की माँ की नैतिक मूल्य मान्यता, आचरण व व्यवहारों में अंतर हैं व लड़कियों में नैतिक मूल्यों के विकास हेतु किए गए प्रयासों में भी भिन्नता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. आसुबेल डी.पी. (1968), ''द साइकोलॉजी ऑफ मीनिंगफुल लर्निंग'' न्यूयार्क, ग्रीन एण्ड स्टोटेन.
2. आसुबेल डी.पी. एव. फिट्जगॅराल्ड (1962), ''जरनल ऑफ एजूकेशन एण्ड साइकोलॉजी'' 18(12).
3. आसुबेल डी.पी. एवं युसुफ (1963), ''रिव्यू ऑफ एजूकेशनल रिसर्च'', 24, पृष्ठ सं. 533-34.
4. अग्रवाल, वाई.पी., ''स्टैटिस्टिकल मेथड्स, कॉन्सेप्ट एप्लीकशन एण्ड कम्प्यूटेशन, सैकिण्ड एडिशन, स्अर्लिंग पब्लिशर्स प्रा. लि.
5. बूच, एम.बी, (1979), ''ए सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन'', बड़ौदा सेन्टर ऑफ एडवांस्ड स्टडी इन एजूकेशन, (सी.ए.एस.आई.).
6. बूच, एम.बी. (1972-78), '' सैकिण्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन''.
7. बूच, एम.बी. (1983), 'थर्डसर्वे इन एजुकेशन', राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
8. बूच, एम.बी. (1983-88), ''फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन'', वोल्यूम 1 व 2.
9. बूच, एम.बी. (1988), ''फिफ्थ सर्वे इन एजुकेशन''.
10. भाटिया, ए, तथा कुलश्रेष्ठ, एस. (1999-2000), ''विज्ञान-कक्षा ७ , श्रीयान्स पब्लिकेशन प्रा. लि., जयपुर.
11. बुद्धिसागर मीना एवं सन्सनवाल, डी,एन, (1989), ''इफेक्टिवनेस ऑफ एडवांस ओरगेनाईज़र मेटिरियल इन टर्म्स ऑफ स्टूडेन्ट एचीवमेन्ट एण्ड देयर रिएक्शन'' जरनल ऑफ इंस्टिट्यूट ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, 4, पृष्ठ सं. 27-32.
12. बासु, सी.के. (1974), ''एजुकेशनल टेक्नोलॉजी एण्ड डेवलपमेन्ट'' प्रोसीडिंग ऑफ सिक्स्थ एन्युअल कॉन्फ्रेन्स, न्यू दिल्ली इंडियन एसोसिएशन ऑफ प्रोग्राम्ड लर्निंग.
13. बोरिन, रोबरेटा करोल, पी.एच.डी. (1982), ''द इफैक्ट ऑफ एडवांस ओरगेनाइज़र्स ऑफ रिंगलेन्थ ऑन द कॉम्प्रहेन्सन एण्ड रिटेन्शन ऑफ सेवन्थ ग्रेड स्टूडेन्टस, द यूनिवर्सिटी ऑफ सिकोसिन, डिसर्टेशन एब्सट्रेक्ट इन्टरनेशनल, वॉल्यूम 43, नं. 7, 1983, पृष्ठ सं. 2215.
14. बेस्ट, जे.डब्ल्यू. (1963) ''रिसर्च इन एजुकेशन प्रिन्टिस हॉल ऑफ इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड, न्यू दिल्ली, पृष्ठ सं. 50-54.

आधुनिक भारत के निर्माण में समावेशी विकास

डॉ. रिखबचंद्र जैन*

भारत की 11वीं पंचवर्षीय योजना के अंत में सकल घरेलू उत्पाद की औसत वृद्धि दर 8.2% रहने की संभावना है तथा 12वीं पंचवर्षीय योजना में स.घ.उ. की वृद्धि दर 9.0% प्राप्त करने का लक्ष्य है जिसकी विषय वस्तु त्वरित, सतत् और अधिक समावेशी विकास है।

आधुनिक भारत के निर्माण में 9% आर्थिक विकास की दर को प्राप्त करने के साथ सामाजिक संकेतक जैसे-जीवन प्रत्याशा, शिशु मृत्यु दर, स्वच्छता, बाल टीकाकरण, शिक्षा, महिला साक्षरता दर आदि क्षेत्रों में विकास करना है अर्थात समावेशी विकास करना है।

समावेशी विकास:-

ऐसी विकास प्रक्रिया से है जिसके अंतर्गत समाज के सभी वर्गो (उच्च, मध्यम, एवं निम्न) राष्ट्रों के सभी भागों (शहरी एवं ग्रामीण) तथा अर्थव्यवस्था के सभी घटकों यथा-कृषि, उद्योग एवं सेवा की समुचित भागीदारी हो ताकि विकास से प्राप्त होने वाले लाभों में सभी को उचित हिस्सा मिले।

एक ऐसा विकास जो हमारी जनसंख्या के सभी वर्गो विशेषकर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्गो को लाभ पहुंचाना सुनिश्चित कर सकें और साथ ही पर्यावरण की रक्षा भी कर सकें।

समावेशी विकास की आवश्यकता:-

1. **असंतुलित विकास:-** कृषि क्षैत्र में 58.7% जनसंख्या लगी हुई है, परंतु राष्ट्रीय आय में योगदान मात्र 16% है कृषि की विकास दर 3.2% है जबकि सेवा क्षैत्र की विकास दर 10%, अर्थात असंतुलिक विकास है
2. **बेरोजगारी में वृद्धि:-** आज भी रोजगार की वृद्धि दर 1.2% से कम है इसके कारण धन व सम्पत्ति का केंद्रीकरण हुआ है।
3. **क्षेत्रीय असमानता में वृद्धि:-** शहरी एवं ग्रामीण क्षैत्रों के विकास स्तर में भारी असमानता है, गुजरात, पंजाब, हरियाणा राज्यों के विकास स्तर में अंतर है।
4. **सामाजिक आधारभूत संरचना:-** शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल इत्यादि की गुणवत्ता की समस्या।
5. इसके अतिरिक्त नक्सलवाद, अलगाववाद, क्षेत्रीयतावाद, अपराधीकरण में वृद्धि इत्यादि।

इसी परिप्रेक्ष्य में समावेशी विकास का मुख्य ध्यान समाज के वंचित वर्गो (जैसे-गरीब, दलित, महिलाएं, वृद्ध एवं विकलांग इत्यादि) राष्ट्र के पिछड़े प्रदेशों (बीमार राज्य, उत्तर पूर्व के राज्य) तथा अर्थव्यवस्था के पिछड़े घटकों (जैसे, कृषि, लघु एवं कुटिर उद्योग) के प्रति होता है।

समावेशी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के प्रयास:-

01. दसवी योजनावधि में कृषि विकास 2.2% प्रतिवर्ष था जो नई कृषि नीति से 3.5% हो गया इस दिशा में राज्य व केंद्र सरकारों के प्रयास सफल रहे।
02. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के क्रियान्वयन से ग्रामीण क्षेत्रों में मजदूरी में वास्तविक वृद्धि हुई।
03. शिक्षा और स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है जिससे प्राथमिक विद्यालयों में बच्चों की भर्ती की स्थिति उत्साहजनक है।
04. लड़के और लड़कियों के बीच अंतर में भी कमी आ रही है। अर्थात लिंगानुपात बढ़ रहा है।
05. राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन 2007 से संस्थागत प्रसवों की संख्या का प्रतिशत 2006 के 54 से बढकर 2009 में 73 तक पहुंच चुका है इसी अवधि में शिशु मृत्यु दर 57 से गिरकर 50 पर आ गई साथ ही राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना भी है।(शिशु मृत्यु दर 1000 महिलाओं पर)
06. ग्रामीण अधोसंरचना विकास पर केंद्रीत भारत निर्माण कार्यक्रम ने ग्रामीण सड़कों, ग्रामीण विद्युतीकरण, सिंचाई, ग्रामीण पेयजल, ग्रामीण आवास के क्षेत्र में भारी संसाधन मुहैया कराए है।
07. पिछले वर्षो में सार्वजनिक और निजी क्षेत्र की भागीदारी (पी.पी.पी.) में अनेक परियोजना सफलतापूर्वक की है पी.पी.पी. में भारत को दूसरा स्थान है।
08. राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना से समस्त गांवों का विद्युतीकरण करते हुए समस्त ग्रामीण परिवारों को विद्युत कनेक्शन देना है।
09. एकीकृत बाल विकास सेवा:- आंगनवाड़ी केंदों के माध्यम से बच्चों को शिक्षा, पोषण, प्रतिरक्षा एवं दवाईयाँ इत्यादि की सुविधा दी जा रही है।
10. सर्व शिक्षा अभियान एवं मिड-डे-मिल:- बच्चों के कुपोषण की समस्या हल होगी।
11. राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन:- सभी घरों तक शुद्ध एवं स्वच्छ पेयजल पहुंचाने के लिए।
12. राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना:- लक्षित व्यक्तियों को केवल 30 रू. के लागत मूल्य पर एक स्मार्ट कार्ड जारी किया जाएगा, जिससे उन्हें 30,000/- रू. की चिकित्सा सेवा निशुल्क मिलेगी।
13. सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने हेतु इंदिरा गांधी वृद्धावस्था पेंशन योजना, इंदिरा गांधी विधवा पेंशन योजना, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विकलांग पेंशन योजना लागु की है।

इसके अतिरिक्त अन्य कार्य भी जारी है।

चुनौतियाँ:-

01. शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने की चुनौति।
02. स्वास्थ्य अधोसंरचना में भारी अंतर को पाटने की दिशा में काम करना है।
03. भूमि व जलसंसाधनों के क्षरण पर नियंत्रण पाना है।
04. योजना में जम्मू कश्मीर की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करना।
05. आर्थिक मंदी के कारण बेरोजगारी की समस्या को हल करना।
06. नक्सलवाद एवं अलगाववाद से प्रभावित क्षेत्रों में कानून की व्यवस्था।
07. नीतियों में परस्पर विरोधाभास यथा कृषि विकास दर ऊँची रखना परंतु निवेश कम करते जाना।
08. स्त्री पुरूष अनुपात की समस्या।
09. सामाजिक पिछड़ापन एवं रूढिवादिता।

* सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

10. इसके अतिरिक्त ऊर्जा का प्रबंधन, जल, अर्थव्यवस्था का प्रबंधन, शहरीकरण के चलते उत्पन्न समस्या एवं पर्यावरण संरक्षण की समस्या इत्यादि।

समाधान:-

01. पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत बनाया जाना चाहिए।
02. सामाजिक योजनाओं के लिए धन आवंटन में वृद्धि, इसके लिए निवेश वृद्धि के अनुकूल माहौल बनाए।
03. सुशासन (पारदर्शिता, उत्तरदायित्व, भागीदारिता) की आवश्यकता ताकि कार्यक्रमों को प्रभावी रूप से लागु किया जा सकें।
04. गैर सरकारी एवं स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका को बढावा।
05. ऊर्जा क्षैत्र के लिए पनबिजली, सौर ऊर्जा, परमाणु ऊर्जा, ताप ऊर्जा, पवन ऊर्जा को विकसित करने हेतु पर्याप्त निवेश ताकि ऊर्जा लागत कम आए।
06. सरकार को अपनी नीतियों से ऐसा वातावरण पैदा करना, जिससे किसान एवं उद्यमी की रचनात्मक भावनाओं को पूरा समर्थन एंव प्रोत्साहन मिले।
07. निर्धन एवं कमजोर वर्गो की पैसा कमाने की क्षमता में सीधे तौर में वृद्धि करना।
08. प्रत्येक नागरिक को स्वास्थ्य, शिक्षा, कौशल विकास, स्वच्छ पेयजल और स्वच्छता की स्वीकार्य गुणवत्ता वाली अनिवार्य लोक सेवाएं आसानी से सुलभ हो सकें।
09. राजनीति का निजी और सरकारी निवेश के प्रति सकारात्मक सोच होनी चाहिए।
10. समावेशी विकास हेतु दीर्घकालिक संभावनाओं पर विचार करना चाहिए।
11. शिक्षा ऐसी हो जिससे रोजगार मिलने में आसानी हो।
12. स्वास्थ्य अधोसंरचना में भारी अंतर को दूर करने के लिए सार्वभौमिक स्वास्थ्य कार्यक्रम की प्रणाली को अपनाना होगा।
13. सार्वजनिक व निजी क्षेत्र की भागीदारी (पी.पी.पी.) को बढावा दिया जाए।
14. वामपंथी, उग्रवाद, जनजाति बहुल क्षैत्रों में भी बेहतर बुनियादी ढांचा दिया जाए।
15. घरेलु निवेश स्तर को बढाया जाए ताकि विकास की राह में मांगपक्ष की बाधाएं दूर हों।
16. केंद्र प्रायोजित योजनाओं का पुनर्गठन किया जाए।
17. माल व सेवा कर (जी.एस.टी.) को लागु किया जाए ताकि आर्थिक कुशलता बढेगी और राजस्व संग्रह में वृद्धि होगी।
18. कृषि विकास हेतु मिट्टी के पोषक तत्वों को बढाने पर ध्यान देना होगा तथा उन्नत किस्म की खेती के लिए पूरा पैकेज अपनाए इसके लिए कृषकों को तमाम सुविधाएं उपलब्ध करानी चाहिए।
19. परियोजनाओं को जमीनी स्तर पर लागू करने से कुशलता में सुधार होगा।

संदर्भ:-

1. योजना जनवरी 2013
2. लोक निर्माण नवम्बर 2009 नीमच-कल्याणी मेघवाल
3. www.patrika.com

****

''वैदिक वाड्.मय में मानवमूल्य''
'वेदोऽखिलों धर्ममूलम्'

डॉ. भावना श्रीवास्तव*

वैदिक वाड्.मय भारतीय संस्कृति का मूलाधार है। भारतीय धर्म और सभ्यता का विशाल सामान्य श्रुति की आधार भूमि पर विकसित हुआ है। भारतीयों के आचार-विचार, रहन-सहन तथा धर्म-कर्म के सम्यक ज्ञान के लिए वैदिक वाड्.मय के ज्ञान विशेष की आवश्यकता है। भारतीय आध्यात्मिक जीवन तथा साँस्कृतिक समुत्कर्ष को प्रकट करने वाले वेद युग युगान्तर से ही न केवल भारत अपितु विश्व के ज्ञान पिपासुओं की मानसभूमि को अपनी संगीत समता, भावपूर्णता, परिष्कृत भाषा तथा छन्दों की श्रुतिमधुर लहरियों से रसाप्ज्ञावित कर रहे है। काठक, मेत्रायणी और तैत्तिरीय संहिता में वेद शब्द की व्युत्पित्ति इस प्रकार से की गई है -

वेदेन वैधैदेवा असुराणां वित्त वेद्यमविन्दत तेद्धदस्य वेदत्वम्।
तैत्तिरीय ब्राह्मण के अनुसार
वेदिदैवेभ्यो नियालत। तां वेदानान्व विन्दन्।
वेदेन वेदि विविदुः प्रथिवीम्।[1]

अर्थवेद एवं परवर्ती साहित्य में वैदिक वाड्.मय के ज्ञापक वेद शब्द विद् धातु लाभ, सत्ता, ज्ञान और विचारणादि अर्थो में पृथक निर्दिष्ट है। जैसा कि ऋक प्रातिशाख्य के अन्तर्गत विष्णुमित्र की वर्गद्धयवृत्ति से स्पष्ट है -

विद्यन्ते ज्ञायन्ते लभयन्ते एभिधर्मादिपुरूषार्थः इति वेदाः।[2]

स्वामी दयानन्द के अनुसार -

विदन्ति नामन्ति विधन्ते भवन्ति विन्दन्ति सर्वा
विद्यायैर्यषु वा स वेदः।

अर्थात जिनके द्धारा हम सभी विधाओं को जानते हैं और जिनमें सभी विधाऐं निहित हैं, वे वेद है। वैदिक संहिताओं में ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद, अर्थर्ववेद इन चारों वेदो की गणना की गयी है।

मानव जीवन में आचार-विचार, रहन-सहन, धर्म-कर्म, शिक्षा- दीक्षा, विधि-निषेध आदि जीवन मूल्यों को भली भाँति समझने के लिए वेदों का ज्ञान विशेष आवश्यक है एवं तत्पश्चर्या से साक्षात्कृत धर्मा ऋषियों के द्धारा अनुमूत विमल ज्ञान राशि का नाम वेद है। मूल्यों से तात्पर्य है नैतिक, धार्मिक एवं सामाजिक गुण जो मनुष्य को सत्य, शिव तथा सुन्दरम् की प्राप्ति कराते हैं। हमारा आचरण हमारे मूल्यों से प्रेरित होता है।

धार्मिक दृष्टि से वेद भारत में सर्वोपरि है। ये हिन्दू धर्म के मूल स्त्रोत हैं - 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्'[3] वस्तुतः वेद समस्त धर्मो के श्रेष्ठ तत्वों से संवलित है, इसलिये महाराज मनु ने इन्हें सत्य सनातन धर्म का मूल कहा है। ऋग्वेद के पुरूष सूक्त में -

तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् से ज्ञात होता है कि - सृष्टि व्यवस्था के प्रथम नियमों की संरचना भी वेदों में निरूपित है।[4]

मनुस्मृति से ज्ञात होता है कि सृष्टि व्यवस्था के प्रथम नियमों की संरचना भी वेदों में निरूपित है।[5] सामाजिक, साँस्कृतिक और राजनैतिक दृष्टि से उपयोगी विभिन्न संस्थाओं का मूल आनिर्भाव भारतीय परम्परा के अनुसार वेदों से ही हुआ है।

वेदों में सूत्रात्मक पद्धति से जीवन को सुखमय बनाने के लिये अनेकानेक विषयों की शिक्षा प्राप्त होती है। यथा - सत्यं वद, धर्मचर, स्वध्यायान्माप्रयदः।[6]

वर्तमान समय में समाज में पारिवारिक विघटन का प्रत्यक्ष निदर्शन होता है। गुरू - शिष्य के बीच परस्पर दूरियाँ बढ़ रही है। ऐसी विसंगति की स्थिति में तैत्तिरीय उपनिषद् में आचार्य द्धारा दीक्षान्त समारोह में शिष्यों को दिया गया उपदेश प्रत्येक विद्यार्थी के लिए, अनुकरणीय है -

'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्य देवो भव' के उपदेश से माता पिता के प्रति पुत्र का तथा आचार्य के प्रति शिष्यों के कर्तव्य बोध की शिक्षा दी गई माता-पिता और आचार्य के प्रति की जाने वाली सेवा सूश्रुषा रूपी कर्तव्य को शास्त्रकारों ने मातृ-पितृ और ऋषि की संज्ञा दी है। धर्मपालन प्रत्येक दशा में चाहे वह सामान्य हो या असमान्य स्थिति के लिये अवश्य करणीय है। ऋग्वेद में वर्णित शुनः शेष - से इसकी शिक्षा ग्रहण की जा सकती है। विद्यार्थी तब तक कुछ नहीं सीख सकता जब तक उसमें सीखने की प्रबल जिज्ञासा न हो। इस प्रकार जिज्ञासा का उत्कृष्ट उदाहरण स्वयं नचिकेता की यम जैसे गुरू के द्धारा अनेक प्रलोभन देने के उपरान्त भी नचिकेता विचलित नहीं हुआ और आत्मस्वरूप प्रकाशनार्थ निवेदन करता है।[7]

वरस्तु वरणीयः स एव में।

भारतीय संस्कृति में हिंसा, क्रूरता, अनाचारिता तथा विश्व- शत्रुता जैसे भावों का कभी कोई स्थान नहीं रहा है। यज्ञ के पर्याय के रूप में प्रयुक्त 'अध्वर' शब्द अर्थ और निर्वचन के द्धारा यही सिद्ध करता है, जिसमें कोई हिंसा का स्पर्श न हो। आत्मवत् सर्वभूतेषु का भाव सिद्धान्त दूसरों के प्रति वही व्यवहार करने की शिक्षा देता है जैसा कि हम अपने प्रति चाहते है। अतः अपने प्रतिकूल आचरण हम दूसरों के प्रति कभी न करें - 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्। इस मौलिक मानवमूल्य की शिक्षा का आधार वेद ही है।'

मानव जीवन के मूल्यों में प्रथम स्थान धर्म अर्थात् ज्ञान (शिक्षा)प्राप्त करना ही दूसरा स्थान अर्थ का आता है। वैदिक युग में आर्थिक व्यवस्था अत्याधिक विकसित प्रतीत होती है। अर्थवेदीय पृथ्वी सूक्त का ऋषियों मनीषियों द्धारा गुणगान यह सिद्ध करता है, उस युग में पृथ्वी सभी प्रकार के धन धान्यों से परिपूर्ण रही होगी। कृषि के साथ ही पशुपालन का अत्याधिक प्रचलन था। मुख्य पशुओं में गाय, भैंस, घोड़े, बकरियाँ सम्मिलित थे। ऋग्वेद के षष्ठ मंडल का एक सम्पूर्ण सूक्त[8] के मंत्रों में गायों की उपयोगिता का सविस्तार प्रतिपादन करता है तथा अर्थर्ववेद के अनेक सूक्तों में गाय की महिमा का सुविशद निरूपण किया गया है।[9]

वैदिक युग में एक सम्पन्न एवं समृद्ध अर्थ व्यवस्था विद्यमान थी ऋग्वेद में अग्नि से मंगल प्रार्थना करते हुए ऋषि अगस्त्य कहते है 'अग्ने नथ सुपथा राये अस्मान्। विश्वानि देव बयुनानि विद्धान।[10]'

है अग्नि देव! धर्म लाभ के लिये हमें सन्मार्ग से ले चलिए। वैदिक युग में परिवारों में सुख और सौमनस्य का स्वस्थ्य वातावरण दिखाई देता है। माता पिता के प्रेमपूर्ण अनुशासन में बालक और बालिकाओं के स्वाभाविक विकास के अवसर सुलभ थे। गृहिणी का परिवार में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान था।

* (डी.लिट्) प्राध्यापक संस्कृत, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

वेद का कथन हे कि कल्याणकारी पत्नी के कारण घर आनन्दमय स्वर्ग के समान होता है।

'अपा: सोममस्तमिन्द्र प्रयाहि कल्याणीर्जाय सुरणं गृहे ते।[11]'

परिवार में सभी एक दूसरे के प्रति मधुर व्यवहार करते थे। इसका मनोहारी बिम्ब अर्थवेद के सामनस्य सूक्त से प्रतिबिम्बित होता है।[12] पुत्र-पिता का अनुवर्ती हो और माता के सामनस्य हो। पत्नी पति से मुधुर वाणी में वार्तालाप करें। भाई-भाई से द्वेष न करें। बहिन से बहिन ईर्ष्या न करे। इस बात की पुष्टि आचार्य चाणक्य ने नीतिदर्पण में साधू रूप में की है।[13]

वैदिक युग में ना ही जाति को उचित सम्मान और अधिकार प्राप्त थे। ऋग्वेद में पृथिवी, उषा, सूर्या, अदिति, वक्य आदि नारियाँ है। इस युग में नारियों का देवियों के समान आदर किया जाता है।

मानव मूल्यों के अन्तर्गत अंतिम ध्येय मोक्ष है। अर्थववेद में ब्रह्मचर्य एवं तपस्या के द्वारा देवताओं को मृत्यु पर विजय प्राप्त की है।[14] यजुर्वेद के 40 वें अध्याय में कहा गया कि जो आत्मा का हनन करते हैं, वे लोग मृत्यु के बाद घोर अंधकार में प्रविष्ट होते हैं जो सर्वत्र आत्मा का अस्तित्व सभी प्राणियों में देखते है, एकत्व का दर्शन करते हैं, वे मोक्ष, शोक आदि से सर्वदा विमुक्त रहते है।[15]

इस प्रकार सम्पूर्ण वैदिक वाड्.मय में सूत्रात्मक शैली में प्रतिपादित शिक्षाएँ मानव मूल्यों, धर्म, अर्थ, काम ओर मोक्ष आदि के अन्तर्गत नैतिकता, आचार प्रणवता, सन्मार्ग गमिता, विधि-निषेध का ज्ञान, लौकिक और लोकोत्तर ऐहिक और आमुष्यिक के संदर्भ में शिष्यों द्वारा दी गई शिक्षा व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के उत्थान की दिशा को प्रशस्त करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

01- तैन्तिरीय सं - तैत्तिरीय ब्राह्मण।
02- तैत्तिरीयभाष्य भूमिका - पृ. 7
03- मनुस्मृति - 2-6
04- ऋग्वेद - 10-10-26
05- मनुस्मृति - 1-21
06- शतपथ ब्राह्मण - 11.5.61
07- तैत्तिरोपनिषद - शिक्षावली
08- ऋग्वेद - 6-28-5
09- ऋग्वेद - 6-54, अथर्ववेद - 9-7-26 तथा 2.34, 4-21, 5-8, 19, 6-31, 70, 7-75, 104, 9-7-12-41
10- ऋग्वेद - 1-189
11- ऋग्वेद - 3-5-3-6
12- अथर्ववेद - 3-30-2-3
13- चाणक्य नीति - दर्पण -2-3
14- अथर्ववेद - 11-5-19
15- शुक्ल यजुर्वेद - 40-3-7

****

''मध्यप्रदेश के आर्थिक विकास में लघु उद्योगों का योगदान (एक मूल्यांकनात्मक अध्ययन्)''

डॉ एस.के. शर्मा * डॉ गणेश प्रसाद दावरे ** डॉ एम.आर.महाले * **

प्रस्तावना :-

लघु उद्योगों के लिए अलग से औद्योगिक नीति की घोषणा सर्वप्रथम 6 अगस्त, सन् 1991 को की गई थी। लघु औद्योगिक इकाइयों में उन इकाइयों को सम्मिलित किया जाता है, जिनमें प्लाण्ट व मशीनरी में विनियोग 1 करोड़ रूपयें तक हो, लेकिन लेखन सामग्री, ड्रग एवं फार्मास्यूटिकल तथा लेख सामग्री के लिए यह सीमा 5 करोड़ रूपये है।

भारत में लघु औद्योगिक इकाइयों की संख्या वर्ष 2004-05 में 118.53 लाख थी। द्वितीयक क्षेत्र के विकस दर में वर्ष 2009-2010 से वर्ष 2010-11 में 7.60 प्रतिशत की वृद्धि अनुमानित है। प्रदेश की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है, जिसे विकास के उच्च स्तर पर ले जाने के लिए औद्योगिकीकरण नितांत आवश्यक है। प्रदेश की अर्थव्यवस्था ग्रामीण है जो कृषि से निकटता से जुड़ी है, फलस्वरूप ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों की विशेष भूमिका है।

वर्ष 2010-11 में कुल 19860 सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों की स्थापना की गई तथा 435.62 करोड़ रूपयें की पूँजी का निवेश किया गया एवं 43.30 हजार रोजगार उपलब्ध हुये। वर्ष 2011-12 में 14.56 हजार सूक्ष्म लघु उद्योगों की स्थापना हुई जिसमें 250.02 करोड़ रूपयें का पूँजी निवेश हुआ तथा 30.90 हजार लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया गया।

केन्द्र शासन की औद्योगिक उदारीकरण की नीति के फलस्वरूप प्रदेश में उद्योगों की स्थापना हेतु वर्ष 2007 से माह अक्टूबर 2011 तक की अवधि तक 179 आई.ई.एम. प्रस्ताव दाखिल हुये जिनमें पूँजी निवेश 102202 करोड़ रूपयें प्रस्तावित है।

मध्यप्रदेश भी आर्थिक सुधारों के इन प्रभावों से अछूता नहीं रहा है। मध्यप्रदेश भारत के हृदय स्थल के रूप में सुपरिचित है। यह राज्य पूर्णत: भू-आवेष्ठित है और देश के ठीक मध्य स्थित होने के कारण अपने नाम को चरितार्थ करता है। सर्वविदित है कि आर्थिक विकास एक दीर्घकालीन तथा निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। इसके अन्तर्गत विभिन्न अर्थव्यवस्थाएँ कृषि से औद्योगिक और औद्योगिक से सेवा क्षेत्र में विकास करती है।

उदारीकरण के पश्चात् मध्यप्रदेश ने भी अपना आर्थिक विकास किया। भारतीय अर्थव्यवस्था की तरह ही मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था में प्राथमिक क्षेत्र का योगदान शनै: शनै: घटता गया और द्वितीयक व तृतीयक क्षेत्र का योगदान बढ़ता गया।सन् 1960-61 में प्राथमिक क्षेत्र का योगदान सकल राज्य घरेलू उत्पाद में लगभग 60 प्रतिशत हुआ करता था जो सन् 2011-12 में घटकर केवल 20 प्रतिशत रह गया।

इसके विपरीत सेवा क्षेत्र का सकल राज्य घरेलू उत्पाद में लगभग अंतर लगातार बढ़ता जा रहा है, जो मध्यप्रदेश के आर्थिक सर्वेक्षण 2011-12 के अनुसार 47.41 प्रतिशत हो गया है। नि:सन्देह यह एक स्वागत योग्य परिवर्तन है। राज्य के इस आर्थिक विकास का एक पहलू और भी है। यह एक चिन्तनीय तथ्य है कि राज्य की लगभग 68 प्रतिशत जनसंख्या अभी भी 20 प्रतिशत अंशदान वाले प्राथमिक क्षेत्र पर प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से आश्रित है। यह राज्य की अर्थव्यवस्था की दोहरी प्रकृति को दर्शाता है।

प्रस्तुत आलेख में मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था के कुछ मुख्य क्षेत्र जैसे औद्योगिक विकास, लघु उद्योगों की स्थिति, जनसांख्यिकीय संकेतांक, मुख्य आर्थिक संकेतक, रोजगार एवं गरीबी तथा मानव विकास सूचकांकों का विश्लेषण किया गया है। प्रदेश में औद्योगिकरण को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से प्रदेश सरकार ने अक्टूबंर 2010 में उद्योग संवर्धन नीति 2010 जारी की है। यह नीति 5 वर्ष के लिए प्रभावशाली रहेगी।

लघु उद्योगों की परिभाषा :-

भारत में औद्योगिक मानचित्र लगातार परिवर्तित हो रहा है। परिचालन स्तर, प्रयुक्त तकनीक आदि की दृष्टि से इन उद्योगों के विभिन्न वर्ग विभाजन का आधार भी समय-समय पर बदलता रहा है।

यही कारण है कि लघु उद्योगों को देश में समय-समय पर विभिन्न आधारों पर परिभाशित किया जाता रहा है। वर्तमान परिभाषा सूक्ष्म (माइक्रो), लघु एवं मध्यम उद्यम विकास अधिनियम, 2006 की अधिसूचना के अनुसार उद्यमों को मुख्य रूप से दो श्रेणियों में विभक्त किया गया है यथा-

(क) विनिर्माण उद्यम तथा (ख) सेवा उद्यम

इन दोनों श्रेणियों को पुन: संयन्त्र एवं मशीनों में निवेश (विनिर्माण उद्यमों के लिए) अथवा उपस्करों (उन मामलों में जहां उद्यम सेवाएं उपलब्ध करा रहा है अथवा प्रदान कर रहा है) के आधार पर सूक्ष्म (माइक्रो), लघु एवं मझोले उद्यमों के रूप में निम्नवत वर्गीकरण किया गया है।

(क) विनिर्माण उद्यम :- 1. सूक्ष्म उद्यम-एक सूक्ष्म उद्यम वह है जिसमें प्लाण्ट एवं मशीनरी में निवेश 25 लाख रूपए से अधिक नहीं होता है। 2. लघु उद्यम- एक लघु उद्यम वह है जहाँ प्लाण्ट एवं मशीनरी में निवेश 25 लाख रूपए से अधिक परन्तु 5 करोड़ रूपए तक होता है। 3. मध्यम अथवा मझोले उद्यम-वह है जहां 5 करोड़ रूपए से अधिक और 10 करोड़ रूपए तक का निवेश होता है।

(ख) सेवा उद्यम :- 1. सूक्ष्म उद्यम-जहां उपकरों में निवेश 10 लाख रूपए से आगे नहीं बढ़ता। 2. लघु उद्यम-जहां उपकरणों में निवेश 10 लाख रूपए से अधिक परन्तु 2 करोड़ रूपए तक होता है। 3. मध्यम उद्यम-जहां उपकरणें में निवेश 2 करोड़ रूपए से अधिक परन्तु 5 करोड़ रूपए तक हो।

सामान्य रूप से लघु उद्योग शक्तिशाली मशीनों तथा उत्पादन की नवीनतम तकनीकों एवं विधियों तथा किराए के श्रम का प्रयोग करते है। बाजारों के लिए उत्पादन करने के साथ-साथ वे निर्यातोन्मुख वस्तुओं का भी उत्पादन करते है। ये पर्याप्त मात्रा में पूंजी निवेश कर स्थायी रूप से कार्य करते है।

लघु उद्योगों का महत्व :-

भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु उद्योगों के महत्व को निम्न तथ्यों से समझा

* प्राध्यापक ** प्राध्यापक *** सहायक प्राध्यापक, जवाहरलाल नेहरू शासकीय स्नातक महाविधालय, बडवाह (म.प्र)

जा सकता है–बेरोजगारी एवं अर्द्धबेरोजगारी दूर करने में सहायक। कृषि के सहायक धन्धे के रूप में उपयोगी। श्रम प्रधान होने के कारण छोटी पूँजी से इनका संचालन करना सम्भव है। छोटे उद्योग सम्पत्ति एवं आय के विकेन्द्रीकरण को प्रोत्साहित कर राष्ट्रीय आय के वितरण को समान बनाने में सहायक होते है। कृषि पर जनसंख्या के भार को कम करने में सहायक होते है। लघु उद्योगों को गाँवों एवं छोटे–छोटे कस्बों में भी स्थापित किया जा सकता है जिससे देश में उद्योगों के विकेन्द्रीकरण में सहायता मिलती है।

लघु एवं कुटीर उद्योग परम्परागत एवं कलात्मक वस्तुओं को संरक्षण प्रदान करते है। ये उद्योग शीघ्र उत्पादक होते है, इनकी स्थापना के लिए कम तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता होती है। इन उद्योगों द्वारा उत्पादित वस्तुओं के निर्यात से बहुमूल्य विदेशी मुद्रा प्राप्त की जा सकती है।

इन उद्योगों में आयात पर निर्भरता कम होती है एवं ये बड़े उद्योगों के सहायक एवं पूरक उद्योगों के रूप में कार्य कर सकते है। लघु एवं कुटीर उद्योग स्थानीय संसाधनों का उपयोग करते है।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि लघु एवं कुटीर उद्योग बडे पैमाने पर तत्काल रोजगार प्रदान करते है, राष्ट्रीय आय के अपेक्षाकृत अधिक न्यायपूर्ण वितरण का आश्वासन देते है, पूंजी एवं अन्य संसाधनों को प्रभावशाली ढंग से गतिमान करते है तथा स्थानीय संसाधनों का सर्वोतम ढंग से विदोहन करते है तथा इस तरह लघु एवं कुटीर उद्योग देश के सामाजिक और आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण स्थान बना चुके है।

लघु उद्योगों के महत्व को इसी बात से समझा जा सकता है कि ये उद्योग विनिर्माण क्षेत्र के सकल कारोबार का 39 प्रतिशत विनिर्माण निर्यात का लगभग 33 प्रतिशत तथा कुल निर्यात के 13 प्रतिशत से अधिक का योगदान करते है। लघु एवं कुटीर उद्योगों के महत्व के कारण ही इन्हें देश की औद्योगिक नीतियों में प्रमुख स्थान प्रदान किया गया है तथा वस्तुओं का उत्पादन इनके लिए सुरक्षित रखा गया है।

लघु उद्योगों की प्रमुख समस्याएँ :– लघु उद्योगों कों प्राय: निम्नलिखित समस्याओं का सामना करना पड़ता है :

- कच्चे माल की समस्या।
- उचित शर्तो पर समय से ऋण न उपलब्ध होने की समस्या होने तथा लागत ऊंची रहने की समस्या।
- परम्परागत तकनीकी के प्रयोग से उत्पादन की किस्म नीची होने तथा लागत ऊंची रहने की समस्या।
- लघु उद्योगों को उत्पाद को बेचने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।
- लघु उद्योगों को बड़े उद्योगों को अपने उत्पाद का उचित मूल्य नहीं मिल पाता
- प्रमापीकरण केअभाव मेंलघुउद्योगोंको उत्पाद का उचित मूल्य नहीं मिल पाता।
- सूचना एवं परामर्श के अभाव में ये उद्योग उन्नति नहीं कर पाते।
- इन उद्योगों को उचित मात्रा में सस्ती दर पर विद्युत शक्ति नहीं मिल पाती जिसके अभाव में इनका उत्पादन प्रभावित होता है।
- उद्यमियों को प्राय:प्रबन्ध एवं संगठन संबंधी विशेष प्रशिक्षण प्राप्त नहीं होता।
- इसके अतिरिक्त इन उद्योगों को परिवहन की सुविधाओं का अभाव, विज्ञापन की कमी, ऊंचे स्थानीय कर, तकनीकी ज्ञान का अभाव, अनुसंधान की कमी तथा उद्योगों के बीच आपसी संगठन का अभाव, आदि कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

साहित्य समीक्षा :–

रहीस सिंह (2011) कहते है कि अर्थव्यवस्था का तृतीयक क्षेत्र अर्थात सेवा क्षेत्र इस दौर में इस कदर हावी हो चुका है कि दुनिया के तमाम अर्थविद् और लगभग सभी देशों की सरकारें इसे ही आर्थिक विकास का वास्तविक पैमाना मानकर पूरा ध्यान इसी पर केन्द्रीत कर बैठी है। अर्थ व्यवस्था के दो महत्वपूर्ण प्रतिमानों (प्रथम –संसाधनों का आबंटन और द्वितीय आय पुर्नवितरण को आधार मानते हुए सिंह कहते है कि चीन के सकल घरेलू उत्पाद में सेवाओं का सेवाओं का योगदान मात्र 39.2 प्रतिशत है जबकि भारत में यह लगभग 55 प्रतिशत है, परन्तु फिर भी चीन की अर्थव्यवस्था, भारतीय अर्थव्यवस्था से कहीं ज्यादा मजबूत है। निष्कर्षत: शोधकर्ता कहते है कि सेवा क्षेत्र देश की अर्थव्यवस्था की बाहरी चमक को तो अवश्य बढ़ा रहा है परन्तु देश के समानार्थिक ढांचे को कमजोर कर रहा है।

अवधेश कुमार (2009), ने अपने आलेख ने कृषि को विकास की रीढ़ माना है इनके अनुसार स्वतंत्रता के बाद भारत में आर्थिक विकास का जो ढांचा विकसित हुआ संसाधनों को ध्यान में रखते हुए कृषि नीतियाँ बनाये तो इसमें न केवल धन की बचत होगी।

विकास कुमार सिन्हा (2012) अशिक्षा गरीबी व बेरोजगारी को प्रवासन का प्रमुख कारण मानते है। सिन्हा के अनुसार महानगरों का दिवा स्वप्न ही ग्रामीणों को गांवों से शहरी क्षेत्र की ओर आकर्षित करता है तथा जिन राज्यों में उग्रवाद फैला हुआ है। वहाँ पलायान की यह दर ज्यादा है। अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि बिहार, उड़ीसा, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ एवं मध्यप्रदेश में यह दर अधिक है।

अध्ययन के उद्देश्य :–

- मप्र के आर्थिक विकास में लघु उद्योगों की भूमिका का अध्ययन करना।
- बीते दो दशकों में मप्र में आर्थिक सूचकांकों में हुए परिवर्तन का अध्ययन।
- मप्र में लघु उद्योगों के कारण होने वाले आर्थिक, सामाजिक, विकास का अध्ययन करना।

अध्ययन की उपकल्पनाएँ :–

- मप्र में आर्थिक विकास के लिए लघु उद्योगों की विशेष भूमिका रही है।
- मप्र में लघु उद्योगों से लोगों को अधिक से अधिक रोजगार प्राप्त हुआ है।
- मप्र में लघु उद्योगों के लिए कच्चा माल प्राप्त हो रहा है।

अध्ययन की प्राविधि –

अध्ययन क्षेत्र – इस आलेख का अध्ययन क्षेत्र में सम्पूर्ण मध्यप्रदेश है, जिसमें विशेष तौर पर पीथमपुर एवं मंडीदीप को लिया गया है। मध्यप्रदेश एक ग्रामीण व कृषि अर्थव्यवस्था है। इस आलेख में लघु उद्योगों के विभिन्न प्रभावों के विश्लेषण के लिये अलग–अलग समानार्थिक संकेतकों का प्रयोग किया जा रहा है। सन् 2000 में विभाजन के पश्चात् आज मध्यप्रदेश लगभग 307 लाख वर्ग कि.मी. में फैला हुआ है। यह पूर्णत: भू–आवेष्ठित व किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से अछूता है। देश के मध्य स्थित होने के कारण यह अपने नाम को चरितार्थ करता है।

अध्ययन की विधि – प्रस्तुत आलेख में मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था का अध्ययन किया गया है। इस अनुसंधान प्रपत्र में विभिन्न प्रकार के तथ्यों जैसे रोजगार, निवेश, लघु उद्योगों की स्थापना एवं मध्यप्रदेश एवं भारत में रोजगार की वार्षिक विकास दर आदि के विश्लेषण किया जायेगा।

समंक संग्रहण – वस्तुत: यह एक विश्लेषणात्मक अध्ययन है जो द्वितीय समंको पर आधारित है। यह समंक सरकार (राज्य एवं केन्द्र) प्रकाशित विभिन्न सर्वेक्षणों यथा मध्यप्रदेश आर्थिक विकास सर्वेक्षण 2012 योजना कुरूक्षेत्र राज्य व राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट राष्ट्रीय प्रतिवर्ष सर्वेक्षण कार्यालय की अनेक रिपोर्ट से संग्रहित की गई है।

तालिका क्रमांक 1

मध्यप्रदेश में सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों की स्थापना, निवेश एवं रोजगार

क्रं.	वर्ष	स्थापित उद्योगों की संख्या	निवेश लाख रूपए में	रोजगार संख्या में
1	2007-08	18583	30648	46386
2	2008-09	20924	39931	47088
3	2009-10	19725	28287	41558
4	2010-11	19860	43562	43296
5	2011-12	14564	25002	30904

(स्त्रोत - म.प्र. का आर्थिक सर्वेक्षण 2011-12 अर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय म.प्र.)

उपरोक्त चित्र से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2007-08 में 18583 से बढ़कर वर्ष 2010-11 में 19860 सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों की स्थापना हुई जो वर्ष 2009-10 में स्थापित उद्योगों 19725 से 0.68% अधिक है। वर्ष 2011-12 माह दिसम्बर 2011 तक 14564 सूक्ष्म एवं लघु उद्योग स्थापित हुऐ। इसी प्रकार वर्ष 2010-11 में 43562 लाख रूपये की पूंजी निवेश सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों में किया गया जो वर्ष 2009-10 में अधिक है। निवेशित राशि 28287 से 54.00 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2011-12 के माह दिसम्बर 2011 तक 25002 लाख रूपये का पूंजी निवेश किया गया है। तालिका से स्पष्ट है कि रोजगार संख्या में वर्ष 2010-11 में लघु एवं सूक्ष्म उद्योगों में 43296 रोजगार निर्मित किये गये जो कि वर्ष 2009-10 में निर्मित रोजगार 41558 से 4.18 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2011-12 के माह दिसम्बर 2011 तक 30904 रोजगार निर्मित किये गये है। तथापि वर्ष 2007-08 एवं 2008-09 की तुलना में रोजगार सृजन में कमी आयी है।

मध्यप्रदेश में रोजगार एवं गरीबी

म.प्र. की अर्थव्यवस्था में विकास दर शुरूआत से ही मध्यम रही है। सन् 1990 के बाद इस विकास दर में कुछ तेजी अवश्य देखी जा सकती है जो अगले दशक में भी यथावत है। विकास की इस तेज रफ्तार के पीछे गैर-कृषि क्षेत्र का बहुत बड़ा योगदान है जो सैद्धान्तिक स्तर पर सत्य भी है। गैर-कृषि क्षेत्र में विकास होने से राज्य की ग्रामीण जनसंख्या ने शहरों की ओर रोजगार के लिये पलायन प्रारंभ कर दिया।

तालिका क्रमांक 2

मध्यप्रदेश एवं भारत में रोजगार की वार्षिक औसत दर

Sr.	Area	Time Period	M.P.	India
1.	Rural	1983-84 to 1993-1994	1.9	1.6
		1993-94 to 1999-2000	1.4	1.3
2.	Urban	1983-84 to 1993-1994	3.3	2.9
		1993-94 to 1999-2001	3.3	2.4
3.	Combined	1983-84 to 1993-1994	2.2	2.1
		1993-94 to 1999-2001	1.8	1.6

उपरोक्त तालिका के अधार पर यह कहा जा सकता है कि म.प्र. में 3.3 प्रतिशत की दशकीय वृद्धि के साथ रोजगार की दर में बढ़ोत्तरी हुई। शहरों में यह रोजगार की दर राष्ट्रीय स्तर से भी अधिक रही। प्रयुक्त तालिका से स्पष्ट है कि म.प्र. में कृषि आश्रित जनसंख्या में 1980 से 1990 के दशक तक कोई परिवर्तन या प्रवास की प्रवृति नहीं है लेकिन 1990-91 के बाद आर्थिक सुधारों से जनसंख्या के इस अंश में लगभग 5 प्रतिशत की कमी हुई जो गैर कृषि क्षेत्र में रोजगार व आजीविका हेतु माइग्रेट कर गये।

मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था में कृषि का अंशदान लगातार कम होता जा रहा है परन्तु इससे भी बड़ी चिन्तनीय बात यह है कि अब भी प्रदेश की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा कृषि (68.7) प्रतिशत पर ही आश्रित है। यदि म.प्र. की राष्ट्रीय स्तर पर तुलना करे तो हम पाते है कि 1980-81 में राष्ट्रीय स्तर पर गैर कृषि क्षेत्र का योगदान 64 प्रतिशत था जो बढ़कर 2010-11 लगभग 85 प्रतिशत हो गया है। वहीं दूसरी ओर म.प्र. में यह परिवर्तन या परिवर्तन की रफ्तार अभी भी बहुत धीमी है।

निष्कर्ष :- कृषि प्रधान वर्षा आधारित अर्थव्यवस्था को विकास के उच्च स्तर पर ले जाने के लिए औद्योगीकरण आवश्यक है। इससे अर्थव्यवस्था का विविधीकरण होता है, तथा वर्षा पर निर्भरता कम होती है। कृषि उत्पादो के मूल्य वर्धन की सुविधा उपलब्ध होती है तथा कृषि उत्पादन के लिए आदान प्राप्त होते है। साथ ही कृषि पर रोजगार के लिए निर्भरता कम होती है।

राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में द्धितीयक क्षेत्र (उद्योगों) का योगदान वर्ष 2004-05 के 27.15 प्रतिशत की तुलना में बढ़कर वर्ष 2009-10 में 29.70 प्रतिशत तथा वर्ष 2010-11 के त्वरित अनुमानो के अनुसार 29.54 प्रतिशत की विनिर्माण पंजीकृत एवं गैर पंजीकृत क्षेत्र में गत वर्ष की तुलना में 2010-11 त्वरित के दौरान क्रमश: 5.27 एवं 6.15 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई। मध्यप्रदेश में लघु उद्योगों की स्थापना वर्ष 2007-08 में 18583 से बढ़कर वर्ष 2010-11 में 19860 सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों की स्थापना हुई जो वर्ष 2009-10 में स्थापित उद्योगों 19725 से 0.68 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2011-12 माह दिसम्बर 2011 तक 14564 सूक्ष्म एवं लघु उद्योग स्थापित हुऐ। मध्यप्रदेश में लघु उद्योगों में निवेश वर्ष 2010-11 में 43562 लाख रूपये की पूंजी निवेश सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों में किया गया जो वर्ष 2009-10 में अधिक है। निवेशित राशि 28287 से 54.00 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2011-12 के माह दिसम्बर 2011 तक 25002 लाख रूपये का पूंजी निवेश किया गया है। सूक्ष्म एवं लघु उद्योगों में निर्मित रोजगार वर्ष 2010-11 में लघु एवं सूक्ष्म उद्योगों में 43296 रोजगार निर्मित किये गये जो कि वर्ष 2009-10 में निर्मित रोजगार 41558 से 4.18 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2011-12 के माह दिसम्बर 2011 तक 30904 रोजगार निर्मित किये गये है। तथापि वर्ष 2007-08 एवं 2008-09 की तुलना में रोजगार सृजन में कमी आयी है।

सन्दर्भ सूची :-

- सिंह रहीस (2011) तृतीयक क्षेत्र स्थिर निभीताके निहीतार्थ योजना अंक 9 वर्ष 55, पृष्ठ क्रमांक 9-13।
- मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण (2011-12) अर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय (म.प्र.)
- यादव सुबह सिंह (1991) भारत में आर्थिक नियोजन कृष्ठ क्रमांक 25-28।
- दास राधिका (2001) - ''विगत पांच दशकों में म.प्र. में सरंचनात्मक परिवर्तन तथा आर्थिक विर्षमताओं की समीक्षा'' म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पृष्ठ क्रमांक 1-13।
- घोष पी. प्रभात (2005) स्ट्रक्चर ऑफ मध्यप्रदेश इकानॉमी प्री एण्ड पोस्ट लीबरइजोन इकानॉमिक एवं पोलीटिकल विमली, पृष्ठ क्रमांक 5029-5037।
- मिश्रा डॉ. जे.पी. ''अर्थशास्त्र'' (2010) साहित्य भवन सिकन्दरा औद्योगिक क्षेत्र आगरा 282007 (उ.प्र.)
- रामनरेश पाण्डे.-विश्व व्यापार संगठन तथा भारतीय अर्थव्यवस्था
- बिजनेश इन्वायरमेंट -के.चिदम्बरम
- डॉ नागर-भारतीय अर्थव्यवस्था
- डॉ. शशिकिरण नायक-म.प्र. का आर्थिक विकास
- B-Mohanan-Globalization of indian economy

उज्जैन संभाग के कृषि वित में सहकारी बैंको के प्रदर्शन की क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको से तुलना

खुशबू राठी * डॉ. सुरेश कटारिया **

भारत में कृषि एक व्यवसाय या उद्योग के रूप में न होकर एक जीवन पद्धति के रूप में भारतीय जीवन का आधार, आजीविका, आश्रय, जीवनशैली, संस्कृति या परंपरा का संवाहक और यहॉ तक की धार्मिक आस्था का विषय रही है। पंडित जवाहर लाल नेहरू ने भारतीय कृषि के संबंध में कहा था कि ''कृषि भारतीय संस्कृति का मूल है और सभी संस्कृतियों की जन्नी है।'' अत: कृषि भारत के नियोजित एवं स्थाई आर्थिक विकास समृद्धि और खुशहाली की सभी कार्यनीतियों का मूल आधार है और सदैव रहेगी।

देश में तीव्र गति से बढती हुई जनसंख्या के साथ साथ आवश्यकताओं की मांग में भी वृद्धि हो रही है जिसके समाधान हेतु यह अनुभव किया गया कि हमें औद्योगिक विकास के साथ साथ कृषि क्षेत्र में भी समान विकास करना होगा तभी हमारी बढती हुई आवश्यकताओ की पूर्ति होगी और हम आर्थिक रूप से सुदृढ़ हो पाऍगे एवं कृषि तथा उद्योग भारत की जनसंख्या के संतुलित विकास में सहयोगी हो सकेंगे।

कृषि में चूंकि स्वयं पूंजी निर्माण की क्षमता कम रहती है अत: बाहरी वित्त की आवश्यकता होती है। दमष में कृषि एवं ग्रामीण आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वाणिज्य बैंक, सहकारी बैंक एवं क्षैत्रिय ग्रामीण बैंक कृषि वित्त प्रदान करती है ये बैंक अल्पकालीन, मध्यकालीन दीर्घकालीन ग्रामीण साख की व्यवस्था करती है।

सहकारी बैंको की स्थापना एवं उद्देश्य – सन् 1904 में भारत में सहकारिता आंदोलन का सूत्रपात हुआ और सहकारी साख अधिनियम पारित हुआ। देश के सर्वांगीण विकास के लिए आवश्यक था कि. शहरी और ग्रामीण दोनो क्षेत्रों को समान्तर रूप से विकसित किया जाए क्योंकि अनेक आवश्यकताओ के लिए दोनों क्षेत्रों की एक दुसरे पर निर्भरता है। इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य किसानों कारीगरों तथा सीमित साधनों वाले व्यक्तियों में बचत, स्वयं सहायता तथा सहकारिता की भावना को जाग्रत करना था जिससे वे गरीबी से ऊबर सके।

सहकारी बैंको की कार्य प्रणाली लाभ रहित हानि रहित सिद्धांत पर आधारित है इसका उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना नही है। इसलिये ये बैंकें बुनियादी बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराने पर अधिक ध्यान देते है। इन बैंको द्वारा ग्राहको को बचत खाता, चालू खाता, सुरक्षित जमा लॉकर, ऋण आदि सेवाए प्रदान की जाती है ।

कृषि आधारित गतिविधियों जैसे खेती, पशु पालन, दुग्ध उत्पादन, हैचरी, वैयक्तिक ऋणो के साथ साथ स्वरोजगार योजनाओ का भी कार्यान्वयन सहकारी संस्थाओ का कार्य है। सहकारी बैंक सहकारी समिति अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत होते है। सहकारी बैंको का विनियमन भारतीय रिजर्व बैंक तथा बैंककारी विनियमन अधिनियम 1949 तथा बैंकिंग विधी सहकारी समिति अधिनियम 1965 द्वारा होता है।

क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको की स्थापना एवं उद्देश्य– क्षैत्रीय ग्रामीण बैंक अधिनियम 1976 के तहत 6 क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको की स्थापना के साथ इनका प्रारंभ हुआ। प्रत्येक क्षैत्रीय ग्रामीण बैंक एक अनुसूचित वाणिज्य बैंक अथवा राज्य सरकारी बैंक द्वारा प्रायोजित होता है ऐसे बैंको पर केंद्र सरकार संबंधित राज्य सरकार एवं प्रायोजक बैंक का 50 15 35 के अनुपात संयुक्त स्वामित्व होता है। इनकी अधिकृत पूंजी 5 करोड रू तथा प्रदत्त पूंजी 1 करोड हो सकती है।

इन बैंको का कार्य क्षेत्र किसी राज्य में एक या अधिक जिलो वाले विशिष्ट क्षेत्रों तक सीमित होता है।ये बैंक अपने कार्य क्षेत्र में विशेष कर छोटे व सीमांत किसानों, कृषि, श्रमिकों, ग्रामीण कारीगरो, छोटे उद्यमकर्ताओं और व्यापार तथा उत्पादक कार्यकलापो में लगे हुए कम साधन वाले व्यक्तियो को ऋण व अग्रिम प्रदान करते है । इनके द्वारा दिए जाने वाले ऋणो पर ब्याज दरें किसी भी विशिष्ट राज्य की सहकारी संस्थाओ की प्रचलित दरो से अधिक नही होती है। 34 विकासखंड से युक्त उज्जैन संभाग में 6 जिले रतलाम, मंदसौर, नीमच, देवास, उज्जैन तथा शाजापुर सम्मिलित है मार्च 2011 कि स्थिति के अनुसार उज्जैन संभाग में कुल 691 बैंक शाखाऐ हैं जिसमें सर्वाधिक शाखाऐ वाणिज्यिक बैंक की है जिसकी संख्या 403 है ।

इसके पश्चात् जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक की 124, क्षैत्रीय ग्रामीण बैंक की 123 तथा जिला सहकारी कृषि ग्रामीण विकास बैंक की 41 शाखाएँ हैं। संभाग में बैंको द्वारा प्रदत्त कृषि वित्त का विवरण सारणी क्रमांक 1 में प्रस्तुत है ।

सारणी क्रं. 1 से स्पष्ट होता है की वर्ष 2006.2007 से 2010.11 तक 5 वर्षो की अवधि में बैंको ने कुल 1163927.61 लाख रू का कृषि वित्त प्रदान किया जिसमें से सहकारी बैंको ने 418406.78 लाख रू देकर 35.94 एवं क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको ने 160397.13 लाख रू देकर 13.79 : का कृषि वित्त प्रदान किया है। सहकारी बैंक एवं क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको की जिलेवार प्रदत्त कृषि वित्त कि तुलनात्मक स्थिति ;2006.07 से 2010.11 सारणी क्रं. 2 से प्रदर्शित होती है।

सारणी क्रं. 2 से स्पष्ट होता है कि सहकारी बैंक तथा क्षैत्रीय ग्रामीण बैंक द्वारा कृषि वित्त सभी जिलो में प्रदान किया गया है सहकारी बैंक द्वारा सबसे ज्यादा कृषि वित्त शाजापुर जिले में एवं क्षैत्रीय ग्रामीण बैंक द्वारा सबसे ज्यादा कृषि वित्त देवास जिले में प्रदान किया गया है।

तुलनात्मक रूप से देखने पर यह पता चलता है की संभाग के देवास जिले के अतिरिक्त सभी जिलो में सहकारी बैंको द्वारा प्रदत्त कृषि वित्त अधिक है संभाग में सहकारी एवं क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको के कृषि वित्त के लक्ष्य एवं उनकी उपलब्धि का विवरण सारणी क्रं. 3 में प्रदर्शित है।

सारणी क्रं. 3 से संभाग में वितरित कृषि वित्त के लक्ष्य एवं उपलब्धि की जानकारी मिलती है। वर्ष 2006–07 से 2010–11 तक की 5 वर्ष की अवधि में सहकारी बैंको द्वारा कृषि वित्त के लक्ष्य 344052.85 लाख रू थे। इन बैंको ने 418406.78 लाख रू कृषि वित्त में प्रदान किया। क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको द्वारा कृषि वित्त के लक्ष्य 128789.29 लाख रू थे। इन बैंको ने 160397.13 लाख रू कृषि वित्त में प्रदान किया। सहकारी बैंको ने क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको से 258009.65 लाख रू अधिक वित्त प्रदान किया है।

* शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द शास. वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) ** प्राध्यापक वाणिज्य शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

निष्कर्ष :-

कृषि वित्त का संस्थागत ऋण प्रवाह जिलेवार प्रवाह तथा कृषि वित्त के लक्ष्य एवं उपलब्धि के विवरण को देखकर स्पष्ट रूप से यह कहा जा सकता है कि उज्जैन संभाग के कृषि वित्त में सहकारी बैंकों का प्रदर्शन क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको से बेहतर है। सहकारी बैंको ने क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको से लगभग 22.15 प्रति अधिक कृषि वित्त प्रदान किया है किन्तु देश अभी भी खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर नही है अत:सहकारी बैंको एवं क्षैत्रीय ग्रामीण बैंको से और अधिक कृषि वित्त एसी योजनाओ के साथ अपेक्षित है जिससे 1 करोड 20 लाख श्रम शक्ति से जुडे बेरोजगार युवाओं को भूमि उपलब्ध कराकर उन्हें कृषि से जोड़ा जा सके जिससे खाद्यान्न की समस्याओ को दूर किया जा सकें।

संदर्भ :-

1. योजना पत्रिका
2. दैनिक भास्कर
3. बैंकिंग चिंतन अनुचिंतन
4. नाबार्ड वार्षिक रिपोर्ट
5. बजट समीक्षा
6. भारतीय अर्थव्यवस्था- रूद्र दत्त के.पी.एम.सुन्दरम्
7. ''कुरूक्षैत्र'' ग्रामीण विकास मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली।

सारणी क्रं. 1

कृषि वित्त का संस्था गत ऋण प्रवाह

(राशि: लाख रूपयों में)

क्रं.	संस्थागत साख के स्त्रोत	2006-07	2007-08	2008-09	2009-10	2010-11	योग
1.	वाणिज्य बैंक	70789.39	82029.15	101096.19	127172.33	200595.32	581682.38
2.	सहकारी बैंक	49160.46	66957.88	63506.61	96117.98	142663.85	418406.78
3.	जिला सहकारी कृषि ग्रामीण विकास बैंक	1445.66	451.16	565.47	674.96	304.07	3441.32
4.	क्षैत्रीय ग्रामीण बैंक	21064.18	27951.11	30181.62	36617.54	44582.68	160397.13
5.	योग	142459.69	177389.30	195349.89	260582.81	388145.92	1163927.61

(स्त्रोत: नाबार्ड)

सारणी क्रं. 2

संभाग में जिलेवार ऋण प्रवाह

(राशि: लाख रूपयों में)

क्रं.	जिला	सहकारी बैंको द्वारा प्रदत्त कृषि वित्त	क्षैत्रिय ग्रामीण बैंको द्वारा प्रदत्त कृषि वित्त
1.	उज्जैन	68096.15	37241.37
2.	देवास	50568.73	58944.53
3.	शाजापुर	94256.87	32905.86
4.	रतलाम	90736.42	11680.50
5.	मंदसौर	79924.54	11042.20
6.	नीमच	34824.07	8582.67
	योग	418406.78	160397.13

(स्त्रोत: लीड बैंक द्वारा प्रकाशित वार्षिक साख योजना)

सारणी क्रं. 3

कृषि वित्त के लक्ष्य व उपलब्धि

(राशि: लाख रूपयों में)

क्रं.	वर्ष	सहकारी बैंक के लक्ष्य	सहकारी बैंक की उपलब्धि	क्षैत्रिय ग्रामीण बैंक के लक्ष्य	क्षैत्रिय ग्रामीण बैंक की उपलब्धि
1.	2006-07	46597.62	49160.46	16627.26	21064.18
2.	2007-08	56990.52	66957.88	19378.90	27951.11
3.	2008-09	67717.43	63506.61	23655.13	30181.62
4.	2009-10	76230.32	96117.98	30722.17	36617.54
5.	2010-11	96516.96	142663.85	38365.83	44582.68
	योग	344052.85	418406.78	128789.29	160397.13

(स्त्रोत: संभाव्यता युक्त ऋण योजना)

धर्मनिरपेक्षता के लिए कट्टरवाद और आतंकवाद एक चुनौती है

डॉ. प्रदीपसिंह राव *

''आज सम्पूर्ण मानवता आतंकवाद से त्रस्त है..... इसका खतरा और बढ़ेगा क्योंकि हम तकनीकी का इस्तेमाल मनुष्य की सृजनात्मक ऊर्जा को जाग्रत और दिलों के फासले को दूर करने के बजाय केवल भौगोलिक दूरी को दूर करने के लिए कर रहे हैं। यही वजह है कि नस्ली, मजहबों और सांस्कृतिक वर्चस्ववादी आतंकवाद बढ़ रहा है।'' **–प्रो. यशपाल**

केन्याई राजधानी नैरोबी में 26/11 जैसा मुम्बई हमला सितम्बर 2013 में दोहराया गया। 68 से अधिक लोग मारे गए। आतंक के निशाने पर पाकिस्तान के चर्च पर हमले में 78 से अधिक लोग मारे गए। दोनों आतंकी हमलों में धार्मिक कट्टरता और मजहबी जुनून की समानता दिखाई दी। नैरो में गैर मुसलमानों पर हमला हुआ वहीं पाकिस्तान में सिर्फ एक गैर मुस्लिम धर्म विशेष के लोगों को चर्च में प्रार्थना के समय मार डाला गया। इन नृशंस हत्याओं के पीछे अंतर्राष्ट्रीय आतंकवादी संगठन शामिल थे। आधुनिक विश्व में आतंकवाद का दबंग और विध्वंसकारी स्वरूप हर देश के लिए चुनौति बन चुका है। विश्व की बड़ी–बड़ी ताकतें आज इस आतंक के सामने इतनी असहाय है कि प्रथम–द्धितीय विश्वयुद्ध में भी इतनी विवश नहीं रही होगी। लोकतांत्रिक वैश्वीकरण की दशा में यह एक ऐसी समस्या है जिसे समूचे विश्व को एकतर होकर हल करना होगा।

यह बर्बरता मजहबी अराजकता है। हर मजहब को सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने वाले आतंक की निंदा करना चाहिए। कई देशों में छोटे – छोटे स्तर पर जिस धार्मिक संकीर्णता, संकर्णता और जातिवादी संघर्ष की घटनाएँ हो रही है वहाँ सत्ता या सरकार को नागरिक सुरक्षा को सर्वोच्च वरीयता और जातिवादी संघर्ष की घटनाएँ हो रही हे वहाँ सत्ता या सरकार द्धारा नागरिक सुरक्षा को सर्वाच्च वरीयता देनी चाहिए। यदि आतंक के कहर से, जघन्यता से बचना हे तो 'विश्व एकता परिषद' के सम्मेलन होना चाहिए और दुनियाभर के 'अल्पसंख्यक' नागरिकों को वैष्विक सुरक्षा प्रदान करना चाहिए। सांप्रदायिक तनाव का उन्मूलन किस तरह किया जाए, यह एक ज्वलंत मुद्दा है। 'धर्मनिरपेक्षता' की एक बार फिर से समीक्षा की महती आवश्यकता है।

1947 के बाद स्वतंत्र भारत में जिस धर्म निरपेक्षकता (पंथ निरपेक्षता) और निष्पक्षता का वातावरण बनाने का जो लोकतांत्रिक समाजवाद के अंतर्गत प्रयास किया जा रहा था। वह कालांतर में शीघ्र ही धाराशाही हो गया। सत्ता और वोट बैंक के स्वार्थो में तुष्टीकरण की राजनीति ने वास्तविक और शुचितापूर्ण लोकतंत्र का रंग ही छीन लिया।

धर्म और धर्म निरपेक्षता को लेकर देश की राजनीतिक पार्टियाँ धीरे – धीरे तरह – तरह के मुखौटे पहनने लगीं..... इससे स्पष्ट हो गया कि संविधान में 'धर्मनिरपेक्षता' शब्द को रखना ही गलत था तुष्टीकरण की राजनीति को इसी ने जन्म दिया और राजनीतिक पार्टियों ने अलग – अलग झंडे उठा लिए। हमारी लोकतांत्रिक आजादी 'स्वच्छंद' राजनीति बन गई इसलिए अनुशासन सद्भावना, बंधुत्व, सांप्रदायिक सद्भावना, राष्ट्रीयता और धर्मनिरपेक्षता ने अनेक चुनौतियाँ खड़ी कर दी। यही कारण है कि हमारी लोकतंत्रात्मक व्यवस्था, व्यष्टिवाद से समष्टिवाद की ओर अग्रसर नहीं हो सकी।

दरअसल यूरोप की सामाजिक व्यवस्था में, जहाँ इसाई धर्म, चर्च और राज्य की राजनीति का गहरा प्रभाव था। वहाँ यह शब्द उपयुक्त था, यहाँ नहीं। धर्मनिरपेक्षता को यूरोप में कट्टरपंथी धर्मो से प्रतिबद्ध राजनीतिक व्यवस्था को निरपेक्ष बनाने के लिए उपयोग में लाया गया था।

1290 ई. में इसका सबसे पहले उपयोग किया गया तथा पादरियों को धर्मनिरपेक्ष कहा जाता था। 1646 में वेस्ट वेलिया की संधि हुई इसमें सांसारिक गतिविधियों के लिए चर्च की सम्पत्ति का भी अधिग्रहण किए जाने का पहली बार प्रावधान रखा गया था। यहीं से आधुनिक धर्मनिरपेक्षता ने जन्म लिया। राज्य प्रमुख बना और धर्म तथा धर्मसत्ता को नैतिक मूल्यों और आदर्श जीवन के अध्यात्म तक सीमित किया। सांसारिक आध्यात्मिक संबंधों का नवीनीकरण किया गया।

सन् 1817 में जॉर्ज जेकब होलाईक ने सेक्युलर शब्द का प्रथम उपयोग किया इस समय सेक्यूलर का अर्थ यह बताया गया कि सेक्यूलर व्यक्ति वह होता है जो इन विषयों और मुद्दों पर मुख्य रूप से ध्यान देता है जिनकी अनुभवों के आधार पर इस जीवन में जांच की जा सकती है। इनसाईक्लोपीडिया के खण्ड– 1 में इसे एक आंदोलन बताया गया है, जो परलौकिक जीवन से इहलौकिक जीवन के ओर लाता है सेक्युलर शब्द लेटिन के सेक्युलम शब्द से बना। जिसका अर्थ है एक युग या समय की एक अनिश्चित अवधि। धर्म और धार्मिकता के प्रतिरोधी शब्द के रूप में यह प्रचलन में आया। इस तरह पश्चिम का धर्मनिरपेक्षतावाद, धर्मविहीनता का वाद बना। इसकी विशद व्याख्या इनसाईक्लोपीडिया के अध्याय सोशल चेप्टर में पृष्ठ 18–19 पर की गई है।

शब्दकोशियक आक्सफोर्ड डिक्शनरी में लिखा है ''संसार से संबंधित चर्च और धर्म में पृथक नागरिक ओर इहलौकिक बातें जो मुख्यत: धर्म और धर्मसत्ता से असंबद्ध हो, यह धर्मनिरपेक्षता है। इन अर्थों में भारत में धर्मनिरर्पेक्षता शब्द को आयात करने की जरूरत ही नहीं थी। भारत के पास ऐसी विचारक विरासत थी उसके चलते अन्य देशों के सिद्धांतों की या धर्म निरपेक्षता शब्द को आयात करने की जरूरत ही नहीं थी।

यह सिद्धांत यहाँ कितना भी थोपा जाए यहाँ चल नहीं सकता। यहाँ कभी मजहबी कट्टरता या मजहबी जुनून नहीं रहा, हजारों वर्षो से यहॉ की संस्कृति विश्व बंधुत्व, उदारता, करूणा, सामंजस्य और जीयो तथा जीने दो की रही है। यहाँ किसी धर्म को कुचला नहीं गया बल्कि दूसरे विदेशी धर्मो ने यहाँ की उदारता को कुचला।

राजनीतिकबाजों ने धर्मनिरपेक्षता शब्द को जोड़ दिया। अनादिकालीन परंपरा में वैदिक धर्म सनातन धर्म था। इसकी विश्वसनीयता रही, सद्भाव रहा, सहिष्णुता रही, सार्वदेशिकता थी। सभी अमृत के पुत्र थे, ''अमृतस्या पुत्वा'' का सिद्धांत था– ''यहाँ एक पैगम्बर में, पुस्तक में नहीं सर्वधर्म समभाव में विश्वास निहित था। सनातन धर्म में कोई विधर्मी नहीं था। यहाँ कभी विवाद नहीं हुआ। धर्माचार्यों का अनुशासन रहा। यहाँ त्याग सर्वोपरी रहा। त्यागी और सन्यासी को मान्यता मिली सत्ताधारी को नहीं। ऋषि की संताने थी और सिंधु नदी के इस पार रहने वाले हिन्दू कहलाए।

* प्राध्यापक, राजनीतिविज्ञान, शासकीय महाविद्यालय सैलाना (म.प्र.)

धारण करने के धर्म अर्थ ने वैश्विकता, विराटता और व्यापकता को स्थान दिया। यहा सब हमें स्वत: ही निरपेक्ष बनाता था। यहाँ धर्म का अर्थ सदाचरण रहा। विवेकानंद ने कहा था– ''अंधविश्वास मनुष्य का प्रबल शत्रु है लेकिन धर्माधता सबसे बड़ा शत्रु है। ''यहाँ धर्म ने हस्तक्षेप नहीं, राजाओं का संरक्षण मार्गदर्शन दिया। राजा को सम्मान दिया और स्वयं सम्मानित हुए। स्वेच्छाचारी शासक पर अंकुश रखा । धर्मशास्त्री आम जनता के जनप्रतिनिधि थे। दया, अस्तेय, धैर्य, क्षमा, शुचिता, इंद्रिय निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य और अहिंसा के मनुस्मृति के 10 धर्मलक्षण आदर्श थे ।

राज्य कभी धर्म विमुख नहीं होता और उसका सकारात्मक उद्देष्य होता है पं. नेहरू स्वयं आध्यात्मिक विरासत के पक्षधर थे। धर्मनिरपेक्षता मामले में वे भी दुविधा में थे। के.टी.शाह, तजबुल हुसैन, लोकनाथ मिश्र, के.एम.मुंशी, के विचार पढ़िये। वे सभी स्वार्थ के कारण वोट बैंक के कारण धर्मनिरपेक्षता शब्द को जोड़ने के पक्षधर नहीं थे। दरअसल धर्मनिरपेक्षता की जगह भारत में सर्वधर्म समभाव शब्द की आवश्यकता थी। घेराबंदी से आमजनता को कुछ लेना देना नहीं है। बुद्ध, महावीर और गांधी के देश में आतंकवाद एक राष्ट्रीय शर्म का विषय है। इस आतंकवाद ने अंतत: इस देश में पैर क्यों जमाए ? स्वतंत्रता के लिए संघर्ष में उग्रवादी मानसिकता का एक लक्ष्य या था जो पुनीत और पवित्र था जिसमें शहादत देने वालों के प्रति यह देश शताब्दियों तक नतमस्तक रहेगा।

गूंगे, बहरों बमों की आवाज से खदेड़ने वाले वीर क्रांतिकारियों ने कभी यह नहीं सोचा होगा कि आजाद भारत में भी कभी ऐसी परिस्थितियाँ आ जाएंगी, जिसमें अस्तित्व के लिए आजादी से भी ज्यादा भीषण संघर्ष करना पड़ेगा। जिस गति से पिछले 15–20 वर्षो से भारतीय परिस्थितियों में अराजकतावाद पनप रहा है उसके पीछे कई कारण हैं। बंदूक का सहारा लेने वालों की कमोबेश वही स्थिति है जैसी उग्रवादियों की भारतीय इतिहास में रही होगी। अनुनय–विनय, सत्याग्रह और सादगी के गांधीवादी सिद्धांतों की जब इस देश में कोई कद्र नहीं तब जाकर हिंसा ने पैर जमाए हैं। जिस देश को स्वतंत्रता के बाद अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख का ध्यान रखना था। उसने ऐसा नहीं किया।

लोकतांत्रिक समाजवादी ढांचे पर खड़े संविधान की अवहेलना करते हुए समतामूलक समाज की लगभग हत्या कर दी गई है। सबसे अधिक गरीब लोगों को ऊँचा उठाने की जगह आज लगभग 45 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे चले गए हैं। गरीबी रेखा से कुछ ऊपर मध्यम वर्ग में जीवन यापन करने वाले और उच्च मध्यम वर्ग में जीवन गुजारने वाले 45 प्रतिशत लोगों का जीवन भी कोई सुखमय नहीं है।

सिर्फ 10 प्रतिशत लोगों के हाथ में समूचे देश की पूंजी, सुख, सुविधा और सत्ता चली गई है। क्या यही है भारतीय समाजवाद ? सब्सिडी घटाने वाली सरकार को क्या यह मालूम है कि देश के ये 10 प्रतिशत पूंजीपति करोड़ों – अरबों रुपये टैक्स की चोरी ही नहीं कर रहे बल्कि भारतीय बैंकों की 52 हजार करोड़ रुपये की राशि डकार कर बैठे हैं।

मध्यम वर्ग का सिर्फ 1 प्रतिशत टैक्स पर चलने वाले इस देश में कुल आय का 96 प्रतिशत घाटा पूर्ति और ऋण अदायगी में व्यय करने वाली सरकारे सिर्फ 4 पैसे में किस तरह का विकास करने की बात करती है ? यह बड़े दुख की बात है कि राजनीति में घुसकर तस्कर, काला बाजारिए सुगम मार्ग से सामाजिक प्रतिष्ठा हासिल कर चुके हैं और राजनीति का दुरूपयोग करते हुए विलासितापूर्ण वैभव के क्रूर उत्पीड़न साम्राज्य का विस्तार कर रहे हैं। गरीबों से ऊपर उठे हुए ये लोग कानून से भी ऊपर उठ जाते हैं। इन्हीं के अंह को तुष्ट करने के लिए साधन सुलभ करवाने वाले संगठित अपराधियों की बड़ी जमात 'आतंकवाद' की जिम्मेदार है।

नैतिक अवमूल्यन इतना अधिक हो चुका है कि रुपये का अवमूल्यन भी इतना नहीं हुआ। जनप्रतिनिधियों की गुणवत्ता में जो गिरावट आई है उसने राजनीति का अपराधीकरण किया है। उम्मीदवार योग्यता के आधार पर नहीं चुने जाते। प्रतिभा, विदगधता और लगन के अभाव के कारण बुनियादी समस्याओं पर ध्यान नहीं दिया गया। राष्ट्र, सत्ता और संविधान के प्रति इनकी क्या जिम्मेदारियाँ हैं इसे देखा ही नहीं गया।

अव्यवस्था, साम्प्रदायिकता, जातिवाद, असमानता, अकुलाहट और असंतोष ने हिंसा और आतंक को जन्म दिया है। जहाँ जनविरोधी, जन विमुख प्रकृति उभरी है वहीं नक्सलवाद ने जन्म लिया है। हिंसक उथल–पुथल असम, कश्मीर, पंजाब, बिहार या मध्यमप्रदेश में होती है तो उसे पीछे क्या कारण है ?

इस देश में हर व्यक्ति दूसरे के विरोध में खड़ा मिलता है। क्या भूमि सुधार के लिए सरकार ने ध्यान दिया ? जातिवादी समीकरणों को हल किया ? लोकतंत्र को जनमुखी बनाने में विफलता, केन्द्रीयता का बोलाबाला और राज्यों को एक हद तक सत्ता के चश्में से देखने की संकीर्णता से उपजता है आतंक। कानपुर में 1931, रांची में 1967, अहमदाबाद में 1969, जलगांव में 1970 बनारस में 1977, जमशेदपुर में 1979, मेरठ में 1983, अयोध्या में 1997, मुम्बई में 1992–93 में हुए दंगों की शक्त क्या थी ?

1984 में श्रीमती गांधी की हत्या के बाद उठी हिंसा और पंजाब के उग्रवाद का अंतत: क्या लक्ष्य था ? सन 2001 से लगातार पूरा देश आतंकवाद से जूझ रहा है। मुम्बई बम कांड से लेकर दिल्ली बम कांड (2008) मुम्बई में आतंकवादी हमले ने आतंकवाद को लेकर कई सवाल हमारे लोकतांत्रिक विकास के रास्ते में खडे कर दिये हैं।

साम्प्रदायिकता संकीर्ण मानसिकता जनआक्रोश, आतंक और हिंसा का जो प्रभाव भारतीय राजनीति पर पड़ा है उसने सिद्ध कर दिया है कि सज्जनों के लिए सत्ता में कोई स्थान नहीं है। दुर्जनों का ही बोलबाला है। आजादी से आज तक का इतिहास इस बात का साक्षी है कि देश की राजनीति प्राय: अपने व्यवहार जनतांत्रिक नहीं, पारिवारिक, वंशवादी, सामंती ही रही है। साम्प्रदायिकता और वर्ण – युद्ध को इसी ने बढ़ावा दिया है। बा पके बाद बेटा, पति के बाद पत्नी, जन प्रतिनिधि बनने का नसीब लिखवाकर पैदा हुए, क्या यही भारत – भाग्य विधाता है? सम्प्रदाकिता, हिंसा का विस्फोट हो या अलगाववादी आतंक का या दलितों – पिछड़ों की व्यथा – आक्रोश इन सबके मूल भ्रष्टाचार ही घुसा बैठा है। जो बार – बार मुखौटा बदलता है। विभिन्न राजनैतिक दलों के निचले तबके के कार्यकर्ता हों या ऊपरी कमान के नेता काई भी संगठित दल अपराधियों के गिरोह के पहरे बिना नहीं पनप सकता दलित उत्पीड़ित अपना हक छीनने सड़कों पर लाए जाते हैं और खून बहवाया जाता है। चुनावी मुकाबलों में खूंखार, माफिया, सरगना इसलिए मैंदान में उतरते हैं।

इनके कई मुखैटे हैं कहीं शराब के व्यापारी, कहीं जंगल या खदानों के ठेकेदार, कहीं भवन और फिल्म निर्माता तो कहीं बड़े बापके बिगड़े शहजादे। इनसे भला कौन उलझे ? आम आदमी की क्या बिसात इसलिये मध्यप्रदेश में राजाभैया नाम के उम्मीदवार ने चुनावी नारा दिया था मोहर लगेगी हाथी पे, वर्ना गोली चलेगी छाती पे। यही हमारी राजनीति की विभत्स सच है। बिहार में थप्पड़ लात घूंसे और इससे भी काम न चले तो बुलेट से वोट प्राप्त कर लिए जाते हैं। यह है असली चेहरा हमारी राजनीति का उन्मूलन और समाधान का

रास्ता आसान नहीं है। हर राजनीतिक दल से अपराधियों या अपराधी मानसिकता के लोगों को हटाया जाए, धन – बल के प्रभाव को कम किया जाए और एक आदर्श आचरण पर ही चुनाव लड़ने का अधिकार दिया जाए। अलगाववाद, क्षेत्रीयता, भाषावाद, जातिवाद, बेरोजगारी, गरीबी, और पिछड़ेपन पर गंभीरता से ध्यान देना होगा।

साक्षरता और स्वास्थ्य के पहियों पर राष्ट्र को स्वस्थ्य बनाना होगा। बाहरी ताकतों, विघटनकारियों और पड़ौसी देशों के उग्रवादियों की घुसपैठ पर प्रतिबंध लगाने होंगे। हर नागरिक के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने, समतामूलक समाज की स्थापना और राष्ट्रप्रेम की भावना को बढ़ाने से ही हम भारतीय राजनीति को आतंक के प्रभाव मुक्त रख सकेंगे। आतंक की चुनौतियों से निपटने के लिए भी एक संगठित चेतना की आवश्यकता है।

लोकतंत्र एक चुनौती है और इस पर कब्जा करने वाले और इसकी सूरत बिगाड़ने वालों केा जनता ही जवाब दे सकती है। इसके लिए सरकार और व्यवस्था का ही मुंह न देखा जाए बल्कि जनचेतना का विकास किया जाए। जब हम हिजबुल मुजाहिदीन जैसे उग्रवादी संगठनों से बातचीत की खुली पेशकश कर सकते हैं और उन्हें कश्मीरी यानी भारतीय आतंकवादी ही मानते हैं तो नक्सलियों, उल्फा और रणवीर सेना के उग्रवादियों से बातचीत क्यों नहीं संभव है? आतंक, हिंसा, कालाबाजारी, तस्करी और भ्रष्टाचार के राष्ट्रदोही कार्यों में लगे असामाजिक तत्वों से उसी तरह लड़ाई लड़नी होगी जिस तरह स्वतंत्रता सेनानियों ने, क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों के विरूद्ध लड़ाई लड़ी थी। हर नागरिक को अपने अधिकारों के हर मोर्चे के लिए असहमत और व्यग्र होने की जरूरत है। लेकिन उसकी एक दिशा होनी चाहिए ऐसी दिशा जो भारती राजनीति को उसके सांस्कृतिक वैभव के साथ स्थापित कर सकें।

संदर्भ –

1. भारत में लोकतंत्र का विकास, समाज विज्ञान शोध पत्रिका अक्टूबर 2006 मार्च, 2007 पृ. 58 पृ.80।
2. गौस्वामी भालचंद्र प्रखर, स्वतंत्र भारत के पचास वर्श, भाग – 1, पृ. 175।
3. कष्यप सुभाष सी, भारत का संविधान, संवेधानिक विकास और स्वाधीनता संघर्ष (रिसर्च पं. सो. सा. 1972) पृ. 65।
4. इनसाक्लोपीडीया पृ. 18 – 19।
5. आक्सफोर्ड डिक्शनरी।
6. मनुस्मृति
7. योद्धा सन्यासी, विवेकानन्द
8. प्रो. यशपाल भारत एवं अंतर्राष्ट्रीय संबंध, डॉ. फड़िया बी.एल., पृष्ठ नं. 243
9. माहूरकर उदय, इंडिया टुडे, 13 अगस्त, 2008, पृष्ठ 22 – 30
10. उन्नीथन संदीप, इंडिया टुडे, 13 अगस्त, 2008, पृष्ठ 31 – 32
11. वी. रमन (आतंकवाद विशेषज्ञ) इंडिया टुडे, 13 अगस्त, 2008, पृष्ठ 36
12. फेरिक डेबिड, अंतर्राष्ट्रीय कानून में आतंकवाद (1974), पृष्ठ 1–2–5
13. अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद और विश्व सुरक्षा एम.जेकिंस का लेख, लंदन 1975, पृष्ठ 13
14. डॉ. वैदिक वेद प्रताप, आतंकवाद का उन्मूलन जड़ से करें, साक्षात्कार 11 जुलाई, 2008 नई दिल्ली
15. डॉ. फड़िया बी.एल., भारत और अंतर्राष्ट्रीय संबंध, पृष्ठ 241–260
16. टाईम्स ऑफ इंडिया (नई दिल्ली) दिनांक 13.08.2008 पृ. 1

औद्योगीकरण का आदिवासियों के सामाजिक-आर्थिक जीवन पर प्रभाव

(धार जिले के पीथमपुर औद्योगिक क्षेत्र के विशेष संदर्भ)

डॉ. दिलीपसिंह मंडलोई *

प्रस्तावना:-

आदिवासियों का जन-जीवन प्रकृति पर आधारित रहा है। आखेट युग से लेकर आधुनिक युग तक उनकी जीवन शैली पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि, प्रत्येक युग में उनका खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार, तौर-तरीके, रूढियॉ, प्रथाऍ एवं जीवन शैली में विभिन्नताऍ रहीं है। प्राचीन काल में उनका जीवन निर्वाह खाद्य संग्रहण, शिकार, पशुपालन तथा स्थानांतरित कृषि एवं जीवनोपार्जन पर आधारित था जैसे-जैसे समय बीतता गया, वैसे-वैसे कृषि पर उनकी निर्भरता बढ़ती गई और वनों पर इनकी निर्भरता कम होती गई।आधुनिक काल में तेजी से हो रहें, औद्योगीकरण व शहरीकरण का प्रभाव आदिवासियों के जन-जीवन पर पड़ा और धीरे-धीरे आदिवासी समुदाय अपनी आजीविका के परम्परागत् संसाधनों जैसे जंगल, भूमि एवं वनसंपदा से बेदखल होते गयें। जंगलों की कटाई, बड़े-बड़े बांधों के निर्माण और नवीन अद्योगों की स्थापना आदि कार्यो के फलस्वरूप वे अपने परम्परागत संसाधनों से वंचित हुए जिसके परिणामस्वरूप जीवन निर्वाह के लिए उन्हें कार्य की तलाश में औद्योगिक क्षेत्र की ओर पलायन करना पड़ा।

भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् सन् 1948 व विशेषकर 1956 में, जो औद्योगिक विकास की नीति अपनाई, उसका प्रमुख उद्देश्य आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए क्षेत्रों में उद्योगों की स्थापना कर वहॉ के लोगों को रोजगार के अधिक अवसर उपलब्ध कराते हुए संबंधित क्षेत्रों का सामाजिक आर्थिक विकास करना था। पंचवर्षीय योजना (1974-75 से 1978-79) में केन्द्र सरकार ने पूरे देश में 246 पिछड़े जिलों को चिन्हाकित किया,जिन में से 87 जिलों को दिसम्बर 1977 में पिछड़े जिले घोषित किया। इन घोषित जिलों में सर्वाधिक 18 जिले मध्य प्रदेश के है इनमें दक्षिण-पश्चिम मध्य प्रदेश के धार जिले के पीथमपुर में नवम्बर 1981 से कई औद्योगिक इकाईयॉ स्थापित की गई और कई उद्योग अभी शैशवस्था में है। आज 30 वर्षो की अवधि में पीथमपुर देश में औद्योगिक नक्शे पर प्रमुख केन्द्र बन गया हैं। अमेरिका का एक शहर '' डेट्राईट '' है जो, वाहन बनाने वाली फैक्ट्रियों के लिए पूरे विश्व में प्रसिद्ध हैं, की भांति पीथमपुर वाहन बनाने वाली फैक्ट्रियों की अधिकर्त्ता के कारण अब एशिया का '' डेट्राईट '' के रूप में जाना जाने जगा।

किसी भी समाज में उपभोग, उत्पादन, विनिमय और वितरण का स्वरूप सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था को बहुत बड़ी सीमा तक प्रभावित करता हैं। प्रत्येक व्यक्ति को जीवित रहने के लिए भोजन मिलना अनिवार्य है। यहीं वह प्राथमिक भौतिक लक्ष्य है, जिसे पूरा करने के लिये व्यक्ति को तरहं-तरह की व्यवस्थाओं से गुजरना पड़ता है। इस दृष्टिकोण से पीथमपुर औद्योगिक क्षेत्र, जीविका और रोजगार के लिये आकर्षण का केन्द्र बना है परिणामस्वरूप वे आदिवासी इस ओर आकर्षित हुए हैं जिनके ग्रामों में कोई रोजगार उपलब्ध नहीं था और कुछ ऐसे आदिवासी परिवार परंम्परागत कृषि व्यवसाय को छोड़कर उद्योगों में कार्य के लिए पलायित हुए, जिनका गुजारा कृषि कार्य से नहीं हो पा रहा था। इसके अतिरिक्त शिक्षा प्राप्त आदिवासी परिवार भी उद्योगों में रोजगार की तलाश में पलायित हुए है।

2. अध्ययन का उद्देश्य :-

1. औद्योगिक क्षेत्र की ओर आकर्षित होने वाली आदिवासी जनसंख्या की सामाजिक, शैक्षिक व आर्थिक पृष्ठभूमि क्या है? अर्थात उसकी जनसंख्यात्मक, व्यावसायिक, आर्थिक व सामाजिक संरचना क्या है?
2. पीथमपुर तथा समीपवर्ती क्षेत्र के आदिवासियों के जीविकोपार्जन के साधन में क्या बदलाव आया है?
3. पीथमपुर एवं सीमावर्ती क्षेत्र के आदिवासियों के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व व्यावसायिक जीवन पर औद्योगीकरण का क्या प्रभाव पड़ा है?

3.अनसंधान पद्धति :-

(अ) क्षेत्र का निरूपण-

कार्य क्षेत्र पीथमपुर औद्योगिक परिक्षेत्र के अन्तर्गत कुल कार्यक्षेत्र का क्षेत्रफल 31.40 वर्ग कि.मी. है जिसमें पिछले 30 वर्षो से औद्योगीकरण हो रहा है यह क्षेत्र चार सेक्टर में बटा हुआ है। पीथमपुर से 5कि.मी. की परिधि में धार जिले की धार और इन्दौर जिले की देपालपुर व महू तहसिलों के ग्राम का निरूपण किया गया है जिसमें आदिवासी समुदाय निवास करते है। इस क्षेत्र में कुल 18 ग्राम है जिनमें 10 आबाद ग्राम और 7 वीरान ग्राम में आदिवासी समुदाय निवास करते है जबकि धन्नड़ ग्राम आदिवासी विहीन है।

(ब) अध्ययन की इकाई-

प्रस्तुत अध्ययन की इकाई आदिवासी परिवार है।

(स) अध्ययन का समग्र-

इस अध्ययन क्षेत्र में निवास करने वाली ''आदिवासी परिवार'' समग्र का निर्माण है।

तालिका क्र. 1

अध्ययीत परिवारो का ग्राम के अनुसार वितरण (2001)

क्रमॉक	धार तहसील के ग्राम	कुल आदिवासी जनसंख्या	अध्ययनित परिवारों की संख्या
1.	पीथमपुर	1116	111
2.	तारपुरा	307	30
3.	धन्नड़खुर्द	—	—
4.	बरदरी	451	45
5.	अकोल्या	199	19
6.	मौड़िया	216	21
7.	खेड़ा	626	62
8.	जामोदी	106	10
9.	खेड़वा	93	9
10.	सिलोटिया	08	01
11.	ग्वाला	96	09
	देपालपुर	तहसील	

* शासकीय महाविद्यालय,सैलाना जिला-रतलाम (म.प्र.)

12.	बजरंगपुर	146	14
13.	अम्बापुर	151	15
14.	कालबिल्लोद	74	07
	महू	तहसील	
15.	बनजारी	06	01
16.	भाटखेड़ी	361	36
17.	भरदला	41	04
18.	गोपालपुरा	65	06
	योग	4062	400

(स्त्रोत:-प्रायमरी सेन्सस अथ्सट्रक्ट 2001)

(द) अध्ययनित परिवार:-

1. प्रथम चरण में आदिवासियों के सामाजिक-आर्थिक जीवन पर औद्योगीकरण का प्रभाव जानने के लिए पीथमपुर औद्योगिक क्षेत्र को मुख्य रूप से इसलिए चुना गया, क्योंकि एक तो यह मध्यप्रदेश में प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र एवं व्यापारिक नगर इन्दौर के समीप है। दूसरा धार जिले में स्थित होने के कारण इस क्षेत्र में आदिवासियों की उल्लेखनीय जनसंख्या पाये जाने की संभावना थी।

2. द्वितीय चरण में पीथमपुर से लगभग 5 कि.मी. की परिधि में आने वाले ग्रामों को समाहित किया। अध्ययन हेतु परिक्षेत्र के ऐसे ग्रामों को सूचीबद्ध किया गया जिसमें 2001 की जनगणानुसार आदिवासी जनसंख्या निवास करती है। ऐसे सूचीबद्ध 18 ग्रामों में से धन्नड़ ग्राम आदिवासी विहीन है शेष 17 ग्रामों में कुल 4062 जनसंख्या पाई गई।

3. तृतीय चरण में अध्ययन क्षेत्र के 17 ग्रामों में से 400 परिवारों का चयन किया गया जो, इन ग्रामों में कुल आदिवासी परिवारों का यदि औसत परिवार 5 सदस्य माना जाय तो, लगभग आधा है जिन ग्रामों में परिवार अधिक थे, उनमें से अधिक परिवार लिये गये। ऐसा करते समय उनके अनुपात को ध्यान में रखा गया लेकिन किसी भी ग्राम को छोड़ा नहीं गया, भले ही उसमें एक ही आदिवासी परिवार हो। (देखें तालिका क्र. 2)

1. पीथमपुर:-

यह राष्ट्रीय राज्य (आगरा-बुंबई) मार्ग और रेल मार्ग महू से 08 कि.मी. दूरी पर स्थित है तथा 25 कि.मी दूर इन्दौर में वायुयान, रेल और परिवहन की सुविधा उपलब्ध हैं ग्राम धार जिले की तहसील धार में आता है। इसमें सर्वेक्षित आदिवासी परिवारों की संख्या 111 है जिसमें 536 आदिवासी जनसंख्या शोध अध्ययन के दौरान पाई गई है। इन में से कुशल श्रमिक 56.32 प्रतिशत, अकुशल श्रमिक 22.00 प्रतिशत और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का 8.72 प्रतिशत सदस्य कार्यरत है। इस तरह कुल कार्यरत सदस्यों का 19.29 प्रतिशत है,जबकि आश्रित सदस्यों का 26.23 प्रतिशत है

निष्कर्ष :- इस ग्राम के कुशल श्रमिको का सबसे अधिक प्रतिशत है अर्थात् आदिवासी परिवारों के मुखियॉ के पास आय का अच्छा स्त्रोत होने से खुद ही परिवार का संचालन करते है और उनके बच्चे व पत्नि उस पर ही निर्भर रहते है जबकि आय का कम स्त्रोत वाले परिवार के मुखिया पर निर्भर न रहकर जीविकोपार्जन के लिए उनके बच्चों तक को भी कार्य करना पड़ता है।

2. तारपुरा :-

यह ग्राम मुख्य केन्द्र से लगभग 3कि.मी. दूर उत्तर की ओर स्थित है यह मुख्य सड़क मार्ग से लगा हुआ है। इसमे चयनित आदिवासी परिवारों की संख्या 30 है जिसमे कुल आदिवासी जनसंख्या 89 पाई गई इन में से कुशल श्रमिको का 6.96 प्रतिशत, अकुशल श्रमिको का 22.00 प्रतिशत और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का 7.29 प्रतिशत सदस्य कार्यरत् है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 8.47 प्रतिशत है, जबकि आश्रितों सदस्यों का 6.93 प्रतिशत है।

3. अकोल्या:-

यह अध्ययन केन्द्र से लगभग 3कि.मी. दूर पश्चिम की ओर महू-नीमच मार्ग के निकट स्थित है। इस ग्राम में आदिवासी परिवारों की संख्या 19 है जिसमे कुल आदिवासी जनसंख्या 126 पाई गई हैं । इन में से कुशल, अकुशल श्रमिकों और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 1.89, 2.11 व 9.44 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 5.68 व आश्रित सदस्यों का 4.52 प्रतिशत है।

निष्कर्ष:- इस ग्राम में कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों में संलग्न सदस्यों का प्रतिशत अधिक है अर्थात आदिवासी परिवार के सदस्यों को उद्योगों में कार्य न मिलने के कारण जमींदारों के यहां घरेलु नौकर, कृषक मजदूर, चरवाह (ग्वाला) के रूप में कार्य करते हैं। शोधकर्त्ता ने झाबुआ से पलायित आदिवासी परिवार के मुखिया से लम्बि वार्तालाप के दौरान बतलाया कि '' जब हम लोग झाबुआ से यहां आये उस समय 25-30 फैक्ट्रियॉ थी जहॉ पर हम प्रतिदिन दैनिक मजदूरी करते थे इसके पश्चात् निवास हेतु एक पहाड़ या टकड़ी के किनारे उबड़-खाबड़ भू-खंड पर झोपड़ी बनाई थी लेकिन, यहां स्थाई रहकर जीविकोपार्जन के लिए जमींदारों की शरण लेनी पड़ी।'' तब से ये जमींदार के यहां सालाना नौकर रहकर कार्य कर रहे है और उनकी पत्नियाँ गोहरी व कृषि मजदूरी तथा बच्चे चरवाहा का कार्य करते है। परन्तु अब कुछ आदिवासी परिवार के युवा सदस्य परम्परागत व्यवसायों को छोड़कर औद्योगिक क्षेत्र में कार्य करने लगे है।

4. बरदरी:-

यह पीथमपुर से लगभग 3कि.मी. दूर उत्तर-पश्चिम की ओर मुख्य सड़क मार्ग से ड़ेढ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह धार जिले की तहसील धार में आता हैं इसमें सर्वेक्षित परिवारों की संख्या 45 है,जिसमे शोध अध्ययन के दौरान कुल जनसंख्या 308 पाई गई है। इन में से कार्यरत सदस्यों में कुशल श्रमिको का 5.63 प्रतिशत, अकुशल श्रमिकों का 8.97 प्रतिशत और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का 20.45 प्रतिशत सदस्य कार्यरत् है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 14.24 प्रतिशत है, जबकि आश्रितों सदस्यों का 10.55 प्रतिशत है।

निष्कर्ष:- इस ग्राम में सबसे अधिक कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों में संलग्न सदस्यों का प्रतिशत है अर्थात परम्परागत व्यवसायों में परिवार के सदस्य संलग्न है फिर भी इन परिवारों के युवा पीढी के सदस्य पैतृक व्यवसायों को छोड़कर औद्योगिक क्षेत्र में 14.60 प्रतिशत कार्यरत हैं। वृद्ध पीढ़ी के लोग भी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होकर पंच-सरपंच चुनाव में भागीदार हुए इस ग्राम में भी आश्रित सदस्यों की तुलना में कार्यशील सदस्यों का प्रतिशत अधिक है ।

5. भौड़िया:-

यह मुख्य अध्ययन केन्द्र से लगभग 3 कि.मी. दूर दक्षिण की ओर भौड़िया तालाब बना होने से व्यक्तियों को 7 कि.मी. घुमकर आना-जाना पड़ता है। यह ग्राम धार जिले की तहसील धार में आता है यहां स्थानीय आदिवासियों की बहुलता है इसमें सर्वेक्षित परिवारों की संख्या 21 है, जिसमें कुल आदिवासी 135 जनसंख्या पाई गई है जिन में से कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 5.63, 3.16 और 5.85 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 4.70 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 6.83 प्रतिशत हैं ।

निष्कर्ष :- कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों में ये खुद की भूमि पर कृषि कार्य और खुद की गाय-भैसों से दूध निकालकर बेचने जैसे व्यवसायों में संलग्न सदस्यों की संख्या अधिक पाई गई, जबकि जमींदारों के यहां घरेलू नौकर, चरवाह और कृषि मजदूरी भौड़िया तालाब में डूब जाने के कारण ये पलायित होकर पीथमपुर हाउसिंग बोर्ड के स्थान पर विस्थापित हुए है। इसमें कुल कार्यशील सदस्यों का 4.70 प्रतिशत हैं जबकि आश्रित सदस्यों का 6.83 प्रतिशत है। यहां के आदिवासी बच्चे शिक्षा अर्जित कर रहें है और स्कूल की सुविधा भी है।

6. बनजारी:-

यह मुख्य केन्द्र से लगभग 3 कि.मी. दूर दक्षिण-पूर्व की ओर महू-नीमच मुख्य मार्ग से एक कि.मी. दूरी पर स्थित है। यह ग्राम इन्दौर जिले की तहसील महू में आता हैं। इसमे एक ही आदिवासी परिवार निवास करता है जो ग्राम पलासिया से 21 वर्ष पूर्व पलायन किया। यह परिवार पिछले 10 वर्ष से भू-स्वामी के यहां घरेलू नौकर का कार्य कर रहा है जबकि, उसका पुत्र औद्योगिक क्षेत्र में मजदूरी और उसकी पत्नी व बहू कृषि मजदूरी का कार्य करते है।

निष्कर्ष :- यहां मुसलमान व अन्य समुदाय के लोग निवास करते है जबकि अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के परिवार न बराबर निवास करते है।

7. भाटखेड़ी :-

यह पीथमपुर औद्योगिक केन्द्र से लगभग 4 कि.मी.दूर दक्षिण-पूर्व की ओर महू-नीमच मुख्य मार्ग से ड़ेढ कि.मी. की दूरी पर स्थित है। यह इन्दौर जिले की तहसील महू में आता हैं इसमे सर्वेक्षित परिवारों की संख्या 36 हैं जिनमे कुल आदिवासी जनसंख्या 218 पाई गई जिन में से कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 6.32, 10.73 और 6.43 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 8.14 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 10.25 प्रतिशत हैं।

निष्कर्ष :- आदिवासी समुदाय परम्परागत् व्यवसायों को छोड़कर अन्य व्यवसायों की ओर गतिमान हो रहे हैं। यह व्यावसायिक गतिशीलता युवा पीढ़ी में अधिक पाई गई जबकि वृद्ध पुरूष अभी भी उनके प्रथागत व्यवसायों में संलग्न है।

8. खंड़वा :-

यह मुख्य अध्ययन केन्द्र से लगभग 4 कि.मी. दूर दक्षिण-पश्चिम की ओर स्थित है। यह ग्राम यातायात साधनों से कटा हुआ होने कारण पड़ोसी ग्राम खेड़ा की खदानों में अकुशल श्रमिक के रूप में कार्यरत है। ग्राम धार जिले की तहसील धार में आता है इसमें सर्वेक्षित परिवारो की संख्या 09 है जिसमे कुल आदिवासी जनसंख्या 59 पाई गई। जिन में से कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 0.00, 2.11 और 3.71 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 2.66 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 2.11 प्रतिशत हैं।

निष्कर्ष :- इस ग्राम में कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का प्रतिशत अधिक है अर्थात यहां घरेलू नौकर, चरवाहा और कृषि मजदूर के रूप में आदिवासी परिवार के सदस्य कार्यरत हैं। ग्राम के अधिकतर आदिवासी परिवारों के पास भूमि नहीं है इस संदर्भ में उत्तरदाता ने दो करण बतलाए (1) अज्ञानता या भौलेपन की वजह भूमि का पट्टा नहीं करवा पाये। (2) ऋण की वजह से जमींदारों ने हड़प ली या गरीबी के कारण जमीन बेच दी।

9. जामोदी:-

यह पीथमपुर औद्योगिक केन्द्र से 4 किमी. दूर पश्चिम की ओर स्थित है तथा धार जिले की तहसील धार में सम्मिलित है यह ग्राम मुख्य सड़क मार्ग व औद्योगिक क्षेत्र से कटा हुआ। अध्ययनित परिवार की संख्या 10 है जिसमे कुल आदिवासी जनसंख्या 65 पाई गई। इन में से कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 0.63, 2.28 और 2.71 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 5.62 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 3.21 प्रतिशत हैं।

निष्कर्ष :- ग्राम की खदानों में 2.28 प्रतिशत श्रमिक खुली मजदूरी के रूप में कार्य करते हैं। यहां ठेकेदारों द्वारा कम पारिश्रमिक में अधिक काम लिया जाता हैं इस संदर्भ में उत्तरदाताओं का कहना है कि'' हमारी भूमि के किनारे पत्थर की खदान में खनन कार्य किया जाता है। जहॉ हमारी भूमि हस्तांतरित हुई, जिसका कोई मुआवजा नहीं दिया और इस खनन कार्य से शारीरिक चोट आने पर इलाज के लिए सहायता देना तो दूर हमें कार्य से भी निकाल दिया जाता है''।

10 खेड़ा :-

यह अध्ययन केन्द्र 4 किमी. दूर पश्चिम की ओर स्थित हैं। यह महू-नीमच मार्ग और औद्योगिक क्षेत्र के सेक्टर 3 से लगा हुआ है। इस ग्राम के अधिकत्तर आदिवासी समुदाय की भूमि फैक्ट्रियों में चली जाने की वजह से अब सड़क के किनारे अतिक्रमण में आवास बना रखे है और कुछ परिवार पहाड़ी (टेकरी) पर बस्ती स्थापित हैं जो भीली टापरा के नाम से जाने जाते है। ग्रम धार जिले की तहसील धार में आता है।

ग्राम धार जिले की तहसील धार में आता है इसमे सर्वेक्षित परिवारो की संख्या 63 हें, जिसमे कुल आदिवासी जनसंख्या 398 है। इन में से कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 5.06, 25.88 और 14.02 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 17.75 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 14.37 प्रतिशत हैं।

निष्कर्ष :- ग्राम के निकट कल कारखाने/फैक्ट्रियों और पत्थर खदानो की उपलब्ध होने कारण अन्य ग्रामों की तुलना में सबसे अधिक 30.94 प्रतिशत सदस्य कुशल, अकुशल श्रमिक के रूप में कार्यरत है जबकि, कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का मात्र 14.02 प्रतिशत कार्यरत है। इनमें से कुछ ही परिवार खुद की भूमि पर कृषि कार्य करते हुए सहायक व्यवसाय के रूप में उद्योग या खदान में कार्य करते है। इस ग्राम के कुछ आदिवासी परिवारो की भुमि उद्योग में हस्तांतरित होने पर उन्हें भू-मुआवजा मिलने के साथ ही उद्योग में नौकरी भी दी गई जबकि, कुछ ऐसे भी परिवार है जिनकी जमीन उद्योगों में हस्तातरित होने पर न मुआवजा मिला और न ही उद्योगों नौकरी दी गई।

11 गोपालपुरा :-

यह मुख्य अध्ययन केन्द्र से 4 किलोमीटर दूरी पर स्थित हैं। यह ग्राम इन्दौर जिले कि तहसील इन्दौर में आता है इस ग्राम के सर्वेक्षित परिवारों की संख्या 06 है जिसमें कुल आदिवासी जनसंख्या 41 पाई गई है इन में से कार्यरत सदस्यों में कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 0.00,4.82 और 2.17 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 2.17 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 1.00 प्रतिशत हैं।

निष्कर्ष :- औद्योगिक क्षेत्र में कार्य की तलाश में पलायन हुए आदिवासी परिवारो को उच्च वर्गो द्वारा इस ग्राम में रहने के लिए शरण देने के बाद पुरूषों को घरेलू नौकर, उनकी पत्नियॉ गोहरी व कृषि मजदूरी और उनके बच्चे ग्वाला का कार्य कम पारिश्रिम देकर लिए जाते है।

12. भरदला:-

यह ग्राम मुख्य अध्ययन केन्द्र से 05 किमी. दूर दक्षिण-पश्चिम की ओर स्थित हैं। भौड़िया तालाब रास्ते में पड़ने के कारण पीथमपुर औद्योगिक केन्द्र की ओर पैदल घुमकर जाना पड़ता है यह ग्राम इन्दौर जिले की तहसील

इन्दौर में आता है। इस ग्राम के सर्वेक्षित परिवारो की संख्या 04 है जिसमे कुल आदिवासी जनसंख्या 22 है। इन में से कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 0.00,0.17 और 1.57 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 0.84 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 1.00 प्रतिशत हैं।

निष्कर्ष :- ग्राम के अधिकत्तर आदिवासी समुदाय खुद की भूमि पर कृषि कार्य करके जीविकोपार्जन करते है अर्थात लगभग 75 प्रतिशत आदिवासी सदस्यों को ग्राम से बाहर मजदूरी के लिए जाने की आवश्यकर्त्ता नहीं पड़ती हैं मात्र 25 प्रतिशत सदस्यों को खुली दैनिक मजदूरी, घरेलू नौकर और चरवाह का कार्य करके आजीविका का निर्वाह करते है।

13. बजरंगपुर :-

यह ग्राम मुख्य अध्ययन केन्द्र से 05 किमी. दूर उत्तर-पश्चिम की ओर स्थित हैं। यह मुख्य सड़क मार्ग से कटा हुआ है, परन्तु औद्योगिक क्षेत्र के सेक्टर क्र.1 के निकट टेकड़ी के निचले स्थल पर बसा हुआ है। यह ग्राम इन्दौर जिले की तहसील देपालपुर में आता है । इस ग्राम के सर्वेक्षित परिवारो की संख्या 14 है जिसमे कुल आदिवासी जनसंख्या 106 है। इन में से कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश: 3.79, 281 और 4.86 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 3.92 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 5.06 प्रतिशत हैं।

निष्कर्ष :- ग्राम के आदिवासी सदस्यों में एक या अधिक सदस्य उद्योगों में कुशल व अकुशल श्रमिक के रूप में कार्य करते है। शेष कृषि संबंधी व्यवसायों के प्रतिशत से स्पष्ट है। इस ग्राम में अकुशल श्रमिकों की तुलना में कुशल श्रमिकों का प्रतिशत अधिक है। यहां आश्रित सदस्यों का प्रतिशत अधिक है, जो यह प्रदर्शित करता है कि, आदिवासी परिवार का मुखिया, उनके बच्चों को जमींदार या भू-स्वामी के यहां घरेलू नौकर या चरवाहा न रखते हूए उन्हें स्कूलों में भेजते है, जबकि ग्राम खेड़ा, जामोदी, बरदरी, गोपालपुर, सिलोठिया, संड़वा इत्यादि रखते है।

14. अम्बापुर:-

यह ग्राम पीथमपुर औद्योगिक केन्द्र से 05किलोमीटर दूर उत्तर-पश्चिम की ओर महू-नीमच मार्ग से 2किमी. दूर स्थापित हैं। यह स्थानीय सड़क मार्ग और औधोगिक क्षेत्र के सेक्टर क्र. 3 से करीब लगा हुआ है। यह ग्राम इन्दौर जिले की तहसील देपालपुर में आता है इस ग्राम के सर्वेक्षित परिवारो की संख्या 15 है जिसमे कुल आदिवासी जनसंख्या 112 है। इन में से कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 5.69, 5.28 और 3.29 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 4.35 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 3.61 प्रतिशत हैं।

निष्कर्ष :- ग्राम के आदिवासी सदस्य, कृषि संबंधी व्यवसायों की तुलना में उद्योगों में कुशल व अकुशल श्रमिको का प्रतिशत अधिक पाये गये है जबकि, अन्य ग्रामों में इसके विपरीत स्थिति पाई गई है। यहां के अधिकत्तर आदिवासी परिवार कृषि को सहायक व्यवसाय के रूप में करते है।

15.कालबिल्लोद:-

यह ग्राम अंबापुर से लगा हुआ होने से स्थानीय भौगोलिक दशाएँ एक समान हैं। यह भी जिला इन्दौर की तहसील देपालपुर में आता हैं। इस ग्राम के सर्वेक्षित परिवारो की संख्या 07 है जिसमे कुल आदिवासी जनसंख्या 46 है। इन में से कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 1.89, 1.93 और 2.00 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 1.96 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 1.80 प्रतिशत हैं।

निष्कर्ष :- ग्राम के आदिवासी परिवार के सदस्य औद्योगिक केन्द्र की ओर आकर्षित हो रहे है और उनके परम्परागत व्यवसायों के महत्व पर कम ध्यान देने लगे है।

16. सिलोटिया:-

यह मुख्य अध्ययन केन्द्र से लगभग 05 किलोमीटर दूर उत्तर-पूर्व की ओर स्थित है। यह मुख्य सड़क मार्ग औद्योगिक क्षेत्र से कटा हुआ है। यह धार जिले की तहसील धार में आता है। इसमें आदिवासियों की जनसंख्या न के बराबर है। यहां मात्र एक आदिवासी परिवार है जो कृषि कार्य में संलग्न है।

17. ग्वाला:-

यह ग्राम पीथमपुर औद्योगिक केन्द्र से लगभग 5 किलोमी. दूर उत्तर-पूर्व की ओर स्थित है। यह मुख्य सड़क मार्ग एंव औधोगिक क्षेत्र से कटा हुआ हैं। इस ग्राम के सर्वेक्षित परिवारो की संख्या 09 है जिसमे कुल आदिवासी जनसंख्या 65 है। इन में से कुशल, अकुशल और कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का क्रमश:: 0.00,0.00 और 6.49 प्रतिशत है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्यों का 3.15 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्यों का 2.11 प्रतिशत हैं।

निष्कर्ष :- औद्योगिक क्षेत्र में कार्य का मिलना या न मिलना बहुत कुछ सीमा तक औद्योगिक क्षेत्र की निकटता और यातायात की सुविधा पर निर्भर है, फिर भी इस कथन को नकारा नहीं जा सकर्त्ता है कि व्यक्ति की कार्यक्षमता, योग्यता और कार्यशैली के अनुसार औद्योगिक क्षेत्र की ओर पलायन का आकर्षण रहा है।

18. धन्नड़:-

यह ग्राम मुख्य अध्ययन केन्द्र से 05 किमी. दूर उत्तर-पूर्व की ओर स्थत है। यह मुख्य सड़क मार्ग और औद्योगिक क्षेत्र से कटा हुआ हैं। यह धार जिले की तहसील धार में आता है। इस ग्राम में आदिवासियों की जनसंख्या शुन्य पाई गई।

निष्कर्ष :- अध्ययन में चयनित 18 ग्रामों के दूरी के अनुसार ग्रामों के स्वरूप को स्पष्ट करने के साथ ही आदिवासी परिवार के सदस्यों का कार्य स्वरूप के विश्लेषण करने से यह पाया गया है कि, कुल आदिवासी परिवारों के सदस्य 2420 है। इन में से कार्यरत कुल कुशल श्रमिको का 11.08 सदस्य पाये गये है जिनमें शासकीय कर्मचारी, उद्योग लिपिक, तकनीकि कर्मचारी और अतकनीकि कर्मचारी शामिल है। अकुशल श्रमिक का 39.71 प्रतिशत है जिनमे औद्योगिक श्रमिक, जो अस्थाई दैनिक, सप्ताहिक या मासिक मजदूरी है और खदान मजदूर भी शामिल है। कृषि व कृषि संबंधी व्यवसायों का 49.21 प्रतिशत सदस्य कार्यरत है जो कृषक, कृषि मजदूर, घरेलू नौकर, चरवाहा और गौहरी कार्य (गोबर निकालने वाले), दूध धंधा, दूकानदारी इत्यादि सम्मिलित है। इस तरह कुल कार्यशील सदस्य 58.88 प्रतिशत है जबकि, आश्रित सदस्य 41.11 प्रतिशत पाये गये है।

सुझाव :-

1. प्रत्येक स्थापित नई बस्तियों में शीघ्र आंगनबाड़ी और जनसंख्या के आधार पर नये स्कूल खुलना चाहिए, साथ ही नि:शुल्क सामग्रियाँ जनजातीय बच्चों को उपलब्ध करवाना चाहिए, जिनमे लड़कियों की शिक्षा के लिए प्रारम्भ से ही प्रोत्साहन एवं उत्साहित किया जाना चाहिए।
2. पीथमपुर औद्योगिक क्षेत्र में आई.टी.आई एवं पॉलिटेक्निक शिक्षा केन्द्र शीघ्र खोलना चाहिए, जिसमें जनजातीय बच्चों की भर्ती प्रक्रिया में विशेष आरक्षण देकर नि:शुल्क शिक्षा व्यवस्था की जानी चाहिए।
3. औद्योगिक क्षेत्र की नई व्यवस्था की दुर्बलता यह है कि, दोनों व्यवस्थाओं के विभिन्न स्तरों में परस्पर संप्रेषण का अभाव रहता है,

इसलिए औद्योगिक समाज और आदिवासी समाज के संगत संबंध स्थापित करने के लिए व्यापक शैक्षणिक कार्यक्रमों में औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा प्रारम्भ करना अतिआवश्यक होगा ताकि अधिक गरीब आदिवासी समुदाय भी इस योग्य बन जाये कि, वे प्रशासनिक एवं औद्योगिक गतिविधियों की भूमिका को समझ सके, उनका जायजा ले सकें तथा जरूरत पडने पर उन उद्योगों में प्रयुक्त तकनीकि विधियों को सीख सकें। इस तरह का संगठित व्यापक '' नागरिक शिक्षा '' कार्यक्रम इस समुदाय को रक्षा कवच प्रदान करने में सहायक होगा।

4. मजदूर के रूप मे उनकी दशा दयनीय है, न तो ये एक निश्चित समय-सारणी में बधे औपचारिक ढ़ग से कार्य करने के आदि है और न ही उनके पारिश्रमिक तौर-तरीको से परिचित है। कार्य स्थल पर इनसे पशुवत व्यवहार किया जाता है, जिससे इनके स्वास्थ्य विकास एवं सुविधाओं की पूर्णतया उपेक्षा होती है।
   अत: इन्हें '' न्यूनतम स्वीकृत पारिश्रमिक '' एवं '' कार्यों की निश्चित अवधि '' निर्धारित की जाना चाहिए। प्रत्येक उद्योग में फैक्ट्री अधिनियमों व श्रमकल्याण कानून का सख्ती से पालन उद्योगपतियों को करवाया जाना चाहिए।
5. छोटे धंधों एवं आवास के लिए इन आदिवासी परिवारों को अनुदान व ऋण सुविधा सरकार द्वारा दी जानी चाहिए।
6. इस क्षेत्र में प्रदूषण नियंत्रण को कम करने हेतु कारगर कदम उठाना चाहिए।
7. उक्त सुझाव पर अमल करके एक बेहतर योजना निर्मित की जा सकती है। वर्तमान समय में आदिवासियों के सामाजिक-आर्थिक विकास में आने वाली बाधाओं को दूर करने की आवश्यकर्त्ता है। केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा श्रमिक एक्ट और कारखाना एक्ट में यह प्रावधान किया जावें कि, औद्योगिक क्षेत्र में स्थापित किये जा रहे उद्योगों में उन स्थानीय व्यक्तियों को रोजगार देने की प्राथमिकर्त्ता हो। जिन व्यक्तियों की भूमि पर उद्योग स्थापित होता है, उन व्यक्तियों को भू-मुआवजा मिलने के साथ ही उन परिवारो के सदस्यों को योग्यता और गुणवत्ता के आधार पर रोजगार उपलब्ध कराया जावें। आदिवासी समुदाय के व्यक्तियों को रोजगार देने में विशेष आरक्षण की सुविधा, ताकि इस समुदाय को एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर स्थानांतरण न होना पड़े।

संदर्भ ग्रन्थ

लेखक का नाम	सन	पुस्तक एवं प्रकाशक
अग्रवाल जी. के. एवं पांडे एस. एस.	1990	सामाजिक सर्वेक्षण व अनुसंधान, आगरा बुक स्टोर, आगरा
उप्रेती हरिशचन्द्र	1999	भारतीय जनजातीय, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
उपाध्याय विजयशंकर एवं शर्मा विजयप्रकाश	1989	भारतीय जनजातीय संस्कृति, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
कुमार डॉ. प्रमिला	1997	मध्य प्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
गुप्ता रघुराव एवं गुप्ता एस. एस.	1989	भारत में औद्योगिकरण की प्रक्रिया विवेक प्रकाशन दिल्ली

तालिका क्र. 2
अध्ययनित परिक्षेत्र के ग्रामों के स्वरूप एव आदिवासी परिवार के सदस्यों का कार्यस्वरूप

क्र.	ग्रामों के नाम	पीथमपुर औद्यो. क्षेत्र से दूरी (कि.मी.)	सर्वेक्षित परिवारों की संख्या	आदिवासी परिवारों के सदस्यों का कार्यस्वरूप										कुल जनसंख्या
				कुशल श्रमिक		अकुशल श्रमिक		कृषि व कृषि संबंधी व्यवसाय		योग		आश्रित परिवार की संख्या		
				संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	
1.	पीथमपुर	0–2	111	89	56.32	125	22	61	8.72	275	19.2	621	26.23	536
2.	सागपुरा	0–2	30	11	6.96	58	10.29	51	7.29	120	8.42	69	6.93	189
3.	मानपुरखुर्द	0–5	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—	—
4.	बगदरी	0–3	45	09	5.69	51	8.97	143	20.45	203	14.2	109	10.55	308
5.	अकोलिया	0–2	19	03	1.89	12	2.11	66	9.44	81	5.68	45	4.12	126
6.	भैंसिया	0–3	21	08	5.63	18	3.16	41	5.85	67	4.70	68	6.83	135
7.	खेड़ा	0–4	62	08	5.06	147	25.88	98	14.2	253	17.7	145	14.37	398
8.	जामोदी	0–4	10	01	1.63	13	2.28	19	2.71	33	2.31	32	3.21	65
9.	खेड़वा	0–4	09	—	—	12	2.11	26	3.71	38	2.66	21	2.11	59
10.	सिलोटिया	0–5	01	—	—	—	—	03	0.42	03	0.21	02	0.02	05
11.	ग्वाला	0–5	09	—	—	—	—	44	2.38	44	3.15	21	2.11	65
12.	बजरंगपुर	0–6	14	06	3.79	16	2.81	34	4.86	56	3.92	50	5.05	106
13.	अम्बापुर	0–5	15	09	5.79	30	5.28	23	3.28	62	4.35	32	3.61	94
14.	कालीबिल्लौद	0–6	07	04	2.53	11	1.93	13	1.86	28	1.96	18	1.80	46
15.	बनजारी	0–3	01	—	—	01	0.17	02	0.28	03	0.21	04	0.40	07
16.	म्हाटखेड़ी	0–3	36	10	6.32	61	10.73	45	6.43	116	8.14	102	10.25	118
17.	[illegible]	0–5	04	—	—	01	0.17	11	1.57	12	0.84	10	1.00	22
18.	[illegible]	0–4	06	—	—	06	1.06	25	4.82	31	2.17	10	1.00	41
	महायोग का प्रतिशत		400	158	11.08	566	39.71	705	49.21	1225	58.88	995	42.12	2420

ग्राम विकास का सशक्त माध्यम स्व-सहायता समूह-एक अध्ययन

डॉ. संजय खरे *

भारत गाँवों का देश है तथा 21वीं सदी के इस विश्व ग्राम में भी इसकी पहचान इसके गाँव में बसने वालों से होती है आज भी भारत देश की 70 प्रतिशत आबादी गाँवों में निवास करती है जिनका मुख्य व्यवसाय खेती-किसानी के साथ-साथ इसे जुड़े अन्य रोजगार हैं। फलत: देश की बड़ी जनसंख्या मौसमी बेरोजगारी के कारण आर्थिक तंगी और बदहाल जीवन जीने के लिये अभिशप्त है।

यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि भारत का वास्तविक विकास तभी हो सकता है, जब इसके गाँवों के लोगों का विकास हो अर्थात् ग्रामीण भारत का विकास करना पहली प्राथमिकता है एवं इस हेतु हमें इनकी संस्कृति, मानसिकता, आवश्यकता, स्थानीय संसाधन, कौशल व तकनीक की जानकारी होना जरूरी है। विभिन्न जातियों एवं समाज के लोग अति गरीब व खेतिहर मजदूर छोटे किसान हैं चूँकि ऐसे लोगों को संस्थागत ऋण तो मिल नहीं सकता फलत: यह लोग साहूकारों के चंगुल में फँसकर काम करने हेतु मजबूर होते हैं ऐसी स्थिति में इनके परिवारों व समुदायों की स्त्रियों की स्थिति और अधिक दयनीय एवं चिंतनीय हो जाती है एवं यह अपने बच्चों के साथ प्राय: पशुवत काम करने व जीने के लिये बाध्य होते हैं।

दुनिया की सभी संस्कृतियों में सामान्य रूप से यह समानता देखी गई है कि अभावग्रस्त लोग समूहों में रहते हुए गुजर-बसर करते हैं। सामूहिकता का यही भाव भारतीय संस्कृति की आत्मा है, जो कि ग्रामीण भारत में गंदी बस्तियों में, गरीब तबको में दलित व वंचित समाजों में होता है। विशेषकर महिलाओं में इसी सामूहिकता के भाव को आधार बनाते हुए निर्धनों/वंचितों को आर्थिक उन्नति का अवसर प्रदान करने के लिये ''स्व-सहायता समूह'' की अवधारणा सामने आयी। विशेष रूप में भारत में जहाँ महिलाएँ अपनी सभी जरूरतों के लिये पुरूषों पर निर्भर रहती है, अकेली महिला के लिए अपनी सीमाओं से बाहर निकलकर कुछ करना एवं आत्मनिर्भर बनना आसान नहीं है। यहीं पर महिला की समूह में काम करने वाली स्वाभाविक प्रवृत्ति को उजागर करते हुए इनमें विश्वास जगाया जाता है कि स्व-सहायता समूहों के द्वारा महिलाओं ने जो भी बचत या कमाई की है उसका अधिकांश भाग परिवार कल्याण में ही व्यय होता है।

''स्व-सहायता समूह'' अवधारणा का सूत्रपात बंगलादेशवासी लघु वित्ता माइक्रो क्रेडिट सिद्धांत के जनक मोहम्मद युनूस खान ने 1990 के पहले दशक में किया। इन्होंने बताया कि एक गरीब आदमी अपनी छोटी-छोटी जरूरतों के लिये जो कर्ज अधिक ब्याज पर साहूकारों से लेता है वह राशि इतनी बड़ी नहीं है जिसके लिये वह साहूकारों व अन्य लोगों के ऊपर निर्भर रहे बल्कि यह राशि स्वयं जरूरतमंद लोग ही एक निश्चित बचत के माध्यम से कुछ अवधि पश्चात् पूरा कर सकते हैं। इसी विचार को साकार करने के लिए मोहम्मद युनूस खान ने एक गाँव के कुछ लोगों का समूह बनाकर काम शुरू किया, जिसमें इन्हें काफी सफलता मिली।

भारत में स्व-सहायता समूह

भारत सरकार की नीति में गरीबी उन्मूलन हमेशा से एक प्राथमिकता रही है। वर्तमान में भारत की लगभग एक तिहाई आबादी गरीबी-रेखा के नीचे जीवन-यापन करती हैं, जो कि देश के विकास में असर डालती है। जाहिर है हमें इस समस्या का समाधान ढूँढना होगा इसी परिप्रेक्ष्य में स्वरोजगार कार्यक्रमों का महत्व बढ़ जाता है, क्योंकि ये कार्यक्रम ही ग्रामीण निर्धनों को आय का टिकाऊ आधार प्रदान कर सकते हैं। हमारे देश में गरीबों की सहायता के लिये बड़े पैमाने पर एकीकृत दृष्टिकोण अपना कर ग्रामीण गरीबों को स्वरोजगार के अवसर प्रदान करने की दिशा में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम पहला बढ़ा प्रयास था। इसी प्रकार लागू किये गये अन्य प्रमुख कार्यक्रमों में ''ग्रामीण स्वरोजगार प्रशिक्षण ;ज्लतेमउद्ध'' ग्रामीण क्षेत्र महिला और बाल विकास, गंगा कल्याण योजना, मिलियन बेल स्कीम प्रमुख हैं। किंतु यह सभी योजनायें अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकीं।

संसाधनों की खपत एवं उपलब्धियों के बीच की खाई को देखते हुए भारत सरकार ने टिकाऊ आधार पर ग्रामीण परिवारों के जीवनस्तर को बेहतर बनाने के लिये बड़े पैमाने पर स्वरोजगार के अवसर स्थानीय समुदायों की सहभागिता निर्धारित करने हेतु, 1 अप्रैल, 1999 से ''स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना'' शुरू की। जिसका उद्देश्य स्व-सहायता समूहों के द्वारा गरीबों की आर्थिक स्थिति सुधारना है। गरीब परिवार आपस में मिलकर एक स्व-सहायता समूह बनाते हैं, सरकार द्वारा उन्हें प्रशिक्षण दिया जाता है, फिर उन्हें उस धंधे को शुरू करने हेतु कर्ज दिया जाता है। इसके अलावा सरकार आधारभूत सुविधाएँ तकनीकी भी उपलब्ध करवाती है।

स्व-सहायता समूह योजना का उद्देश्य

इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वाले परिवार हितग्राहियों का समूह में संघटित कर सहायता देना है। तथा उन्हें तीन वर्ष में गरीबी रेखा के ऊपर लाना है, इसके लिए उसे आय वृद्धि हेतु बैंक ऋण एवं शासन द्वारा अनुदान दिया जाता है। तीन वर्षों में प्रत्येक परिवार की मासिक आय न्यूनतम 200/- रूपये सुनिश्चित करना मुख्य उद्देश्य है।

स्व-सहायता समूह का निर्माण एवं शर्तें

सामान्यत: समूह में या तो केवल पुरूष या केवल महिलायें होती हैं, पुरूष एवं महिलाओं के मिश्रित समूह भी बनाये जाते हैं।

- योजनान्तर्गत समूह में 10-20 सदस्य होते हैं।
- समूह के सभी सदस्य गरीबी रेखा के नीचे वाले होते हैं।
- समूह में एक परिवार का एक से ज्यादा सदस्य नहीं होते।
- समूह के सदस्य नियमित रूप से अपना कोष बनायेंगे एवं बचत का संग्रहण करेंगे।
- समूह की राशि बढ़ाने के लिये समूह को रिवाल्विंग फण्ड दिया जाता है।

समूह गठन का चरण

1. सबसे पहले समूह के सदस्यों को एक जगह मिलने बैठने और बातचीत करने की आदत डाली जाती है, साथ ही सदस्यों के मन में व्याप्त भ्रम, आशंका और चिंता पर विचार-विमर्श करके इनका निराकरण किया जाता है।

2. इस चरण में व्यक्तिगत हित तथा सामूहिक हित के बीच मतभेद उभरता है इसे सुलझाने का प्रयास किया जाता है यह कार्यवाही समूह के सदस्यों के द्वारा आंतरिक रूप से करनी होती ताकि समूह मजबूत और स्थिर बना रहे।

3. इस चरण में समूह काम (जॉब) करने लगता है, और यह समूह कार्यो

* सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

से संबंधित ऐसे विभिन्न क्रिया-कलापों का शुरू कर देता है जो इसके सदस्यों के लिये लाभदायक होते है जैसे नियमित बचत छोटे-छोटे, ऋण हिसाब किताब रखना बैंक के साथ सम्पर्क परिचर्चा इत्यादि।

समूह द्वारा अपनी बचत बढ़ाने के उपाय

1. समूह द्वारा सदस्यता शुल्क लगाकर।
2. समूह द्वारा समूह के बाहर दूसरों को ब्याज पर कर्ज देकर।
3. समूह की बैठक में उपस्थित न होने पर दण्ड लगाकर।
4. आपसी ऋण पर ब्याज दर द्वारा।
5. बचत राशि को आय वृद्धि के साधनों में निवेश करके।

अध्ययन की पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण विकास के क्षेत्र में स्व-सहायता समूह की भूमिका से संबंधित है। अत: विषय के अनुसार साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर यह अध्ययन संपन्न किया गया है। इसमें उन उत्तरदाताओं से साक्षात्कार किया गया है जो ग्रामीण विकास के क्षेत्र में स्व-सहायता समूह की भूमिका अदा कर रही है। इस हेतु अध्ययनकर्त्ता द्वारा साक्षात्कार अनुसूची तैयार कर उत्तरदाताओं से ग्रामीण विकास में उनकी भूमिका का अध्ययन किया गया। प्रस्तुत अध्ययन दमोह नगर के ग्रामीण क्षेत्रों में संपन्न किया गया है।

तालिका क्रमांक - 1

उत्तरदाताओं का आयु वर्ग वार विवरण

क्र.	आयु वर्ग	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	35-40	15	30
2.	41-45	05	10
3.	46-50	20	40
4.	51-60	10	20
	योग	50	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 20 प्रतिशत उत्तरदाता 51-60 आयु वर्ग के हैं तथा 40 प्रतिशत उत्तरदाता 46-50 वर्ष के आयु एवं 10 प्रतिशत उत्तरदाता 41-45 वर्ष आयु के एवं 30 प्रतिशत उत्तरदाता 35-40 वर्ष आयु वर्ग के हैं।

तालिका क्रमांक - 2

उत्तरदाताओं का जाति वार विवरण

क्र.	आयु वर्ग	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	सामान्य	20	40
2.	पिछड़ा वर्ग	25	50
3.	अनुसूचित जाति	05	10
	योग	50	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 40 प्रतिशत उत्तरदाता सामान्य वर्ग के, 50 प्रतिशत निदर्श पिछड़ा वर्ग एवं मात्र 10 प्रतिशत अनुसूचित जाति के हैं।

तालिका क्रमांक - 3

ग्रामीण विकास में स्व-सहायता समूह का महत्व

क्र.	महत्व	उत्तरदाताओं की संख्या
1.	हाँ	45
2.	नहीं	05
	योग	50

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि स्व-सहायता समूह ग्रामीण विकास/ परिवार में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। प्रस्तुत तालिका में 45 उत्तरदाता यह स्वीकार करते हैं कि ग्रामीण विकास में स्व-सहायता समूह का महत्व है। इन 5 उत्तरदाताओं का दृष्टिकोण नकारात्मक है।

तालिका क्रमांक - 4

उत्तरदाताओं को मिलने वाली शासकीय, आर्थिक सहायता से संतुष्टि संबंधी विवरण

क्र.	संतुष्टि	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	20	40
2.	नहीं	30	60
	योग	50	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है, कि उत्तरदाताओं को उनके कार्य के एवज में मिलने वाली शासकीय राशि से 40 प्रतिशत उत्तरदाता संतुष्ट एवं 60 प्रतिशत उत्तरदाता असंतुष्ट पाये गये हैं।

उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट है कि ग्रामीण विकास में स्व-सहायता समूह की महती भूमिका है, विशेषकर महिला स्व-सहायता समूह का गठन होने से ''स्त्री श्रम-शक्ति'' जो घर में अपना मूल्यवान समय बर्बाद कर रही थी, निकलकर विकास रूपी यज्ञ में बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रही है। जो ग्रामीण विकास हेतु शुभ संकेत है।

समूहों की समस्यायें - स्व-सहायता समूह द्वारा बतलाई गई समस्याओं में प्रमुख समस्या निम्न हैं -

1. प्रशिक्षण की कमी।
2. सहायक विस्तार विकास अधिकारी का उचित सहयोग न मिलना।
3. समूह के कार्यों में कमीशन बाजी।
4. बैंकों का पर्याप्त सहयोग न मिलना।
5. समूह गतिविधि के अनुसार प्रशिक्षण का अभाव गतिविधि चुनने की स्वतंत्रता का न होना।

सुझाव

स्व-सहायता समूहों का गठन करते समय इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए, कि समूह के सभी सदस्य समान आवश्यकता वाले एवं गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले हो ताकि, योजना का भरपूर लाभ मिल सके।

इस बात का ध्यान रखा जाये कि समूह सदस्य संख्या ज्यादा न हो। 10 से 12 सदस्य संख्या वाले समूह हो ताकि संचालन में आसानी हो।

1. जहाँ तक संभव हो महिला-पुरूष के अलग-अलग स्व-सहायता समूह बनाये जायें।
2. समूह गठन में यह कोशिश भी होनी चाहिए कि समूह सदस्य पढ़े-लिखे हों। यदि ऐसा संभव न हो तो कम से कम समूह के अध्यक्ष व सचिव का चुनाव करते समय यह ध्यान रखा जावे, ताकि कार्य संपादन में व्यवधान उत्पन्न न हो।
3. बैंक के डिफाल्टर लोगों को सदस्य न बनाया जावे।

संदर्भ

- अग्रवाल, ए.एल. : ''भारत का आर्थिक विकास एवं आयोजन विकास'' पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1984।
- आप्टे, डी.पी. : 'सामाजिक आर्थिक सर्वेक्षण की प्रविधि'' रिसर्च पब्लिकेशन, दिल्ली, 1995
- कौरव, बी.एस.:''म.प्र. पंचायत राज्य अधिनियम'', द्विवेदी लॉ हाऊस, ग्वालियर 1981।
- रेड्डी, जी.एन. : ''एम्पावरमेंट वूमैन थ्रो सेल्फ हेल्प ग्रुप्स एण्ड माइक्रो क्रेडिट'', जर्नल ऑफ रूलर डेवलपमेंट, 21(4)2002।
- सिंह गजवीर : ''ग्रामीण विकास में महिलाओं की सहभागिता : एक समाजशास्त्री अध्ययन'' राधाकमल मुकर्जी।

परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर के मध्य अन्तर्क्रिया का बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किये जाने वाले व्यय पर प्रभाव का अध्ययन

डॉ. रश्मि वर्मा *

प्रस्तुत शोध कार्य मे इन्दौर नगर के विभिन्न आय वर्ग के परिवारों के विभिन्न शैक्षणिक स्तर के बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किये जाने वाले कुल वार्षिक व्यय का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। उपरोक्त उद्देश्य पूर्ति हेतु कुल 971 निदर्शन ईकाईयों से सूचना संकलित की गई। शोध कार्य के परिणामों से ज्ञात होता है कि परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर के मध्य अन्त:क्रिया के परिणामस्वरूप बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किया जाने वाला व्यय प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होता है।

परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर के बढने के साथ साथ बच्चों की शिक्षा ओर परिधान पर किया जाने वाला व्यय क्रमश: बढता है लेकिन प्रतिशत व्यय क्रमश: कम होता जाता है। परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर के मध्य अन्तर्क्रिया का प्रभाव भी सार्थक होता है।

अध्ययन के उद्देश्य – बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किये जाने वाले व्यय पर परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर एवं इनके मध्य अन्तर्किया के प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन से सम्बन्धित शोध कार्यो की विवेचना :–Horton & Hafstrom (1985) के अनुसार बच्चों की आयु बढने के साथ – साथ बच्चों की शिक्षा पर किया जाने वाला व्यय बढता हैं। Mun.c.tsang & somri kidchanadanish (1992), Ghany & schwenk(1993) ,Sundra j. Huston (1995) एवं Kim & hong (1995) के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि परिवार मे बच्चों की आयु एवं संख्या से परिवार द्वारा किया जाने वाला व्यय प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होता है। इसी प्रकार परिवार की आय एवं बच्चों की आयु के बढने के साथ साथ बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किया जाने वाला कुल व्यय बढता है जबकि प्रतिशत व्यय क्रमश: कम होता जाता है। Britton (1974), Peterson (1974) Jean wise (1980) ,Dardis derrick & lehfild (1981) एवं Viljoen (2000) के द्वारा किये गये शोध कार्य के परिणामों से स्पष्ट होता है कि बच्चों के परिधान पर किये जाने वाले व्यय पर परिवार की आय , परिवार की संरचना ,परिवार का सामाजिक स्तर ,पारिवारीक जीवन चक्र अर्थात परिवार के सदस्यों की उम्र एवं परिवार के रहने का स्थान ये सभी ऐसे महत्वपूर्ण कारक है जो परिवार के सदस्यों विशेषकर बच्चों के परिधान पर किये जाने वाले व्यय को सार्थक रूप से प्रभावित करतें है। Winakor (1989) ,Murli & rodge (1991),Sue middeton ,karl ashworth (1997),Harding & Parcival (1999), Lino (1999), Valenzuela (1999),Hodes, curry (1982) ,Wagner & hanna (1983) ,Frisbee(1985), Norum (1989), Jacob (1990), Vatsala .r (1991) ,Norum (1992) एवं Zhang & Norton (1995) के द्वारा किये गये शोध के परिणामों से ज्ञात होता है कि बच्चों की आयु , बच्चों के लिंग ,परिवार की आय , माता का व्यवसाय आदि ऐसे महत्वपूर्ण कारक हैं जो परिवार द्वारा किये जाने वाले व्यय को प्रत्यक्ष व सार्थक रूप से प्रभावित करतें है ।Sunder (1999), Annual report of family income & expenditure survey (2003), National statistical coordition board (2002) , National statistical coordition board (2003) , National statistical officce (2001) , Archy Kirkwood ,jonothan brudshaw (2003) , Down (2003) एवं Merle paats (2003) आप सभी के द्वारा पारिवारीक बजट का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। शोध के परिणामों से ज्ञात होता है कि विभिन्न आय वर्ग परिवारों द्वारा बच्चों के परिधान की अपेक्षा बच्चों की शिक्षा पर तुलनात्मक रूप से अधिक व्यय किया जाता है।

निष्कर्ष :– अध्ययन से सम्बन्धित शोध कार्यो की विवेचना से स्पष्ट होता है कि बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किये जाने वाले व्यय पर परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर अर्थात बच्चों की आयु का प्रत्यक्ष व सार्थक प्रभाव पडता है। परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर के मध्य अन्त:क्रिया के परिणामस्वरूप जैसे–जैसे परिवार की आय एवं बच्चों शैक्षणिक स्तर अर्थात बच्चों की आयु बढती है शिक्षा एवं परिधान पर किया जाने वाला कुल व्यय बढता है जबकि प्रतिशत व्यय क्रमश: कम होता जाता है।

अध्ययन की परिकल्पना – बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किये जाने वाले व्यय पर परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर एवं इनके मध्य अन्तर्किया का प्रभाव सार्थक नही होगा।

अध्ययन के चर। (अ) – स्वतंत्र चर :– परिवार की आय एवं बच्चों का शैक्षणिक स्तर

परिवार की आय :– प्रथम आय वर्ग I- up to 5000 Rs /per month द्वितीय आय वर्ग– II-5001 to 10,000 Rs /per month तृतीय आय वर्ग –III- 10,001 to 15000 Rs /per month चतुर्थ आय वर्ग –IV- 15001 to 20,000 Rs /per month पंचम आय वर्ग –V- Rs 20,001 & above

बच्चों का शैक्षणिक स्तर :– I - up to classe 5th II - classe 6 th to classe 8th III - classe 9 th to classe 10th IV - classe 11 th to classe 12th बच्चों का शैक्षणिक स्तर – प्रस्तुत शोध कार्य मे बच्चों का शैक्षणिक स्तर से शोध कर्ता का आशय बच्चों की आयु से है जो शैक्षणिक स्तर के साथ – साथ क्रमश: बढ रही है।

(ब) – आश्रित चर – बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किये जाने वाले कुल व्यय को आश्रित चर के रूप मे उपयोग किया गया।

निदर्शन ईकाई – प्रस्तुत शोध कार्य में कक्षा पहली से कक्षा बारहवी तक के बच्चों के अभिभावकों का चयन निदर्शन इकाई के रूप मे किया गया।

निदर्शन चुनाव की विधि – प्रस्तुत शोध कार्य मे तथ्य संकलन के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु उद्देश्यपूर्ण निदर्शन, वर्गीकृत निदर्शन एवं दैव निदर्शन विधि का उपयोग किया गया।

निदर्शन का आकार – प्रस्तुत शोध कार्य मे 971 निदर्शन इकाईयों से सूचना संकलीत की गई।

शोध उपकरण – प्रस्तुत शोध कार्य मे तथ्य संकलन हेतु शोधकर्ता द्वारा स्वयं ही साक्षात्कार अनुसूची का निर्माण किया गया। साक्षात्कार अनुसूची को सुविधा की दृष्टि से तीन भागों मे वर्गीकृत किया गया। साक्षात्कार अनुसूची के प्रथम भाग मे परिवार की सामान्य जानकारी एकत्र

* सहायक प्राध्यापक गृहविज्ञान, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

करने के उद्देश्य से सामान्य प्रश्नों को सम्मिलित किया गया जैसै – परिवार की आय ,प्रकार ,गृहणी का व्यवसाय एवं परिवार मे उपस्थित सदस्यों की संख्या विशेषकर बच्चों की संख्या आदि। अनुसूची के द्वितीय भाग मे वार्षिक शिक्षा एवं परिधान बजट पत्रक का निर्माण किया गया। उपरोक्त शिक्षा एवं परिधान बजट पत्रक में बच्चों की शिक्षा एवं परिधान मद् के अन्तर्गत विभिन्न उपमदों पर किये जाने वाले वार्षिक व्यय के बारे मे जानकारी प्राप्त की गई।

तथ्य संकलन – निदर्शन ईकाईयों के चुनाव के पश्चात् बच्चों के अभिभावकों से सम्पर्क स्थापित किया गया अभिभावकों से मिलकर उन्हे अध्ययन के लक्ष्य से अवगत कराने के पश्चात् उत्तरदाता अभिभावकों से सही जानकारी देकर तथ्य संकलन मे सहयोग करने का अनुरोध किया। उत्तरदाता अभिभावकों की सुविधा के अनुसार उनसे एक या दो बार मिलकर अनुसूची को पूर्ण रूप से भरा गया।

सांख्यिकीय तकनीक – सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों को सांख्यिकीय रूप से विष्लेशित करने के लिए तथा संकलित तथ्यों को निर्वचन की दृष्टि से उपयोगी बनाने के लिए औसत , प्रतिशत , 2× 2 असमकोष्ठ फेक्टोरियल डिजाईन एनोवा एवं डंकन्स मल्टिपल रेंज टेस्ट का उपयोग किया गया।

कार्यकारी परिभाषाएँ –

1. बच्चों की शिक्षा पर किये जाने वाला कुल वार्षिक व्यय – बच्चों की शिक्षा पर किये जाने कुल वार्षिक व्यय से शोधकर्ता का आशय बच्चों की शिक्षा की विभिन्न उपमदों जैसे स्कूल फीस ,ट्यूशन फीस ,स्टेशनरी , वाहन ,यूनिफार्म ,जूते ,स्वेटर ,टाई – बेल्ट एवं स्कूल बैग पर किये जाने वाले कुल वार्षिक व्यय से हैं।

2. बच्चों के परिधान पर किये जाने वाला कुल वार्षिक व्यय – बच्चों के परिधान पर किये जाने कुल वार्षिक व्यय से शोधकर्ता का आशय बच्चों के परिधान की विभिन्न उपमदों जैसे घर पर पहनने वाले परिधान ,घर के बाहर पहनने वाले परिधान ,अन्त:वस्त्र ,परिधान की देखरेख ,सिलाई जूतें बरसाती आदि पर किये जाने वाले कुल वार्षिक व्यय से हैं।

तथ्यों का सांख्यिकिय विश्लेषण :–

तालिका क्रमांक– 01

बच्चों की शिक्षा के कुल व्यय के लिए 2×2 असमकोष्ठ फेक्टोरियल, डिजाईन एनोवा

Source of variance	S.S	df	M.S.S	F-value
Educational level of children (A)	75055651.814	3	25018550.605	3.332**
Family income (B)	861456513.0	4	215364128.3	28.681***
AxB	64957199.608	12	5413099.967	0.721
Error	7140900758	951	7508833.604	
Total	5629300779	971		

*** 0.001 के स्तर पर सार्थक ** 0.05 के स्तर पर सार्थक*

तालिका क्रमांक– 01 से विदित होता है कि बच्चों की शिक्षा के व्यय पर बच्चों के शैक्षणिक स्तर का F मान 3.332 है। यह 0.05 के सार्थकता स्तर पर 3/951 df पर सार्थक है। बच्चों की शिक्षा के व्यय पर परिवार की आय का F मान 28.681 है यह 0.001 के सार्थकता स्तर पर 4/951 df पर सार्थक है। इसके सन्दर्भ मे शून्य परिकल्पना ''बच्चों की शिक्षा के कुल व्यय पर बच्चों के शैक्षणिक स्तर एवं परिवार की आय का सार्थक प्रभाव नही होगा'' अस्वीकृत होती है। अत: स्पष्ट होता है कि बच्चों की शिक्षा के व्यय पर परिवार की आय एवं बच्चों का शैक्षणिक स्तर का प्रत्यक्ष एवं सार्थक प्रभाव होता है। बच्चों की शिक्षा के व्यय पर बच्चों के शैक्षणिक स्तर एवं परिवार की आय के मध्य अन्तर्क्रिया का F मान 0.721 है जो सार्थक नही है। इसके सन्दर्भ मे शून्य परिकल्पना ''बच्चों की शिक्षा के कुल व्यय पर बच्चों के शैक्षणिक स्तर एवं परिवार की आय के मध्य अन्तर्क्रिया का सार्थक प्रभाव नही होगा'' स्वीकृत होती है।

तालिका क्रमांक– 02

बच्चों के परिधान के कुल व्यय के लिए 2×2 असमकोष्ठ फेक्टोरियल, डिजाईन एनोवा

Source of variance	S.S	df	M.S.S	F-value
Educational level of children (A)	51896123.071	3	17298707.672	110.05***
Family income (B)	189702251.0	4	47425562.741	301.731***
AxB	5998906.549	12	499908.879	3.180***
Error	149485425.1	951	157187.618	
Total	4336562288	971		

*** 0.001 के स्तर पर सार्थक*

तालिका क्रमांक–02 से विदित होता है कि बच्चों के परिधान के व्यय पर बच्चों के शैक्षणिक स्तर एवं परिवार की आय का F मान 110.051 एवं 301.731 है जो 0.001 के सार्थकता स्तर पर 3.951 df पर सार्थक है। इसके सन्दर्भ मे शून्य परिकल्पना ''बच्चों के परिधान पर बच्चों के शैक्षणिक स्तर एवं परिवार की आय का सार्थक प्रभाव नही होगा'' अस्वीकृत होती है। अत: स्पष्ट होता है कि बच्चों के परिधान के व्यय पर परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर का प्रत्यक्ष एवं सार्थक प्रभाव होता है।

बच्चों के परिधान के व्यय पर बच्चों के शैक्षणिक स्तर एवं परिवार की आय के मध्य अन्तर्क्रिया का F मान 3.180 है यह 0.001 के सार्थकता स्तर पर 12/951 df पर सार्थक है। इसके सन्दर्भ मे शून्य परिकल्पना ''बच्चों के परिधान के कुल व्यय पर बच्चों के शैक्षणिक स्तर एवं परिवार की आय के मध्य अन्तर्क्रिया का सार्थक प्रभाव नही होगा'' अस्वीकृत होती है। अत: स्पष्ट होता है कि बच्चों के शैक्षणिक स्तर एवं परिवार की आय के मध्य अन्त र्क्रिया परिधान पर किये जाने वाले व्यय को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं।

विभिन्न आय वर्ग एवं शैक्षणिक स्तर के बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किये जाने वाले व्यय के मध्यमानों के बीच सार्थक अन्तर ज्ञात करने के उद्देश्य से डंकन्स मल्टिपल रेंज टेस्ट का उपयोग किया गया है जिसका विस्तृत विवरण निम्नानुसार है।

तालिका क्रमांक –03

बच्चो की शिक्षा के कुल व्यय पर परिवार की आय के प्रभाव सम्बन्धी डंकन्स मल्टिपल रेंज टेस्ट

Family income	Mean (in Rs)	2	3	4	5
1 प्रथम आय वर्ग	5449.54	*	*	*	*
2 द्वितीय आय वर्ग	6465.38			*	*
3 तृतीय आय वर्ग	7026.65			*	*
4 चतुर्थ आय वर्ग	8212.95				*
5 पंचम आय वर्ग	8980.02				

** 0.05 के स्तर पर सार्थक*

तालिका क्रमाकं ;03 से विदित होता है कि परिवार की आय बढने के साथ - साथ बच्चों की शिक्षा पर किये जाने वाले कुल औसत वार्षिक व्यय मे भी वृद्धि होती जाती है अत: हम कह सकते हैं कि परिवार की आय बच्चों की शिक्षा के कुल व्यय को सार्थक रूप से प्रभावित करती हैं ।

तालिका क्रमाकं- 04
बच्चो की शिक्षा के कुल व्यय पर
बच्चों के शैक्षणिक स्तर
के प्रभाव सम्बन्धी डंकन्स मल्टिपल रेंज टेस्ट

Educational Level	Mean (in Rs)	2	3	4
1 up to classe 5th	6632.80	*	*	*
2 Classe 11 th to classe 12th	7203.69			
3 Classe 9 th to classe 10th	7206.03			
4 Classe 6 th to classe 8th	7256.02			

*0.05 के स्तर पर सार्थक

तालिका क्रमाकं -04 से विदित होता है कि प्रथम शैक्षणिक स्तर के बच्चों की शिक्षा पर सार्थक रूप से सबसे कम औसत व्यय किया जाता है । चतुर्थ , तृतीय एवं द्धितीय शैक्षणिक स्तर के बच्चों की शिक्षा पर एक समान औसत वार्षिक व्यय किया जाता है जो प्रथम शैक्षणिक स्तर के बच्चों की शिक्षा पर किये जाने वाले कुल व्यय से सार्थक रूप से अधिक है । उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट होता हे कि बच्चों का शैक्षणिक स्तर बच्चों की शिक्षा पर किये जाने वाले व्यय को सार्थक रूप से प्रभावित करता है ।

तालिका क्रमाकं-05
बच्चो के परिधान के कुल व्यय पर परिवार
की आय के प्रभाव
सम्बन्धी डंकन्स मल्टिपल रेंज टेस्ट

Family income	Mean (in Rs)	2	3	4	5
1 प्रथम आय वर्ग	1495.43	*	*	*	*
2 द्वितीय आय वर्ग	1698.83		*	*	*
3 तृतीय आय वर्ग	2034.44			*	*
4 चतुर्थ आय वर्ग	2396.87				*
5 पंचम आय वर्ग	3395.00				

*0.05 के स्तर पर सार्थक

तालिका क्रमाकं ;05 से विदित होता है कि परिवार की आय बढने के साथ - साथ बच्चों के परिधान पर किया जाने वाला कुल औसत वार्षिक व्यय भी क्रमश: बढता जाता है । परिवार की आय के बढने के साथ -साथ विभिन्न आय वर्ग के परिवारों द्धारा बच्चों के परिधान पर किये जाने वाले कुल औसत वार्षिक व्यय के मध्यमानों मे सार्थक अन्तर है । इस आधार पर यह कहा जा सकता हे कि बच्चों के परिधान पर किये जाने वाले कुल औसत वार्षिक व्यय पर परिवार की आय का प्रत्यक्ष व सार्थक प्रभाव पडता है ।

तालिका क्रमाकं 06
बच्चो के परिधान के कुल व्यय पर बच्चों के शैक्षणिक स्तर
के प्रभाव सम्बन्धी डंकन्स मल्टिपल रेंज टेस्ट

Educational Level	Mean (in Rs)	2	3	4
1 up to classe 5th	1655.60	*	*	*
2 classe 6 th to classe 8th	1986.07		*	*
3 classe 9 th to classe 10th	2210.34			*
4 classe 11 th to classe 12th	2370.58			

* 0.05 के स्तर पर सार्थक

तालिका क्रमाकं- 06 से विदित होता है कि प्रथम शैक्षणिक स्तर मे वृद्धि के साथ - साथ बच्चों के परिधान पर किये जाने वाले औसत वार्षिक व्यय मे भी वृद्धि होती जाती है । इस आधार पर हम कह सकते हैं कि बच्चों का शैक्षणिक स्तर बच्चों के परिधान के कुल व्यय को सार्थक रूप से प्रभावित करतें है ।

तलिका क्रमांक ;07
विभिन्न आय वर्ग के परिवारों द्धारा बच्चों की शिक्षा एवं परिधान
पर किये जाने वाले कुल वार्षिक व्यय का तुलनात्मक अध्ययन

विभिन्न आय वर्ग के परिवारों की आय	औसत वार्षिक आय रू	शिक्षा औसत वार्षिक व्यय रू	शिक्षा औसत वार्षिक व्यय प्रतिशत	परिधान औसत वार्षिक व्यय रू	परिधान औसत वार्षिक व्यय प्रतिशत
प्रथम आय वर्ग	59865.312	5449.54	9.10%	1495.43	2.4%
द्वितीयआय वर्ग	112449.996	6465.38	5.74%	1698.837	1.51%
तृतीय आय वर्ग	159825.36	7026.65	4.39%	2034.44	1.20%
चतुर्थ आय वर्ग	205545.84	8212.95	3.99%	2396.73	1.16%
पंचम आय वर्ग	263333.28	8980.02	3.41%	3395.00	1.08%

तालिका क्र. 07 के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि परिवार की आय के बढने के साथ साथ बच्चो की शिक्षा एवं परिधान पर किया जाने वाला कुल औसत वार्षिक व्यय क्रमश: बढता है जबकि प्रतिशत व्यय क्रमश: कम होता है।

निष्कर्ष :-

विभिन्न आय वर्ग के परिवारों मे परिवार की आय एवं बच्चों के शैक्षणिक स्तर के बढने के साथ - साथ बच्चों की शिक्षा एवं परिधान पर किया जाने वाला कुल औसत वार्षिक व्यय क्रमश: बढता जाता है । विभिन्न आय वर्ग परिवारों द्धारा बच्चों के परिधान की अपेक्षा शिक्षा पर तुलनात्मक रूप से अधिक कुल औसत वार्षिक व्यय किया जाता है । उपरोक्त परिणाम एवं पूर्व मे विभिन्न शोधकर्ताओं द्धारा किये गये शोध के परिणामों (जिसका विवरण प्रथम पृष्ठ पर ''अध्ययन से सम्बन्धित शोध कार्यो की विवेचना'' शीर्षक के अन्तर्गत किया गया है ।) में समानता पाई गई है जिसके आधार पर निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि परिवार की आय एवं बच्चों का शैक्षणिक स्तर (बच्चों की आयु) ऐसे महत्वपूर्ण कारक है जो परिवार द्धारा किये जाने वाले व्यय पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालते है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

(1) Annual report of family income & expenditure survey (2003)- "family expenditure patter : 2000" encome & employment statistics division national statistics office republic of PHLIPPINES . web - http://www annual report family expenditure . rephi./

(2) Archy Kirkwood ,jonothan brudshaw (2003) "result from

the family budget" web - http://www result family budget.usa.//

(3) Britton (1974)" clothing quantity budget" family economics review ,page no 3 to 7.

(4) Dardis derrick & lehfild (1981) " clothing demand in united state :a cross sectional analysis" home economics research journal -10 ,page no 212 to 222.

(5) Down (2003), " family spending :a report on 1999 to 2000 family expenditure survey" national statistical publication web - http://www childsupportanalysis.com./

(6) Frisbee(1985)" economic analysis of household clothing expenditure" Canadian home economics journal -35,page no 201-206.

(7) Ghany & schwenk(1993) " impact of income and wife's education on family consumption ezpenditure"journal of consumer studies and home economics , vol-6,page no 21-28.

(8) Horton & Hafstrom (1985) " income elasticity for selected consumption categories :comparison of single female headed & two parent families" home economics research journal , vol -13(3) page no 292-303.

(9) Harding & Parcival (1999) "cost of children : the privet costs of children in 1993-1994" family matters journal 1999 , Australian institute of family , page no 1-10 , web - http:// www aisf.gov.au./

(10) Houdes, curry (1982) "clothing and race : an examination of the effects of race on consumption dissertation abstracts international vol-43 page no 09.

(11) Jean wise (1980) " clothing selection of adolescent boy" dissertation abstracts international vol-48 page no 908.

(12) Jacob (1990) " pattern of expenditure on clothing apparel" clothing review vol-25, page no- 95.

(13) Kim& hong (1995) "leisure expenditure pattern among Korean families" copyright 1995, journal of family economics and resource management biennial division of aafcs.

(14) Lino (1999) " expenditure on children by families" annual report U.S. department of agriculture center for nutrition policy and promotion miscellaneous publication, page no 1528- 2000. web - http://www nfpainc.org./

(15) Mun .c.tsang & somri kidchanadanish (1992) " private resource and the quality of primary education in Thailand" international journal of education research , vol -17, page no 180-198.

(16) Murli & rodge (1991) "income and expenditure pattern of selected rural families" maharastra journal of extension education ,vol-2, page no 115.

(17) Merle paats (2003) "the expenditure pre-household member increased in most expenditure group" stastistical office of Estonia.

(18) Norum (1989) "economic analysis of quarterly household expenditure on apparel"home economics research journal ,vol-17, no-3, page no 228.

(19) Norum (1992) " a reassessment of age & gender specification on household clothing expenditure: development of age category guideline for determining clothing allotments" cloting and textile research journal 11(1) page no 45-54.

(20) National statistical officce (2001) "household expenditure" web - http://www nationalstatististicsoffices.Tokyo.//

(21) National statistical coordition board (2002) " fact sheet average family income and expenditure by income class" web- http://www nationalstatististicsoffices.mindanao.//

(22) National statistical coordition board(2003)"family expenditure" web - http://www nationalstatististicsboard.phi/aue./.

(23) Peterson (1974) "payment for foster parents: cast benefit approach" journal of the national association of social worker ,vol-19 (4) , july 1974.

(24) Sundra j. Huston (1995) " the household education expenditure ratio: exploring the importance of education" copyright 1995 ,journal of family economic and resource management blennial division aafcs. web - http://www householdeducationexpenditure/aafcs./

(25) Sunder (1999) " budget standard the cost of children" family matters journal 1999- Australian economic review , vol-53 winter -1999 . web - http://www aisf.gov.au./

(26) Sue middeton ,karl ashworth (1997) " expenditure on children in great Britain" social policy research journal ,118 july .

(27) Viljoen (2000) "factor that influence household and individual clothing expenditure :a review of research related literature" journal of family ecology and consumer science . web- http://www aisf. Gov.au./

(28) Vatsala .r (1991) "clothing expenditure in Andhra Pradesh" part 1-2, textile dyer & printer, page no 29-33.

(29) Valenzuela (1999) " the cost of children in Australian household :new estimation from the A.B.C household expenditure survey"(a guide to calculating the cost of children) family matters journal 53 winter 1999, page no 1-10.

(30) Wagner & hanna (1983) "the effectiveness of family life cycle variables in consumer expenditure research" journal of consumer research -10, page no 281-291.

(31) Winakor (1989) " the decline in expenditure for clothing relative to total consumer spending" home economics research journal -17, no -3, page no 194, march 1989.

(32) Zhang & Norton (1995) " family member expenditure for clothing categories" family & consumer research journal vol-23,page no-3.

****

''भुखमरी की समस्या तथा खाद्य सुरक्षा अधिनियम''

डॉ. आभा दीक्षित *

वर्ष 2000 में संयुक्त राष्ट्र ने कई लक्ष्य तय किए थे, पहला लक्ष्य था, वर्ष 2015 तक अत्यधिक गरीबी और भूख को आधा कम कर दिया जाएगा, वर्ष 1991-92 के बाद दुनिया में भूख में 91 प्रतिशत की कमी आई है। इसमें सर्वाधिक योगदान चीन और वियतनाम का है तथा यहाँ तक कि बांगलादेश, ब्राजील, क्यूबा, फिजी, घाना, मालदीव तथा वेनेजुएला जैसे छोटे देशों को भी भूख से लड़ाई में प्रशंसा मिली है, लेकिन, अत्यन्त दु:ख की बात है कि भारत इसमें पिछड़ गया है।

भारत की गरीबी बड़ी भयानक है, दुनिया के एक चौथाई गरीब यहाँ रहते हैं। अंतर्राष्ट्रीय खाद्य नीति अनुसंधान संस्थान के द्वारा जारी 'ग्लोबल हंगर इंडेक्स 2010' ने समस्त देश के लिए चिंता की लकीरे खींच दी है। ''डैमोग्राफिक डिविडेंड'' के आधार पर देश को ''सुपर पॉवर बनाने की जो सुनहरी तस्वीर पेश की जा रही है वो धूमिल हो रही है। हंगर इंडेक्स में विश्व के 84 देशों में 67 वां स्थान दर्ज किया गया है जो कि देश में भुखमरी, अल्पपोषण व कुपोषण की भयावह तस्वीर को उजागर करता है।

भारत में भूखमरी व कुपोषण की स्थिति -

भारत में कुल 26 करोड़ 93 लाख लोग गरीब है। प्रतिदिन 2000 बच्चों की मौते भूख से होती है तथा 46 प्रतिशत कुपोशित बच्चे है। भुखमरी की हालत कितनी भयानक है ये निम्न तालिका से पता चलता है। जिसमें, भारत के खास सात राज्यों के भूख-स्तर की तुलना उनके आंकड़ों के करीबी देशों से की गई है -

क्रं.	राज्य	भूख स्तर	देश
1	मध्यप्रदेश	30-87	इथोपिया
2	बिहार	27-30	यमन
3	गुजरात	24-70	बांग्लादेश
4	महाराष्ट्र	22-80	दजिनौति
5	असम	19-83	माली
6	केरल	17-63	सेनेगल
7	पंजाब	13-63	फिलिपाईन्स

नोट - *अधिक अंक अधिक भूख-स्तर को दर्शाता है।*

स्त्रोत - *भारतीय राज्य भूखमरी सूचकांक 2008 और विश्व भूखमरी सूचकांक 2008*

भुखमरी की समस्या को दूर करने के सरकारी प्रयास

भारतीय संविधान की धारा 47 में यह प्रावधान है कि सरकार, लोगों का, जीवन-स्तर उठाने, आहारों की पौष्टिकता में वृद्धि करने तथा प्राथमिक स्वास्थ्य में सुधार लाने जैसे कार्यो को प्राथमिकता के आधार पर करेगी एवं खाद्य सुरक्षा में पौष्टिक व कैलोरीयुक्त खाद्यान्नों की आपूर्ति, स्थानीय स्तर पर उपलब्ध करायेंगी।

ऐसा नहीं है कि भारत में भुखमरी की समस्या को दूर करने के प्रति उदासीनता रही है। भारत में हमेशा खाद्य सुरक्षा के मुद्दे पर गंभीरता दिखाई गई। समय-समय पर खाद्य सुरक्षा के लिए कई कार्यक्रम चलाए गए, जिनका वर्षवार ब्यौरा नीचे दिया गया है -

वर्ष	योजना
1966	खाद्यान्न उपलब्धता बढ़ाने के लिए हरित क्रांति की शुरूआत
1975	''गरीबी हटाओ'' के अन्तर्गत 20 सूत्री कार्यक्रम।
1978	जनता पार्टी द्वारा समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम
1995	मध्यान्ह भोजन योजना
2000	''अन्त्योदय भोजन योजना''
2001	राजग सरकार द्वारा ''संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना''
2005	मनरेगा
2013	''खाद्य सुरक्षा अधिनियम''

खाद्य सुरक्षा अधिनियम -

वर्तमान में सरकार द्वारा राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा बिल अध्यादेश के द्वारा लाया गया है, जिसकी खास बातें निम्नलिखत हैं -

- बी.पी.एल., प्रतिव्यक्ति, हर माह पांच किलो चावल, गेहूं, और मोटा अनाज उपलब्ध कराने का प्रावधान।
- चावल 3 रू. गेहूँ 2 रू. मोटा अनाज 1 रू. प्रति किलो की दर से मिलेगा।
- खाद्यान्न या भोजन उपलब्ध नहीं होने की स्थिति में खाद्य सुरक्षा भत्तो की व्यवस्था।
- इस योजना के तहत राशन कार्ड में घर की मुखिया महिलाएँ मानी जाएगी।
- 75 प्रतिशत ग्रामीण आबादी और 50 प्रतिशत शहरी आबादी इसके दायरे में शामिल।
- देश के 67 प्रतिशत लोगों को इस योजना का फायदा मिलेगा।
- खाद्य सुरक्षा बिल के कारण 3,14000 करोड़ रू. का खाद्य सब्सिडी का खर्च हो जायेगा यानी जीडीपी का 3 प्रतिशत।

इस विधेयक की सबसे अहम बात यह है कि इसमें पहली बार यह माना गया है कि भोजन प्राप्त करना हर नागरिक का कानूनी अधिकार है। इस बिल के पश्चात् देश में करीब 32 करोड़ लोगों को एक वक्त भूखे पेट नहीं सोना पड़ेगा। सरकार ने 2015 तक देश से भुखमरी खत्म करने का लक्ष्य रखा है। परंतु अकसर अधिकार तो लोगों को दे दिया जाता है पर व्यवस्था में जब तक सुधार नहीं होगा, तब तक, सूरत-ए-हाल नहीं बदलेंगे।

जाने माने अर्थशास्त्री ज्यां ड्रेज के अनुसार - खाद्य सुरक्षा जैसी योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए सबसे जरूरी होता है कि लोगों को उनके हक, उनका अधिकार मालूम हो। अगर लोगों को उनके लिए बनाई गई योजनाओं और उनके अधिकारों के बारे में पता ही नहीं है तो फिर उन्हें धोखा देना, बेईमानी करना आसान हो जाता है। उनका कहना है कि - ''मेरी नजर में बड़ी खामी यह है कि इस योजना के हकदार परिवारों को कैसे पहचाना जाए ? यह इस बिल में साफ नहीं किया गया है। पहचान राज्य सरकारों के हाथ में है इसका मतलब है कि, यह बिल किसी को भी कानून तौर पर यह अधिकार नहीं देता। दूसरी शिकायत के समाधान के प्रावधान इस बिल में बहुत कमजोर है।''

* सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

विधेयक में किए गए प्रावधानों के मुताबिक खाद्य सुरक्षा कानून क्रियान्वयन के लिए पूरा अनाज केन्द्र सरकार द्वारा राज्यों को उपलब्ध कराया जाएगा लेकिन, राज्यों से यह अपेक्षा भी की गई है कि वे सुनिश्चित करेंगे कि अनाज लक्षित लोगों तक पहुंच जाए। इसके लिए राज्यों को राज्य, जिला एवं ब्लॉक स्तर पर भंडारण और ट्रांसपोर्ट सुविधाएँ अपने खर्च से करनी होंगी। इस विषय में देरी या कोताही होने पर राज्यों को अपने खजाने से खाद्य सुरक्षा भत्ता देना होंगा। जाहिर है राज्य सरकारों पर बहुत भार है। जिसके लिए अतिरिक्त आय की जरूरत पड़ेगी। निम्न संभावित उपायों द्वारा सरकार अपने लिए अतिरिक्त आय का प्रबंध कर सकती है –

(1) शिक्षा उपकर की ही तरह कोई उपकर लगाकर।
(2) विलासिता की वस्तुओं पर अतिरिक्त कर लगाकर।
(3) कर का क्षेत्र बढ़ाकर।
(4) काला धन बाहर निकालकर।
(5) नोबेल पुरस्कार विजेता अमर्त्य सेन के सुझावानुसार आभूषणों पर कर लगाकर।

यद्यपि सरकार द्वारा सभी किंतुओं का जवाब देने की कोशिश की गई है तथापि, खाद्य सुरक्षा बिल की सफलता के लिए तीन बातें अत्यन्त जरूरी है पहली– खाद्यान्न उत्पादन, दूसरी भंडारण तथा तीसरी वितरण। अभी तक सरकार इन तीनों मोर्चा पर अपनी अप्रासंगिक नीतियों के चलते असफल ही रही है। उदाहरणार्थ – एक निश्चित मूल्य जिसे न्यूनतम समर्थन मूल्य कहा गया, पर सरकार ने स्वयं खरीददारी करके अपनी स्वयं की यानी राशन की दुकानों के माध्यम से रियायत दरों पर जनता को गेहूं, चावल, चीनी आदि उपलब्ध कराया। हर साल लगभग 80 हजार करोड़ रू. की भारी भरकम राशि बरबाद की जाती है। अनाज खासकर गेहूं की खरीद भंडारण, रखरखाव आदि के अलावा भारतीय खाद्य निगम व उसके स्टॉफ के वेतन, भत्तो आदि के समस्त खर्चे इसमें शामिल है। आज हालत यह है कि, एक तरफ तो सरकारी गोदामों में गेहूं पड़ा सड़ता रहता है।

दूसरी ओर, बाजार में गेहूं के दाम आसमान छूते रहते है। सरकार गेहूं चावल आदि के उत्पादन को तो बेतहाशा बढ़ावा दे रही है पर दाल व तेल तिलहन को नहीं। नतीजा यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप अच्छी गुणवत्ता वाली रबी की फसल यानी गेहूं हमें मिल नहीं पाता और निर्यात की भरपूर संभावनाओं के बावजूद सारा का सारा खाद्यान्न सड़कर या तो चौथाई दामों में शराब कंपनियों को देना पड़ता है या फिर पशुओं के चारे के रूप में आस्ट्रेलिया, अमेरिका जैसे देश बेहद कम दामों में ले लेते है। सरकार के दामों में फिलहाल 6.6 करोड़ टन अनाज जमा है जो बफर स्टॉक के लिए निर्धारित 2.1 करोड़ टन क्षमता से लगभग तीन गुने से भी ज्यादा है।

सरकार की सकल भंडारण क्षमता 7.15 करोड़ टन है जबकि कुल स्टॉक का आंकड़ा करीब 11 करोड़ टन तक पहुंच सकता है। मतलब सीधे लगभग 4 करोड़ टन अनाज खुले में रखा हुआ सड़ेगा। आस्ट्रेलिया, अमेरिका व चीन जैसे अति उन्नत देशों की सरकार भी अपने किसानों को सब्सिडी तो भरपूर देती है पर उनके उत्पाद को खुद खरीदने का ठेका नहीं लेती। देश में इस वक्त तकरीबन 415 लाख टन अनाज सुरक्षित रखे जाने का इंतजाम है जबकि लगभग 190 लाख टन अनाज केवल पन्नियों से ढक कर रखा जाता है।

इसके अतिरिक्त तीन सालों में महंगाई 5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत हो गई। गांवों में प्रति व्यक्ति मासिक आय 816 रू. व व्यय 1287 रू. है तथा शहर में मासिक आय प्रति व्यक्ति 1287 रू. तथा व्यय 2477 रू. है । क्रयशक्ति की अपर्याप्तता के कारण गरीब वर्ग ही खाद्य असुरक्षा के सर्वाधिक शिकार है।

इसके अतिरिक्त खाद्य सुरक्षा का मुख्य भार किसानों के कंधों पर है। हमारे खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम के केन्द्र में आर्थिक रूप से लाभप्रद और चिरस्थायी कृषि होनी चाहिए थी। देश में सिर्फ 14 करोड़ हेक्टेयर ही खेती लायक जमीन है। भविष्य में खेती की जमीन में और कमी ही आएगी क्योंकि बाढ़ सूखे और खारे पानी से जमीन की उर्वरा शक्ति भी कम होगी। किसान आयोग की रिपोर्ट के अनुसार मौजूदा परिस्थिति में देश के 40 प्रतिशत किसान खेती बाड़ी छोड़ना चाहते है। अपने देश में 2500 किसान रोज खेती करने से किनारा कर रहे है। कृषि के क्षेत्र में इस गहरे संकट के पीछे उत्पादन का खर्च है। विदेशी कंपनियां भारतीय जमीन पर कब्जा कर रही है। दु:खद है कि विगत वर्षो में खेती घाटे का सौदा साबित होने के कारण ऋण के जाल में फंसे किसानों में आत्महत्या की घातक व निराशाजनक प्रवृत्ति बढ़ रही है।

देश को भुखमरी के चुंगल से मुक्त करने हेतु खाद्यान्नों की पूर्ति बढ़ाने के साथ ही खाद्यान्नों की वितरण व्यवस्था का समुचित प्रबन्धन भी नितांत आवश्यक है ताकि गरीब वर्ग की खाद्यान्नों तक पहुंच संभव हो सकें। अभी तक सार्वजनिक वितरण प्रणाली की वस्तु रचना ऐसी है कि इनका उपभोग ज्यादातर समाज के सापेक्षता समृद्ध वर्गों द्वारा किया जाता है । इसके अतिरिक्त भारतीय खाद्य निगम द्वारा उचित कीमत की दुकानों को उपलब्ध कराए गए खाद्यान्नों का खुले बाजार में विक्रय और राशन की दुकानों पर घटिया अनाज उपलब्ध कराना इसकी मुख्य कमजोरी रही है।

कृषि मंत्री शरद पंवार ने भी स्वीकार किया है कि इस योजना के तहत् भेजा जाने वाला अनाज तस्करी के माध्यम से नेपाल और बंगलादेश पहुंचा दिया जाता है। सर्वोच्च न्यायालय भी इस प्रणाली की सार्थकता पर प्रश्नचिन्ह लगा चुका है। स्पष्ट है कि बिना पीडीएस में सुधार के भुखमरी नहीं मिटेगी। इसके अलावा, भारतीय खाद्य निगम गरीबों को खाद्य–सुरक्षा उपलब्ध कराने का सबसे उचित संस्थान नहीं है। भारतीय खाद्य निगम को खाद्य कीमतों को स्थिर करने की जिम्मेदारी दी जाए और पंचायती राज संस्थाओं को खाद्यान्न के आबंटन का कार्य राज्य सरकारों को सौंप दिया जाए।

निष्कर्ष व सुझाव –

अत: खाद्य सुरक्षा बिल भुखमरी की समस्या से निजात दिलाने में कामयाब हो पायेगा कि नहीं ? इसमें संदेह है। इस बिल के विरोधियों का तर्क है – कि गरीबी रेखा से नीचे, जीवन यापन करने वाले (बीपीएल) परिवारों को इस समय हर महीने प्रति प्ररिवार 35 किलो अनाज मिल रहा है, जबकि खाद्य सुरक्षा बिल लागू होने के बाद प्रति परिवार को केवल 25 किलो अनाज ही मिलेगा। खाद्य सुरक्षा बिल के प्रावधान के आधार ही मिलेगा। खाद्य सुरक्षा बिल के प्रावधान के आधार पर बी.पी.एल. परिवार के हर सदस्य को हर माह 5 किलो अनाज मिलेगा और केन्द्र सरकार के आंकलन के आधार पर एक परिवार में पाँच सदस्य होते है। अत: खाद्य सुरक्षा बिल से गरीबों को 28 प्रतिशत कम अनाज मिलेगा।

इस अध्यादेश में एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि जब सरकार के अनुसार 21 प्रतिशत ही गरीब है तो फिर सरकार 67 प्रतिशत लोगों को खाद्य सुरक्षा क्यों दे रही है ? फिलहाल रूपये के मूल्य में अप्रत्याशित गिरावट जारी है ऐसे में इतनी सब्सिडी का बोझ पहले से ही बढ़े हुए राजकोषीय घाटे को विस्फोटक बना देगा। फिर, भारत में अकेले वर्ष 2012 में ही अमीरों और गरीबों के बीच आय की असमानता में और 12 प्रतिशत की वृद्धि हो गई है। यानी गरीबों की तादाद वास्तव में बढ़ती ही नजर आ रही है।

इस महत्वकांक्षी योजना का हश्र भी पूर्व की योजनाओं जैसा ही बेअसर ना हो इसलिए, सरकार को ईमानदारी से पुरानी योजनाओं का मूल्यांकन

करना चाहिए तथा कृषि उत्पादन, खाद्यान्न कीमतों में नियंत्रण, वितरण भंडारण की विसंगतियों को दूर करने के अतिरिक्त गरीबों की सही गणना करना जरूरी है। जैविक खेती को प्रोत्साहन, नैनो टेक्नोलॉजी और बॉयोटेक्नोलॉजी के साथ रोजगार और क्रय-शक्ति को बढ़ाने के लिए भी उपाय करने पड़ेगे।

यह भी ध्यान में रखना होगा कि पहले, खाद्य सुरक्षा का अर्थ पेटभर रोटी के संदर्भ में समझा जाता था किन्तु आज खाद्य सुरक्षा से आशय भौतिक, आर्थिक और सामाजिक स्थितियों की पहुंच के अलावा संतुलित आहार, साफ पीने का पानी, स्वच्छ वातावरण एवं प्राथमिक स्वास्थ्य रखरखाव तक जा पहुंचा है।

इस खाद्य सुरक्षा अधिनियम पर राष्ट्रपति द्वारा मुहर लगा दी गई है तथा कुछ चयनित राज्यों में शीघ्र ही लागू होने जा रहा है। आने वाला समय ही बताएगा कि, इसका ध्येय राजनीतिक था या भुखमरी समाप्त करने की ओर एक सार्थक कदम था।

संदर्भ -

1. ''भारतीय अर्थव्यवस्था'' - रूद्र दत्त और के.पी.एम. सुंदरम
2. ''भारत'' 2005
3. ''गरीबी और अकाल'' - अमर्त्य सेन
4. कुरूक्षेत्र - मार्च 2012
5. सरिता - मई द्वितीय 2013
6. हिन्दुस्तान टाईम्स, जुलाई 28, 2013
7. बिजनेस भास्कर - 5 जुलाई, 6 जुलाई 2013
8. पत्रिका - 7 जुलाई 2013
9. दूरदर्शन - राज्य सभा चैनल दि. 11/08/13 'सारोकार' कार्यक्रम

****

भारत का हंगर मेप

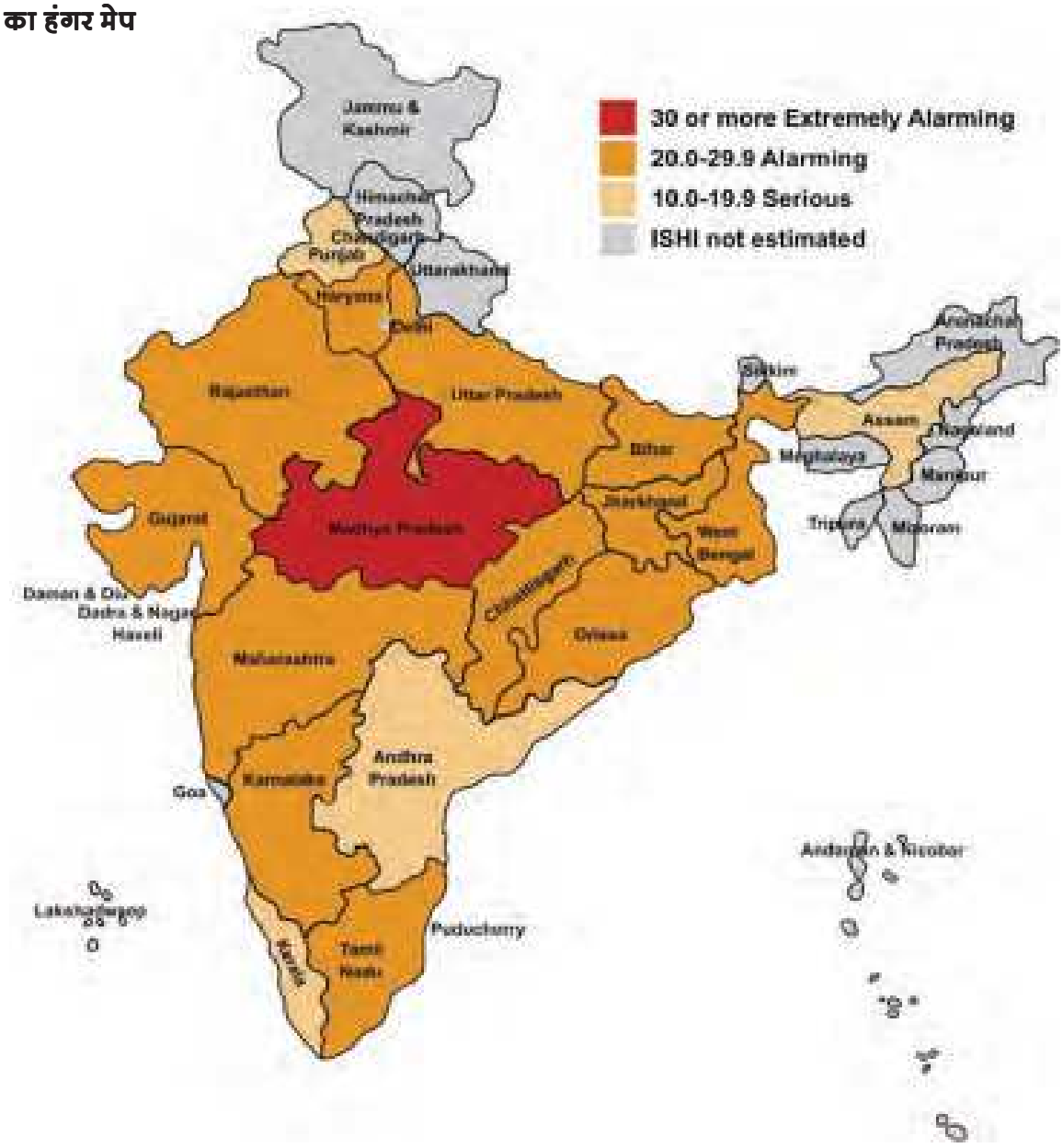

जल प्रदूषण की समस्या : कारण, प्रभाव एवं निदान

डॉ.लक्ष्मण परवाल *

पृथ्वी पर जीवन की शुरूआत पानी से ही हुई। या यूं कहें कि पानी सृष्टि के आरंभ से संबद्ध है। आज भी हम अन्य ग्रहों पर जीवन की खोज करते हैं, तो सबसे पहले पानी की उपस्थिति को ही जांचते हैं। यानि पानी के बिना जीवन असंभव है, इसी बात से पानी की महत्ता समझ में आ जाती है। इस धरती पर जहां कहीं भी सभ्यताओं का अभ्युदय हुआ वे स्थान वास्तव में नदियों के किनारे रहे हैं। अत: हम कह सकते हैं कि नदियों के किनारों पर ही सभ्यताओं का विकास हुआ। फिर चाहे, वो सिन्धु घाटी की सभ्यता हो, या कोई अन्य सभ्यता। इस बात के स्पष्ट प्रमाण उपलब्ध हैं कि लगभग 5000 वर्ष पहले पहली मानव सभ्यता नदियों के किनारे विकसित हुई। मिस्र की सभ्यता ने नील नदी के किनारे हड़प्पा की सभ्यता सिन्धु नदी तो चीनी सभ्यता यागसे नदी के किनारे पुष्पित और पल्लवित हुई। एक कोषकीय जीव अमीबा के प्रादुर्भाव से लेकर आधुनिकतम मानव तक के विकास में जल की भूमिका अहम रही है। यदि प्राण वायु के बिना हमारा जीवन कुछ मिनटों से ज्यादा नहीं रह सकता, तो जल के बिना हम कुछ दिनों से ज्यादा जीवित नहीं रह सकते। हमारे शरीर का 65 % भाग जल ही है।

पृथ्वी का दो तिहाई भू-भाग जल से घिरा हुआ है। पृथ्वी पर जल की मात्रा 1.4 मिलियन क्यूबिक मीटर आंकी गई है। जिसका 97.57 % भाग महासागरों में होने के कारण खारा जल है। लगभग 36 क्यूबिक मीटर स्वच्छ एवं मृदु जल जो उपयोग के योग्य है, उसमें से लगभग 28 मिलियन क्यूबिक मीटर जल बर्फ के रूप में ध्रुवों पर जमा है। हमारे वास्तविक उपयोग के लिये उपलब्ध लगभग 8 मिलियन क्यूबिक मीटर जल पर दुनियां की लगभग 6 अरब से ज्यादा की आबादी निर्भर है। पृथ्वी की सतह या इसके गर्भ में उपलब्ध जल जो नदियों, तालाबों, झीलों, कुओं या नलकूप के माध्यम से हमें उपलब्ध है, हम उसी का उपयोग अपने दैनिक जीवन में कर सकते हैं। वो भी तब, जब यह जल किसी भी प्रकार के प्रदूषण से मुक्त हो। शुद्ध जल वास्तव में अनमोल है और इसके स्त्रोत सीमित हैं। इसी से हम इसके बेशकीमती होने का अंदाजा लगा सकते हैं।

जीवनदायी, अमृत तुल्य जल हानिकारक और अवांछित योगिकों या पदार्थों के मिलने से जानलेवा भी हो सकता है। वास्तव में यही जल प्रदूषण है। जल में भौतिक, रासायनिक अथवा जैवकीय गुणों में इस तरह का परिवर्तन अथवा औद्योगिक अपशिष्टों के बहिस्राव अथवा अन्य किसी द्रव्य पदार्थ या गैसीय पदार्थ या ऐसे ठोस पदार्थ के उसमें मिलने से स्वास्थ्य के लिये हानिकारक हो या उसका घरेलु, व्यावसायिक, औद्योगिक तथा कृषि के कार्यों में उपयोग न किया जा सके या जनजीवन, पैड़-पौधों तथा जीव-जन्तुओं पर उसका विपरित प्रभाव पड़ता है। प्राकृतिक जल स्त्रोतों में अवांछनीय पदार्थों के मिलने से जल प्रदूषण की स्थिति बनती है।

भारत में पेयजल की स्थिति :-जनगणना 2011 के अनुसार भारत में पेयजल की स्थिति इस प्रकार है :-

- 43.3 % घरों में पाईप लाईन के जरिये पानी आता है, जिसमें से 32 % उपचारित जल होता है और 11.3 % अनुपचारित।
- 42 % घरों में हेण्डपम्प और नलकूप का इस्तेमाल होता है।
- 11% लोग कुएं का पानी प्रयोग करते हैं, जिनमें से 1.6% कुएं ही ढके हुए हैं।
- 3.7 % लोग ही पानी के अन्य स्रोतों का उपयोग करते हैं।
- ग्रामीण क्षेत्रों में 51.9 % घर परिवार हेण्डपम्प/नलकूप पर निर्भर करते हैं जबकि 31.8 % घरों में पाईप से पानी आता है।
- भारत में 47% परिवारों में पानी का स्रोत उनके अपने घर में ही उपलब्ध है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में 36 % परिवारों को 500 मीटर की दूरी और शहरी क्षेत्रों में 100 मीटर की दूरी से पानी लाना पड़ता है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में 17 % लोग ऐसे हैं जिन्हें 500 मीटर और शहरी क्षेत्रों में 100 मीटर से भी अधिक की दूरी से पानी लाना पड़ता है।
- भारत में पीने का पानी ग्लेशियरों से प्राप्त होता है और ग्लोबल वार्मिंग की वजह से ग्लेशियर का पानी भी हमसे दूर होता जा रहा है। वर्तमान में भारत में 303.6 मिलियन क्यूबिक फीट पानी प्रतिवर्ष एशियाई नदियों को हिमालय के ग्लेशियर्स से प्राप्त हो रहा है।

भारत में सिंचाई कार्यों के लिये 70 % जल भूमिगत जल स्रोतों से प्राप्त होता है और घरेलू कार्यों के लिये 80 % जल की आपूर्ति भूमिगत जल स्रोतों से की जाती है।

जल प्रदूषण के प्रमुख कारण :-

जल प्रदूषण से न केवल मनुष्य वरन जलीय जीव-जन्तु, वनस्पति, बल्कि सम्पूर्ण जलीय पारिस्थितिकीय तंत्र प्रभावित होता है। न केवल जल का उपयोग करने वाले वरन जल स्रोतों में पाये जाने वाले जलीय जीवों या वनस्पतियों का सेवन करने वाले भी इन प्रदूषणों की चपेट में आ जाते हैं, क्योंकि जलीय जीव या वनस्पति इन प्रदूषणों को ग्रहण या अवषोशित कर उपयोग करने वालों तक इन्हें पहुंचाने का माध्यम बन जाते हैं। जल प्रदूषण की सबसे बड़ी त्रासदी इस रूप में दुनिया के समक्ष आई थी। जापान के मिनीमाता शहर में मरकरी से प्रभावित मछलियों का सेवन करने से अनेक लोग मारे गये थे। जल प्रदूषण के प्रमुख कारण निम्न हैं :-

- औद्योगिक इकाईयों के अनुपचारित या अपूर्ण उपचारित दूषित जल के जल स्रोतों में मिलने से।
- अनुपचारित घरेलू दूषित जल के जल स्रोतों में मिलने से।
- कृषि कार्य में उपयोग में आने वाले कीटनाशकों और उर्वरकों के वर्षा जल के बहाव के साथ जल स्रोतों में मिलने से।
- घरेलू एवं औद्योगिक ठोस अपशिष्टों एवं इनके लीचेट के जल स्रोतों में मिलने से।
- औद्योगिक गतिविधियों के कारण उत्पन्न अथवा इनमें प्रयुक्त रसायनों के वर्षा जल के सम्पर्क में आने से अथवा भूमि के भीतर प्रवेश करने से।
- भूगर्भीय चट्टानों की विशैली प्रकृति के कारण।
- उत्खनन गतिविधियों से।
- नदियों के किनारे बसे नगरों में जल-अधजले शव तथा मृत जानवर नदियों में फेंक दिये जाते हैं।
- नदियों, जलाशयों में कपड़े धोने, कूड़ा-कचरा फेंकने व मलमूत्र विसर्जित करने से भी तथा अन्य गतिविधियों से जल प्रदूषित होता है।

* प्राध्यापक वाणिज्य संकाय, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

जल प्रदूषण के प्रभाव :- जल को अमृत कहा गया है। जल के बिना हम सृष्टि की कल्पना नहीं कर सकते। जीवन के लिये वायु के बाद सबसे प्रमुख अवयव जल ही है। यही जल जो जीवन का अनिवार्य अंग है, जब इसमें हानिकारक, अवांछनीय या विषैले पदार्थ मिल जाते हैं तो ये जल को विष बना देते हैं। भारत में दूषित जल के प्रभाव निम्नलिखित हैं :-

- विभिन्न उद्योगों और मानव बस्तियों के कचरे ने जल को इतना प्रदूषित कर दिया है कि पीने के लिये उपलब्ध 0.3 % जल में से मात्र 30 % जल ही वास्तव में पीने के लायक रह गया है।
- विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक अध्ययन के अनुसार दुनियां भर में 86 % से अधिक बीमारियों का कारण असुरक्षित व दूषित पेयजल है।
- विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में करीब 60 % बीमारियों की मूल वजह जल प्रदूषण है।
- एक अनुमान के अनुसार दुनिया में आधी से ज्यादा नदियां प्रदूषित हो चुकी हैं और इनका पानी पीने योग्य नहीं रहा है और इन नदियों में पानी की आपूर्ति भी निरंतर कम हो रही है।
- दुनिया में जल की उपलब्धता वर्ष 1989 में 9000 क्यूबिक मीटर प्रति व्यक्ति थी जो वर्ष 2025 तक 5100 क्यूबिक मीटर प्रति व्यक्ति हो जायेगी और यह स्थिति मानव जाति के संकट की स्थिति होगी ।
- वर्तमान में 1600 जलीय प्रजातियां जल प्रदूषण के कारण लुप्त होने के कगार पर हैं।
- विश्व में हर 8 वें सेकण्ड में एक बच्चा गंदा पानी से होने वाली बीमारी से मर जाता है।
- भारत में 05 वर्ष से कम उम्र के 15 लाख बच्चे प्रतिवर्ष प्रदूषित जल से होने वाली बीमारियों से मर जाते हैं।
- जल प्रदूषण से होने वाली बीमारियों पर भारत में प्रतिवर्ष लगभग 4,600 करोड़ रूपये खर्च किये जाते हैं।
- एक अध्ययन के अनुसार देश में 14 बड़ी, 55 लघु और कई 100 छोटी नदियों में मल-जल और औद्योगिक कचरा लाखों लीटर पानी के साथ छोड़ा जाता है ।
- एक अध्ययन के अनुसार भारत में 20 राज्यों की 07 करोड़ आबादी क्लोराइड और एक करोड़ लोग सतह के जल में आर्सेनिक की अधिक मात्रा घुल जाने के खतरों से जुझ रहे हैं।

जल प्रदूषण को रोकने हेतु प्रमुख सुझाव :-पर्यावरण प्रकृति का आधार है । जंगल और जीव-जंतु प्रकृति का वरदान है। आकाश मार्ग से जल पृथ्वी पर कैसे आता है इसके बारे में कहावत है कि जंगल की पुकार पर और पशु-पक्षियों के आमंत्रण पर मेधावलियॉ जल लेकर वर्षा के माध्यम से पानी लाती हैं। जब पृथ्वी पर जंगल और जीव-जन्तु नहीं रहेंगे तो जल के बिना जीवन की कल्पना ही असम्भव है। जल प्रदूषण को रोकने हेतु प्रमुख सुझाव निम्न है-

- जल प्रदूषण की स्थिति से बचने का सबसे महत्वपूर्ण उपाय यही है कि स्वच्छ जल स्रोतों में प्रदूषित जल को मिलने से रोका जाए । इसके लिये प्रत्येक स्रोत से निकलने वाले दूषित जल के समुचित उपचार के पश्चात उसे किसी अन्य उपयोग में लाना अथवा प्रक्रिया में पुर्नचक्रित करना होगा।
- निर्धारित मानदण्डों के अनुरूप उपचारोपरांत उपचारित जल को यदि आवश्यक हो तभी जल स्रोतों में प्रवाहित किया जाना चाहिये।
- औद्योगिक गतिविधियों से बड़ी मात्रा में दूषित जल उत्पन होता है। इस दूषित जल में उपस्थित प्रदूषकों की प्रकृति और मात्रा औद्योगिक उत्पादन के अनुसार होती है। कुछ उद्योगों से उत्पन्न होने वाला दूषित जल अत्यन्त प्रदूषणकारी प्रकृति का गंदा या विषैली प्रकृति का होता है। जबकि कुछ उद्योगों का दूषित जल अधिक प्रदूषित नहीं होता है। इसके अतिरिक्त शीलन, बायलर ब्लोडाउन आदि से निकलने वाला जल अधिकतर सामान्य होता है, जिसे या तो किसी अन्य कार्य में लिया जा सकता है या पुर्नचक्रित किया जा सकता है।
- नदियों में बहकर आने वाली गाद वर्षा के सामान्य बहाव के द्वारा बाग-बगीचों, खेतों में उपयोग किये जाने वाले रासायनिक फर्टिलाइजर एवं पेस्टीसाइड के बहकर आने से रोकने के उपायों पर भी कठोर नीति बनाकर विचार किया जाना चाहिये।
- नदियों/ तालाबों पर शौच आदि क्रियाकलाप, घरेलू कचरा,मूर्तियां या पूजन सामग्री का विसर्जन, शवों को नदियों में बहाना आदि पर सख्ती से अंकुश लगाना चाहिये।
- वर्षा की अनियमित स्थिति, कम वर्षा आदि को देखते हुए उद्योगों को अपनी जल खपत पर नियंत्रण कर उत्पन्न दूषित जल का समूचित उपचार कर इसके सम्पूर्ण पुर्नचक्रण हेतु प्रक्रिया को विकसित करना चाहिये। ताकि जल स्रोतों के अत्याधिक दोहन की स्थिति से बचा जा सके।
- उद्योगों को दूषित जल उपचार हेतु आधुनिकतम उपचार प्रक्रिया/संयंत्रों को प्रभावकारी ढंग से अपनाना चाहिये तथा यथा संभव शून्य निस्त्राव की स्थिति बनाना चाहिये।
- घरेलू दूषित जल का उपचारित कर औद्योगिक उपयोग, वृक्षारोपण, सड़कों, उद्योगों में जल छिड़काव आदि कार्यो में उपयोग में लाया जा सकता है।
- प्राकृतिक जल स्रोतों विषेषकर नदियों/तालाबों/कुओं को जल प्रदूषण के दुष्प्रभावों से बचाने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि इनमें दूषित जल के निस्सारण को रोका जाए।

निष्कर्ष : भारत के लिये यह दुर्भाग्य की बात है कि जहाँ दूध की नदियां बहती थी वहां दूध के भाव पानी बिक रहा है। सन् 1960 में भारत में 3000 नलकूप थे जो बढ़कर सन् 1990 में 60 लाख और सन् 2010 में बढ़कर 2 करोड़ से भी ज्यादा हो गये हैं। हमने धरती को छलनी-छलनी कर दिया है। हम आधुनिक मशीनों से 500 से 1000 फीट तक धरती में सुराग कर पानी का दोहन कर रहे हैं। भूमिगत जल भण्डारण सूख रहे हैं, और बोतल बंद पानी का व्यवसाय फल-फूल रहा है। प्रकृति के प्रति हमारी नीरसता, बदलती जीवन शैली, बढ़ता शहरीकरण, अति महत्वाकांक्षाएं, भारी पड़ते व्यवसाय हित और कमजोर पड़ती हमारी संकल्प शक्ति के कारण जल संकट की समस्या हमारे सामने विद्यमान हैं। आदिकाल से प्रकृति ने मानव को बहुत कुछ उपलब्ध कराया है। इसका उपभोग करने के लिये सभी स्वतंत्र हैं।

हमारी भारतीय संस्कृति में प्रकृति से लेकर उसे उतना ही लौटाने की परम्परा हमेशा से रही है। यही कारण है कि विश्वभर में सिर्फ भारत वर्ष में नदियों, तालाबों, कुओं, कुण्डों और वृक्षों को पूजा जाता है। आज का मानव विकास की अंधी दौड़ में प्रकृति का इतनी बेदर्दी से दोहन कर रहा है कि भावी पीढ़ी नदी, ताल, तलैया और कुण्ड विहिन होकर नल की टोटी से टपकती बूंदों को टकटकी लगाकर हमें कोस रही होगी।-

संदर्भ सूची :-

1. योजना मासिक पत्रिका, नई दिल्ली, मई 2012
2. कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका, नई दिल्ली, जून 2012
3. केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, नई दिल्ली द्वारा वेबसाईट पर जारी जानकारियों के आधार पर ।
4. प्रोजेक्ट नीर, एनजीओ, एनआरआई, रतलाम द्वारा जनहित में जारी जानकारी के आधार पर

खंगार राजवंश का इतिहास 'गढ़कुण्डार'

डॉ. कृष्णा मोरे * डॉ. एस.आर. अहिरे **

भारत वर्ष के मध्य स्थित वह भू-भाग, जिसे वर्तमान समय में 'बुन्देलखण्ड' कहा जाता हैं, पूर्व में 'जुझौति'[1] के नाम से प्रसिद्ध रहा है। 'खंगार' सूर्यवंशी क्षत्रीय माने जाते हैं। प्रसिद्ध इतिहासकार सूबेदार भगवानदीनसिंह लोकवंशी के अनुसार खंगार शत्रुघ्न के पुत्र सूरजसेन के वंशज हैं। इस वंश की पहली राजधानी मथुरा थी, जिसका उल्लेख भागवत हरिवंश पुराण में हैं। खंगार राजवंशजों को देश के अलग-अलग भागों में 'खंगार'ब 'खांगर' और 'खेंगार' के नाम से भी जाना जाता हैं। 'खंगार' शब्द का अर्थ हैं तलवार धारण करने वाला। खंगार को 'नवधन'[2] भी कहा गया हैं। गढ़कुण्डार पर खंगार वंश का शासनकाल सन् 1182ई. से 1347ई. तक रहा हैं। इस अवधि में खंगारों ने महमूद गजनवी, बलवन, अलाउद्दीन खिलजी, मोहम्मद बिन तुगलक और अन्य कई विदेशी मुसलमान आक्रांताओं से राष्ट्रहित में युद्ध किए हैं।[3]

जुझौति खण्ड (बुन्देलखण्ड) में स्वतंत्र हिन्दू खंगार राज्य स्थापित करने वाले महाराज खेतसिंह खंगार सौराष्ट (गुजरात) के युवराज थें। सन् 1182ई. में जब पृथ्वीराज चौहान ने महोबा पर आक्रमण किया तो खेतसिंह को समर का सहभागी बनाया। इस युद्ध से चंदेल गौरव का सूर्य सदा सर्वदा के लिए अस्त हो गया। महाराज खेतसिंह खंगार ने अपने शौर्य एवं रणचातुर्य से पृथ्वीराज चौहान की विजय यात्रा में बहुत ख्याति अर्जित की थी। पृथ्वीराज रासो में चन्दरवरदाई ने महाराजा खेतसिंह खंगार की वीरता का बखान करते हुए कहा हैं:-

कयमास कमध्वज विक्रमयं, तहं यक सुचारु सुविक्रमयं।
जहाँ गौड संपत्तिय मोरदयं तहां खेत खंगार सुचारु भयं।
खड़ खंड त्रिवाण सामंत सार, खीची सुगौड़ खेत खंगार।।

महाराज खेतसिंह खंगार के भाई महाराजा जयसिंह गुजरात के जूनागढ़ पर राज्य करते थे। गिरनार पर्वत स्थित नेमीनाथ मंदिर के शिलालेख में खंगार महारानी के श्रृंगार का वर्णन हैं:-

खंगारनामा रिजु राज्य वृक्षे खंगार खाजनि भूमिजानि।
श्रृंगार कृतत्कुल राजलक्ष्यूया श्रृंगार धारा जगतील ताया।

जय गढ़कुण्डार जय खंगार जय गिरनार

गढ़कुण्डार का किला सन् 1182ई. से 1347ई. तक खंगार राजवंश ने 'गढ़कुण्डार' राज्य पर एकछत्र राज्य किया। सन् 1347ई. में मुहम्मद बिन तुगलक ने 'जुझौति' पर आक्रमण किया और उसने खंगार राजकुमारी केशरदे व दिल्ली की अधीनता स्वीकार करने का प्रस्ताव रखा जिसे खंगारों ने अस्वीकार कर युद्ध करके स्वतंत्रता व अपनी आन पर बलिदान हो जाना स्वीकार किया। राजकुमारी केशरदे ने जौहर किया और अनेक रानियों तथा महिलाओं के साथ सती हो गयी। खंगार वीरों की सेना भंयकर युद्ध करती हुई वीरगति का प्राप्त हो गयी। सन् 1348ई. से सन् 1500ई. तक का समय जुझौति भूमि का संघर्ष काल था। 'अमोला' और 'चन्देरी' सहित अनेक स्थानों पर खंगार राज्य स्थापित हुए और स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करते हुए नष्ट भी हुए। सन् 1528ई. में खंगार राजा मेदिनीराय ने बाबर से युद्ध किया। यह बडा भयंकर युद्ध था, किन्तु बाबर के तोपखाने और ईश्वरसिंह तोमर की गद्दारी के कारण राजा मेदिनीराय वीरगति को प्राप्त हुए और यहाँ अनेक खंगार क्षत्राणियों ने जौहर किया।

अपने संघर्ष के कारण खंगार जाति तात्कालिक समय में मुसलमान शासकों और अंग्रेजों की दुश्मन थी। खंगार वीरों ने झांसी, सौराष्ट्र सहित अनेक स्थानों पर अंग्रेजों से लोहा लिया। अपनी संघर्षशील प्रवृत्ति के कारण खंगारों की मुसलमान शासकों और अंग्रेजों से शत्रुता रही हैं। बीसवीं शताब्दी में खंगार राजवंश के वंशज बिखर गये। अपनी आजीविका के लिए देशभर में जिसे जो रोजगार मिला करने लगें। इनमें से अधिकांश ने हथकरघा व्यवसाय को अपनाकर दरी बनाने का काम किया। इनके निवास स्थलों पर बड़ी-बड़ी दरियों के निर्माण प्रक्रिया में आस-पास का वातावरण दूषित रहता था। इन दरियों के निर्माण में चावल व साबुदाने का उबला हुआ पानी उपयोग में लाया जाता था। स्वतंत्रता पश्चात् खंगार राजवंश के वंशजों को इनकी आर्थिक, सामाजिक स्थिति के आधार पर अनुसूचित जाति का दर्जा दिया गया। यह एक राजवंश की दु:खद त्रासदी ही हैं। जहाँ देश में अनेक जाति वर्ग व धर्म के लोग आरक्षण की सुविधाओं के लिए आन्दोलन कर रहे हैं, वहीं यह देश की एकमात्र खंगार जाति हैं, जिसके लगभग 50प्रतिशत से आधिक लोग स्वेच्छा से अपनी जाति की सामाजिक श्रेष्ठता के लिए इस सुविधा का लाभ नहीं ले रहे हैं।

मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री शिवराजसिंह जी चौहान व माननीय संस्कृति एवं उच्च शिक्षामंत्री श्री लक्ष्मीकांतजी शर्मा के प्रयासों से महाराजा खेतसिंह खंगार की जयंति (27दिसम्बर) पर तीन दिवसीय (27, 28 व 29दिसम्बर) 'गढ़कुण्डार महोत्सव' का आयोजन सन् 2006ई. से किया जा रहा हैं। इस पुनीत कार्य से इस समाज को पुन: अपना गौरव प्राप्त होने का मार्ग प्रशस्त हो रहा हैं। इस हेतु समस्त खंगार राजवंश के वंशज सदैव आभारी रहेंगे।

इतिहास में इसके प्रमाणिक तथ्य उपलब्ध हैं कि खंगारों के गौरवशाली इतिहास को मुसलमान शासकों, बुन्देलों और अंग्रेजों ने असत्य और काल्पनिक संदर्भो से जोड़कर कलंकित किया हैं। वृन्दावनलाल वर्मा द्वारा रचित 'गढ़कुण्डार'4 के काल्पनिक पात्रों और कथानक से इस खंगार राजवंश के इतिहास की भारी क्षति हुई हैं। खंगार राजवंश के आलोचक इतिहासकारों ने इसे खूंखार निरुपित करने का प्रयास किया हैं। इनके अनुसार:-

बिजली जैसे गिरपत, यदि हो खंगार से बैंर।
जाको इनसे बैर हैं, बाकी नैया खैंर।।
'भौर भछों' खंगार की जाति। सेवन बंधियों आधी राती।।

अर्थ:- खंगार से शत्रुता करना बिजली गिरने जैसा होता हैं खंगारों से जिसकी शत्रुता होती हैं वह हमेशा संकट में रहता हैं। 'भौर भछो' अर्थात् शहद की बडी मक्खी और खंगारों को आधी रात को जब वो सो रहे हो, धोखे से मार देना चाहिए, क्योंकि यदि वह जाग रहे हो तो यह कार्य असंभव होगा।

स्रोत 1. राय, मुरली मनोहरसिंह : गढ़कुण्डार की आवाज (बीना जिला-सागर)
2. मित्तल, डॉ. ए. के. : भारत का इतिहास, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा
3. राय, महेन्द्र प्रतापसिंह : राष्ट्रधर्म सर्वोपरि, उज्जैन
4. वर्मा, वृन्दालाल : गढ़कुण्डार, गंगा पुस्तकमाला, लखनऊ

* अतिथि विद्वान (ग्रन्थपाल), ** विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा, जिला-बड़वानी (म.प्र.)

गरीबों के उन्नयन हेतु मध्य प्रदेश सरकार की योजनाएँ

नेहा चौरसिया *

गरीबी की आवधारणा :

गरीबी भूख है और उस अवस्था में जुड़ी हुई है निरन्तरता। अर्थात् सतत् भूख की स्थिति का बना रहना। गरीबी का अर्थ है– उचित रहवास का आभाव, स्वास्थ सुविधाओं का अभाव, शिक्षा का अभाव। रोजगार के साधनों का अभाव और समय पर पर्याप्त भोजन न मिल पाना। सामाजिक परिपेक्ष्य में शक्तिहीनता, राजनैतिक व्यवस्था में प्रतिनिधित्व न होना और अवसरों का अभाव गरीबी की परिभाषा का आधार तैयार करते हैं। मध्यप्रदेश के चंबल और विन्ध्य क्षेत्र ऐसे है। इन क्षेत्रों में नीची जाति के लोगों के साथ खान–पान संबंधी व्यवहार नहीं रखा जाता हैं, न ही उन्हें धार्मिक और सामाजिक समारोह में शामिल होने या धर्मस्थलों में जाने की अनुमति होती हैं। जब तक किसी व्यक्ति, परिवार, समूह या समुदाय को व्यवस्था में हिस्सेदारी नहीं मिलती हैं, तब तक वह शनै: शनै: विपन्नता की दिशा में अग्रसर होता है। क्षमता का विकास न हो पाने के कारण विकल्पों के चुनाव की व्यवस्था से बाहर हो जाता है। उसके आजीविका के साधन कम होते हैं, तो वह सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था में निष्क्रिय हो जाता है। और निर्धनता की स्थिति में पहुंच जाता है।

अमर्त्य सेन लिखते हैं कि 'लोगों को इतना गरीब नहीं होने देना चाहिए कि उनसे घिन आने लगे, या वे समाज को नुकसान पहुँचाने लगे। इस नजरिए में गरीबों के कष्ट और दुखों का नहीं बल्कि समाज की असुविधाओं और लागतों का महत्व अधिक प्रतीत होता है। गरीबी की समस्या उस सीमा तक चिंतनीय है जहाँ तक कि उसके कारण जो गरीब नहीं हो, उन्हें भी समस्याएँ भुगतनी पड़ती है।'

मध्यप्रदेश के लगभग 22 लाख उन परिवारों को इस गरीबी रेखा की श्रेणी में रखा गया हैं जिनके पास आधा हेक्टेयर से कम अथवा बिल्कुल भूमि न हो। गरीबी की पहचान करने में पशुधन भी अहम् सूचक माना गया है। इसमें गाय, भैस, बकरी, मुर्गी, बतख और बैल को चिन्हित किया गया है।

निर्धनता सीमा एक पारिभाषित शब्द है जो एक व्यक्ति या परिवार की वार्षिक आय को पारिभाषित करता है,जितने में वह व्यक्ति या परिवार जीवन के सभी आवश्यक संसाधनों का लाभ नहीं उठा सकता। निर्धनता सीमा आम तौर पर प्रति व्यक्ति के आधार पर मापी जाती है और विभिन्न धड़े चाहे राष्ट्रीय हो या अंतर्राष्ट्रीय , निर्धनता सीमा के लिए दरें तय करते हैं।

गरीबी रेखा या निर्धनता रेखा आय के उस स्तर को कहते हैं जिससे कम आमदनी होने पर इंसान अपनी भौतिक जरूरतों को पूरा करने में असमर्थ होता है।

अध्ययन का उद्देश्य

राज्य में रहने वाले विपन्न तबके की उन्नति के उद्देश्य से सरकार हर पंचवर्षीय योजना में गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले लोगों का सर्वेक्षण (बी.पी. एल. सर्वे) करवाती है। इस सर्वे के दो व्यावहारिक उद्देश्य हैं। एक यह कि विगत पांच वर्षो में राज्य में कितनी गरीबी कम हुई? और दूसरा यह कि ऐसे कितने लोग और हैं जिनके नाम इस बी.पी. एल. सूची में जोड़ना है?

इस शोध निबंध में ऐसे गरीब लोगों का वर्णन है जो रोज कमा कर अपना जीवन यापन करते हैं जिसके कारण उनके जीवन में एक अनिश्चितता बनी रहती है और वे अपने आप को असुरक्षित महसूस करतें हैं। उन्हे उनके भविष्य के बारे में सोचने को, चिंतन करने की ओर जागृत करने मध्यप्रदेश सरकार द्वारा जो भी प्रयास किए जा रहे हैं उनका संक्षिप्त उल्लेख किया गया है।

प्राय: देखने में आया है कि गरीब लोग ''आज कमाओ आज खाओ'' की अवधारणा पर चलते हैं। इससे इनके जीवन में जब भी कोई आर्थिक आवश्यकता आती है तो वे मुश्किल में पड़ जाते हैं। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि उनकी दिन प्रतिदिन सोचने वाली वृत्ति को दीर्घकालीन सोच में बदला जाए।

शोध हेतु यह विषय लेने का मुख्य कारण गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले निर्धन वर्ग के जीवन यापन तथा मध्यप्रदेश सरकार द्वारा उनके जीवन स्तर को सुधारने हेतु किए जा रहे प्रयासों का अध्ययन करना है। इसके अंर्तगत निम्नांकित प्रमुख बिंदुओं पर अध्ययन किया जाएगा :

- गरीबी रेखा के लिए व्यक्तियों का निर्धारण करने हेतु अपनाए जा रहे सरकारी मापदण्ड।
- मध्यप्रदेश सरकार द्वारा इस वर्ग के उत्थान व विकास हेतु किए जा रहे प्रयासों को जानना।
- शासन के प्रयास व योजनाएं समस्त गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे निर्धन लोगों तक पहुंचती हैं या नहीं ? यह जानना।
- गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहे निर्धन लोगों को उनके लिए किए जा रहे सरकारी प्रयासों की जानकारी है अथवा नहीं ? यह जानना।

गरीबी के लिए सूचकांक

गरीबी के सूचक – वर्तमान सन्दर्भो में गरीबी को आंकना भी एक नई चुनौती है क्योंकि जल, जंगल और जमीन पर सरकार और सरकार समर्थन पूंजीवादी ठेकेदारों का नियंत्रण लगातार बढ़ रहा है। उनकी नीतियां मशीनीकृत आधुनिक विकास को बढ़ावा देती है, औद्योगिकीकरण उनका प्राथमिक लक्ष्य है। बजट में वह जीवन रक्षक दवाओं और खाद के दाम बढ़ाकर विलासिता की वस्तुओं के दाम कम करने में विश्वास रखती है।

किसी गरीब के पास आंखें रहे न रहें परन्तु घर में रंगीन टीवी की उपलब्धता सुनिश्चित करने में सरकार पूरी तरह से जुटी हुई है। इस वर्ष गरीबों की पहचान के लिये सरकार ने कुल 13 सूचक तय किये हैं :–

01. परिवार द्वारा धारित भूमि	02. मकान का प्रकार
03. प्रति व्यक्ति पहनने के कपड़े की उपलब्धता	04. खाद्य सुरक्षा
	05. स्वच्छता
06. उपभोक्ता वस्तुओं का स्वामित्व	07. शिक्षा
08. श्रम	09. जीविकोपार्जन के साधन
10. बच्चों का स्तर	11. देनदारी।
12. पलायन	13. सहायता की प्राथमिकता।

इन तेरह सूचकों और उनकी परिभाषाओं को देखने पर पता चलता है कि विगत 40 वर्षों में इस प्रक्रिया में गरीबी को देखने का नजरिया पहले से ज्यादा मानवीय हुआ है परन्तु सूचकों के निर्धारण में अभी कई विवाद हैं। इस बार स्वच्छता को विकास का कारण माना गया है।

बीपीएल सूचक के हिसाब से यदि व्यक्ति खुले में शौच के लिये जाता है या अनियमित जल आपूर्ति के साथ गांव में सामूहिक शौचालय का उपयोग करता है तो उसके उत्तीर्ण (गरीब) होने की ज्यादा संभावनायें हैं। यह सूचक स्पष्ट रूप से ठेकेदारी विकास और विश्वबैंक के दबाव का परिणाम है। क्योंकि इससे लोगों की भुखमरी और निम्नतम जीवन स्तर का प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है। फिर भी विगत दो पंचवर्षीय योजनाओं में कर्ज लेकर 9124534 शौचालय सरकार ने बनवाये है। सर्वे के नजरिये से इतने लोग तो चार अंक पाकर रेखा में प्रवेश की संभावना से दूर हो जायेंगे। कर्ज का मापदण्ड यह कहता है कि यदि व्यक्ति ने साहूकार से कर्ज लिया है तो वह गरीब है यदि बैंक से लिया तो नहीं।

मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के पेटलावद ब्लाक के सन्दर्भ में उल्लेखनीय है कि वहां भील आदिवासी विगत चार वर्षो में बैंक से 12 करोड़ का कर्ज ले चुके है। पर सब कुछ बेचकर भी नहीं चुका पा रहे हैं और बैंक कानूनी कार्रवाई पर उतारू है। इसी तरह पहनने के कपड़ों की संख्या के बारे में जानने की कोशिश की जा

* शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.)

रही हैं परन्तु मौसम की जरूरत के अनुरूप और ओढ़ने बिछाने वाले कपड़े उपलब्ध हैं या नही, यह स्पष्ट नहीं किया गया है।

उल्लेखनीय है कि दिल्ली में भीषण ठण्ड के कारण इसी वर्ष 800 से ज्यादा लोग फुटपाथ पर ही मर गये। बड़े ही आश्चर्य का विषय है कि 500 रूपये के पंखें, 150 रूपये के रेडियो, 200 रूपये के कुकर और 100 रूपये के सामान्य टीवी की मौजूदगी से व्यक्ति गरीबी रेखा में नहीं आयेगा।

भोजन की सुरक्षा वाले कालम के भरपेट भोजन के बारे में सवाल पूछा गया है लेकिन भरपेट का अर्थ क्या है, यह खुलासा नहीं किया गया है। यदि किसी परिवार को रोटी के साथ हरी सब्जी दाल गुड़ दूध दही इत्यादि समय पर या बदलते क्रम में दिन में एक बार भोजन के साथ मिलता है तो वह भरपेट भोजन कर सकता है। यह सवाल प्रत्येक मनुष्य के साथ जुड़ा हुआ है लेकिन सीधा यह सवाल पूछा जाना कि वर्ष भर में अधिकांश दिनों में एक समय या एक समय भी भर पेट भोजन नहीं मिलता, तो इसका सही उत्तर नहीं मिलता। एक अध्ययन से पता चलता कि हरी सब्जी दाल दूध दही इनमें से कोई भी चीज एक बार मिलती है तो भरपेट भोजन हो जाता है और यदि सूखी लाल मिर्च या केवल प्याज के साथ रोटी खाना पड़ती है तो पेट भराई तो हो जाती है लेकिन भरपेट भोजन नहीं होता और फिर यदि हम कैलोरी की जरूरत सूचक बना रहे हैं तो यह जांचना कैसे भूल गये कि भोजन में मिलता क्या है ।

गरीबी के लिए योजना आयोग के मापदण्ड

योजना आयोग ने 2004-05 में 27.5 प्रतिशत गरीबी मानते हुए योजनाएं बनाई थी। फिर इसी आयोग ने इसी अवधि में गरीबी की तादाद आंकने की विधि की पुनर्समीक्षा के लिए एक विशेषज्ञ समूह का गठन किया था, जिसने पाया कि गरीबी तो इससे कहीं ज्यादा 37.2 प्रतिशत थी। इसका मतलब यह हुआ कि मात्र आंकड़ों के दायें-बायें करने मात्र से ही 100 मिलियन लोग गरीबी रेखा में शुमार हो गए।

भारत में योजना आयोग ने सुप्रीम कोर्ट को बताया था कि खानपान पर शहरों में 965 रुपये और गांवों में 781 रुपये प्रति महीना खर्च करने वाले शख्स को गरीब नहीं माना जा सकता है। गरीबी रेखा की नई परिभाषा तय करते हुए योजना आयोग ने कहा कि इस तरह शहर में 32 रुपये और गांव में हर रोज 26 रुपये खर्च करने वाला शख्स बीपीएल परिवारों को मिलने वाली सुविधा को पाने का हकदार नहीं है। अपनी यह रिपोर्ट योजना आयोग ने सुप्रीम कोर्ट को हलफनामे के तौर पर दी। इस रिपोर्ट पर खुद प्रधानमंत्री ने हस्ताक्षर किए थे। आयोग ने गरीबी रेखा पर नया क्राइटीरिया सुझाते हुए कहा कि दिल्ली, मुंबई, बंगलोर और चेन्नई में चार सदस्यों वाला परिवार यदि महीने में 3860 रुपये खर्च करता है, तो वह गरीब नहीं कहा जा सकता।

ग़रीबी रेखा की सीमा को संशोधित कर योजना आयोग ने निष्कर्ष निकाला है कि शहर में 31 रुपए प्रति दिन और गांवों में 25 रुपए प्रति दिन कमाने वाले व्यक्ति को सरकारी कल्याणकारी योजनाओं के योग्य नहीं माना जा सकताअ

इससे पहले मॉन्टेक सिंह अहलुवालिया की अगुवाई में योजना आयोग ने ये आंकड़ा शहरी क्षेत्रों के लिए 20 रुपए और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए 15 रुपए निर्धारित किया था । लेकिन मई में सुप्रीम कोर्ट ने योजना आयोग की ग़रीबी रेखा की परिभाषा पर सवालिया निशान लगाते हुए कहा था कि मई 2011 के मूल्य सूचकांक के आधार पर ग़रीबी रेखा निर्धारित की जाए ।

इसके जवाब में योजना आयोग ने तेंदुलकर समिति की रिपोर्ट पर आधारित संशोधित सीमा तैयार की है। नए मानदंड के मुताबिक़ शहर मे रहने वाला पांच सदस्यों का परिवार अगर महीने में 4824 रुपए कमाता है, तो उसे कल्याणकारी योजनाओं के लिए योग्य नहीं कहा जा सकता, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले परिवार के लिए मासिक 3905 रुपए कमाना उन्हें ग़रीबी रेखा के उप्पर की सूची में लाने के लिए काफ़ी होगा ।

इसका मतलब इतनी कमाई इन परिवारों की खाद्य, चिकित्सकीय और शैक्षणिक ज़रूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त होगी ।योजना आयोग का कहना है कि ये आंकड़े श्रमिकों और कृषकों के लिए बनाए गए उपभोक्ता मूल्य सूचकांक पर आधारित हैं ।

हाल ही में एक प्रसिद्ध समाचार पत्र में योजना आयोग ने यह दावा किया कि देश में गरीबी घटी है। आयोग के अनुसार 6 करोड़ 30 लाख लोगों की गरीबी दूर हुई है। आयोग ने यह भी माना कि शहरों के मुकाबले गांवों में हालात ज्यादा सुधरे हैं। आयोग ने यह दावा किया कि पिछले 5 साल में देश की कुल आबादी में से 7.3 फीसदी गरीबों की गरीबी दूर हो गई है। 2004-2005 में जहा, देश में 40.72 करोड़ गरीब लोग थे वहीं 2009-2010 में गरीबों की संख्या घटकर 34.47 करोड़ रह गई है।

ग्रामीण इलाके में गरीबी 41.8 प्रतिशत से घटकर 33.85 प्रतिशत (8 प्रतिशत की कमी) रह गई है। जबकि शहरी इलाकों में रहने वाले गरीबों की संख्या 25.7 प्रतिशत से कम होकर 20.9 प्रतिशत (4.8 प्रतिशत की कमी) रह गई है। कुल मिलाकर देश में 2004-2005 में आबादी का 37.2 प्रतिशत गरीब थे। 2009-2010 में इनकी संख्या 29.8 फीसदी रह गई है।

योजना आयोग के अनुसार जिन राज्यों में सबसे ज्यादा गरीबी घटी है वे हैं- हिमाचल प्रदेश, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, सिक्किम, तमिलनाडु, कर्नाटक, उत्तराखंड। ये वे राज्य हैं जहां गरीबी में 10 प्रतिशत से ज्यादा कमी हुई है।

शोध प्रविधि/डाटा विश्लेषण

किसी भी शोधकार्य में शोधकर्ता के मन में कुछ पूर्व धारणाएँ व परिकल्पनाएँ होना स्वाभाविक है। मानव की जिज्ञासु प्रकृति ही उसे शोध कार्य हेतु प्रेरित करती है। शोधकार्य में शोधकर्ता की इन्हीं जिज्ञासाओं तथा उनके सत्यापन का अध्ययन किया जाएगा। मध्यप्रदेश शासन की योजनाएँ गरीबों की अपेक्षाओं की पूर्ति करती हैं या नहीं यह जानने हेतु प्राथमिक डाटा (जानकारियाँ) प्रारंभिक स्त्रोतों जैसे - सूची/तालिका/सारणी प्रश्नावली, साक्षात्कार,अवलोकन पद्धति द्वारा तथा द्वितियक स्त्रोतों जैसे -सरकारी वेबसाइट योजना आयोग के आंकडों द्वारा एकत्र की जाएगी।

तालिका विभिन्न पहलुओं जैसे-पारिवारिक पृष्ठभूमि, आय-व्यय का तरीका, बी.पी.एल परिवारों से साक्षात्कार के आधार पर बनायी जाएगी। यह डाटा इस शोध संकल्पना की रूपरेखा निर्धारित करने में उपयोगी होगा।

प्रदेश में गरीबों को शासन द्वारा चलाई जा रही योजनाओं की जानकारी है या नहीं ? यह जानने हेतु एक प्रश्नावली तैयार की गई , जिसके द्वारा कुछ गरीब परिवारों का सर्वेक्षण किया गया। (देखिए तालिका क्रं. 1, 2 एवं ग्राफ)

मध्यप्रदेश शासन द्वारा किए जा रहे प्रयास

*** स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना-**ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत बड़ी संख्या में छोटे-छोटे उद्यम स्थापित कर चयनित गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों को तीन वर्षो में गरीबी रेखा के ऊपर लाना।

*** राष्ट्रीय स्वास्थ बीमा योजना -** यह योजना भोपाल और ग्वालियर संभाग के दस जिलों में लागू की गयी है। बाद में इसे पूरे प्रदेश में लागू किया जाएगा। यह निर्णय मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान की अध्यक्षता में कैबिनेट की बैठक में लिया गया। इसके अन्तर्गत गरीब व्यक्ति तीस हजार रूपये तक की सीमा तक देश में कहीं भी सरकारी या चिन्हित अस्पतालों में इलाज करा सकते हैं।

*** दीनदयाल उपाध्याय अन्त्योदय योजना -** अनुसूचित जाति व जनजाति के गरीब परिवारों के उपचार के लिए यह योजना वर्ष 2004 से लागू है। इसके अन्तर्गत निर्धन परिवारों को सरकारी अस्पातालो में भर्ती होने पर उपचार हेतु 20 हजार रूपये तक का व्यय एक वित्तीय वर्ष में सरकार द्वारा प्रदान किया जाएगा।

*** जिला गरीबी पहल परियोजना (डी.पी.आई.पी.) -**मध्यप्रदेश जिला गरीबी पहल परियोजना(एम.पी.डी.पी.आई.पी.) 2,932 गाँव में मार्च 2001 में शुरू। 14 जिलों के 53 ब्लॉक में राज्य के गरीबों की आर्थिक भलाई में सुधार करने के लिए यह परियोजना है।

*** गाँव की बेटी योजना :-** योजना के उद्देश्य के तहत् गॉव की प्रतिभावान छात्राओं को 500 रूपये प्रतिमाह छात्रवृत्ति प्रदान की जायेगी।

*** इंदिरा आवास योजना :-** इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों के लिए आवास प्रदान करना है। पिछले

पाँच वर्षो के दौरान 3 लाख 94 हजार 226 लोगों को योजना के तहत लाभान्वित किया गया हैं

❋ लाडली लक्ष्मी योजना :- यह योजना 2006 से लागू की गयी थी। जिसका उद्देश्य गरीब बालिकाओं की शिक्षा व उनके आर्थिक स्तर को सुधारना है। 5.50 लाख बालिकाएँ अब तक इस योजना से लाभान्वित हो चुकी हैं।

❋ जननी सुरक्षा योजना :- यह योजना सभी गरीबी रेखा के नीचे रहने वाली अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की गर्भवती महिलाओं के लिए है जो सरकारी अस्पताल में अपने शिशु को जन्म देंगी। इस योजना के तहत् ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं को 1400/- और शहरी महिलाओं को 1000 /- की धनराशि प्रोत्साहन स्वरूप प्रदान की जावेगी।

❋ राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना :- अकुशल ग्रामीण श्रमिकों की आय के स्त्रोत बढ़ाने हेतु यह योजना लागू की गयी है। इसके तहत् इच्छुक परिवारों कों ग्राम पंचायत में रजिस्ट्रेशन कराना होगा जहां से उन्हें जॉब कार्ड प्रदान किये जाएगें।

❋ आयुषमति योजना :- म.प्र. शासन द्वारा प्रारंभ की गयी आयुष्मति योजना के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र की भूमिहीन महिला अथवा बालिका के बीमार होने पर अस्पताल में भर्ती होने पर नि:शुल्क इलाज की सहायता प्रदान की जाती हैं। सात दिन तक भर्ती रहने पर 400/- तथा सात दिन से अधिक भर्ती रहने पर रोगी को 1000/- रूपये तक अतिरिक्त दवाइयाँ तथा पौष्टिक आहार हेतु खर्च दिया जाता हैं।

❋ मुख्यमंत्री मजदूर सुरक्षा योजना :- मध्यप्रदेश में कृषि श्रमिकों की भलाई के लिए मुख्यमंत्री मजदूर सुरक्षा योजना का प्रारंभ 1 नवम्बर 2007 को किया गया। इस योजना के अन्तर्गत 30 हजार रूपये तक स्वीकृति देने का अधिकार जनपद पंचायत की अनुशंसा पर जिला पंचायत द्वारा किया जाएगा तथा पंजीबद्ध श्रमिकों व उसके परिवार को प्रसूति व चिकित्सा सहायता के साथ-साथ उनके बच्चों को छात्रवृत्ति देना, विवाह संबंधी सहायता व दुर्घटना में मृत्यु होने पर बीमा का लाभ उपलब्ध कराना है।

❋ मुख्यमंत्री कन्यादान योजना :- यह योजना सन् 2006 से प्रारंभ की गयी हैं। जो कि निर्धन कन्याओं के लिए वरदान सिद्ध हुई है। इस योजना के अन्तर्गत अब तक प्रदेश में 85 हजार कन्याओं का विवाह कार्यक्रम हो चुका है।

मध्यप्रदेश शासन द्वारा किए जा रहे अन्य प्रयास

- ❋ मुफ्त साईकिल वितरण योजना
- ❋ राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना
- ❋ आयुष्मति योजना
- ❋ राष्ट्रीय मातृत्व सहायता योजना
- ❋ स्वाधार योजना
- ❋ मधुवन योजना
- ❋ धन्वन्तरि योजना
- ❋ अपना घर योजना
- ❋ स्वावलम्बन योजना
- ❋ स्वरोजगार योजना

निष्कर्ष : भयंकर गरीबी और लगातार बढती जा रही असमानता

भले ही आज दुनिया में भारत को एक बड़ी आर्थिक शक्ति के रूप में पहचान मिल रही है और निश्चित रूप से भारत इस और अग्रसर भी है परन्तु सचाई यह भी है की आज भी भारत के ज्यादतर लोग भयंकर गरीबी की मार झेल रहे हैं तथा असमानता बढती जा रही है , जो भारत के आर्थिक महाशक्ति बनने के रास्ते में सब से बड़ी चुनौती है जिस का हमें सामना करना हैं विश्व बैंक की 2005 में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार भारत के 42 % लोग अंतर्राष्ट्रीय गरीबी रेखा ($1.25 प्रतिदिन) से नीचे हैं हालाँकि यह संख्या 1981 (60 प्रतिशत थी) के मुकाबले काफी कम है I NATIONAL COMMISSION FOR INTERPRISES IN THE UNORGANISED SECTOR की 2007 में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार भारत के 77 % लोग (836 मिलियन)प्रतिदिन 20 रुपये से भी कम में गुजारा कर रहे हैं जो इस बात की और इंगित करता है की देश के बहुगिनती लोग कैसी भयंकर गरीबी में जी रहे हैं। UNDP की मदद से OXFORD POVERT AND HUMAN DEVELOPMENT INITIATIVE द्वारा 2010 ही में प्रकाशित रिपोर्ट में बताया गया है की भारत के आठ राज्यों बिहार , छत्तीसगढ़ , मध्यप्रदेश , झारखण्ड , उत्तरप्रदेश , पश्चिम बंगाल , ओड़िसा तथा राजस्थान में 421 मिलियन लोग गरीबी की रेखा से नीचे हैं जोकि अफ्रीका के 26 सबसे गरीब देशो की गरीब संख्या से भी ज्यादा हैं। यह अनुमान Multidimensional Povety Index की मदद से लगाया गया है जिसे 1997 से HUMAN DEVELOPMENT REPORT बनाने के लिए प्रयोग किया जा रहा है।

ऐसा नहीं है है की भारत में गरीबी को समाप्त करने के प्रयास नहीं किये जा रहे हैं । आज़ादी के बाद से निरंतर सभी सरकारे गरीबी को समाप्त करने के बड़े बड़े दावे करती रही हैं , कई बार गरीबी हटायो का नारा दे कर वोट हासिल किये जाते रहे हैं परन्तु गरीबी जस की तस बनी हुई है । निश्चित रूप से आज़ादी के बाद गरीबी के प्रतिशत में कुछ कमी आई है। वैश्वीकरण व् उदारीकरण की नीतियों के पैरोकार यह दावा करते रहते हैं की 1992 के बाद लगातार गरीबी में कमी आई है और आर्थिक सुधारों के कारण से आने वाले समय में इस में और तेजी आएगी । सरकार के योजना आयोग के आंकड़े भी गरीबी में लगातार कमी की बात कर रहे हैं , गरीबी रेखा से नीचे रहने वालो की संख्या 1977 -78 में 51 .3 % थी जो 2005 -6 में 27 .5 % रह गयी है परन्तु पी. साईनाथ जैसे कई चिन्तक इस बात की ओर भी इशारा कर रहे हैं कि अगर गरीबी सचमूच में कम हो रही है तो फिर भारत का Human Development Index में स्थान 122 (1992 में) से गिर कर 132 (2008 में) तक कैसे पहुँच गया है ।

World Hunger Index में 119 देशो में भारत का स्थान 94 वा है जो यह दर्शाने के लिए काफी है की भारत में दुनिया के सबसे ज्यादा भूखे रहते हैं । इस गरीबी और भूख का ही परिणाम है की दुनिया के सबसे ज्यादा कुपोषण के शिकार लोग (230 मिलियन) भारत में ही है। आज दुनिया के 42.5 % कुपोषित बच्चे भारत में हैं । जबकि विश्व के कम् भार वाले 49 % बच्चे भी अकेले भारत में ही हैं आज जब हम यह सोच रहे हैं की भारत कैसे महाशक्ति बन कर दुनिया में उभरे , यह सोचना बहुत जरुरी है की कुपोषित और भूख से पीड़ित बच्चें, कैसे आने वाले समय में भारत को शक्तिशाली बनाने में अपना योगदान देंगे । निश्चित रूप से हमें भूख , गरीबी और असमानता की इस चुनौती से निपटाना ही होगा ।

उदारीकरण और खुले बाजार की प्रतिस्पर्धा को सार्थक सिध्द करने के लिये सरकार पर हमेशा विकसित देशों, विश्व बैंक और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का दबाव रहा है कि वह अपने देश की गरीबी को या तो कम करें या कम दिखायें। इस दबाव में भारत में गरीबी की रेखा के नीचे रहने वालों की संख्या में पांच वर्ष में 9.06 प्रतिशत कम कर दी गई हैं जबकि जम्मू एवं कश्मीर में 21.69 प्रतिशत, बिहार में 12.36 प्रतिशत, राजस्थान में 12.13 प्रतिशत मध्यप्रदेश में 5. 09 प्रतिशत कम कर दी गई है ।

गरीबों के लिए शासन के स्तर पर अन्य कल्याणकारी योजनायें संचालित की जा रही है। शासन गरीबों की पहचान करने के लिए पाँच वर्ष में एक बार गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले लोगों का सर्वेक्षण करवाता है। हाल के आंकलनों और प्रत्यक्ष अनुभवों के आधार पर पता चलता है कि विगत अवसरों पर वास्तविक गरीबों की पहचान नहीं की गयी और उनके नाम बी.पी.एल. सूची में नहीं आ पाये। जिसके कारण उन्हें अन्य योंजनाओं का लाभ भी नहीं मिल पाया।

नई शासन व्यवस्था में मध्यप्रदेश में पहले पंचायतों को और फिर ग्राम सभाओं कों ज्यादा अधिकार संपन्न बनाया गया। यहाँ गरीब व्यक्ति के चयन, उसे कल्याणकारी योजना का लाभ देने का प्रस्ताव बनाने और विकास में गरीबों की सहभागिता सुनिश्चित करने के अधिकार दिये गये है। किन्तु अनुभव बताते हैं कि गरीबों के लिए यह प्रक्रिया अभी तक तो बहुत सार्थक सिद्ध नहीं हुई।

जिन आधारों पर व्यक्ति को गरीब माना जाता है यदि उन्हीं पर नजर डाले तो स्थिति दुखदायी है। देश में हो रहे विकास का लाभ समाज के गरीबों और वंचित वर्गो तक सीधे नहीं पहुँच रहा है। स्वाभाविक है कि गरीबों की परिस्थितियों मे भी

सुधार नहीं हो रहा हैं परन्तु वही दूसरी ओर अन्तर्राष्ट्रीय दवाब और राजनैतिक कारणों से सरकार गरीबों की संख्या में लगातार कमी करती जा रहीं है।

मंहगाई ने भले ही आम आदमी की कमर तोड़ दी हो लेकिन सरकार गरीबी रेखा को बढाने के लिए तैयार नहीं है। योजना आयोग ने हाल ही में नई गरीबी रेखा जारी की जिसके अनुसार देश में सिर्फ उसी व्यक्ति को गरीबी माना जाएगा जिसका मासिक खर्च गांव में 816 रू व शहर में 1000 रू से कम है। इसका अर्थ यह है कि गांव में 28 रू तथा शहर में 34 रू. रोजाना खर्च करने वाला व्यक्ति BPL श्रेणी में नहीं आयेगा। सरकार के इस फैसले के बाद एक ही झटके से देश में 13.78 करोड गरीब घट गये। 2009-2010 में गरीबों की संख्या 40.7 करोड थी जो अब 2011-12 में 26.9 करोड रह गयी है। इससे पहले योजना आयोग ने 19 मार्च 2012 को गरीबी रेखा गांव में 22/- व शहर में 28/- तय की थी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. India, Economic Development and Social Opportunity- Sen Amartya
2. Indian Development: Selected Regional Prespectives Sen Amartya, Dreze Jean
3. The Argumentative India- Sen Amartya
4. Poverty And Famines: An essay on Entitlement And deprivation - Sen Amartya
5. Is Growth Central to Poverty Alleviation in India- Gaiha Raghav, Kulkarni Vani
6. Recasting Economic, Inequality in Review of Social Economy - Deshpandey Ashwini

www.mpinfo.org, www.ladlilaxmiyojna.co.in
www.google.com, www.amazon.com, www.wikipedia.com

तालिका - 1 गरीबी का अनुपात

		ग्रामीण			शहरी			कुल		
क्र	राज्य	1973 1974	1993 1994	1999 2000	1973 1974	1993 1994	1999 2000	1973 1974	1993 1994	1999 2000
1	आंध्र प्रदेश	48.41	15.92	11.05	50.61	38.33	26.63	48.86	22.19	15.77
2	बिहार	62.99	58.21	44.30	52.96	34.50	32.91	61.91	54.96	42.60
3	गुजरात	46.35	22.18	13.17	52.57	27.89	15.59	48.15	24.21	14.07
4	हरियाणा	34.23	28.02	8.27	40.18	16.38	9.99	35.36	25.05	8.74
5	जम्मू तथा कश्मीर	45.51	30.34	3.97	21.32	9.18	1.98	40.83	25.17	3.48
6	मध्यप्रदेश	62.66	40.64	37.06	57.65	48.38	38.44	61.78	42.52	37.43
7	महाराष्ट्र	57.71	37.93	23.72	43.87	35.15	26.81	53.24	36.86	25.02
8	उड़ीसा	67.28	49.72	48.01	55.62	41.64	42.83	66.18	48.56	47.15
9	राजस्थान	44.76	26.46	13.74	52.13	30.49	19.85	46.14	27.41	15.28
10	उत्तर प्रदेश	56.53	42.28	31.22	60.09	35.39	30.89	57.07	40.85	31.15
11	दिल्ली	24.44	1.90	0.40	52.23	16.03	9.42	49.61	14.69	8.23
	भारत	56.44	37.27	27.09	49.01	32.36	23.62	54.88	35.97	26.10

स्रोत : योजना आयोग

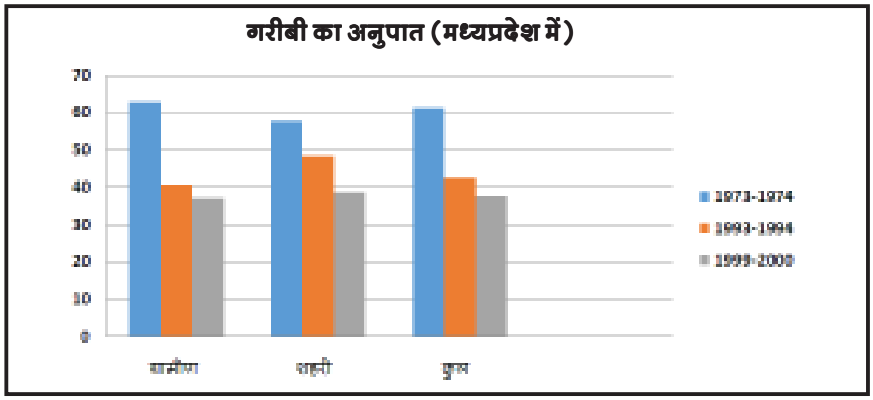

राज्य/ केन्द्र शासित प्रदेश	व्यक्तियों का प्रतिशत 1973-74	व्यक्तियों का प्रतिशत 1977-78	व्यक्तियों का प्रतिशत 1983-84	व्यक्तियों का प्रतिशत 1987-88	व्यक्तियों का प्रतिशत 1993.94	व्यक्तियों का प्रतिशत 1999.2000
बिहार	62.99	63.25	64.37	52.63	58.21	44.30
उड़ीसा	67.28	72.38	67.53	57.64	49.72	48.1
उत्तर प्रदेश	56.53	47.6	46.45	41.10	42.28	31.22
मध्य प्रदेश	62.66	62.52	48.90	41.92	40.64	37.06
राजस्थान	44.76	35.9	33.50	33.21	26.46	13.74
आन्ध्र प्रदेश	48.41	38.11	26.53	20.92	15.92	11.05

स्रोत : योजना आयोग, भारत सरकार

Impact of Gender Difference and Level of Education on Academic Achivement Motivation

कमलेश उपाध्याय*

ABSTRACT अध्ययन का उद्देश्य कक्षा VII और IX के छात्रों एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के स्तर का मापन करना था। इस हेतु 2×2 कारक अभिकल्प का उपयोग किया गया। डॉ.टी.आर.शर्मा, पटियाला द्वारा निर्मित शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा परीक्षण की सहायता से कक्षा VII और IX के 40 छात्रों एवं 40 छात्राओं को यादृच्छिक रीति से प्रयोज्यों के रूप में चयनित कर प्रदत्तों का संकलन किया गया। अध्ययन में उल्लेखित दोनों चरों लिंग (छात्रों तथा छात्राओं) एवं शिक्षा का स्तर (कक्षा VII और IX) का सार्थक प्रभाव .01 विश्वास के स्तर पर पाया गया।

Introduction– प्राणी के विभिन्न प्रकार के व्यवहारों को देख किसी के भी मन में यह सहज प्रश्न उठता है कि वे ऐसा क्यों करते हैं ? मनोविज्ञान में इस ''क्यों'' का उत्तर खोजने के लिए अभिप्रेरणा का अध्ययन आवश्यक है। सामान्यत: पशु के व्यवहार का कारण उसकी जैविक आवश्यकताएं होती है। मानव व्यवहार में जैविक आवश्यकताओं के अतिरिक्त भी अनेक कारण होते हैं। वास्तव में समस्त मानव व्यवहार के कारण कार्य संबंधों की परिणति है।[1] व्यक्ति की उपलब्धि अभिप्रेरणा वह गोचर है, जो उसे उपलब्धि को पाने की ओर उद्यत करता है। इसी गोचर की उपस्थिति उसे लगातार अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते रहने हेतु प्रेरित करती है।[2] व्यक्ति की सभी क्रियाएं अभिप्रेरकों से ही प्रेरित होती है। अभिप्रेरकों को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है, ''यह क्रिया करने की वह प्रवृत्ति है जो एक अन्तर्नोद द्वारा प्रारम्भ होती है तथा अनुकूलन द्वारा समाप्त होती है।[3]

Achievement Motivation – एटकिन्सन एवं फेदर (1966) ने इस अभिप्रेरक को परिभाषित करते हुए लिखा है कि ''उपलब्धि अभिप्रेरक व्यक्ति की अपेक्षाकृत रूप से वह स्थायी वृत्ति है जो उपलब्धि या सफलता प्राप्ति के संबंध में होती है।'' यह अभिप्रेरणा जिन लोगों में अधिक पायी जाती है, वे लोग ऐसे कार्यों को करना पसंद करते हैं जिससे उनकी प्रशंसा या वाह–वाही हो।

सन् 1950 के पूर्व केवल एच.एस. मरे (1938) ने इस पर अध्ययन किया परंतु 1950 के पश्चात इस अभिप्रेरणा पर अनेक महत्वपूर्ण अध्ययन हुए, जिनमें मैक्लीलैण्ड (1953), जे.डब्ल्यू.एटकिन्सन (1964), मुखर्जी (1965), लेनिन व अन्य (1969), एटकिन्सन तथा रीटमैन (1956), फ्रेंच (1956), मैक्लीलैण्ड तथा विंटर (1969), हैकहाउस (1967), महोना (1960), एटकिन्सन तथा फीदर (1966) के अध्ययन उल्लेखनीय हैं। उपलब्धि अभिप्रेरणा से अभिप्रेरित व्यक्ति के व्यवहार में निम्नांकित विशेषताएं सामान्य तौर पर देखी जा सकती है–

1. व्यवहार के किसी क्षेत्र में उत्कृष्टता के स्तर (Level of Excellence) के लिए प्रयास कर सकता है। 2. चयनित क्षेत्रों में सफलता प्राप्ति हेतु प्रयास करता है। 3. प्रतियोगिता में सर्वोच्च स्थान पाने का प्रयास करता है। 4. जीवन को अधिक उन्नत बनाने का प्रयास करता है। 5. अपनी सफलता पर प्रसन्न होकर गर्व कर सकता है। 6. उपलब्धि के प्रयास में विफलता मिलने पर उसके लिये स्वयं को उत्तरदायी मानता है।[4]

Review of Literature– हुवर तथा डिम्पसे (1997) ने अपने अध्ययन परिणामों में पाया कि बच्चों तथा किशोरों के अधिगम और शैक्षिक सफलता में अभिभावकों की संलग्नता सामान्यत: लाभदायक होती है।[5] शैक्षिक उपलब्धि पर अभिभावकों की संलग्नता का धनात्मक प्रभाव पालसन (1994)[6], स्टेनबर्ग व अन्य (1992)[7] तथा ट्रस्टी (1996) ने भी अपने अध्ययनों में पाया है। कैथ व अन्य (1986) ने गृह कार्य में विद्यार्थी द्वारा दिए जा रहे समय को महत्वपूर्ण पाया है।[8] ट्रस्टी (1996) ने अपने परिगामों में विद्यालय के प्रति अनुकूल अभिवृत्ति के महत्व को रेखांकित किया है।[9] स्टीवेन व अन्य (2005) ने अपने अध्ययन में पाया कि विद्यार्थी की पठन योग्यता व गणितीय उपलब्धि में शिक्षक का प्रभावशाली असर पड़ता है।[10]

Methodolgy- Objectives

अध्ययन का उद्देश्य निम्नांकित समस्याओं का अध्ययन करना था–

अ. शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा पर लिंग के प्रभाव का अध्ययन करना।
ब. शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा पर शिक्षा के स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना।
स. शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा पर लिंग तथा शिक्षा के स्तर की अंत:क्रिया के प्रभाव का अध्ययन करना

Hypothesis- यह परिकल्पना की जाती है कि निम्नांकित समूहों के शैक्षिक अभिप्रेरणा उपलब्धि अभिप्रेरणा संबंधी मध्यमान प्राप्तांकों में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा–

अ. छात्रों तथा छात्राओं के मध्य।
ब. कक्षा VII और IX के विद्यार्थियों के मध्य।
स. कक्षा VII और IX के छात्रों और छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा संबंधी अंत:क्रिया के मध्य

Sampling- वर्तमान अध्ययन का प्रतिदर्श मप्र के नीमच जिले से लिया गया है। शहरी क्षेत्र के विद्यालयों में अध्ययनरत् कक्षा VII और IX के 40 छात्रों एवं 40 छात्राओं के प्रयोज्यों के रूप में लिया गया है। जिनकी आयु सीमा 11 से 17 वर्ष के मध्य थी।

Tool Used- डॉ.टी.आर शर्मा (पटियाला) द्वारा निर्मित ''शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा परीक्षण'' प्रपत्र का उपयोग प्रयोज्यों की शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के स्तर का मापन करने के लिये किया गया। परीक्षण में अ/ब के दो विकल्पों के साथ कुल 38 पद सम्मिलित हैं। परीक्षण की विश्वसनीयता अर्द्ध–विच्छेद विधि से .697, तार्किक समानता विधि से .75 तथा परीक्षण–पुर्नपरीक्षण विधि से .79 से .80 तक पाई गई है। मूल प्राप्तांकों से वर्गीकरण तालिकाएं उपलब्धि अभिप्रेरणा की श्रेणी निर्धारण हेतु दी गई है।

Design- उपरोक्तानुसार परिकल्पनाओं का परीक्षण करने हेतु 2×2 कारक अभिकल्प का उपयोग किया गया। अध्ययन के चर लिंग के लिये छात्रों तथा छात्राओं एवं शिक्षा के स्तर के दो मूल्य– कक्षा VII और IX को लिया गया है।

Analysis & Data Interpretation तालिका क्रमांक– 1 जो कि शैक्षिक

*सहायक प्राध्यापक, मनोविज्ञान, श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

उपलब्धि अभिप्रेरणा पर लिंग के प्रभाव का विश्लेषण कर परिणामों को दर्शाती है।परिणाम स्पष्ट रूप से दशति हैं कि छात्रों और छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा में सार्थक अंतर पाया जाता हैं । गणना उपरांत t=3.12 पाया गया है जो कि विश्वास के स्तर .01 पर सार्थकता के लिए न्यूनतम आवश्यक मान जिसे क्रांतिक t=2.64 के रूप में दर्शाया गया है, से अधिक है। अत: हमारी पूर्व निर्मित शून्य परिकल्पना क्रमांक Ho_1 अस्वीकृत की जाती है।

तालिका क्रमांक-2 जो कि शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा पर शिक्षा के स्तर के प्रभाव का विश्लेषण कर परिणामों को दर्शाती है। विश्लेषण उपरांत परिणाम स्पष्ट करते हैं कि क्या कक्षा VII और IX के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा में सार्थक अंतर पाया जाता है। गणना उपरांत t=4.74 प्राप्त होता है जो कि क्रांतिक t=2.64 से अधिक है। अत: हमारी पूर्व निर्मित शून्य परिकल्पना क्रमांक Ho_2 विश्वास के स्तर .01 पर अस्वीकृत की जाती है।

तालिका क्रमांक-3 जो कि शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा पर लिंग-छात्रों तथा छात्राओं एवं शिक्षा का स्तर कक्षा VII और IX की अंत:क्रिया के प्रभाव का विश्लेषण प्रसरण विश्लेषण की सहायता से किए जाने को स्पष्ट करती है। तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि गणना उपरांत F-ratio=13.268 प्राप्त होता है । जबकि df= 3.76 पर क्रांतिक F-ratio=4.04 आवश्यक है। प्राप्त F-ratio=13.268 सार्थकता के लिए .01 विश्वास के स्तर पर उल्लेखित क्रांतिक F के मान से अत्यधिक उच्च है। अत: हमारी पूर्व निर्मित शून्य परिकल्पना क्रमांक Ho_3 अस्वीकृत की जाती है।

तालिका क्रमांक-4 जो कि अध्ययन किए जा रहे चार समूहों के मध्यमानों, मानक विचलनों एवं इनके अंतरों को दर्शाती है। मध्यमानों के अवलोकन से स्पष्ट संकेत मिलता है कि जहां सर्वाधिक उपलब्धि अभिप्रेरणा कक्षा IX के छात्रों में तथा न्यूनतम उपलब्धि अभिप्रेरणा कक्षा VII की छात्राओं में पायी गयी है। तालिका के पार्श्व में उल्लेखित अंतर के कॉलम में समान कक्षा के छात्रों एवं छात्राओं के मध्यमानों में एवं मानक विचलनों में अंतर का उल्लेख है। कक्षा VII के M's में 2.9 व कक्षा IX में 1.6 का अंतर पाया गया है। वहीं SD's में यह अंतर कक्षा VII व IX के लिए क्रमश: .29 व .15 पाया गया है। तालिका के अंतर में दर्शाये गये अंतर के कॉलम में शिक्षा के स्तर में परिवर्तन से उपलब्धि अभिप्रेरणा पर पड़ने वाले प्रभाव की तुलना करने का प्रयास किया गया है। यथा-कक्षा VII और IX के M's में अंतर छात्रों के लिए -2.55 व छात्राओं के लिये -3.85 अंकित है। मध्यमानों में यह अंतर उपलब्धि अभिप्रेरणा पर शिक्षा के स्तर के प्रभाव को स्पष्ट संकेतिक करता है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि अंतर में ऋणात्मक दिशा का होना यह दर्शाता है कि कक्षोन्नति (कक्षा VII और IX) से विद्यार्थियों की उपलब्धि अभिप्रेरणा में वृद्धि होती है।

तालिका क्रमांक 5 जो कि शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा को तीन स्तरों-उच्च, औसत एवं निम्न में वर्गीकृत करते हुए कक्षा VII और IX के छात्रों एवं छात्राओं की प्रत्येक स्तर में आवृत्तियों एवं उनके प्रतिशतों को दर्शाती है। तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि अध्ययन के सभी समूहों में उच्च उपलब्धि अभिप्रेरणा वाले विद्यार्थी मात्र 8.75 प्रतिशत पाए गए है। औसत उपलब्धि अभिप्रेरणा वाले 57.5% तथा निम्न उपलब्धि अभिप्रेरणा वाले 33.75% पाए गए हैं। इसी तालिका के अगले कॉलम में उपलब्धि अभिप्रेरणा के तीनों स्तरों को अंशों के रूप में अभिव्यक्त किया गया हैं । जिसे आप पाई-चित्र के आधार पर स्पष्टत: देख सकते हैं। (चित्र क्रं. -01) सामान्य संभावना वक्र के चित्र से स्पष्ट है कि औसत उपलब्धि अभिप्रेरणा वाले मात्र -.19σ के विद्यार्थी हैं जो NPC में मध्यमान से नीचे की ओर हैं। औसत-.19σ तथा निम्न +.42σ वाले विद्यार्थियों की उपलब्धि अभिप्रेरणा में .23σ का अंतर है। तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि ये मात्र 6 प्रतिशत विद्यार्थी हैं, जो अभिप्रेरणा के अभाव में औसत से निम्न उपलब्धि की दिशा में झुक सकते हैं। इसकी ठीक विपरीत अभिप्रेरणा की उपस्थिति में इनका रूझान निम्न से औसत उपलब्धि की दिशा में दिखायी पड़ता है। (देखें चित्र क्रं. 02) इसी प्रकार पाई-डायग्राम के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक डिग्री 207^0 औसत उपलब्धि अभिप्रेरणा वाले विद्यार्थियों की है। (देख-चित्र क्रं. 01)

Inference अध्ययन के परिणाम इस प्रकार हैं-

1. कक्षा VII और IX के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा अपने तुल्य समूह की छात्राओं से मध्यमान के आधार पर अधिक पायी गयी। है।
2. अध्ययन किए गए सभी समूहों में न्यूनतम शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा का स्तर कक्षा VII की छात्राओं में तथा सर्वाधिक कक्षा IX के छात्रों में पाया गया है।
3. लिंग एवं शिक्षा के स्तर का प्रभाव विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा पर सार्थक रूप से पड़ता है।
4. अध्ययन के दोनों चरों-लिंग तथा शिक्षा के स्तर की अंत:क्रिया का शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा पर सांख्यिकीय दृष्टिकोण से सार्थक प्रभाव पड़ता है।
5. औसत श्रेणी की शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत सर्वाधिक 57.5 प्रतिशत पाया गया है। उच्च शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा का प्रतिशत मात्र 8.75 ही पाया गया हैं। (देखें तालिका-5)
6. विद्यार्थियों में शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के उन्नयन हेतु उन 6 प्रतिशत विद्यार्थियों पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है जो औसत से निम्न शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा की ओर झुक जाते हैं।

Recommendations-

1. उच्च शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा वाले विद्यार्थियों को अपनी अभिप्रेरणा का स्तर बनाए रखने हेतु सतत् प्रोत्साहन दिया जाए।
2. शिक्षा सुखद भविष्य का आधार है। छात्राओं की उपलब्धि अभिप्रेरणा बढ़ाने हेतु विशेष प्रयास किये जाएं।
3. औसत श्रेणी के शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के विद्यार्थियों को परामर्श एवं मार्गदर्शन के द्वारा उच्च उपलब्धि अभिप्रेरणा में ले जाने हेतु कठोर कार्य योजनाएं अमल में लाई जानी चाहिए।
4. औसत से निम्न शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा की ओर झुकने वाले उन 6 प्रतिशत विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि, अभिप्रेरणा में वृद्धि करने हेतु इनके लिए विशेष कक्षाओं का आयोजन किया जाए एवं इन्हें लगातार मनोवैज्ञानिक मार्गदर्शन प्रदान किया जाए।

Table- 1

छात्रों तथा छात्राओं के मध्यमानों के अंतरों पर शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के प्रभाव को दर्शाती t- परीक्षण की तालिका

Gender	N	X's	SD's	Df	t-cal	t-critical	Decision
Male	40	29.38	3.17	78	3.12	2.64	Sig
Female	40	27.13	3.21				

Sig-Significant at .01 Probability Level

Table- 2

कक्षा VII - IX के विद्यार्थियों के मध्यमानों के अंतरों पर शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के प्रभाव को दर्शाती t- परीक्षण की तालिका

Level of Education	N	X's	SD's	Df	t-cal	t-critical	Decision
Grade VII	40	26.65	2.94	78	4.74	2.64	Sig
Grade IX	40	29.85	3.02				

Sig-Significant at .01 Probability Level

Table- 3

प्रसरण विश्लेषण की सारांश तालिका जो शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा पर लिंगभेद तथा शिक्षा के स्तर के प्रभाव को दर्शाती है

Source of Variation	Sum of Squares	Df	X's	F-ratio	F-critical	Decision
Between	314.5	3	104.83	13.268	4.04	Sig
Within	600.5	76	7.90			

Sig-Significant at .01 Probability Margin

Table- 4

अध्ययन समूहों के दोनों परिवर्त्यों के दोनों आयामों के मध्यमानों तथा मानक विचलनों के मध्य अंतरों को दर्शाती है

Gender →	Male		Female		Difference	
Grades ↓	M's	SD's	M's	SD's	M's	SD's
VII Grade	28.1	5.33	25.2	5.04	2.9	.29
IX Grade	30.65	5.56	29.05	5.41	1.6	.15
Difference	-2.55	-0.23	-3.85	-0.37	+1.3	+.14

Table- 5

शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के विभिन्न स्तरों पर अध्ययन समूहों की आवृत्तियों, प्रतिशतों, अंशों एवं σ दूरियों को अभिव्यक्त करती है।

Level of Education	Grades & Frequencies					Average Percentage	Distance from $\bar{X}$	Degree's	σDistance
	VII		IX		Total f				
Level of n-ech	Male	Female	Male	Female					
High	-	-	05	02	7	8.75	41.25	31.5°	+1.36σ
Average	15	5	14	12	46	57.5	-7.5	207°	-.19σ
Low	5	15	01	06	27	33.75	16.25	-121.5°	+.42σ
Total	20	20	20	20	80	100%	50%	360°	

Pie Diagram

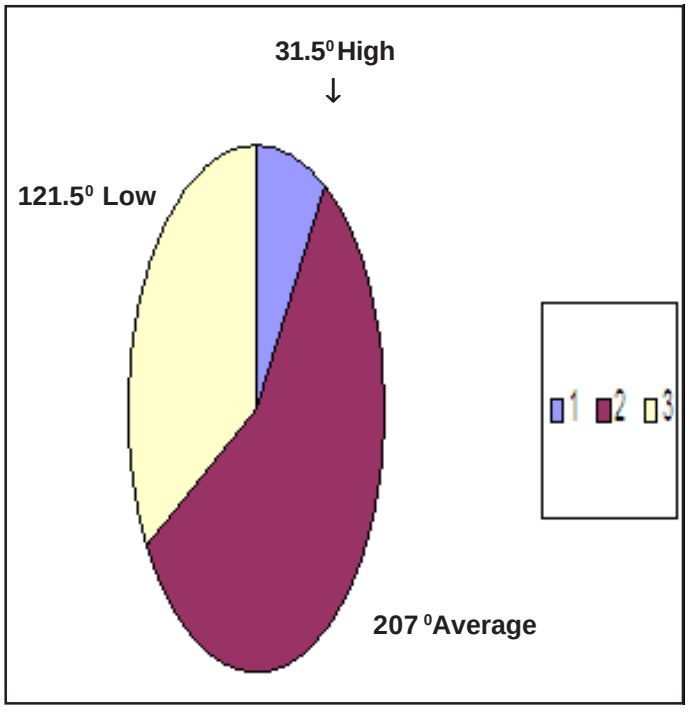

(चित्र क्रमांक 1)

Normal Probability Curve

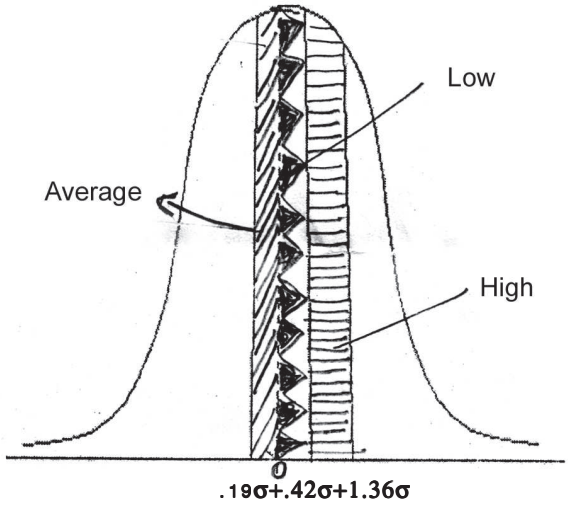

(चित्र क्रमांक 2)

चित्र क्रमांक-02 जो कि सामान्य संभावना वक्र पर शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के विभिन्न स्तरों को दर्शाता है। चित्र में प्रदर्शित ▨ भाग निम्न एवं मध्यम शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा के मध्य अंतर को दर्शाता है। यह अंतर मात्र (.42σ.19σ) .23σ है। एनपीसी की तालिका में देखने पर यह आवृत्ति मात्र 6 प्रतिशत विद्यार्थियों की है जो अभिप्रेरणा की उपस्थिति से जहां औसत उपलब्धियों की दिशा में जा सकते हैं। वही अनुपस्थित से निम्न उपलब्धि की दिशा में झुक सकते हैं। यह अध्ययन इनकी शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा पर विशेष ध्यान देने की बात उजागर करता है।

Refrences

01. डॉ.आनंद पुरोहित '' प्रयोगात्मक मनोविज्ञान द्वितीय संस्करण 1990 पेज न. 126
02. Virwal Gayatri "A Comparative study of Academic Achievement Motivation" An Undergraduate Research Project 2012-13 (Page-4)
03. डॉ.एस.एस.माथुर, शिक्षा मनोविज्ञान, 19th edition 1986 Page no.260-261
04. डॉ.डी.एन.श्रीवास्तव, ''सामाजिक मनोविज्ञान'' 8th edition Page 69-70
05. Hoover - Dempsey, K.V. and Sandler, H.M. (1997). Why do parents become involve in their children's education ? Rev. Educ. Res. 67(1); 3-42
06. Paulson, S.E. (1994). Relations of Parenting style and Parental involvement with Ninth grade students achievement. J.Early Adolesc. 14(2); 250-267
07. Steinberg, L., Lamborn, S.D., Dornbusch, S.M., and Darling, N.(1992). Impact of Parenting Practices on adolescent achievement : Authoritative Parenting, School involvement and encouragement to succeed, child Dev. 63; 1266-1281
08. Keith, T.Z. Reimers, T.M., Fehrmann, P.G. Pottebaum, S.M. and Aubey, L.W. (1986) Parental involvement homework, and TV time : Direct and indirect effects on high School achievement. J.Educ. Psychol. 78(5): 373-380
09. Trusty, J. (1996). Relationship of Parental involvement in teens career development to teens attitudes, perceptions and behaviour. J.Res. Dev. Educ; 30(1): 63-69
10. Steven G.Rivkin, Eric A.Hanushek and John F.Kain, "Teachers, School's And Academic Achievement". Econometrica Vol. 73. No.2 (March 2005), 417-458

आर्थिक संकट निवारण में प्रमुख वैश्विक आर्थिक मंचों पर भारत की बढ़ती भूमिका

डॉ. सुनील मोरे *

वैश्विक परिदृश्य में एक समय तक भारत की केवल ऋणयाचक देश के रुप में पहचान थी, लेकिन आज परिस्थितियाँ बदल गई हैं। इस समय भारत को उभरती आर्थिक शक्ति के रुप में देखा जा रहा है और अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर भारत की उपस्थिति को गंभीरता से लिया जाने लगा है। सार्क, दोहा दौर, दक्षेस, बिक्स, जी-20, आसियान संगठन आदि के विविध सम्मेलनों में भारतीय नीति का प्रभाव स्पष्ट रुप से झलक रहा है।[1]

किसी भी देश की अर्थव्यवस्था मात्र उत्पादन और आन्तरिक खपत से संचालित नहीं होती हैं, वरन् यह निर्यात, परस्पर सहयोग और प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण जैसे तत्वों पर निर्भर करती हैं। सूई जैसी छोटी-सी वस्तु के लिए भी विदेशों पर आश्रित रहने वाला भारत देश अब अनेक आयामों को पार करते हुए एक प्रतिस्पर्धी देश बन चुका है। इक्कीसवीं सदी की एक आर्थिक शक्ति के रुप में परिभाषित भारत, चीन एवं अमेरिका जैसी आर्थिक शक्तियों के साथ कहीं प्रतिस्पर्धा तो कहीं सामंजस्य स्थापित कर रहा है।[2]

अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संकट निवारण हेतु भारत की भूमिका वैश्विक आर्थिक एवं राजनीतिक मंचों पर इस प्रकार है:-

1.आसियान (ASEAN) **:-**

'एसियन' या 'आसियान' का पूरा नाम 'दक्षिण-पूर्वी एशियाई राष्ट्र संघ' (Association of South-East Asian Nation ASEAN) है। सन्1967 में इण्डोनेशिया, मलेशिया, फिलिपीन्स, सिंगापुर तथा थाइलैण्ड सदस्य देशों ने इसका निर्माण किया था। सन् 1999 में कम्बोडिया, ब्रूनेई, वियतनाम, लाओस, म्यान्मार को सम्मिलित कर दस राष्ट्रों का समूह बना। जुलाई 1996 में भारत को 'आसियान' का पूर्ण संवाद सहभागी बना लिया गया। 'आसियान' का केन्द्रीय सचिवालय जकार्ता (इण्डोनेशिया) में है। 'आसियान' के निर्माण का प्रमुख उद्देश्य दक्षिण-पूर्व एशिया में आर्थिक प्रगति को त्वरित करना और उसके आर्थिक स्थायित्व को बनाए रखना है।

'आसियान' का नौवा सम्मेलन बाली में नवम्बर 2011 में हुआ, जिसमें भारत ने भाग लिया। इसमें पूर्वी एशिया के ऑस्ट्रेलिया, चीन, जापान, दक्षिण कोरिया, न्यूजीलैण्ड सहित अमेरिका एवं रुस ने भी सहभागिता की।

भारत ने व्यापार एवं निवेश बढ़ाने, सम्पर्क और क्षमता विस्तार के अतिरिक्त सुरक्षा संबंधी मुद्दें उठाये। 'आसियान' के साथ भागीदारी हमारी 'लुक-ईस्ट' नीति का महत्वपूर्ण हिस्सा है।[3] वैश्विक आर्थिक मंदी के कारण व्यापक भारत-आसियान सहयोग की आवश्यकता पर बल देते हुए भारत ने वाणिज्यिक रुप से सार्थक सेवाओं और निवेश समझौतों के लिए अनुकूल वातावरण बनाने का प्रयास किया।

2. ब्रिक्स :-(BRICSA)

ब्रिक्स (BRICSA) विश्व की पाँच उभरती अर्थव्यवस्थाओं-ब्राजील, रुस, भारत, चीन, और दक्षिण अफ्रीका का संगठन है। ब्रिक्स न केवल सबसे बड़ी और तेजी से उभरती अर्थव्यवस्थाओं का समूह, बल्कि इसमें एशिया, अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका महाद्वीपों का भी प्रतिनिधित्व है। आर्थिक मंदी से भारत भी प्रभावित हो रहा है, लेकिन ब्रिक्स देशों का वर्ष 2015 तक का व्यापार 212 अरब डॉलर होने के अनुमान से भारत को बड़ी राहत मिली हैं। ब्रिक्स देशों द्वारा विश्व बैंक की तर्ज पर संयुक्त विकास बैंक बनाने की घोषणा की जा चुकी हैं।

मार्च 2012 में नई दिल्ली में सम्पन्न हुए ब्रिक्स देशों के चौथे शिखर सम्मेलन में आर्थिक मंदी का मुकाबला करने हेतु कई मुद्दों पर निर्णय लिए गए। वैश्विक, राजनीतिक और वित्तीय अनिश्चितताओं को देखतें हुए आपसी व्यापार अपनी मुद्राओं में करने की दिशा में पहला कदम उठा दिया।

ईरान पर यूरोप और अमेरिका द्वारा लगाए गए आर्थिक प्रतिबन्धों के संबंध में भारत ने स्पष्ट किया है कि वह अन्तर्राष्ट्रीय कानून का सम्मान करता है, साथ ही यह भी स्पष्ट कर दिया कि तेल की कीमतों के उतार-चढ़ाव से भारतीय व्यापार घाटा बढ़ रहा है और भारतीय अर्थव्यवस्था प्रभावित हो रही हैं। अत: भारत के लिए ईरान के साथ संबंध सामान्य रखने की जरुरत है।

3. सार्क (दक्षेस):- (SAARC)

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संघ (दक्षेस) अर्थात् सार्क की स्थापना दिसम्बर, 1985 को ढ़ाका में दक्षिण एशिया के सात देशों-भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका और मालदीव द्वारा विभिन्न आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व तकनीकी विकास और वैज्ञानिक प्रगति के क्षेत्रों में सक्रिय सहयोग एवं पारस्परिक सहायता में वृद्धि करने के उद्देश्य से की गई। इसका मुख्यालय नेपाल की राजधानी काठमांडू में है। सार्क देशों में विभिन्न कार्यों के लिए वित्तीय अंशदान का ऐच्छिक प्रावधान किया गया है। इसमें भारत का अंशदान सर्वाधिक है।[6]

दक्षेस का 17वां शिखर सम्मेलन नवम्बर, 2011 में मालदीव के एक द्वीप अतोल में सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन के 'आडू घोषणा पत्र' में दक्षेस सदस्य देशों ने व्यापारिक उदारीकरण बढ़ानें पर जोर दिया है। भारत ने इस मंच से दक्षिण एशिया में व्यापार की मुक्त और संतुलित वृद्धि को लेकर प्रतिबद्धता जताई।

4. जी-20 :-

जी-20 की स्थापना 1997-98 में हुई थी। यह दुनिया के 20 बड़े देशों का आर्थिक मंच है, जिसमें जापान, जर्मनी, इटली, फ्रांस, भारत, चीन, ब्राजील, अर्जेन्टीना, ऑस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया, मैक्सिकों, रुस, सऊदी अरब, दक्षिण अफ्रीका, दक्षिण कोरिया, तुर्की, ब्रिटेन, कनाड़ा, अमेरिका और यूरोपीय संघ शामिल है। इसके सदस्य देश दुनिया की 90प्रतिशत जी. डी. पी., 80 प्रतिशत व्यापार और 65प्रतिशत आबादी का प्रतिनिधित्व करते हैं।7

नवम्बर, 2011 में फ्रांस के कान शहर में सम्पन्न हुए जी-20 के शिखर सम्मेलन में सभी सदस्य देशों का जोर वैश्विक अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने और वित्तीय धारा कम करने पर रहा। भारत ने वैश्विक मंदी के दौर में विकसित देशों मे प्रोत्साहन पैकेज शीघ्र वापस लेने पर चिंता जताई और स्पष्ट किया कि इससे विकासशील देशों का निर्यात बुरी तरह प्रभावित हो सकता है। भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों में सुधार पर जोर दिया था। वैश्विक आर्थिक स्थिति के संबंध में भारत के रुख को इस सम्मेलन में

* सहायक प्राध्यापक-वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, अंजड़, जिला-बड़वानी (म.प्र.)

व्यापक समर्थन मिला। भारत का हमेशा यह पक्ष रहा है कि आर्थिक संकट से घिरें और खासकर दिवालियापन के संकट का सामना कर रहें यूरोपीय देशों के लिए आर्थिक सहायता अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के द्वारा उपलब्ध कराई जाए।

भारत सरकार वैश्विक आर्थिक मंदी के दौर में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की अभूतपूर्व क्षमता से वाकिफ है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धात्मक मूल्यों पर वस्तुएँ एवं सेवाएँ उपलब्ध करा कर भारतीय लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाया जा सकता है, क्योंकि निर्यात वृद्धि के द्वारा रोजगार के नये क्षेत्र भी खुलते हैं।[8]

भारत में आर्थिक मंदी मध्यम वर्ग को चोट पहुँचाने लगी हैं और इसका सबसे ज्यादा प्रभाव नौकरियों पर पड़ा है। भारतीय कॉर्पोरेट जगत के कारोबार में नजर आ रहा निराशावाद, नौकरियों की संभावनाओं में तेजी से गिरावट ला रहा है। भारतीय अर्थव्यवस्था में आई टी, फाइनेंशियल सर्विसेज, टेलीकॉम और हॉस्पिटेलिटी जैसे रोजगार देने वाले अहम सेक्टर नौकरियों में कटौती करने लगे हैं।[9]

भारत यदि आर्थिक और अन्य वैश्विक मंचों के माध्यम से रणनीतिक प्रयास न करता तो बहुत संभव है कि हमें इस वैश्विक मंदी के कई दुष्परिणाम सहने पड़तें।

सन्दर्भ ग्रंथ

1. उद्योग व्यापार पत्रिका : इण्डिया ट्रेड प्रमोशन ऑर्गेनाइजेशन, प्रगति भवन, प्रगति मैदान, नई दिल्ली, अंक जून, 2012 पृष्ठ 2
2. उद्योग व्यापार पत्रिका : इण्डिया ट्रेड प्रमोशन ऑर्गेनाइजेशन, प्रगति भवन, प्रगति मैदान, नई दिल्ली, अंक मई, 2012 पृष्ठ 16
3. फड़िया, डॉ. बी. एल. : राजनीति विज्ञान, प्रतियोगिता साहित्य सीरिज, साहित्य भवन, आगरा, पृष्ठ 714-715
4. उद्योग व्यापार पत्रिका : इण्डिया ट्रेड प्रमोशन ऑर्गेनाइजेशन, प्रगति भवन, प्रगति मैदान, नई दिल्ली, अंक जून, 2012 पृष्ठ 34
5. उद्योग व्यापार पत्रिका : इण्डिया ट्रेड प्रमोशन ऑर्गेनाइजेशन, प्रगति भवन, प्रगति मैदान, नई दिल्ली, अंक जून,2012 पृष्ठ 2-6
6. कुमार, डॉ. अषोक : राजनीति विज्ञान, उपकार प्रकाशन, आगरा, पृष्ठ 673-675
7. उद्योग व्यापार पत्रिका : इण्डिया ट्रेड प्रमोशन ऑर्गेनाइजेशन, प्रगति भवन, प्रगति मैदान, नई दिल्ली, अंक जून, 2012 पृष्ठ 21-22
8. कुरुक्षेत्र : ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, अंक सितम्बर, 2007
9. इण्डिया टूडे, नई दिल्ली, सितम्बर, 2012

****

सामाजिक उत्तरदायित्व तथा सामाजिक सुरक्षा के लिए नये कंपनी बिल एवं पेंशन बिल के प्रावधान - एक अध्ययन

डॉ. अमर कुमार जैन *

भारतीय कंपनी अधिनियम 1956 की जगह लगभग 57 वर्ष बाद नए कंपनी अधिनियम 2013 को लागू किया गया। इस अधिनियम में अन्य प्रावधानों के साथ सामाजिक उत्तर दायित्व के संबंध में एक नयी अवधारणा ने आकार लिया है। यह अवधारणा कुछ हद तक गांधीजी के ट्रस्टीशिप सिद्धांत की व्याख्या करता है, इस सिद्धांत में गांधीजी ने कहा था कि जरूरत से अधिक संपत्ति पर समाज का अधिकार है हमारे पास जो संपत्ति है वह समाज की है, तथा हम उस संपत्ति के ट्रस्टी है।

इसी भावना को इस अधिनियम में प्रावधान के बीच रखा गया है। संसद के दोनों सदनों में (राज्य सभा तथा लोक सभा) पारित होने के बाद इस अधिनियम में न्यूनतम 500 करोड़ के नेटवर्थ और न्यूनतम 1000 करोड़ रूपये राजस्व कमाने या 5 करोड़ रूपये से अधिक लाभ कमाने वाली कंपनियों के लिए यह अनिवार्य हो जाएगा कि वे विगत 3 वर्षो में औसत शुद्ध लाभ का 2 प्रतिशत सामाजिक उत्तरदायित्व (CSR) पर व्यय करे।

इस प्रावधान को जहाँ सरकार उपकर के रूप में स्वीकार नही कर रही है, वही दूसरी ओर कंपनियां अपने शुद्ध लाभ में कमी को लेकर चिन्तित रहेगी। विश्लेषक भूपेक्ष भण्डारी मानते है कि इस कानून में जो बुनियादी बात नजर अंदाज की गयी है वह यह कि परमार्थ का कार्य व्यक्तिगत होता है कंपनियां यह कार्य नही करती है। विश्व के देशों में जितने भी उदाहरण सामने आए है उनसे तो कम से कम यही सिद्ध होता है लेकिन फिर भी यदि कंपनियां इस पुनीत कार्य को करती है तो इसमें कोई बुराई भी नहीं है।

भारत जैसे विशाल जनसंख्या से समृद्ध देश में सामाजिक उत्तर दायित्व की बात कोई नई नही है, वरन् प्रचीन समय में धार्मिक ग्रंथों में ऐसे अनेक उदाहरण मिल जाएगे, जब सामाजिक उत्तरदायित्व को कर्त्तव्य मानकर करने की बात की गई है विगत समय में टाटा व लाला श्रीराम, डॉ. हरीसिंह गौर, डॉ. मदन मोहन मालवीय, आदि ने सामाजिक उत्तरदायित्व के व्यक्तिगत उदाहरण समाज के सम्मुख प्रस्तुत किए है।

वर्तमान समय में व्यापारी व कंपनियों के मालिक अपनी आय का बड़ा हिस्सा व्यापार या कंपनी के विकास के लिए प्रयुक्त कर रहे है लेकिन कुछ कारोबारियों ने जिसमें बिलगेट अजीम प्रेमजी शामिल है, ने व्यक्तिगत तौर पर इस जिम्मेदारी को निभाया है। अजीम प्रेमजी ने दो चरणों मे अपनी कंपनी विप्रो में 20.7 प्रतिशत अंश अजीम जी प्रेमजी फाऊण्डेशन को हस्तांतरित किए है। इसी प्रकार शोभा डेपर्ल्स ने अपनी संपत्ति का 50 प्रतिशत जो लगभग 3500 करोड़ रूपये होगी दान करने का फैसला किया है। परोपकार की इसी श्रृंखला में इन्फोसिस में वाइस फाउण्डर की पत्नि रोहिणी नीलमणी ने 160 करोड़ में अंश विक्रय किए है।

इस कंपनी विधेयक ने सामाजिक उत्तरदायित्व का जो दायित्व कंपनी मालिकों पर सौंपा है वह उनकों पसंद आयेगा इसकी संभावना कम ही है, क्योंकि परोपकार करना कंपनी अपना दायित्व नही समझती है, वरन् व्यापार करके शुद्ध लाभ कमाना ही इसका उद्देश्य समझते रहे है। सरकार की सामाजिक उत्तरदायित्व के इस प्रावधान में सरकार अपनी जिम्मेदारी का बटवारा इन कारोबारियों के साथ करना चाहती है। इस प्रावधन का कितना असर देश में सामाजिक विकास पर पढ़ेगा यह तो भविष्य में पता चलेगा लेकिन प्रश्न यह उठता है, कि सरकार को वर्तमान समय में ऐसी क्या आवश्यकता आ गयी कि उन्हें सामाजिक परोपकार के इस मुद्दे को नए कंपनी अधिनियम में कानून बनाकर शामिल करना पड़ा तो इस प्रश्न का उत्तर यह है, कि वर्तमान समय में सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना में कमी आ रही है व्यक्तिगत पहल के द्वारा किए जाने वाले कार्य इस उद्देश्य की पूर्ति नही कर पा रहे है अतएव इस कार्य को करने की जिम्मेदारी अब समूहों में वितरित की जा रही है।

इस प्रावधान में एक बात यह सामने आई है, कि कंपनियां सामाजिक उत्तरदायित्व को निभाते समय स्थानीय जगह को प्राथमिकता दे सकते है, इसका सीधा-सीधा अर्थ यह हुआ, कि कंपनी यदि महाराष्ट्र में स्थापित है, तो वह महाराष्ट्र के क्षेत्र को सामाजिक उत्तरदायित्व के लिए चुन सकती है, लेकिन ऐसे राज्य जहां पर कंपनी की स्थापना नहीं है, जैसे:- मेघालय, मणिपुर, सिक्किम, बिहार इत्यादि, सामाजिक उत्तरदायित्व के इस पुनीत कार्य से वंचित रह जायेंगे, जिससे क्षेत्रीय असंतुलन की स्थिति भी सामने आयेगी। इस प्रावधान का दुरूपयोग राजनैतिक संरक्षण वाले ऐसे ट्रस्ट व एन.जी.ओ. भी कर सकते है, जिनका उद्देश्य गरीबों के हितों के कार्य करने की अपेक्षा पैसा कमाना है। कानूनी दायरे में रहकर तथा इस बिल के प्रावधानों का प्रयोग यदि कतिपय ऐसे लोग अपने निहित स्वार्थ के लिए करेंगे तो इस प्रावधान की मूल भावना ही खण्डित हो जायेगी।

कंपनी अधिनियम के द्वारा सामाजिक उत्तरदायित्व की इस पहल में सब कुछ हरा-भरा ही होगा इसकी संभावना कम ही है क्योंकि जिस प्रकार सरकारी कल्याणकारी योजनाओं में निरन्तर गड़बड़ियां समाने आ रही है, हम यह कैसे कह सकते है, कि कंपनियों द्वारा चलाए गए कार्यक्रमों का लाभ वास्तविक व्यक्तियों तक ही पहुंचेगा?

यदि इस सामाजिक उत्तरदायित्व में महत्वपूर्ण कार्य को भी लाभकारी कार्य बनाकर बंदरबाट कर दी तो एक ओर सरकार की उम्मीदे टूटेंगी वही दूसरी ओर लाभार्थी का विश्वास। अमेरिका जैसे विकसित देशों में सामाजिक उत्तरदायित्व के रूप में बेरोजगार व्यक्तियों को रोजगार भत्ता दिया जाता है, तथा इस भत्ते की राशि की व्यवस्था उन व्यक्तियों से की जाती है, जिन्हें रोजगार प्राप्त है, वहां पर ईमानदारी से वो व्यक्ति ही इस राशि को प्राप्त करते है, जो बेरोजगार हो और जैसे ही उन्हे रोजगार प्राप्त हो जाता है वह इस राशि का त्याग कर देते है। वास्तव में भारत में भी ऐसी ही ईमानदारिक पहल की आवश्यकता है, जिससे योजना का लाभ उन व्यक्तियों तक पहुंचे जिन्हे आवश्यकता है।

पेंशन बिल-2013

वरिष्ठ नागरिकों को सामाजिक सुरक्षा के लिए पेंशन का उपयोग सभी सरकारें स्वतंत्रता के बाद से ही करती आ रही है लेकिन वर्तमान समय में पेंशन के रूप में इन सरकारों को अपनी आय का बड़ा हिस्सा चुकाना पड़ रहा था, जिसके कारण 2004 के बाद से एक नए पेंशन बिल के विषय में सरकार ने

* एम्बेसेडर/सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य विभाग) शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

सोचना प्रारंभ किया तथा 2013 मे तथा पेंशन बिल लोक सभा व राज्य सभा में पारित किया गया। पेंशन कोष विनियामक एवं विकास प्राधिकरण (PFRDA) विधेयक को स्वीकृति मिलने के बाद पेंशन उद्योग को नए-नए उत्पाद पेश करने की होड मच जाएगी जिसका सीधा लाभ वरिष्ठ नागरिकों को सामाजिक सुरक्षा के रूप में मिलेगा।

सामाजिक सुरक्षा जो वरिष्ठ नागरिकों का अधिकार भी है को लेकर सरकारों की चिन्ताएँ इस विधेयक के स्वीकृत हो जाने पर कम अवश्य होगी। यह विधेयक जहां एक ओर वरिष्ठ नागरिकों को प्रत्येक माह आय की सुरक्षा देने के लिए पेंशन कोष विनियामक एवं विकास प्राधिकरण की स्थापना करता है वहीं दूसरी ओर इस प्राधिकरण को राष्ट्रीय पेंशन प्रणाली (NPS) व कानून के क्षेत्र में न आने वाली अन्य पेंशन योजनाओं के विनिमयन, इनके पंजीकरण और केन्द्रीय रिकार्ड एजेन्सी के अधिकार देता है।

भारत के पास वरिष्ठ नागरिकों की सुरक्षा योजना के लिए यह विधेयक मील का पत्थर साबित होगा। इस विधेयक की स्वीकृति में पहले यह प्राधिकरण वित्त मंत्रालय नीचे कार्य करता था तथा सवैधानिक शक्तियों से मुक्त था लेकिन इस विधेयक की स्वीकृति के पश्चात् यह संस्थाओं को पेंशन उद्योग के नियामक के रूप में कानूनी मान्यता प्रदान करता है जिसके कारण इसे अपने निर्णय स्वयं लेने की क्षमता विकसित होगी।

उपभोक्ता में पेंशन नियामक द्वारा निर्मित उत्पादों में प्रति विश्वास बढ़ने से उत्पादों की सफलता सुनिश्चित होगी। यह बिल 26 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को भी मान्यता प्रदान करता है। इस क्षेत्र के जानकार एवं प्राधिकरण के चेयरमेन योगेश अग्रवाल के अनुसार एक अकेले पेंशन फण्ड के लिए महज 25 करोड़ रूपये की आवश्यकता होती है अत: वर्तमान समय में 8 पेंशन फण्डों के लिए 200 करोड़ रूपये के विदेशी निवेश की आवश्यकता होगी और यदि इस सीमा को 49 प्रतिशत तक बढ़ाया जाएगा तो 40-45 करोड़ की राशि और आ जाएगी।

पेंशन फण्ड का पैसा स्टाक मार्केट में समता अंश पूंजी के रूप में लगाए जाने की स्वीकृति इस बिल में प्रदान की गई है। इस निवेश की ऊपरी सीमा 50 प्रतिशत है, जबकि निगमीय बाण्ड और सरकारी प्रतिभूतियों में यह सीमा 100 प्रतिशत है। इस क्षेत्र के जानकार यह आशा करते हैं कि भविष्य में निवेश की सीमा को 50 से बढ़ाकर 100 प्रतिशत किया जा सकता है। पेंशन बिल लंबी अवधि के संपत्ति निर्माण में सही मार्ग से देश में फण्ड एकत्रित करेगी तथा 2017 तक 1 ट्रिलियन विनिमय इस क्षेत्र में होगा।

संदर्भ ग्रंथ

- पेंशन बिल से मिलेगी सामाजिक सुरक्षा-एम-सरस्वती - बिजनेस स्टैंडर्ड - भोपाल संस्करण 5 सितम्बर 2013 पृष्ठ 12
- जबरदस्ती परोपकार कराने का जरिया बना सी.एस.आर.- भूपेश भण्डारी - बिजनेस स्टैंडर्ड - भोपाल संस्करण 21 अगस्त 2013 पृष्ठ 12
- http://en.wikipedia.org/wiki/National_Pension_Scheme
- Things You Must Know About The New Company's Bill 2013 By SiliconIndia | Thursday, 22 August 2013, 18:00 IST
- CSR mandatory with passage of New Companies Bill: All you need to know Read more http://www.firstpost.com

****

भारतीय समाज एवं धर्म व्यवस्था में अंग्रेजी हस्तक्षेप का परिणाम विप्लव 1857

डॉ. वन्दना मण्डोर *

बंगाल में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का इतिहास बेईमानी, घूसखोरी और भयंकर हत्याओं का इतिहास है। जिस प्रकार ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने हिन्दुस्तान पर अधिकार जमाया, उसे अधिक वीभत्स और ईसाई सिद्धान्तों के विरूद्ध किसी दूसरे प्रकार की कल्पना तक नहीं की जा सकती।[1]

कम्पनी ने अपने राजनैतिक अधिकार क्षेत्र का काफी विस्तार किया। अनेक देशी राजाओं को अपने अधीन कर लिया। उन्हें नाममात्र की आजादी दी गई। 1856 तक प्राय: सम्पूर्ण भारत में कम्पनी का साम्राज्य स्थापित हो चुका था।[2] इतने बड़े राजनैतिक क्षेत्र की कम्पनी के हाथ में छोड़ना उचित नहीं था। ब्रिटिश सरकार मौके की तलाश में थी। इंग्लैण्ड में बहुत से लोग, भारत में कम्पनी के अधिकारियों की श्रीवृद्धि से जलने लगे थे। वे ब्रिटिश सरकार पर, कम्पनी शासन में हस्तक्षेप करने पर दबाव डालते लगे।[3]

उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि ब्रिटिश सरकार के दोषपूर्ण अधिनियमों के फलस्वरूप बंगाल में अत्याचारों में वृद्धि हो रही थी। कम्पनी के कुशासन से हिन्दुस्तान का हर वर्ग असन्तुष्ट था। उनमें विद्रोह की लहर फैलने लगी थी। अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य विस्तार में बड़ी चतुराई से काम लिया था। हमारी आपसी फूट, उनके यहाँ राज्य स्थापित करने में सहायक सिद्ध हुई जहाँ उन्होंने आन्तरिक फूट देखी, वहाँ किसी एक पक्ष की मदद की और उसे सत्तधारी बना दिया। इसी नीति के परिणामस्वरूप ब्रिटिश साम्राज्य सुदृढ़ हुआ।

पाश्चात्य विचारधारा एवं विदेशी शासन ने भारतीय चिन्तन तथा संस्कृति की उपादेयता के सम्बन्ध में जो चुनौती प्रस्तुत की, उसकी एक विशेष प्रतिक्रिया हुई। इसी प्रतिक्रिया के फलस्वरूप राजा राममोहन राय ने ब्रह्मसमाज की स्थापना की। अंग्रेजी शासन के प्रति राजाजी का भाव तो श्रद्धापूर्ण था, किन्तु बाद के वर्षों में, भारतीय जन-मानस में, इस विदेशी सत्ता के प्रति घृणा की भावना बलवती हो गई थी। यह घृणा कई प्रकार से व्यक्त हुई। कई स्थानों पर जनता ने सशस्त्र विद्रोह किये।[4]

इस कार्य में हिन्दू, मुसलमान, आदिवासी तथा देशी रियासतों के राजा सभी एकजुट हो गये थे। मुस्लिम फकीरों तथा हिन्दू संन्यासियों ने भी बंगाल में विद्रोह का झण्डा फहरा दिया था। दक्षिण भारत में भी विजयनगरम्, तिन्नेवेली तथा ब्रह्माण्ड में सशस्त्र विद्रोह हुए। सयद अहमद बरेलवी का बहावी आन्दोलन मुस्लिम सुधार आन्दोलन के साथ स्पष्टत: अंग्रेजों के विरूद्ध भी था। यद्यपि अंग्रेजों ने इसे पूर्ण क्रूरता से कुचला, फिर भी यह ज्वाला 1857 में अपने प्रचण्ड रूप में धधक उठी।[5]

डलहौजी ने साम्राज्य विस्तार तथा पुत्र गोद लेने के निषेध द्वारा देशी राज्यों के अपहरण का जो कुचक्र चलाया, उसने सम्पूर्ण भारत के देशी नरेशों को आतंकित कर दिया। जब किसी देशी रियासत का अन्त किया जाता है तो वहाँ के नरेश को हटाकर, एक अंग्रेज उसकी जगह नियुक्त कर दिया जाता है। देशी नरेश जो हजारों सैनिकों का पालन करता है, उसकी जगह हमारी सेना के कुछ सिपाही नियुक्त किये जाते हैं।[6]

नि:सन्देह जिनके द्वारा नरेशों की रियासतें अंग्रेजी राज्य में मिला ली गई, उनके विरूद्ध भारतवासियों के भाव न भड़क उठते, तो भारतवासियों को मनुष्यता से गिरा हुआ कहा जाता। नि:सन्देह एक भी स्त्री ऐसी न होगी, जिसे इन रियासतों के अपहरण ने हमारा शत्रु न बना दिया हो, एक भी बच्चा ऐसा न होगा, जिसे हमारे कार्यों के कारण, फिरंगी राज्य के विरूद्ध आरम्भ से घृणा की शिक्षा न दी जाती हो।[7]

लार्ड डलहौजी के समय में सहारनपुर में एक नया अंग्रेजी अस्पताल बना, जिसमें हर मजहब के रोगियों को आने की आज्ञा दी गई। हर जाति के रोगी- पुरुष व स्त्री यहाँ तक की पर्दानशीन स्त्रियाँ भी इलाज के लिये इसी अस्पताल में आते। देशी हकीम या वैध न किसी रोगी को दवा दे सकते और न किसी का इलाज कर सकते। जनता में तहलका मच गया। अन्त में अफसरों को अपनी घोषणा वापस लेनी पड़ी।[8] भारत की जागीरों को हड़पने के लिये डलहौजी ने इनाम कमीशन नामक जाँच कमेटी कायम की। इसने समस्त भारत की लगभग 35 हजार जागीरों की जाँच की और दस बरस के अन्दर उनमें से करीब 21 हजार को जब्त करके कम्पनी के राज में मिला लिया।[9] कुछ अंग्रेज पदाधिकारियों ने ऐसे वक्तव्य दिये, जिससे देशी नरेश अत्यन्त आतंकित हो उठे और अपने भावी अस्तित्व के सम्बन्ध में पूर्ण रूप से निराश हो उठे।[10]

अंग्रेजों ने झाँसी के राजा गंगाधर राव के दत्तक पुत्र को उत्तराधिकार से वंचित कर, झाँसी को कम्पनी राज्य में सम्मिलित कर लिया। पेशवा बाजीराव द्वितीय के दत्तक पुत्र धुन्धुपंत अथवा नाना सा. को उनके पिता की पेंशन से वंचित करके, उन्हें अपना शत्रु बना लिया था। इससे पूर्व नाना सा. अंग्रेजों के मित्र थे और उन्हें दावतें देते थे।[11] इससे स्पष्ट है कि अंग्रेजों की नीति से भारत के राजाओं और लोगों को अपना विरोधी बना लिया था।

बहादुरशाह द्वारा घोषित उत्तराधिकारी जवां बख्त की जगह गवर्नर जनरल ने मिर्जाकोयास को उसका उत्तराधिकारी स्वीकार किया। उसे दिल्ली का दुर्ग खाली कर देने को कहा और एक लाख मासिक के स्थान पर केवल 15 हजार रूपये मासिक व्यय के लिये स्वीकार किया।

13 फरवरी 1856 को कुशासन का आरोप लगाकर अवध को अंग्रेजी राज्य में सम्मिलित कर लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि मुस्लिम कुलीनतन्त्र, सैनिक वर्ग, सिपाही और किसान सब अंग्रेजों के विरूद्ध हो गये और अवध असन्तोष का बहुत बड़ा केन्द्र हो गया।[12] इससे स्पष्ट है कि अंग्रेजों की नीति ने भारत के राजाओं तथा किसानों को अपना विरोधी बना लिया था। डलहौजी ने सम्पूर्ण भारत के देशी राज्यों के अपहरण का जो कुचक्र चलाया, उससे देशी राजा अंग्रेजों से चौकन्ने हो गये।

1813 के चार्टर एक्ट द्वारा ईसाई मिशनरियों को भारत में धर्म प्रचार की स्वीकृति दे दी थी। जो अंग्रेज ईसाई पादरी भारतवासियों के 'धार्मिक उद्धार' के लिये यानी उन्हें ईसाई बनाने के लिये भारत जाना चाहे और वहाँ रहना चाहे, उन्हें कानून के जरिये हर तरह की सुविधा दी जाये। ईसाई धर्म प्रचार का एक सरकारी महकमा भारत में खोल दिया गया और उसका खर्च भारतवासियों के सिर मढ़ दिया गया।[13] सन् 1857 के शुरू में हिन्दुस्तानी सेना के बहुत से कर्नल सेना को ईसाई बनाने के दुष्कर कार्य में लगे हुए थे। इन्होंने रिश्वत व तरक्की का लालच देकर उन्हें ईसाई बनाना शुरू किया। प्रारम्भ में सिपाहियों

* 30/34, अब्दालपुरा (औदिच्य ब्राह्मण धर्मशाला के सामने), उज्जैन (म.प्र.)

ने कभी घृणा और कभी उदासीनता से यह सब बर्दाश्त किया, किन्तु जब इन लोगों का काम बराबर जारी रहा तो दोनों धर्मों के सिपाही चौंक पड़े।

इससे स्पष्ट है कि अंग्रेजों का उद्देश्य भारतीयों को ईसाई बनाने का था। कम्पनी की सेना के अनेक अंग्रेज अफसर अपने सैनिकों का धर्म परिवर्तन का प्रयास करने लगे। शासन की यह नीति अधिक चल न सकी और इसका विरोध होना प्रारम्भ हो गया।

सरकार ने 1856 में ''जनरल सर्विस इनफिस्टमेन्ट एक्ट' पारित किया। इसके तहत सेना में केवल उन्हीं को भर्ती किया जायेगा, जो सर्वदा सभी जगह जाने को तैयार रहेंगे। भारतीय सैनिकों का वेतन अंग्रेज सैनिकों से कम होता था। युद्ध में पहले भारतीय सैनिकों को रखा जाता था। विजयी होने पर उन्हें केवल कुछ मीठे शब्दों द्वारा प्रोत्साहित किया जाता, जबकि गोरे सैनिकों को इनाम दिया जाता था। मराठा राज्य में प्रचलित था कि कोई युद्ध सैनिक जीते या उन्हें जागीर दे दी जाती थी।[14]

उपरोक्त से स्पष्ट प्रतीत होता है कि सैनिक वर्ग में भी असन्तोष व्याप्त था। उनके साथ पक्षपात किया जाता था। जिसके फलस्वरूप हिन्दू और मुसलमान दोनों ने विरोध करना प्रारम्भ कर दिया था। कम्पनी ने कई देशी राज्यों को अंग्रेजी राज्य में मिला लिया था, उनके सैनिकों को निकाल देने के फलस्वरूप कई सैनिक बेकार हो गये थे। इसके साथ-साथ भारतीय सैनिक समुद्र पार जाना धर्म के विरूद्ध मानते थे। यह भी उल्लेखनीय असन्तोष का कारण रहा है। भारतवासियों की प्रचीन धार्मिक परम्परा को नाजायज करार दिया। सती प्रथा को बन्द कर दिया गया। बाल-विवाह के खिलाफ भी कानून बनाया गया। विधवा पुनर्विवाह विधेयक पारित किया गया। रूढ़िवादी भारतीय इन सुधारों को मानने के लिये तैयार नहीं थे। उन्हें डर था कि अंग्रेज धीरे-धीरे उनके सारे सामाजिक रीति-रिवाजों को समाप्त कर देगें। डलहौजी द्वारा शुरू की गई रेल सेवा का भी बहुत लोगों ने विरोध किया।[15]

जिस देश में शिक्षण व्यवस्था का इतना प्रसार था कि हर गाँव में अध्यापक वैसे ही नियमित रूप से मिलते थे, जैसे कि मुखिया या पटेल। उस व्यवस्था को सरकार ने नष्ट कर दिया और उसकी पूर्ति के लिये उन्होंने कुछ भी नहीं किया।[16] इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि सामाजिक सुधारों का प्रभाव भी क्रान्ति के लिये उत्तरदायी रहा है। ब्रिटिश शिक्षा नीति का परिणाम भी यह हुआ कि अधिकांश लोग शिक्षा प्राप्त करने से वंचित हो गये।

भारत के प्रचीन उद्योग-धन्धों के सर्वनाश और भारत की वर्तमान दरिद्रता का कारण 1813 का चार्टर एक्ट था। भारत से सस्ते दर पर कच्चा माल खरीद कर लंकाशायर और मेनचेस्टर भेज दिया जाता था। वही सामान काफी महँगा होकर भारतीय बाजारों में बेचा जाता था। भारत का औद्योगिक जगत् नष्ट हो गया। जुलाहों को बलपूर्वक कम्पनी के लिये कार्य करने पर विवश किया।[17]

सन् 1770 में अकाल पड़ा तो पूर्निया जिले की एक तिहाई आबादी कलकत्ते की कौंसिल के अनुसार मर गई। 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में 15 लाख आदमी भूखमरी के शिकार हुए। 1850 के बाद के पच्चीस वर्षों में 50 लाख आदमी सरकारी आँकड़ों के अनुसार दुर्भिक्ष में मरे।

इससे स्पष्ट है कि अंग्रेजों की आर्थिक नीति के कारण देश की स्थिति अत्यधिक खराब हो गई थी। अकाल के समय अंग्रेजों की ओर से पर्याप्त सहायता करना तो दूर था, मालगुजारी में वृद्धि कर दी गई, जिसके फलस्वरूप जनता में रोष व्याप्त हो गया था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस चिकने मसाले के बनाने में गाय की चर्बी का उपयोग किया गया था।[18] कारतूसों को वापस लेने से यह शक और भी बढ़ गया।[19] इसे कमजोरी का चिह्न समझा गया। जो अपवित्र इरादों की पोल खुल जाने पर किया था। कलकत्ते के ठेकेदार ने अपने कागज में लिखा था- ''मैं गाय की चर्बी लाकर दूँगा और चर्बी का भाव चार आने सेर रखा गया था।''[20]

इससे स्पष्ट है कि क्रान्ति के लिये सभी आवश्यक कारण उपस्थित थे, क्रान्ति की समस्त तैयारियाँ हो चुकी थीं। चर्बी वाले कारतूसों की घटना केवल एक चिंगारी थी, जो अकस्मात् इस सारे विस्फोटक मामले में आ पड़ी। यह युद्ध एक राष्ट्रीय और धर्मिक युद्ध था। उत्तर पश्चिमी प्रान्तों के अधिकांश भाग में यह देशी जनता का अंग्रेजी सत्ता के विरूद्ध विद्रोह था।

क्रान्ति का संगठन -

1857 का विप्लव पूर्व नियोजित था। मौलवियों, फकीरों और भिखारियों के रूप में देशभक्त नि:स्वार्थ भाव से सारे देश में विप्लव का प्रचार कर रहे थे। इस योजन को सावधानी से अन्तिम समय तक गुप्त रखा गया। एक देशी दरबार से, दूसरे देशी दरबार, भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक नाना साहब के एजेन्ट, सम्भवत: रहस्यपूर्ण भाषा में लिखे पत्र विभिन्न जातियों और धर्मों में राजाओं के पास पहुँचाते थे और उन्हें युद्ध में भाग लेने को आमंत्रित करते थे।

चपाती और कलम विप्लव के गुप्त संकेत थे। गाँव में एक रोटी घुमाई जाती, प्रत्येक नागरिक उसका थोड़ा-सा टुकड़ा खाता और चौकीदार दूसरे गाँव में रोटी लेकर जाता। चपाती का अर्थ था यदि जनता विद्रोह नहीं करेगी तो उसकी रोटी छिन जायेगी।

इसी प्रकार एक पलटन दूसरी पलटन को कमल का फूल भेजती, हर सैनिक उस फूल को पास के सैनिक को देता था। आखरी सैनिक उसे दूसरी छावनी में पहुँचा आता था। कमल हाथ में लेने का मतलब था, हम विप्लव में भाग लेंगे। संगठन के दोनों चिह्न भी अंग्रेजों से गुप्त रखे गये।[21]

सन्दर्भ -

01. ए.बी. कीथ - स्पीचेस ऑन इण्डियन पॉलिसी, वाल्यूम 1, ऑक्सफोर्ड 1920, पृ. 340 चांद - वर्ष 7, खण्ड-2, संख्या 2, जून 1929, पृ. 152
02. डॉ. भरत मिश्र - 1857 की क्रान्ति और उसके प्रमुख क्रान्तिकारी, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1992, पृ. 7 चांद - वर्ष 7, खण्ड-2, संख्या 2, जून 1929, पृ. 152
03. के. सन्थानम - ब्रिटिश इम्पीरियलिज्म एण्ड इंडियन नेशनेलिज्म, पृ. 20
04. ताराचन्द - हिस्ट्री ऑफ दी फ्रीडम मूवमेन्ट इन इण्डिया, द्वितीय खण्ड, पृ. 96-97
05. बेनीप्रसाद वाजपेयी - सन् 57 का विप्लव, पृ. 1
06. लुडलोजस् - थाट्स ऑन द पॉलिसी ऑफ द क्राउन, पृ. 35-36
07. के.सन्थानम - ब्रिटिश इम्पीरियल एण्ड इंडियन नेशनेलिज्म, पृ. 24
08. मेलसन - हिस्ट्री ऑफ इण्डियन म्युटिनी, वाल्यूम 11, पृ. 21-22
09. पी.ई. राबर्ट्स - ब्रिटिशकालीन भारत का इतिहास, पृ. 55
10. सर जानके - हिस्ट्री ऑफ द सेपोय, वाल्यूम 1, पृ. 101
11. मेलसन - हिस्ट्री ऑफ द इण्डियन म्युटिनी 1, पृ. 349
12. सुन्दरलाल - भारत में अंग्रेजी राज, पृ. 984
13. डॉ. भरत मिश्र - 1857 की क्रान्ति और उसके प्रमुख क्रान्तिकारी, पृ. 21
14. ताराचन्द - हिस्ट्री ऑफ द फ्रीडम मूवमेंट इन इण्डिया, द्वितीय खण्ड, पृ. 101-102
15. गिओर्ग स्मिथ - द आक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, पृ. 394-395
16. रामविलास शर्मा - सन् सत्तवन की राज्य क्रान्ति, पृ. 85
17. सर जान के - इण्डियन म्युनिटी, वाल्यूम 1, पृ. 381
18. स्मिथ - दी आक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, पृ. 667
19. सर जान के - इण्डियन म्यूटिनी, भाग-1, पृ. 24
20. सुन्दरलाल - भारत में अंग्रेजी राज, पृ. 824-26

****

सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन हेतु ज्योतिराव फुले द्वारा किये गये प्रयासों का अनुशीलन

डॉ. सौदानसिंह मकवाना *

ज्योतिराव फुले का जन्म 28 अप्रैल 1827 को महाराष्ट्र में पूना की एक माली जाति में हुआ था। इनके पिता का नाम गोविन्दराव एवं माता का नाम चिमनाबाई था। एक वर्ष की उम्र में इनकी माता का स्वर्गवास हो गया। इनका पालन-पोषण एक धाय माँ के द्वारा हुआ। इनके पिता ने इनकी प्रतिभा को देखकर इन्हें पाठशाला भेजने का विचार किया।

हिन्दू समाज में जातिगत भेदभाव उत्पन्न करके दलित, शोषित तथा बुद्धिहीन लोगों को नरक और स्वर्ग का भय दिखाने वाली ब्राह्मण व्यवस्था से घिरे वातावरण में शिक्षा दिलाना आसान नहीं था। तत्कालीन शिक्षा ब्राह्मणों या उच्च वर्ग के निजी विद्यालयों में दी जाती थी। कोई सरकारी स्कूल नहीं था। 1836 से ग्राम पाठशाला का सूत्रपात हुआ।

शिक्षा -

अंग्रेजी शासन व्यवस्था में शिक्षा का अधिकार सबको मिलने के कारण इनको एक मराठी पाठशाला में प्रवेश दिलाया गया। शिक्षा प्रसार में उस समय मुख्य अवरोध ब्राह्मणों के मानस की यह धारणा थी कि शूद्रों (पिछड़ा वर्गों) अति शूद्रों (अछूत वर्ग) को शिक्षा का अधिकार नहीं है। शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार केवल ब्राह्मणों को है। अत: ब्राह्मणों के निर्देशानुसार गोविन्दराव की फूलों की दुकान पर कार्यरत ब्राह्मण नौकर गोविन्दराव को निरन्तर प्रेरित करता रहता था कि वह ज्योतिराव का पढ़ना बन्द करा दें।

बम्बई नेटिव एज्युकेशन सोसायटी के संकेत से विद्यालय से निम्न जाति के छात्रों को निकाल दिया गया। इन्हें भी स्कूल से निकालकर फूलों के उद्यान के कार्य पर लगा दिया। वे दिन भर खेतों में काम करने के पश्चात् रात को पुस्तक पढ़ते थे। उनकी लगन व मेहनत से प्रभावित हो, उनके पड़ोसी गफ्फारबेग तथा लेजिट के परामर्श से, इनके पिता ने इन्हें 1849 में मिशन स्कूल में प्रवेश दिलाया। 14 वर्ष की उम्र में ज्योतिराव ने अपने विद्यालय की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

इनके बचपन में कुछ ऐसी घटनाएँ घटी थीं, जिसके कारण वह यह सोचने पर विवश हो गये कि देश के असंख्य शूद्र दलित लोगों के साथ ईश्वर अथवा धर्म का नाम लेकर पशुता का व्यवहार क्यों किया जाता है ? नारी की कोख से जन्म लेते ही बच्चे को ब्राह्मण और शूद्र की श्रेणी में वर्गीकरण करने का औचित्य क्या है ?

ऐसे ही प्रश्नों ने उनके मन में मनु स्मृति, वेद, पुराण, महाभारत, रामायण, गीता आदि धर्म ग्रन्थों के प्रति आशंकाओं को उत्पन्न किया। कर्मकाण्डी पाखण्डों के लिये ब्राह्मण वर्ग के प्रति वे घृणा से आक्रोशित हो उठे। बचपन में अपने ब्राह्मण मित्र की बारात में जाकर उन्हें जिस प्रकार अपमानित होना पड़ा, उसकी अमिट छाप वह जीवन पर्यन्त महसूस करते रहे।

तत्कालीन समाज में मूर्ति-पूजा से लेकर छुआछूत जाति-पांति की ऊँच-नीच की भावनाएँ, नारी वर्ग के प्रति अमानवीय व्यवहार, दलित और शूद्रों के लिये साँस लेना दूभर था। सम्पन्न सवर्णों द्वारा उनका शोषण होना सामान्य बात थी। बाल विधवाएँ निरीह बेजुबान मृग होने की तरह कष्ट साध्य जीवन का भार ढो रही थीं। शूद्र और नारी दोनों के लिए विद्यार्जन करना प्रतिबन्धित था। सब मानवीय अधिकारों से वंचित इस दलित वर्ग को उच्च वर्ण वालों की सेवा में अपना पेट भरने के लिए जीवन पर्यन्त रहना आवश्यक था।

ज्योतिराव फुले द्वारा किये गये समाज सुधार के प्रयास -

उन्होंने समाज में फैली उन धार्मिक कुरीतियों, छुआछूत, अस्पृश्यता और दकियानुसी परम्पराओं पर गम्भीरता से सोच-विचार किया। अपने से पूर्व समाज सुधारकों के विचारों को गहराई से समझकर भारतीय समाज को पाखण्ड से मुक्ति दिलाकर एकसूत्र में बाँधने हेतु ''सत्य ही सच्चा धर्म है'' का सन्देश दिया।

18-19वीं सदी में ब्राह्मण स्त्री के हाथ का छुआ पानी तक नहीं पीते थे। अल्पायु बालिकाओं की बेमेल शादियाँ वृद्ध पुरुषों से होती थी और पति की मृत्यु होने पर उन्हें सती होने के लिये विवश किया जाता था। ज्योतिराव फुले ने दलित शोषित वर्ग तथा निरीह बेसहारा नारियों के हृदय में चेतना जाग्रत करने का प्रयास किया।

निम्न वर्गों की शिक्षा के लिये प्रयास -

सन् 1848 में पूना में अछूत बच्चों के लिये प्रथम पाठशाला खोली। ब्राह्मणों ने इसका विरोध किया। ब्राह्मणों ने ज्योतिराव के पिता पर दबाव डाला कि या तो 'ज्योतिराव स्कूल बन्द कर दें या उसे घर से निकाल दिया जाये।' ज्योतिराव ने घर से निकलना उचित समझा पर स्कूल बन्द नहीं किया। बाद में धनाभाव के कारण स्कूल बन्द कर देना पड़ा।

स्त्री-शिक्षा -

ज्योति वसु फुले ने 3 जुलाई, 1851 को पहली बालिका पाठशाला पूना में बुधवारा पेठ में स्थापित कर आधुनिक नारी शिक्षा की नींव डाली। प्रारम्भ में इसमें 8 लड़कियाँ थीं, बाद में उनकी संख्या 48 हो गई। उनकी धर्मपत्नी सावित्रीबाई फुले इसमें प्रधान अध्यापिका के रूप में कार्यरत थीं। पाठशाला आते-जाते वक्त उन्हें ब्राह्मणों द्वारा अपमानित किया गया। उन पर कीचड़ पत्थर फेंके गये। कुछ समय पश्चात् ज्योतिराव ने बालिकाओं का तीसरा एवं चौथा विद्यालय भी खोला।

उपरोक्त से स्पष्ट है कि ज्योतिवसु फुले ने सामाजिक रूढ़ियों की परवाह न करते हुए, समाज में फैले अन्ध-विश्वास और कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया। उनकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं था, उन्होंने क्रान्ति का शुभारम्भ अपने घर से, अपनी पत्नी सावित्रीबाई फुले को देश की पहली शिक्षिका बनाकर किया था और सावित्री फुले मृत्यु पर्यन्त ज्ञान की मशाल न केवल थामे रहीं, वरन् उससे आत्मरक्षा और आक्रमण भी किया।

विधवा पुनर्विवाह का प्रचार -

विधवा पुनर्विवाह को मान्यता प्राप्त हो जाने के बावजूद हजारों सालों से चली आ रही व्यवस्था को चुनौती देने का साहस किसी में नहीं था। वे विधवा विवाह का प्रचार कर जन आन्दोलन बनाने में सफल हुए।

सन् 1863 में फुले ने एक अनाथालय और विधवा प्रसूति गृह की स्थापना की । उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सावित्री देवी, जो महाराष्ट्र में प्रथम महिला अध्यापिका थीं, ने अपने अदम्य साहस का परिचय देते हुए नि:सन्तान होने

* 163/1, सांईधाम कॉलोनी, उज्जैन (म.प्र.)

के कारण काशीबाई नामक विधवा के पुत्र को सहर्ष गोद लेकर पालन-पोषण किया। उक्त विधवा किसी की वासना का शिकार हो, आत्महत्या के लिये अग्रसरित थी। महात्मा फुले से ढ़ाँढ़स व सहानुभूति पाकर वह उनके अनाथालय में शरणागत थी।

जनता को राष्ट्र की मूल धारा से जोड़ने और जाग्रत करने के उद्देश्य से उन्होंने अनेक लेख एवं दस पुस्तकें लिखीं, जिनमें ब्राह्मणाचेकसब (1869), गुलाम गिरी (1873), शेत-कर्त्याचा-आसुड (1883), सत्यधर्म (1890) ये चार पुस्तक प्रमुख हैं।

उपरोक्त से स्पष्ट है कि फुले ने समाज की कुरीतियों के विरूद्ध व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हुए शोषितों की चेतना जाग्रत करके, उन्हें रचनात्मक कार्यों की ओर प्रेरित किया। अपने छोटे से घर में ही अनाथ बच्चों व सताई हुई नारियों को आश्रय देकर, अनाथालय की स्थापना करके उन्होंने अपनी क्रियान्वयन शक्ति का परिचय दिया। वे जातिवाद के कारण अन्याय का शिकार बने लोगों के अधिकारों के लिये जीवन पर्यन्त संघर्ष करते रहे।

सत्य-शोधक समाज की स्थापना -

महात्मा फुले राजनीतिक गुलामी से सामाजिक गुलामी को अधिक भयावह मानते थे। उन्होंने सामाजिक गुलामी से मुक्ति हेतु समानता पर आधारित नई समाज व्यवस्था, जिसमें सत्य की उपासना ही प्रधान थी - ऐसे विचारों को मानने वाले समुदाय को संगठित करने हेतु 24 सितम्बर, 1873 को ''सत्य शोधक'' समाज की स्थापना की।

कृषक और मजूदरों के समर्थक -

कृषकों के सम्बन्ध में उनके विचार थे कि जमीन जोतने वाला ही उस जमीन का स्वामी होना चाहिये। कारखानों के लाभ में से एक हिस्सा मजदूरों को दिये जाने के समर्थक थे। बम्बई के मिल मजदूरों को संगठित करके उनकी समस्याओं के समाधान ढूँढ़ निकालने में उनकी भूमिका सराहनीय रही।

1888 में आप महात्माजी के सम्पर्क में आये। महात्माजी ने उन्हें 2 मार्च, 1888 में बम्बई में समारोहपूर्वक ''महात्मा'' की पदवी से विभूशित किया। डॉ. अम्बेडकर ने उन्हें अपना गुरु माना।

जिस जमाने में महात्मा फुले ने स्त्रियों एवं शूद्रों में शिक्षा के प्रसार तथा अस्पृश्यता निवारण के लिये तीव्र संघर्ष किया, वह जमाना बहुत कठिन था। ऐसे कार्यों के लिये उस समय कहीं भी सहायता मिलना असम्भव थी। आज भारतीय लोकतंत्र में स्त्री, किसान, शोषित, दलित एवं मजदूर का जैसे-जैसे उत्थान होगा, वैसे-वैसे इतिहास में महात्मा फुले का व्यक्तित्व अधिकाधिक उभरकर सामने आयेगा।

उपरोक्त से स्पष्ट होता है कि महात्मा ज्योति बा फुले सच्चे अर्थों में समाज सुधारक थे। समाज में आपने नव जागरण की नींव रखी। स्त्री मुक्ति के लिये संघर्ष प्रारम्भ करने का श्रेय आपको है। हिन्दू धर्म ग्रन्थों में स्त्री जाति को नीच, अबला, दासी माने जाने की बात का उन्होंने प्रबल विरोध किया। पुराण हो या मनुस्मृति जहाँ भी नारी की स्वतन्त्रता और मानवीय अधिकारों की भावनाओं पर अंकुश की बात आई। उन्होंने उसकी उपेक्षा करते हुए धर्म ग्रन्थों को पुरुषों द्वारा रचित उनकी स्वार्थ-लिप्सा का प्रतीक बताया।

उनके विचार में स्त्री का स्वावलम्बी न होना ही शोषित होने का मुख्य कारण था और इसका कारण अशिक्षा है। इसलिये उन्होंने स्त्री शिक्षा प्रचार के लिये जीवन पर्यन्त कार्य किया। उस समय का समाज इन सुधारों को सहन करने के लिये तैयार नहीं था और इसी कारण उनको कदम-कदम पर कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उनको अपमानित भी किया गया, क्योंकि धर्म को हाथ में लेकर, अपने स्वार्थों के लिये न तो धर्माचार्य और न ही शोषक वर्ग नारी शिक्षा को स्वीकार करने हेतु तैयार था। उसने अपने तरकस के सारे तीर और प्रताड़ित करने के सारे हथकण्डे अपनाये, परन्तु वे विचलित नहीं हुए, यहाँ तक कि उन पर प्राणघातक हमले भी किये गये।

उनकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं था। उन्होंने क्रान्ति का प्रारम्भ अपने घर से अपनी पत्नी सावित्रीबाई फुले को देश की प्रथम शिक्षिका बनाकर किया। वे विधवा विवाह के लिये नवयुवकों को प्रोत्साहित करते थे। सती जैसी क्रूर-प्रथा की उन्होंने भर्त्सना की। नारी सम्मान के लिये लोगों को प्रेरित किया। उनके अथक् प्रयासों ने सोई हुई आत्मा को जगाया। शिक्षा से अन्धकार और अज्ञानता के बीच प्रकाश की किरणें फैली।

सन्दर्भ -

- दैनिक अवन्तिका, दिनांक 21 फरवरी, 1993
- प्रतियोगिता दर्पण, हिन्दी मासिक पत्रिका, नवम्बर, 1993, पृ. 510
- दैनिक अवन्तिका, दिनांक 21 फरवरी, 1993
- प्रतियोगिता दर्पण, पृ. 510
- दैनिक अवन्तिका, दिनांक 21 फरवरी, 1993
- प्रतियोगिता दर्पण, पृ. 510
- जवाहरलाल नेहरू का बम्बई के फुले तांत्रिक माध्यमिक विद्यालय के उद्घाटन पर फुले की पुण्यतिथि के उपलक्ष्य में भाषण का अंश।

****

''आदिवासी ग्रामीण परिवारों की महिलाओं की व्यवसायिक सहभागिता का पारिवारिक सम्बन्धों पर प्रभाव का अध्ययन''

डॉ. मंजु शर्मा * ममता खपेड़िया **

प्रस्तावना

आदिवासी ग्रामीण महिला की सामाजिक एवं पारिवारिक स्थिति का प्रभाव पारिवारिक सम्बन्धों पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। जैसे–परिवार में पति के शराबी होने के कारण उसका अभद्र व्यवहार, प्रतिदिन पति द्वारा मारपीट करना, पत्नी द्वारा अर्जित आय का प्रयोग शराब में करना इस कारण है जो पारिवारिक स्थिति को असामान्य कर देते है। ऐसी स्थिति में तनावग्रस्त महिला अपने बच्चों के साथ सौहाद्रपूर्ण व्यवहार नहीं रख पाती है तथा उनके सर्वांगीण विकास पर भी ध्यान नहीं दे पाती है ।

ऐसा पारिवारिक वातावरण बच्चों के बौद्धिक, शैक्षणिक, शारीरिक, सामाजिक विकास में बाधक होता है। जिसके कारण बच्चों में मन्दबुद्धि, अशिक्षित, शारीरिक रूप से कमजोर व अपराधि प्रवृत्ति के होने की सम्भावना बढ़ जाती है। यह स्थिति पारिवारिक सम्बन्धों को सुदृढ़ बनाने में बाधक होती है। और परिवार में पारिवारिक सम्बन्ध असामान्य हो जाते हैं। इन परिवारों में महिला उपेक्षित अनुभव करती है। उपरोक्त कारण आदिवासी ग्रामीण महिला के विकास की गति को धीमी करते है। यह स्थिति समाज उत्थान एवं राष्ट्रीय निर्माण में बाधा उत्पन्न करती है।

साहित्य का पुनरावलोकन

01 वर्मा रेखा 2008 इन्दौर महलिाओं के आर्थिक सशक्तिकरण राष्ट्रीयकृत बैंको की भूमिका का अध्ययन (इन्दौर जिले के महू तहसील के रू) प्रस्तुत अध्ययन में पाया की व्यवसाय के आधार पर देखे तो हम इस निष्कर्ष पर आते है कि 58% महिलाओं के मिनी व्यवसाय के रूप में आप का साधन चुना गया है। जबकि इन योजनाओं का लाभ उठाने वाली महिलाओं का शासकीय नौकरी द्वारा 0 रहा है चूकि शासकीय सेवा में नियुक्त महिलाएँ इस योजना का लाभ नही उठा सकती है। इस तरह मिनी व्यवसाय अपनाने वालो का प्रतिशत सबसे अधिक है।

डॉ. शर्मा ललिता 2006 ने पारिवारिक संबंधो पर गृहिणी के रोजगार का प्रभाव पर अध्ययन किया गया। इसके अन्तर्गत यह पाया गया कि महिलाओं के रोजगार पर जाने से परिवार पर लाभदायक एवं हानिकारक दोनो प्रभाव उत्पन्न होते है।

बुंदेला नीना 2000 ''ग्रामीण महिलाओं की कृषि एवं पशुपालन के कार्य एवं आप मे भागीदारी'' अध्ययन में पाया की कृषि एवं पशुपालन से प्राप्त आय जिसके पास रखी जाती है जिससे महिला का 24% व पुरूष 38.5% व संयुक्त रूप से दोनों के पास उनका 36.3% है।

उद्देश्य

आदिवासी ग्रामीण महिलाओं की व्यवसायिक सहभागिता का परिवार में पति, बच्चों, बुर्जुगों एवं परिवार के अन्य सदस्यों से पारिवारिक संबंधों का अध्ययन करना।

उपकल्पना

आदिवासी ग्रामीण महिलाओं का व्यवसायिक सहभागिता के कारण परिवार में पति, बच्चों एवं परिवार के अन्य सदस्यों के साथ पारिवारिक संबंधों मं सार्थक अन्तर नहीं है।

अध्ययन क्षेत्र का समग्र– अध्ययन समग्र के रूप में मध्य प्रदेश के अलीराजपुर जिले की आदिवासी ग्रामीण महिलायें।

अध्ययन के चर– प्रस्तुत शोध अध्ययन में स्वतंत्र चर । व्यवसायिक, सहभागिता । पारिवार का प्रकार व आकार,एवं आय वर्ग एवं आश्रित चर पारिवारिक सम्बन्ध है।

निदर्शन पद्धति उपरोक्त विधि अनुसार– मध्यप्रदेश के अलीराजपुर जिले की तीन तहसील से 6 विकासखण्ड व प्रत्येक विकासखण्ड से 5–5 गाँवों का देव निदर्शन पद्धति द्वारा सूची के आधार पर किया जावेगा। इस प्रकार 5×6 = 30 गाँवों का चयन किया जावेगा । प्रत्येक गाँव से परिवार की आय वर्ग के अनुसार 15–15 महिलाएँ चयनित की जावेगी । इस पद्धति अनुसार 30×15 = 450 महिलाओं का शोध अध्ययन की इकाई के मूल रूप में चचन किया गया ।

समंक संकलन के स्त्रोत – प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राथमिक स्त्रोत के लिए स्व निर्मित मापनी ,साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग किया गया। द्वितीयक स्त्रोत के लिए शोध अध्ययन से संबंधित शोध ग्रन्थों, पत्र–पत्रिकाओं तथा अन्य सूचना माध्यमों से जानकारी एकत्रित की जावेगी।

प्रयुक्त सांख्यिकी विधि प्रस्तुत अध्ययन में हमनें प्रतिशत, कई वर्ग विधि का प्रयोग किया गया है ।

अध्ययन की सीमाएँ– शोध अध्ययन में अलीराजपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाली निम्न, मध्यम एवं उच्च आय वर्गीय परिवारों की आदिवासी महिलाओं जो व्यावसायिक सहभागिता में संलग्न हो का चयन शोध अध्ययन में किया गया है।

तथ्यों का सारणीयन एवं प्रस्तुतीकरण

तालिका–1

1	आदिवासी ग्रामीण (उच्च मध्यम निम्न आय वर्गीय परिवारों में) महिलाओं का व्यवसायिक सहभागिता के कारण परिवार में पति, बच्चों एवं परिवार के अन्य सदस्यों के साथ पारिवारिक संबंधों में सार्थक अन्तर नहीं है।	$\chi^2 cal$ =206.1 $\chi^2 tab$ =41.33 d.f = 28	0.05 स्तर पर परिकल्पना अस्वीकार हुई है।

* प्राध्यापक (गृह विज्ञान) ** शोधार्थी, माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

तालिका –2

व्यवसायिक सहभागिता के कारण परिवार में पति, बच्चों एवं परिवार के अन्य सदस्यों के साथ पारिवारिक सम्बन्ध से संबंधित विवरण

कमांक	विकल्प	पति, प्रतिशत	बच्चों प्रतिशत	परिवार के अन्य सदस्य प्रतिशत	कुल योग प्रतिशत
1	बहुत अधिक	20	11	12	16
2	अधिक	28	25	13	24
3	सामान्य	26	28	27	27
4	कम	16	28	34	24
5	बहुत कम	5	8	13	9
कुल योग		100	100	100	100

निष्कर्ष

1. $X^2cal = 20 X^2cal = 6.1$ का मान $X^2tab = 41.33$ से अधिक आया है अत: हम 28 स्वतंत्र कोटी पर हमारी परिकल्पना को अस्वीकार करते हैं। अर्थात आदिवासी ग्रामीण (उच्च मध्यम निम्न आय वर्गीय परिवारों में) महिलाओं का व्यवसायिक सहभागिता के कारण परिवार में पति, बच्चों एवं परिवार के अन्य सदस्यों के साथ पारिवारिक संबंधों मं सार्थक अन्तर पाया गया है।
2. शोध अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि आदिवासी ग्रामीण महिलाओं का पति के साथ पारिवारिक संबंध 20% बहुत अधिक, 28% अधिक, 26% सामान्य, 16% कम और 5% बहुत कम है। इस प्रकार इनका बच्चों के साथ 11% बहुत अधिक, 25% अधिक, 28% सामान्य, 28% कम और 8% बहुत कम है। इसी तरह परिवार के अन्य सदस्यों के साथ 12% बहुत अधिक, 13% अधिक, 27% सामान्य, 34% कम और 13% बहुत कम रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ.रेखा अरोडा कामकाजी महिलाऐं डायनेमिक पब्लिकेशंस (इंडिया) लि.मेरठ(उ.प्र) 2002
2. डॉ.सुभाषचन्द्र गुप्ता कार्यशील महिलाऐं एवं भारतीय समाज अर्जुन पब्लिसिंग हाउस नई दिल्ली 2008
3. पूरणमल यादव एवं नटवरलाल बुनकर आदिवासी और आधुनिकता आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स जयपुर (राजस्थान)
4. डॉ. शुक्ल एवं सहाय सांख्यिकी सिद्धांत साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा
5. पाटनी एवं शर्मा डॉ मन्जु एवं ललिता गृह प्रबन्ध स्टार पब्लिकेशन,आगरा पृस्ट संख्या 317–333

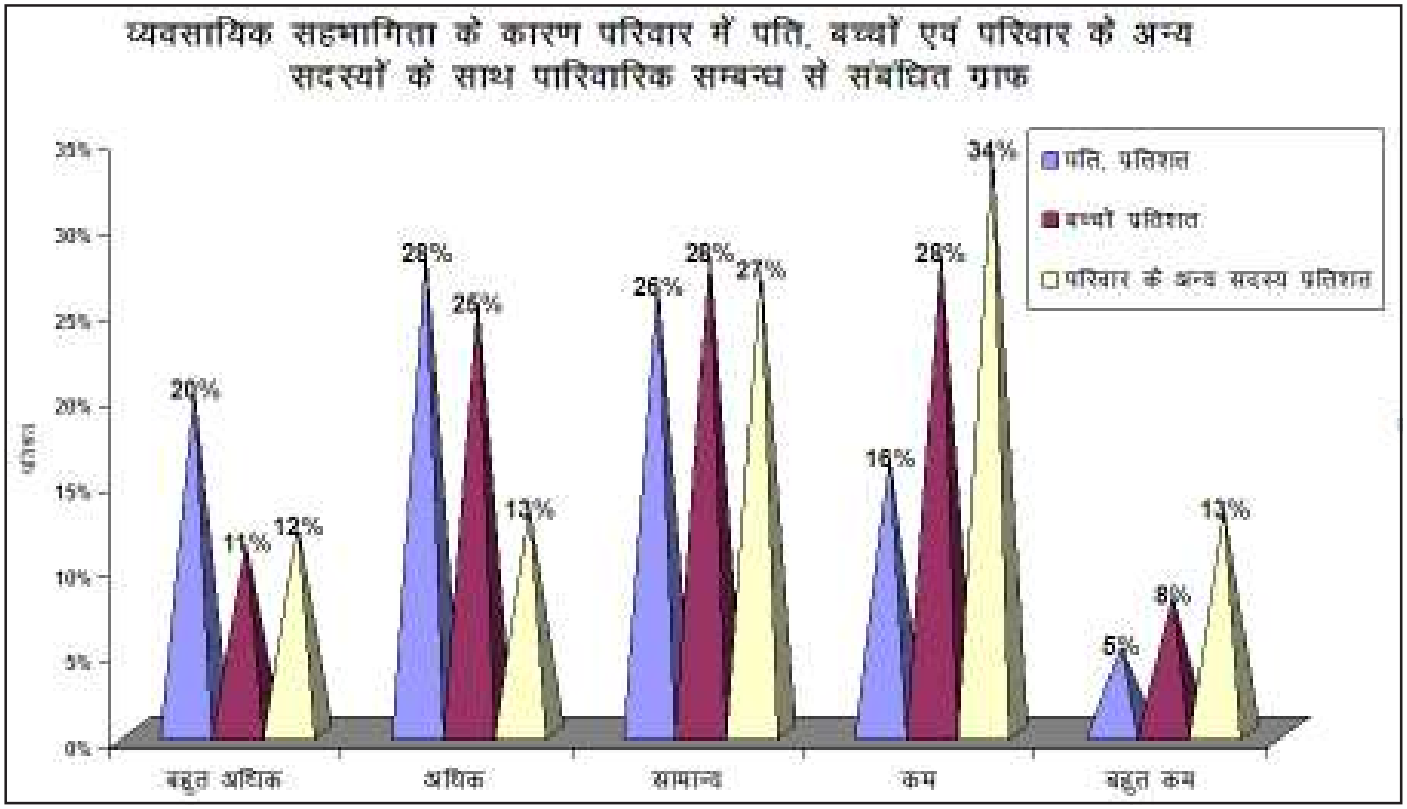

मध्यप्रदेश सरकार की औद्योगिक नीति का आकलन

डॉ. मनोहरलाल गुप्ता*

राज्य में औद्योगिक विकास के लिए बनाई गई नवीन औद्योगिक नीति को मध्यप्रदेश सरकार ने उद्योग संवर्धन नीति 2010 नामकरण किया है। प्रदेश में औद्योगिकरण के लिये किये जा रहें प्रयासों एवं नीतियों के फलस्वरूप देश के प्रतिष्ठित औद्योगिक घरानों एवं उभरते हुए निवेशकों द्वारा प्रदेश में निवेश की रुचि प्रदर्शित की गई है। निवेश के वातावरण को निरंतर बनाये रखने की दृष्टि से पुनरीक्षित औद्योगिक नीति जारी करने का निर्णय लिया गया है। यह नीति दिनांक 1 नवंबर, 2010 से 5वर्ष के लिए लागू की गई हैं।

सरकार की इस नीति का लक्ष्य प्रदेश के संसाधानों के युक्तियुक्त उपयोग से आर्थिक विकास एवं रोजगार के अवसर सृजित करना है। विश्व में आर्थिक मंदी के फलस्वरूप उत्पन्न परिस्थितियों से प्रदेश को औद्योगीकरण पर प्रतिकूल प्रभाव से दूर रखने के लिए लघु एवं मध्यम उद्योगों पर विशेष ध्यान रखा गया है। मध्यप्रदेश इन्वेस्टमेंट फेसिलिटेशन एक्ट, 2008 के अन्तर्गत निवेश प्रस्तावों को त्वरित गति से क्रियान्वित करने के लिए नियमों एवं प्रक्रियाओं में सुधार कर समयबद्ध अनुमोदन प्रदान करने की दृष्टि से त्रिस्तरीय साधिकार समितियों को प्रभावी एवं सक्रिय कर निवेश प्रस्तावों को फेसीलिटेट किया जाएगा। राज्य में औद्योगिक अधोसंरचना को उत्कृष्ट बनाने एवं लैण्ड बैंक सृजित कर निवेश परियोजनाओं हेतु सरलतापूर्वक भूमि उपलब्ध कराने का प्रयास किया जाएगा।

उद्योग संवर्धन नीति का उद्देश्य:-

प्रदेश को औद्योगिक दृष्टि से अग्रणी बनना तथा साथ ही रोजगार के अवसर बढ़ाने के साथ ही नियमों एवं प्रक्रियाओं का ओर अधिक सरलीकरण कर प्रदेश प्रशासन को मित्र बनायें रखना ही इस नीति का उद्देश्य है। औद्योगीकरण को गति प्रदान कर स्वरोजगारमूलक योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन एवं प्रदेश में स्थापित होने वाले उद्योगों में स्थानीय निवासियों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना है।

उत्कृष्ट स्तर की अधोसरंचना विकसित कर, उद्योग एवं सर्विस सेक्टर में पूंजी निवेश को आकर्षित करना प्रदेश की औद्योगिक अधोसंरचना का समग्र विकास करना। जिन क्षेत्रों में वृहद परियोंजनाएँ स्थापित होने की संभावना है, अथवा क्लस्टर का विकास होना है, वहां की अधोसंरचना का ओर अधिक उन्नायन किया जाना। सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों और वृहद उद्योगों के विकास के लिए अनुकूल वातावरण निर्मित करना। उद्योगों में रूग्णता दूर करने के लिए विशेष योजना लागू करना। उद्योगों में निरीक्षणों की संख्या को कम करना। प्रदेश में कर की दरों का युक्तियुक्तकरण करके उद्योगों को प्रतिस्पर्धी बनाना।

स्थानीय वर्तमान औद्योगिक आधार को दृष्टिगत रखते हुए औद्योगीकरण को दिशा प्रदान करना। औद्योगिकरण के प्रयासों में निजी क्षेत्र की भागीदारी सुनिश्चित करना। प्रदेश में कृषि को लाभकारी बनाने हेतु उपज आधारित एवं खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहित करना। प्रदेश में प्रवासी भारतीय/प्रत्यक्ष विदेशी पूंजी निवेश को प्रोत्साहित करना।

उद्योग संवर्धन हेतु कार्य योजना:-

प्रदेश में औद्योगिक विकास हेतु ऐसे प्रोत्सहित और सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएंगी, जिससे उद्योग संवर्धन नीति के उद्देश्यों की पूर्ति हो सकें तथा तय रणनीति का सही मायनों में क्रियान्वन हो सके। औद्योगिक अधोसरंचना विकास में निजी क्षेत्र की भागीदारी को प्रोत्साहित किया जायेगा। निवेश प्रोत्साहन हेतु 'मध्यप्रदेश इन्वेस्टमेंट फेसिलिटेशन एक्ट, 2008' के माध्यम से 'सिंगल विण्डो प्रणाली' को प्रभावी सक्षम एवं सुदृढ़ किया जायेगा। विद्यमान उद्योगों में भी नये पूंजी निवेश को प्रोत्साहित किया जायेगा।

इण्डस्ट्रियल क्लस्टर्स चिन्हित कर उनके विकास हेतु केन्द्र एवं राज्य शासन की योजनाओं का लाभ दिलाया जाएगा। कृषि एवं अन्य स्थानीय प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहित किया जायेगा। बीमार/बंद हो चुकी इकाईयों के पुनर्वास हेतु नियमों को सरल बनाया जाएगा तथा उनके संवर्धन हेतु विशेष पैकेज दिया जाएगा। उद्योगों के लिए भूमि की आगामी आवश्यकताओं में 'लेण्ड बैंक' बनाया जायेगा, विद्यमान औद्योगक क्षेत्रों का यथा आवश्यक विस्तार किया जाएगा तथा नवीन औद्योगिक क्षेत्रों का विकास किया जाएगा। इन सभी में बुनियादी सुविधा युक्त औद्योगिक अधोसरंचना निर्मित की जाएगी। स्वरोजगार योजनाओं की समीक्षा कर व्यावहारिक कठिनाईयों को दूर किया जायेगा। वृहद् रोजगार सृजन करने वाली परियोजनओं को विशेष महत्व देकर सुविधाओं का पैकेज प्रदान किया जावेगा।

पारदर्शिता हेतु उद्योग मित्र प्रशासन:-

मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में गठित उद्योग सलाहकार परिषद के सुझावों के क्रियान्वयन में और तेजी लाई जायेगी। उद्योग सलाहकार परिषद की वर्ष में दो बैठकें आयोजित की जायेंगी।

सिंगल विण्डो क्लियरेंस के लिए साधिकार समितियों का गठन:- मध्यप्रदेश इन्वेस्टमेंट एक्ट, 2008 के अन्तर्गत सिंगल विण्डो क्लियरेंस हेतु गठित त्रिस्तरीय साधिकार समितियों के माध्यम से निवेश प्रकरणों में समयबद्ध आवेदन निराकरण एवं अनुमतियां/क्लियरेंस प्रदाय करने की प्रभावी व्यवस्था संचालित की जाएगी।

एकल आवेदन (कम्बाइन्ड एप्लीकेशन फार्म) एवं स्वप्रमाणीकरण प्रणाली लागू की जाएगी। परिक्षेत्रीय उद्योग कार्यालय को समुचित अधिकार प्रदत्ता करते हुये, उन्हें उद्योग, सेवा एवं व्यवसाय के क्षेत्र में आने वाले निवेश प्रस्तावों के क्रियान्वयन एवं परियोजनाओं की स्थापना का सतत् अनुसरण करने का दायित्व सौंपा जाएगा, जिससे निवेश प्रस्ताव मूर्त रुप ले सकें।

औद्योगिक विकास हेतु अधोसंरचना का विकास:-

औद्योगिक अधोसंरचना के विकास में आने वाली वित्तीय कठिनाईयों को दूर करने के लिए ''इण्डस्ट्रीयल इन्फ्रास्ट्रक्चर डेव्हलपमेंट फण्ड'' की स्थापना की जाएगी। इस कोष में प्रतिवर्ष आवश्यकतानुसार राशि आगामी पाँच वर्षों में उपलब्ध कराई जाएगी। उपलब्ध राशि का उपयोग उन अधोसंरचना परियोजनाओं के लिए किया जाएगा, जो अत्यधिक महत्व की होगी।

सूक्ष्म, लघु व मध्यम उद्यम और बड़े उद्योगों का समन्वयकारी विकास:-

उद्योग संचालनालय और विभिन्न विभागीय निगमों द्वारा राज्य में तथा राज्य के बाहर भी, समन्वित अभियान चलाकर उद्योगपतियों/उद्यमियों को प्रदेश में निवेश हेतु आकर्षित किया जायेगा। म. प्र. लघु उद्योग निगम द्वारा

* प्राध्यापक वाणिज्य शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ (म. प्र.)

सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों और प्रदेश में स्थापित बड़े उद्योगों के बीच वेण्डर डेव्हलपमेंट एवं लिंकेज हेतु सतत् प्रयास किये जाएंगे। सूक्ष्म और लघु उद्यमों के हित में विपणन गतिविधियों के विस्तार हेतु ''क्रेता.विक्रेता सम्मेलन'' व्यापार मेलों आदि को प्रोत्साहित किया जाएगा।

मध्यप्रदेश लघु उद्योग निगम लिमिटेड की कार्यप्रणाली में पारदर्शिता लाई जाएगी तथा भण्डार क्रय नियमों को संशोधित किया जाएगा। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मध्यप्रदेश ट्रेड फेयर अथॉरिटी के माध्यम से नियमित रुप से उद्योग और व्यापार मेलों के आयोजन तथा भागीदारी को प्रोत्साहित किया जायेगा। अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर के टेक्नोलॉजी, मार्केटिंग व मैनेजमेन्ट इंस्टीटयूट्स को प्रदेश में अपनी शाखायें खोलने हेतु प्रोत्साहित किया जायेगा।

जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रों की व्यवस्था का सुदृढ़ीकरण:-

भारत सरकार की योजना के अधीन जिला उद्योग केन्द्रों की स्थापना वर्ष 1978 में की गई थी। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, प्रदेश में कार्यरत् समस्त जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्रों की नवीन सूचना प्रौद्योगिकी पर आधारित अद्योसंरचना का सुदृढ़ीकरण व आधुनिकीकरण किया जायेगा, जिससे वे सूक्ष्म एवं लघु उद्यमों को बेहतर सेवा प्रदान कर सकें। साथ ही नवीन निवेश के प्रस्तावों पर तत्परता से गुणात्मक कार्यवाही कर सकें।

बीमार उद्योगों के पुनर्वास हेतु उठाए गए कदम:-

- बीमार उद्योगों को चिन्हित कर, जिला स्तर पर इनका डाटाबेस तैयार किया जाएगा।
- बीमार/बंद उद्योगों को अधिग्रहण/क्रय कर पुन: संचालित करने पर राज्य शासन द्वारा ''विशेष पैकेज, 2010'' के अनुसार सुविधाएं/रियायतें दी जाएंगी।
- राज्य में स्थित वृहद् एवं मध्यम श्रेणी की बीमार औद्योगिक इकाईयों के पुनर्वास हेतु ''पॉलिसी पैकेज-2010'' के अनुसार सुविधाएं/रियायतें दी जाएंगी।
- बीमार लघु श्रेणी के उद्योगों के लिए ''मध्यप्रदेश स्मॉल स्केल इण्डस्ट्रीज रिवाईल स्कीम-2010'' लागू रहेगी।

तालिका क्र. 1

विनिर्माण उद्यमों को सहायता एवं सुविधाएं

पात्र सूक्ष्म, लघु व मध्यम विनिर्माण उद्यमों (वृहद् श्रेणी के उद्योगों को छोड़कर) को निम्नानुसार ब्याज अनुदान सहायता दी जाएगी।

जिलें की श्रेणी	सम्पूर्ण पात्रता अवधि एवम् अधिकतम सहायता राशि (राशि रू. लाखों में)			रिमार्क
	अनुदान	अवधि	सहायता राशि की दर (%)	
पिछड़ा ''अ''	10.00	5 वर्ष	3	अजा/अजजा/महिला/नि:शक्तजन श्रेणी के लिए सहायता राशि की दर 6 प्रतिशत, अवधि 8 वर्ष एवं अधिकतम सहायता राशि रू. 25.00 लाख होगी।
पिछड़ा ''ब''	15.00	6 वर्ष	4	
पिछड़ा ''स''	20.00	7 वर्ष	5	
उद्योग शून्य विकासखण्ड	20.00	7 वर्ष	5	

स्त्रोत: मध्यप्रदेश शासन वाणिज्य, उद्योग और रोजगार विभाग, भोपाल

अग्रणी जिलों में भी अजा/अजजा/महिला/नि:शक्तजन द्वारा स्थापित पात्र सूक्ष्म, लघु व मध्यम विनिर्माण उद्यमों को 6प्रतिशत की दर से 8वर्ष की अवधि के लिये अधिकतम सहायता राशि रूपये 25 लाख की पात्रता रहेगी।

तालिका क्र. 2

पात्र सूक्ष्म एवं लघु श्रेणी के विनिमार्ण उद्यमों को निम्नानुसार स्थायी पूंजी निवेश पर अनुदान सहायता

जिलें की श्रेणी	अनुदान का प्रतिशत	अधिकतम राशि	रिमार्क
पिछड़ा ''अ''	15	5.00 लाख	अजा/अजजा/महिला/ नि:शक्तजन श्रेणी के लिए अनुदान 20 प्रतिशत की दर से अधिकतम राशि रू. 20.00 लाख होगी।
पिछड़ा ''ब''	15	10.00 लाख	
पिछड़ा ''स''	15	15.00 लाख	

स्त्रोत: मध्यप्रदेश शासन वाणिज्य, उद्योग और रोजगार विभाग, भोपाल

अग्रणी जिलों में भी अजा/अजजा/महिला/नि:शक्तजन द्वारा स्थापित पात्र सूक्ष्म एवं लघु श्रेणी के विनिर्माण उद्यमों को 20 प्रतिशत की दर से अधिकतम राशि रू. 20 लाख एक पूंजी निवेश अनुदान की पात्रता होगी।

तालिका क्र. 3

मेगा प्रोजेक्ट को रियासती दर पर भूमि आबंटन

क्र.	परियोजना लागत (रू. करोड़ों में)	रियासती दर की भूमि का क्षेत्रफल
1.	25 से 50 तक	आवश्यकतानुसार अधिकतम 5 एकड़ तक
2.	50 से अधिक 100 तक	आवश्यकतानुसार अधिकतम 10 एकड़ तक
3.	100 से अधिक 200 तक	आवश्यकतानुसार अधिकतम 15 एकड़ तक
4.	200 से अधिक 500 तक	आवश्यकतानुसार अधिकतम 20 एकड़ तक
5.	500 से अधिक	प्रकरणवार उच्च स्तरीय निवेश संवर्धन साधिकार समिति द्वारा निर्धारित क्षेत्रफल

स्त्रोत:- मध्यप्रदेश शासन वाणिज्य, उद्योग और रोजगार विभाग।

तलिका क्र. 4

केप्टिव पावर संयंत्र को विद्युत शुल्क में छूट

क्र.	परियोजना लागत (रू. करोड़ों में)	विद्युत शुल्क से छूट की अवधि (वर्ष में)
1	100 तक	5
2	100 से 500 तक	7
3	500 से अधिक	10

स्त्रोत: मध्यप्रदेश शासन वाणिज्य, उद्योग और रोजगार विभाग, भोपाल

यह छूट केवल स्वयं के उपयोग हेतु उत्पादित विद्युत पर प्राप्त होगी। इस प्रकार स्थापित होने वाले केप्टिव पावर संयंत्र उद्योग की आवश्यकता की सीमा तक परियोजना का हिस्सा होंगे एवं पर किया गया स्थाई पूंजी निवेश गणना हेतु परियोजना के पूंजी निवेश में सम्मिलित किया जायेगा।

इस प्रकार यह माना जा सकता है कि बीमार उद्योगों के पुर्नवास हेतु किए गए इन प्रयासों के समुचित क्रियान्वयन से प्रदेश के औद्योगिक वातावरण निर्मित होगा और यह प्रदेश आर्थिक उत्थान में सहायक बन सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ

1. जिला उद्योग केन्द्र, राजगढ़
2. मध्यप्रदेश शासन वाणिज्य, उद्योग ओर रोजगार विभाग, भोपाल
3. जनसम्पर्क विभाग, मध्यप्रदेश शासन, भोपाल
4. जिला सांख्यिकी कार्यालय, राजगढ़
5. मध्यप्रदेश संदेश, भोपाल

छत्तीसगढ़ की खैरवार जनजाति का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन

डॉ. अनूप परसाई *

देश के हृदय में स्थित मध्यप्रदेश का दक्षिण पूर्व क्षेत्र ''छत्तीसगढ़'' कहलाता है। प्राचीनकाल में दक्षिणकोसल, महाकोसल, दण्डकारण्य, महाकांतार, गोंडवाना आदि के कुछ भू-भाग इसमें सम्मिलित है। वर्तमान में बिलासपुर, सरगुजा, रायगढ़, रायपुर, बस्तर, दुर्ग, राजनांदगांव जिले के भू-भाग इस नाम की परिधि में आते हैं जबकि पूर्व में सम्मिलित सम्बलपुर का क्षेत्र अलग होकर उड़ीसा प्रांत में शामिल है। पं. लोचन प्रसाद पाण्डेय के अनुसार ''दक्षिणकोसल'' की सीमा उत्तर में गंगा दक्षिण में गोदावरी, पश्चिम में उज्जैन और पूर्व में पूर्वी समुद्र तटवर्ती पाली थी। वास्तव में मध्ययुग में इस क्षेत्र का गढ़ी के कारण छत्तीसगढ़ नाम पड़ा। प्राचीनकाल से ही इस क्षेत्र में अनेक वन्य जातियाँ, निवास करती थी। जिनमें गौड़, खैरवार, कंवर, उराव, हल्वा, कोरबा आदि मुख्य है। अतीत से ही यह क्षेत्र भारतीय संस्कृति का एक मुख्य केन्द्र रहा है।

छत्तीसगढ़ अंचल की खैरवार जनजाति खुरवार, खरिया, खैरवा आदि कई नामों से जानी जाती है। खैरवार शब्द की उत्पत्ति खैर से मानी जाती है । विन्ध्य के क्षेत्र से वृक्ष से कत्था के कारण इस जनजाति का नाम खैरवार पड़ा।[1] इनके मूलस्थान के संदर्भ में विद्धानों की यह धारणा है कैमूर की पहाड़ी या खैरागढ़ है। जहाँ से यह झारखण्ड, उत्तरप्रदेश, छोटानागपुर, छत्तीसगढ़ के क्षेत्रों में बस गये। उत्तरप्रदेश एवं झारखण्ड के क्षेत्रों में यह जनजाति स्वयं को अभिजात्य मानते हैं एवं ब्राह्मणों जैसा जीवन व्यतीत करते हैं।[2] खैर जनजाति की उत्पत्ति के संदर्भ में एक किवदन्ती भी है कि प्राचीनकाल से बिहार राज्य के पलामऊ जिले में जनसाय नाम एक पराक्रमी राजा था जिसके पास तीन बाण थे इन बाणों के माध्यम से उसकी यह इच्छा थी कि तीनों लोकों पर विजय प्राप्त करे। यह कहा जाता है कि एक दिन भगवान वेश बदलकर राजा के समक्ष अवतरित हुये एवं उनसे प्रश्न किये कि तीनों बाणों का किस कार्य के लिये उपयोग करोगे? प्रतिउत्तर में राजा ने कहा कि इन बाणों से त्रिलोक विजय करूंगा। यह कह कर उसने धनुष से एक-एक कर के बाणों को छोड़ा। बाण छोड़ने के पश्चात् दो बाण राजा के हाथ में वापिस आ गये, परंतु एक बाण भगवान के पैर के तलवे के नीचे चूभ गयी, जिसके कारण क्रोधित होकर भगवान ने राजा के सिर को काट कर पलामु जिले के बारेसांड नामक स्थान में एक खैर वृक्ष में लटका दिया। यही कारण है कि राजा के समस्त जाति वर्ग के जितने लोग थे, वे सभी खैरवार कहलाये।[3]

इस जाति में दो प्रमुख गोत्र पाये जाते हैं। प्रथम सूर्यवंशी और दूसरा दोलवंशी। इन दोनों गोत्रों में आपसी मेल-जोल, खान-पान तो विद्यमान है, परंतु परंपरानुसार शादी-विवाह वर्जित है। दोनों गोत्र अपने को क्षत्रिय मानते हैं यही कारण है कि नाम के साथ सिंह क्षत्रिय सूचक के रूप में रखते हैं। छत्तीसगढ़ क्षेत्र में यह रायगढ़, बिलासपुर, कोरबा, चांपा के क्षेत्र में निवास करते हैं। ग्रीष्मकाल में यह जंगलों में अस्थायी निवास बनाकर इस जनजाति के लोग वृक्षों से कत्था निकालते हैं एवं वापस अपने स्थायी निवास में चले आते हैं[4] इसके अतिरिक्त यह कृषि कार्य भी करते हैं। इस जनजाति की उत्पत्ति के संदर्भ में यह धारणा है कि राजा हरिशचंद्र के पुत्र रोहिताक्ष्य के पुत्रों से हुई है। रायबहादुर हीरालाल एवं रसेल खैरवारों की उत्पत्ति चैरो एवं सन्याल से हुई है। खैरवारों के सामाजिक जीवन सहज एवं सरल है। इस जनजाति का मुख्य भोजन चावल तथा कोदो का पेज हैं [5] ये विभिन्न प्रकार के वस्त्र एवं आभूषणों को धारण करते हैं जिस स्थान पर खैर के वृक्षों की बहुलता होती है उसी स्थल पर इस जाति के लोग रहना पसंद करते हैं। इनके घर ईट, मिट्टी, लकड़ी एवं बांस के बने रहते हैं। जिनकी छते घास, फूस, खपरैल की बनी रहती है। दीवालों में पीली मिट्टी की कलात्मक पुताई करते हैं घर में जीवनोपयोगी सभी वस्तुतयें रहती है। खैरवारों में घर के प्रति विशेष मोह पाया जाता है इस जनजाति का सामाजिक संगठन सुदृढ होता है। इनका मुखिया महतो-माझी कहा जाता है। जो वंशानुगत होता है जातिगत झगड़ों का फैसला पंचायत करती है। धार्मिक अनुष्ठान, त्यौहार एवं अन्य शुभ सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों की विधि महतो-माझी तय करते हैं। यह जनजाति सूरजवंशी, कवरवंशी, दौलववंशी, खैरचुरा, पटबधी उपजातिया वाली होती है। इस जाति में अनेक गोत्र पाये जाते हैं। इस जनजाति में जातकर्म संस्कार पाया जाता है। घर या गांव में बुजुर्ग महिलायें -दाइन प्रसव कार्य कराती है। इस जनजाति में समगौत्री विवाह मान्य नहीं है। लड़की का पिता वधु का मूल्य तय करता है। इन जनजाति में पुनर्विवाह का प्रचलन भी है। इस जनजाति में मृतक को दफनाया जाता है। असामयिक मृत्यु या बीमारी से मृत्यु होने पर शव को जलाया जाता है। मृत्यु भोज की प्रथा भी इस जनजाति में प्रचलित है। यह पुर्नजन्म पर विश्वास करते हैं। इस जनजाति की शिक्षा के प्रति विशेष रूचि है। इनकी मूल बोली मुण्डारी है।[6] गीत एवं नृत्य इस जनजाति के मनोरंजन के मुख्य साधन है।

खैरवार जनजाति संसार की सभी वस्तुओं में ईश्वर का वास मानते हुये आदिसत्त पर विश्वास करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति दैवी प्रकोप से डरता हैं यह तंत्र-मंत्र जादू टोने पर विश्वास करते हैं यह हिन्दु धर्म की मान्यताओं को मानते हैं। इस जाति के लोग करमा, जिवतिया, दशहरा, दीवाली, होली, वैशाखी आदि त्यौहार मनाते हैं। यह लोग आत्मा परमात्मा पर विश्वास करते हैं। इन्हें विश्वास है कि अपने कर्मो का फल व्यक्ति को इसी जन्म में भोगना पड़ता है। इस जनजाति में सगोत्री विवाह निषेध है। शवयात्रा में महिलाओं के लोग देवताओं में ठाकुरदेव, गृहमाता, दूल्हीमाता, मरहीमाता, सच्ची देवी को मानते हैं। सूर्य, चन्द्र, धरती, आकाश, नाग, वृक्ष, नन्दी आदि को भी देवी देवता मानकर उनकी पूजा करते हैं। इस जनजाति के लोग देवी, देवताओं को बकरे, मुर्गे, सूअर की बलि प्रसन्न करने के लिये देते हैं। जिससे उनके ग्राम में कोई अनिष्ट न हो एवं प्रसन्नता एवं खुशहाली का वातावरण स्थापित हो। इनकी यह धारणा है कि व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्यु तक घर में ही रहता है एवं देवी देवताओं की अप्रसन्नता से ग्राम में विभिन्न प्रकार की बीमारियों का प्रकोप होता है। बूढ़ीमाता की बीमारी से चेचक, सूर्यदेव की बीमारी से फसल को नुकसान एवं दूल्हादेव की नाराजगी से विवाह में अवरोध उत्पन्न होता है।

छत्तीसगढ़ की विभिन्न जनजातियों के अध्ययन से उनकी अर्थव्यवस्था का पता चलता है। छत्तीसगढ़ की अधिकांश जनजातियों के अर्थव्यवस्था संबंधी कार्यों में कृषि, शिकार, वनोपज संग्रह, मजदूरी, पशुपालन मुख्य है।[7] खैर जनजाति के लोगों के पास कृषि योग्य भूमि कम होने से परिवार के भरण पोषण में कठिनाई होती है। इनके पास सिंचाई की सुविधाओं का अभाव है। ये कृषि को परम्परागत तरीके से करते है। यह अपने खेतों में धान, कोदो, मक्का, अरहर, मूंग, उड़द आदि की खेती करते हैं [8] एवं मौसमी सब्जियों को अपनी बाड़ी में उगाते हैं। इस जनजाति के लोग शिकार में जाने के पूर्व गुनिया या बैगा से षगुन निकलवाते हैं। शिकार करने के लिये ये तीन प्रकार के शस्त्र उपयोग में लाते हैं। जिसमें तीर, कुठार आदि प्रमुख है। वनोपज संग्रहण इनकी जीविका का प्रमुख आधार है। जंगलों में अस्थायी निवास बनाकर कत्था तैयार करते है। कत्था विक्रय करना इनके अर्थोपार्जन का मुख्य आधार है। यह जंगलों से शहद, जड़ीबूटियाँ, हर्रा, आंवला, गोंद, तेन्दुपत्त आदि का संग्रह करते हैं। इनकी पशुपालन में विशेष रूचि है। यह गाय, बैल, भैंस, बकरी आदि पालते हैं। इस जनजाति के लोग कृषि मजदूरी का कार्य भी करते हैं । इसके अतिरिक्त बांस की चटाई, टोकनी, वनोपजों को बाजार में विक्रय कर अपना जीवोपार्जन करते हैं।

छत्तीसगढ़ क्षेत्र प्रमुख जनजातियों की सांस्कृतिक स्वरूप उनके कलात्मक वैशिष्टय से ओत-प्रोत है। उनकी कला परंपरा उनके सामाजिक क्रियाकलापों

* विभागाध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास, शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

में स्पष्ट परिलक्षित होती है। इस जनजाति में कलात्मक वैशिष्ट्य लोक संगीत, लोकनृत्य, लोकवाद्य आदि के दर्शन होते हैं। छत्तीसगढ़ की जनजातियों में लोकनृत्य प्रचलित है। यह उल्लास का प्रतीक है प्रथमत: करमा नृत्य, डण्डा नृत्य, जदुरा नृत्य, होली नृत्य आदि मुख्य है। खैरवार जनजाति के लोक नृत्य प्राय: पर्व त्यौहारों तथा विवाह से संबंधित होते हैं।

करमा नृत्य, दशहरा से लेकर वर्षा ऋतु के पूर्व तक किया जाता है, वर्षाऋतु में नहीं किया जाता है। इसमें खैरवार महिला - पुरुष समान रूप से भाग लेते हैं। इसका आयोजन करमा देवता को प्रसन्न करने हेतु किया जाता है। इस अवसर पर, युवकों के हाथों में मयूर पंख, झाल, चंवर अथवा वृक्ष की पत्तीदार शाखा होती है। दोनों दल दो-दो की कतारबद्ध होकर नृत्य करते हैं। नर्तक, गोलाकार में घूमते हुये नृत्य करते हैं। यह नृत्य रातभर चलता है।[10] डण्डा नृत्य को सैला नृत्य भी कहा जाता है। खैरवार जनजाति के लोग, दशहरा पर्व आयोजित होने एवं धान की कटाई करने के पश्चात् अर्थात् ठंड के मौसम में कार्तिक से फाल्गुन मास तक, डण्डा नृत्य का आयोजन करते हैं। इस नृत्य में पुरुष वर्ग ही भाग लेता है। पुरुष नर्तक डण्डा लेकर, समूह में नृत्य करते हैं। नर्तक, अपने बगल के नर्तक के डण्डे पर, डण्डा मारता है सभी डण्डे एक साथ टकराते हैं। [11] यह नृत्य खैर जनजाति के लोग जदुरा (सरहुल) नृत्य करते हैं। बसंत ऋतु में होता है, महिलायें एक दूसरे के हाथ में हाथ डालकर, एक कतार में खड़ी होकर नृत्य करती है। पुरुष ढोल बजाकर ताल देते हुये, महिलाओं की ओर कूद-कूद कर बढ़ते हैं। महिलायें नृत्य करते हुये गोल घेरा बनाती हैं, जिसे गोल घुमरी कहते हैं।[12]

होली नृत्य फागुन महीने में, होली के शुभ अवसर पर होली नृत्य किया जाता है यह पुरुषों का नृत्य है। मंडलियाँ किसी निश्चित स्थान पर एकत्र होती है, एक दूसरे के ऊपर रंग गुलाल डालते हुये नृत्य करते हैं।[13] खैरवार जनजाति के लोक गीत, प्राय: पर्व-त्यौहारों एवं विवाह से संबंधित होते हैं। इस जनजाति के प्रमुख लोकगीत में करमा गीत, डंडा गीत, दीपावली पर्व गीत, होली पर्व गीत इत्यादि मुख्य है। [14]

करमा गीत, मूलत: नृत्यगीत है। यह गीतों का राजा कहलाता है। श्रृंगार प्रधान इस गीत में, संयोग, वियोग, हर्ष-विर्शाद एवं उल्लास की अधिकता रहती है। इन गीतों में लोक जीवन की झांकी साकार होती है खेत-खलिहान, जंगल इत्यादि कार्यस्थलों पर सहज रूप से गाया जाता है। [15]

डण्डा गीत, डण्डा नृत्य के साथ गाया जाता है। इसे खैरवार जनजाति के लोग, वर्षाकाल की फसल कट जाने के पश्चात् डण्डा नृत्य के साथ गाते हैं। लगभग 25 युवकों की टोली रंग-बिरंगे वस्त्र धारण कर, हाथ में लगभग आधा मीटर लंबाई के दो डण्डे लेकर, वृत्तकार में खड़े होकर डण्डा नृत्य करते हैं, एक दूसरे के डंडों पर प्रहार करते हैं। [16]

फाग गीत होली पर्व पर गाया जाने वाला गीत है किन्तु इस प्रमुख आयोजन, (होली) को किया जाता है। खैरवार जनजाति के लोग नृत्य करते हुये एक दूसरे पर गुलाल रंग डालते हैं। खैरवार जनजाति के लोक वाद्यों मांदर, टिमकी, बांसूरी, ठिसकी, चटकोला, गुदुम, मंजीरा, मोहरी, ढोल, नगाड़ा आदि मुख्य है।

खैरवार जनजाति के लोगों के पास कत्था बनाने की कला पारंपरिक रूप से प्राप्त है। विश्व में कत्था बनाने का श्रेय, खैरवार जनजाति को है [17] ये लोग जंगल जाकर, खैर वृक्ष को कुल्हाड़ी से काट लेते हैं और उसकी छाल निकाल लेते हैं। लकड़ी एवं छाल की छोटी-छोटी कत्तले (टुकड़े) बना ली जाती है और उन्हें मिट्टी के हंडिया में बराबर मात्रा में पानी डालकर पकाते हैं। इन्हें 2-3 दिन तक पकाया जाता है तथा घोल को गाढ़ा बनाते हुये कत्तलें एवं उतना ही पानी भरा जाता है, घोल के गाढ़ा होने पर उसे दूसरी हंडिया में रख दिया जाता है, उस घोल को रेत की तह पर डालकर धूप में सुखाया जाता है, इसके बाद उसकी टिकिया बना ली जाती है, यह कार्य ग्रीष्मकाल में किया जाता है। ये लोग बांस शिल्प कला में दक्ष होते हैं। इनके द्वारा तैयार की गयी बांस की कंघी, बांस की चटाई एवं टोकनी, बाजारों में विक्रय कर अपना जीवकोपार्जन करते हैं।[18] खैरवार के पास, जंगल से शहद एकत्रित करने की कला होती है। इस जनजाति के मकान, साफसुथरे और आकर्षक होते हैं। ये अपना मकान स्वयं बनाते हैं। यह अपने घरों की पीली मिट्टी अथवा सफेद छुई से कलात्मक पुताई करती है। खैरवार जनजाति के लोग, मछली मारने के लिये बांस का शक्काकार अस्त्र बनाते हैं, ये लोग विवाह के समय जंगल से लकड़ी काटकर लाते हैं और वैवाहिक मण्डप तैयार करते हैं, इनमें बांस का भी उपयोग किया जाता है। खैरवार महिलाओं को गोदना कला अति प्रिय है। वे शरीर के विभिन्न अंगों पर पशु, पक्षियों, पेड़-पौधों इत्यादि की आकृतियों का गुदने गुदवाती है।

डण्डा नृत्य के समय खैरवार युवक, चंदन तिलक, फूलमाला और वस्त्राभूषणों से सज-धज कर निकलते हैं, इस प्रकार इस जनजाति का डण्डा नृत्य, इनकी कलात्मक निपुणता का परिचायक होता है।[19] खैरवार जनजाति की महिलायें, नोहडोरा (उद्रेखण कला) चित्रांकन, भित्ति चित्रांकन इत्यादि की पारंपरिक कलाओं में दक्ष होती है। ये कलायें, इनके दैनिक दैनन्दिन जीवन से जुड़ी हुई हैं। नृत्य में महिला-पुरुष आमने सामने पंक्तिबद्ध होकर नृत्य करते है। नर्तक एक पंक्ति गाते हुये झुककर, आगे बढ़ते हैं और दूसरी पंक्ति गाते हुये सीधा होकर, पूर्व स्थान पर वापस लौटते हैं।

प्राचीनकाल से ही खैरवार जनजाति अपनी सभ्यता एवं संस्कृति के लिये प्रसिद्ध रही है, इस जनजाति में घर के प्रति विशेष मोह पाया जाता है। घरों में अनेक प्रकार की कलात्मक पुताई करते हैं, ये प्रकृति से संबंधित विभिन्न देवी देवताओं की पूजा करते हैं। संसार की सभी वस्तुओं में ईश्वर का वास मानते हैं। इनकी यह मान्यता है कि विभिन्न देवी देवताओं के अप्रसन्न होने पर हैवी प्रकोप होता है। विश्व में कत्था निर्माण करने का श्रेय इस जनजाति को जाता है।

संदर्भ ग्रंथ :-

01 तिवारी, शिवकुमार : म.प्र. के आदिवासी, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी 1984, भोपाल, पृ. 233.
02 निरगुणे, बसंत : छत्तीसगढ़ की प्रमुख जनजातियाँ, महावीर पब्लिषर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, इंदौर, 2004, पृ. 110
03 रेणुका, महामाया अंचल सरगुजा का स्मृति आयोजन, संपादक मनीश राय यादव, 1991, पृ. 168.
04 तिवारी, शिवकुमार : म.प्र. के आदिवासी, पृ. 233
05 तिवारी, काशीनाथ : महानदी बेसिन की प्रमुख जनजातियों का सांस्कृतिक अध्ययन, (अप्रकाशित शोध प्रबंध) 2009, पृ. 168.
06 सिंह, वीरेन्द्र सिंह : छत्तीसगढ़ विस्तृत अध्ययन, मेरठ, 2008, पृ. 197.
07 पटेल, जी.पी. : जनजाति - खैरवार, म.प्र. संदेश, मई 1990, पृ. 23.
08 निरगुणे, वसंत : छत्तीसगढ़ की प्रमुख जनजातियाँ, पृ. 23.
09 वही, पृ. 114
10 दुबे, राजेन्द्र कुमार : छत्तीसगढ़ के लोक नृत्य, छ.ग. सांस्कृतिक मंडल, 1979, पृ. 195.
11 सिंह, वीरेन्द्र सिंह : छत्तीसगढ़ विस्तृत अध्ययन, मेरठ, 2008, पृ. 181.
12 प्रो. शरीफ मोहम्मद : भारत के लोक नृत्य, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल, 2003, पृ. 206.
13 डॉ. नायडू, हनुमंत : छत्तीसगढ़ी लोक गीतों का लोक तात्विक तथा मनोवैज्ञानिक अनुशीलन, नागपुर, 1987, पृ. 68.
14 निरगुणे, बसंत : छत्तीसगढ़ की प्रमुख जनजातियाँ, इंदौर, 2004, पृ. 114.
15 प्रो. षरीफ मोहम्मद : मध्यप्रदेश का लोक संगीत, भोपाल, 1999, पृ. 331
16 पाण्डेय, मुकुटधर : छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति अंक - 49, 1974, जनसंपर्क संचालनालय, भोपाल, पृ. - 20.
17 निरगुणे, बसंत : छत्तीसगढ़ की प्रमुख जनजातियाँ, इंदौर 2004, पृ. 111.
18 पटेल, जी.पी. : खैरवार जनजाति, आदिमजाति अनुसंधान संस्थान भोपाल, पृ. 22
19 पांडे, मुकुटधर : छत्तीसगढ़ की लोक संस्कृति, अंक 49, 1974, पृ. 20.

म.प्र. में ''पंच परमेश्वर योजना'' 2012 ग्रामसभा सशक्तिकरण हेतु एक सार्थक पहल

डॉ. लता जैन * डॉ. रामबाबु गुप्ता **

''यदि गॉव नष्ट होते है तो भारत नष्ट हो जायेगा, भारत में वैदिक काल से ही ग्राम प्रशासन का उत्तरदायित्व ग्राम पर ही था, जो ग्राम के प्रमुख व्यक्तियों की सहायता से कार्य करता था।'' –महात्मा गांधी

स्वतन्त्रता के पश्चात् सेन्ट्रल प्राविन्स और बरार में बघेलखण्ड, छत्तीसगढ़ की रियासतों को मिलाकर ''मध्यप्रदेश राज्य'' बनाया गया था, जिसकी राजधानी नागपुर थी। फिर राज्य पुर्नगठन आयोग की अनुशंसा पर तत्कालीन मध्यप्रदेश की भौगोलिक स्थितियों में फेरबदल करते हुए इसे पुर्नगठित किया गया और 1 नवम्बर 1956 को मध्यप्रदेश का गठन हुआ। इसकी राजधानी भोपाल बनाई गई। मध्यप्रदेश की भौगोलिक आकृति में एक परिवर्तन फिर आया और 1 नवम्बर 2000 को छत्तीसगढ़ राज्य का गठन (विभाजन कर) हुआ। भारत के मध्य में स्थित होने के कारण इसे 'मध्यप्रदेश' कहा जाता है। मध्यप्रदेश में 50 जिले, 342 तहसीलें, 476 नगर/शहर, 313 विकास खण्ड 54,903 कुल ग्राम हैं। 73 वें संविधान संशोधन के अनुसार म.प्र. पंचायत अधिनियम के बाद त्रिस्तरीय पंचायती राज की स्थापना के फलस्वरूप 50 जिला पंचायतें, 313 जनपद पंचायतें तथा 23,012 ग्राम पंचायतें गठित की गई हैं। जिसके तहत प्रदेश में 52,727 ग्राम सभायें स्थापित की गई। म.प्र. देश का ऐसा पहला राज्य है जिसमें 73 वें संविधान संशोधन के साथ ही नवेदित 'ग्राम स्वराज' की अवधारणा का पवित्र अभियान एक महत्वपूर्ण चरण रहा। इसे 26 जनवरी 2001 को प्रदेश में लागू किया। इस चरण में न सिर्फ पुरानी विसंगतियों को दूर किया गया बल्कि सत्त के विकेन्द्रीकरण के वास्तविक दर्शन को भी निरूपित किया है।

म.प्र. में ग्राम स्वराज सशक्त बनाने हेतु प्रमुख प्रावधान–

ग्राम स्वराज की इस नई व्यवस्था में ग्राम पंचायत की ग्राम सभा को प्रतिनिधि इकाई माना गया है। प्रत्येक ग्राम में एक बार बैठक अवश्य होगी जिसमें उसी ग्राम का मतदाता सदस्य होगा। ग्राम सभा के लिये गये निर्णयों को क्रियान्वित करने के लिये आठ स्थाई समितियों का गठन 5 वर्ष के लिये किया जाता था। जिसमें परिवर्तन कर केवल दो समितियों का गठन किया गया ये – 1. ग्राम विकास समिति 2. ग्राम पंच–ज समिति।

प्रथम समिति के अध्यक्ष का चयन ग्राम सभा करेगी और द्वितीय समिति जंगल, जमीन, जानवर और जल से जुड़े विषयों पर काम करेगी। दोनों समितियों के काम–काज की मॉनिटरिंग के लिये किसी सेवानिवृत्त अधिकारी को नियुक्त किया जा सकेगा।

यहाँ एक ओर क्रान्तिकारी परिवर्तन यह किया गया है कि ग्रामस्तर के शासकीय कर्मचारियों और अधिकारियों का प्रशासकीय नियंत्रण ग्राम सभा द्वारा ही होगा ये इनके, वेतन, अवकाश तथा कार्यों का निरीक्षण और दण्ड की सिफारिश करेगी। इन्हें नये करारोपण का अधिकार होगा। ग्राम सभा का एक कोष होगा जिसके चार भाग होंगे जैसे अन्न कोष, श्रम कोष, वस्तु कोष एवं नकद कोष। आय–व्यय का ब्यौरा भी इन्हें रखना होगा।

ग्राम न्यायालय –

म.प्र. ''सत्ता के विकेन्द्रीकरण'' में अन्य राज्यों की अपेक्षा अग्रणी रहा है। 'जिला सरकार' और ग्राम स्वराज को स्थापित कर प्रदेश ने लोकतन्त्र के वास्तविक दर्शन को प्रस्तुत किया है। ग्राम न्यायालय इसी क्रान्तिकारी तारतम्य में एक अभिनव प्रयोग है। इसकी अधिसूचना जारी हो चुकी हैं। लगभग 10 ग्राम पंचायतों के समूह के वृत्त पर एक ग्राम न्यायालय की स्थापना की जा रही है। इस व्यवस्था से जहाँ एक ओर मामूली विवादों को ग्राम स्तर पर ही निपटाया जा सकेगा वहीं न्यायालयों के बढ़ते कार्य–बोझ को कम करने में, सहायता मिलेगी। जनपद पंचायतों द्वारा ग्राम न्यायालयों के सदस्य के मनोनयन में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और पिछड़े वर्गों के लिये एक–एक पद आरक्षित होगा। महिला का एक पद होगा जो बारी–बारी से विभिन्न वर्गों की महिलाओं को दिया जायेगा। इन ग्राम न्यायालयों की विश्वसनीयता बनाये रखने के लिये समस्त प्रभावर्षाली व्यक्तित्वों को हटाया गया है जैसे– सरपंच, उप सरपंच एव जिला जनपद के पदाधिकारी, विधायक, सांसद, कृषि उपज मण्डी के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष तथा सहकारी संस्था के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष ग्राम न्यायालय के सदस्य नहीं हो सकेंगे। किसी राजनैतिक दल का सदस्य भी ग्राम न्यायालय का सदस्य नहीं हो सकेगा। ग्राम न्यायालय एक हजार रूपये तक की वसूली के मामलों की सुनवाई कर फैसला देंगे, इन्हें ट्रेसपास एक्ट, म.प्र. जुवेनाइल स्मोकिंग अधिनियम, जुआ एक्ट तथा म.प्र. भू राजस्व संहिता की धारा 248 और 250 के तहत मामलों की सुनवाई और निपटारा करने के अधिकार है। निपटारा करने में प्रारंभिक रूप से समझौते के प्रयास को महत्व दिया गया है।

ग्राम सचिवालय –

'लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण' को सशक्त बनाने हेतु म.प्र. शासन ने ग्राम सचिवालय का गठन किया है। जून 2004 से शुरू हुए ग्राम सचिवालयों ने सत्त की दृष्टि से विकेन्द्रीकृत प्रदेश में अब 'प्रशासनिक विकेन्द्रीकरण' का मार्ग भी प्रशस्त किया है। इनके कार्य क्षैत्र में हाट बाजार, सरकारी/क्षैत्रीय गामीण बैंकों की शाखायें, स्वास्थ्य उपकेन्द्र, पशु औषधालय, मिडिल व हाईस्कूल तथा उस समूह में आने वाले ग्राम पंचायतों के ग्रामीण जन आसानी से आ सके, आदि शामिल हैं।

ग्राम सभा की बैठक का उदाहरण

प्रदेश पंचायत राज अधिनियम के अनुसार प्रत्येक ग्राम सभा की वर्ष में कम से कम चार बार बैठक होना जरूरी हैं।

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष अर्थशास्त्र, ** प्राध्यापक वाणिज्य, श्री अटल बिहारी बाजपेयी शा. कला एवं वाणिज्य महा. इन्दौर (म.प्र.)

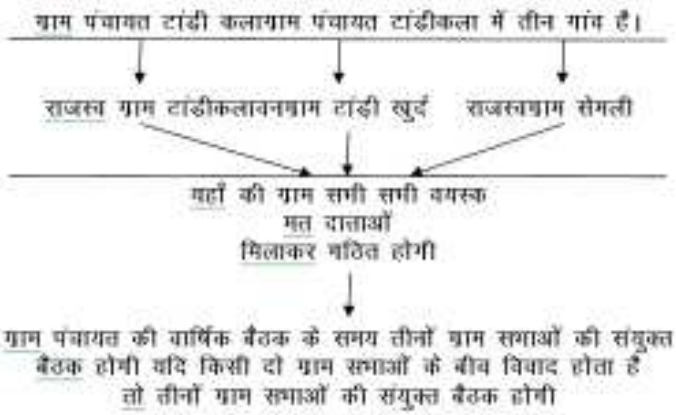

प्रदेश सरकार ने पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम में ग्राम सभा की बैठक के लिये चार बैठके तय की हैं जो जनवरी, अप्रेल, जुलाई और अक्टूबर में होगी। इन चारों के अलावा आवश्यक विषय पर भी बैठक बुलाई जा सकती है।

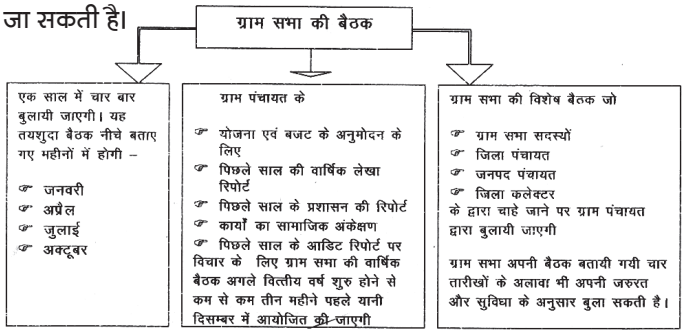

वास्तव में म.प्र. की सरकार ग्राम सभाओं के माध्यम से समावेशी विकास के लिये प्रयत्नशील रही है। ग्राम सभाओं को सशक्त बनाने के लिये काफी धन और व्यूह रचना बनाई गई हैं। जो कुछ हद तक विकास में सहायक रही हैं। लेकिन अभी ग्रामों में विकास को समझना चुनौतीपूर्ण रहा है। वास्तव में विकास क्या है ? यह किस प्रकार हो सकता है ? इसके लिये साधन कहाँ से जुटाये जायें ? और किसके विकास की फिक्र हमें सबसे पहले करना चाहिये?

हकीकत यह है कि विकास की समझ लोगों की माली हालत से जुड़ी है। ग्रामों में ज्यादातर लोग गरीब हैं। कहीं सुविधायें हैं और कहीं क्षेत्र अधिक पिछड़े हैं। पीने का पानी नहीं, बिजली, अच्छी सड़क या फिर बच्चों की शिक्षा ठीक से नहीं मिल पा रही है, जो बिना जमीन वाले मजदूर या छोटे किसान हैं वे मजदूरी ढूंढने शहरों की ओर आ चुके हैं। अत: हमें पहले यह तय करना जरूरी है कि किसका विकास करना है और वे लोग विकास से क्या समझते हैं?

विकास की प्राथमिकता –

विकास की प्राथमिकता क्या हो, यह बैठकर आपस में बातचीत करके तय की जानी चाहिये, साथ ही ग्राम सभा बुनियादी जरूरतों को भी ध्यान में रखे। जो परिवार गरीब है उन्हें पहले मदद की जायें। गांव में ऐसे काम उठाये जायें जिनसे अधिक से अधिक लोगों को मजदूरी मिलें। बुनियादें जरूरते जैसे, पीने का साफ पानी, रहने का स्थान, गांव में बिजली व सड़क, आसपास में डॉक्टर व दवाई की सुविधा, बच्चों की पढ़ाई के लिये शाला और शिक्षक आदि जीवन के न्यूनतम स्तर को बनाये रखने के लिये उपलब्ध होनी चाहिये।

दो पंचायतों की तुलना करके अच्छे सफल कार्यों को विकास में शामिल किया जाना चाहिये व उदाहरण देकर अन्य ग्रामों का विकास होना चाहिये।

म.प्र. में वर्तमान योजना 2012–13 (ग्राम सभा सशक्तिकरण के विशेष संदर्भ में) पंच परमेश्वर योजना –

ग्राम विकास की दिशा तय करने एवं योजनाओं को प्रभावपूर्ण प्रक्रिया से क्रियान्वित करने हेतु म.प्र. सरकार 2 अक्टूबर 2012 को 'पंच परमेश्वर' योजना प्रारंभ की है। इसमें विशेष रूप से अधोसंरचना निर्माण के साथ विकास के कार्य को गति देने की पहल की गई है और निम्न आधार बनाये गये –

1. ग्राम पंचायत का भवन होगा, महिला पंचों का अलग से कक्ष होगा तथा शौचालय स्त्री–पुरूष के अलग–अलग होंगे।
2. भवन में अतिथि आवास बनेगा।
3. भवन में पीने के पानी की व्यवस्था एवं साफ सफाई तथा फलदार वृक्ष होंगे।
4. भवन में ई–पंचायत व्यवस्था के लिये एक कम्प्यूटर कक्ष होगा जो ब्रांड बैंड सुविधा सहित होगा।
5. पंचायतें आय बढ़ाने के लिये (जिससे ग्रामों को सुधारा जा सके) करारोपण पर प्रतिवर्ष शत–प्रतिशत वसूली करेगी, किराये पर देने के लिये दुकानें/शॉपिंग काम्पलेक्स बनायेगी, हाट की व्यवस्था करेगी, पशु विक्रय बाजार देखेगी। मछली पालन एवं सिंघाड़ा खेती के लिये बारहमासी तालाब की व्यवस्था करेगी।

गाँव की बुनियादी जरूरतों के साथ शिक्षित बेरोजगारों के लिये बहुउद्देशीय स्वरोजगार प्रशिक्षण सुविधा, क्रियाशील महिला स्वसहायता समूह, महात्मा गांधी रा.ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना में जरूरतमंद व्यक्ति के लिये रोजगार की व्यवस्था, निराश्रित/ निशक्त/ विधवा हितग्राहियों को प्रतिमाह पेंशन का भुगतान करेगी। गाँव में जरूरतों से जुड़ी व्यवस्थाओं जैसे –

1. बैंक शाखा
2. पोस्ट ऑफिस
3. नियमित ग्राम पंचायत कार्यालय खोला जाना।
4. नियमित शालायें एवं आंगनवाड़ी का संचालन।
5. प्रत्येक घर में जलवाहित शौचालय व्यवस्था।
6. वाचनालय / पुस्तकालय व्यवस्था।
7. प्रत्येक घर में कम से कम एक फलदार वृक्ष हो।
8. लोकसेवा गारंटी अधिनियम का उचित क्रियान्वयन किया जाना।
9. नागरिक सेवा केन्द्र बनाना।
10. समयानुसार आवश्यक सुविधायें जैसे – कृषि एवं उद्यानिकी विभाग, राजस्व विभाग, पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग, सामाजिक न्याय एवं उच्च शिक्षा आदि विभागों की व्यवस्था देखें।

वास्तव में म.प्र. में ग्राम सभा एक संवेधानिक निकाय है सभी वयस्क इसके सदस्य होंगे। प्राकृतिक सामुदायिक संसाधनों का प्रबन्धन ग्राम सभा के निर्णय के आधार पर किया जायेगा। निर्माण एवं विकास कार्यो का सोशल ऑडिट ग्राम सभा की बैठक में होगा। योजना के पात्र हितग्राही का चयन अधिकार ग्राम सभा को है। ग्राम सभा में लिये गये निर्णय से व्यथित कोई भी व्यक्ति जनपद पंचायत स्तर पर गठित 'अपील समिति' में अपील कर सकेगा।

वर्तमान उपलब्धियाँ–

गांवों में संचालित रोजगार गारन्टी योजना से 41.42: व्यक्तियों को रोजगार प्राप्त हो रहा है। स्वयं सहायता समूह से 14.76: व्यक्ति स्वयं का व्यवसाय चलाकर आत्मनिर्भर बन रहे हैं। समस्त शासकीय योजनाओं से 95.70: गरीबी दूर हो रही है। ग्रामीण क्षेत्र में 65.7: व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति में सुधार हो रहा है। इन्दिरा आवास योजना 69.50: व्यक्तियों के नवीन आवास एवं 9.52: व्यक्तियों के कुटीर उद्योगों का उन्नयन हो चुका है। मध्यान्ह भोजन योजना से स्कूलों में छात्रों की उपस्थिति बढ़ रही है तथा ग्रामीण महिलाओं को रोजगार प्राप्त हो रहा है जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हो रहा है। पंचायतों की योजनाओं से 86.70: ग्रामीणों को लाभ प्राप्त हो रहा है। अत: ग्रामीण व्यक्तियों का जीवनस्तर ऊँचा उठ रहा है।

मध्यप्रदेश के आर्थिक विकास में पंचायतीराज व्यवस्था का महत्वपूर्ण योगदान है। पंचायती राज व्यवस्था सभी संस्थाओं का विकास कर ग्राम स्वराज का सपना पूर्ण कर रही है। 52.40: गांवों में पक्की सड़कें, 38.10: स्वास्थ्य सुविधाएं, 33.33: बैंक, 52.40: डाकघर, 52.40: पंचायत भवन का निर्माण हो चुका है तथा ग्राम पंचायतों द्वारा संचालित योजनाओं में 96: इन्दिरा आवास योजना, 96: म.प्र. रोजगार गारन्टी योजना 96: मध्यान्ह भोजन योजना, 95 सामाजिक सुरक्षा व वृद्धावस्था पेंशन योजना शत-प्रतिशत तथा स्वर्ण जयंती रोजगार योजना सफलतापूर्वक संचालित होकर मध्यप्रदेश के आर्थिक विकास में सहयोग कर रही है। ग्राम पंचायतों द्वारा संचालित योजनाओं से गांवों का आर्थिक व सामाजिक विकास हो रहा है। 49.53: व्यक्ति पक्के आवासों में, 49.33: व्यक्ति स्वयं का व्यवसाय, 52.40: गांवों में पक्की सड़कों का निर्माण, 38.10: गांवों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना, 95.20: गांवों में हैण्डपम्प, 86: योजनाओं का लाभ हितग्राहियों को प्राप्त होना तथा प्राथमिक शालाओं के साथ-साथ माध्यमिक व हायर सेकेण्डरी स्कूलों का खुलना आदि के आधार पर गांवों का आर्थिक विकास हो रहा है। ग्राम पंचायतों की योजनाओं से गांवों का सामाजिक विकास भी हो रहा है। 86 गांवों में महिला व पुरूषों में भेदभाव का समाप्त होना, 94.3: गांवों में आटा-चक्की, 52.40: गांवों में पोस्ट ऑफिस, 33.3: गांवों में बैंक की स्थापना हो गई है। गांवों में सामाजिक बुराईयों का प्रतिशत भी घट रहा है। छुआछुत 74.3:, बाल-विवाह 92.9:, पर्दाप्रथा 71.19: कम हो गई है। अत: इन तथ्यों के आधार पर हम कह सकते हैं कि गांवों में सामाजिक विकास हो रहा हैं।

म.प्र. में ग्रामसभा विकास का उत्कृष्ट उदाहरण-

म.प्र. के उज्जैन संभाग के तराना तहसील के गांव कनासिया, जो तराना से 20 कि.मी. की दूरी पर है। गांव के हर तीसरे परिवार का सदस्य सरकारी नौकरी में है। यह गांव में खुले 22 स्कूलों की बदौलत हो पाया है। यहाँ 17 प्राथमिक तथा 5 हाईस्कूल हैं। यहाँ के युवाओंमें सेना में भर्ती होने का जुनून खास है, 1500 परिवार वाले गांव के 207 नौजवान थलसेना, वायुसेना और नौ सेना में हैं। गांव के 50 युवक पुलिस में है तो 20 नगर सैनिक है। तहसीलदार से लेकर थानेदार के घर यहाँ मिलेंगे। यहाँ के रामगोपाल, विष्णुप्रसाद और पवन विदेशों में जाने वाले सैनिकों में शामिल हैं। वे 1991 से 2009 के बीच विदेश में रहचुके हैं। गांव के खिलाड़ी कबड्डी, लांग जम्प, गोला फेंक तथा दौड़ में भी राष्ट्रीय पदक प्राप्त कर चुके हैं।

यह सब ग्राम सभा एवं ग्राम विकास की व्यूह रचना से ही संभव हुआ है। पूर्व से ही सचेत बुनियादी सुविधाओं का लाभ तथा शिक्षा के प्रति जागरूकता ने स्व-रोजगार भी बढ़ाये हैं। ग्राम सभा यहाँ चरम सफलता की ओर बढ़ रही हैं।

कुछ परेशानियाँ भी है जैसे-

(1) समस्त ग्राम पंचायतों के द्वारा करारोपण किया जाता है। परन्तु केवल 28.60 प्रतिशत पंचायतों को ही करों से राशि प्राप्त होती है। ग्रामीणों पर कर लगाया जाता है। परन्तु वे करों का भुगतान नहीं करते है।

(2) 14.50 प्रतिशत पंचायतों को पशुओं के रजिस्ट्रीकरण से, 9.50 प्रतिशत पंचायतों को जनता के सहयोग से, 14.30 पंचायतों को व्यापार व आजीविका पर कर से, 9.50 प्रतिशत पंचायतों को मेले में व्यापारियों पर रजिस्ट्रेशन से, तथा 4.80 प्रतिशत पंचायतों के पंचायत भवन को किराये पर देने से राशि प्राप्त होती है।

(3) समस्त पंचायतों द्वारा निर्माण कार्यो पर, योजनाओं व कार्यक्रमों पर व्यय किया जाता है।, इसीलिए पंचायतों की व्यय की मदें अधिक व आय की मदें कम हैं। अत: सर्वेक्षित पंचायतों में से 66.70 प्रतिशत पंचायतों को वित्तिय कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है।

(4) 66.70 प्रतिशत पंचायतों की वित्तीय स्थिति सामान्य है तथा 19 प्रतिशत पंचायतों की वित्तीय स्थिति अच्छी नहीं है।

निष्कर्ष -

इसमें कोई शक नहीं कि वर्तमान म.प्र. की वर्तमान सरकार पूरी तरह ग्राम विकास को सशक्त करने में प्रयासरत हैं। लेकिन ग्राम सभाओं में सहभागी योजना की प्रक्रिया को अपनाते वक्त कमजोर वर्ग की भागीदारी अवश्य सुनिश्चित की जाये। अत: मेल जोल बढ़ाना, मानचित्रों को बनाना व हितसाधक विश्लेषण, विभिन्न वर्गों जैसे- आदिवासी, अनुसूचित जाति के लोगों को जोड़ना आवश्यक होगा। सबकी भागीदारी सुनिश्चित होने के बाद परिस्थिति का विश्लेषण एवं चर्चा करना अति आवश्यक होगा। जैसे- हमारी क्या स्थिति है ? हमारी आमदानी क्या है ? हमारी स्थिति ऐसी क्यों है? इस स्थिति के लिये कौन जिम्मेदार है ? इस स्थिति को दूर करने के लिये क्या करना होगा ? आदि। ग्राम सभा में बैठकर समस्याओं और कारणों की सूची बनाना चाहिये। आधारभूत समस्या को स्पष्ट रूप से सामने लाना होगा। ग्राम सभा में प्राथमिकता के आधार पर एक-एक समस्या का निपटारा होना चाहिये। जैसे यदि हम विश्लेषण के दौरान यह पाते है कि गांव में पोषण आहार की दिक्कत, खेती ठीक से नहीं हो रही है, पानी के निस्तार या पानी सिंचाई की दिक्कत है, गांव कर्ज में डूबा है तो इन सभी का कारण पानी की किल्लत है। अत: इसके लिये जल स्तर बढ़ाना होगा । बारिश के पानी को रोकना होगा, उपलब्ध पानी की व्यवस्था करना होगी आदि।

ग्राम सभा को सशक्त बनाने के लिये महत्वपूर्ण तत्व 'मूल्यांकन व्यवस्था' भी है। हमारे यहाँ मूल्यांकन कार्य बाहरी विशेषज्ञ आकर देखता है वह मूल्यांकन सामान्य तौर पर संसाधन उपलब्ध कराने वाली संस्था के लिये होता है। लेकिन वास्तव में जब हम समुदाय के भीतर सहभागिता आधारित प्रक्रियाओं के द्वारा बदलाव की बात कर रहे है तो मूल्यांकन भी कुछ इस तरह होना चाहिये-

1. परियोजना चक्र को समुदाय स्वयं समझे।
2. सीख को ग्राम समुदाय स्वयं इस्तेमाल कर बदलाव देखे।
3. ग्राम सभा में सामुहिक विश्लेषण की प्रक्रिया शुरू करें और निष्कर्ष पर पहुंचे।
4. भविष्य की योजना और रास्ता तय करें।
5. पूरे गांव को शामिल किया जाये। उद्देश्य किस सीमा तक पूर्ण हुए, जो नहीं पूरे हुए उनके कारणों की खुलकर चर्चा हो।
6. योजना प्रक्रिया को सतत् रूप से चलाये रखने के लिये किन प्रयासों की जरूरत है। ग्राम पंचायत के माध्यम से सरकार की ओर प्रेषित की जावे।

''इस तरह गांवों को सशक्त बनाने के लिये नवीन दृष्टिकोण, जो ठोस एवं व्यावहारिक है, की आवश्यकता है। ग्राम विकास खाका ऐसा होना चाहिये कि बुनियादी क्षेत्र सड़क, बिजली, पानी और सामाजिक क्षेत्र दोनों को बराबर का महत्व मिले। कोई भी क्षेत्र उपेक्षित न हो । राज्य में विकास कार्य की यह यात्रा रूकने वाली नहीं है।''

- शिवराजसिंह चौहान, मुख्यमंत्री (म.प्र.)

संदर्भ ग्रन्थ

1. *महात्मा गांधी राज्य ग्रामीण विकास संस्थान आधारताल जबलपुर (म.प्र.) से प्रकाशित - ग्रामसभा - पुस्तिका।*
2. *मध्यप्रदेश सम्पूर्ण अध्ययन, लेखक - शादाब अहमद सिद्दीकी*
3. *दैनिक अखबारों की सुर्खिया।*
4. *वर्ल्ड बैंक रूरल डेवलपमेंट, सेक्टर पॉलिसी पेपर*
5. *म.प्र. ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा ग्राम विकास मार्गदर्षिका (नवीन)*
6. *'वाता' डेवलपमेंट फाउन्डेशन, इन्दौर (म.प्र.) की त्रैमासिक बुलेटिन 2012।*

भारत और एफडीआई :- एक अध्ययन

डॉ. विवेक कुमार पटेल * प्रो. नियाज अंसारी **

प्रस्तावना :-

एफ.डी.आई. का अर्थ है ''प्रत्यक्ष विदेशी निवेश'' किसी एक देश की कंपनी का दूसरे देश में किया गया निवेश प्रत्यक्ष विदेशी निवेश कहलाता है। जिसे **FDI (Foreigh Direct Investment)** भी कहते है।[1] आज वैश्वीकरण और उदारीकरण के दौरान में विकासशील देश खुली बाजार व्यवस्था अपनाने हेतु बाध्य हो रहे है। इसी दिशा में आगे बढ़ते हुए भारत में भी सरकार ने मल्टी ब्राण्ड खुदरा क्षेत्र सहित अन्य क्षेत्रो में भी प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (**FDI**) को अनुमति सितम्बर 2012 को प्रदान की है।[2] परन्तु यह लागू तभी होगा जब राज्य सरकारे इस मन्जूरी देगीं। इससे राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्र में हलचल मच गई कि भारत में एफडीआई का सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा या नकारात्मक! स्वाभाविक रूप से हर भारतीय यह जानने हेतु उत्सुक है। कि देश में एफडीआई की आवश्यकता और प्रासंगिकता क्या है?

ऐसे ही अनेक प्रश्नों का, आशंकाओं एवं संभावनाओं का अनुशीलन करने हेतु जरुरी है कि भारत में एफडीआई से जुड़े तथ्यो एवं अनुभवो पर विहंगम दृष्टि डाली जाए। इस प्रकार भारतीय परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रहित की कसौटी पर एफडीआई को निम्नवत बिन्दुओ पर परखा जाना समीचीन होगा -

एफडीआई से अभिप्राय :-

FDI का पूर्ण रूप है - **Foreigh Direct Investment** इसका हिन्दी रूपान्तर ''प्रत्यक्ष विदेशी निवेश'' है। यह निवेश का एक रूप होता है इसके अन्तर्गत विदेशी कंपनी व्यापार के माध्यम से लाभ कमाने हेतु अपनी पूँजी लगाती है। इसके परिणामस्वरूप निवेशित देश में अर्थव्यवस्था का वहुपक्षीय विकास होता है और स्थानीय लोगो को रोजगार एवं अन्य व्यावसयिक सुविधाए प्राप्त होती है। जैसे बेरोजगारों को रोजगार, उपभोक्ताओं एवं उत्पादकों को बाजार, निवेशकों को निवेश का क्षेत्र, जरूरत मंद को पूंजी आदि।

भारत में एफडीआई की आवश्यकता :-

भारत का अधिकांश धन विदेशो में काले धन के रूप में जमा है, वही दूसरी ओर देश में ही व्यापारी, उद्योगपति, नौकरशाह, बड़े किसान, राजनेता आदि खरवो रुपये अवैध रूप से जमा किये हुये है। यदि वे काला धन बाजार में आ जाये तो कई उद्योगों की स्थापना होने से देश की अर्थव्यवस्था और सुदृढ़ हो जायेगी। दुर्भाग्यवश देश की वर्तमान स्थित को देखते हुये ऐसा संभव प्रतीत नही होता है।

ऐसी विकट स्थित में एफडीआई से ही उम्मीद की रष्मियाँ निकलती दिखाई दे रही है। आशा की जानी चाहिए कि भूमंडलीयकरण, उदारीकरण एवं निजीकरण रूपी त्रिवेणी को एफडीआई रूपी पतवार से ही पार किया जा सकता है जैसा कि योजना आयोग के उपाध्यक्ष डॉ. एम.एस. अहलूवालिया ने आशा व्यक्त की है।

''हम केवल आर्थिक वृद्धि पर ही निर्भर नही रह सकते। हमें सुनिश्चित करना होगा कि वृद्धि दर एवं विदेशी पूँजी निवेश का लाभ विकासधारा से अछूते निम्नवर्गीय लोगो के पास तक पहुँचे, ताकि उनके जीवन स्तर में सुधार हो।[3]

अत: स्पष्ट हो जाता है कि भारत में एफडीआई की नितांत आवश्यकता है और इसके लिये वर्तमान में अनुकूल पृष्ठभूमि भी तैयार होती जा रही है।

एफडीआई का वैश्विक व भारतीय परिदृश्य।

विश्व के जिन देशों ने एफ.डी.आई. को अपनाया है। वहां का विकास निम्नानुसार हुआ है। चीन में खुदरा क्षेत्र में 100% निवेश की अनुमति दी गई है वहां 1992 में पहली बार रिटेल (खुदरा) में 49% एफडीआई की अनुमति दी गई थी तो उसी वर्ष चीन में 04 प्रतिशत और 2001 में 7 प्रतिशत रोजगार में वृद्धि हुई थी रिटेल कारोबार से चीन में 2003 में जहाँ व्यापार 554 अरब डालर था जो 2009 में 900 अरब डालर को पार कर गया है।

इसी प्रकार थाईलैण्ड एवं इंडोनेशिया में भी एफडीआई के प्रवाह से आर्थिक हरियाली छायी है 1997 में थाईलैण्ड ने रिलेट में एफडीआई को अनुमति दी गयी। प्रारम्भ में रिटेल में वहां 60000 लोग बेरोजगार अवश्य हो गये है किंतु कालान्तर में कृषिक्षत वस्तुओ के प्रसंस्करण (एग्रोप्रोसेसिंग) क्षेत्र में भरपूर लाभ हुआ।

इंडोनेशिया में रिटेल में एफडीआई के बावजूद ताजे खाद्य पदार्थो के 90 प्रतिशत तथा कुल खाद्य पदार्थो के 70 प्रतिशत बाजार पर असंगठित क्षेत्र का ही अधिकार बना हुआ है। उल्लेखनीय है कि वैश्विक स्तर पर सबसे अधिक विदेशी निवेश आकर्षित करने वाले प्रथम पांच देश है - अमेंरिका, चीन, हाँगकांग, बेल्जियम एवं ब्राजील वर्ष 2011 में भारत का स्थान चौदहवे नंबर पर आ गया है एक अनुमान के अनुसार भारत में मल्टीब्रांड रिटेल क्षेत्र में एफडीआई के आगमन से एक करोड़ लोगो को रोजगार मिल सकेगा। यह रोजगार के अवसर रिफ्रिजरेशन, पैकिंग प्रोसेसिंग, लाजिस्टिक मैनेजमेंन्ट, बिजनेस मैनेजमेंट आदि क्षेत्रो में नवसृजित होंगे अब एफडीआई से भारत को होने वाले संभावित लाभों की खोज करना उचित होगा।

भारत में एफडीआई का सकारात्मक पक्ष।

* एफडीआई के साथ भरपूर मात्रा में एक से बढ़कर एक नवीन प्रोद्योगिकी तथा प्रबंध कौशल का देश में आगमन होगा इससे हमारे बाजार प्रतिस्पर्धा का सामना करने के लिये अपने को तैयार कर सकेगा। इसके फलस्वरूप भारतीय उपभोक्ताओं को वस्तुएँ सस्ती एवं गुणवत्ता युक्त होगी।

* नई-नई कंपनियाँ आने से हमारे बेरोजगार युवा जो आज अपराध और आलस्य में जकडे हुए है वे रोजगार के अवसर पाकर स्फूर्ति एवं उत्साह से परिपूर्ण हो जायेगें एवं देश के विकास की मुख्य धारा में जुड जायेगें। जिससे व्यक्ति विकास के साथ सामाजिक एवं आर्थिक विकास भी होगा।

* मल्टी ब्रांड रिटेल में एफडीआई का महत्वपूर्ण लाभ देश के मिलेगा रिटेल कम्पनियाँ किसानो से ही प्रत्यक्षत: न्यायपूर्ण मूल्य पर कृषि उपज खरीदेगी तो बिचौलियो की भूमिका नगण्य हो जायेगी, क्योकि वर्तमान में कृषि उत्पादन का अधिकांश लाभ बिचौलियो की जेब में चला जाता है।

* भारत सरकार ने यह शर्त रखी है कि विदेशी रिटेल कम्पनी को न्यूनतम 30 प्रतिशत वस्तुएँ भारत के लघु एवं मध्यम उद्योग से ही क्रय करनी होगी नि:संदेह इस व्यवस्था से हमारे घरेलू उद्योग को बल मिलेगा और उनकी आर्थिक हालत भी सुधरेगी जो वर्तमान में बंद होने के कगार पर है।

* बाजार में प्रतियोगिता बढ़ने से स्थानीय व्यापारी जमाखोरी, अत्यन्त

* सहा. प्रा. वाणिज्य, शास. महाविद्यालय कोतमा, जिला अनूपपुर ** सहा. प्रा. राजनीति शास्त्र, शास. महाविद्यालय, सिहावल जिला सीधी (म.प्र.)

मुनाफाखोरी एवं कालाबाजारी नही कर पायेगे क्योकि इससे उनकी पूँजी अनावश्यक रूप से फंसी रहेगी अत: वे उचित मूल्य पर ही अपनी वस्तुंए बेचने के लिये बाध्य होगे और इसके सुखद परिणामस्वरूप उपभोक्ता महगाई से निजात पा सकेगे।

एफडीआई का नकारात्मक पक्ष।

बहुआयामी लाभो से युक्त एफडीआई में कई दोष भी विद्यमान है जिसके चलते ही भारत में इसका विरोध हो रहा है अत: एफडीआई से होने वाले संभावित नुकसान को इन बिन्दुओ में समझा जा सकता है–

* यह सर्वविदित है कि विदेशी कंपनी का एक मात्र लक्ष्य लाभार्जन होता है। लाभ प्राप्ति हेतु वे कोई भी अनैतिक व अनुचित तरीका अपनाने से नहीं हिचकती हैं। उल्लेखनीय है कि भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी नें ही व्यापार एवं अपना प्रभाव बढ़ने हेतु रिश्वत, उपहार एवं लालच देकर भारतीयो को भ्रष्ट बनाना शुरू किया था।

* ये कंपनी सशक्त संसाधनों का प्रयोग कर स्थानीय प्रतियोगियों को बाजार छोड़कर भागने पर विवश कर देती है। और बाजार पर एकाधिकार करके मनमानी कीमतो पर वस्तु की बिक्री करती है। इसका सबसे ज्यादा नुकसान उपभोक्ता को उठना पड़ता है। अतंत: इसके दुष्परिणाम स्वरूप मुद्रा स्फीति बढ़ने से अर्थव्यवस्था प्रभावित होती है।

* एफ.डी.आई. के आगमन से यदि आम आदमी को लाभ नही होगा तो भारत में गरीबी यथावत बनी रहेगी। बाजार में एकाधिकार होने के कारण आम आदमी (उपभोक्ता) का शोषण ही होगा।

* अर्थव्यवस्था के संबंध में अर्थशास्त्रीयों को मानना है कि इससे देश ''क्रोकोडायल ज्वा सिन्ड्रोम '' नामक कु–व्यवस्था में फस जायेगा। 4 इस स्थिति में समाज में आय और इसके वितरण में असमानतायें बढ़ने से गंभीर आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीति समस्यांए पैदा होगी।

* जिस प्रकार भारत में उदारीकरण एवं वैश्वीकरण ने आम जनता के शोषण का मार्ग ही प्रशस्त्र किया है, कौड़ियों के भाव बिकने वाला नमक घेंघा रोग का हउआ दिखाकर गेहूं के दाम बिकना शुरू हो गया है। इसी प्रकार कोल्डड्रिंक्स ने हमारे स्वास्थ्यवर्धक पेय लस्सी, शरबत, जलजीरा, गन्नारस आदि के व्यापार को मरणासन्ना अवस्था पर पहुंचा दिया है। बया है आज अलीगढ़ के ताला उद्योग में ही ताला लग गया है।

* रोजगार में वृद्धि तो होगी लेकिन भारत केवल सेल्स मैन एवं सेल्स गर्ल्स का देश बनकर रह जायेगा।

* उपभोक्ता के सामने चुनाव के विकल्प घट जायेगें। बाजार में दबदवे वाली गिनी चुनी दुकानें ही मिलेगी जिससे एकाधिकार की स्थिति निर्मित होगी।

अत: एफ.डी.आई. को भारत में विनाशक के रूप में भी देखा जा रहा है। जैसा कि किसी ने इन पंक्तियों में एफ.डी.आई. का विरोध किया है –

धरा बेच देंगें, गगन बेच देंगें, कली बेच देंगें, चमन बेच देंगें।
आम जन यू ही सोता रहा तो, नेता एफ.डी.आई. को वतन बेच देंगें ।।

प्राय: देखा जाता है कि विदेशी कम्पनियां स्थानीय संसाधनों को भरपूर दोहन करती है जिससे उस क्षेत्र में न केवल प्राकृतिक बल्कि सामाजिक व सांस्कृतिक तंत्र भी बिगड़ जाता है। जैसे अफ्रीका महाद्वीप को एफ.डी.आई. के द्वारा पूंजीपतियों ने खोखला करके छोड़ दिया। विदेशी कंपनियों का तिलिस्म इतना मजबूत एवं आकर्षक होता है कि व्यक्ति के पास जो वस्तु पहले से है वह उसे नये संस्करण के रूप में खरीदने हेतु लालायित बन जाता है।

सुझाव :–

* एफ.डी.आई. को लागू करने के साथ शासकीय तंत्र का नियंत्रण आवश्यक होगा।
* जागो ग्राहक जागों को बढ़ावा देना होगा।
* विदेशी कंपनियों को उद्देश्य लाभ कमाना न हो।
* अनिवार्य, आवश्यक एवं विलासिता की वस्तुओं के आधार पर निर्णय लेना होगा।
* सामाजिक जागृति लानी होगी जाकि उपभोक्ता का शोषण न हो।
* लघु एवं कुटीर उद्योग को बचाना होगा।

निष्कर्ष :–

भारत में एफ.डी.आई. के उपर्युक्त विवेचना के आधार पर निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि 21वीं सदी के वर्तमान भू–मण्डलीयकरण के दौर में इससे बचना संभव प्रतीत नही होता है। साथ ही एफ.डी.आई. से उत्पन्न आशंकाओं के भय से भावी संभावित लाभो से देश को वंचित भी नही किया जा सकता है। अत: हमें एक संतुलित एवं व्यवहारिक नीति अपनाने के जरूरत है जिससे विदेशी पूंजी निवेश के नकारात्मक पक्ष अर्थात इसके नुकसानों से बचते हुये इसके बहुपक्षीय लाभों को वास्तविक रूप में प्राप्त किया जा सकें।

वस्तुत: राष्ट्रहितों के विभिन्न पहलुओं – राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप की रक्षा करते हुये हमें आगे बढ़ना चाहियें। देश में व्यापक लालफीताशाही, लेटलतीफी एवं भ्रष्टाचार से विदेशी निवेशकों को बचाने हेतु प्रभावी कदम उठाने होगें। इन कारणों से भी भारत में देशी एवं विदेशी कारोबारियों को व्यवसाय शुरू करना जटिल बना हुआ है। विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार कारोबारियों को सहुलियते देने में भारत का विश्व के 185 देशो में 132 वां स्थान है। 5

इस निराशाजनक स्थिति पर गंभीरतापूर्वक विचार करते हुये केन्द्र एवं राज्य सरकारों को सुचारू रूप से कार्य करने हेतु नौकरशाहों पर लगाम कसनी होगी तभी भी भारत को एफ.डी.आई. से वांछित लाभ प्राप्त होंगे अन्यथा हानियां उठने हेतु देश विवश बना रहेगा। हमें केन्द्रीय सतर्कता आयोग, प्रतिस्पर्धा आयोग, सी.बी.आई. आदि को और अधिक प्रभावी, स्वतंत्र एवं सशक्त बनाना होगा। इस प्रकार हमें संतुलित, सतर्क एवं ईमानदार प्रयासों के द्वारा राष्ट्रहित में एफ.डी.आई. से भारत को विकसित देश बनाना होगा। ऐसा करने पर ही हमारी संप्रभुता एवं सम्पन्ना पर कोई प्रतिकूल प्रभाव भी दृष्टिगोचर नही होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

01. *जागरण जंक्शन 22.09.2012*
02. *प्रतियोगिता दर्पण नवम्बर 2012, उपकार प्रकाशन आगरा।*
03. *योजना अप्रैल 2008, सूचना प्रसारण मंत्रालय नई दिल्ली।*
04. *डॉ. दत्त एवं सुन्दरम, भारतीय अर्थव्यवस्था 2011, यस चंद्र एंव कंपनी नई दिल्ली।*
05. *दैनिक भास्कर 26.10.2012 सतना म.प्र.।*

****

'कन्या' : स्त्री जीवन का नया अध्याय

डॉ. लक्ष्मीकान्त चंदेला *

अब नारी की सोच का विस्तृत फलक सामने है। विवशताओं से भरा मन ऊब चुका है और कुछ नया करना चाहती है। वह 'जिमि स्वतंत्र होई बिगरहिं नारी ' की भावना को झुठला देना चाहती है और वर्तमान में वह अप्रासंगिक भी लगने लगा है। 'सदा सुहागिन रहो' के आशीर्वचन में पुरुष के क्रूरता की बू आ रही है इतना ही नहीं 'बूढ़ी घोड़ी लाल लगाम' वाली मनचलों की सिफर सोच पर मसूर की दाल दलती हुई वानप्रस्थ की उम्र में भी प्यार पाने की ललक दिखाई देती है (देखिए कृष्णा अग्निहोत्री की 'बाढ़' कहानी)। वह जोगिन बनने का विचार सपने में भी नहीं लाती। हर मायने में कमतर समझी जाने वाली नारी अब हर क्षेत्र में बेहतर प्रदर्शन कर रही है। जूझ रही है वह जड़ से जगत् तक। अलका प्रकाश मानती हैं कि यह ''नारियों की स्वयं की समस्या है। उसके समाधान का उपक्रम नारियों को ही करना चाहिए।''[1] कृष्णा अग्निहोत्री की 'बाढ़' कहानी की राधिका स्त्रियों की सारी अंधश्रद्धा को धता बताते हुए कहती है –''मठों और गुरुओं में उसकी श्रद्धा नहीं है, प्रवचन वह स्वयं ही दे सकती है।'' [2]

हिन्दू शास्त्रों, धर्म ग्रथों में लिखा है –'त्रिया चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं '। यह वाक्य स्त्री जीवन का वृहद् अध्याय है, मगर विचारणीय बात है कि स्त्री का चरित्र नियामक कौन है? फिर स्त्री का वह चरित्र कौन–सा है? जिसका नियंता केवल पुरुष है। इसके व्यापक मानदंड क्या हैं ? पुरुष अपना धन, बल, अधिकार, स्वतंत्रता और कद–काठी को ही तो नहीं मानता कि यही मेरी योग्यता है, जिसके आधार पर स्त्री चरित्र का निर्धारण करता है।

पुरुष अपने आप को इतना शक्तिशाली क्यों मान बैठा है कि वह अपने अस्तित्व के दूसरे तत्व के रूप–स्वरूप और कार्य–शक्ति के संचालन का विभाजन करता है। यह कैसे निर्धारण करता है कि नारी का सबल पक्ष/चरित्र कौन–सा है ? स्त्री के चरित्र निर्धारण के लिए कितनी बार और किस तरह का परीक्षण करता है। परीक्षण के वे कौन से साधन हैं जिन पर चरित्रवान् और चरित्रहीनता का परिमाण/परिमाप किया जा सकता है। यह भी तो आवश्यक है कि इन सबके निर्धारण के लिए परीक्षक को यानि पुरुष को पहले उन मानकों से युक्त होना चाहिए। हमारा समाज कन्या, स्त्री या औरत को कैसा रहना चाहिए या औरत कैसी होना चाहिए का निर्धारण करता है।

''कमर पतली और हाथ मुलायम होना चाहिए। मर्दनुमा औरतें या लड़कियाँ नहीं होती। ''पूर्व में स्त्री अध्याय सीमित था क्योंकि वह अधिकारों से वंचित थीं, मगर अब जागरुक होकर अपने अधिकारों को समझती हुई स्त्री जीवन में नया अध्याय जोड़ने का जोखिम उठाने लगी है। वह, लिखने लगी है स्वयं अपनी पीड़ा का दस्तावेज। वह अपने लिए स्वयं एक शास्त्र लिखना चाहती है, नये सौन्दर्यशास्त्र के साथ।

आज की नारी सभ्य समाज से, प्रबुद्ध वर्ग से पूछ रही है कि हमारे सतीत्व के निर्णायक जरा एकाध पुरुषों के नाम तो बताइये जिसने चरित्र निर्धारण की भट्टी में स्वयं को तपाया हो, गलाया हो अपने अहम् की विशाल शिला को, जिसने बलि दी हो अपने स्वाभिमान की।

कन्या किस प्रकार पितृसत्तत्मक समाज के होते हुए भी मातृकुल की मर्यादा की सतत् संवाहिका बनी रहती है। मातृकुल की मर्यादा का पालन करती है। यह भी कहा जाता है कि कन्या को दोनों कुल की मर्यादा का पालन करना पड़ता है। इस रूप में –

1. *पितृकुल और पति कुल (ससुराल पक्ष)*
2. *पितृकुल और मातृकुल*

ज्यादातर लोगों की यही मान्यता है कि पितृकुल और पतिकुल की मर्यादा ही बेटी के लिए आवश्यक है लेकिन एक सच यह भी है कि पितृकुल और पतिकुल से ज्यादा वह मातृकुल की मर्यादा का पालन करती है। अगर वह मातृकुल की मर्यादा का पालन नहीं करती तो ससुराल में वंश–बेलि का विस्तार कैसे कर पाती ? वंश– बेलि के विस्तार के साथ ही कन्या अपने को अवांछित विस्तार से नहीं रोक पाती। कन्या कहानी की शुरूआत भी यहीं से होती है।

कन्या शैलेष जी की सर्वश्रेष्ठ कहानी है। यह उनके इकतीसवें कहानी संग्रह में संग्राहित प्रथम कहानी है। ऐसा लगता है कि समकालीन गद्य साहित्य में इस कहानी के बिना स्त्री जीवन का सौन्दर्यशास्त्र और इतिहास नहीं लिखा व समझा जा सकता। इतना ही नहीं स्त्री जीवन की समग्रता, व्यापकता और विशालता को नहीं समझा जा सकता। इसके बिना स्त्री जीवन का इतिहास अधूरा ही लिखा जायेगा।

'मिरदुला' कन्या कहानी की प्रमुख चरित्र है। वह गाँव के परिवेश में जन्मी और उसी सामाजिक परिवेश में पली। उसे क्या मालूम था कि कन्या जनम को मनहूसियत भी मानते है और कन्या यानि सुन्दर, सुघड़,सलौने रूप को कहते हैं। कन्या के और भी कई परिभाषा और मायने हैं। कन्या यानि पिता की छाती की दहकती अग्नि जो ब्याह दिये जाने से पहले ठंडी नहीं होती। कन्या यानि सामाजिक उच्च संस्कारों व मर्यादाओं में बँधी एक खूँटी। कन्या यानि अवांछित विस्तार निषेध की मूर्ति तथा कन्या यानि अभिशप्त जीवन जीने वाली स्त्री जीवन की पहली सीढ़ी।

'कन्या' कहानी की मिरदुला भी तो कन्या ही है। भला उसके लिए कन्या जनम वरदान कैसे हो सकता है ? क्योंकि विधाता ने उसे उपरोक्त परिभाषा से अलग थोड़ी गढ़ा है। उसे एक आँख से कानी जो बनाया है, पर दोष तो मिरदुला का है न। एक तो वह कन्या और दूसरा ऊपर से कानी–कुरूप। भला किस माता–पिता को यह चिंता नहीं सताती कि आखिर उसका विवाह कैसे होगा। मिरदुला की माँ स्वयं कहती है –''मैं तुझ कानी कौड़ी को सँभालकर कैसे रख सकूँगी। कहती थी औरत की जात में जहाँ जरा–सा भी खोट हुआ तो उसे कौड़ियों की तरह पासा खेलने वाले बहुत होते हैं, मगर शंखाधार पर शंख की तरह पूजने वाले पुरूष कम होते हैं।''[3] निराला की कविता 'रानी और कानी' में भी अपनी कानी कुरूप चेचक के दाग वाली बेटी की ब्याह की चिंता सताती है, आखिर दामाद खरीदे तो कैसे ?

यहीं से कन्या का अभिशप्त जीवन शुरू होता है, शुरू होता है स्त्री जीवन का संघर्ष यानि स्त्री जीवन का नया अध्याय। कन्या का अभिशप्त जीवन शुरू होता है– मायके से ससुराल पहुँचते ही। अपने को समेटकर रखने से या विस्तार करने से। जैसे ही अपने को अवांछित विस्तार करती है, उसकी जिन्दगी में विष की उत्तल तरंगे हिलोरे मारने लगती है।

मायके में जीवन का उद्गम होता है, मातृकुल की मर्यादा में ढलती है, ग्रहण करती है और फिर वंश वेलि की तरह मातृकुल की मर्यादा का पालन करती है

* सहायक प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)

किन्तु जीवन तो अभिशप्त ही होता है। ऐसा कह सकते हैं कन्या जितना ज्यादा अपना विस्तार करती है, उतना की कष्ट और दु:ख सहने पड़ते हैं। एक साथ ढेर सारी मर्यादाएँ और संस्कार उसे जकड़ लेते हैं। ये ऊँचे- ऊँचे संस्कार नारी जीवन के बंधन हैं जो सदियों तक जकड़े रहते हैं। मरने के बाद भी ये संस्कार और मर्यादाएँ कुल का स्मरण कराती है, चंद्रायणी में इलावती लीलावती से कहती है ''हिन्दू नारी को तो मरे हुए पति के नाम पर भी व्रत-पूजा करने पड़ते हैं।''[4] कन्या कहानी की मिरदुला भी इन्हीं ऊँचे-ऊँचे संस्कारों और मर्यादाओं से जकड़ी हुई है तथा अभिशप्त जीवन बिताती है।

रानी और कानी कोई भी हो औरत के लिए तो मर्यादाएँ ही विशिष्ट होते हैं। कन्या को अपना विस्तार करके किस प्रकार का जीवन जीना पड़ता है एवं किस सीमा तक विस्तार कर जाना पड़ जाता है। देखिए, कन्या कहानी की पंक्तियाँ- ''संन्यासिनों की पाँत में जुड़ने के बाद न जाने कितने तीर्थों और उन तीर्थ यात्राओं की अवधि में न जाने कितने सन्यस्तों, गृहस्थों और अंतत: भिखारियों तक की संगति में एक अपने को फैलाना पड़ा था।''[5] और अगर अपने को विस्तार से रोकना चाहे या समेटकर रख लेना चाहती है तो स्वयं ही निष्कासित हो जाती है।

ससुराल में सिमटकर रहना कन्या के लिए मृत्यु के समान है या मृत्यु -वरण की स्थिति में ही संभव है। ऐसा तीखा कटाक्ष केवल मटियानी की नारी ही कर सकती है- ''और अपने को जहाँ समेटकर रखना संभव है वहाँ से स्वयं ही निष्कासित हो आई थी और परदेश में सिमटकर अपनी मर्यादाओं से बँधकर रह सकना मृत्यु-वरण की स्थिति में ही संभव हो सकता है।''[6]

आज के युग में कन्या के लिए ससुराल परदेश है। परदेश जाना यानी वीजा अवधि तक रह पाना। वीजा अवधि समाप्ति से पूर्व लौट आना पड़ता है अपने देश। मगर, कन्या/औरत के लिए तो यह कहावत है - 'कन्या की पिता के घर से डोली उठती है और पति के घर से अरथी।' ये हमारे सामाजिक उच्च संस्कार और मर्यादाएँ हैं, जिनका स्त्री जीवन भर पालन करती है।

सही मायने में कन्या अपना विस्तार ससुराल में ही करती है लेकिन वही ससुराल उसके लिए वीराना हो जाता है। ''जीने के लिए तो नदी की तरह बहते रहना ही नियति बन गई है''[7] कन्या(औरत)के लिए।

नदी का उद्गम पर्वत शिखरों से होता है ये सभी जानते हैं। जब उद्गम होता है तो उसका आकार छोटा होता है और जब वह मैदानी क्षेत्रों में निकलकर बहने लग जाती है तो नदी का आकार विशाल हो जाता है। ठीक नारी का जीवन भी ऐसी ही है। पहले वह कन्या जो मायके में होती है और फिर जब वह मायके से विदा होकर ससुराल चली जाती है तो वह पत्नी, सास, दादी नानी और औरत के सभी रूपों को प्राप्त कर लेती है अर्थात् अपनी मर्यादा के साथ अपने को विस्तार कर लेती है, लेकिन जीवन तो अभिशप्त ही जीती है।

नारी का जीवन नदी की तरह है। इतनी सँकरी और इतनी बँधी हुई कि जैसे यही उसकी नियति है। 'कन्या' कहानी की मिरदुला और सुन्याल नदी दोनों में समानता है दोनों ही अभिशप्त जीवन जीने को मजबूर हैं। नदी पर्वत से निकलकर समुद्र में विलीन हो जाती है/समर्पण कर देती है एवं पुन: पर्वत की ओर लौटना मुमकिन नहीं होता क्योंकि नदी की धारा ऊँचे से नीचे की ओर अर्थात् सँकरे से विस्तार (फैलाव) हो जाने के कारण ऐसा संभव नहीं होता , ठीक वैसा ही नारी के लिए भी है वह ससुराल को ही समर्पित कर देती है, अपने विस्तार को। अगर जरा मन में विचार आये भी तो ''अपने विराट् पिता के चरणों में क्षुद्र बनकर ही लौटा जा सकता है। इस बोध मात्र से बचपन की सारी स्मृतियाँ उभर आईं थीं। ''[8] परन्तु माता-पिता की प्रतिक्रिया की आशंका बनी रहती है। आशंका इस बात कि उसे स्वीकार करेंगे या नहीं । मिरदुला को श्याम पंडित कहता है कि -''जीवन को मृत्यु के क्षण तक शांत भाव से जीना ही मनुष्य का धर्म है।''[9]

ये सच है कि अपने पीछे जिन्दगी की सार्थकता छोड़ जाना ही जीवन है। कन्या/औरत की सार्थकता उसके विस्तार यानि वंश-बेलि के विस्तार करने की है। जीवन की सार्थकता इस बात में भी है कि -''अपने अस्तित्व के बोध को एक ऐसी गहरी रेखा के रूप में किसी और की धरती पर छोड़ जाने में ही तो मृत्यु की सार्थकता है।''[10]

कन्या सुन्दर, सुघड़ और सुशील हो तो वह सर्वग्राह्य है और अगर वह कानी-कुरूप है और वह मातृ-पितृकुल की मर्यादा को सदा-सदा के लिए ओढ़े रखे फिर भी वह त्याज्य है। कन्या कहानी का रामदत्त पंडित कहता है - ''जिस ब्राह्मण ने मेरी सर्वत्याज्य कन्या को पार्वती की तरह स्वीकार कर लिया, उसके लिए नास्ति मेरे पास नहीं है।''[11]

कन्या जिस घर में आती है उस घर में शिवत्व का वातावरण होता है, पर उस घर को शिव रूप होना चाहिए। कन्या कहानी का मुरलीधर कहता है- ''जो शिव के घर में आ जाए, उसे पार्वती के रूप में ही स्वीकार कर लेना चाहिए।''[12] परन्तु समाज/संस्कार/मर्यादाएँ इतनी छूट कहाँ देते हैं। अगर ऐसा होता तो लांछिता भागीरथी को जब प्रशांत तेजस्विता श्याम पंडित अर्थात् शिव अपने घर ले आते हैं तो लांछिता भागीरथी लांछिता न होकर संपूर्ण संस्कारित समाज उसे पार्वती के रूप में स्वीकार करता है क्योंकि यह संस्कारित समाज/हिन्दूवादी परम्परा को, जो अधिकार था कि वह किसे शिव और किसे पार्वती का दर्जा दे सकता है।

कहावत भी है कि 'अगर अपने घर में कुछ ऊँच-नीच हो जाए तो उसे कुछ ईश्वर की विशेष कृपा या ईश्वर का विशेष अनुग्रह बताकर समाज के पटापेक्ष से ऊपर रखने की रणनीति तैयार कर ली जाती है। इसमें भी कहीं-न-कहीं धन,बल का प्रभाव दिखाई पड़ता है, नहीं तो उच्चवर्णों/जातियों की मर्यादाएँ और संस्कार इतनी छूट नहीं देते है , अगर ऐसा होता तो शिव शक्ति के घर जाकर शिव के रूप में जाना-पहचाना जाना चाहिए, लेकिन ऐसा नहीं होता। यहाँ कहीं-न-कहीं नारी-पुरुष और जाति-पाँति का भूत सवार हो जाता है। बढ़ती हुई खाई कहानी का चारूचंदर पंडित जो शिव रूप है जब शक्ति-रूपा कृष्णा मिरासिन के घर चला जाता है तब तो हिन्दूवादी परंपरा उसे शिव के रूप में अनुमति नहीं देता बल्कि लीलावती चंद्रायणी कराकर चारूचंदर पंडित को शिव रूप में शिव के घर अर्थात् अपने घर जहाँ ऊँचे संस्कार व मर्यादा है वहाँ वापस लाना चाहती है।

स्त्री जीवन का एक महत्वपूर्ण अध्याय यह भी है कि वह दूसरे की विकृति को अपनी विकृति नहीं बनाती। ऐसा करना उसकी प्रकृति के प्रतिकूल है, स्त्री की एक खासियत यह भी है। कन्या कहानी की मिरदुला कहती है - ''कीचड़ को कीचड़ में मिला देने से सिर्फ कीचड़ ही शेष रहती है, मगर नदी की धारा की तरह प्रवहमान बनकर कीचड़ को स्वीकारने से कीचड़ अपने में कहीं भी स्थिर नहीं रहती।''[13]

स्त्री जीवन के नये अध्याय को विशाल और व्यापक बनाता है यह तत्व -औरत का मन, जो विश्वास से परिपूर्ण है। कन्या और नदी में समानता है। दोनों में एक ही प्रवृत्ति होती है। दोनों कीचड़ को ठहरा लेने में विश्वास नहीं करते, वह किसी विकृति को सोचती भी नहीं, जो भी है सब भागीरथ से विस्तार पा लेने में अपनी नियति की पूर्णता पर विश्वास करती है। यह पूरी कहानी मिरदुला के सुन्याल नदी के किनारे आस-पास की विहंगम ऊँची-नीची घाटी, पहाड़ी, खाई और नदी के दोनों किनारे ही औरत मन के विभिन्न रूप हैं। वह सोचती है फिर अपने आप पर डिगने लगती है, वह ईश्वर से किसी

अनर्थ के न होने की आशंका से बचने की प्रार्थना करती है। अज्ञेय की कविता 'नदी के द्वीप' में कोई भी रेत नहीं बनना चाहता क्योंकि रेत बन जाना यानि बह जाना अर्थात् जीवन का अस्तित्व समाप्त हो जाना। कन्या की मिरदुला भी बहना चाहती है नदी की तरह। अपनी पितृकल और मातृकुल की सीमा रेखा में बँधकर। वह इसी रूप में दोनों किनारों को यानि दोनों कुल की मर्यादा को सींचती रहती है, पालन करती रहती है अपनी प्रकृति के अनुरूप। यह भी उसके जीवन का बुनियादी आयाम है।

एक आँख कानी यानि मन की क्षीण ज्योति। हो सकता है यह मिरदुला के गाँव को पूर्ण रूप से न देखने के कारण क्योंकि ''पूरा गाँव कभी मिरदुला को दिखाई नहीं दिया था। मगर....''[14] या अपने अंदर से पूर्णता की कमी के कारण या फिर किसी औरों की विकृति को अपनी विकृति न बनाने के कारण ही उसे कानी आँख का दर्जा दिया गया हो। हो सकता है कि पूर्ण नारीत्व के न होने के कारण भी इस प्रकार का नाम मिरदुला को दिया गया हो। कानी होना यानि लालसा की उत्कृष्ट प्रबलता की कमी या आत्मा का कुंठापन जो जरूरत भर भी नहीं देख पाती। कन्या की ज्योति का क्षीण होना या सोचने-विचारने की शक्ति से अपूर्णता को ही समाज कानी कहता हो।

समाज की दृष्टि में औरत के विचारों के कोई मायने न होना भी उसके कानी होने का संकेत है। भले ही वह समाज एवं परिवार की समृद्धि और विकास के लिए सोचती हो, पति और परिवार कल्याण से युक्त विचार हों, पर पुरुष की दृष्टि में सेवा-सुश्रुषा करने वालों के विचारों में तनिक भर भी विश्वास न करने की परम्परा ने उसे विचार शून्य की श्रेणी में रखा हो। हो सकता है समाज इसलिए कन्या को कानी कहता हो।

औरत के लिए तो ''जितनी अनजानी पगडंडी तब, उससे अजाना अपना भविष्य था।''[15] तथा ''एक क्षीण ज्योति रेखा जो आँखों में है, इसे ईश्वर ने संभवत: इसीलिए शेष भी रख छोड़ा है कि जैसे नदी की रेखा अपने आस-पास की धरती सींचती चली जाती है, ठीक वैसे ही अपनी इस क्षीण दृष्टि के दायरे में आने वालों की सेवा मिरदुला भी करती चली जाए।''[16]

एक तो यह कि औरत की दोनों आँख सलामत होने पर भी वह कानी से कोई कम नहीं होती क्योंकि उसको सारी जिंदगी तो पुरुष की आँख से ही काम चलाना पड़ता है। मन और इच्छा को भी पुरुष के अनुरूप चलाना पड़ता है। कानी होने की वेदना भी मिरदुला को सालता है तभी तो वह कहती है - ''कितने ही ऐसे जन्मांधों को मिरदुला ने देखा था, जो अपनी लाठी के सहारे मिरदुला से भी कहीं अधिक सुगमता से यात्रा कर लेते थे।''[17]

औरत के जिंदा होने की पहली शर्त होती है संघर्ष। कन्या उम्र भर अपनत्व खोजती है। ''यह खोज के अमूमन उस घर में करती है जहाँ उनका बचपन, किशोरावस्था, विद्यार्थी जीवन बीता।''[18] किन्तु उसे वहाँ भी नहीं मिलता तो ससुराल में कैसे उम्मीद कर सकती है।

आज की स्त्री को ''गृहस्थी में समस्त ऊर्जा खपाने के बाद भी अर्थदेय उपलब्धियाँ उन्हें थकाती नहीं, राहत देती हैं महामानवी का युगों से खाली पड़ा सिंहासन इन औरतों ने हथिया लिया है।''[19] यही उपलब्धि आज के स्त्री जीवन का नवीन अध्याय है।

स्त्री जीवन के कई महत्वपूर्ण अध्याय हैं। उसमें एक नया अध्याय जोड़ा जा सकता है उसका अपना विस्तार, क्योंकि जब वह अनुकूल होती है तब भी अपना विस्तार करती है और अनुकूल नहीं हो पाती तब भी अवांछित विस्तार करना ही उसके जीवन की मजबूरी होती है। कन्या तो ससुराल में भी कन्या ही रहती है। यह बात जरूर अजीब सी लगती है कि कन्या ससुराल में कैसे? पर सब जानते हैं कि कन्या की पिता के घर से डोली उठती है और ससुराल से अरथी। इस रूप में ससुराल में भी वह कन्या ही रहती है।

अब नारी सोच के सब मायने पार कर चुकी है। वह जिंदगी को अपनी तरह से जीना चाहती है। वह उस खुलेपन की खोज कर रही है, जहाँ उसका किया गया कृत्य अमर्यादित न हो। कन्या कहानी का एक-एक अक्षर कई प्रतिध्वनि के सहित स्त्री जीवन की विश्वास की कहानी है। आज कन्या (स्त्री) जिन्दगी को पूरे सौन्दर्य के साथ जी लेना चाहती है। वह दुनिया के रस्म-रिवाज व मर्यादाओं के दूषित वातावरण से दूर जिन्दगी के रिश्ते एक-एक बूँद को प्रवाहमय बनाकर। जिंदगी जीने की बेकरारी ने ही कन्या को प्रवाहमय बनाया है। उसके लिए जिंदगी के वही शाश्वत क्षण हैं। यही उसके जीवन का नवीन अध्याय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. *प्रकाश, अलका : नारी चेतना के आयाम, लोक भारती प्रकाशन, 15-ए महात्मागांधी मार्ग, इलाहाबाद- 1, संस्करण-2007, पृ. 10*
2. *यादव, राजेन्द्र : हंस, मई-2007, पृ. 26*
3. *मटियानी, शैलेष : कन्या तथा अन्य कहानियाँ, प्रतिभा प्रतिष्ठान् 1661, दखनीराय स्ट्रीट, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली- 110002, संस्करण-2011, पृ. 11*
4. *वही- 153*
5. *वही-9*
6. *वही-9*
7. *वही-9*
8. *वही- 10*
9. *वही- 11*
10. *वही- 12*
11. *वही- 13*
12. *वही- 13*
13. *वही- 13*
14. *वही- 15*
15. *वही- 15*
16. *वही- 15*
17. *वही- 16*
18. *सिंह, सुकदेव : संवेद, जन-फरवरी-2003, पृ. 43*
19. *वही-44*

****

''प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक कालगणना का विश्लेषण''

डॉ. नितिन सहारिया * डॉ. सुरेश कुमार विमल **

प्रस्तावना–

इस सृष्टि की उत्पत्ति कब हुई तथा यह सृष्टि कब तक रहेगी ये प्रश्न मानव मन को युगों से मथते रहें हैं। इनका उत्तर पाने के लिये सबसे पहले काल (ज्पउम) को समझना पड़ेगा। काल जिसके द्वारा हम घटनाओं–परिवर्तनों को नापते हैं कब से प्रारम्भ हुआ ? भारत वर्ष में ग्रहीय गतियों का सूक्ष्म अध्ययन करने की परम्परा रही है तथा काल गणना पृथ्वी, चन्द्र, सूर्य की गति के आधार पर होती रही है। काल की विभिन्न इकाईयाँ, पश्चिमी और भारतीय काल गणना का संक्षिप्त विश्लेषण करने का इस शोध पत्र में विनम्र प्रयास किया गया है।

उद्देश्य

- भारत वर्ष की प्राचीन वैज्ञानिक काल गणना का विश्लेषणात्मक अध्ययन।
- भारतीय मनीषा (प्रज्ञा) का पश्चिमी वैज्ञानिक जगत से तुलनात्मक अध्ययन।
- भारत के गौरवर्षाली अतीत की विश्व मानव के समक्ष एक संक्षिप्त प्रस्तुति।
- देश के प्रबुद्ध वर्ग को भारतीय इतिहास को ग्लानि व आत्मनिन्दा की दृष्टि से देखने की हीन भावना (आत्मविस्मृति) से बाहर निकालना।

लेख

काल ही सबसे बलवान है। मनुष्य एवं संपूर्ण जड़ चेतनमय जगत सभी काल सीमा की डोर से बंधे हुए हैं। पुराणो में ये उल्लेख है कि ब्रह्मा ने कृत (सतयुग), त्रेता, द्वापर, और कलि आदि युगों का निर्माण किया। सबसे पहले कल्प के आदि में कृत (सतयुग) युग बनाया। कृत युग में ध्यान, त्रैता में ज्ञान द्वापर में यज्ञ और कलि में दान का महत्व है। अत: कृत में सतोगुण, त्रेता में रजोगुण, द्वापर में रजोगुण और तमोगुण तथा कलि में केवल तमोगुण प्रधान है। भागवत पुराण में धर्म के चार चरण – सत्य, दया, तप, और दान माने गये हैं, उसी तरह अधर्म के चार चरण – असत्य, हिंसा, असंतोष और कलह कहे गए हैं। महाभारत, मनुस्मृति, पुराणो में यह माना गया है कि सतयुग में धर्म चारो पादों में विद्यमान रहता है। और अधर्म चर्तुथांश मात्र रहता है। त्रेता में धर्म तीन चरणो में और अधर्म दो पादों में स्थित रहता है, द्वापर में धर्म दो चरणो में तथा अधर्म तीन चरणो में स्थिर रहता है। कलयुग में अधर्म चारो चरणो में तथा धर्म का चर्तुथांश मात्र शेष रहता है।

आधुनिक काल के प्रख्यात ब्रह्मांड वैज्ञानिक स्टीफन हॉकिन्स ने अपनी पुस्तक ''दा ब्राईफ हिस्ट्री ऑफ टाईम'' (समय का संक्षिप्त इतिहास) में वे लिखते है कि सृष्टि और समय एक साथ प्रारंभ हुए जब ब्रह्मांड उत्पत्ति का कारण भूत घटना आदिद्रव्य में बिग बैंग (महाविस्फोट) हुआ और इस विस्फोट के साथ ही अव्यक्त अवस्था से ब्रह्मांड व्यक्त अवस्था में आने लगा, इसी के साथ समय भी उत्पन्न हुआ। अत: सृष्टि और समय एक साथ प्रारंभ हुए। और जब तक सृष्टि रहेगी तब तक समय भी रहेगा। सृष्टि के पूर्व क्या था ? के उत्तर में हाकिन्स कहते है कि वह आज अज्ञात है। पर इसे जानने का एक साधन हो सकता है कोई तारा जब मरता है तो उसका ईधन प्रकाश और उर्जा के रूप में समाप्त होने लगता है। तब वह सिकुडने लगता है, और एक बिन्दु भर रह जाता है। उस समय उसमें इतनी गुरूत्वाकर्षण शक्ति होती है कि वह प्रकाश को भी सोख लेता है और इस तरह वहाँ क्या है जाना नहीं जा सकता। प्रकाश के अभाव को अंधकार कहते हैं। शायद इसी लिए ऐसे क्षेत्रो को ब्लैकहोल कहते हैं, एव ब्रह्मांड भी उत्पत्ति के पूर्व ऐसी अवस्था में रहा होगा।

भारत वर्ष में ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में सृष्टि उत्पत्ति के पूर्व की स्थिति का वर्णन करते हुए कहा गया है कि–तब न सत् था ना असत् था, न परमाणु था न आकाश, तब न मृत्यु थी, न अमृत्व था, न दिन था, न रात थी, उस समय स्पन्दन शक्ति युक्त वह एक तत्व था। सृष्टि पूर्व अंधकार से अंधकार ढका हुआ था और तप की शक्ति से युक्त एक तत्व था। सर्व प्रथम इच्छा शक्ति के प्रभाव से वह साम्यावस्था टूटी और अव्यक्त अवस्था से ब्रह्मांड की उत्पत्ति प्रारंभ हुई। इसके साथ ही काल की भी यात्रा प्रारंभ हुई। इस प्रकार काल व सृष्टि की यात्रा साथ साथ चलती है। भारत वर्ष के ऋषियो ने काल की परिभाषा करते हुए कहा है' कलयति सर्वाणि भूतानि' जो संपूर्ण ब्रह्मांड को, सृष्टि को खा जाता है। यह ब्रह्मांड एक बार बना और नष्ट हुआ, ऐसा नहीं होता। अपितु उत्पत्ति और लय पुन: उत्पत्ति और लय यह चक्र चलता रहता है। सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति, परिवर्तन और लय के रूप में विराट कालचक्र चल रहा है।

श्रीमद् भागवत में प्रसंग आता है कि जब राजा पारिक्षित महामुनी सुखदेव से पूछते हैं कि काल क्या है ? इसके उत्तर में ऋषि कहते हैं कि–विषयो का रूपांतरण (बदलना) ही काल का आकार है। उसी को निमित्त बना वह काल तत्व अपने को अभिव्यक्त करता है। वह अव्यक्त से व्यक्त होता है। इस काल का सूक्ष्मतम अंश परमाणु है तथा महत्तम अंश ब्रम्ह आयु है, सुखमुनी की गणना अनुसार एक दिन रात में 3280500000 परमाणु का होता है। तथा एक दिन रात में 86400 सेकेंड होते है। इसका अर्थ सूक्ष्मतम माप यानि एक परमाणु काल बराबर एक सेंकेड का 37968 वां हिस्सा।

2 परमाणु	–	1 अणु	15 लघु	–	1 नाड़िका
3 अणु	–	1 त्रसरेणु	2 नाड़िका	–	1 मुहूर्त
3 त्रसरेणु	–	1 त्रुटि	30 मुहूर्त	–	1 दिन रात
100 त्रुटि	–	1 वेध	7 दिन रात	–	1 सप्ताह
3 वेध	–	1 लव	2 सप्ताह	–	1 पक्ष
3 लव	–	1 निमेष	2 पक्ष	–	1 मास
3 निमेष	–	1 क्षण	2 मास	–	1 ऋतु
5 क्षण	–	1 काष्ठा	3 ऋतु	–	1 अयन
15 काष्ठा	–	1 लघु	2 अयन	–	1 वर्ष

भारतीय सृष्टि सिंद्धात के अनुसार विश्व व्यवस्था चक्रांन्तर्गत चक्रो में चलती है। इसमें एक सहस्र महायुगो के चक्र चलते है। एक महायुग (चर्तुयुगी) में चार युग होते है। और एक सहस्र महायुग में 71 मनवन्तर। देवो का एक दिन अर्थात पृथ्वी के 365 दिवस के एक मानव वर्ष के बराबर होता है। एक देव वर्ष 360 मानव वर्षो के बराबर होता है।

एक कल्प यानि चार अरब बत्तीस करोड मानव वर्ष का ब्रह्मा का एक दिन होता है, उतनी बडी ही उनकी रात अत: ब्रह्मा का एक दिन होता है, उतनी बडी ही उनकी रात अत: ब्रह्मा का अहोरात्र यानि 864 करोड मानव वर्ष हुआ।

इसी प्रकार ब्रह्मा का वर्ष यानि 31 खरब 10 अरब 40 करोड मानव वर्ष हुआ। ब्रह्मा की 100 वर्ष की आयु अथवा ब्रह्मांड की आयु – 31 नील 10 खरब 40 अरब वर्ष हुई। इस प्रकार 100 वर्ष तक एक ब्रह्मा की आयु और जब

* अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय कोतमा (अनूपपुर) (म.प्र.) ** अतिथि विद्वान, शा. महाविद्यालय भैंसादेही (बैतूल) (म.प्र.)

एक ब्रह्मा मरता है, तो भगवान विष्णु का एक निमेष (आंख की पलक झपकने में लगने वाला समय) होता है। और विष्णु के बाद रूद्र का काल आरम्भ होता है, जो स्वयं कालरूप है, और अनन्त है, इसीलिए कहा जाता है कि काल अनन्त है।

वर्तमान कलयुग के बारे में प्रसिद्ध खगोलवेत्त बेली का कथन द्रष्टव्य है- हिन्दुओ की खगोलीय गणना के अनुसार विश्व का वर्तमान समय कलयुग का आरंभ ईसा के जन्म के 3102 वर्ष के पूर्व 20 फरवरी को 2 बज कर 27 मिनट तथा 30 सेकण्ड पर हुआ था इस प्रकार यह कालगणना मिनट तथा सेकण्ड तक की गई। कलयुग के समय सभी गृह एक ही राशि में थे, तथा पंचाग या टेबल यही बताते हैं, ब्रम्हणो द्वारा की गई गणना हमारे खगोलीय टेबल द्वारा पूर्णत: प्रमाणित होती है। इसका कारण कोई और नहीं अपितु गृहो के प्रत्यक्ष निरीक्षण के कारण यह सामान्य परिणाम निकला है। ''वैदिक ऋषियो के अनुसार वर्तमान सृष्टि पंचमण्डल क्रम वाली है। चन्द्र मण्डल, पृथ्वी मण्डल, सूर्य मण्डल, परमेष्ठी मण्डल, स्वयं भू मण्डल। उत्तरोत्तर मण्डल एक दूसरे का चक्कर लगा रहे हैं। आकाश गंगा अपने से ऊपर वाली आकाश गंगा का चक्कर लगा रही है।

इस काल को कल्प कहा गया है। याने ब्रह्मा का दिन चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष का हुआ। ब्रह्मा का वर्ष याने इक्तीस खरब दस अरब चालीस करोड़ वर्ष। अत: ब्रह्माड़ की आयु इक्तीस नील दस खरब चालीस अरब वर्ष हुई। भारतीय मनीशा की इस गणना को देखकर प्रसिद्ध ब्रह्मांण्ड वैज्ञानिक कार्ल सेगन ने अपनी पुस्तक 'कॉसमस' में कहा-''विश्व में हिन्दू धर्म एक मात्र ऐसा धर्म है जो इस विश्वास पर समर्पित है कि इस ब्रह्माण्ड में उत्पत्ति और लय की एक सतत् प्रक्रिया चल रही है। और यही एक धर्म है। जिसने समय के सूक्ष्मतम से लेकर व्रहतम माप जो सामान्य दिनरात से लेकर 8 अरब 64 करोड़ वर्ष के ब्रह्मा के दिन रात की गणना की है। जो संयोग से आधुनिक खगोलीय मापो के निकट है। यह गणना पृथ्वी व सूर्य की उम्र से भी अधिक है। तथा इनके पास और भी लम्बी गणना के माप हैं''

''प्रसिद्ध वैज्ञानिक अलवर्ट आईंसटीन ने अपने सापेक्षता सिंद्धात में दिक् व काल की सापेक्षता प्रतिपादित करते हुए कहा कि- ''विभिन्न ग्रहों पर समय की अवधारणा भिन्न-भिन्न होती है। काल का संबंध ग्रहो की गति से होता है। इस प्रकार अलग-अलग ग्रहो पर समय का माप भिन्न रहता है। समय छोटा-बडा रहता है'' इसकी जानकारी के संकेत हमारे ग्रंथों में मिलते है। पुराणो में कथा आती है कि-रैबतक राजा की पुत्री रेवती बहुत लम्बी थी, अत: इसके अनुकूल वर नहीं मिलता था। इसके समाधान हेतु राजा योग बल से अपनी पुत्री को लेकर ब्रम्हलोक गये, वे जब वहां पहुचे, तब वहां गंधर्व गान चल रहा था। अत: वे कुछ क्षण रूके। जब गान पूरा हुआ, तो ब्रह्मा ने राजा को देखा और पूछा कैसे आना हुआ ? राजा ने कहा मेरी पुत्री के लिए आपने किसी वर को पैदा किया है या नहीं ?

ब्रह्मा जोर से हंसे और कहा जितनी देर तुमने यहाँ गान सुना, उतने समय में पृथ्वी पर 27 चर्तुयुगी बीत चुकी है। और 28 वां द्वापर समाप्त होने वाला है। तुम वहां जाओ और कृष्ण के भाई बलराम से इसका विवाह कर देना साथ ही उन्होने कहा कि यह अच्छा हुआ कि रेवती को तुम अपने साथ लेकर आए। इस कारण इसकी उम्र नहीं बढ़ी।

यह कथा पृथ्वी से ब्रम्हलोक तक विशिष्ट गति से जाने पर समय के अन्तर को बताती है। आधुनिक वैज्ञानिको ने भी कहा कि यदि एक व्यक्ति प्रकाश की गति से कुछ कम गति से चलने वाले यान में बैठ कर जाए तो उसके शरीर के अंदर परिवर्तन की प्रक्रिया प्राय:स्तब्ध हो जायेगी। यदि एक 10 वर्ष का व्यक्ति ऐसे यान में बैठकर देवयानि आकाश गंगा (एन्ड्रोमीडा ग्लैक्सी) की ओर जाकर वापस आये तो उसकी उम्र में केवल 56 वर्ष बढेगें। किन्तु उस अवधि में पृथ्वी पर 40 लाख वर्ष बीत गये होंगे। योग वशिष्ठ ग्रंथ में योग साधना से समय में पीछे जाना और पूर्व जन्मो का अनुभव तथा भविष्य में जाने के अनेक वर्णन मिलते है। अत: भारतीय वैज्ञानिक कालगणनाएँ विश्व के वैज्ञानिको के लिए आश्चर्य का विषय बनी हुई हैं। साथ ही भारतीय मनीशा की प्रज्ञा का अखिल विश्व को ज्ञान कराती हुई भारत के '' विश्वगुरू '' कहलाने का संदेश देती हैं।

- कलियुग 1200 देव वर्ष गुणित 360 मानव वर्ष- **432000 वर्ष का होता है।**
- एक द्वापर युग, 2400 देव वर्ष/2 कलियुग - ***864000 वर्ष***
- एक त्रेतायुग, 3600 देव वर्ष/3 कलयुग- ***1296000 वर्ष***
- एक सत्युग, 4800 देव वर्ष/4 कलयुग- ***1728000 वर्ष***
- चारों युगों की एक चतुर्यगी (महायुग) अर्थात 12000 देव वर्ष- ***4320000 मानव वर्ष***
- 71 चर्तुयुगी (महायुगो) का एक मनवन्तर - ***306720000 मानव वर्ष***
- 14 मनवन्तर तथा सध्यांष के 15 सत्युग का एक कल्प- ***4320000000 मानव वर्ष***

निष्कर्ष

काल ही सबसे बलवान है सम्पूर्ण जड़ चेतनमय जगत सभी काल सीमा की डोर से बंधे हुये हैं। सृष्टि और समय एक साथ प्रारम्भ हुये। विषयों का रूपान्तरण (बदलना) ही काल का आकार है। काल का सूक्ष्मतम अंश परमाणु तथा महत्तम अंश ब्रम्हआयु है। भारतीय सृष्टि सिद्धांत के अनुसार विश्व व्यवस्था चक्रान्तर्गत चक्रों में चलती है विश्व प्रसिद्ध खगोलवेत्ता 'बेली' भारतीय काल गणना का पश्चिमी जगत् से तुलनात्मक अध्ययन व प्रमाणिकता सिद्ध करते हैं। वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंसटीन के दिक व काल की सापेक्षता का प्रतिपादन का साम्य पुराणों के कथानक द्वारा सत्य प्रतीत होता है। अत: भारतीय काल गणना विश्व के वैज्ञानिकों के लिये न केवल आश्चर्य का विषय है वरन भारतीय मनीशा (प्रज्ञा) का अखिल विश्व को ज्ञान कराती हुई यह सिद्ध करती है कि प्रचीनकाल में भारत मात्र धर्म, दर्शन के क्षेत्र में ही नहीं अपितु विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में भी अग्रणी था। इतना ही नहीं तो हमारें पूर्वजों ने विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय किया था।

संदर्भ ग्रन्थ

1) डॉ. वासुदेव पोद्दार - विश्व की कालयात्रा,पृ.14, प्रकाशन-आ.भा.इ.स. योजना, नई दिल्ली, वर्ष 2008
2) डॉ. रवि प्रकाश आर्य-भारतीय कालगणना का वैज्ञानिक व वैश्विक स्वरूप, पृ.8, 48
3) कार्ल सेगन - कॉसमोस - पृ.214,वेलेन्टाईन बुक्स, न्यूयार्क 1980
4) आर्थर सी. क्लार्क - मेन एण्ड स्पेस, पृ.166, लाइफ सांईस लाईब्रेरी 1965
5) सुरेश सोनी - भारत में विज्ञान की उज्जवल परंम्परा, पृ. 81-93, अर्चना प्रकाशन भोपाल, 2008
6) श्रीमद् भागवत् पुराण - महर्षि वेद ब्यास, गीता प्रेस गोरखपुर उ.प्र.
7) डॉ. वी.जी. नायक- विज्ञान अध्यातमना मार्गे, पृ.40
8) अखण्ड ज्योति - पत्रिका, संपादक-डॉ. प्रणव पंडया, घियामंडी मथुरा, पृ. 13-15, जुलाई 2012

चन्द्रकान्त देवताले की कविताएँ : सिसकियों का अनुनाद

उमेश कुमार चरपे *

चन्द्रकान्त देवताले हमारे समय के विशिष्ट कवि है। इतने लम्बे कवि जीवन के बाद जीवन के उत्तरार्द्ध में जो चन्द्रकान्त देवताले ,एकदम युवतम कवियों के बीच चुनौती बनकर खडे है । उनके बारे में विष्णु खरे ने ठीक ही कहा था '' चन्द्रकान्त व्यापक और प्रतिबध्द अर्थो में, इस देश के कठिन समय में अपनी निजी, पारिवारिक और सामाजिक जिन्दगी , भारतीय समाज के अपने विडम्बनात्मक जीवन तथा उसमे अपनी और किसी प्रकार संघर्ष कर रहे अन्य असंख्य लोगों की तनावपूर्ण जिजीविशा के कवि है, मानव जीवन के साथ चन्द्रकान्त की कविता का रिश्ता ,सुख-दुख के संगाती का , जागरूकता तथा ऐन्द्रियता का है।''[1]

''हिन्दी के इकलौते ऐसे कवि है जो वर्षो से लेखन कार्य कर रहे है वे कहते है सौ जासूस मरते होगे तब एक कवि पैदा होता है। मेरे जैसे के भीतर कभी कविता का कारखाना बंद नहीं हो सकता मै पूरे वक्त का कवि हूँ।'' चन्द्रकान्त देवताले का जन्म 07 नवंबर 1936 को ग्राम जौलखेडा ,जिला बैतूल म.प्र. में हुआ। अभी तक तेरह काव्य संग्रह प्रकाशित हो चूके है- हडिडयों में छिपा ज्वर 1973, दीवारों पर खून से 1975, लकडबग्घा हँस रहा है 1980, रोशनी के मैदान की तरफ 1982, हर चीज आग में बतायी गयी थी 1987, बदला बेहद महँगा सौदा 1995 , पत्थर की बेंच 1996, इतनी पत्थर रोशनी 2002 , उजाड में सग्रहालय 2003, पत्थर फेंक रहा हूँ 2011।

देवताले जी को अनेक अलंकरणों से सम्मानित किया गया है। 2012 में 'पत्थर फेंक रहा हूँ ' पर साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ है। उनकी रचनाओं का अनेक भारतीय और देशी भाषाओं में अनुवाद हुआ है। देवताले जी हिन्दी के उन दूर्लभ कवियों में से है उन्हें सम्मानित करने से अकादमिया स्वयं सम्मानित हो जाती है। चन्द्रकान्त देवताले वर्तमान हिन्दी कविता का संवेदनशील स्वर है जिसे मानवीय सरोकारों को अपनी कविता में लिखा है। कविता में कवि का होना उसकी भाषा से महसूस किया जाता है। चन्द्रकान्त देवताले महान कवि इसलिए बने हुए है, कि उन्होने अपनी काव्य भाषा अर्जित की है। उनकी निजता के कारण उनकी रचना में मौजूदगी का एहसास होता है''2 जैसे उनकी ''माँ पर नहीं लिख सकता कविता'' मे-

माँ के लिए सम्भव नहीं होगी मुझसे कविता
अमर चिउँटियों का एक दस्ता मेरे मस्तिष्क में रेंगता रहता है
माँ वहाँ हर रोज़ चुटकी. ??.चुटकी आटा डाल देती है
मैं जब भी सोचना शुरू करता हूँ
यह किस तरह होता होगा

चन्द्रकान्त देवताले निरन्तर भयभीत और तनावग्रस्त कवि है। उनका भय और तनाव वैयक्तिक नहीं है। वे उस मनुष्य के लिए भयभीत दिखते है,जो निरंतर संघर्षो और अभावों के बीच अपनी जिजीविर्षा को बचाए हुए है। जो इन तमाम अभावों और कष्टों के बावजूद अभी तक अपनी आदमीयत को बचा ले गया है। लेकिन कब तक बचा पायेगा, इस शाही हाड़ तोडती दिनचर्या में 'कवि इसी भय और तनाव के बीच सवाले करता है-

'' वे कौन सी चीज है
जो आदमी को आदमी नहीं रहने देती
क्यों आदमी आदमी नहीं रह पाता
ये कौन सी चीज है और किनके पास
और क्यों सिर्फ उन्हीं के पास
जो आदमी को उसकी जडों से काटकर
कुछ और बना देती है। ''

आदमी को आदमी नहीं रहने देने वाली इन्हीं चीजों की पड़ताल करना ही चन्द्रकान्त देवताले की कविता की मुख्य प्रतिज्ञा है। उन्हें मालूम भी है कि ,'' जो गाड़ कर रखता है खजाना/वही रचता है कहानी सॉप की ।'' वे लकडबग्घे की हंसी को पहचान गए है। और आगाह कर रहे है --

''ये तीमारदार नही
हत्यारे है और वह आवाज
खाने की मेज पर
बच्चों की नहीं
लकड़बग्घे की हंसी है .. ''।

यथास्थितिवाद उन्हें विचलित करता है। वे उन लोगों को फटकारते हैं, जो इतने जुल्मों को सहने के बाद भी उस छली और क्रूर जनगणमन अधिनायक की लगातार आरती उतारते रहते है। 'पंत पेशवा शहर में आ रहा है' कविता में अत्यधिक नाराजगी में वह अपनी ही बिरादरी के धकियाये और लतिआये हुए लोगों पर खीझते हुए व्यंग्य करते है -

'' पेट पर लात मारने वाला
बस्ती में आ रहा है
उसके लिए स्वागत द्धार बनाने में जुट जाओ
लतिआये हुए लोगो
तुम्हारी उदारता दर्ज की जायेगी इतिहास में।''

वे खीझते इसलिए है क्योंकि जानते है कि ये सताये हुए लोग लगातार इसी स्थिति में रहने के आदि होते जा रहे हैं। जबकि ''अपनी छिपी हुई ताकत के साथ /उठ खड़े होंगे जिस दिन ये सब / इन ऑधियों की तरह/ टूट कर गिरेगी पराये समय की घडिया/ षिखरों से। ''. कवि सिर्फ पर उपदेश - कुशल ही नहीं है। वे खुद इस लड़ाई में शामिल होते है, सबकी तरफ से । वे चाहते है -

''मै बनूं / अफवाहों के स्याह बीहड़ में
ऑधी की हथेली पर का चिराग
मेरे भीतर के माइक्रोवेव टावर की आत्मा से
टकराने दो असंख्य पहाड़ो को कॅपाती ध्वनियाँ"

कविता देवताले जी का अस्त्र है। दुनिया की तमाम क्रूरताओ और दुखों के खिलाफ लड़ाई में - कविता, बच्चे और स्त्री - कवि की ताकत है। सब कुछ निराश कर देने वाले के बावजूद, जब कवि कहता है, '' और आपके हाथों में/ यह एक छोटी सी शीशी / कविता के अर्क वाली ''तो वह इस छोटे से दिखने वाले अस्त्र की खिल्ली नहीं उडा रहा होता, बल्कि बडी चतुरता से कविता की ताकत से चेतावनी दे रहा है। कवि का दूसरा अस्त्र है - नन्हें नन्हें बच्चे। 'थोडे से बच्चे और बाकी बच्चे' बहुत मार्मिक कविता है। दुनिया डर के तमाम वंचित और कुपोषण के शिकार बच्चों की चिन्ता कवि करता है। वह देखता है कि '' असंख्य बच्चों के लिए / कीचड धूल और गंदगी से पटी/ गलियां है जिनमें वे /अपना भविष्य बीन रहे है/ इस कविता में कवि अपनी छटपटाहट और संवेदना के उस चरम पर जा पहुंचता है, जहां पर पहुंचना हर किसी के वर्ष की बात नहीं है। और इस चरम पर पहुंचने के बाद चीखें बन्द हो जाती है और शुरू होती है ललकार ! लेकिन कवि सोचता है- '' पर वे शायद अभी जानते नहीं/ वे पृथ्वी के बाशिन्दे है करोडों / और उनके पास आवाजों का महासागर है/ जो छोटे से गुब्बारे की तरह / फोड़ सकता है किसी भी वक्त/ ॲधेरे के सबसे बड़े बोगदे को ''।

चन्द्रकांत देवताले शायद स्त्री पर सबसे ज्यादा कविताएँ लिखने वाले कवि है, और शायद स्त्री पर सबसे ज्यादा बेबाकी, जिम्मेदारी और अंतरंगता से लिखने वाले कवि भी। जीवन को सबसे ज्यादा प्रभावित करने वाली शै पर , सबसे ज्यादा कविताएँ हों,यह स्वाभावित ही है। लेकिन देवताले जी के लिए स्त्री निजी और एकान्तिक आनंद की चीज नहीं है। वे स्त्री के सामाजिक सरोकारों और इस

* शोधार्थी (हिन्दी) बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

दुनिया के लिए उसकी अनिवार्य जरूरत को प्रतिष्ठित करते है। वे न सिर्फ अपनी व्यक्तिगत लड़ाईयों में स्त्री का साथ लेते है, बल्कि समस्त मानव जाति को बचाने के लिए किए जा रहे अपने संघर्ष में, ऊष्मा और ऊर्जा स्त्री से ही लेते है। इनकी कविता में स्त्री अनेक रूपों में आती है। वह पत्नी है, प्रेमिका है, माँ है, और अपने स्व की तलाश करती स्त्री है। देवताले जी की कविताओं में स्त्री , कवि को परिवार, समाज, देश और वृहत्तर संसार से एक आत्मीय, जिम्मेदारी और संवेदनशील रिश्ता कायम करने में एक कड़ी की तरह मदद करती है। कवि स्त्री के साथ अपने संबंधों को संकोचहीन होकर, बल्कि गर्व के साथ बताता है।

दाम्पत्य जीवन की बेबाक अभिव्यक्तियाँ तथा पत्नी को साथी की तरह निरूपित करती कविताएँ 'तुम' , 'उसके सपने', ' शब्दों की पवित्रता के बारे में ', ' महाबलीपुरम' हिन्दी कविता में विरली है। पत्नी से साथी की तरह संवाद करती ऐसी ही सुन्दर कविताएँ केदारनाथ अग्रवाल के यहाँ मिलती है। समुद्र के पास पत्नी की स्मृति कवि को अकेला नहीं होने देती। और उसकी स्मृति का साथ पाकर कवि इतना समृध्द होता हुआ कि समुद्र उसे अकेला लगने लगता है ' वे कविताएँ हैं जहाँ वह स्त्री मौजूद है, जो साथ नहीं है। लेकिन जिसके होने ने कवि को उदात्त और मानवीय बनाया । इस स्त्री में प्रेम , कवि को बॉधता नहीं ,मुक्त करता है . उन असंख्य लोगों के लिए , जिनको कवि की जरूरत है।

कवि जानता है कि '' तुम मेरी आधी रात का सूर्योदय / तुमसे मै आग/ फफोले उमचाता शब्द/ मुझसे तुम ऑख / जिससे हम देखते सपने . ''। यह सपना कवि पूरी दुनिया के लिए देखता है।

चन्द्रकांत देवताले की कविताओं में एक स्त्री वह आती है जो समूची स्त्री जाति की प्रतिनिधि है। यह स्त्री अपनी तमाम सामाजिक विडंबनाओं ,अपनी तमाम जकडनों , तथा दुखों के साथ आती है। लेकिन यह स्त्री , पुरूष के लिए बेहद जरूरी और उसे बेहतर मनुष्य बनाती हुई आती है। कवि ''आकाश में इतने ऊपर कभी नहीं उड़ा/ कि स्त्री दिखाई ही न दे/ '' कवि की डोर हमेशा किसी हाथ में रही और ''प्रेम करती हुई औरत के बाद भी अगर कोई दुनिया है'' तो उस वक्त वह कवि की नहीं है उस इलाके में कवि ''सांस तक नहीं ले सकता , जिसमें औरत की गंध वर्जित है।''

''समकालीन काव्य की प्रकृति के इस निरूपण में हमारी भी सहमति है। जो नयी कविता के कीर्तिमान स्तम्भ है जैसे श्रीकांत वर्मा, केदार नाथ सिंह, रघुवीर सहाय, सर्वेष्वर दयाल आदि। इन कवियों के सिवा अनेक युवा पीढी के कवियों ने नयी कविता से भिन्न न होकर भी अधिक ताजी, उत्तेजक और पम्परा से हटकर रचनाऐं दी है। इन कवियों में कमलेश, धूमिल, दूधनाथसिंह ,ऋतुराज, सौमित्र मोहन, विनोद कुमार शुक्ल, श्रीराम शर्मा, विष्णुखरे, प्रयाग शुक्ल , मणिमधुकर , नीलाम , जगदीश चतुर्वेदी , चन्द्रकान्त देवताले, स्नेहमयी चौधरी कान्ता आदि के नाम विशेष महत्वपूर्ण है।''[3]

देवताले की कविता से उस आदमी को अपना पन महसूस होता है जो साधारण लेकिन संवेदनशील है मूल्यों के प्रति आस्थावान है यह कवि कबीर और मुक्तिबोध की परम्परा का कवि है जिसमें कवि और मनुष्य में फाक नहीं होती । कविता धन्धा नहीं होता और कविता पेशा नही। मुक्तिबोध का भाष्यकार बनते हुए अनुकरण नहीं अनुसरण किया । विष्णु खरे कहते है–अपनी झटपटाती हुई जागरूकता में तंत्र के सारे मानव षडयंत्र को समझने में संकल्प में चन्द्रकान्त की कविताऐं वैसी ही लगती है जैसे मुक्तिबोध आज जीवित होते तो लिखते बोध और देवताले दोनों यर्थाथ की जटिलताओं को व्यक्त करने के लिए फैन्टेसी से काम लेते है लेकिन दोनों में फर्क है। देवताले की फैन्टेसी में उग्रता , दहशत ,भय, अंधकार नहीं है। मानवीय प्रेम और उष्मा है उन्होनें जीने के मानवीय धनात्मक पक्ष को पूर्ण ढंग से व्यक्त किया है।[4] ''अन्तिम प्रेम'' कविता से –

हर कुछ कभी न कभी सुन्दर हो जाता है
बसन्त और हमारे बीच अब बेमाप फासला है
तुम पतझड़ के उस पेड़ की तरह सुन्दर हो
जो बिना पछतावे के पत्तियों को विदा कर चुका है

उनकी कविता की जडें गॉव कस्बों , मध्यम वर्ग के जीवन में है। उसमें मानव जीवन की विविधता और विडम्बनाओं के साथ उपस्थित हुआ है कविता में जहां व्यवस्था के खिलाफ गुस्सा है वही मानवीय प्रेम भी है अपनी बात सीधे और मानक ढंग से कहते है। अनेक चित्र कविता के माध्यम से उपस्थित करते है कि वे चित्र मस्तिष्क पर अमिट छाप छोड़ जाते है।

कई कविता में देवताले जी ने अपने निजी और व्यक्तिगत अनुभव व्यक्त किये है। चन्द्रकान्त देवताले के पसंदीदा रूपको में नीबू, पेंड, अंधेरा, आकाश, पहाड, चाकू, पत्थर है । '' आग'' कविता में –

पैदा हुआ जिस आग से
खा जाऐगी एक दिन वहीं मुझको
आग का स्वाद ही तो
कविता, प्रेम, जीवन संघर्ष समूचा
और मृत्यु का प्रवेश द्धार भी जिस पर लिखा

आधुनिक युगबोध सहज भाषा की तलाश नए मानव मूल्य, यथार्थ की अभिव्यंजना ,मानवीय उपस्थिति आदि के प्रति देवताले अधिक जाग्रत है। समकालीन कविता के माध्यम से इन स्वरों की गौण विवृत्ति हुई थी इसलिए साठ के बाद की कविता को उसके विकास का अलग चरण मानना अधिक श्रेयस्कर होगा। मुक्तिबोध में जो असंतोष, अस्वीकृति और विद्रोहस्वर विभिन्न माध्यमों से अभिव्यक्त हुआ था वह आज भी है ,अंतर केवल इतना है कि इसकी तीक्ष्णता अधिक एवं विद्रोह की भूमि पर प्रस्तुत हुई है। पीडा –युगीन पीडा का बोध नयी कविता में अधिक रहा है परन्तु वह ऐसे विद्रोह पर नही आई कि उसमें कविगण समस्त अवांछित को त्याग कर नव निर्माण में आस्था व्यक्त करे। नयी कविता में संक्रांति जन्य संत्रास , यातना ,टूटन द्विधा की अनुभूति अधिक है।

युवा पीढी का विद्रोह वास्तव में विवेकपूर्ण अधिक है इसीलिए वह व्यक्ति मन को अराजकतापूर्ण प्रतिक्रिया न होकर समाज सापेक्ष है। इसमें न तो राजकमल चौधरी का स्तर है और न केशरीप्रसाद चौरसिया जैसे कवियों का वर्ण्य । देवताले की भाषा का अपना सौन्दर्य है । वे कल्पनाशीलता से युक्त एक यथार्थ कवि है, इसलिए साधारण जीवन का यथार्थ चित्रण ही कविता में उनका मुख्य लक्ष्य था। असली चीज जीवन यथार्थ है। वे यथार्थ के चित्रांकन के लिये सिर्फ यथार्थ रंगों की खोज की बात ही नहीं करते वे विभिन्न रंगों के मिश्रण से और नए रंग बनाने की बात भी कहते है।[5]

जिसकी ऑखो से ओझल नहीं हो रहे खण्डहर
समय के पंखों को नोंच
अपने अकेलेपन को तब्दील कर रही जो पतझर में
बिन दर्पण कुतर रही अपनी ही परछाई
घर के फाटक पर चस्पा कर दी सूचना
''यहाँ कोई नहीं रहता ''

देवताले जी के अन्त: बाह्य संघर्ष का दृश्य उनका साहित्य है। उनकी कविताऐं उनकी जिन्दगी का एक्सरे है और उनकी जिन्दगी कविताओं की अविस्मरणीय संदर्भ संकेतीक के व्यापक जीवन दर्शन का सजीव चित्रांकन उनकी काव्य भूमि पर स्पष्ट हुआ है–

''मै रास्ते भूलता हूँ
और इसीलिए नए रास्ते मिलते है
मै अपनी नींद से निकल कर प्रवेश करता हूँ किसी और की नींद में
इस तरह पुनर्जन्म होता रहता है ''

चन्द्रकान्त देवताले कई पीढियों के बीच लगातार लिख रहे है। और न सिर्फ लिख रहे है , बल्कि उस समय का प्रतिनिधि कवि होकर लोगों के बीच सम्मान प्राप्त कर रहे है। उनकी कवताओं वेदना छलकती है। उनकी रचनाओं को बडे ही चाव से पढा जा रहा है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. विमलेन्दु द्धिवेदी – सिसकियों का अनुनाद चन्द्रकान्त देवताले की कविताऐं – इंटरनेट से
2. डॉ के.आर. मगरदे – चन्द्रकान्त देवताले परिचय– आकाशवाणी बैतूल से
3. डॉ भागीरथ मिश्र – आधुनिक हिन्दी काव्य– पृ क्र. 602
4. डॉ के.आर. मगरदे – चन्द्रकान्त देवताले परिचय– आकाशवाणी बैतूल से
5. डॉ भागीरथ मिश्र – आधुनिक हिन्दी काव्य – पृ क्र. 603

****

'' भिलाली सामाजिक लोकगीतों की उपादेयता ''
(धार जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. के.एस. बघेल *

विशिष्ट आदिम जनजातियों में भारत की प्राचीनतम धरती पर मध्यप्रदेश के धार जिले में निवासरत भिलाला जनजाति है। भिलालो की बोली भिलाली है।

मानव समाज में स्त्री पुरुष दो ईकाइयाँ है। इन दो इकाइयो से मिलकर एक परिवार और परिवारों से मिलकर समाज की रचना होती है। भिलाला समाज में भी स्त्री -पुरुष की दो इकाइयों से परिवार , परिवार से कुल और कुल से समाज बनता है।

भिलाला हिन्दू धर्म की ही एक इकाई है। अत: इनमें पाये जाने वाले सम्बन्ध और रिश्ते हिन्दू समाज के समान है। मनुष्य समाज में रहकर ही सामाजिक बनता है। उसे समाज के सभी नियमों का पालन करना पडता है , क्योंकि उसकी सामाजिक आवश्यकताओ की पूर्ति समाज में ही सम्भव है। इसलिए भिलालों मे भी उनके सामाजिक सम्बन्धो से स्नेह और प्रेम भाव बहता रहता है, जो अनुकरणीय है। उनके सामाजिक सम्बन्धों जैसे माता-पिता ,भाई - बहन , पति-पत्नी , समधि - समधन , मित्र -साथी आदि सब आपस में एक मिलकर रिश्तों को बनाते हैं ये इन रिश्तों के अनुकूल बोलते और निभाते है। इतना ही नही बल्कि खुशी के समय रिश्तों को गाकर भी व्यक्त करते हैं। गीत परिवार तक सीमित नही होते हैं बल्कि पूरे समाज मे गाये जाते हैं। इसलिए इन्हें सामाजिक गीत कहा जाता है।

सामाजिक गीतो मे जहाँ आपसी रिश्तों को पहचान मिलती है, वही दूसरी ओर उस समाज मे व्याप्त सभ्यता , संस्कृति और वैचारिकता भी दिखाई देती है। ये सब रिश्ते ,प्रेम और स्नेह पर आधारित होते हैं। इनमें एक सहज भाव होता है जो हृदय से निकलता है। भिलालों के लोकगीतों में जहाँ पति-पत्नी के मध्य प्रेम की नोंक-झोक है, वहीं भाभी और नंनद में आपसी टकराव है । जहाँ नये वर-वधू के प्रति व्यंग्य भाव है, वही जेठ जेठानी, जेठानी - देवरानी और भाभी - देवर के आपसी संबंधों में एक मनोवैज्ञानिक भाव का आन्तरिक एहसास ।

भिलाला स्त्रियाँ अपनी चंचलता , सुन्दरता और श्रम के लिये विख्यात है। वह हृदय से बहुत कोमल है। यद्यपि वे शिक्षा और आधुनिकता से बहुत दूर है। वे परम्परा में जीती है। इसलिये उसका परिधान और श्रृंगार सीमित है। वह अपने मन में पवित्रता और पूर्ण शुद्धता का भाव लिए रहती है। । उसमें शहरी चंचलता ,छिछोरापन अभी नही आया है । उसमें प्रेम, ममता , करुणा , दया और कर्तव्य परायणता झलकती है। इसलिये उसके चेहरे पर वह भोलापन दिखाई देता है, , जो एक कर्तव्य परायण नारी के मुख पर दिखाई देता है। इसी भोलेपन से वह अपने परम्परागत गीतों मे उन सब बातों को कहती है, जो आज की आधुनिक संस्कार में लिपटी नारी नहीं कह सकती है।

भिलालों के सामाजिक गीतों मे सास - ससुर - बहू , ननद -भाभी , जेठानी -देवरानी आदि की जो प्रेम अभिव्यक्ति मिलती है, वे अन्य समाज के लोक गीतों मे शायद ही मिलें भिलालों के प्रकृति के गोद में रहने के कारण उनके गीतों मे भी प्रकृति की चंचलता और निश्चलता दिखाई देती है।

भिलालों मे पुरुष और स्त्री की जीवन शैली मे भिन्न्ता लिए होने के बावजूद दोनों में एक समरुपता दिखाई देती है। भिलाला पुरुषों के साथ स्त्रियाँ उसी तरह से चलती है जैसे - राम के साथ सीता । दोनों के जीवन मे समान मौज - मस्ती , सुख-दुख सहने की क्षमता है। इसलिए स्त्री पुरुषों के युगल गीतों मे वह नैसर्गिक प्रेम मिलता है, जो रीति कालीन स्वच्छन्द कविता मे मिलता है।

स्त्रियों के वैयक्तिक लोकगीतों के साथ - साथ पुरुषों के भी वैयक्तिक लोकगीत पाये जाते है। पुरुष अपना मस्ती भरा जीवन जीने का आदी है, इसलिए उनके गीतों में जहाँ एक ओर दारु - ताड़ी की मादकता है तो वही दूसरी ओर नारी सौन्दर्य और नारी चाहत के प्रति ''मोहनी '' सी रुझान भी है। इसी कारण पुरुष स्वयं कभी अकेला गाता है, तो कभी समूह रुप में कभी वह गीतो के राग रंग मे इतना डूब जाता है कि उसे रात -दिन का एहसास ही नही होता है। पुरुषों के वैयक्तिक गीतों मे सामाजिक संबंध भी दृष्टिगोचर होते है, जिनमें हास - परिहास आदि का सहज भाव मिलता है।

पति-पत्नी का रिश्ता सभी रिश्तो में अत्यन्त महत्वपुर्ण है। इस रिश्ते की नींव विश्वास और सहयोग के आधार पर बनी होती है। पति-पत्नी का यह पवित्र रिश्ता उनके लोकगीतों मे दिखाई देता है।

ताँबा की हाण्डी गरम मेल्यो पाणी
तुम नवण बठोत हाउ पीठ घसूँगा
खाटला बिछाया मन गोदडा बिछाया
तुम सोवण करेतोत हाउ पाय दाबूँगा
संग चलूँगा रे संगात चलुँगा
मारा भोला सायब जी तारा संग चलूँगा
दाल भी रांधी मन रोटा भी करया
तुम खावण बठोत हाउ पंखो झलूँगा

इस गीत में पत्नी का अपने पति के प्रति प्रेम और समर्पण स्नेह झलक रहा है ताँबे के घड़े में गरम पानी किया है और तुम नहाओगे तो तुम्हे नहला दूँगी , पीठ घीस कर मेल निकाल दूँगी । खटिया बिछाकर मैने बिस्तर लगाया है। तुम जब सोओगे तो मैं तुम्हारे पैर दबाउँगी । मैं तुम्हारे साथ -साथ उस राह पर चलूँगी , जिस राह पर तुम चलोगे । सुख में दु:ख में हर पल तुम्हारे साथ ही रहूँगी । मेरे भोले साजन मैं हमेशा तुम्हारे साथ चलूँगी । मैने दाल भी बनाई और रोटी भी बनाई है। तुम जब खाना खाओगे तो मै पंखे से हवा दूँगी ।पति - पत्नी का यह समर्पण भी आज के पति - पत्नी के लिए भी प्रासंगिक है।

नंनद भाभी का रिश्ता प्यारा और तानाकशी का रिश्ता होता है। इन दोनों में होने वाली साठ-गाँठ , मेल -मिलाप और आपसी टकराव किसी से छिपी नही है। भिलालों में भाभी के आगमन की जितनी खुशी ननद व्यक्त करती है। अन्य कोई महिला नही । भिलालों मे ननद भाभी के संबंधो पर

* प्राध्यापक हिन्दी, शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

आधारित सामूहिक ओर व्यक्तिक दोनों प्रकार के गीत पाये जाते हैं।

फटी – फटी पर झेण्डो लगाडी दिस
भाभी तुसे इन्दुर बताड़ी दिस ,
मटर पर झेण्डो लगाडी दिस
भाभी तुसे बम्बई बताडी दिस ।

इस गीत मे ननद अपनी भाभी से कह रही है कि भाभी तुम मुझे (अपनी ननंद को) नही जानती हो कि वो तुम्हें कितना प्यार करती है। मै अपनी मोटर साईकिल पर झण्डा (स्वयं के परिवार के उपनाम का बेनर) लगा दूँगी फिर तुम्हें इन्दौर घुमाउँगी। मै अपनी बस (मोटर) पर झण्डा लगा दूंगी फिर बाम्बें घुमने लेकर जाउँगी।

भिलाली लोकगीतों में वैश्वीकरण के युग में भी ननद भाभी के प्रेम और स्नेह के गीत में उपदेयता दिखाई देती है।

प्राचीन काल में भिलाला जातियों मे संयुक्त परिवार प्रथा थी, परंतु वर्तमान में बहु अपने सास – ससुर के पास बहुत कम समय के लिए रहती है फिर भी उनके प्रति एक आत्मीय भाव रहता है। बहु अपने सास ससुर का विशेष ख्याल रखती है। भिलाली गीतों में जहाँ सास ससुर के संबंध में गीत गाये जाते हैं वही अनेक व्यगात्मक गीत भी गाये जाते हैं।

आल्लु नी साखे राँधी वे मेते गरमे – गरमे
पुरी बणाई वे मेते नरमे – नरमे
सेसराजी के जीमाड़ो मिसे काई नी सरमें
आल्लु नी साखे राँधी वो मेते गरमे – गरमे
सासु जी के जीमाड़ो मिसे काई नी सरमें ।

इस गीत में बहू कहती है आलू की सब्जी बनाई है गरम – गरम पूरी बनाई । अगर मैं यह खाना मेरे ससुर जी को खिलाउँ तो मुझे क्यो शर्म आयेगी। मेरा तो नाम उँचा होगा कि उनकी बहु ने उनके लिये विशेष भोजन बनाया है और में यह भोजन मेरी सास जी को भी खिलाउँगी।

भिलालों में देरानी – जेठानी के संबंधों में मधुरता और स्नेह का भाव होता है वैसे ही देवर भाभी के गीतों में भी स्नेह ओर प्रेम का संबंध रहता है। खेत में काम कर रहे देवर को देखकर भाभी गीत गाती है।

काटा नू भीड़ी पर नानू देवर रडे .
मा रड़े रे नाना देवर जुड़ी लाड़ी लावे ।

खेत में कार्यरत देवर को देख भाभी गीत गाती है कि काटा के भीडी (ढेर) मे छुपकर देवर रो रहा है भाभी उसे (देवर) कहती है अरे देवर ! तुम मत रोवो तेरे लिए जोड़ी (दो) लाड़ी (दुल्हन) लाऊँगी। इस गीत में देवर भाभी के स्नेह ओर प्रेम की प्रासंगीकता को दर्शाया गया है। इसी प्रकर भिलाला समाज में सामाजिक सबंधो के अनेक गीत गाये जाते हैं। जो कि समाज के लिए प्रेरणाश्रोत और प्रासंगिक है।

सामाजिक लोकगीतों में मे पारिवारिक रिश्तों की महत्व है। इसमें पति–पत्नी, माता–पिता , भाई–बहन , सास – ससुर , जेठानी – देवरानी आदि के रिश्तों की सुन्दर विवेचना है जो कि प्रत्येक समाज के लिए अनुकरणीय है। अधिकांश परिवार और समाज मे विघटन की परिस्थितियाँ निर्मित हुई है। वे भी इनके पारिवारिक समर्पण से प्रेरणा ले सकते हैं । भिलाली लोकगीतों में आपसी भाईचारा लोक समर्पण ,दया ,प्रेम ,स्नेह ,करुणा के भाव प्रदर्शित हैं । अत: मिलालों के सामाजिक लोकगीतों की उपादेयता दृष्टिगोचर होती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. *उपाध्याय – रामनारायण – निमाडी और उसका लोकसाहित्य*
2. *उपाध्याय – रामनारायण – निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास*
3. *पाटिल – अशोक डी – भील जन जीवन और संस्कृति*
4. *मिश्र – डॉ. भागीरथ–कबीर बानी*
5. *डॉ. सक्सेना – भारतीय समाज तथा सामाजिक संस्थाएँ*
6. *डॉ.सत्येन्द्र – ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन*
7. *हंस – डॉ.कृष्णलाल : निमाडी और उसका साहित्य*

****

स्त्री से मनुष्य बनती सौगंधी

डॉ. विनीता रघुवंशी *

सआदत हसन मंटो की शताब्दी का ये साल। उनके लेखन पर उठते बहुत से सवाल ।मंटो की कहानियाँ अश्लील हैं ।वह जमाने की स्याही को अपनी कलम से उजागर करता है ।जब मंटो अपने जमाने की हकीकत बयान करने लगते हैं तो उनके पात्र माहौल का ऐसा मंजर हमारे सामने उजागर करते है कि आत्मा तक के रोंगटे खडे हो जाते हैं ।मंटो जब रचना लिख रहे थे उस समय देश के हालात बहुत संकटग्रस्त थे ।यूरोप में दो विश्वयुद्ध लडे जा चुके थे ।उनके दुष्प्रभाव हमारा देश झेल रहा था ।

बर्मा भूटान तिब्बत नेपाल जापान के रहवासी युद्ध की विभीषिका के कारण शरणार्थी बने भारत के विभिन्न हिस्सों में बस गये । यह बसाहट बंगाल के आसपास पंजाब उत्तर प्रदेश आदि स्थानों पर खूब हुई । मंटो की रचनात्मक दुनिया और शरदचंद्र की रचनात्मक दुनिया में एक समानता मिलती हैं ।मंटो रचनावली दस्तावेज के पहले भाग के पहले हिस्से पाताल में जिस प्रकार के पाताल में रहने वाले मनुष्यों की तकलीफे, सुख-दुख, इच्छाएँ, लोभ, द्वेष हिंसा-प्रतिहिंसा का लेखा-जोखा मिलता है ।

ये एक सीमित दुनिया के रहवासी है ।यहाँ वे स्त्रियाँ है जो युद्ध और विभाजन के कारण अपने परिवारों से बिछुड गई है ।उनके संस्कार पूरी तरह घरेलू हैं। किन्तु अपने जीवन को रक्षित करने के लिये वे अपने तन का सौदा करने को मजबूर होती हैं । यही उनका पाताल है । इसी तरह की पाताल वासिनी स्त्रियाँ शरदचंद्र के साहित्य में भी मिलती हैं। विभाजन की पीडा सबसे ज्यादा बंगाल और उत्तर भारत ने ही झेली इसलिये जो स्त्रियाँ दुर्भाग्यवर्ष अपने परिजनों से अलग हो गई वे दलाल के हाथों बंधक हो गईं। उनका दैहिक शोषण हुआ । वे पशु की तरह खरीदी-बेची गई ।

पुरूषों के आजीविका के साधन भी युद्ध और विभाजन की घटनाओं के कारण छिन गये । इस अस्थिरता ने उन्हें मूल्यों से रहित होने के लिये विवश कर दिया । इस तरह अस्थिरता ओर विचलन ने उन्हें नैतिक मूल्यों के बंधनों से गिर कर पाताल के वासी बनें । मंटो इन्हीं पाताल में रहकर जीवन गुजर बसर करने वाले पात्रों को उठा उठाकर हमसे रूबरू कराते है । इनके स्त्री पात्र स्वयं अपनी निरीहता और मासूमियत का बयान करते मिलते हैं। मंटो अपने पाताल वासिनियों का खुलासा करते हुए कहते हैं कि हर औरत वेश्या नहीं होती लेकिन हर वेश्या औरत होती है ।

मेरे ख्याल से हर वैश्या इन्सान होती है इसलिये उसका मूल्य चुकाना उसकी कीमत लगाना यह इन्सानी समुदाय के लिये कलंक ही हैं। पाताल के अंधेरों में घिरे ये पात्र छूटे हुए हैं अपनों से विभाजन की विभीषिका में बहुत सी स्त्रियाँ बस अड्डों, रेलवे स्टेशनों, धर्मशालाओं, शरणार्थी शिविरों, घरों में छूटी रह गई । परिवार के लोग अपने प्राण बचा कर भाग लिये ।ये घर आँगन से बिछुडी हुई औरतें अपने खोये हुए प्रेमी और पति को खोये हुए पिता और भाई को, खोयी हुई माँ बहनों को या गोद से छूटे हुए अपने बेटे-बेटी को खोजती हुई किसी छलभरी हमदर्दी का शिकार हो गई ।

ये बुरी औरतें झूठे दिलासे, झूठे वादों, झूठे प्यार भरे शब्दों की बंधक बनी पाताल के अंधेरों में गहरे डूब चुकी है ।नर्क से भी बदतर हालातों से गुजरकर उन्हें सहकर भी यदि वे जिन्दा हैं तो बस इसलिये कि आत्मीयों से मिलने की उम्मीद उनके मन में बची हैं। वे जानती है कि इस दुनियावी पाताल से उनका मुकाबला आसान नहीं हैं ।सारा जहान उनकी जिस्मानी वजूद से तवक्को रखता हैं। उनके तन का मोल है मन की दुनिया से किसी का कोई लेना देना नहीं ।

मंटो इस मन की दुनिया से अपनी संवेदना के तार जोडते हैं ।उनका संज्ञान इन अंधेरों में खोये हुए बुरे लोगों बुरी औरतों के आसपास ही घूमता हैं । मंटो उनके दिल से अपने दिल के तार जोडते हैं । वे अपनी कहानियों से, अपने अफसानों से, व्यवस्था को या व्यवस्था में घुटते दबे कुचले लोगों को सुधारने की कोशिश नहीं करते ।वे जो हैं । जहाँ कमियाँ हैं । उन्हें अपनी कलम से उजागर करते हैं । मंटो को पढ़ते हुए ऐसा अहसास होता है कि स्त्री के लिये सारा जमाना ग्राहक और सारा जमाना उसका दलाल हैं। वह एक पशु है और उसके आसपास पाश्विक स्थितियाँ जिनके बीच सहमी हुई वह साँस लेती है।

मंटो की लाइसेंस कहानी की नीति हिम्मत करके ताँगा चलाना चाहती है।वह नगर परिषद से इसके लिये लाइसेंस की माँग करती है तो नगरपरिषद उसे जिस्मफरोशी का लाइसेंस देती हैं । यह है व्यवस्था के अंधेरे । मंटो की ही दूसरी कहानी '' बर्मी लड़की'' है जो बंबई जैसे शहर में रहकर अपने घर लौटने के लिये पैसों का इन्तजाम करने के लिये तन का सौदा करती हैं । जिसके साथ रहती है उसके लिये बडी जिम्मेदारी से सुबह का नाश्ता तैयार करती है ।यह घरेलूपन ग्राहक को विस्मित करने वाला है ।जैसे ही उसके पास पर्याप्त पैसे होते है वह ग्राहक को बिना बताये चली जाती हैं।

फोभाबाई का सारा भटकाव अपने लाल की खोज से जुडा हुआ है ।वह जमाने की ठोकरों को सहती हुई भी अपने लाल को भुला नहीं पातीं । उसे पाँच रूपयों की जरूरत है नशे के इंजेक्शन के लिये । लाल को खोजते खोजते वह खुद जमाने की पशुता में गुम हो चुकी हैं । सौ कैंडल पावर का बल्ब कहानी मर्द की क्रूरता का पक्का सबूत है ।एक अनजान पुरूष की हमदर्दी भरी बातों का भरोसा करके उसके चंगुल में फंसी एक अजनबी औरत पुरूष की आजीविका का साधन बन जाती है ।इस साधन का पुरूष मशीनीकरण कर देता है ।व्यवस्था की पाश्विकता की सभी सीमायें इस कहानी में टूटती हैं । अन्त में स्त्री अपने मशीनीकरण से उबकर उस पुरूष का सर पत्थर से कुचलकर चैन से मुँह ढंककर सोती हैं।

'हतक' मंटो की सर्वश्रेष्ठ कहानी हैं ।सौगंधी भी पातालवासिनी हैं ।उसकी गुजर बसर का साधन भी तन ही है ।पाताल के अंधेरों में अपनी अस्मिता तलाश करती सौगंधी के रातदिन भी अन्य स्त्रियों की तरह ही गुजरते हैं ।वह भी मर्दो के लिये अपनेआप को सजाती हैं । वह पेशेवर हैं ।

पेशे से जुडी चालाकियों को खूब जानती है । सौगंधी के माध्यम से मंटो एक ऐसा स्त्री विमर्श पाठक के सामने रखते है कि आज तक स्त्री के पक्ष में इस तरह का विमर्श प्रस्तुत नहीं किया गया ।हतक कहानी की सौगंधी इसलिये खास नहीं है कि वह एक पेशेवर स्त्री है वह खास इसलिये है कि सौगंधी दिमाग में ज्यादा रहती थी लेकिन ज्यों ही कोई नर्मो-नाजुक बात कोई कोमल बोल उससे कहता तो झट पिघलकर वह अपने जिस्म के दूसरे हिस्सों में फैल जातीय मर्द और औरत के जिस्मानी मिलाप को उसका दिमाग बिलकुल

* प्राध्यापक, हिन्दी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)

फजूल समझता था। रात वह एक झूठ सुनकर शुरू करती सौगंधी मैं तुझसे प्रेम करता हूँ। प्रेम कितना सुंदर बोल है। सौगंधी प्रेम करना चाहती है। वह यह भी जानती है कि सौगंधी तुमसे जमाने ने अच्छा सुलूक नहीं किया।

इन पाँच बरसों में वह चार मर्दो से अपना प्रेम निबाह ही तो रही है।सौगंधी का ये अक्स पूरा नहीं है।पूरा अक्स तो रामलाल दलाल के लाये ग्राहक सेठ की उँहू से उभरता है।रात के दो बजे जब वह उसके मुँह पर टार्च की तेज रोशनी डालकर ग्राहक सेठ उसे ऊँहू करके इंकार कर देता हैं।सेठ की ऊँहू उसे अपना तिरस्कार लगती है। यहीं से सौगंधी का आत्मसम्मान जागृत होता हैं। वह उन तमाम साँचों से वाकिफ है जो एक इंसान को औरत में बदलते हैं।वह सेठ के द्वारा ठुकराये जाने पर अपने आप को दिलासा देती है कि उसने अपने को सेठ ग्राहक के लिये नहीं सजाया।

सजना तो उसकी आदत ही हैं।यह है पहला साँचा।जहाँ से वह उपभोग की वस्तु में तबदील होने लगती हैं।उसे शर्मिंदगी महसूस होती है यह सोचकर कि उसने अपने आप को सजाया पसंद कराने के वास्ते।यह अहसास ही उसे अन्य स्त्रियों से अलग करता है। यह शर्म का महसूस होना ही उसके भीतर एक चेतना की चिंगारी पैदा करता हैं।जहाँ से उसके अंदर अपने लिये सवाल उठते हैं। बहुत से ग्राहक उसे पसंद नहीं आते पर सोगंधी ने उन्हें कभी ठुकराया नहीं।कभी दुत्कारा नहीं।वह अपने सामने अपने से एक सवाल करती है।मुझमें क्या बुराई है¨ यह सवाल हर स्त्री को अपने आप से पूछना चाहिये।स्त्रियाँ क्यों चाहती है कि कोई उनकी तारीफ करे।कोई उसकी ताईद करे .....कोई .....कोई।यह एक और साँचा है जो स्त्री को गढता हैं।यह गढनां ही मनुष्य की श्रेणी से उसे बाहर निकाल देना है।उसके जीवन का लक्ष्य है मर्दो की पसंद के अनुकूल अपने आप को साँचे में ढालना।यह ढल जाना ही उसके अच्छे होने की ताईद है।उसके खूबसूरती का सबूत है।

सौगंधी के अंदर जो खलबली इस वाकये से पैदा हुई वह इतनी आसानी से बुझने वाली नहीं।सौगंधी के भीतर पैदा हुई तडप उसमें मनुष्य रूपी विमर्श की आग को जला देती है। स्त्री की बेहतरी से जुडे बहुत से सवाल इस कहानी के माध्यम से मंटो उठाते हैं। ये सिर्फ सवाल ही नहीं हैं।ये स्त्री को मनुष्य का दर्जा दिये जाने की वकालत भी है। जिस गुस्से को सौगंधी बरसों से अपने भीतर सहेजे हुए थीं।अपने से बुरा सलूक करने वाले जमाने का गुस्सा। वही सब गुस्सा उस ग्राहक सेठ के बहाने सौगंधी के दिलों दिमाग से बाहर आ जाता है।वह अपने गुस्से का इजहार दीवार पर लगी मुनसिपाल्टी के दारोगा की तस्वीर को कील सहित खींचकर उखाडती हैं।जो अपने मन का सुकून सौगंधी में पाता है किन्तु अपनी पत्नी के प्रेम से बंधा हुआ है।

दूसरी तस्वीर एक भौंडी शकल वाले की है।और तीसरी तस्वीर किसी पगडी वाले की।वह इन तस्वीरों को अपने कमरे की खिडकी से बाहर सडक पर कचरे की तरह फेंकती है। यह तस्वीरों को इस बेरहमी से फेंकना मामूली बात नहीं। सौगंधी का यह गुस्सा भी मामूली नहीं।वह इन तस्वीरों के बहाने उन चौखटों पर भी अपना गुस्सा जाहिर कर रही है जो स्त्री को मनुष्य बनने से रोकते हैं।चौथी तस्वीर माधो की है जो सौगंधी से लुभावनी बातें करता है।ऐसी बातें जो सौगंधी को अपने हक में लगती हैं।जो उसके मन को भाती है।पर हर बार ठगी तो सौगंधी ही जाती है।

यह अपने आसपास के भ्रमों को तोड फेंकने का साहस सौगंधी के भीतर अपनी हतक से होता है।यह उसकी बेइज्जती नहीं।यह तो स्त्री के दायरों से निकलकर मनुष्य की श्रेणी में पहुँचने का रास्ता है।एक झूठी व्यवस्था के नकार की शुरूआत हैं।सौगंधी जानती हैकि वह जिस व्यवस्था का हिस्सा है वह खारिशजदा हैं।उसे ही गले लगाना होगा।केवल गुस्सा करने से हकीकत नहीं बदलती। मंटो हतक के अंत में सौगंधी की खारिशजदा कुतिया को हवाले की तरह बताते हैं जो कोई और नहीं रोगग्रस्त सामाजिक व्यवस्था ही है।जो युगों से स्त्री को मनुष्य बनने से रोकती रही हैं।

औरत जन्म तो मनुष्य का ही लेती है किन्तु व्यवस्था उसे औरत में बदल देती हैं। मंटो अपनी कहानियों से पाताल के गर्त के अंधेरों की स्याही में गुम मनुष्य और मनुष्यता को उघाडते हैं।इस पाताल में मनुष्य की आकृतियाँ ही शेष हैं।व्यवस्था जन्य अंधेरे ज्यादा घने हैं।

मंटो का परिचय

उर्दू साहित्य के प्रसिध्द कहानीकार सआदत हसन मंटो की शताब्दी की शुरूआत सन 2012. 13में मनाई जा रही है। सआदत हसन मंटो का जन्म 11 मई 1912 को समराला जिला लुधियाना में हुआ। इनके पिता का नाम मियाँ गुलाम हसन था। ये मुंसिफ के पद पर कार्यरत थे। इनकी माँ का नाम सरदार बेगम था।ये गुलाम हसन साहब की दूसरी पत्नी थी। मंटो की शुरूआती शिक्षा अमृतसर में हुई। इसके बाद अलीगढ विश्वविद्यालय से लौटकर पत्रकारिता को अपने रोजगार के रूप में अपनाया।यहाँ से प्रतिदिन प्रकाशित होने वाले अखबार मुसावात से संबद्ध हो गये।

कुछ दिनों बाद अमृतसर से लाहौर चले गये और वहाँ लाला करमचंद के साप्ताहिक पत्र पारस में काम करने लगे।इसी समय लाहौर में रहते हुए हुमायूँ का फ्रांसीसी अनुवाद और आलमगीर का रूसी तर्जुमा तैयार किया।यहीं रहकर उन्होंने आस्कर वाईल्ड के प्रतिबंधित नाटक वीरा का उर्दू रूपान्तरण किया। रूसी साहित्य का उर्दू में इतनी तेजी से अनुवाद किया कि साहित्य जगत में उन्हें रूसी भाषा का माहिर माना जाने लगा। इसके बाद वे बंबई चले गये। बंबई में रहते हुए भी मुसावात अखबार का संपादन करते रहे। इसके साथ ही बंबई में इंपीरियल फिल्म कंपनी से भी जुड गये।

बंबई की फिल्म कंपनी से जी उचटा तो आल इंडिया रेडियो देहली चले गये।यहाँ रहते हुए उन्होंने बहुत सारे ड्रामे और रेडियो फीचर लिखे। इसके बाद फिर बंबई चले गये। इस समय देश में आजादी और विभाजन का माहौल बना हुआ था। विभाजन के उस दौर में मंटो लाहौर चले गये। मंटो की सारी उम्र सुकून की तलाश में संघर्ष और जददोजहद करते गुजरी। 18 जनवरी 1955 को उनकी मृत्यु हो गयी। सआदत हसन मंटो के समग्र साहित्य को शरदद्त और बलराज मेनरा के संपादन संचयन के सहयोग द्वारा दस्तावेज के पाँच खण्ड में संकलित किया गया।

शोध सार

मैंने मंटो की रचनायें यों तो बहुत सी पढ़ी थीं। यहाँ वहाँ पत्र पत्रिकाओं में पाठयक्रमों में संकलित। किन्तु मन में विचार आया की क्यों न मंटो की सभी रचनाओं को पढ़ा जाये। बस विचार को हकीकत में भी बदल डाला। मुक्तिबोध और मंटो को पढ़कर लगा कि यदि मैं इन दोनों रचनाकारों को नहीं पढ़ती तो शायद मैं अपने जेहन को नहीं समझ पाती। अपनी रूह से रूबरू नहीं हो पाती। दस्तावेज के पहले ही खण्ड की कहानियों के नारी पात्रों ने मुझे झकझोरना शुरू किया। इनके आसपास व्यवस्थाओं के नाम पर घने अंधकार है। सूरज की रोशनी इन तक नहीं पँहुच पाती। घोर पाताल में वास करती ये स्त्रियाँ रोज रोज पाश्विक वृतियों का सामना करती हैं। तिरस्कृत होती हैं। इन्हें इंसान की हैसियत भी नहीं दी जाती। पाताल में रहते हुए ये सिर्फ भोग की सामग्री से ज्यादा कुछ नहीं समझी जाती। मंटो अपने कहानी के पात्र यहीं से ढूंढ कर लाते हैं। यह घोर पाताल कहीं बाहर नहीं वरन मनुष्य के भीतर काम वासना की कुण्ठाओं में रचा बसा है। मंटो स्त्री को संवेदना की निगाहों से देखना चाहते हैं। स्त्री कहकर उसे हम भोग की सामग्री में रूपान्तरित कर देते हैं। वह

सामग्री बनकर मनुष्यता के प्रामाणिक दायरे से खुद ब खुद निर्वासित हो जाती है । यह निर्वासन ही उसकी आत्म प्रवंचना का हेतु है ।

मंटो के नारी पात्र अपने अपने तरीके से इस पाताल से निकलने की चेष्टा करते दिखते हैं। लाइसेंस कहानी की नीति ताँगा चलाना चाहती है। बर्मी लड़की पैसा जुटाकर अपने घर लौटना चाहती है । उसकी रूचि जिस्म फरोशी में नहीं है । फोभाबाई हैदराबाद से बंबई अपने लाल की तलाश में आ गई है । बंबई की संवेदन शून्यता उसे बदतर हालात में पहुँचा देती है। सौ कैंडल पावर का बल्ब कहानी की स्त्री सहानुभूति के भ्रम में फंसकर भूख मिटाने की मशीन बनकर रह जाती है ।अंतत वह अपने को मुक्त करने के लिये अपने तथाकथित संरक्षक की हत्या करके ही राहत पाती है।

हतक कहानी की सौगंधी चेतना संपन्न नारी पात्र है । सौगंधी की चेतना बयान नही है ।यह चेतना उसकी अपनी अनुभूति से उत्पन्न हुई है । ग्राहक द्वारा ठुकराये जाने से वह आहत होती है । हतक की सौगंधी अपने तिरस्कार से मानवी चेतना को प्राप्त करती है ।उसका फ्रेम तोडना एक सांकेतिक क्रिया है । यह फ्रेम स्त्री की अस्मिता को घेरे हुए है ।

यह उसे एक निरन्तर भ्रम में रखती है ।उसकी सुन्दरता ।उसकी कोमलता ।उसकी भावुकता । उसका त्याग ।उसका समर्पण ।ये सबके सब मिथ्या है । उसे अपनी वास्तविकता से दूर करती है ।उससे किया गया प्रेम का प्रदर्शन भी छलनापूर्ण है ।उसे अपने आसपास के झूठ और भ्रम को समझना चाहिये ।यहीं से उसके मनुष्य होने की सही और सच्ची प्रक्रिया शुरू होगी ।

संदर्भ सूची :-

1. लाइसेंस . पृष्ठ संख्या . 25 दस्तावेज रचनावली प्रथम खंड
2. बर्मी लड़की पृष्ठ संख्या 57 दस्तावेज रचनावली प्रथम खंड
3. फोभाबाई पृष्ठ संख्या 96 दस्तावेज रचनावली प्रथम खंड
4. सौ कैंडल पावर का बल्ब पृष्ठ संख्या 138 दस्तावेज रचनावली प्रथम खंड
5. हतक पृष्ठ संख्या 165 दस्तावेज रचनावली प्रथम खंड

****

मध्यकालीन मालवा के शिल्प एवं दस्तकारी कस्बों का ऐतिहासिक अध्ययन

प्रो. मलिका खान *

भारतीय इतिहास में प्रारम्भ से ही मालवा के पठार को वैभवशाली और सम्पन्न क्षेत्र के रूप में स्थान प्राप्त हुआ है। धन-धान्य से विकसित मालवा पर प्राचीन काल से अनेक शासकों ने शासन किया और गौरवशाली एवं ऐतिहासिक प्रान्त के रूप में मालवा को इतिहास के पृष्ठों पर अंकित कराया। मध्यकाल में इस क्षेत्र में राजनैतिक सत्ता परिवर्तन हुआ जिसने मालवा की 500 वर्ष प्राचीन स्वतंत्र प्रभुसत्ता का सदा के लिए अंत कर दिया।

मध्यकाल में मालवा दिल्ली सल्तनत के अधीन एक सूबा बन गया। इस तरह मालवा अप्रत्यक्ष रूप से दिल्ली सल्तनत में सम्मिलित हो गया जबकि यहाँ क्षेत्रीय शासकों को नियुक्त किया गया। सत्ता परिवर्तन की इस कड़ी में मालवा में राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में अनेक परिवर्तन हुए।

इन परिवर्तनों के बावजूद भी मालवा की उर्वरक भूमि, आदर्श जलवायु के कारण यह क्षेत्र धन-धान्य से सम्पन्न रहा। यद्यपि मालवावासियों का प्रमुख व्यवसाय कृषि कार्य ही रहा, तथापि भौतिक, सांसारिक एवं सामरिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु मालवावासियों ने अन्य व्यवसाय को अपनाकर न केवल तत्कालीन समाज का उत्थान किया, वरन् विकास के नये आयाम रचे। इनमें सबसे महत्वपूर्ण मध्यकालीन मालवा में शिल्प एवं दस्तकारी कस्बों का विकास होना था।

मध्यकालीन मालवा से विभिन्न व्यापारिक मार्गो का होकर गुजरना तथा यहाँ निर्मित दस्तकारी वस्तुओं का भारत के विभिन्न क्षेत्रों एवं विदेशों में व्यापार-निर्यात होना इस बात का सूचक है कि इस क्षेत्र के कारीगर उन्नत निर्माता थे, जिन्होंने तत्कालीन विदेशी व्यापार में अपनी पकड़ मजबूत बनायी। मध्यकालीन मालवा के सम्बन्ध में ऐसे अनेक प्रमाण प्राप्त होते हैं, जिनसे स्पष्ट होता है कि मालवा में निर्मित अनेक शिल्प एवं दस्तकारी वस्तुऐं जल एवं थल मार्गो से पश्चिमी देशों एवं खाड़ी देशों में निर्यात की जाती थी। इस बात के भी प्रमाण मिलते हैं कि तत्कालीन शासकों के राज्याश्रय से शिल्प एवं दस्तकारी बस्तियों के विकास की विपुल सम्भावनाएँ साकार हो सकी तथा मध्य में स्थित होने के कारण मालवा आवागम का प्रमुख केन्द्र था। अत: आर्थिक गतिविधियाँ एवं निर्मित वस्तुएँ के व्यापार-निर्यात की प्रक्रिया गतिविधियाँ एवं निर्मित वस्तुएँ के व्यापार-निर्यात की प्रक्रिया निर्बाध रूप से संचालित होती रही।

इसी कारण मालवा में एक विशिष्ट संस्कृति के दर्शन आज भी दृष्टिगोचर होते हैं। मध्यकालीन मालवा में विभिन्न शिल्प एवं दस्तकारी बस्तियों के अस्तित्व में आने से विभिन्नता पायी जाने लगी लेकिन यहाँ कभी वर्ग-संघर्ष जैसी स्थिति निर्मित नहीं हुई। विभिन्न उद्योग-धंधों में रत् आमजन ने मध्यकालीन मालवा के सर्वांगीण विकास में अमूल्य योगदान दिया।

मध्यकालीन मालवा में वस्त्र उद्योग, साड़ी उद्योग, रंगसाजी उद्योग, कालीन-दरी उद्योग आदि इतनी उन्नत अवस्था में था कि वर्तमान समय में भी तत्कालीन समाज में इनकी अमिट छाप दिखाई देती है और मालवा के कुछ क्षेत्र तो आज भी उन्हीं दस्तकारी के लिए विख्यात है जो मध्यकाल में प्रसिद्ध थे।

मध्यकालीन मालवा के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी अबुल फजल के 'अकबरनामा' तथा 'आइन-ए-अकबरी' से मिलती है। 'अकबरनामा' तीन जिल्दों में बेवरीज द्वारा अनुवादित है तथा 'आइन-ए-अकबरी' ब्लाचमैन एवं जैरेट द्वारा अनुवादित है, जिसका संशोधन जदुनाथ सरकार ने किया। इसके अलावा निजामुद्दीन के 'तबकात-ए-अकबरी', 'तारीख-ए-फरिश्ता' (ब्रिज द्वारा अनुवादित), जहाँगीर की 'वाकियात-ए-जहाँगीरी, मिनहाज-उल-सिराज की 'तबकात-ए-नासिरी' में मिलती है।

मध्यकालीन इतिहास पर ईश्वरी प्रसाद के 'हिस्ट्री ऑफ मिडिवल इण्डिया', इलियट एवं डाउसंस के द्वारा लिखित तथा मथुराप्रसाद द्वारा अनुवादित 'भारत का इतिहास' तथा हेग द्वारा लिखी गई 'कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ मालवा' उल्लेखनीय है। मालवा के संदर्भ में एकमात्र उल्लेखनीय कार्य यू.एन. डे द्वारा 'मिडिवल मालवा' में किया गया है। इसके अतिरिक्त आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव ने 'मध्यकालीन भारत के सांस्कृतिक इतिहास' पर श्रेष्ठ कार्य किया है।

मध्यकालीन मालवा के इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व पर समय-समय पर शोध लेख प्रकाशित होते रहे हैं, कुछ पुस्तकें माण्डू के स्वतंत्र शासकों के इतिहास एवं वास्तुकला पर भी मिलती है। यद्यपि अभी तक विद्वानों ने शिल्प एवं दस्तकारी कस्बों के वर्गीकरण एवं विशुद्ध अध्ययन पर अपनी लेखनी नहीं चलाई।

संदर्भ ग्रंथ

1. मध्य भारत - एच.एल. त्रिवेदी
2. हिस्ट्री ऑफ मालवा - भंडारी
3. मिडिवल मालवा - यू.एन. डे
4. तारीख-ए-मालवा - अली मुंशी करीम
5. अकबरनामा - अबुल फ़ज़ल
6. मालवा में युगान्तर - रघुवीर सिंह
7. मध्यप्रदेश का इतिहास - हीरालाल
8. मिडिवल इण्डियन कल्चर - हुसैन

****

* सहायक प्राध्यापक - इतिहास, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

बढ़ती महंगाई का समाज व्यवस्था पर प्रभाव

प्रो. प्रिशिला अन्द्रेय्स *

अर्थव्यवस्था का सीधा सम्बन्ध आर्थिक विकास से है। आर्थिक विकास मानव के लिए और मानव आर्थिक विकास से, जीवन को सुखी और गौरवमय बनाता है। अत: आर्थिक विकास एवं मानव मूल्य परस्पर सम्बन्धित है। मानव शक्ति, प्राकृतिक संसाधन, पूँजी निर्माण, तकनीकी व नवाचार, धार्मिक व राजनैतिक संस्थाऐं, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

कुछ विद्धान मानते हैं कि तेजी से बढ़ती मानव शक्ति में वृद्धि से आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जैसे कीमत स्तर में वृद्धि, खाद्यान्न आपूर्ति, पूँजी निर्माण की धीमी गति, भूमि पर बढ़ता भार, बेरोजगारी की समस्या, कृषि एवं उद्योग के विकास में बाधा, तकनीकी पिछड़ापन एवं शिक्षा। विकास और महंगाई साइकिल के दो पहिए हैं। बढ़ती महंगाई का प्रभाव समाज व्यवस्था पर पड़ता है। परिणामस्वरूप संगठित समाज विघटित होने लगता है। व्यक्ति की मनोवृत्तियों, भावनाओं, आत्मनिर्भरता, आत्मविश्वास आदि पर विपरीत प्रभाव देखा जा सकता है। आधुनिक भौतिकवादी सभ्यता ने लोगों को अत्यधिक स्वार्थी बना दिया है। प्रत्येक व्यक्ति अपने स्वार्थों की अधिकतम पूर्ति करता है, चाहे वह उचित तरीके से हो या अनुचित। महंगाई कुछ परिस्थितियों की देन है, तो कुछ मनुष्य के हाथों में। प्राकृतिक प्रकोप मनुष्य के वश में नहीं है। महंगाई बढ़ने के प्रमुख कारणों को दृष्टिगत करें, जिसमें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अमेरिकी अर्थव्यवस्था में सुधार के संकेतों से डॉलर की चमक बढ़ी है, चीन के साथ भारत का व्यापार घटा, रूपये और अर्थव्यवस्था की कमजोरी तथा चीनी अर्थव्यवस्था की मजबूती।

देश में बढ़ती जनसंख्या, दिन-प्रतिदिन जनसंख्या में वृद्धि होती जा रही है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 1,21,01,93,422 का आंकड़ा पार कर गई। साथ ही खाद्यान्न आपूर्ति, आवास समस्या, मुनाफाखोरी, कालाबाजारी और बाजार नीति जो कि महंगाई के उत्तरदायी कारक है, इससे समाज की व्यवस्था बिगड़ती जा रही है।

देश अपने सामंती अतीत और वर्तमान के साथ उपभोक्तावाद और मौजूदा जीवनशैली के साथ तालमेल नहीं बैठा पा रहा है। यह जीवन शैली, जो मुक्त बाजार वाले पूँजीवाद से जन्मी है। एशियाई विकास बैंक की रिपोर्ट अनुसार महंगाई बढ़ती रही तो गरीबी रेखा से नीचे (बी.पी.एल.) जीवन यापन करने वाले परिवारों की संख्या तीन करोड़ बढ़ जाएगी। ग्रामीण इलाकों में आय 20 फीसदी की रफ्तार से बढ़ी है, लेकिन ऐसा होता तो किसानों की आत्महत्याओं का सिलसिला थम जाता।

जिंदगी की बुनियादी आवश्यकताऐं हैं - रोटी, कपड़ा और मकान। एन.एस.एस.ओ. के सर्वे अनुसार देश की 60 फीसदी आबादी अपनी रोजाना की जरूरतों की पूर्ति नहीं कर पाती है। सरकारी आंकड़ों में ग्रामीण क्षेत्रों में हो रहे खर्च के आधार पर आय की गणना होती है, लेकिन भ्रष्टाचार के कारण हकीकत में पैसा सही जगह पहुँच ही नहीं पाता।

पिछले 30 वर्षो में वैश्वीकरण व इंटरनेट ने एक दूसरे को मजबूती प्रदान करते हुए जबरदस्त कामयाबियाँ हासिल की। दुनिया को एक साथ जोड़ते हुए त्वरित संचार व्यवस्था कायम की। इसी वजह से कारोबार और नौकरियों के नए-नए अवसरों का भी सृजन हुआ, जिससे दुनिया भर में लोगों को गरीबी से ऊपर उठने में मदद मिली। लेकिन आज अंतर्राष्ट्रीय नेतृत्व की नाकामी एवं वैश्वीकरण इंटरनेट की अवधारणाओं में मौजूद खतरनाक खामियों और विरोधाभासों के चलते, मिलने वाले फायदे खतरे में पड़ गए हैं।

समाज व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने से असमानता की स्थिति निर्मित हो रही है। व्यक्ति अपने मूल्यों को खो रहा है, भ्रष्टाचार पैर पसारता जा रहा है। वैश्वीकरण, नव-उदारवाद पर जोर देने के साथ ऐसी प्रक्रिया को हवा देता है, जिसमें असमानता की खाई चौड़ी हो रही है और व्यापक तौर पर बेरोजगारी (खासकर नीचले तबके में) बढ़ रही है। व्यापार, उद्योग, आयात-निर्यात पर भी प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति अपने सांस्कृतिक मूल्यों, रीति-रिवाजों, प्रथाओं, परम्पराओं, संस्कार, आदर्श में प्रतिकूल व्यवहार करने लगेगा। इसका सीधा प्रभाव उसकी दैनिक दिनचर्या पर भी पड़ता है।

संगठित समाज को निर्मित करना प्रत्येक व्यक्ति की जिम्मेदारी होती है। ऐसी स्थिति में सकारात्मक सोच समाज को संकटकालीन स्थिति से उभरने में सहयोग प्रदान कर सकता है। ऐसे कदम उठाए जाना चाहिए जिससे समाज में भ्रष्टाचार, मुनाफाखोरी, श्वेतपोश अपराध, कालाबाजारी, असमानता, समाप्त हो सके। समाज के लोगों में आत्मविश्वास, आत्मशक्ति, जागरूकता का होना अति आवश्यक है, जिससे समाज में विकट स्थिति निर्मित न हो।

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ. जी. आर. मदन, डॉ. अमित अग्रवाल - परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र
2. सरला दुबे - सामाजिक विघटन

* सहा. प्राध्यापक - समाजशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

आदिवासियों की वर्तमान परिस्थितियॉ और विकास की आवश्यकता

डॉ. आर.के. यादव * प्रो. गीता मेहरा **

मनुष्य अपने परिवेश की उपज है, उसे बेहतर बनाने के लिये उस परिवेश को बदलना होगा, जिसमें वह पलता है, बढ़ता है और इसी परिवेश को आधुनिक समाज आर्थिक शब्दों में ''विकास'' शब्द से जोड़ता है, परिभाषित करता है, परन्तु यह अत्यंत ही दुर्भाग्य पूर्ण स्थिति है कि जंगलों में रहने वाला अर्धनग्न व्यक्ति जिसे हम आदिवासी कहते हैं, विकास से दूर भागता है। उसके समाज की संस्कृति की न्यूनतम आवश्यकता और प्रकृति से तालमेल आज भी हमारे लिये एक चुनौती है।

आदिवासियों का रहन,सहन, उनका नृत्य, संगीत उनकी सामाजिक व्यवस्था उसका अर्थतंत्र उनकी संस्कृति सब कुछ प्रकृति के साथ सामंजस्य और ताल-मेल से संचालित होता है। यद्यपि वह साजर नहीं है, परन्तु वनों से अपनी जीविका के साधनों को ढूंढ निकालना वास्तव में एक वैज्ञानिक सोच है। बिना वजह जंगलों को नुकसान नहीं पहॅूचाता उसमें संचय की प्रवृत्ति नहीं होती, पर्यावरण को सुरक्षित रखने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है।

क्या यह आश्चर्य नहीं है कि समाज ने, सरकार ने, राजनितिज्ञों ने ''आदिविकास के विकास'' के नाम पर जो अरबो रूपयों का अपव्यय किया, फिर भी हमारी नजरों में वे गरीब, असहाय, जंगली और असम्य इसलिए एक मानवशास्त्री ए.आस्टिन एक बुनियादी सवाल उठाते हैं कि सभ्यता क्या है? क्या खेती करना, पशु पालना, अपनी भाषा की लिपी तैयार करना, कपड़े और जूते बनाना ही सभ्यता है। क्या सभ्यता की परिभाषा नये सिरे से नहीं की जानी चाहिये।

आदिवासियों की वर्तमान परिस्थितियॉ और विकास की आवश्यकता के बीच कैसे संबंध स्थापित किये जाये। आधुनिक विकास का जो मानदंड है उसे आदिवासी समाज स्वीकार करने में कोई दिलचस्पी नहीं रखना। आदिवासी समाज की न्यूनतम आर्थिक आवश्यकताये विकसित समाज के लिये चुनौती है एक ऐसी चुनौति जो ''उपभोक्ता संस्कृति'' अथवा ''मीडिया संस्कृति'' से कोसो दूर प्रकृति की गोद में अमन-चैन की जिन्दगी व्यतीत कर रहा है, परन्तु हमें तो क्रमश:: उसका विकास करना है। राष्ट्र की धारा से जोड़ना है।

आर्थिक विकास के साहित्य में आदिवासी समाज को बहुदा ''गरीब'' कह दिया जाता है। ''गरीबी'' एक नितांत भिन्न अवधारणा है और साधारणत: आदिवासी परिदृश्य से उसका कोई संबंध नहीं है, परन्तु जो आदिवासी समाज अभी भी दुर्गम क्षेत्रों में रहते हैं। जहॉ नैसर्गिक संसाधन इतने समृद्ध है कि जीवन की आधारभूत आवश्यकतायें आसानी से पूरी हो जाती है, उन्हें हम गरीब नहीं कह सकते। उनकी आवश्यकतायें सीमित है और संसाधन विफूल है अबूझमाडिया (बस्तर की जनजाति) लगभग बिना कपड़ो के ही रहते हैं, परन्तु कम कपड़े पहनना गरीबी का द्योतक नहीं है, वह उनकी नैसर्गिक स्थिति में जीवन यापन का तौर तरीका मात्र है।

स्वतंत्रता के बाद से ही आदिवासी विकास शासन का प्राथमिक दायित्व रहा है। भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजातियों के विकास कल्याण सुरक्षा एवं उन्हें मुख्यधारा में लाने हेतु विशेष प्रावधान निर्मित कर इनके विकास के कार्यक्रम नीतियों को ध्यान में रखकर चलाये जा रहे हैं। जीवन स्तर को उढ़ाने एवं कानूनी व प्रशासनिक सहायता द्वारा इनके हितों का संरक्षण करना किन्तु यह प्रयास कितने कारगर साबित हुये यह मूल्यांकन का विषय है।

विकास के सही मायने क्या है, हमें विकास को थोड़ा समझने की आवश्यकता है। विकास के मायने केवल भौतिकता में वृद्धि ही नहीं है अपितु समस्त परिस्थितिकी तंत्र को बचाते हुये जो भी उन्नति की जाए उसे विकास माना जाना चाहिये। इनके लिये संरक्षित विकास की भव निहित है। इस अवधारणा को तीन पक्ष है :-

1. संतुलित विकास 2. समन्वित विकास 3. संरक्षित या धारणीय विकास

संतुलित विकास से तात्पर्य एक ऐसी विकास व्यवस्था से है, जिसमें पर्यावरण को बिना क्षति पहॅूचाये समाज के सभी वर्गों के लिये न्यूनतम सुविधा का प्रबंध है, समन्वित विकास की अवधारणा वर्तमान के साथ भविष्य को भी समेटने का प्रयास करती है। विकास के नाम पर किये गये पर्यावरणीय अत्याचार की विकृतियाँ सचेत करने लगी है।

प्रकृति बहुत देर तक मानवीय उदण्डता को बर्दास्त नहीं कर सकती है। विश्व को केवल आर्थिक उत्पादन की वृद्धि हेतु नये प्रयोगों को काम में लाते समय परिस्थिति की कार्यप्रणाली और मानवीय सीमाओं को ध्यान में नहीं रखा गया। भविष्य को ध्यान में रख कर किया जाने वाला विकास समन्वित विकास के द्वारा सम्भव है।

जनजातीय विकास :-

औद्योगिक प्रगति तथा विश्व युद्धो के बाद के पुर्ननिर्माण के अनुभवों को तथाकथित विकासशील देशों के विकास के संदर्भ में लगाने की जानी-अनजानी कोशिश के चलने इन देशों में भी भौतिक एवं क्षेत्रीय विकास पर अधिक जोर रहा है मानव के विकास पर बहुत कम हाल ही में मानव संसाधन के संबंध में जागरूकता बड़ी है।

अदिवासी विकास के लिये एक सर्वथा नयी दृष्टि की जरूरत है। इनकी संस्कृति विशिष्ट है, विश्वास एवं आस्थाऐं पर्यावरण के इर्द-गिर्द घुमती है। पर्यावरण और आदिवासियों के बीच के संबंध को आधुनिक दृष्टि से नहीं समझा जा सकता है। आदिवासियों एवं उनके पर्यावरण के विशिष्ट रिश्ते की सही समझ को जब तक आदिवासी विकास की कोई रणनीति या कार्यक्रम पूरी तरह प्रतिबन्धित न की जायेगी, विकास कर पाना संभव नहीं है। दूसरा विकास का तत्व है आदिवासी संस्कृति के बुनियादी तत्वों को बरकरार रखते हुये प्रगति के रास्ते की तलाश वर्तमान समय में आदिवासी समूहों का गैर आदिवासियों से सम्पर्क उनकी संस्कृति में उथल-पुथल एवं परिवर्तन का एक अनिवार्य कारक बन गया है।

ये लोग अब नये सामाजिक,आर्थिक प्रभावों में आ रहे हैं। नये क्षेत्रों में उनका अधिक उपयोग, प्रतिस्पर्धा और तीव्र विकास को ऊॅचे मूल के रूप में स्वीकार किया जा रहा है। जनजातीय क्षेत्रों का तीव्र विकास सुनिश्चित करने तथा अनुसूचित जनजातियों के जीवन की गुणवत्त में सुधार लाने के लिये निम्नलिखित सुझााव विचार करने योग्य है।

(1) जनजातिय उप-योजना के बदले प्रत्येक राज्य में आदिवासी क्षेत्रों के लिये एक अलग योजना लागू की जानी चाहिये।

(2) जनजातीय योजनाओं के लिये धनराशि का अलग से प्रावधान होना चाहिये। यह कार्य योजना आयोग, जनसंख्या भौगोलिक क्षेत्र तथा पिछड़ेपन को ध्यान में रखते हुये वार्षिक वित्तीय आवंटन के समय कर सकता है और वर्तमान में चल रही प्रणाली के अनुसार इसे संबंधित राज्य सरकारों की इच्छा पर नहीं छोड़ा जाना चाहिये।

भारतीय संविधान में जनजातियों के विकास हेतु कुछ विशेष प्रावधान किये गये है और उन्हें कुछ विशेषाधार दिये गये हैं। विकास की दीर्घकालिक प्रक्रिया ही जनजातियों को राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ सकती है।

संदर्भ :-

1. भारत के आदिवासी, प्रो. मधुसूदन त्रिपाठी
2. भारत के आदिवासी विकास की समस्याऐं, पी.आर. नायडू

* सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र ** सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)

मुक्तिबोध की प्रासंगिकता

डॉ. श्रीमती सरोज खरे *

सारांश : मुक्तिबोध एक व्यक्ति नहीं संस्था थे। वे दार्शनिक, शिक्षक, साहित्यकार और इतिहासकार थे। वे विद्धानों के बीच विद्धान, राजनीतिज्ञों के बीच राजनीतिज्ञ, शिक्षकों में शिक्षक और एकांत में सामान्यजन, पीड़ित मानवता की एक इकाई। वे अनेक अर्थों में हिन्दी काव्य के इतिहास में अद्धितीय कवि हैं। अपने सहवर्ती कवियों की तुलना में मुक्तिबोध का अनुभव जगत अत्यन्त विस्तृत है और जीवन के यथार्थ से वे अत्यन्त गहन भाव से सम्बद्ध हैं। उनका काव्य यथार्थ का पुनर्जीवन है, वे अपनी कविता में जीवन के सभी सत्यों को आत्मसात कर लेना चाहते थे। उनकी कविताऐं कालबद्ध होते हुए भी कालसापेक्ष है, इसलिए उनकी प्रासंगिकता लम्बे समय तक खत्म नहीं होती। राजकमल, धूमिल, लीलाधर जगूड़ी, सौमित्र मोहन, रघुवीर सहाय, चंद्रकान्त देवताले, केदारनाथ सिंह, विष्णु खरे, अरूण कमल, असद जैदी, राजेश जोशी, मंगलेष डबराल आदि कवियों ने किसी न किसी रूप में मुक्तिबोध से प्रेरित होकर कविताऐं लिखी।

''नहीं होती, कहीं भी खत्म कविता नहीं होती
कि वह आवेग-त्वरित काल यात्री है।
व मैं उसका नहीं कर्ता,
पिता-धाता
कि वह कभी दुहिता नहीं होती,
परम स्वाधीन है वह विश्व-शास्त्री है।
गहन गंभीर छाया आगमिश्यत् की लिखे
वह जन-चरित्री है।''

मुक्तिबोध आज भी प्रासंगिक हैं। विचारधारा का अंत घोषित करने वाले विश्वचिंतकों के पैरों तले की जमीन फिर से खिसकने वाली है, विश्व पूँजीवाद का लकड़ी का रावण फिर डगमगाने की अवस्था में पहुँच रहा है, हालाकि तकनीकी प्रगति से वह अपने उबरने के रास्ते खोज रहा है, लेकिन पोषण पाप का परम्पराक्रम चलने वाला नहीं है। इस परिप्रेक्ष्य में मुक्तिबोध की घोषणाऐं फिर सही साबित होगीं, क्योंकि वे वैज्ञानिक विश्व दर्शन के प्रकाश में की गई घोषणाऐं हैं। मनुष्य एक बेहतर समाज की कल्पना बार-बार करता रहेगा, अपने उतार-चढ़ाव, अपनी भूल-गलती, अपने अकर्मकता और सकर्मकता के बीच से गुजरते हुए विश्व का शोषित मानव एक नया समाज बनाएगा जरूर। यह आस्था ही मुक्तिबोध की कविताओं का आधार थी, यह आस्था ही हमारी आज की आलोचना की अंत:सलिला हो सकती है।

यह कटु ऐतिहासिक तथ्य है कि मुक्तिबोध जब तक जीवित रहे, कवि रूप में उपेक्षित रहे। इस बात से वे काफी दु:खी रहते थे, लेकिन उन्होंने आत्मविश्वास नहीं खोया था। अपने एक लेख में उन्होंने अपनी कविताओं के बारे में कहा है - 'कोई समानधर्मा पुरूष जरूर उन्हें पढ़ेगा, आज नहीं, मेरी मृत्यु के बाद सही। उसे अच्छी नहीं लगेंगी, वह आलोचना करेगा, किन्तु उसे उसके कुछ हिस्से अवश्य पसंद आऐंगे। तो उस समानधर्मा के इंतजार में, या यूँ कहिए कि आशा में, मेरे इस कमरे में कवि कर्म चल रहा है। उस समानधर्मा का रूप मेरी आँखों के सामने अवश्य प्रस्तुत होता है वह मुझसे अधिक बुद्धिमान, अधिक अनुभवी, अधिक उदार, अधिह सहृदय, अधिक मर्मज्ञ, अधिक मेधावी होगा। वह मेरे गुण-दोशों का विवेचन करेगा।'

''आधुनिक सभ्यता संकट की प्रतीक रेखा,
उसको मैंने सपनों में कई बार देखा।''

सांस्कृतिक संकट में, जैसे ही उनकी कविताऐं प्रकाश में आई, वैसे ही वे पुनर्जीवित हो उठे। अपने इस रिजरेक्शन का पूर्वाभास उन्हें था -

''मैं हूँ जवाबी गदर
जिससे कि और ज्यादा तैयारियाँ कर
आज नहीं कल फूट पड़ूंगा जरूर
जरूर।''

उन्हें विश्वास था कि समाजवादी यथार्थ की कविता के उन रत्नों का अर्थ दीप्त होगा। उनका प्रभाव घर-घर में फिर से पहुँचेगा। वास्तव में किसी कृति के विषय में हमारी साहित्यिक चेतना के लिए सभी प्रकार की सूचनाऐं प्रासंगिक है - जैसे आत्मचरितपरक, मनोवैज्ञानिक, विचारधारात्मक, तकनीकी और विभिन्न स्तरों पर ऐतिहासिक। इन्हें हम उपेक्षित करके बड़ा जोखिम उठाते हैं, ये सब तो उस कृति के समझने के लिए अति अनिवार्य है, जो हमारे सामने होती है।

गजानंद माधव 'मुक्तिबोध' अनेक अर्थों में हिन्दी काव्य के इतिहास में अद्धितीय कवि हैं। उन्हें किसी परम्परागत विशेषण से नहीं आँका जा सकता। जीवन भर उपेक्षित रहने के बाद मृत्यु के समय सहसा वे अखिल भारतीय बन गए और उनके जीवन और काव्य की ओर सभी का ध्यान आकर्षित हुआ। उनका काव्य उनके जीवन और व्यक्तित्व से अभिन्न भाव से जुड़ा हुआ है। किसी और की कविताऐं उसका इतिहास न हो, मुक्तिबोध की कविताऐं अवश्य उनका इतिहास है। वे आज भी नए कवियों के लिए प्रासंगिक बनी हुई है।

अपने सहवर्ती कवियों की तुलना में मुक्तिबोध का अनुभव जगत अत्यंत विस्तृत है और जीवन के यथार्थ से वे अत्यंत गहन भाव से सम्बद्ध हैं -

''सब सच्चे लगते हैं
अजीब सी अकुलाहट दिल में उभरती है
मैं कुछ गहरे में उतरना चाहता हूँ
जाने क्या मिल जाए।''

अनुभव की विशालता और जीवनगत समृद्धि की अतिशयता उनके काव्य को अत्यन्त उदात्त बनाती है। मुक्तिबोध की एक बरगद से तुलना की गई है जो अवश्य ही उनकी प्रिय 'इमेज' है, मगर बरगद नहीं -

''चट्टान एक ऊँची सीधी चट्टान है,
शिलाओं पर शिलाऐं
झरने कहीं बिरले ही
केवल गहरी बावड़ियाँ, सूखे कुएँ
झाड़-झंखाड़
ऊँची-नीची अनंत पगडंडियाँ
जैसे मालवा के पठार
और मध्यप्रदेश की उबड़-खाबड़ धरती के रहस्यमय इतिहास
और उनके बीच लहूलुहान मानव।''

* सहा. प्राध्यापक - हिन्दी , शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

मुक्तिबोध की सामाजिक दृष्टि, मानव के प्रति सच्ची निष्ठा, समाज के लिए कुछ कर गुजरने की चाह उनके जीवन बोध को लोकग्राही बनाती है और वे निराला की खुली मानवता को आगे बढ़ाते हैं। उनकी यही विशेषताऐं उन्हें 'तारसप्तक' के कवियों में श्रेष्ठ बनाती है तथा उन्हें प्रासंगिक बनाए रखने में सहायक सिद्ध होंगी।

मुक्तिबोध की कविताओं में कथ्य न तो व्यक्तिवादी कलाकर्म की तरह आता है और न ही प्रगतिवादी नारों की तरह। वे अपने आसपास के सामाजिक जीवन को ही अपनी कविता का मूल केन्द्र बिन्दु बनाते हैं। सामयिक घटनाओं पर उन्होंने विशेष ध्यान नहीं दिया, लेकिन रोजमर्रा के संसार में पिसते हुए आदमी की त्रासदी को उनकी कविताओं में देखा जा सकता है। उन्होंने जिस प्रकार के वातावरण को अपनी कविताओं के कथ्य में रचा है वह उनका देखा हुआ, अनुभव किया हुआ संसार है। 1953 का नागपुर की एम्प्रेस मील के मजदूरों के संघर्ष और दमन का चित्रण ''चाँद का मुँह टेढ़ा है'' रचना में मिलता है।

मील की चिमनियाँ, कर्फ्यू, हड़ताली पोस्टर, आंदोलनकर्ताओं के मुखबिर, सभाऐं, मोर्चे, मीटिंग आदि सभी इस कविता में है और इनके आधार पर कवि का कथ्य व्यक्त हुआ है।

''सुबह होगी कब और मुश्किल होगी दूर कब ?
समय का कण-कण,
गगन की कालिमा से बूँद-बूँद चू रहा
तड़ित उजाला बन।''

मुक्तिबोध का काव्य यथार्थ का पुनर्जीवन है इसलिए उनकी कविताओं में अंधियारा, संवलायी चाँदनी, जेल की सलाखों का दहशतपूर्ण वातावरण उनका देखा हुआ था। वे यथार्थ में जीते हुए भी मनुष्य में विश्वास को खोते नहीं है। वे सामाजिक मुक्ति का स्वप्न देखते हैं -

''हमारी हार का बदला चुकाने आएगा
संकल्पधर्मी चेतना का रक्तप्लावित स्वर,
हमारे ही हृदय का गुप्त स्वर्णाक्षर
प्रकट होकर विकट हो जाएगा।''

वे अपनी कविता में जीवन के सभी सत्यों को आत्मसात कर लेना चाहते थे। उनकी कविताऐं कालबद्ध होते हुए भी काल-सापेक्ष है। वे समय और स्थान के विस्तृत फलक पर यात्रा करती है, इसलिए उसकी प्रासंगिकता लम्बे समय तक खत्म नहीं होती। मुक्तिबोध ने वादों से उठकर सही मायने में समकालीन कविता को नई दिशा प्रदान की।

शमशेर बहादुर सिंह ने ''चाँद का मुँह टेढ़ा है'' की भूमिका में लिखा है -''मुक्तिबोध ने छायावाद की सीमाऐं लाँघकर प्रगतिवाद से मार्क्सवादी दर्शन ले, प्रयोगवाद से अधिकांश हथियार संभाल और उसकी स्वतंत्रता महसूस कर, स्वतंत्र कवि के रूप में सब वादों और पार्टियों से ऊपर उठकर निराला की खुली मानवतावादी परम्परा को आगे बढ़ाया।

मुक्तिबोध के काव्य में युग की नई चेतना नितान्त मौलिक भाषा में अभिव्यक्त हुई है। डॉ. नामवरसिंह ने उनकी अंतिम कविता ''अंधेरे में'' के लिए कहा है कि - ''यह उनकी अंतिम रचना ही नहीं है, बल्कि नयी कविता की चरम उपलब्धि भी है।'' मुक्तिबोध एक व्यक्ति नहीं संस्था थे। वे दार्शनिक शिक्षक, साहित्यकार और इतिहासकार थे। वे विद्वानों के बीच विद्वान, राजनीतिज्ञों के बीच राजनीतिज्ञ, शिक्षकों में शिक्षक और अपने एकांत में सामान्यजन, पीड़ित मानवता की एक इकाई।

वे जीवनभर अलक्षित रहे। हिन्दी के साहित्यिक परिवेश ने उन्हें बीमारी के समय ''असाधारण'' और मृत्यु के बाद ''महान'' बना दिया। जीवनकाल में जिनका कोई काव्य-संकलन तक नहीं छपा, मृत्यु के बाद पत्रिकाओं में विशेषांकों की झड़ी लग गई। वे रातों-रात 'महान कवि', 'महान लेखक', 'नवलेखन के प्रमुख हस्ताक्षर', 'नई कविता का शीर्ष कवि', 'शिव', 'सुकरात' और न जाने क्या-क्या हो गए। यह सच है कि मुक्तिबोध की मृत्यु नहीं हुई थी, उपेक्षित एवं तिरस्करणीय परिवेश ने उनकी हत्या की थी।

डॉ. मैनेजर पांडेय ने इस संदर्भ में एक टिप्पणी की है - ''मौलिक जीवन दृष्टि और असाधारण प्रतिभावाले युग दृष्टा कलाकार व्यवहारिक जीवन में असफल और जीवनकाल में लोकप्रिय न होने पर भी अपनी रचनाओं के कारण मरने के बाद अमर हो जाते हैं। मुक्तिबोध की जीवन कथा समाज और अपने प्रति ईमानदार, संवेदनशील साहित्यकार के जीवन की एक अविस्मरणीय ट्रेजेडी है। इस ट्रेजेडी के लिए उत्तरदायी स्थितियों, परिस्थितियों, शक्तियों और व्यक्तियों की खोज और पहचान मुक्तिबोध की जीवनकथा को समझने के लिए अनिवार्य है। मुक्तिबोध जीवनभर जन-विरोधी समाज व्यवस्था और विचारधारा के खिलाफ संघर्ष करते रहे। समझौता करने के बदले संघर्ष की राह पर चलने वालों की जो हालत इस व्यवस्था में होती है, वही मुक्तिबोध की भी हुई, लेकिन यह भी सच है कि मनुष्य को नष्ट किया जा सकता है, परन्तु उसको परास्त नहीं किया जा सकता।'' मुक्तिबोध आज भी हमारे बीच विद्यमान हैं और हमारे प्रेरणास्रोत बने हुए हैं। साहित्य में आज भी उनका सर्वोच्च स्थान है। नए कवि उन्हें अपना प्रेरणास्रोत मानकर किसी न किसी रूप में उनसे प्रभावित हुए है।

मुक्तिबोध लहर हिन्दी के लिए एक अभूतपूर्व चीज थी। उसके पहले किसी कवि के पक्ष में ऐसी लहर न उठी थी। मुक्तिबोध ने अपनी रचनात्मक आवश्यकताओं के दबाव में आकर अपने लिए लम्बी कविता जैसे काव्य रूप का आविष्कार किया। नई पीढ़ी उनकी ओर आकर्षित हुई और प्रत्येक महत्वपूर्ण कवि ने लम्बी कविता लिखने का प्रयास किया। मुक्तिबोध ने आज की समस्याओं के उद्गम और वर्तमान समय में जो भ्रष्टाचार और अवसरवाद की बाढ़ थी, उसको बहुत पहले पहचान लिया था। उन्होंने समकालीन कविता को विरासत के रूप में जो चीज दी। वह बहुत महत्वपूर्ण है। अपने समय की पहचान और समय के भीतर ही कविता को तलाशना उनकी कविताओं की विशेषता है।

राजकमल हो या धूमिल, लीलाधर जगूड़ी हो या सौमित्र मोहन या फिर मणि मधुकर, सभी ने किसी न किसी रूप में मुक्तिबोध से प्रेरित होकर कविताऐं लिखी। इस प्रकार मुक्तिबोध ने विरासत के रूप में नए कवियों को बहुत कुछ दिया और देते रहेंगे, उनके काव्य से प्रेरणा लेकर युवा पीढ़ी के कवि उन्हें भविष्य में भी अपने लिए प्रासंगिक बनाए रखेंगे।

रघुवीर सहाय, चंद्रकांत देवताले, केदारनाथ सिंह, विष्णु खरे, अरूण कमल, राजेश जोशी, मंगलेश डबराल, उदयप्रकाश, असद जैदी, सोमदत्त आदि कवियों ने अपनी कविताओं में मुक्तिबोध का अनुकरण करते हुए स्त्री व बच्चों की मानवीय स्थिति का चित्रण किया है। अत: आम आदमी की कविता में ऐसा भाव-बोध है, जो उसे पूर्ववर्ती कविताओं से आगे ले जाकर समाज के व्यापक परिवेश से जोड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. चाँद का मुँह टेढ़ा है - मुक्तिबोध
2. मुक्तिबोध रचनावली, भाग-2
3. जर्नल ऑफ ऐस्थेटिक एण्ड आर्ट क्रिटीसिज्म, खण्ड 21 (1963)
4. कविता के नये प्रतिमान - मुक्तिबोध
5. समकालीन कविता की भूमिका - डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय
6. समुद्र के बारे में - भगवतराव
7. आलोचना - अप्रैल-जून 1972, दिल्ली

म.प्र.की बैगा जनजातियों के लिए परिवार मूलक योजना का लाभ (उमरिया जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. विवेक कुमार पटेल * डॉ. राजेश कुमार *

सारांश

म.प्र. शासन बैगा जनजाति के संवार्गिण विकास के लिये बैगा विकास अभिकरण या परिवार मूलक योजना से चिन्हित जिले के बैगा जनजातियों को लाभांवित करने का प्रयास किया जा रहा है। यह योजना म.प्र. शासन द्वारा छठवी पंचवर्षीय योजना से प्रारंभ की गई है। समय समय पर योजना में व्यापत कमीयों एवं जनजातियों को लाभांवित करने के उद्देश्य से आवश्यक परिर्वतन भी किये गये है। म.प्र. के उमरिया एवं डिण्डौरी जिले में बैगा जनजातियों की संख्या अत्याधिक है।

इन जनजातियों में आज भी आदिम प्रवृत्ति, वस्तु विनिमय, मुनाफा वृत्ति का अभाव, श्रम प्रधानता, परम्परागत विचार, संग्रहण का अभाव, आपसी निर्भरता, हाट बाजार की प्रवृत्ति, वनों पर अश्रियता पाई जाती है। ये अत्यन्त सरल एवं सहज स्वभाव के सीमित आवश्यकता वाले वन पंसद होते है। वनों पर आधारित इन जनजातियो को वर्तमान वन नीतियों के कारण वनो से कुछ दूर होना पड़ा हैं। जिससे ये समुदाय अत्यधिक नाराज है। इनका मानना है कि वनों के वृक्ष हमारे देवता है। जिनसे हमें शासकीय नीतियों के कारण दूर होना पड़ा है।

इसप्रकार पिछड़ी हुई अशिक्षित एवं परामपरागत विचारों वाली बैगा जनजातियों के विकास के लिये म.प्र. शासन की परिवार मूलक योजना एक सार्थक कदम के रूप में है। इसका लाभ केवल शासकीय सेवा में संलग्न व्यक्तियों को छोड़कर अन्य सभी को प्रदान किया जाता है।

योजना से प्रतिवर्ष लगभग 800 बैगा परिवारों लाभांवित किया रहा है। जिसमें 20,000/- रूपयें तक की प्रतिवर्ष सहायता प्रदान की जा रही है। यह योजना मुख्य रूप से वर्ष 2004-05 से लागू की गई है। इसमें वर्ष 2008-09 तक 332.87 लाख रूपयें खर्च कर 1665 बैगा परिवारो को लाभांवित किया गया है। जिले में बैगा परिवारों की कुल संख्या 11,557 है। जिसमें से 05 वर्षो में केवल 1664 परिवार लाभांवित हुयें है। जो 14 प्रतिशत के बराबर है। यदि बैगा जनजातियों के विकास हेतु योजना के क्रियावन्यन की यही दर रही तो लगभग 40 से 45 वर्षो बाद यदि बैगा परिवारों में वृद्धि नही होती हैं, तो सभी परिवार योजना से लाभांवित हो पायेगें। परन्तु जनसंख्या में वृद्धि होने के कारण सभी परिवारों को लाभांवित कर पाना महज एक कल्पना मात्र है।

प्रस्तावना :-

शोध पत्र मध्य-प्रदेश की बैगा जनजातियों के लिए परिवार मूलक योजना का उनकी आर्थिक स्थिति पर प्रभाव से सम्बन्धित है। जिसमें उमरिया जिले के बैगाओं की दयनीय स्थिति सभी का ध्यान अपनी तरफ बरबस ही आकर्षित करती है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य यह है कि मध्य-प्रदेश शासन की परिवार मूलक योजना का उमरिया जिले की बैगा जनजातियों के आर्थिक विकास पर प्रभाव का विश्लेषण करना है। यह योजना म.प्र. शासन द्वारा संचालित आदिम जाति कल्याण विभाग, भोपाल द्वारा जिले की सभी बैगाओं के लिए है केवल ऐसे बैगाओं को छोड़कर जो किसी शासकीय सेवा में हों। विशेष पिछड़ी जनजातियों के विकास के लिए पांचवीं पंचवर्षीय योजना काल में आदिवासी उपयोजना प्रारम्भ की गई हैं। जिसमें पहाड़ी कोरबा, अबूझमाड़िया, भारिया, बैगा व सहरिया को विशेष पिछड़ी जनजाति का दर्जा दिया गया था। छठवीं पंचवर्षीय योजना अवधि में इस समूह में कमार जनजाति तथा सातवीं पंचवर्षीय योजना अवधि में बिहोर जनजाति को सम्मिलित किया गया। इन विशेष पिछड़ी जनजातियों के लिए विकास कार्यक्रमों को स्वीकृत करते हुए विशेष प्रशासनिक संरचना की गई जिसे कलस्टर योजना का नाम दिया गया।

नए जिलों के गठन के फलस्वरूप विभाग के समसंख्यक आदेश दिनांक 12.08.1996 में आंशिक संशोधन करते हुए राज्य शासन, नवगठित डिण्डोरी एवं उमरिया जिलों में बैगा विकास अभिकरण का गठन कर बैगा जनजातियों के लिए कार्यक्षेत्र के रूप में उमरिया जिला जिसकी जनसंख्या 37,600 के रूप में मुख्यालय बैगा विकास अभिकरण जिला-उमरिया तथा डिण्डोरी का चयन किया गया, क्योंकि बैगा दूरस्थ अंचलों में निवास करती है, जिनकी भौगोलिक स्थिति दुर्गम एवं कष्ट साध्य है। ऐसी जनजातियों की आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक आवश्यकता भी भिन्न-भिन्न है इसलिए इन्हें सीधे लाभ पहुँचाने वाली परिवार मूलक योजना के द्वारा एकीकृत आदिवासी विकास परियोजना के माध्यम से किया जाएगा।

उमरिया जिला एवं बैगा जनजाति :-

उमरिया भारत की हृदयस्थलीय मध्य-प्रदेश के शहडोल संभाग का एक जिला है। सन् 1956 ई. तक स्वतंत्रता के पश्चात् शहडोल जिला विन्ध प्रदेश का एक प्रमुख जिला था। सन् 1956 ई. में मध्य-प्रदेश के गठन के बाद यह प्रदेश के पूर्वी भाग रीवा संभाग का एक प्रमुख जिला बना था। वर्तमान शहडोल संभाग के जिलों में 6 जुलाई 1998 ई. को उमरिया नवनिर्मित जिले के रूप में प्रकाश में आया। जिला उमरिया मध्य-प्रदेश के उत्तर-पूर्व में स्थित एक महत्वपूर्ण जिला है। इसकी भौगोलिक स्थिति 23°31'37' उत्तरी अक्षांश विस्तार से 80°50'10' पूर्वी देशान्तर विस्तार के मध्य स्थित है। समुद्र तल से इसकी ऊँचाई 487.95 मीटर है। इस जिले का कुल विस्तार (क्षेत्रफल) 4503 किलोमीटर है। यहाँ औसतन वर्षा वर्ष 2007-08 में 974.3 मिलीमीटर रही है। औसत अधिकतम तापमान 35-38°व C तथा न्यूनतम औसत तापमान 15°57-C है। यहाँ की वनस्पतियाँ प्रमुख रूप से सागौन, सरई, आम, नीम, तेंदू, साल, चिरौंजी, साजा, आंवाला, करंज, शीशम, महुआ, कुसुम, गुंजा, बाँस, पीपल, बड़ आदि पाए जाते हैं।

अब जठरोफा शासन द्वारा काफी मात्रा में लगाया जा रहा है। बान्धवगढ़ राष्ट्रीय उद्यायन यहाँ का प्रसिद्ध है। जिसमें शेर, नीलगाय, बन्दर, जंगली सुअर, खरगोश, सांप, जंगली कुत्ता आदि देखने को मिलते हैं। उमरिया जिले की कुल जनसंख्या वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार 643579 है जिसमें पुरूष 53: तथा स्त्री 47: हैं। कुल जनसंख्या का 83 प्रतिशत

* सहायक प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
** अतिथि विद्वान अर्थशास्त्र,शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला सतना (म.प्र.)

आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में तथा शेष 17 प्रतिशत आबादी शहरी क्षेत्रों में निवास करती है। इसमें से अनुसूचित जनजातियों की कुल आबादी 44.4: है जिसमें मुख्य रूप से गोड़, कोल, बैगा हैं।

उमरिया जिले में बैगा जनजातियों की इतनी बड़ी आबादी है जो मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए जूझ रही है इनकी इतनी दयनीय स्थिति है कि दो वक्त की रोटी जुटा पाने में असमर्थ हैं। आज देश भर में बैगाओं की यही स्थिति है। जो आदिम जीवन जीने के लिए मजबूर है। जब तक इनके जीवन स्तर को नहीं सुधारा जाएगा तब तक ना ही इनके समाज, ना ही ऐसे जिलों का विकास सम्भव है, और ना ही देश का विकास सम्भव है। चाहे केन्द्र व राज्य सरकार प्रत्येक वर्ष करोड़ों रुपये व्यय कर दे। इनके लिए ऐसी योजना की आवश्यकता है जो इनके रहन-सहन, आर्थिक, सामाजिक स्तर को ऊँचा उठा सके और देश के विकास में योगदान दे सके। साथ ही इनको अन्धविश्वास, मान्यताओं, रूढ़ियों, आदि से बाहर निकाल कर आधुनिकता के सम्पर्क में ला सके।

बैगा जनजातियों को संख्यात्मक विश्लेषण:-

उमरिया जिले में बैगा जनजातियों की कुल जनसंख्या 62670 है जो कुल अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 227250 है तथा अन्य वर्ग की कुल जनसंख्या 253587 है। जिसमें तीन विकासखण्डों करकेली, मानपुर तथा पाली में कुल चिन्हांकित ग्रामों की संख्या 248 है जहाँ कुल 11574 बैगा परिवार निवास करती हैं। जिनकी कुल जनसंख्या 48508 है। जिसमें पुरूष 25065 तथा महिलायें 23443 हैं जिनको बैगा विकास अभिकरण क्षेत्र में सम्मिलित किया गया है।

अभिकरण क्षेत्र के चिन्हांकित ग्राम एवं बैगा परिवार की संख्या

क्र.	विकासखण्ड का नाम	चिन्हांकित ग्रामों की संख्या	कुल बैगा जनजाति की जनसंख्या	पुरुष	महिला	बैगा परिवारों की संख्या
1.	करकेली	129	28807	13366	12941	6520
2.	मानपुर	70	9904	5098	4805	2496
3.	पाली	49	11797	6101	5696	2558
	योग	248	48508	25065	23443	11574

अध्ययन का उद्देश्य:-

प्रस्तुत शोध पत्र के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित है :-

- म.प्र. शासन की परिवार मूलक योजना का बैगा जन जातियो को लाभ।
- योजना की सार्थकता एवं बैगा परिवारों के आर्थिक विकास में महत्व।
- लाभान्वित परिवारों का संख्यात्मक अध्ययन।
- शोधार्थियों को लाभ।
- शासन के योजना के सार्थकता, हितग्राहियों को लाभ एवं योजना में व्याप्त कमियों का अध्ययन।

योजना का परिचय :-

मध्य-प्रदेश शासन की बैगा विकास अभिकरण उमरिया अथवा हितग्राही मूलक योजना अथवा परिवार मूलक योजना के नाम से संचालित इस योजना को उमरिया जिले के विभिन्न विकासखण्डों के बैगा बाहुल्य गाँवों को चिन्हांकित कर इस योजना के वितरण को सुनिश्चित किया जाता है। जिसके अन्तर्गत यदि जिले के समस्थ गाँवों का अवलोकन करें तो कुल आबाद गाँवों की संख्या 589 तथा वीरान गाँवों की संख्या 71 है। जिनमें से बैगा बाहुल्य योजना के लिए चिन्हांकित गाँवों की संख्या 248 है तथा 81 गाँव अभी छूटे हैं जिन्हें शामिल किया जाना शेष है अत: कुल 329 है। अत: अभी 260 गाँव अतिरिक्त हैं जो स्पष्ट करता है कि वह योजना केवल बैगा बाहुल्य ऐसे गाँवों के लिए है जिनका रहन-सहन, जीवन स्तर अत्यन्त ही निम्न है। जिनमें योजना का लाभ देकर उनके आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त करना है।

योजना का क्रियान्वयन

परिवार मूलक योजना को विशेष केन्द्रीय सहायता मद में प्रतिवर्ष उमरिया जिले के विकासखण्ड मानपुर, करकेली, पाली जिसकी कुल जनसंख्या 48508 है तथा कुल परिवारों की संख्या 11574 है। जिसके लिए प्रतिवर्ष शासन द्वारा राशि प्राप्त होती है जिसे विकासखण्ड में कलस्टर तैयार कर (एक कलस्टर में कम से कम 5 गाँव तथा अधिकतम 15 गाँव) गाँवों में योजना का संचालन विभिन्न विभागों (1) कृषि विभाग, (2) पशुपालन, (3) उद्यान विभाग, (4) हस्त-शिल्प एवं हथकरधा विकास निगम, (5) व्यापार एवं उद्योग केन्द्र आदिवासी वित्त विकास निगम, आदिम जाति कल्याण विभाग, (6) मैपसेट के माध्यम से किया जाता है। यह योजना वर्ष 2004-05 से संचालित है। वर्ष 2004-05 से वर्ष 2008-09 क बीच राशि रुपये 332.87 लाख से 1664 बैगा हितग्राहियों को लाभान्वित किया गया है। जिसका मुख्य उद्देश्य है इनकी आय वृद्धि कर इनके आर्थिक स्तर में सुधार लाना। योजना का क्रियान्वयन विभिन्न विभागों के द्वारा संचालित अनेक कार्यो के लिये चयनित हितग्राहियों को आर्थिक सहायता प्रदान कर किया जाता है।

परिवार मूलक योजना का विभागवार जो योजनाएं सम्मिलित की गई हैं वे अग्रांकित हैं-

(1) **कृषि विभाग -** इसके अन्तर्गत 20,000 रुपये तक की आर्थिक सहायता के रूप में डीजल पम्प, विद्युत पम्प, चैफकटर, खाद, बीज, मेड बंधान, भूमि समतलीकरण, कूप निर्माण, कीटनाशक दवाइयाँ एवं कृषि यंत्र आदि का वितरण किया जाता है। जिससे हितग्राहियों को आर्थिक सहायता के साथ भविष्य में आय वृद्धि कर जीवन स्तर में सुधार करना सहज हो सकें।

(2) **पशुपालन -** इसके अन्तर्गत दुग्ध उत्पादन को प्रोत्साहित करने हेतु दुधारू पशुओं के खरीद व बीमा आदि के लिए 20,000 रुपये के जानवर प्रदान किया जाता है। जिससे पशु पालन कर आय प्राप्त करते हुये जीवन स्तर जीवन स्तर सुधारा जा सकें और पिछड़े हुये हितग्राहियों को विकास की मुख्य धारा से जोड़ा जा सकें।

(3) **उद्यान विभाग -** किसानों को अपनी बाड़ी विकसित करने हेतु फल, पौधे, सब्जी बीज, डीजल/विद्युत पम्प, स्प्रिंकलर आदि के लिए 20,000 रुपये का सामान दिया जाता है। इसके तहत लाभान्वित हितग्राहियों को बाड़ी विकसित करने में सहयोग प्रदान किया जाता है।

(4) **हस्त-शिल्प एवं हथकरधा विकास निगम -** ऐसे बैगा जिनके पास भूमि नहीं है उन्हें हस्त-शिल्प एवं हथकरधा विकास के लिए 6 माह का प्रशिक्षण व उसके बाद टूल्स की सहायक सामग्री प्रदान की जाती है, जो 20,000 रुपये की लागत वाली होती है। ताकि भूमिहीन होने के बाद भी ये प्रशिक्षण प्राप्त करके स्वरोजगार कर अपना व अपने परिवार का आर्थिक विकास कर सकें।

(5) **व्यापार एवं उद्योग केन्द्र आदिवासी वित्त विकास निगम,**

आदिम जाति कल्याण विभाग – इस विभाग के अन्तर्गत किराना दुकान, ईंट भट्ठा, सेंटरिंग सामग्री, आटा चक्की आदि के कार्यो हेतु 20,000 रुपये की लागत की सामग्री प्रदान की जाती है। इससे हितग्राही व्यापार की ओर अग्रसर होकर अपना आर्थिक विकास कर सकें।

(6) **मैपसेट –** शिक्षित बेरोजगारों को तकनीकी/कौशल प्रशिक्षण के माध्यम से रोजगार दिया जाता है। इन्हे प्रशिक्षण के माध्यम से स्वरोजगार हेतु प्रेरित एवं प्रशिक्षित किया जाता है।

उपरोक्त विभागों के माध्यम से बैगाओं को लाभान्वित कराया जाता है। जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके और वे भी समाज के अन्य वर्गो के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर विकास की मुख्य धारा में जुड़ सकें। उनका भी सामाजिक स्तर जो अभी सामान्य से नीचे है सामान्य हो सकें।

योजना से लाभान्वित बैगा जनजाति :–

परिवार मूलक योजना से लाभान्वित बैगा जनजाति के लोग वर्ष 2008–09 में कुल 400 हितग्राहियों के लिए 80.00 लाख रुपये व्यय किए गए जो क्रमश: कृषि विभाग द्वारा 73 हितग्राहियों के लिए कुल 14.60 लाख रुपये, पशुपालन विभाग द्वारा 60 हितग्राहियों के लिए कुल 12.00 लाख रुपये, उद्यान विभाग द्वारा 45 हितग्राहियों के लिए कुल 9.00 लाख रुपये, भूमि0 सं0 उन्मुख विभाग द्वारा 20 हितग्राहियों के लिए कुल 4.00 लाख रुपये, भूमि सं0 सामान्य विभाग द्वारा 40 हितग्राहियों के लिए कुल 8.00 लाख रुपये, आदिम जाति कल्याण विभाग द्वारा 90 हितग्राहियों के लिए 18.00 लाख रुपये तथा मैपसेट भोपाल द्वारा 72 हितग्राहियों के लिए 14.40 लाख रुपये व्यय किए गए हैं। इस योजना के माध्यम से 800 हितग्राहियों के लिए 160.00 लाख रुपये व्यय किए गए।

निष्कर्ष:–

निष्कर्ष रूप में यह कह सकते हैं कि वर्ष 2008 से वर्ष 2009 के लिए जितनी राशि का आवंटन किया गया है उसमें 800 हितग्राहियों का चयन कर 160.00 लाख रुपये व्यय किए गए जो कि वृहद क्षेत्र के आवश्यकतानुसार काफी कम प्रतीत हो रही है। अब आवश्यकता है कि इस योजना के माध्यम से इनका और तेजी से विकास किया जाय ताकि ये भी अन्य समाज के लोगों की तरह आर्थिक रूप से मजबूत हो सकें। फिर भी यह योजना बैगाओं के आर्थिक विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। अन्य योजनाओं की तरह इस योजना का लक्ष्य सीमित न होकर काफी विस्तृत है। इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि जितने भी गरीब बैगा हैं सबको इस योजना का लाभ दिया जाय जैसे–जैसे योजना की राशि आती है उसी के अनुसार कलस्टर का निर्माण व चयन किया जाता है कि राशि घटने न पाए। कभी–कभी काफी प्रयास के बावजूद भी कुछ कमियां सामने आ जाती हैं जैसे राशि कम होना, बैगाओं की योजना के बारे में जानकारी न होना आदि इसके अलावा सर्वेक्षण के दौरान बहुत सारी कमियों का पता चला है। फिर भी बैगाओं के आर्थिक विकास के लिए यह योजना काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। बैगा इस योजना संतुष्ट भी हैं क्योंकि उन्हें ना ही इस राशि के लिए ब्याज और ना ही मूलधन वापस करना पड़ता है।

संदर्भ ग्रन्थ

- कार्यालय एकीकृत आदिम जाति कल्याण विभाग, उमरिया (म0–प्र0)।
- आदिम जाति तथा अनुसूचित जाति कल्याण विभाग, भोपाल, मध्य–प्रदेश शासन, मार्गदर्शिका, 2005।
- जिला सांख्यिकीय पुस्तिका–2008, उमरिया (म.प्र.)।
- कार्यालय एकीकृत आदिम विकास परियोजना, बाँधवगढ़, जिला उमरिया (म.प्र.)।
- मध्यप्रदेश सामान्य प्रशासन विभाग (मंत्रालय) वल्लभ भवन से जारी आदेश।
- डॉ. सी.पी. तिवारी – जनजाती पर्यावरण, आशा पब्लिसिंग कंपनी आगरा।
- डॉ. व्ही.सी. सिन्हा – व्यावसायिक पर्यावरण, एस.बी.पी.डी. पब्लिसिंग हाउस आगरा।
- विशेष पिछड़ी जनजाति– बैगा विकास अभिकरण उमरिया (म.प्र.)।
- www.zpumaria.nic.in,
- www.umaria.nic.in/statistic

****

महिला शिक्षा : महिला सशक्तिकरण की आधारशिला

डॉ. आशा साखी गुप्ता *

वर्तमान युग में महिला शिक्षा देश के आर्थिक एवं समग्र विकास का सर्वोत्तम तरीका है। एक शिक्षित महिला पूरे परिवार के तथा पूरे समाज को शिक्षित कर सकती है। महिला शिक्षा महिलाओं की आत्मनिर्भरता एवं सशक्तिकरण की ओर बेहतर कदम है। महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य महिलाओं को शक्तिशाली बनाना, महिलाओं के हाथ में अधिकार देना, उन्हे स्वावलम्बी बनाना ताकि देश व समाज का विकास हो सके।

निरक्षरता मानव जीवन के लिए अभिशाप है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा कि साक्षरता से ही महिलाओं और कमजोर वर्गो को समर्थ बनाया जा सकता है। डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने भी देश के विकास व समृद्धि के लिए शिक्षा को सर्वाधिक जरूरी बताया है। चूँकि बच्चे की प्रथम शिक्षिका माँ ही है, अत: महिला शिक्षा का महत्व बढ़ जाता है।

उद्देश्य –

1. महिला शिक्षा तथा सशक्तिकरण की आवश्यकता ज्ञात करना।
2. महिला साक्षरता दर को ज्ञात करना।
3. लड़कियों की विद्यालय छोड़ने की प्रवृत्ति के कारणों को ज्ञात करना।

शिक्षा ही किसी राष्ट्र के भूत वर्तमान तथा भविष्य को निर्धारित करती है। राष्ट्र के सुख समृद्धि की मजबूत रीढ़ की हड्डी राष्ट्रीय शिक्षा होती है। महिलाओं को बराबरी का दर्जा तथा सुदृढ़ स्थिति शिक्षा के माध्यम से ही प्राप्त हो सकती है। शिक्षा से महिलाऐं सशक्त, स्वावलम्बी तथा आत्मविश्वासी बनेगी। महिला शिक्षा से ही महिला सशक्तिकरण की प्राप्ति सम्भव है। इससे राष्ट्र के प्रति महिलाओं की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जा सकती है। इससे सम्पूर्ण समाज को लाभ होगा। नोबल पुरस्कार विजेता प्रो. अमर्त्यसेन ने भी राष्ट्र के विकास में महिला सशक्तिकरण के महत्व को स्वीकारा है।

लड़कियों को भी लड़को की तरह शिक्षा प्राप्त करने का पूरा अधिकार है। अत: विकास सम्बन्धी लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए, महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाना होगा, इस हेतु शिक्षा का प्रसार आवश्यक है। इससे कार्यक्षमता, उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि के साथ-साथ अन्य सरकारी कार्यक्रमों के लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू के अनुसार '' एक लड़के की शिक्षा एक व्यक्ति की शिक्षा है, परन्तु एक लड़की की शिक्षा सम्पूर्ण परिवार की शिक्षा है। ''

महिलाओं को साक्षर व शिक्षित करके ही उन्हें अपने अधिकारों, कर्तव्यों तथा जिम्मेदारियों के बारे में जागरूक बनाया जाना सम्भव है। शिक्षित महिलाऐं अपने परिवार के जीवन की गुणवत्त को बढ़ाते हुऐ, विकास में अपना सक्रिय योगदान दे सकती है। शिक्षा से महिला आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर होगी, जो निर्धनता उन्मूलन तथा प्रजनन दर में कमी का प्रभावी उपाय होगा। विभिन्न शोध अध्ययन यह दशति है कि शिक्षा तथा जनसंख्या वृद्धि दर में ऋणात्मक सह सम्बन्ध है। इस प्रकार महिला शिक्षा के विस्तार से जनसंख्या नियन्त्रण कार्यक्रम को प्रभावी रूप से लागू किया जा सकता है।

शिक्षा से महिलाओं में निर्णय लेने की क्षमता पैदा हो सकती है। शिक्षित लड़किया परिवार का आधार स्तम्भ होती है। जो परिवार को गरीबी अन्य समस्याओं के चक्रव्यूह से बाहर निकाल सकने में समर्थ होती है। इस प्रकार लड़कियों की शिक्षा को परिवार, समाज तथा देश के विकास की नीव कहा जा सकता है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् साक्षरता प्राप्ति हेतु 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा का प्रावधान किया गया। वर्ष 2002 में 86 वें संवैधानिक संशोधन के माध्यम से 6 से 14 वर्ष की आयु वर्ग के बच्चों की शिक्षा को मौलिक अधिकारों में सम्मिलित किया गया। इसके साथ ही सरकार ने सर्वशिक्षा अभियान, राष्ट्रीय साक्षरता मिशन, राष्ट्रीय बालिका शिक्षा कार्यक्रम, मिड डे मिल आदि अनेक योजनाऐं संचालित की जा रही है। इन कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप लड़कियों की साक्षरता दर में वृद्धि हुई है।

तालिका क्रमांक – 01

भारत में साक्षरता दर

वर्ष	कुल	पुरुष	महिला
1951	21-82	30-32	12-87
1961	31-47	42-49	19-74
1971	36-95	47-60	25-56
1981	44-92	55-95	33-20
1991	61-29	73-13	48-64
2001	69-14	79-66	57-80
2011	79-31	87-23	70-73

स्त्रोत –भारत की जनगणना

स्पष्ट है कि स्वतन्त्रता के पश्चात् साक्षरता दर 21.82 प्रतिशत से बढ़कर 2011 तक 79.31 प्रतिशत हो गई है। देश में स्त्री व पुरूष दोनो ही वर्ग की साक्षरता दर में वृद्धि हुई है, पर 1951 में पुरूषों की साक्षरता दर 30.32 थी, जो स्त्रियों की साक्षरता दर 12.87 की तुलना में अधिक थी।

स्त्री-पुरूष साक्षरता दर का यह अन्तर निरन्तर बना हुआ है। वर्ष 2011 में पुरूषों की साक्षरता दर 87.23 की तुलना में स्त्रियों की साक्षरता दर 70.73 प्रतिशत रही। वर्ष 2011 में स्त्री पुरूष साक्षरता दर के मध्य अन्तर कुछ कम हुआ है।

महिला शिक्षा के माध्यम से समाज में सार्थक परिवर्तन किया जा सकता है। बालविवाह, दहेज प्रथा तथा पर्दाप्रथा, छुआछूत जैसी सामाजिक बुराईयों पर शिक्षा के माध्यम से ही पूरी तरह से विजय प्राप्त की जा सकती है। अत: शिक्षा के बिना विकास तथा महिला सशक्तिकरण की कल्पना करना व्यर्थ है।

देश में साक्षरता दर में वृद्धि हुई है, फिर भी विद्यालय छोड़ने की प्रवृत्ति को हम रोक नहीं पाऐ है। रेड्डी एवं सिन्हा (2010) भारतीय राज्यों पर अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला कि 1993 में 27 मिलियन बच्चों ने कक्षा पहली में प्रवेश लिया, इसमें से आज भी देश में मात्र 10 मिलियन बच्चे कक्षा 10 वी तक पहूँच पाते है। एन.सी.ई.आर.टी. का समंक विश्लेषण भी यह बताता है

* प्राध्यापक,अर्थशास्त्र विभाग, शहीद भीमानायक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

कि प्राथमिक शिक्षा की तुलना में उच्च शिक्षा में विद्यालय छोड़ने की दर अधिक है। लड़कों की तुलना में लड़कियों की विद्यालय छोड़ने की दर अधिक है। देखिए तालिका क्रमांक - 02

तालिका 02 से स्पष्ट है कि प्रारम्भ से ही लड़कियों की विद्यालय छोड़ने की दर लड़कों से अधिक है। देश में प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा एवं उच्च माध्यमिक शिक्षा में लड़कियों व लड़कों की विद्यालय छोड़ने की दर में निरन्तर कमी आई है। वर्ष 2006-07 में प्राथमिक शिक्षा स्तर में लड़कियो की विद्यालय छोड़ने की दर लड़कों की तुलना में गत वर्षो की अपेक्षा कम रही है। पर माध्यमिक व उच्च शिक्षा के संदर्भ में स्थिति पूर्ववत है अर्थात् लड़कियों की विद्यालय छोड़ने की दर लड़कों की तुलना में अधिक है।

अत: एक ओर तो महिलाओं की साक्षरता दर कम है तथा दूसरी ओर लड़कियों की विद्यालय छोड़ने की दर अधिक है। अत: लड़कियों को उच्च शिक्षा की ओर प्रेरित करने की आवश्यकता है, ताकि महिला सशक्तिकरण की ओर सार्थक प्रयास किया जा सके।

महिला शिक्षा तथा सशक्तिकरण की दिशा में राजस्थान की अलवर तहसील में सखी ज्ञानशाला प्रोजेक्ट अप्रैल 2011 से सफलता पूर्वक संचालित किया जा रहा है, उक्त प्रोजेक्ट स्वयं सहायता समूह की सफलता से प्रेरित होकर बनाया गया है, इसे टाटा ट्रस्ट द्वारा वित्तीय सहायता प्राप्त होती है। इस प्रोजेक्ट के अन्तर्गत अभी तक 50 ज्ञान केन्द्र स्थापित हो चुके है। इसमें महिलाओं को पढ़ना, लिखना तथा गणित की सामान्य शिक्षा दी जाती है। इस तरह के केन्द्र आज राज्यों व तहसील स्तर पर स्थापित कर महिला शिक्षा तथा साक्षरता दर में वृद्धि तथा सशक्तिकरण की दिशा में सार्थक कदम साबित हो सकता है।

महिला साक्षरता स्तर कम होने के पीछे मुख्यत: गरीबी, सामाजिक कुप्रथा, विद्यालयों की कमी, घरेलू दायित्व का निर्वाह, अभिभावकों में जागरूकता का अभाव आदि कारण रहे है। ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों में आधारभूत बुनियादी सुविधाओं की अपर्याप्तता है। स्वच्छ पानी, बिजली, ब्लैक बोर्ड, शौचालय जैसी आवश्यक सुविधाऐं बेहतर नहीं है। आज भी देश में कई लोग लड़कियों की शिक्षा को अनुत्पादक तथा लड़कियों को पराया धन मानते है। यह संकीर्ण मानसिकता लड़कियों की शिक्षा को हतोत्साहित करती है।

देश के विकास की कुंजी तथा महिला सशक्तिकरण की आधार शिला लड़कियों की शिक्षा तथा साक्षरता ही है। उक्त तथ्य को ध्यान में रखते हुऐ, लड़कियों के प्रति भेद-भाव तथा दोयम दर्जे के व्यवहार को परिवर्तित करना आवश्यक है। इस परिवर्तन के लिए समाज के अन्य वर्गो को भी सहयोग करना आवश्यक है। गैर-सरकारी संगठन इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सकते है, लड़कियों का शिक्षा से आत्मनिर्भरता तथा बराबरी का दर्जा प्राप्त हो सकता है, तथा हम एक पूर्ण साक्षर तथा विकसित भारत के भविष्य की कल्पना कर सकते है।

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ. डी.आर. लहरे, प्रो. एस.एस. सोनवने -शिक्षा तथा महिला सशक्तिकरण ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य वर्तमान दशा तथा भावी दिशाऐं - प्रकाशक :-D.K. Acrencies (P) Ltd.
2. Rupon Basumatary : Dec' 2012 - School Dropout across India States- International Research Jarnal of Social Science
3. डॉ. सवलिया बिहारी वर्मा, डॉ. एम.एल. सोनी, डॉ. संजीव गुप्ता, - महिला जागृति और सशक्तिकरण :-प्रकाशक :- आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2005
4. Selected Education statistics, Ministry of human Resource development, Govt. of India.
5. NCERT Website
6. कुरूक्षेत्र

तालिका क्रं. - 02

विद्यालय छोड़ने की दर

Year	I - V			I - VIII			I - X		
	M	F	Total	M	F	Total	M	F	Total
1960–61	61.7	70.9	64.9	75	85	78.3	–	–	–
1970–71	64.5	70.9	67	74.6	83.4	77.9	–	–	–
1980–81	56.2	62.5	58.7	68	79.4	72.7	79.8	86.6	82.5
1990–91	40.1	46	42.6	59.1	65.1	60.9	67.5	76.9	71.3
2000–01	39.7	41.9	40.7	50.3	57.7	53.7	66.4	71.5	68.6
2006–07	28.71	21.77	25.67	40.59	44.39	42.39	–	–	–

Source: selected education statistics, ministry of human resource development, Govt of India.

****

रतलाम जिले के ग्रामीण परिवारों में सामाजिक परिवर्तन

डॉ. राजश्री शाह *

भारतीय ग्रामीण परिवार संक्रमण की स्थिति में है। औद्योगिकरण के प्रभाव से ग्रामीण परिवारों का स्वरूप, संस्थाओं में निरंतर परिवर्तन आ रहा है। शिक्षा, वर्तमान सोच, औद्योगिकरण, नगरीकरण आदि अनेक कारणों से ग्रामीण परिवार की सोच में परिवर्तन आ रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों में परिवर्तन पर अध्ययन होते रहे हैं, किन्तु रतलाम जिले के ग्रामीण परिवारों की संरचना में परिवर्तन पर अध्ययन नहीं हो पाया है। अत: यह विषय ग्रामीण परिवारों की संरचना में परिवर्तन के बारे में जानकारी एवं उनसे उत्पन्न समस्याओं के निराकरण हेतु सुझाव एवं रचनात्मक उपाय प्रदान करने में संभव एवं उपयोगी हो सकेगा।

अध्ययन क्षेत्र:-

विषय की स्पष्टता एवं अध्ययन कार्य की सफलता के लिए अध्ययन क्षेत्र का निर्धारण करना अति आवश्यक है। इस दृष्टि से अध्ययन का क्षेत्र शोध कार्य हेतु रतलाम जिला निश्चित किया गया है, जिसमें आलोट, जावरा, रतलाम, सैलाना और बाजना यह पाँच तहसील हैं। इन तहसीलों में स्थित ग्रामों के परिवार के मुखिया से अध्ययन के विषय के बारे में निदर्शन पद्धति के माध्यम से जानकारी संकलित की गई है। प्रत्येक तहसील के ग्राम में से चार-चार गांव और प्रत्येक गांव में से 10-10 परिवारों को आदर्श के रूप में चुना है।

चयन एवं उद्देश्य:-

डॉ. चौहान ने अपने अध्ययन में इस बात को प्रमाणित किया है कि एक ग्राम का अध्ययन भारतीय ग्रामीण समाज के अध्ययन को प्रभावित कर सकता है। भारत का कोई सा भी ग्राम राष्ट्र को प्रतिनिधित्व कर सकता है। अत: अध्ययन हेतु रतलाम जिले के ग्रामीण परिवारों का चयन किया है।

न्यादर्शों का चुनाव एवं निर्दर्शन प्रारूप :-

प्रस्तुत अध्ययन में रतलाम जिले के आलोट, जावरा, बाजना, सैलाना के सभी ग्रामों की सूची सांख्यिकी विभाग, जिला रतलाम कार्यालय से प्राप्त की। लॉटरी निदर्शन प्रविधि के अनुसार ग्रामीण स्तर के गांवों का चयन किया। चयन उपरांत परिवारों के चयन हेतु मतदाता सूची का प्रयोग किया। सूची पंचायत विभाग से प्राप्त की। प्रत्येक ग्राम से 10 परिवारों का चयन इसलिए किया कि अध्ययन में ली गयी समस्त इकाइयों को न्याय प्राप्त हो सके।

सूचना प्राप्त करने की प्रणाली:-

ग्रामीण स्तर पर लोगों का जीवनस्तर, कार्यशैली, भाषा, संस्कृति में लगभग समानता पाई जाती है, किन्तु अध्ययन हेतु विषय की जानकारी के लिए विशेष प्रयत्न करना पड़ता है। इन सभी को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन में अधिकांश ग्रामीण उत्तरदाता अशिक्षित होने से अनुसूची एवं साक्षात्कार प्रविधि का उपयोग किया है।

परिवर्तन जीवन का स्वाभाविक नियम है, इसके सदुपयोग-दुरूपयोग पर ही भविष्य का जीवन बनता है, बिगड़ता है। ग्रामीण जीवन सहजता, निष्ठता, कर्मठता एवं तपस्या का जीवन है। इसी जीवन में सम्पूर्ण समाज की नींव तैयार होती है। समाज का विकास, उसकी उन्नति, ग्रामीण जीवन की उन्नति पर निर्भर करता है। इसी शोध प्रबंध के माध्यम से ग्रामीण परिवारों की तह में जाकर पारिवारिक संरचना में परिवर्तन सम्बन्धी वृत्तांत को जानने का प्रयास किया है। समूचे शोध में से कुछ प्रश्न, जैसे पारिवारिक, वैवाहिक, शैक्षणिक, जातिगत, का निष्कर्ष दिया जा रहा है, जो निम्नानुसार है -

परिवार का स्वरूप :- ग्रामों में परिवार एकाकी एवं संयुक्त दोनों प्रकार के परिवार पाये गये हैं। 55 प्रतिशत उत्तरदाता एकाकी परिवार, 45 प्रतिशत संयुक्त परिवार में रहते हैं। स्पष्ट है कि संयुक्त परिवार की अपेक्षा एकाकी परिवार अधिक है।

वैवाहिक स्थिति :- प्रस्तुत अध्ययन में 96.5 प्रतिशत उत्तरदाता ने एक विवाह किया है। 3.5 प्रतिशत ने बहुपत्नी विवाह किया है। स्पष्ट है कि ग्रामों में एक विवाह की प्रथा है।

मकानों का स्वरूप :- 82.5 प्रतिशत उत्तरदाता का मकान कच्चा, 12 प्रतिशत का पक्का, 5.5 प्रतिशत का अर्द्धकच्चा एवं 80.5 प्रतिशत उत्तरदाता का मकान निजी, जबकि 19.5 प्रतिशत उत्तरदाता का मकान किराये का है।

जातिगत स्थिति :- 66 प्रतिशत उत्तरदाता उच्च जाति के तथा 34 प्रतिशत निम्न जाति के हैं एवं जातिगत भेदभाव, खानपान एवं विवाह के सम्बन्ध में रखते हैं।

वैवाहिक स्थिति :- 71 प्रतिशत उत्तरदाता विवाहित, 0.5 प्रतिशत अविवाहित, 2.5 प्रतिशत विधुर, 21 % विधवा एवं 05 प्रतिशत तलाकशुदा हैं। शत-प्रतिशत उत्तरदाता ने अपनी ही जाति में विवाह किया है। आज भी उत्तरदाता अपनी ही जाति में बच्चों के विवाह करना चाहते हैं। अंतर्जाति विवाह पसंद नहीं करते हैं। मात्र 30 प्रतिशत उत्तरदाता ने अंतर्जाति विवाह को पसंद किया है। स्पष्ट है ग्राम में विवाह के स्वरूप में परिवर्तन नहीं आया है।

दहेज के संबंध में :- ग्रामों में माता-पिता अपने बच्चों के विवाह के समय में दहेज नहीं लेना चाहते हैं, इस प्रथा को पसंद नहीं करते। 64 प्रतिशत उत्तरदाता दहेज को बुरा मानते हैं।

महिलाओं की परिवार में स्थिति :- स्त्री को पुरूष के बराबर समान अधिकार दिलवाने के सम्बन्ध में शोध क्षेत्र में परिवर्तन आया है। 84 प्रतिशत उत्तरदाता स्त्री को पुरूष के बराबर समान अधिकार दिलवाना चाहते हैं। 84 प्रतिशत उत्तरदाता सम्पत्ति के बँटवारे में भी पुत्रों के समान पुत्रियों को भी अधिकार देते हैं।

सुझाव:- 1. प्रस्तुत अध्ययन से विदित हुआ कि ग्रामों में कृषि व्यवस्था ही मात्र मुख्य व्यवसाय है। अत: कृषि के साथ लघु कुटीर उद्योगों की स्थापना की जावे ताकि स्थानीय स्तर पर ही बच्चों को रोजगार प्राप्त हो सके। शहरी भूमि पर दबाव नहीं बढ़े।

2. ग्रामीण जनसंख्या के दबाव को कम करने हेतु शिक्षा का व्यापक प्रसार हो, शिक्षा कार्यान्वित हो ताकि देरी से विवाह, अंधविश्वास, कुप्रथाओं की समाप्ति हो सके, स्वस्थ मनोरंजन का विकास हो ताकि ग्रामों में कम्प्यूटर, मोबाइल के दुश्परिणाम दिखाई नहीं देवे।

संदर्भ ग्रंथ

1. एम.एस. लावनिया - सामाजिक अन्वेषण में अनुसंधान पद्धतियां, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर (1985)
2. डॉ. बी.एम. जैन - शोध प्रविधि एवं क्षेत्रीय तकनीक, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर (1990-91)
3. डॉ. ब्रजराज चौहान - भारत में ग्रामीण समाजशास्त्र, ए.सी. ब्रदर्स, इटावा, भोपाल (1980)
4. रामबिहारी सिंह तोमर - भारत में समुदाय, श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगर

* प्राध्यापक - समाजशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सन् 1857 की क्रांति में बुन्देलखण्ड का योगदान
(सागर एव दमोह जिले के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. विजयकुमार त्रिपाठी*

बुन्देलखण्ड और उसके आसपास का क्षेत्र भारत की शस्य श्यामला, सतत् वत्सला एवं पूज्यभूमि का हृदयस्थल है। इसका गौरवमय और गरिमामण्डित इतिहास भारतीय इतिहास के साथ अदिकाल से जुड़ा हुआ है। इतिहास के हर युग में इस प्रदेश में अपने अमूल्य एवं वीरोचित योगदान के द्वारा हमारी ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक धरोहर को समृद्ध बनाया है।

मध्यप्रदेश के बुन्देलखण्ड क्षेत्र में सागर-दमोह जिले के उत्तर में छतरपुर, दक्षिण में नरसिंहपुर तथा जबलपुर तथा पूर्व में पन्ना एवं पश्चिम में रायसेन तथा उत्तर पश्चिम में झांसी जिला स्थित है। मध्यकाल में यह गोंडवाना और बुन्देलखण्ड की राजनैतिक शक्तियों का एक प्रमुख संरक्षण स्थल बना हुआ था। सर्वप्रथम गोंड महराजा दलपतशाह और रानी दुर्गावती ने विपत्तिकाल में दमोह जिले के सिंग्रामपुर के समीप सैन्य संगठन किया था।

वहीं दूसरी ओर महाराजा छत्रसाल बुन्देला ने अपने संघर्षकाल में दमोह एवं सागर के जंगलों में आश्रय प्राप्त किया था। 1818 ई. में अंग्रेजों द्वारा इसे सागर-नर्मदा क्षेत्र में सम्मिलित किया गया। जबलपुर और झांसी जैसे उच्च राजनीतिक केन्द्रों की निकटता से यह जिला हमेशा प्रभावित होता रहा। इसी कारण 1842 के बुन्देला विद्रोह में इस क्षेत्र ने उल्लेखनीय भूमिका निभाई। 1857 के महान विप्लव में भी जिले का अविस्मरणीय योगदान रहा। इस संदर्भ में अंग्रेज इतिहासकार आर.वी.रसेल ने लिखा है कि ''1857 में सिपाही विद्रोह के समय सागर और दमोह जिले में विद्रोह का जो दावानल भड़का था उसने 6 माह तक अंग्रेज सेना को ''नाकों- चने चबवा दिये।''

बुन्देला विद्रोह के दमन के बाद के वर्षों में लोगों में अन्दर ही अन्दर तीव्र असन्तोष गहराता गया जिसका परिणाम सन् 1857 में विशाल दवानल के रूप में फूट पड़ा। मई के आरम्भ में इस क्षेत्र में अफवाहे फैल गई थी कि अंग्रेजी शासन के आदेश से घी, आटा और शक्कर में सुअर और गाय का खून और हड्डी का चूरा मिला दिया गया है।

उसी समय शाहगढ़ के राजा बख्ताबली ने, जिसकी जागीर सागर और दमोह जिलों में स्थित थी, अंग्रेजों के विरूद्ध युद्ध करने के इरादे से सैनिक एकत्र करना शुरू कर दिये। इस समय 42 वीं देशी पैदल सेना की दो कम्पनियां दमोह की रक्षा के लिये तैनात थीं, जिन्होंने 1 जुलाई 1857 को सागर में विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह से दमोह में अत्याधिक आतंक छा गया। यह खबर सुनकर महाजनों/रहीसों ने अपना रूपया-पैसा, धन-सम्पत्ति छिपा ली। 2 जुलाई 1857 को दमोह के डिप्टी कमिश्नर ने डेढ़ लाख रूपये के खजाने को जेल के किले में रखने का निर्णय किया।

अगले दिन सागर से यह जरूरी संदेश पाकर कि विद्रोही सैनिक टुकिड़याँ इस खजाने को पाने के लिये दमोह की ओर बढ़ रही हैं, डिप्टी कमिश्नर ने यूरोपीय और भारतीय सैनिकों को एकत्र किया और उनसे परामर्श कर यह निर्णय लिया कि इस कोष को जेल के किले में सुरक्षित रख दिया जाये और किले में ही आत्मरक्षा के लिये रहा जाये परन्तु अंतिम क्षण में उसे उन भारतीय सैनिकों की विश्वसनीयता पर संदेह उत्पन्न हो गया जिन पर किले की रक्षा का दारोमदार था। वे उसी सैनिक दल के थे जिस टुकड़ी ने सागर में विद्रोह कर दिया था। अतएव सभी अफसर रात को अपने परिवारों सहित दमोह से चल दिये। इस दशा में उन्होंने नरसिंहपुर तक सत्तर मील की यात्रा की और वहाँ सुरक्षित तो पहुंच गये तथापि वे भूख और वर्षा से अत्यंत बेहाल हो गये थे।

सागर के विद्रोही दमोह पहुंचे :

सागर में उपद्रव करने के बाद सैनिक टुकड़ी 4 जुलाई 1857 को प्रात: दमोह पहुंची। पैदल सैनिक जेल गये और वहां उन्होंने खजाने की मांग की, जिसे मानने से सूबेदार मेजर और हवलदार रंजीत सिंह ने इन्कार कर दिया। कहा जाता है कि घुड़सवार सैनिकों ने अधिकारियों को मार डालने के इरादे से उनकी तलाश की, किन्तु सफल न होने पर सूबेदार मेजर तथा रंजीत सिंह को अपने साथ शामिल होने और खजाना देने के लिये सहमत न होते देखकर विद्रोहियों ने स्टेशन छोड़ दिया और ग्रामों को लूटा, किन्तु उन्होंने दमोह में कोई नुकसान नहीं किया।

यहॉ यह उल्लेखनीय है कि सूबेदार मेजर का परिवार सागर में ब्रिगेडियर के कब्जे में था, जिसने उन्हें गिरफ्तार कर रखा था। सम्भवत: अपने परिवार की सुरक्षा को दृष्टि से ही उसने अंग्रेजों के प्रति वफादारी दिखाई। इसी समय कर्नल मिलर अपनी सेना सहित जबलपुर से दमोह पहुँचे, पर वहाँ की स्थिति देखकर उन्होंने किले के सैनिकों को नि:शस्त्र करना उचित न समझा। अन्त में जबलपुर और नागपुर से विशेष (स्पेशल) सेना भेज कर विद्रोही पराजित किये गये।

हिण्डोरिया के ठाकुर किशोरसिंह का शौर्य :

इसके पश्चात् बानपुर तथा शाहगढ़ के विद्रोही राजाओं ने जिले के सभी छोटे सरदारों के पास अपने दूत भेजकर उनसे आग्रह किया कि वे अंग्रेजों के प्रति वफादारी छोडें। हटरी के छोटे राजा को छोड़कर लगभग प्रत्येक लोधी भू-स्वामी उन लोगों का साथ देने को राजी हो गये जो अंग्रेजी हुकुमत का तख्ता पलटने की कोशिश कर रहे थे।

देखते ही देखते बानपुर और शाहगढ़ के राजाओं के नेतृत्व में अंग्रेज विद्रोही संगठित होने लगे। 10 जुलाई 1857 को हिण्डोरिया के ठाकुर किशोर सिंह ने अपने भाइयों और अनुयायियों सहित दमोह पर आक्रमण कर थाने पर कब्जा कर लिया। उन्होंने तहसील तथा मुन्सिफ के कार्यालय के अभिलेखों को नष्ट कर दिया। डाक बंगलों में आग लगा दी।

जब यह समाचार सागर पहुंचा तो 31 वीं पैदल सेना की दो टुकड़ियों तथा दो तोपों को लेकर केप्टन पिंकी सागर से दमोह पहुँचा। उसने 42 वीं देशी पैदल सेना की सहायता से किशोरसिंह को पीछे खदेड़ दिया और दमोह से 12 मील दूर हिण्डोरिया की ओर चला गया। तब किशोरसिंह ने अपने 4000 अनुयायियों और शाहगढ़ के राजा की सैन्य टुकडियों तथा 2 भारी तोपों के बल पर जिले की दूसरी ओर के अनेक ग्रामों को लूटा और साढ़े चार माह तक कुमारी थाना को अपने कब्जे में रखा।

किशोर सिंह को जीवित या मृत गिरफ्तार करने के लिये ब्रिटिश शासन ने 1000 रूपये का पुरूस्कार घोषित किया। दमोह खास में अंग्रेजों का आधिकार स्थापित हो जाने पर भगोड़े डिप्टी कमिश्नर को नरसिंहपुर से दमोह लौट जाने

* प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, इतिहास विभाग, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

का आदेश दिया गया। उसने 25 जुलाई 1857 को अपना प्रभार ग्रहण किया।

विद्रोह का शंखनाद :

फ्रांस की महान क्रांति ने जो ऐतिहासिक भूमिका पेरिस ने निभाई यह कहना अन्योक्ति न होगी कि वही भूमिका सन् 1857 की क्रांति में बुन्देलखण्ड क्षेत्र ने निभाई। झांसी की रानी ने इस विद्रोह को निर्णायक रूप से प्रभावित किया था। यह क्षेत्र उस समय जनता के दिलों की प्रेरणा व क्रांति का हृदयस्थल बन गया था। सागर में 28 जुलाई 1857 को रावस्वरूप सिंह, भानसिंह तथा सोनी सिंह बालकोट से अपने 200 अनुयायियों को लेकर शाहगढ़ के राजा से आ मिले और उन्होंने दमोह पर आक्रमण कर दिया परन्तु उन्हें दमोह में तैनात 31 वीं तथा 42 वीं पैदल सेना ने पीछे खदेड़ दिया। लेकिन उन्होंने 5 अगस्त को फिर से हमला किया, किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। परिणामस्वरूप उन्होंने जिले के अनेक ग्रामों को लूटा।

आगे चलकर रावस्वरूप सिंह, भानसिंह तथा सोनीसिंह को गिरफ्तारी के लिए क्रमश: 500रू., 250रू. और 25रू. पुरूस्कार की सिफारिश की गई। जुलाई के अंत तक पूरे दमोह में विद्रोही फैल चुके थे। जिनका नेतृत्व हिण्डोरिया का सरदार किशोर सिंह कर रहा था।

धीरे-धीरे सागर और दमोह के सभी अंचलों में अगस्त 1857 के मध्य तक विद्रोह फैल गया और अंग्रेजों के पास केवल मुख्यालय ही बचे रहे। सभी पुलिस वाले भाग गये या भगा दिये गये और सैकड़ों भू-स्वामियों को विद्रोहियों के साथ मिलकर लोगों को खाद्य सामग्री से उनकी सहायता करने के लिए बाध्य किया गया। अन्य अनेक लोगों के अलावा दमोह जिले में विद्रोह के प्रधान नेता भानगढ़ के राजा गंगाधर, सिंग्रामपुर के राजा देवीसिंह, अभाना के राजा तेजसिंह, कारीजोग के पंचमसिंह राठौर, किशनगंज के सूबेदार रघुनाथराव, मण्डन गुरू, सूबेदार गोविन्दराव आदि प्रमुख थे।

अंग्रेजों ने स्थिति को देखते हुए समीप के मुख्यालय जबलपुर से तुरन्त सहायता मांगी और 24 अगस्त को नागपुर की चल सैनिक टुकड़ी दमोह आ पहुंची थी। इसके बाद शीघ्र ही बालकोट पर अधिकार कर लिया, जिस पर विद्रोहियों का कब्जा था और किला नष्ट कर दिया गया।

इसके पश्चात् ठाकुर किशोर सिंह के हिन्डोरिया स्थित किया बन्द मकान पर आक्रमण किया गया और सैकड़ों विद्रोही अंग्रेजों द्वारा पकड़कर मौत के घाट उतार दिये गये। इनमें किशनगंज के क्रांतिकारी रघुनाथराव भी शामिल थे। इस संदर्भ में इतिहासकार श्री सुधीर सक्सेना ने लिखा है कि ''क्रांति में रघुनाथ के सक्रिय भाग लेने से अंग्रेज अत्यंत कुपित हुये। अत: बदले की भावना से प्रेरित होकर अंग्रेजों ने उन्हें मृत्युदण्ड दिया और वे फांसी पर लटका दिये गये।

हटा पर अधिकार :

इन विद्रोहियों ने दमोह पर पुन: 13 सितम्बर 1857 को हमला किया, जिसकी सुरक्षा लेफ्टीनेन्ट डिकेन्स के अधीन 31वीं बंगाल देशी पैदल सेना के 200 सैनिक कर रहे थे। अधिक सेना के साथ जबलपुर डिवीजन के कमिश्नर मेजर अर्सकाइन के समय पर आ जाने से दमोह को बचा लिया गया। 15 तारीख को अंग्रेजों की ओर से पन्ना की टुकड़ियों ने हटा नगर और तहसील को शाहगढ़ के विद्रोहियों से वापस छीन लिया।

18 सितम्बर 1857 को दमोह में खबर पहुंची की 50 वीं पैदल सेना ने नागौद में विद्रोह कर दिया हैं। अर्सकाइन चौकन्ना हो उठा, क्योंकि उसे संदेह था कि जबलपुर में तैनात 50 वीं देशी पैदल सेना भी विद्रोह कर सकती है। इस खबर के फैलने से पहले ही 52 वीं पैदल सेना की 2 कम्पनियों को सागर मार्ग पर दमोह से 3 मील दूर ले जाया गया और बंदूक की नोक पर उनसे हथियार रखवा लिये गये सैनिक भौंचक्के रह गये और अस्त्र-शस्त्र देने में आनाकानी करने लगे, किन्तु अपनी ओर बन्दूकें तनी हुई और पलीते जलते देखकर उन्होंने अपने अस्त्र-शस्त्र सौंप दिये।

अंग्रेजों में हताशा :

सागर, दमोह क्षेत्र में विद्रोहियों ने पूरे जिले में लूटमार मचा रखी थी सितम्बर 1857 में दमोह जिला उजाड़ हो चला था। दमोह की रक्षा के लिये तैनात 31 वीं देशी बंगाल सेना के 200 सिपाही सागर लौट गये। 31 सितम्बर को अंग्रेज 1 लाख 30 हजार रूपये का खजाना लेकर दमोह खाली कर गये। दमोह का प्रभार, पन्ना-राजा के एक सैनिक अधिकारी शामले-जू को सौंपा गया। वह अंग्रेजों की ओर से 31 सितम्बर को तोपों और सैनिकों के साथ दमोह पहुंचा।

उधर विद्रोही 52 वीं पैदल सेना दमोह की ओर बढ़ रही थी। मार्ग में अंग्रेजी सेना द्वारा उसे पराजित होना पड़ा परन्तु विद्रोही दमोह की ओर बढ़ते गये। यह दल दमोह पहुंचा और सिंग्रामपुर के मालगुजार देवीसिंह के नेतृत्व में उसने 24 अक्टूबर 1857 को दमोह पर हमला किया। शामले-जू की सेना ने उसका कुछ प्रतिरोध भी किया।

सागर नगर मई माह में शान्त रहा लेकिन देश की बाकी भागों में हो रही घटनाओं ने यहां भी हलचल मचाई। शाहगढ़ के राजा बख्तबली ने विद्रोही सैनिकों को एकत्रित करना प्रारम्भ कर दिया और युद्ध की तैयारियों में संलग्न हो गये। इसी समय चंदेरी के डिप्टी कलेक्टर का मद्द के लिए सागर संदेश पहुंचा और मेजर गासन सैनिक सहायता लेकर ललितपुर की ओर कूच कर गया जब वह मालथौन पहुंचा तो उसे ज्ञात हुआ कि उत्तरी दर्रे पर विद्रोही बुन्देला सिपाहियों का अधिकार है।

इसी समय सागर के सैनिकों ने विद्रोह कर दिया और मेजर गासन को घेर लिया मेजर को मजबूर होकर सागर वापस भागना पड़ा। बानपुर के राजा मर्दनसिंह ने विद्रोहियों की सहायता से अपने किले पर अधिकार कर लिया। राहतगढ़ के किले पर वह अपने साथियों सहित डटा रहा इस सफलता के बाद राजा और उसके सथियों ने बरोदिया और बीना की ओर कूच किया बरोदिया की गढ़ी पर अफगान और पठान मोर्चा संभाले हुए थे इस संघर्ष में गढ़ी का सरदार मारा गया और राजा भी घायल हो गया।

सागर के शेख रमजान की वीरता :

सागर में आजादी के प्रथम शंखनाद का उद्घोष की ध्वनि का श्रेय अनियमित पैदल सेना को है शेख रमजान जो 42 वीं सेना का सिनियर सूबेदार था इस विद्रोह के नेतृत्व के लिए सबसे पहले सागर आया।

इसने मस्जिद में अपनी तलवार की धार तेज की फिर मालिक की इबादत की और संकेत के रूप में नगाड़े की नाद पर इस वीर ने वगावत का झंडा बुलंद किया। सागर की जनता ने भी अभूतपूर्व उत्साह के साथ जहां भी सैनिक जाते उनका स्वागत किया। सागर सदर बाजार के लोगों ने भी विद्रोही सैनिकों का पूरा साथ दिया।

राहतगढ़ के प्रसिद्ध ऐतिहासिक किले पर अम्बापानी के नबाव आदिल मुहम्मद खान एवं फाजिल मोहम्मद खान ने अपना अधिकार कर लिया। उंची पहाड़ी पर बना हुआ यह किला सागर जिले में बड़े ही सामरिक महत्व का किला है। राहतगढ़ के किले पर कब्जे के बाद शाहगढ़ के विद्रोहियों ने गढ़कोटा के किले पर भी अपना कब्जा किया।

सागर के जिन प्रमुख व्यक्तियों ने इस समर में सक्रिया भूमिका निभाई उनमें जंगासिंह, सुहागपुर के तालुकेदार बलभद्र सिंह, शाहगढ़ के राजा के भाई लक्ष्मण सिंह और कादरखान पिण्डारी प्रमुख थे।

विद्रोही सेनानियों द्वारा दमोह में सघर्ष :

रावस्वरूप सिंह बालकोट 25 अक्टूबर 1857 को अपने 200 अनुयायियों के साथ देवीसिंह और 52 वीं पैदल सेना के विद्रोहियों से आ मिला और उन्होंने शामले-जू को पराजित कर दिया। एक अन्य संघर्ष में विद्रोही नेता सूबेदार गोविन्दराव ने शामले-जू की टुकड़ियों से घमासान युद्ध किया और उसे दमोह नगर के बाहर खदेड़ दिया।

उसके बाद वे जेल के किले में गये, जहाँ जेल के रक्षकों को समर्पण करने पर बाध्य किया गया और उन सबकी हत्या कर दी गई। उसके बाद विद्रोहियों ने दमोह नगर को लूटा, अभिलेखों और सरकारी इमारतों में आग लगा दी, कचहरी को उड़ा दिया गया और डिप्टी कमिश्नर के घर को तहस-नहस कर दिया, किन्तु उन्होने उसे जलाया नहीं।

दमोह में कुछ दिन ठहरने के कुछ दिन पश्चात् वे सागर जिले के गढ़ाकोटा के विद्रोहियों से जा मिले और प्रतिदिन आस-पास के क्षेत्रों में लूटपाट करने लगे। कुछ दिनों बाद कुमुक मिल जाने पर पन्ना की टुकड़िया और उस पर तब तक निर्विरोध कब्जा किये रहीं, जब तक कि शामले-जू ने जिले का प्रभार अंग्रेजों को नहीं सौंप दिया।[12]

विद्रोह की समाप्ति :

पन्ना की सेनाओं का दमोह पर अधिपत्य स्थापित हो जाने के बावजूद हिन्डोरिया और हटा के आस-पास के क्षेत्र पर विद्रोहियों का अधिकार बना रहा। विद्रोही इतने शक्ति सम्पन्न थे कि जनरल ह्विटलॉक भी उनसे संघर्ष करने से बचता रहा। 17 मार्च 1857 को जनरल हिवटलॉक को हटा होते हुये नागोद और पन्ना की ओर कूच करने का आदेश प्राप्त हुआ।

पन्ना जटाशंकर ग्राम के पास ही स्थित था, जहां लगभग 500 विद्रोही थे और उनके पास 200 तोपें थी। मेजर अर्सकाइन ने ह्विटलॉक को विद्रोहियों पर आक्रमण करने को कहा किन्तु ह्विटलॉक टाल गया और दमोह डिवीजन के बाहर चला गया।

20 तारीख को जबलपुर के डिप्टी कमिश्नर ने दमोह और जबलपुर के बीच टुकड़ियों के गुजरने का लाभ उठाते हुये जबेरा और सिंग्रामपुर में अपने थाने फिर से स्थापित कर दियें, किन्तु देवीसिंह और मेहरबान सिंह के नेतृत्व में विद्रोहियों की मजबूत टुकड़ियों ने उन्हें शीघ्र ही वहॉ से खदेड़ दिया। यद्यपि अंग्रेजों ने वहॉ अपनी चौकी कायम करने की बहुत कोशिशें कीं, किन्तु वे ऐसा नहीं कर पाये।

10 अगस्त 1857 तक सागर नर्मदा क्षेत्र के कमिश्नर अर्सकाइन ने यह रिपोर्ट भेजी ''मैं विश्वास और प्रसन्नता के साथ कह सकता हूँ कि आठ जिलों के मेरे डिवीजन में शांति स्थापित हो गई है।

यद्यपि कुछ नेता अभी भी गिरफ्तार नहीं किये जा सके हैं, यद्यपि उनके अनुयायी बहुत कम रह गये हैं। 13 सितम्बर को हिंडोलिया का किला ध्वस्त कर दिया गया और अंत में मानगाढ़ के राजा गंगाधर के पकड़े जाने पर ही बड़ी कठिनाई से विद्रोह शांत किया जा सका।[14]

निष्कर्ष :

भारतवर्ष के प्रथम स्वाधीनता संग्राम सन् 1857 की इस महान क्रांति में समूचा बुन्देलखण्ड क्षेत्र क्रांतिकारी गतिविधियों का शाक्तिशाली केन्द्र था। म.प्र. का सागर एव दमोह जिला भी इससे अछूता न रहा और वह ब्रिटिश प्रतिरोध का प्रमुख केन्द्र बना रहा।

जिले की जुझारू जनता, जमींदार वर्ग और 52 वीं पैदल सेना ने इसमें अपना अद्धितीय योगदान दिया। विद्रोह की सम्पूर्ण अवधि में यह जिले ब्रिटिश प्रशासन के लिये एक बड़ी समस्या के रूप में सामने आये। विद्रोह इतना तीव्र एवं सशक्त था कि कई बार अंग्रेजों के अत्याधुनिक सामरिक संसाधनों का डटकर मुकाबला किया। इन जमींदारों में हिन्डोरिया के ठाकुर किशोरसिंह का नाम विशेष उल्लेखनीय है, उन पर ब्रिटिश शासन द्वारा जीवित या मृत गिरफ्तार करने पर 1000रू. का पुरूस्कार घोषित किया गया।

1857 के विद्रोह का क्रूरतापूर्वक दमन कर दिया गया, जिले के सैकड़ों लोगों को जान-माल से हाथ धोना पड़ा। समूचे क्षेत्र में आतंक छा गया। विद्रोहियों के गावों को नष्ट कर दिया गया और उनकी सम्पत्ति राजसात कर ली गई। इस प्रकार सागर एवं दमोह जिले के क्रांतिकारियों ने ब्रिटिश प्रतिरोध कर अपने त्याग और बलिदान का एक अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया जो बुन्देलखण्ड के इतिहास में स्वर्णाक्षरों से अंकित है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. थामस वाटर्स : युवानच्वांग ट्रैबल्स, पृ. 249-50.
2. कनिंघम : एन्सियंट वायोग्राफी आफ इण्डिया, पृ. 68.
3. एपी ग्राफ्रिया इण्डिका-याग, पृ-221
4. एनिसयंट ज्योग्राफी ऑफ इण्डिया, पृ.442
5. लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया, पृ 86.
6. इंडियन एन्टीक्वरी, पृ 131
7. म.प्र. जिला गजेटियर सागर पृ. 68
8. फौरेन पॉलिटिकल प्रोसिडिन्स 30 दिसम्बर 1859. नं.265 नेशनल आर्काइव्ज.नई दिल्ली.
9. श्रीवास्तव, पी.एन. : दमोह जिला गजेटियर 1980 पृ.58.
10. व्यास, डॉ हंसा : मध्यप्रदेश में स्वतंत्रता संग्राम (1857 से 1947) 2007 पृ.5.
11. मिश्र, द्वारका प्रसाद : मध्यप्रदेश में स्वाधीनता आंदोलन का इतिहास पृ.83.
12. श्रीवास्तव, पी.एन. : दमोह जिला गजेटियर 1980 पृ. 59.
13. रसल, आर.वी. : दमोह जिला गजेटियर इलाहबाद 1906. पृ.22.
14. मध्यप्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, सागर संभाग खण्ड 2 पृ.76.
15. चौधरी, एस.बी. : सिविल रिबेलियन इन इण्डियन म्यूटनोज 1857-59. पृ.223.
16. सक्सेना, सुधीर :-मध्यप्रदेश में आजादी की लड़ाई और आदिवासी 1999. पृ.98.
17. श्रीवास्तव, पी.एन. : पूर्वोक्त, पृ.12.
18. अर्सकाइन :- नेरेटिव ऑफ ईवेन्टस दि आउट बेक ऑफ डिस्टरवेन्सेज एण्ड दि रेस्टोरेशन ऑफ अथारिटें इन द सागर एण्ड नर्वदा टेरिटरीज इन 1857-58 पृ.44.
19. श्रीवास्तव, पी.एन. : पूर्वोक्त, पृ.63.
20. माहेश्वरी, रामगोपाल :- शुक्ल अभिनंदन ग्रंथ इतिहास खंड पृ. 132.
21. कैलाश चंद मिश्र-चंदेल और उनका राजत्वकाल पृ.6-7

****

इन्दौर राज्य की कुशल प्रशासक अहिल्याबाई होल्कर

डॉ. हेमलता आचार्य *

सन् 1733 ई. में मल्हरराव होल्कर ने पेशवा बाजीराव को एक प्रार्थना पत्र लिखा कि 'मेरी सेवाओं को ध्यान में रखते हुए मेरी पत्नी गौतमाबाई को कुछ जागीर प्रदान की जाए।' तथापि छत्रपति शाहू की आज्ञा से पेशवा ने 20 जनवरी 1734 ई. को मल्हारराव की पत्नी गौतमाबाई को खासगी प्रदान की। खासगी जागीर प्राप्ति से ही होलकार राज्य की नीव पड़ी। आज गौतम पुरा इन्दौर जिले की एक तहसील है।'[1]

मल्हारराव होलकर का एक मात्र पुत्र खंडेराव कुंभेरी के युद्ध में 1754 ई. में मारा गया।[2] बुढे मल्हारराव ने अपनी पुत्रवधु अहिल्याबाई से विनंति की की वह सती न होवे। उस युग में जब स्त्रियों को विशेष महत्व न था, मल्हारराव ने अपनी पुत्रवधु को अपना उत्तराधिकारी चुना। चौंढी गाँव की पाटील मणकौजी शिन्दे और सुशीला शिन्दे की संतान अहिल्याबाई का जन्म 1647 को हुआ था। उन्होने 13 मार्च 1767 को राज्य संभाला। अहिल्याबाई का राज्यकाल 28 वर्ष 5 माह 17 दिन रहा है।[3] अहिल्याढेवी के शासनकाल के प्रथम वर्ष 1767 का एक सिक्का ज्ञात है जो मल्हार नगर या मल्हारगंज की टकसाल में गढा गया था।[4]

वर्तमान इन्दौर यर्थाथ में अहिल्याबाई की सुझ-बुझ का ही प्रतिफल है उन्होने कम्पेल से परगना स्थानान्तरित करके इन्द्रेश्वर मंदिर के सामने वाले क्षेत्र मे स्थापित किया। यही परगना मुख्यालय 1818 में होल्कर रियासत की राजधानी बना।[5] इन्दौर में उस समय 13 परगने थे जिसमें देपालपुर एक खास परगना था। उज्जैन से गौतमपुरा, देपालपुर से एक रास्ता अमझेरा होता हुआ झाबुआ पहुँचता था।[6] उस समय चारों ओर डाकुओं का उत्पाद रहता था। अहिल्याबाई ने आर्थिक सुरक्षा को दृष्टिगत रखते हुए पर्याप्त व्यस्थाऐं की थी। किन्तु पिंडारियों के आतंक की घटना मध्य प्रांत और भारतीय इतिहास की महत्वपूर्ण घटनाओ में से एक है।[7]

सत्ता प्राप्त होने के साथ ही अहिल्याबाई ने आर्थिक संकट पर विजय प्राप्त कर ली। कृषकों, व्यापारियों तथा साहूकारों की स्थिति में पर्याप्त सुधार भी कर दिया।

सन् 1766-67 में अहिल्याबाई के समय में कुछ समय तक होलकर राज्य में द्वैध शासन की स्थिती भी रही है अर्थात् आर्थिक अधिकार अहिल्याबाई के पास और युद्ध , आक्रमण, अभियान तुकोजीराव होलकर के पास था। तुकोजीराव के पेशवा दरबार और महादजी शिन्दे से अच्छे संबध थे।8 अहिल्याबाई का प्रशासन के विभिन्न अंगो पर पर्याप्त नियंत्रण व निर्देशन था।

अहिल्याबाई के समय शांति व्यवस्था होने से कृषि की दशा उन्नत थी। कृषकों की फसलों को सेना द्वारा क्षति नही पहुँचाई जाती थी। खाद्यान्न का बाहुल्य था। राज्य की आय का मुख्य साधन भूमि कर था। प्रशासकीय सुविधा और राजस्व की वसुली के लिए राज्य विभिन्न परगनो में विभक्त था। एक परगने में 50 से लेकर 300 गॉव होते थे।

आयात-निर्यात- कृषि की फसल में गेहूँ, ज्वार , मक्का, अफीम , रूई , अलसी, तिलहन आदि की अच्छी उपज होने से ये अन्य प्रांतो को निर्यात किये जाते थे। राज्य में नमक, मसाले, नारियल, नील , सूपारी , तांबा , मोती , रत्न , लोहा , पीतल , कच्चा रेशम , रेशमी वस्त्र, तंबाकू आयात की जाती थी। अफिम की खेती व व्यापार लाभप्रद था।[9]

सम्पूर्ण देश में ही समुचित डाक व्यवस्था न थी और जन साधारण के लिए इसकी उपयोगिता भी उस काल में न समझी गई। राजा महाराजा अवसर अनुसार डाक व्यवस्था कर लेते थे। होल्कर राज्य में बामनिया और नैमित्तिक डाक व्यवस्था को उपयोगी माना। यह व्यवस्था तात्कालिक होती थी। इसे 'डाक बिठाना' भी कहाँ जाता था।[10]

कमाविसदार का पद अहिल्याबाई के काल में महत्वपूर्ण था जो समस्त शांति एवं कानून व्यवस्था के लिए उत्तरदायी था। समस्त आर्थिक तंत्र अहिल्याबाई के पास ही था।

चुंगी कर :- साहूकार उस युग में चलता फिरता बैंक हुआ करते थे। कुछ साहूकार देश भर में विख्यात और सशक्त थे। इन साहूकारो को देश के एक स्थान से दुसरे स्थान पर जाने पर चुंगी कर या टैक्स देना पडता था। इन्दौर से गुजरने वाले एक साहूकार का महेश्वर में कार्यालय था। उसने लम्बे समय से टैक्स नही दिया था और पेशवा दरबार से अहिल्याबाई ने मौका पाते ही चुंगी कर न चुकाने के कारण साहूकार के बेटे को कारागार में डाल दिया और इसकी लिखित सुचना भी साहूकार को पहुँचा दी।[11]

आर्थिक नियंत्रण :- मराठा शासन में खण्डेराव जाधव प्रसिद्ध सरदार थे। उनका बडा पुत्र गोविंदराव पानीपत के मैदान में वीर गति को प्राप्त हुआ था, छोटा पुत्र मुरारराव अपव्ययी व गैर जिम्मेदार था। उसने दो वसूली के परगने धोंदलगाँव और सिउऊर अहिल्याबाई के पास गिरवी रखना चाहा किन्तु ऋण पत्र पर ऋण लेने वाले का नाम व हस्ताक्षर स्पष्ट न होने से अहिल्याबाई ने सख्त शब्दों में कहलवा भेजा की ' हस्ताक्षर स्पष्ट नही होने से रूपया नही मिलेगा।'[12]

रामपुरा, भानपुरा तथा टोंक के इलाके मालवा के मराठे व राजपूतो के मध्य लम्बे संघर्ष के कारण रहे है। 20 मई 1766 के पश्चात् अहिल्याबाई को संघर्ष करना पडा। इस आशय के पत्र राजस्थान के अभिलेखागार, बीकानेर में संरक्षित है। अहिल्याबाई टोंक व रामपुरा क्षेत्र की व्यवस्था के लिये सतत् प्रयत्नशील रही।[13]

वे एक अच्छे प्रशासक के साथ एक अच्छी कूटनीतिक भी थीं। यह काम महत्व की बात नही है कि पेशवा के अधीन भारत के कई क्षेत्र थे किन्तु अहिल्याबाई एक दृढ़ प्रतिज्ञ शासक थी। कई मामलों मे तो उनका प्रभाव पेशवा से भी अधिक दृष्टिगोचर होता है।

उत्तर से दक्षिण में पेशवा राज्य में आने जाने वाले शाही व्यक्तियों का होल्कर राज्य को खास ख्याल रखना पड़ता था। आन्नदीबाई (महादजी सिंधिया की बहन एवं राघोबा की पत्नी) के महेश्वर आगमन पर पर्याप्त रसद सामग्री से अहिल्याबाई ने सहयोग किया किन्तु आनन्दीबाई राघोबा के समान ही कुचकी व राज्य पर आँख गड़ाने वाली स्त्री थी। आनन्दीबाई ने और सुविधा चाही तब अहिल्याबाई ने उसकी असुरक्षा का हवाला देकर उसके प्रस्थान का उपक्रम किया। अहिल्याबाई आर्थिक सुरक्षा के साथ ही पेशवा दरबार की राजनीति से इन्दौर को दूर रखना चाहती थी।[14]

* विभागाध्यक्ष - इतिहास विभाग, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र)

बाजीराव प्रथम एवं द्वितीय द्वारा खासगी के संबध में भेजे हुए पत्रों से जाहिर होता है कि अहिल्याबाई को पेशवा की ओर से जो पूर्ण हक दिये गए थे, वे गौतमाबाई को दिये हुए केवल खासगी जागीर तक ही सीमित होते थे। अहिल्याबाई के योग्य होते हुए भी स्त्री होने के कारण पेशवा दरबार में कई समस्याएँ थी।[15]

महेश्वर का वस्त्र उद्योग अहिल्याबाई होल्कर की देन है। उनके काल में केवल इस उद्योग की स्थापना ही नही हुई बल्कि यहाँ की साड़ियाँ की मांग पूना एवं अन्य स्थानों पर इतनी अधिक थी कि पूर्ति करना कठिन होता था। इस आशय का 3 अगस्त 1783 का एक पत्र प्राप्त होता है। बुनकर अहिल्याबाई से प्रत्यक्ष मिल सकते थे।[15]

आज भी महेश्वरी साडियाँ विश्वप्रसिद्ध हैं।

अहिल्याबाई के राज्य के अन्तर्गत इन्दौर महेश्वर, नेमाड , नेमावर , रामपुरा , भानपुरा , देपालपुर , हातौद, गौतमपुरा इत्यादि थे।[16]

अहिल्याबाई कालीन स्थापत्य के अप्रतिम उदाहरण देशभर में यत्र-तत्र बिखरे पड़े है। दानशीलता की व्यापकता के कारण ही राज्य और राज्य के बाहर भारत के अनेक प्रसिद्ध तीर्थ मंदिरों , घाटों , धर्मषालाओं मार्ग द्वारों, छत्रियों बावडियों और कुओं का निर्माण अहिल्याबाई को लोकहितकारी सिद्ध करता है।[17]

सेंट्रल इंडिया के ब्रिटिष रेजीडेंट सर जॉन मालकम ने भी लिखा है –

" Ahilyabai has become, by general suffrage the model of good Government is malwa her name is considered such excellent authority that an objection is never made, when her practice is pleaded as the president"[18]

अनेक ऐसे पत्र जो सिद्ध करते है कि अहिल्याबाई केवल धर्मनिष्ठ महिला ही नही अपितु एक कर्तव्य परायण एवं योग्य प्रशासक , कुशल राजनीतिज्ञ और सैनिक मामलों की आवष्यक जानकारी रखने की योग्यता से विभूषित थी।

झाँसी की रानी एवं स्व.इंदिरा गांधी के समान अहिल्याबाई होल्कर को राष्ट्रीय स्तर पर एक प्रतिष्ठित स्थान मिलना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ:-

01. मालवा में युगान्तर – डॉ. रधुवीर सिंह पृ. 125–130 तक
02. ज्ञात – अज्ञात देवी अहिल्याबाई होल्कर – विनया खडपेकर प्रकाषक : म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पृ. 54, 158, 193, 256, 164 से 262 , 263
03. अहिल्याबाई – वृन्दावन वर्मा – प्रभात प्रकाशन, दिल्ली – पृ. 67
04. महिष्मति – जयन्तीप्रसाद मिश्र, श्याम प्रकाशन दिल्ली पृ. 57
05. शिप्रा – डॉ. कृपाशंकर व्यास म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पृ. 236 , 237
06. सांगाती – नारायण वा. मुले मध्य भारत हिन्दी साहित्य समिमि पृ. 107–112 तक
07. अहिल्या स्मारिका – खासगी ट्रस्ट, इन्दौर द्वारा प्रकाषित अंक – 15 – 1987 पृ. 19
08. अहिल्या स्मारिका – 1973–74 पृ. 17,31,53
09. अहिल्या स्मारिका – 1976 पृ. 31
10. अहिल्या स्मारिका – 1980 पृ. 25
11. अहिल्या स्मारिका – 1970 पृ. 73, 91, 92, 96,
12. अहिल्या स्मारिका 1984 अंक – 13, पृ. 13, 14, 20 से 23 तक पृ. 195 तक
13. Memoyars of Central India - Sir John Malcom

****

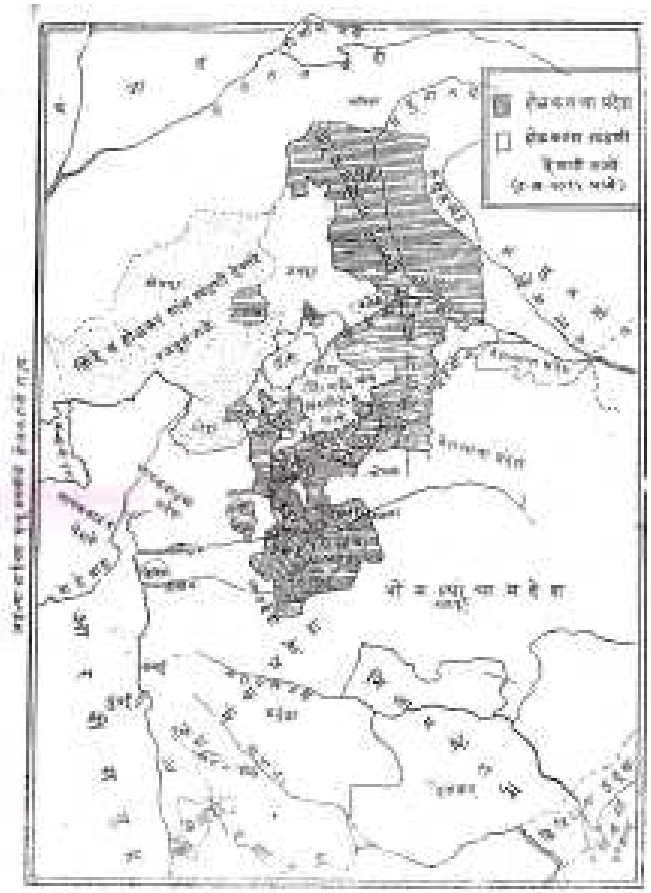

अश्वगंधा - औषधीय पादप

डॉ. मन्जुलता शर्मा * प्रतिमा श्रीवास्तव ** पुनीत शर्मा ***

ABSTRACT -

अश्वगन्धा को भारतीय जिनसेंग तथा विन्टर चैरी के नाम से भी जाना जाता है इसका 300 से अधिक वर्षो से आयुर्वेद एवं स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली में एक बहुमूल्य जड़ी-बूटी के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। अश्वगन्धा में एंटीटयूमर, एंटीआक्सीडेंट, एंटीमाइक्रोबियल, एंटीकेसर, हीमोपोइटिक तथा रिजुवेनेटिव आदि गुण पाये जाते हैं। मुख्य रूप से अश्वगंधा में एल्केलॉयड तथा स्टीरॉइडल लेक्टोन पाये जाते हैं स्टीरॉइडल लेक्टोन को विथेनोलोइड भी कहा जाता है।

KEY WORDS -

अश्वगन्धा, एल्केलोइड, स्टीरॉइडल लेक्टोन, विथेनोलोइड

अश्वगन्धा (वानस्पतिक नाम : विथानिया सोमनीफेरा Withania Somnifera) को भारतीय जिनसेंग भी कहा जाता है। यह औषधीय उपयोग का पौधा है तथा मानव जीवन के लिये बहुत उपयोगी है। इसे अंसगधां तथा बाराहकर्णी भी कहते हैं। इसकी कच्ची जड़ से अश्व जैसी गंध आती है इसलिये इसे अश्वगंधा कहते हैं यह बहुवर्षीय पौधा पौष्टिक जड़ों से युक्त है।

अश्वगंधा, भारतीय जिनसेंग या विन्टर चैरी का 300 से अधिक वर्षो से आयुर्वेद एवं स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली में एक बहुमूल्य जड़ी-बूटी के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है इसकी जड़, पत्तियाँ तथा फल जबरदस्त औषधीय मूल्य के हैं।

यह एक अच्छा रिजुवेनेटिव भी है जिसका उपयोग उत्ताकों के समुचित पोषण विशेष रूप से माँसपेशियों और हड्डियों को बनाये रखने में किया जाता है। अश्वगंधा हड्डी का केंसर, तंत्रिका समस्याओं, गठिया मधुमेह, कब्ज और नपुंसकता के इलाज में कारगार है। अश्वगंधा एक एंटीऑक्सीडेंट के रूप में कार्य करता है तथा स्मृति शक्ति को बढ़ाने में मदद करता है।

अश्वगंधा की जड़ें बीज तथा पत्तियों का आयुर्वेदिक और युनानी दवाओं में इस्तेमाल किया जाता है, अश्वगंधा की जड़ का उपयोग स्मृति बढ़ाने, जोड़ों में सूजन, स्नायु सम्बंधी विकार, कब्ज आदि में किया जाता है। (वाट 1972; सिंह और कुमार 1998) अश्वगंधा का एंटी ऑक्सीडेंट, एंटीस्ट्रेस, एन्टीट्यूमर प्रतिरक्षा बढ़ाने के रूप में भी प्रयोग किया जाता है (डेविस और कुटान 2000; मिश्रा 2000; मिरजालाली एट आल.; 2009)

वर्गीकरण-

वानस्पितिक नाम	-	**विथानिया सोमनीफेरा**
जगत	-	पादप
उपजगत	-	टैकयोनायोटा
वर्ग	-	मेग्नोलियाप्सीडा
उप-वर्ग	-	एस्टेरिडी
गण	-	सोलनेलेस
कुल	-	विथानिया
जाति	-	सोम्नीफेरा

वर्नीकुलर नेम-

अंग्रेजी	-	शीतकालीन चेरी
लेटीन	-	अश्व या बाजीवाचक
संस्कृत	-	अश्वगंधा
हिन्दी	-	असगंध
मराठी	-	असगंधा

प्राप्ति स्थान-

अश्वगंधा सारे भारत में मुख्यत: पच्चिमोत्तार भाग मध्य प्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब तथा हिमाचल प्रदेश में 5000 फीट की ऊँचाई तक पाई जाती है। मध्यप्रदेश में इसकी व्यवसायिक खेती होती है।

आकृति -

यह एक काष्ठीय झाड़ी है जिसकी ऊँचाई 170 सेंटीमीटर तक होती है। अश्वगंधा की शाखाएँ गोलाकार रूप में चारों ओर फैली रहती है। आकार में यह छोटी कंटेरा जैसा परन्तु कष्टक रहित होता है।

मूल (जूड़)-

इस औषधीय पौधे की मूल चार से आठ इंच लम्बी, ऊपर से मटमैली, अन्दर से सफेद और शंकु के आकार की होती है यह नीचे से मोटी ऊपर से पतली, गोल व चिकनी होती है। गीली ताजी जड़ से घोड़े के मूत्र के समान तीव्र गंध आती है जिसका स्वाद बहुत तीखा होता है।

पत्तियाँ -

अश्वगंधा की पत्तियाँ जोड़े में अखण्डित, अण्डाकार पाँच से दस सेण्टीमीटर लम्बी तथा तीन से पाँच सेण्टीमीटर चौड़ी होती है डण्ठल बहुत ही छोटा होता है।

फूल -

अश्वगंधा के फूल छोटे-छोटे कुछ लम्बे, कुछ पीला व हरापन लिए चिलम के आकार के होते हैं। यह फूल शाखाओं के अग्र भाग पर खिलते हैं इन पर सफेद रंग के छोटे-छोटे रोम होते हैं। फल छोटे-छोटे गोल मटर के फल के समान पहले हरे तथा पकने पर लाल रंग के हो जाते हैं।

यह रसभरी फल के समान दिखते हैं अश्वगंधा फल के अन्दर श्वेत रंग के असख्ंय बीज होते हैं। अश्वगंधा उन स्थानों पर भी उग आता है जहाँ अन्य वनौषधियाँ नहीं लग पाती है। अश्वगंधा की फसल को सिंचाई की आवश्यकता अधिक नहीं पड़ती तथा इस औषधीय पौधे को देखरेख एवं खाद आदि की इतनी जरूरत नहीं होती है। लेकिन अधिक वर्षा इसकी फसल के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकती है।

रासायनिक संगठन -

अश्वगंधा की जड़ में कई एल्केलॉइडस पाये जाते हैं। इनकी कुल मात्रा 0.13 से 0.31 प्रतिषत तक होती है। ''वेल्थ ऑफ इण्डिया'' के मतानुसार तेरह एल्केलॉइडस क्रोमेटोग्राफी की विधि से अलग किये जा चुके हैं। इनमें प्रमुख हैं- गुस्कोहाइग्रीन, एनाहाइग्रीन ट्रोपीन, स्युडोट्रोपीन, एनाफेरीन, आइसोपेलीनटोरीन और तीन प्रकार के ट्रोपिलीटग्लोएट। एल्केलाइडों के अलावा अश्वगंधा की जड़ में स्टार्च, शर्करा, ग्लाइकोमाइडस- हेण्टिरयाकाल्टेन तथा अलुसिटॉल, विदनाल पाये गये हैं।

इसमें बहुत से अमीनों अम्ल मुक्तावस्था में होते हैं जैसे एस्पार्टिक अम्ल, ग्लाइसिन, टायरोसिन, एलेनिन प्रोलीन, ट्रिप्टोफेन ग्लूटेमिक अम्ल एवं सिस्टीन। अश्वगंधा की पत्तियों में विथेनोलाइड परिवार के पदार्थ पाये जाते

* प्राध्यापक, प्राणी शास्त्र विभाग, एम.एस.जे. राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

है जो बदलते रहते हैं। इसकी पत्तियों का स्वरूप एक सा रहने पर भी रासायनिक दृष्टि से अंतर पाया जाता है। बारह प्रकार के विथेनोलाइड अलग-अलग पौधों से प्राप्त किए गये हैं। इसके अलावा पत्तियों में एल्केलाइडस, ग्लाइकोसाइडस ग्लूकोस एवं मुक्त अमीनों अम्ल भी पाये गये हैं। अश्वगंधा के तने में प्रोटीन बहुतायत से पाये गये हैं। इनमें रेषा कम तथा कैल्शियम एवं फॉस्फोरस प्रचुर मात्रा में होते हैं कई अमीनों अम्ल भी मुक्तावस्था में पाये जाते हैं। जड़, तने तथा फूल में टैनिन एवं फ्लेविनाइड भी होते हैं। इसके फलों में प्रोटीनों को पचाने वाला एन्जाइम कैमेस भी उपस्थित होता है।

औषधीय उपयोग:-

1- अश्वगंधा का मस्तिष्क पर प्रभाव:- अश्वगंधा मस्तिष्क और शरीर के लिये एक पुन: सशक्त टॉनिक है। यह क्षतिग्रस्त दिमाग में न्यूरोनल नेटवर्क के घटकों के पुनर्निमाण करने में, एक्सॉनस, डेन्ड्राइट पुनर्जन्म और क्षतिग्रस्त न्यूरॉन्स में सिनेप्स के पुनर्निमाण के लिये जाना जाता है। अश्वगंधा मस्तिष्क में GABA रिसेप्टर्स और सेरोटोनिन को बढ़ाता है। GABA (गामा एमिनो ब्युटाइरिक एसिड) एक निरोधात्मक है जो तंत्रिका कोशिकाओं की संख्या को रोकता है और अच्छी नींद में मदद करता है। अश्वगंधा एसीटाइल कोलीन रिसेप्टर की गतिविधि में वृद्धि करता है। एसीटाइल कोलीन अनुभूति और स्मृति से सम्बंधित कई कार्यों के लिये जिम्मेदार हैं तथा मस्तिष्क में प्रचुर मात्रा में पाये जाने वाला न्यूरोट्रांसमीटर है। जो एक तंत्रिका कोशिका से दूसरी तंत्रिका कोशिका में आवेगों को स्थानान्तरित करने को उत्तोजित करता है। (भट्टाचार्य एट. ऑल 2001)

2- एंटी आक्सीडेंट प्रभाव :- अश्वगंधा एक शक्तिशाली एंटीऑक्सोडेंट प्रभाव प्रदान करता है। अश्वगंधा के रसायनों में कुछ शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट होते हैं जिनके प्रभाव के कारण चूहे के दिमाग पर तीन प्राकृतिक एंटी आक्सीडेंटो सुपरआक्साइडडाइम्यूटेज (SOD), केटेलेस (CAT) और ग्लूटेथिऑन परऑक्सीडेज में वृद्धि पायी गई है तथा लिपिड परऑक्सीडेशन (LPO) में कमी पायी गई है (गुप्ता एट ऑल 2003; धूले 1998; भट्टाचार्य 2001; मिरजालाली एट ऑल 2009) अश्वगंधा में पाये जाने वाले मुक्त कण उन तंत्रिका ऊतकों को नष्ट कर देते हैं जो उम्र बढ़ने, मस्तिष्क संबंधी विकार, सूजन, पार्किंसंस रोग के लिये जिम्मेदार होते हैं।

3- एंटी टयूमर प्रभाव :- अश्वगंधा केंसर कोशिकाओं के विकास को कम कर देता है (प्रकाष एट ऑल 2001, 2002, जयप्रकाशन एट ऑल 2003) अश्वगंधा वृहदान्त, स्तन और फेंफडे की केंसर कोशिकाओं के विकास को कम कर देता है। इन-विट्रो अध्ययन से पता चला है कि अश्वगंधा में पाये जाने वाला विथेफेरीन A, विथेनोलाइड D, और E, मानव में ट्यूमर के विकास को रोकने या कम करने के काम आते हैं (सिंह एट ऑल 2001)।

4- एंटीस्ट्रेस प्रभाव :- अश्वगंधा में पाये जाने वाला ग्लाइकोसाइडस (साइटोइण्डोसाइड VII और VIII) तनाव को कम करने में सहायक होता है। (भट्टाचार्य 1987; 2000 व 2003)

References:-

1. Bhattacharya SK, Goel RK, Kaur R and Ghosal S (1987) Antistress activity of sitoindosides VII and VIII, new acylsterylglucosides from Withania somnifera. Phytother. Res. 1, 32-39.
2. Bhattacharya SK, Bhattacharya A, Sairam K and Ghosal S (2000) Anxiolytic-antidepressant activity of Withania somnifera glycowithanolides: an experimental study. Phytomed. 7, 463-469.
3. Bhattacharya A Ghosal S and Bhattacharya SK (2001) Antioxidant effect of Withania somnifera glycowithanolides in chronic footshock stress-induced perturbations of oxidative free radical scavenging enzymes and lipid peroxidation in rat frontal cortex and striatum. J. Ethnopharmacol. 75: 1-6/
4. Bhattacharya SK and Muruganandam AV (2003) Adaptogenic activity of Withania somnifera: an experimental study using a rat model of chronic stress. Pharmacol. Biochem. Behav .75, 547-555.
5. Davis L and Kuttan G (2000) Effect of Withania somnifera on cyclophosphamide induced urotoxicity. Cancer Lett. 148(1), 4-17.
6. Dhuley JN (1998) Effect of ashwagandha on lipid peroxidation in stress-induced animals. J Ethnopharmacol. 60, 173- 178.
7. Jayaprakasam B, Zhang Y, Seeram NP and Nair MG (2003) Growth inhibition of human tumor cell lines by withanolides from Withania somnifera leaves. Life Sci. 2003, 74, 125-132.
8. Mirjalili MH, Moyano E, Bonfill E, Cusido RM and Palazón J (2009) Steroidal Lactones from Withania somnifera, an ancient plant for novel medicine. Molecule, 14, 2373-2393.
9. Mishra LC, Singh BB and Dagenais S (2000) Scientific basis for the therapeutic use of Withania somnifera (Ashwagandha): A Review. Altern Med. Rev. 5(4), 334-346.
10. Prakash J, Gupta SK and Dinda AK (2002) Withania somnifera root extract prevents DMBA-induced quamous cell carcinoma of skin in Swiss albino mice. Nutr. Cancer. 42, 91-97.
11. Prakash J, Gupta SK, Kochupillai V, Gupta YK and Joshi S (2001) Chemopreventive activity of Withania somnifera in experimentally induced fibrosarcoma tumors in Swiss albino mice. Phytother. Res. 15(3), 240-244.
12. Singh S and Kumar S (1998) Withania somnifera: The Indian Ginseng Ashwagandha, Central Institute of Medicinal and Aromatic Plants: Lucknow, India.
13. Watt GA (1972) Dictionary of the economic Products of India. Cosmo Publication, Delhi, India. 6,309.

****

भारतीय लोक चित्रकला - 'बुन्देली लोक चित्रकला के संदर्भ में'

डॉ. यतीन्द्र महोबे *

आज भी हमारे देश में धार्मिक अनुष्ठान, पूजा-पाठ, तीज-त्योहार, उत्सव-पर्व जैसी मान्यतायें सुरक्षित होने का एक कारण यह है कि इसके पीछे लोक चित्रकला ने अपना बहुत बड़ा योगदान प्रस्तुत किया है। इन लोक चित्रकलाओं के बल-बूते ही ग्रामीण अंचलों में आज भी खुशियाँ पूर्ववत् झलकती हैं।

ये लोक चित्रकलायें एक सामुहिक सृजन होती है, और ये परम्परागत रूप से ग्रामीण अंचलों में आज भी देखी जाती हैं। लोक चित्रकला की परम्परा पीढी दर पीढी चली आती है। एक माँ अपनी बेटी और फिर उसकी बेटी को एक उत्तराधिकार देती चलती है। लोक चित्रों की परम्परा ब्यापक है। एक प्रांत से दूसरे प्रांत, एक देश से दूसरे देश तक पारम्परिक लोक चित्रों की अंर्तयात्रा चलती रहती है, और सारे संसार के लोकचित्र कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में अपने मूल से गहरे तक जुडे हुए प्रभावित और उत्प्रेरित होते हैं।

समकालीन कलाकारों ने इन लोक चित्रकलाओं का आधुनिकीकरण भी कर दिया है। इन कलाओं की सरलता-सहजता चित्रकारों के कैनवास पर दिखाई देती हैं। बहुत से कलाकारों ने तो इसे अपनी चित्रशैली का रूप देकर छोटे-बड़े दीर्घाओं में प्रदर्शनार्थ प्रस्तुत किया है। ऐसे कलाकार धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होने इन लोक चित्रकलाओं को दीर्घाओं के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाया है। ये लोक चित्रकलाऐं न सिर्फ भारत में बल्कि पूरे विश्व में अपने सहजता एवं सौन्दर्य के जरिए दर्शकों के बीच आकर्षण का केन्द्र बनी हुई है। ये लोक चित्रकलाऐं प्राचीन काल से चली आ रही हैं। जिनको बनाने का उद्देश्य एक मात्र सौन्दर्य बोध नही था, बल्कि ये मिथकथाओं से संबंधित थी, जो अनुष्ठानों और संस्कारों से जुड़ी थी। ये चित्र रचना असुरी और अशुभ शक्तिओं के प्रतिकारक के रूप में घरों में बनाई जाती थी। इनका एक मात्र उद्देश्य लोक मंगल की भावना को प्रमुखता प्रदान करना था। जिस प्रकार भाषा के रूप में जो स्थान मंत्रों को प्राप्त है वही स्थान इस लोक चित्रकला में विभिन्न प्रकार की आकृतियों को प्राप्त है।ये सभी आकृतियाँ संकेत मात्र होती हैं। जिनमें सर्प, चाँद-तारे, पेड़-पौधे, जीव-जंतु, सूरज, मानवाकृतियाँ, देवी-देवता, असुर-राक्षस, ज्यामितीय आकृतियाँ आदि बहुत मात्रा में बनाई जाती हैं। महिलाऐं प्राय: इनका प्रयोग रोग-राई, दैवीय विपत्ती आदि के प्रतिकार के लिए घर के दरवाजों, आँगन, दीवारों एवं पूजा के स्थानों पर बनाती हैं। ऐसा माना जाता है कि संकेत ग्राही आकृतियों को अंकित करने से समस्त बाधाऐं दूर हो जाती हैं। चित्रों में ऐसे शक्ति प्रेरक मिथकीय अभिप्राय अपने आपमें प्रेरणादायक और अनोखे सौन्दर्यबोध से उत्प्रेरित हैं।

आज समकालीन चित्रकारों द्वारा यह लोक चित्रकला पूर्ण रूप सौन्दर्य से ओत-प्रोत बनाई जा रही है, और इन्हे बनाने का उद्देश्य भी आनंद की अनुभूति को प्राप्त करना है। बड़ी-बड़ी गैलरियों में लटकी ये लोक चित्रकला दर्शकों को सिर्फ और सिर्फ आनंद का बोध कराने हेतु निर्मित की गई हैं। शक्ति प्रेरक मिथकीय अभिप्राय इनमें नहीं है, लेकिन चित्रकला की दृष्टि से अर्थपूर्ण और उच्च कोटि की जरूर है, जो हमें हमारे संस्कृति और परम्परा की याद तो दिलाती है। भारतीय संस्कृति एक दैव संस्कृति है, और इस परम्परा व संस्कृति के बल-बूते ही भारत पूरे विश्व में अपना एक अलग स्थान बनाये खड़ा है। मानवीय जीवन पद्धति, कला-कौशल, ज्ञान-विज्ञान, तीज-त्यौहार, बोल-चाल आदि के सम्मिलित स्वरूप से ही भारतीय परम्परा और संस्कृति आज पहचानी जाती है। भारतीय परम्परा में निहित लोक कलाओं ने आज भी अपनी पहचान को बनाये रखा है, और इस पहचान को बनाये रखने का बीड़ा युवा कलाकारों के कन्धे पर है।

लेकिन ये बड़ा गंभीर विषय है कि आज भारतीय मानव अपनी इस पहचान से दूर होता चला जा रहा है, इसका सबसे बड़ा कारण ''आधुनिकता का पाश्चात्यकरण'' है। मनुष्य आज समय की तीव्र रफ्तार के समतुल्य भारतीय परम्परा व संस्कृति में बदलाव चाहता है, जो सर्वनाश का द्योतक है।

बुंदेली लोक चित्रकला भी इसी परम्परा का अभिन्न अंग है, जो बुंदेलखण्ड अंचल में अपनी चित्रांकन परम्परा के लिए प्रसिद्ध हैं। दर्शक आज भी इस लोक चित्रकला की सहजता और सरलता से इतना आकर्षित हो जाता है कि घण्टों इन चित्रों के बीच से अपने को बाहर नहीं निकाल पाता। ये चित्र भावनात्मक दृष्टि से भी बड़ी उच्चकोटि की प्रतीत होती हैं। लोक कला चाहे किसी भी अंचल की हो बड़ी लुभावनी, आकर्षक एवं भाव अभिव्यंजना से पूरी तरह ओत-प्रोत होती है।

बुंदेली लोक चित्रकला विषय पर चर्चा करने से पहले हमें ''लोक'' शब्द को समझना अति आवश्यक होगा। 'लोक' का अर्थ बहुत व्यापक है। ''लोक'' समूचे जीव, प्रकृति, जीवन, स्वर्ग-नर्क, कल्पना-यथार्थ का नाम है।

लोक चित्रकला के संदर्भ में ''लोक'' शब्द का प्रयोग सर्व साधारण जनता के लिए होता है, अर्थात ''लोक चित्रकला हम उसे कह सकते है, जो सर्व साधारण जनता के द्वारा चिन्हित की गयी है। जिसमें किसी प्रकार के तकनीकि ज्ञान, शिक्षा एवं उपलब्धि की आवश्यकता नहीं होती बल्कि वह उस साधारण मनुष्य के द्वारा चिहिन्त होती है, जो किसी खास अवसर जैसे तीज-त्यौहार, उत्सव आदि पर अपनी खुशी जाहिर करने हेतु सरल एवं सहज ढंग से दीवारों, कपड़ों, आंगन, कागज, पूजा स्थल आदि पर बनाई जाती है।

लोक परम्परा के प्राय: सभी चित्र किसी न किसी मिथकथा चित्रों से जुड़े होते हैं। यह कहना उचित होगा कि पारम्परिक लोकचित्रों में अधिकांश मिथकथा चित्र होते हैं। प्राय: सभी क्षेत्रों में यह मिथकथा चित्र पर्व-त्यौहारों पर बनाये जाते हैं। यह मिथकथा चित्रों के विषय किसी पुरा आख्यान, लोक विश्वास, लोक आस्था के नायक-नायिका, देवी-देवता पर केन्द्रित होते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि लोक चित्रों में वे सभी रेखांकन और अलंकरण समाहित हैं, जो पर्व-त्यौहार, अनुष्ठान और संस्कार से जुड़े होते हैं, यहाँ तक कि लोक चित्रों की आकृति रंग और रेखाओं तक के लिए कोई न कोई मिथ जुड़ा होता है। लोक चित्रों में बनाई जाने वाली आकृतियाँ यथार्थ परक नहीं होती, वे प्रतीकात्मक होती हैं। प्रतीकों, बिंबों के अपने कई निर्धारित अर्थ और गंभीर आशय हैं, जो अपने लोक में ही खुलते हैं, हर अंचल की लोक आकृतियों का पारम्परिक निश्चित आकार-प्रकार होता है। जिससे उस अंचल के चित्रों की एक खास पहचान बनती है।

बुंदेलखण्ड अंचल में चित्रांकन की परम्परा का इतिहास वर्षो पुराना है।

* सहायक प्राध्यापक, चित्रकला, शासकीय कन्या महाविद्यालय नरसिंहपुर (म.प्र.)

जिसमें आदिम मानव द्वारा शैलाश्रयों में बनाये चित्र भी उपलब्ध होते हैं। लगभग पाँच हजार वर्ष ई.पू. से भी अधिक समय के चित्र यहाँ की विंध्य शैल-मालाओं में चित्रित हैं। तत्कालीन पाषाण शिल्प में अंकित बेलबूटे, मानव, जीव जंतु आदि की आकृतियाँ कहीं न कहीं चित्रकला के प्रतिमानों को भी जाहिर करती हैं। बुंदेलखण्ड अंचल में धार्मिक अनुष्ठानों की आचार पद्धतियों में चित्र रचना का स्थान सुरक्षित हो रहा था। पूजा-पाठ, व्रत-उपवास, तीज-त्यौहार जैसे लोकाचारों में चित्र-विधान का कर्मकांड अपनी महत्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज करा चुका था। विवाह जैसे सामाजिक संस्कारों में भी चित्र रचना का महत्व बढ़ गया था, तथा उत्सवी परम्पराओं में लोक चित्रकला झलकने लगी थी। चित्रकारों का अपना अलग सम्माननीय स्थान प्राप्त होने लगा, उनकी पहचान अलग-अलग होने लगी ऐसे चित्रकार जो महलों और राजभवनों में चित्रकारी करते थे। वह राजाश्रित ही होते थे। गाँव-देहातों के जो चित्रकार थे वह विवाह एवं अन्य उत्सवों में चित्र बनाते थे, उन्हें चतेवरी कहा जाता था। कुछ ऐसे चित्रकार थे जो अपने व्यवसाय के साथ चित्रकला का प्रयोग करते थे, इस तरह के लोक चित्रकारों में गुदनहारे, बढ़ई, कुम्हार, रंगरेज आदि आते हैं। इनके अलावा एक अन्य वर्ग भी था जो चित्रकला को धार्मिक प्रयोजन में इस्तेमाल करता था। इस वर्ग में वे स्त्रियां आती हैं, जो धार्मिक रूप में तथा गृह सज्जा हेतु चित्र निर्माण करती थी।

विषयवस्तु - बुंदेली लोक-चित्रकला -

भूमितल पर, काष्ठ, भांड, भित्ति, देह, गृह-उपादान आदि स्थानों पर विशेष रूप से देखने मिलती है। प्राय: यह चित्रांकन विभिन्न पूजा-पर्वो और उत्सवों में किया जाता है। यहाँ की कला में बुंदेली स्वभाव और बुंदेली परिवेश परिलक्षित होता है, तथा प्रकृति के अनेक रूप देखने मिलते हैं। विभिन्न प्रकार के बेलबूटे, जंगली वृक्ष, गेंदा, चमेली, चंपा, कनेर के फूल आम, हाथी, घोड़ा, चिड़िया, साँप, कोयल, मोर, पपीहा, हिरण आदि, साथ ही नदी-नाले, तालाब, सूरज, चंदा, मकान, सूप, चूल्हा, पटा, घड़ा, बाघयंत्र, घरेलू वस्तुयें आदि अनेक प्रकार की संरचनायें आकर्षक ढंग से चित्रित हैं। मानव आकृतियों के अंतर्गत नारी एवं पुरूष आकृति को जोड़ों में चित्रित किया गया है। जैसे - माता-पुत्र, पति-पत्नि, भाई-बहिन आदि। इनके अलावा शिव, कृष्ण, राम, दुर्गा, लक्ष्मी, पार्वती, गणेश आदि देव आकृतियाँ, दानव आकृति का चित्रण बुंदेली शैली में अपना अलग स्थान रखती है। मानवाकृतियों में वस्त्राभूषण का भी अंकन बुंदेली लोक जीवन के अनुसार किया गया है। यहाँ के समस्त चित्र कभी किसी कथानक की गाथा को कहते दिखते हैं तो कभी प्रतिकार्य रूप में घर गृहस्थी की समृद्धि हेतु चित्रित दिखाई देते हैं।

रंग योजना -

लोक चित्रकलाओं में प्राय: चटक रंगों का इस्तेमाल होता है, जो बड़े ही आकर्षक होते हैं, लेकिन यह रंग सीमित होते हैं जैंसे लाल, हरे, पीले, काले और सफेद। बुंदेली लोक चित्र शैली में उपरोक्त रंगों की अधिकता है। ये रंग अधिकांश चित्रों के निर्माण में अपनी विशेष भूमिका रखते हैं। हरा रंग पट चित्रांकन एवं भित्ति चित्रांकन में प्रयुक्त होता है। भित्ति चित्रण में, चित्रकार पहले आवश्यक रंगों को पृष्ठभूमि पर लगाते हैं, तत्पश्चात् रेखांकन द्वारा चित्र को पूर्ण किया जाता है। प्राय: यह रंग बाजार मूल्य पर बिकने वाले रसायनिक रंग नहीं होते बल्कि प्रकृति निर्मित स्थानीय रंग ही होते हैं। गौरा पत्थर पीसकर सफेद रंग, हल्दी के उपयोग से पीलारंग, कालिख से काला रंग तथा लाल रंग के लिए टेसू के फूलों का इस्तेमाल किया जाता है। इन रंगों को स्थायी बनाने के लिए खैर की गोंद प्रयोग में लाई जाती है। विशेष बात यह है कि सूप आदि में चित्रांकन के लिए अलसी के तेल में पुराने कपड़ों की राख को मिलाकर लेपन किया जाता है। गोदनों के लिए भी प्राकृतिक रंगों का ही प्रयोग होता है। इनके बनाने की विधि के रूप में तोरई के पश्चों के रस से या अकौवे के दूध में कजली मिलाकर अथवा सर्प का चमड़ा जलाकर उसकी राख तैयार कर तेल मिलाकर तैयार किये जाते हैं। गोदना गोदने के लिए लकड़ी की पैनी सुई या बबूल के काँटों को प्रयोग में लाया जाता है।

सौंदर्यात्मक दृष्टि से यह लोक शैली बड़ी ही लोकप्रिय है। इसमें आकृतियों की सरलता एवं सहजता अपना अलग महत्व रखती है, लेकिन आज यह शैली धीरे-धीरे समाप्त होती रही है, जो बड़ी गंभीरता का प्रश्न है। युवा कलाकारों में इसी सीखने की ललक समाप्त हो गई है। बुंदेलखण्ड की संस्कृति एवं परम्परा को इन चित्रों के माध्यम से ही बचाया जा सकता है। जिसके लिए कलाकारों को जागरूक होने की आवश्यकता है। हमें आधुनिकीकरण को त्यागकर प्राचीन कलाओं को बचाना होगा, अन्यथा भारत से ऐसी अमूल्य लोक चित्र शैलियाँ समाप्त हो जायेंगी।

संदर्भ ग्रंथ

1. बसंत निरगुणे - लोक संस्कृति - 2005
2. श्री लक्ष्मण भांड - मध्यप्रदेश में चित्रकला- 2010
3. डॉ. श्यामसुंदर दुबे - लोक चित्रकला - पम्परा और रचना दृष्टि, 2005

बुंदेली लोक चित्र

पगथली : शंखाकार

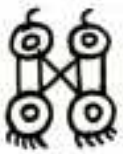

पगथली:शकटाकार

पगथली:त्रिकोणाकार

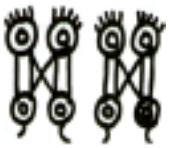

पगथली:युगल शकटाकार

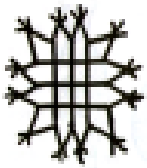

जाली चौक

फूल चौक

अल्पना

भांड चित्रांकन

मेंहदी

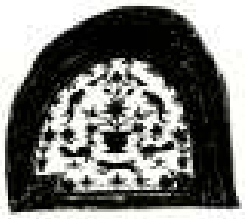

टी.वी. विज्ञापन प्रसारण का महिलाओं एवं बच्चों पर प्रभाव

डॉ. अंजना जैन *

आज का समाज उपभोक्तावादी समाज कहा जाता है। अत: उत्पादन को ज्यादा से ज्यादा बेचना औद्योगिक प्रतिष्ठानों के लिए उच्च प्राथमिकता का विषय हो गया है। जीवन का कोई भी क्षेत्र अब विज्ञापन और जनसम्पर्क की पहुंच से अछूता नहीं है। पिछले 60 वर्षो मे भारतीय विज्ञापन विद्या ने बहुत उन्नति की है, संचार की दुनिया और विज्ञापन का शिल्प इतना उन्नत हुआ है कि किसी भी विकसित देश से टक्कर ले सकता है। विज्ञापन और जनसम्पर्क आज के युग मे एक दुसरे की पुरक बन चुके है और दोनो ने मिलकर एक स्वतंत्र उद्योग की शक्ल अख्तियार कर ली है।

आज के युग में विज्ञापन का महत्व स्वयं सिद्ध है, जुते चप्पल से लेकर लिपिस्टीक, पावडर नेलपालिश तक विज्ञापित हो रहे है। बाजार की बढ़ती प्रतिद्धन्दिता और विज्ञापनो के बढ़ते प्रभाव को लेकर तरह-तरह की आंशकाए और इन सब के बीच है उपभोक्ता। परन्तु सिक्के का दुसरा पहलु भी है। विज्ञापन भी अपनी छोटी सी संरचना मे बहुत कुछ समाया होता है। यदि विज्ञापन को इस दृष्टिकोण से देखें तो विज्ञापन कोई आक्रमणकारी अस्त्र नहीं बल्किकला के श्रेष्ठ नमुने बनकर उभरेगें।

*** *विज्ञापन क्यों ?* –** व्यवसायीकरण के इस दौर में हर कम्पनी के लिए उपभोक्ता संस्कृति ही परम ध्येय है। और उसके टारगेट है। बच्चे, महिलाएँ और युवा विज्ञापन, भौतिक वस्तुओं को बटोरने की अनचाही ललक उपभोक्ता मे पैदा कर देते है। इन विज्ञापनों ने व्यक्ति के स्तर को नापने का आधार ब्राण्डेड वस्तुओं को बना दिया है। व्यक्ति के मन मे यह बात बैठा दी है कि फला वस्तु यदि उसके पास नहीं होगी तो वह पिछड जायेगा।

*** *विज्ञापन रचना* –** विज्ञापन तैयार करने के पहले उद्यमी के दिमाग में यह बात स्पष्ट होती है कि उसका उपभोक्ता कौन है ? विज्ञापन एजेन्सी विज्ञापन बनाते समय उसी उपभोक्ता समूह को सम्बोधित करती है। उस समूह की आय, रूचि आदतो एवं महत्वाकांक्षाओं को लक्ष्य करके ही, विज्ञापन की भाषा चित्र बनाकर संचार माध्यम का चयन किया जाता है। विज्ञापन किस समूह के लिये बनाया जाता है? जैसे महिलाएं, बच्चे एवं युवा तथा उनका आर्थिक स्तर, शैक्षणिक स्तर और भाषा का स्तर देखा जाता है।

*** *चित्रांकन* –** भाषा शैली ही नही चित्रांकन भी विज्ञापन का महत्वपूर्ण अंग है। ग्राफ्स, चित्र, भाषा शैली ये सब विज्ञापन को प्रबलता प्रदान करते है। जो विशेष उपभोक्ता समूह को ध्यान मे रखकर तैयार किये जाते है। उदा.- बच्चो के लिये कोई वस्तु तैयार की गई है तो प्यारे से बच्चे को उसकी मासुमियत के साथ दिखाया जायेगा। जैसे डायपर का विज्ञापन जिसमें बच्चों को तकलीफ भी न हो और बार-बार बदलने का झंझट भी न हो।

एक चीता रफ्तार के साथ दौडते हुए आता है, उस पर बैठा व्यक्ति उसको नियंत्रित करता है और चीता एक बाईक मे बदल गया (इसमें चीता रफ्तार का प्रतीक, मशीन चीते की तरह जटील उच्च तकनीक से बनी है चीता शक्ति का प्रतीक जो मनुष्य की नियंत्रित करने वाली भावना पौरूष को अभिव्यक्त करता है) अब आप समझ सकते है भाषा और चित्रों का गठबंधन उपभोक्ता पर कितना गहरा असर डालता है ये उपभोक्ता के मन मे दबी, छुपी इच्छाओं को उभारते है।

इस तरह छोटा सा विज्ञापन बड़ी अपेक्षाए छीपाए रहता है और अपने लक्षित समूह को अपनी बात कहकर क्रय करने को प्रेरित कर अपने उद्देश्य मे सफल हो जाता है। विज्ञापन हमारी बगल मे कोहनी मारकर, भाषा शैली ध्वनी चित्र प्रकाश के माध्यम से हमारे अवचेतन मन पर कब्जाकर वस्तु क्रय करने को प्रेरित करता है, जैसे - 'ठंडा मतलब कोकाकोला', मेरे सौन्दर्य का राज लक्स साबुन' 'हमको विल्नीज मांगता आपको क्या मांगता' और आप उसी कम्पनी का ब्रांड का सामान दुकानदार से जाकर मांगते हैं।

*** *सम्प्रेषण की कला* –** विज्ञापन केवल सामान बेचने का हथियार ही नही सम्प्रेषण की एक सम्पूर्ण कला है। इसमें गागर मे सागर समाया होता है, जैसे किस वर्ग को विज्ञापन सम्बोधित कर रहा है, उसकी भाषा शैली, चित्र, रंग ध्वनी, लय, प्रकाश की कलात्मकता एवं विज्ञापन में निहित अर्थ को ग्रहण कीजिए। तब विज्ञापन आपको बहकाएगा नही बल्कि आप कलात्मक समझ गहरी होगी। आप परिदृश्यो और विज्ञापन के अन्दाज को समझने लगेंगे। इस प्रकार विज्ञापन एक सम्पूर्ण कला है।

*** *टी.वी. विज्ञापन प्रसारण का इतिहास* –** टी.वी. पर सबसे पहला विज्ञापन प्रसारण अमेरिका मे 1 जुलाई 1942 को दिखाया गया था। एक घड़ी साज बुलोवा ने बेसबाल के मैच के पहले न्यूयार्क स्टेशन डब्ल्यु एमबोटी पर 9 डॉलर भुगतान कर 10 सेकेन्ड का एक विज्ञापन दिखाया था।'1 जबकि यू.के. में 21 सितम्बर 1955 में प्रथम टी.वी. विज्ञापन (गिन्स एम आर टूथ पेस्ट का) दिखाया गया था।'2 भारत मे विज्ञापन की शुरूआत दुरदर्शन के भारत में आगमन के साथ ही शुरू हो गई थी। पहले केवल बड़ी कम्पनियाँ विज्ञापन का खर्च उठा सकती थी किन्तु डेस्कटॉप वीडियो तथा स्थानीय केबल टी.वी. विज्ञापन प्रसारण करने का अवसर छोटे कारोबारियो को भी दिया है।

*** *विज्ञापन में आकर्षण*** - विज्ञापन को आकर्षक बनाने के लिये आकर्षक वाक्यों, आकर्षक संगीत, धून, झंकार नारे स्लोगन बनाये जाते है। झिंगल तैयार किये जाते है, जो विज्ञापन समाप्ति के पश्चात भी ग्राहकों के मन पर अंकित रहते है। कभी कभी झिंगल को गाने की तरह गुनगुनाने लगते है। विज्ञापन एजेन्सीयाँ विज्ञापन को बनाने के लिए उसमें एनिमेशन का प्रयोग करती है। विज्ञापन को प्रभावी बनाने के लिये हास्य का पुट भी डालती है।

*** *विश्व के विभिन्न देशो में (आधे घण्टे के कार्यक्रम मे) विज्ञापन प्रसारण का समय*** - विज्ञापन प्रसारण दुनिया के हर देश में किया जाता है लेकिन हर देश में आधे घण्टे के कार्यक्रम में विज्ञापन प्रसारण का समय अलग अलग है कुछ देशों में बच्चों के लिए तैयार विज्ञापन प्रतिबन्धित है, कुछ देशों में राष्ट्रीय व स्थानीय स्तर के विज्ञापन का समय अलग अलग निर्धारित है। अलग अलग देशों में विज्ञापन स्थिति दर्शायी गयी है :-

* प्राध्यापक, अर्थशास्त्र महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

विश्व के विभिन्न देशों में टी.वी. पर विज्ञापन प्रसारण (आधे घण्टे कार्यक्रम में)

देश	कार्यक्रम चलता	विज्ञापन प्रसारण होता
अमेरिका	22 मिनट	08 मिनट
डेनमार्क	20 मिनट	10 मिनट
फिलिपीन्स	21 मिनट	09 मिनट
न्यूजीलैंड	22 मिनट	08 मिनट
दक्षिणकोरिया	25 मिनट	05 मिनट
अर्जेटीना	28 मिनट	02 मिनट
यूरोप	24 मिनट	06 मिनट
यू.के.	26 मिनट	04 मिनट
जर्मनी	24 मिनट	06 मिनट
फ्रांस	25 मिनट	05 मिनट
आयरलैण्ड	25 मिनट	05 मिनट
रूस	23 मिनट	07 मिनट
भारत	20 मिनट	10 मिनट

स्त्रोत : हाउमच इ टेलीविजन एण्ड ब्राडकास्ट, 1950 कमर्शियल टेलीविजन एक्ट 1988 वर्ष 2009, इन्क्वायरी फिलीपीन न्यूज फिलीपीन.

**** विज्ञापन और प्राईम टाईम*** – जिस समय सबसे ज्यादा दर्शक टी.वी. देखते है, को भी विज्ञापनदाताओं ने खरीद रखा है इस समय चंद बड़ी कम्पनियों का एकाधिकार है, ये कम्पनियाँ मनोरंजन सीरियल के साथ दर्शको के आगे अपने उत्पादन का प्रचार भी कर देती है। जो उपभोक्ता पर मनोवैज्ञानिक असर डालता है।

**** विज्ञापन प्रसारण और बच्चे*** – आज के दौर मे बचपन हजारों खतरों से घिरा हैं। उनमें से एक विज्ञापन की वो भ्रामक दुनिया भी है। जो बिन बुलाये मेहमान की तरह हमारे जीवन में हस्तक्षेप करती है। बहुराष्ट्रीय कम्पनीयाँ अब बच्चों मे अपना बाजार देख रही है। कई बार यह पढ़ने सुनने को मिलता है कि इन विज्ञापनों के कारण बच्चों के शारीरिक व मानसिक जीवन पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है।

खास तौर पर टी.वी. पर दिखाये जाने वाले ललचाऊ और भडकाऊ विज्ञापनों ने बच्चों के विकास की रूपरेखा ही बदल दी है। खाने से लेकर खेलने तक उनकी जिन्दगी अजब गजब सामानों से भर गई है विज्ञापन के प्रभाव ने बच्चों के जीवन मूल्यों को ही परिवर्तित कर दिया है। विज्ञापनों ने बच्चों को जिद्दी, उदण्ड बना दिया है, हमारे मासुम बच्चे, जिनमें इन विज्ञापनों की रणनीति को समझने का न तो

आत्मबोध है न जानकारी। व्यवसायीकरण के इस दौर मे हर कम्पनी के लिए उपभोक्ता संस्कृति ही परम ध्येय है और उसके टारगेट है बच्चे। इन विज्ञापनों ने बच्चो के मन में भौतिक वस्तुओं की अनचाही ललक पैदा कर दी है। आज घर में कौनसा टी.वी., फ्रीज, वाशिंग मशीन लाना है ।

यह माता-पिता नही बच्चे तय करते है। मल्टीनेशन कम्पनियों ने इन बच्चों को ध्यान मे रखते हुए अपने हर विज्ञापन मे चाहे बच्चों से वो वस्तु सम्बन्धित न हो उसे विज्ञापन मे रखा जाता है। आज 74 करोड़ अमेरिकी डालर का बाजार इन बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने खड़ा कर दिया है।'[3] पुरानी पीढ़ी को नये प्रोडक्ट की तरफ असानी से प्रभावित नही किया जा सकता पर बच्चे बड़ी तेजी से नई चीजों को अपनाते है। इसी लिये उनके लक्ष्य है बच्चे। हाल ही में एक पुस्तक आई है ''ब्रांड चाईल्ड'' उसके सर्वे में बताया गया है कि 6 माह का बच्चा कम्पनियों के लोगो पहचान सकता है, 3 साल का बच्चा ब्रान्ड नेम बता सकता है और 11 वर्ष का बच्चा ब्रान्ड पर चर्चा कर सकता है।'[4] यही कारण है कि विज्ञापनों के निर्माता 'केच देम यंग का सूत्र अपनाते है।

एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत में सोम से शुक्रवार तक बच्चे प्रतिदिन 3 से 7 घण्टे टी.वी. देखते है। भारत में हर 5 मिनट में कमर्शियल ब्रेक और उसमें 5 विज्ञापन आते है।

भारत में औसतन प्रतिदिन 300 विज्ञापन बच्चे देख लेते है।'[5] जहाँ तक माता-पिता की बात है उन्हे इसका अहसास हो चुका है इसके पहले बच्चे इसके कुचक्र में फँस चुके होते है। और अब देर हो चुकी है पहले इन्हे बच्चो के साथ टी.वी. टाईमपास का आसान जरिया लगता है दूसरी बात माता-पिता लाड में बच्चो को रिश्वत के तौर पर विज्ञापन वाली चीजे क्रय करके देते है, बाद में बच्चा रोज नई चीजों की मांग करता है ।

आज हमारे देश में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का दखल बढ़ रहा है, भविष्य में निश्चित रूप से इसके परिणाम सामने आयेगे। आज विज्ञापनों ने बच्चों को बड़ो से ज्यादा ज्ञानी बना दिया है। और यह उसकी मासुमियत व हमारें संस्कारों पर हमला है। इस लिए इन प्रश्नों का समाधान हमें और हमारी सरकार को ढुंढना होगा।

**** विज्ञापन और महिलाएँ***– आज महिलाए मल्टीनेशन कम्पनियों के प्रोडक्ट बेचने का साधन हो गई है। जिन वस्तुओं के उपयोग से महिलाओं का कोई लेना देना नही, जिसके लिए कम कपड़ो की आवश्यकता नही वहाँ भी सस्ते, घटियाँ तरिको से महिलाओं को विज्ञापन मे इस्तेमाल किया जा रहा है। मनोवैज्ञानिक रूप से महिलाओं को विज्ञापन वाली वस्तुओं को (घर का सामान हो या सौन्दर्य का या बच्चो के इस्तेमाल का) क्रय करने के प्रेरित किया जा रहा है।

**** निष्कर्ष***– वैश्वीकरण के इस दौर में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की इस प्रतिद्वन्दता के मध्य विज्ञापन को निरपेक्ष दृष्टिकोण से देखे तो यह एक सम्पूर्ण कला प्रतीत होती है। पर ये बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अब हमारे बच्चो युवा पीढ़ी पर अटैक कर रही है, इससे हमारी संस्कृति और जीवन मूल्य प्रभावित हो रहे है। और विज्ञापन से आई विकृतियाँ तभी खत्म होगी, जब हमारी सरकार इसको लेकर एक ठोस नीति बनाये और उसको कानूनी जामा पहनाए। जनसम्पर्क कला एवं विज्ञापन के क्षेत्र मे प्रबुद्ध रोजगार की विपुल सम्भावनाए है पर वह संस्कृति के मूल्य पर नही हो इसलिए सरकार को चाहिये कि गहन विमर्श कर इसे उद्योग के स्त्रोत के रूप में विकसित किया जायें।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. रीसज प्लानर वैश्विक राजनैतिक प्रचार 2011 पृ.सं. 226.
2. Bergler आर. बच्चो पर वाणिज्य विज्ञापन के प्रभाव वर्ष 1999 पृ.सं. 41-48.
3. गोल्डस्टोन जे. बच्चे और विज्ञापन अनुसंधान वाणिज्य संचार वर्ष 1998 पृ.स. 4-7.
4. प्रेमन अराशा बच्चों के सामाजिक रिश्तों पर टेलीविजन वाणिज्य विज्ञापन का प्रभाव अनुसंधान और मूल्यांकन 2009 पृ. 29
5. परिमल मेहरा - उपभोक्ता समाज पर विज्ञापन का माया जाल देश बन्धु 27 दिसम्बर 2009 पृ.स. 2.

****

सूचना क्रांति ग्रामीण महिलाओं की बदलती स्थिति ''दूरदर्शन के संदर्भ में

प्रो. प्रेमलता तिवारी *

ऐतिहासिक बदलाव की नई परंपरा में सांस्कृतिक धरोहर की बेमिसाल कड़ी है सूचना क्रांति। जिसने चहुंमुखी विकास को नए मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया है। हम सबको सोचने का एक अवसर मिला है कि क्या सूचना क्रांति महिलाओं की विरासत मे ंचली आ रही परिभाषाओं में कोई बदलाव का कारण तो नहीं है।

महिला घर की हो या बाहर की, गांव की हो या शहर की, कामकाजी हो या गृहिणी हर क्रांति की वह गवाह होती है। सूचना क्रांति की चुनौतियों का सामना तो उसे भी करना है कि घर और दुनिया के समन्वय की कोशिश में यह क्रांतियों के लिए एक नया मार्गदर्शक बनें।

प्रसिद्ध गृह वैज्ञानिक पद्मश्री राजम्भाल देवदास के अनुसार- ''संसार का कोई भी व्यवसाय इतना बहुआयामी नहीं है जितना कि एक स्त्री का होता है। वह परिवार एवं समुदाय के लिए डॉक्टर, नर्स, मनोवैज्ञानिक, बैंकर, दर्जी, रसोईया, पोषण, विशेषज्ञ, भोजन प्रबंधिका, माली, बच्चों की परिचारिका, शिक्षाविद्, अर्थशास्त्री, सामाजिक कार्यकर्ता और पत्नी आदि एक साथ होती है।''

समाज के विकास की बात करना हो तो देश पर महिला एक मुद्दा बन जाती है। विकास की धारा में साथ ले जाने हेतु अब की प्रगति को सूचना क्रांति के पैमाने ने इस बात को साबित किया है कि प्रगति की सुस्त रफ्तार को महिला ही गति दे सकती है। सूचना क्रांति ने विकास के अवसर प्रदान किए है। साथ ही चुनौतियाँ भी। लेकिन अतीत के उत्थान पतन को देख चुकी आज की सशक्त नारी ने धाक जमाते हुए मीडिया, रेडियो, नेट सब पर बराबरी का हक जताया है।

31 दिसंबर 2008 की इंडिया टुडे के सर्वे में बताया गया है कि हिन्दी पट्टी में तीव्र विकास कर रहे चुनिंदा 200 शहरों ने भारत की आंतरिक गतिविधियों में महती भागीदारी निभानी शुरू की है। इस का एक कारण मेरी नजर में सूचनाक्रांति भी है। सूचना क्रांति के परिणामों से भले ही हम सीधे न जुड़े लेकिन उसके प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष परिणामों से कोई बच नहीं सकता। समन्वय की संस्कृति हमें विरासत में मिली है। जो इस क्रांति के दौर में उसमें ऐसी घुल मिल गई है कि अलग कर उस पर विचार करना असंभव है। आज का आचार व्यवहार, जीवन दर्शन, रीति रिवाज और सामाजिक आचरण क्रांति के संभावित परिवर्तनों के दौर से गुजर रहा है।

भौगोलिक परिस्थितियों के कारण क्षेत्रीयता की सीमा अब कोई मायने नहीं रखती। राष्ट्रीय संस्कृति की एकता ही अब अनिवार्य है। अतीत में अनेक उत्थान पतन देखने वाली हमारी संस्कृति तेजी से बदल रही है। जिसकी ख्याति दुनिया भर में फैल रही है।

आज सूचना क्रांति के विविध साधनों में मोबाईल, टीवी और कम्प्यूटर प्रमुख है। 15 सितंबर 1959 को आरंभ हुआ दूरदर्शन अब पास दर्शन बन गया है। 1962 में पूरे देश में 41 टेलीविजन सेट थे वहीं 2000 तक यह आंकड़ा 100 करोड़ के उपर पहुंच गयाहै।

सूचना क्रांति -

1. दूरदर्शन
2. रेडियो
3. कम्प्यूटर
4. इंटरनेट
5. समाचार पत्र
6. प्रिंट मीडिया
7. रेडियो
8. टेलीफोन
9. मोबाईल

इन समस्त प्रकारों में दूरदर्शन को सर्वाधिक प्रभावी माना जाता है क्योंकि शिक्षा, शहरी ग्रामीण के बीच का अंतर इसके लिए कोई अर्थ नहीं रखता है। दूरदर्शन और सेटेलाईट के समस्त चैनलों पर नजर डाले तो ऐसा कोई चैनल ग्रामीण महिलाओं की प्रगति के लिए कार्य नहीं कर रहा है। इने-गिने कुछ कार्यक्रम दूरदर्शन के पास तो है किंतु वह उतने प्रभावी नहीं है जितने होने चाहिए।

ग्रामीण महिलाओं के कार्यक्रम की सूची-

वर्तमान टीवी कार्यक्रमों की सूची देखने पर एक बात तो स्पष्ट है कि ग्रामीण महिलाओं से संबंधित ऐसा कोई विशेष कार्यक्रम किसी भी चैनल पर लोकप्रिय नहीं हुआ है जिससे इन महिलाओं के सर्वांगीण विकास में किसी भी प्रकार का सहयोग हो। मात्र सरकारी योजना के प्रचार प्रसार हेतु विज्ञापन जारी किए जाते है। एक प्रभावी ब्रांड यूनिवर्सिटी के रार्बट जेनानन के सर्वे में यह माना है कि पुत्र चाह के प्रति रूझान में थोड़ा सा परिवर्तन आया है।

दूरदर्शन के बढ़ते कदम ने ग्रामीण क्षेत्र का परिदृष्य बदल दिया है। सरकारी दूरदर्षी योजनाओं का परिणाम है कि गांव में जहां पहले कुटीर उद्योग हुआ करते थे अब लघु उद्योगों ने जगह ले ली है। दूरदर्शन के माध्यम से मिली तमाम योजनाओं की सुविधा के कारण ही घुंघट की आड़ में ग्रामीण महिलाओं के हाथ में मोबाईल नजर आ रहा है। परंतु दूरदर्शन धारावाहिकों के माध्यम से ऐसा कोई जादुई परिवर्तन तो नहीं हुआ है कि इनका चेहरा ही बदल जाए।

दूरदर्शन के कार्यक्रम का ग्रामीण महिलाओं पर प्रभाव -

स्त्री के योगदान को जीवन के हर क्षेत्र में अदृष्य रखने की साजिश, दूरदर्शन के मामलों में सतत जारी है। घरेलू स्तर पर ग्रामीण महिला खाना पकाना, खिलाना, प्रजनन एवं मजदूरी तक सीमित है। ऐसे में सेटेलाईट के धारावाहिक उसे चमत्कृत कर देते है। भारतीय संस्कृति की मजबूत जड़ों को

* प्राध्यापक (हिन्दी विभाग) शासकीय जवाहरलाल नेहरू स्नातक महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.)

काटने वाले ये धारावाहिक दलित मजदूरी किसान भारतीय नारी का दोहरा शोषण कर रही है। नारी के स्वाभिमान एवं अस्मिता पर हमला करने वाले धारावाहिक विलासिता की ओर आकर्षित कर रहे हैं।

क्षेत्रीयतावाद ग्रामीण परिवेश में बढतें खतरों के बीच नारी भावनाओं के साथ खिलवाड़ कर रहे है। निजी चैनलों की प्राथमिकता ने तो भारतीय मूल्य व्यवस्था को कहीं का नहीं रखा है। जैसे जैसे टीवी के पैर गांवों की ओर बढ़ रहे है वैसे वैसे समाज व संस्कृति की आत्मा आहत हो रही है। किसी संतुलित सोच का विकास नहीं हो रहा है। षड़यंत्र, चमकती गाड़ियाँ, रंगबिरंगी साड़ियाँ, भारी भरकम आभूषणों के बीच बदले की भावना से रचे जाने वाले शकुनी मामा जैसे षड़यंत्र भोली भाली ग्रामीण महिलाओं को विश्वाास दिलाने में सफल हो गए है कि उनके विचारों से परे ऐसी भी दुनिया है जहां उसी के जैसी कोई स्त्री लक्ष्यहीन जीवन को जी रही है। इस संबंध में प्रो. पारख ने कहा है कि ''जनसंचार के सभी माध्यम पूंजीपति, भू स्वामी व शासक वर्ग के ही प्रत्यक्ष या परोक्ष नियंत्रण में है, ऐसे में इनसे व्यापक जनहित के अनुकूल कार्य करने की आशा नहीं की जा सकती।''

जनसंचार के सभी सूचना क्रांति, मनोरंजन, शिक्षा, सूचना एवं परिवर्तन के विश्वव्यापी बहुआयामी विकास का ही परिणाम है कि आज इस सेमीनार में हम सब उपस्थित होकर इसके दूरगामी प्रभाव का आकलन करने हेतु तत्पर हुए है। भारत के गांवों में दूरदर्शन में दबे पैरों से हलचल मचाई है पर ग्रामीण महिला का सशक्त रूप यहां दिखाई नहीं देता। शहरों में उँचे परिवारों में ब्रांडेड परिधानों से घिरी महिलाओं को देख सच हुए अपने सपने वाली स्थिति का साकार रूप नहीं माना जाना चाहिए।

नव जागरण की दहलीज पर खड़ी गांव की महिला को संघर्ष करना पड़ रहा है। विकास की विशाल संभावनाओं से परे गांव की बुनियादी सुविधाओं की हालात लड़खड़ा रही है। अभी भी एक बड़ी सच्चाई यह है कि आम जनता का बहुत बड़ा भाग 80 प्रतिशत ग्रामीण महिलायें दूरदर्शन के प्रभावों से वंचित है। गांव में पारंपरिक समाज उपभोक्तावादी समाज की ओर झांक रहा है। पर विकास के शैशव काल से गुजर रहे गांव ऐसे नाजुक मोड़ पर खड़े है जहां दूरदर्शन के अनचाहे प्रभाव उन्हें गुमराह कर रहे है। लोकसंस्कृति व लोकउत्सव में गहरी आस्था रखने वाली ग्रामीण नारी गरीबी व शिक्षा से पीड़ित हैं सामाजिक व आर्थिक परिवेश को ध्यान में रख कोई सराहनीय प्रयास नजर नहीं आते बल्कि खुले बाजार की व्यवस्था के तहत शैंपू, साबुन, मोबाईल, गांव की स्वस्थ परंपराओं को क्षति पहुंचा रहे है।

रियलिटी शो हमें भ्रमित करने वाले अनरियलिटी शो है। गाजरघास की तरह प्रतिदिन बढते हुए धारावाहिक दिशा भ्रमित करते है। घुंघट में रहने वाली ग्रामीण नारी जीवन की मूलभूत संरचनाओं से परे आकांक्षाओं के झुले में बैठकर सपनों के आकाश में विचरने की सोच में ढलने लगी है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने स्वस्थ मनोरंजन को भुला दिया है। नग्न देह दर्शक रिश्तों की मर्यादा को धूल चटाते धारावाहिक साहित्य को परे धकेलते उद्देश्यहीन धारावाहिकों ने गांवों में सामाजिक प्रदूषण फैलाना शुरू कर दिया है। होना ये था कि गांव की स्वस्थ परंपराओं का निर्वाह किया जाने पर वाहं के मृतप्राय: उद्योगों में नई तकनीकी के आधार पर जान फूंकी जाए।

आर्थिक दृष्टि से ग्रामीण महिलाओं को सक्षम बनाया जाए। लेकिन सेटेलाईट चैनलों की घुसपैठ से ग्रामीण बाजार में भी संस्कारों का आधुनिक विचार क्रांति ने हमला बोला है। आपसी संवाद की पृष्ठभूमि में विकसित होते लगभग 576000 गांव सूचना क्रांति के कारण भ्रमित है। गरीबी यथावत है और अपने सपने असंख्य है। त्यौहार, परंपराएँ, खान पान, रीतिरिवाज, धर्मव्रत जैसे अपठित कलात्मक साहित्य से परिपूर्ण ग्रामीण महिला को निखारने में सूचना क्रांति एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। एक रिसर्च पेपर में डॉ. प्रतिभा मिश्रा ने कहा है– ''आधुनिक युग में जनमानस में दूरदर्शन एक ऐसा सशक्त माध्यम है जो महिलाओं के सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।''

सरलता एवं सहजता की धुरी महिलाओं से सीधे संप्रेषण की सहज आवश्यकता हैं ग्रामीण महिलाओं को उन्हीं के परिवेश में उन्हीं के समस्याओं को धारावाहिकों में ढालकर सुलझाना है। बौद्धिक एवं शैक्षणिक स्तर में मतभेद घटाने में टीवी की सक्रिय भूमिका है। इस विश्वसनीय सूचना स्त्रोत पर गांव की जनता विशेषकर महिलायें आंख मूंदकर विश्वास करती हैं। गांव के विकास की गति को तेज करना है तो ग्रामीण महिलाओं के परिवेश को समझकर ही आगे बढ़ना होगा।

सुझाव –

दूरदर्शन एवं ग्रामीण नारी परस्पर पूरक बने तो अनिवार्य है कि कुछ ऐसे परिवर्तन की शुरूआत करते जिससे ग्रामीण महिलाओं का सर्वांगीण विकास हो सके। भारत की सुदीर्घ लंबी ऐतिहासिक परम्परा यूं ही आसानी से परिवर्तित नहीं हो सकती। परंतु मेल मिलाप एवं संघर्ष के उलझे हुए रिश्तों का प्रभाव गांवों में दिखाई दे रहा है। टीआरपी के माध्यम से नारी शोषण पर फलने फूलने वाली चैनल व्यवस्था के बनाए रखने की अत्यंत सफल रणनीति का विरोध होना ही चाहिए। विवेकहीन आस्था की जड़े काटनी ही होगी।

पूर्व राष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा के कथन को ध्यान में रखें कि ''हमें यह बात याद रखनी है कि हमारे देश की पुनर्निमाण एवं विकास के लिए नारी शक्ति की महत्ता को समझना एवं उसे सुयोग्य स्थान देना आवश्यक है।'' कृषि पर आधारित हमारी अर्थव्यवस्था में ग्रामीण महिलाओं का न केवल सहयोगपरक बल्कि एक स्वतंत्र महत्व है।''

इसलिए दूरदर्शन को इस ओर ध्यान देना चाहिए कि ग्रामीण नारी के जीवन की सामाजिक समस्याओं को दूर कर मनौवैज्ञानिक रूप से सुदृढ़ बनाया जावे।

हमारे देश की असली आबादी के शक्ति यूं ही नष्ट नहीं होने देना है। सच्ची आधुनिकता बुद्धि की स्वत्रंतता है। अतीत की गुलामी नहीं इसलिए पीछे की ओर देखते रहने की ग्रामीण नारी के व्यवहार में परिवर्तन लाना चाहिए। डॉ. लोहिया ने समाजवादि दर्शन में कहा – ''औरत हिन्दुस्तान की औरत दुनिया के दु:खी लोगों में सबसे ज्यादा दु:खी भूखी मुरझाई एवं बीमार है।''

ग्रामीण नारी को परिभाषित करने वाली उक्ति में कुछ कुछ सच्चाई तो है। नारी के आत्मसम्मान को जगाकर शिक्षित व स्वतंत्र करने के लिए ''पुरूष का उसके प्रति नजरिया बदलने के लिए अतीत से चली आ रही विकृतियों को खत्म करने के लिए दूरदर्शन से बढ़कर कोई कार्यक्रम हो ही नहीं सकता।

इसके लिए गांवों में प्रसारित दूरदर्शन के कार्यक्रमों की जिम्मेदारी कम नहीं आंकी जा सकती। इसमें ग्रामीण, तालमेल, सहमति एवं विचार विमर्श की राह अपनानी होगी। ग्रामीण सभ्यता एवं संस्कृति के धनी भारत में कार्यक्रमों को निष्चित सांचे में ढालना होगा। ताकि ग्रामीण दक्षता एवं क्षमताओं का पूर्ण उपयोग हो। हमारी संस्कृति ग्रामीण परिवेश पर ही निर्भर रहे। इसलिए कुशाग्र बुद्धि से सावधानी के साथ धारावाहिकों को नया रूप देना होगा।

भारत की दस में से पांच महिलायें निरक्षर है और गांवों में बसती है। पर वे सांस्कृतिक सोच व अनुभवों की धनी है। अगर रूढ़िवादिता और अंधविश्वास से उन्हें मुक्त कर दिया जाए तो महात्मा गांधी का सपना सच होगा कि भारत की आत्मा गांवों में बसती है। पश्चिमी सभ्यता के रथ पर सवार विविध चैनलों को भारतीय ग्रामीण परिवेश की जीवन पद्धति सभ्यता में घुसपैठ से रोकना होगा। उनकी वैभववादी विचारधारा का विरोध करना होगा।

मानवता के लिए रियलिटी शो को कानूनी रूप से बंद किया जाना चाहिए। दूरदर्शन की विविध चैनल व्यवस्था से थोपी हुई व्यवस्था इसका विरोध कर सार्वजनिक एवं सार्वभौमिक शिक्षा का प्रसार ग्रामीण परिवेश के तहत किया जाना चाहिए। विज्ञान के विशाल क्षितिज में ग्रामीण सभ्यता एवं संस्कृति के तारे जडने ही होगे। ग्रामीण महिलाओं के जीवन चरित्र में उतना ही दखल देना चाहिए जिना कि विकास के लिए अनिवार्य है। बौद्धिक दिवालिया की सीमा पार करते हुए चैनलों पर विश्वास नहीं करना चाहिए।

नए परिवेश में नारी की नई भूमिका को सामाजिक मानरूपता दिलाने के लिए आवश्यक है कि दूरदर्शन अपनी सही भूमिका अदा करें क्योंकि बीबीसी, दूदर्शन सेवा के पूर्व निदेशक जैरल्ड विडन ने कहा है कि ''घर और स्कूल के बाद मेरे विचार से संसार की किसी अन्य माध्यम की तुलना में मानव जाति पर सबसे गहरा प्रभार दूरदर्शन ने ही डाला है। यदि दूरदर्शन व्यापक और उच्च आदर्श से जुडा रहा तो यह मानव का अभिन्न अंग बन जाएगा और अगली पीढ़ियाँ इसे पसंद करेगी।''

1. ग्रामीण महिलाओं को लघु रोजगारोन्मुख उद्योगों की शिक्षा दी जा सकती है। उनके मानसिक विकास को ध्यान में रखकर ऐसे कार्यक्रम बनाये जा सकते है कि वे आर्थिक दृष्टि से सुदृढ़ हो।
2. दूरदर्शन को उद्देश्य एक ऐसी सृजनात्मक शक्ति को उत्पन्न करना है जिसके द्वारा स्वार्थ हिंसा और उपभोक्तावादी लालसा का अंत हो सके। तर्कशक्ति का विकास करें। हमें सदियों के पसीने और आंसुओं को एक पीढ़ी के रूप में बदलना होगा। हमें असमानताओं को कम करना होगा जो अन्यायपूर्ण है और हमें अपने को गौरवान्वित करना होगा।
3. मात्र सत्यार्थ प्रकाश ग्रंथ के आधार पर महर्षि दयानंद सरस्वती पूरे भारत में बदलाव की पृष्ठभूमि तैयार कर गए तो भला गांव गांव यह पहुंचा दूरदर्शन जो आधुनिक साहित्य का ही एक प्रकार है। क्या नहीं कर सकता। ग्रामीण परिवेश में बौद्धिकता, विलास और आध्यात्म में तालमेल को महत्व दिया जाना चाहिए।

सच पूछो तो यह जादूई छड़ी है बस पथप्रदर्शक का इंतजार है। बीबीसी के दूरदर्शन सेवा के पूर्व निदेशक जेरल्ड विज्डन ने कहा था कि– ''घर और स्कूल के बाद मेरे विचार से संचार के किसी अन्य माध्यम की तुलना में मानव जाति पर सबसे गहरा प्रभाव दूरदर्शन ने ही डाला है। यदि दूरदर्शन व्यापक और उच्च आदर्श से जुडा रहा तो यह मानव जाति का अभिन्न अंग बन जाएगा और अगली पीढ़ियाँ इसे पसंद करेगी।''

लोहियाजी का यह कथन है कि – "A Socialist movement without the active participation of woman is like a wedding without the bride." तो दोनों में सुंदर, सार्थक तालमेल आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ

1. इंडिया टुडे– 31 दिसंबर 2008
2. संस्कृति, जनसंचार और बाजार– नंद भाखज, सामाजिक प्रकाशन, नई दिल्ली 110002
3. जनसंचार और सामाजिक संदर्भ– डावरीमल्ल पारख
4. प्रसार शिक्षा – गीता दुस्व, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
5. आधुनिक शिक्षा तकनीकी एवं उपकरण– मधूसूदन त्रिपाटी
6. हमारी सांस्कृतिक धरोहर– डॉ. शंकरदयाल शर्मा, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
7. भारतीय संस्कृति : कुछ विचार– डॉ. राधाकृष्णन, सरस्वती विहार, नई दिल्ली
8. डॉ. लोहिया का समाजवादी दर्शन– ताराचंद दीक्षित, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

****

आदिवासी- बारेला उपजाति की अनोखी परम्पराएँ खरगोन जिले के विशेष संदर्भ में

प्रो. आर. आर. आर्य *

खरगोन जिला मध्य प्रदेश राज्य के दक्षिण-पश्चिम में स्थित है इसका अक्षांशीय विस्तार 21°22' से 22°35' तथा देशांतरीय विस्तार 75°35' से 76°14' पूर्वी देशान्तर तक है। इसके उत्तर में विंध्याचल तथा दक्षिण में सतपुड़ा की पहड़ियाँ है। जिले की पूर्व से पश्चिम में चौड़ाई लगभग 186 किलोमीटर एवं उत्तर से दक्षिण की लम्बाई 263 किलोमीटर है। जिले में कई प्रकार की जातियाँ एवं उपजातियाँ पाई जाती है, अत: इन्हे तीन श्रेणियों में रखा गया है। जिनमें अनुसूचित जातियो का 11.4% अनुसूचित जनजातियों का 35.48% तथा शेष 53.12% जनसंख्या अन्य जातियों की पाई जाती है।

मध्यप्रदेश की प्रमुख जनजातियों में जनसंख्या की दृष्टि से गोड़ एवं भील सबसे बड़ी जनजातियाँ हैं। शोध अध्ययन क्षेत्र खरगोन जिले में भील जनजाति की दो उपजातियाँ भीलाला तथा बारेला मुख्यत: पायी जाती है। अध्ययन क्षेत्र के चयनित ग्रामों में 39.89% भीलाला 32.15% बारेला तथा 27.94% सर्वेक्षित भील पाये जाते है।

जनजातीय समाज अपनी अलग वेशभूषा एवं संस्कृति के कारण लोगो के आकर्षण का केन्द्र रहा है। अपनी विशिष्ट पहचान के कारण ये शोधकर्ताओं के लिये भी जिज्ञासा के केन्द्र रहे हैं। परन्तु वर्तमान आधुनिक युग का प्रभाव इन पर भी देखा जा रहा है। बावजूद इसके इनकी अपनी कुछ अनोखी परम्पराएँ आज भी समाज में देखी जा सकती है। शोध अध्ययन मे निम्न कुछ विशिष्ट परम्पराएँ पायी गई ।

1. विवाह पद्धति-

(A) यहाँ की बारेला आदिवासी उपजाति में वधू मूल्य चुकाने की परम्परा है इनके बुर्जुगों की मान्यता है कि हम लड़की का पालन-पोषण कर जीवन भर के लिए सौप देते है इसलिए वधू-मूल्य का अधिकार है दूसरा तथ्य यह है कि वधू मूल्य लेने से रिश्ते के टुटने की संभावनाएँ बहुत कम रहती है अर्थात लड़की पिता को वधू मूल्य चुकाने के भय से नये रिश्ते में घूल मिल जाती है।

(B) सामान्यत: सभी वर्गो में वर पक्ष बारात लेकर जाता है परन्तु बारेला आदिवासियों में वधू पक्ष के लोग बारात लेकर जाते है। इसका मूल कारण यह है कि समाज के सभी लोगो को लड़की के यहां जाने का अवसर मिल जाता है विवाह के पश्चात केवल दो परिवार का आना-जाना लगा रहता है।

(C) इस समाज में तीन विवाह पद्धतियाँ प्रचलित है। प्रथम-वधू को चुराकर लाने की। ऐसा इसलिए किया जाता है कि यदि वरपक्ष एवं वधू पक्ष दोनों सहमत है तो यह विवाह कर सकते जिससे परिवार अनावश्यक खर्चे से बच जाता है सामन्यत: जो परिवार आर्थिक रूप से सक्षम नही होते है वे इस पद्धति को अपनाते है। द्वितीय- वधू को रखने जाने की। (बारात) आदिवासी समाज में सबसे ज्यादा यह विवाह पद्धति प्रचलित है।

तृतीय- इस पद्धति में बड़वा (पंडित) आदिवासी संस्कृति के अनुसार विवाह संस्कार संपन्न करता है जिसमें वर-वधू को हल्दी लगाई जाती है और वर पक्ष बारात लेकर जाता है यह विवाह पद्धति लगभग समाप्त हो चुकी हैं क्योंकि सम्पन्न करने हेतु बड़वे (पंडित) नहीं मिलते तथा जादु-टोने से वर-वधू को हानि पहुँचाने का भय बना रहता है।

2. प्रमुख पर्व- आदिवासी समाज का प्रकृति से निकट का संबंध है इसलिए उनके त्यौहार भी प्रकृति से जुड़े हुए है वर्षा ऋतु के प्रारम्भ होने के साथ इनके पर्व शुरू हो जाते है। वर्षा ऋतु में लोकगीत सामूहिक रूप से गाते है 'झिरी झिरी पाणी पोड़े-डासे धुबी छोतरी चौणाया लेजीवा' एक प्रमुख तथ्य यह भी है। इनके त्यौहार एक ही दिन या तिथि को नहीं मनाए जाते है। फलियों, मोहल्ले या गांवों में अलग-अलग दिन पर्व मनाने की परम्परा है तिथि का निर्धारण समाज के बुजुर्ग लोग करते है।इस परम्परा के पीछे उनकी मान्यता है कि समुदाय में कोई बीमार हो, किसी की मृत्यु हो गई हो तो सामुहिक रूप से उसके साथ शोक मनाने का उनका तरीका है एक मुख्य बात यह भी है कि त्यौहार का समय काम-काज को देखकर तय किया जाता है एक मान्यता यह भी है कि अलग-अलग दिन त्यौहार मनाने से वे एक दूसरे की खुशी में शामिल हो सकते है। तथा सामुहिक रूप से उत्सव मनाने का अवसर मिलता है। फसल के उगने के लगभग एक माह पश्चात दितवारिया मनाते है जो रविवार को मनाया जाता है।

इस दिन ये लोग घर के बाहर चावल बनाते है। तथा पुरूष खेत में मिर्च, प्याज तथा आम के पत्ते का तोरण बांधते है। घर के द्वार पर भी इसी तरह का तोरण बांधा जाता है। ऐसा करने से उनके खेत तथा घर में किसी प्रकार की बीमारी नही लगती है। तथा जादु-टोने से बचा जा सकता है। फसल तैयार होने के पश्चात नवई त्यौहार मनाया जाता है। इसमें नई फसल का भोग कुलदेवी को लगाया जाता है। इसके पूर्व बुजुर्ग लोग कोई भी फसल ग्रहण नही करते है कुलदेवी को खीरा चढ़ाने की विशेष परम्परा है यदि घर में खीरा (ककड़ी) न हो तो आप-पड़ोस से मांगकर लाई जाती है।

उपर्युक्त पर्वो के अतिरिक्त और भी पर्व मनाये जाते है परन्तु यहां अनोखी परम्पराओं का ही उल्लेख किया गया है।

3. दाह संस्कार- (A) समुदाय में मृत्यु होने पर सभी लोगों द्वारा पगड़ी उतारकर शोक मनाया जाता है। (B) अधिकांश वर्गो में किसी की मृत्यु होने पर संबंधित के छोटे पुत्र द्वारा दाह संस्कार का कार्य किया जाता है परन्तु बारेला समाज में यह प्रथा भिन्न है इस वर्ग में समुदाय के ऐसे व्यक्ति द्वारा दाह संस्कार का कार्य किया जाता है जिसके पिता की मृत्यु हो चुकी हो। इसमें भी या तो भाईयों में सबसे बड़ा हो या सबसे छोटा भाई हो, उसी को दाह संस्कार का अधिकार प्राप्त हैं। दाह संस्कार के अन्य कार्य भी जिनके पिता की मृत्यु हो चुकी हो वे ही कर सकते है। (C) शमशान घाट पर चन्दा एकत्रित किया जाता है उस राशि से सेव-परमल, दाली, शराब या नुक्ति की प्रसादी बांटी जाती है। (D) समाज में अन्य वर्गो की भांती दसवां, ग्यारवां या उत्तरकार्य करने की समय सीमा नही है। व्यक्ति अपनी सुविधा अनुसार 12 दिन, 2 माह, 6 माह या 1 वर्ष से भी अधिक समय में मृत्युभोज का आयोजन कर सकता है। (E) इस समाज के कुछ लोग सामल्या परम्परा का निर्वहन करते है। इसके अन्तर्गत घाट पर बकरे की बली देने की प्रथा है। यहां भोज वही ग्रहण करते है जो उनकी बिरादरी के होते है।

4. सामूहिक कार्य- समाज में सामूहिक कार्य करने की अनुठी परम्परा

* सहायक प्राध्यापक, भूगोल, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय खरगोन (म. प्र.)

है। खेत-खलियान या फिर मकान बनाना हो ये लोग ढास बुलाकर बड़े-बड़े कार्य कम समय एवं लागत में कर देते है। इस परम्परा के अन्तर्गत समुदाय में प्रत्येक परिवार से एक-एक सदस्य काम करने जाता है।

कार्य करवाने वाला परिवार इसके बदले में विशेष भोज (चांवल, माँस एवं शराब) का प्रबंध करता है। इस प्रकार सामूहिकता की अनुठी मिसाल इस जन जाति में देखी जा सकती है।

5. शिकार- प्राचीन काल में ये शिकार किया करते थे, शिकार हेतु धनुषबाण का उपयोग करते है। परन्तु धनुषबाण चलाने में वे दाहिने हाथ के अंगूठे का उपयोग नही करते है। इसका कारण उन्हें ज्ञात नही परन्तु संभवत: एकलव्य से जुड़ी कथा हो सकती है।

सारांश रूप में कहा जा सकता है कि जिले की बारेला उपजाति अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक विरासत लिए जीवनयापन कर रही है। परन्तु आधुनिकता के प्रभाव से यह भी अछूती नही है। इनके रीति-रिवाज एवं परम्पराओं पर भौतिकवादी संस्कृति की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। अत: इनके संरक्षण की आवश्यकता है।

6. भगोरिया- जनजातीय समाज में भगोरिया सबसे अधिक हर्ष एवं उल्लास के साथ मनाया जाता है भगोरिया के सम्बन्ध में अभी तक जिन पुस्तकों, पत्रिकाओ तथा समाचार-पत्रों में उल्लेख किया गया है। वह वास्तविकता से कोसो दूर है। भगोरिया वास्तव में पर्व नही है बल्कि हाट-बाजार है। आदिवासी क्षेत्रों में ये हाट होलिका दहन के एक सप्ताह पूर्व प्रारम्भ हो जाते है। वर्तमान से एक शताब्दी पूर्व ग्रामीण अंचलों में हाट बाजार नही लगा करते थे। ऐसी स्थिति में इन टोलो, फलियों, कस्बों में विशेष हाट-बाजार होली की सामग्री उपलब्ध कराते थे। इन हाट बाजारों (भगोरिया) में मुख्यत: होलिका दहन हेतु प्रसादी के रूप में हार-कंगन, चने, दाली, खजूर आदि खरीदे जाते है। आदिवासी स्त्री-पुरूष सज-धज कर जाते है तथा ढोल की थाप पर थिरकते है और झूला झूलते है। सामान्य बाजार में ढोल बजाने की परम्परा नही है। ढोल बजाने का इनका निष्चित समय जनवरी से अप्रैल तक है। केवल विशेष परिस्थितियों में ढोल बजाये जाते है। (जैसे- बुजुर्ग व्यक्ति की मृत्यू)।

भगोरिया का वैवाहिक परम्परा से कोई संबंध नही है, होली का डांडा गड़ने से एक माह तक आदिवासियों में वैवाहिक कार्यक्रम निषेद्य है, बुजुर्गो के अनुसार समाज में नवयुवक लड़की देखने जाता है परन्तु लज्जा एवं शालीनतावश लड़की सामने आती नही है, और नही चाय-नाश्ता देने की परम्परा है। अत: बिना देखे ही शादी करना पड़ता है। ऐसी स्थिति मे भगोरिया हाट में लड़की को देखने का अवसर मिलता है, पूरे परिवार के सदस्य अप्रत्यक्ष रूप से पसन्द कर लेते है सभी युवा युवतियाँ मेले में मिलते है अप्रत्यक्ष रूप से पहचान होने पर पान खिलाया जाता है यह सम्मान का उनका अपना तरीका है सामान्यत: लोग चाय-नाश्ता करवाते है।

सभी युवा-युवती उमंग और मस्ती के साथ एक दूसरे को गुलाल लगाते है। और यह आवश्यक नहीं कि गुलाल मात्र लगाने से लड़के का संबंध पक्का हो गया या विवाह तय हो जायेगा । जिस प्रकर अन्य समाज में धुलेड़ी एवं रंग पंचमी मनायी जाती है, वैसे ही आदिवासी समाज में भगोरिया हाट में युवक-युवतियाँ गुलाल खेलते है। परन्तु यदि किसी की बहन को युवक द्वारा गुलाल लगाते हुए भाई द्वारा देख लिया जाता है तो भयंकर लड़ाई-झगड़े हो जाते है। भीषण तीर-कमान एवं गोफन चलते है। सेंधवा तहसील (जिला बड़वानी) के ग्राम आम्बा में सन् 1988 में तथा 1992 में गवाड़ी ग्राम के भगोरिया हाट में सरेआम सिर धड़ से अलग कर दिये गये थे।

अत: हाट-बाजारों में पर्याप्त पुलिस बल तैनात करना होता है। तथा एक सप्ताह पूर्व ही शराब की बिक्री पर प्रतिबंध लगा दिया जाता है। अत: भगोरिया आदिवासी समुदाय का युवक-युवती मिलन समारोह मात्र है जहाँ एक दूसरे को देखकर पसंद किया जा सकता है। स्मरण रहें कि वैवाहिक सम्बंध के लिए भगोरिया पर्व अवश्यक नही है और न ही परिचय सम्मेलन हेतु।

चित्र परिचय-

1. ***पारम्परिक वेशभूषा में नवविवाहिता***
2. ***हल्दी विवाह (बारात लेकर जाते है)***
3. ***दहेज तय करते हुए समाजजन***

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- डॉ. सेवन्ती डावर- निमाड़ जनपद- बारेला आदिवासी लोक साहित्य का संग्रहण, लिप्यान्तरण एवं अनुशीलन
- पंडित रामनारायण उपाध्याय- निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास
- डॉ. दिनेश्वर प्रसाद- लोक साहित्य और संस्कृति
- डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय- लोक साहित्य की भूमिका
- डॉ. हीरालाल शुक्ल- आदिवासी भाषा विज्ञान
- डॉ. सेवन्ती डाबर- अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका 'नवीन शोध संसार' अप्रैल-जून 2013 पृष्ठ क्रमांक 46

''रामचरित मानस में नारी विमर्श''

डॉ. बीना चौधरी *

साधारणतया 'रामचरित मानस' की दो चार उक्तियों को उठाकर तुलसी को नारी निंदक घोषित कर दिया जाता है, किन्तु जैसा कि पं. गंगाधर मिश्र का मंतव्य है कि ''अपने युग को सामाजिक जीवन का सूक्ष्म परिचय देकर तुलसी ने लोकस्रष्टा की ऑखों को खोल दिया है।''[1] सच ही है तुलसी के मानस में निहित नारी विमर्श हेतु सूक्ष्म द्रष्टा बनना आवश्यक है।

जैसा कि डॉ. रातरतन भटनागर का मत है कि 'तुलसी' के पास अपने निश्चित 'मूल्य' थे। वास्तव में मानस यदि कुछ है तो 'मूल्य' ही तो है।[2]

इन मूल्यों की स्थापना के संदर्भ में 'मानस' में अभिव्यक्त नारी विमर्श को चार रूपों में विभाजित कर मूल्यांकन कर सकते हैं :- (1) नारी-निंदा (2) नारी पात्र (3) नारी-धर्म (4) नारी के प्रति उदार भाव

(1) नारी- निंदा :- 'मानस' में अनेक स्थलों पर तुलसी नारी की निंदा करते प्रतीत होते हैं, जो वास्तव में परिस्थितिजन्य है। मानस में अभिव्यक्त नारी-निंदा के स्वरूप को इस प्रकार अभिव्यक्त किया जा सकता है :-

(1) तुलसी ने लोक जीवन के बिम्ब को ग्रहण कर काव्य में प्रतिबिम्बित किया है :-

''विधिहु न नारि हृदय गति जानी। सकल कपट अघ अवगुण खानी।।
सरल सुसील धरमरत राउ। सो किमि जानइ तीअ सुभाउ।।'' (2/162)

तुलसी के पूर्ववर्ती साहित्य 'हितोपदेश' आदि में नारी स्वभाव विषयक इस प्रकार के नीति वाक्य भरे पड़े हैं। तुलसी ने भी इस परम्परा का अनुधावन किया है।

(2) तुलसी के भक्त पात्र अनसूया और शबरी आत्म-निष्ठ निंदा करते हैं :-

''केहि विधि अस्तुति करौं तुम्हारी। अधम जाति मैं जड़मति भारी।।
अधम तें अधम अधम अति नारी। तीन्ह महुं मैं अति मंद अघारी।।'' (3/35)

भक्ति के वशीभूत पात्र की यह अतिशय दीनता तुलसी के दैन्य भाव-भक्ति का ही परिचायक है।

(3) तुलसी का मुख्य उद्देश्य राम भक्ति का निरूपण है। भक्ति का मुख्य साधन वैराग्य है। राग के विषय का निरंतर दोष-दर्शन और उसके प्रति जुगुप्सा से ही मोहभंग होकर वैराग्य हो सकता है :-

''सुनु मुनि कह पुरान श्रुति संता। मोह विपिन कहुँ नारि वसंता।।
जप तप नेम जलासय झारी। होइ ग्रीष्म सोखै सब नारी।। (3/43,44)

(4) तुलसी ने जिस नारी की निंदा की है वह काम की आलंबन रूपा है। संस्कृत साहित्य के वैराग्य प्रकरण, योगवसिष्ठ महाभारत, पुराण आदि में नारी की जो तीव्र निंदा की गई है, उसकी तुलना में तुलसी की उक्तियाँ कोमल है। तुलसी ने तो पराधीन नारी के प्रति सहानुभूति ही प्रदर्शित की है :-

'कत विधि सृजी नारी जग माहीं। पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।। (1/102)

(5) तुलसी के आलोचक नारी-निंदा के संबंध में अधिकांशतया एक ही पंक्ति उद्धत करते हैं :-

''ढोल गंवार शुद्र पशु अरू नारी। ये सब ताड़न के अधिकारी'' (5/59)

वस्तुत: यह कथन जड़ और अनुत्तम पात्र समुद्र का है। डॉ. उदयभानुसिंह का भी मत है कि आर्त चित्त का उद्गार सिद्धांत नहीं होता है।[3] इसके अतिरिक्त यहाँ शब्दों पर ध्यान देना चाहिये एक तो 'अधिकारी' अर्थात् ध्वनित होता है कि नियम नहीं है, आवश्यकता पड़नें पर ताड़ना की जाना चाहिये। दूसरा 'ताड़ना' शब्द का अर्थ भाँपना से भी लिया जा सकता है कि उसकी प्रकृति भाँप कर उसके साथ आचरण करें।

इसी परिप्रेक्ष्य में रावण की यह उक्ति भी विचारणीय है :-
नारी सुभउ सत्य कहहीं। अवगुण आठ सदा उर रहहीं
साहस, अनृत, चलपता, माया। भय अविवेक असौच अदाया।। (6/16)

वस्तुत: यह सिद्धांत वाक्य नहीं, स्वभाव कथन है। रावण अपने स्वभाव के अनुसार नारी को ऐसा समझता है, जबकि तुलसी ने मंदोदरी व सीता के रूप में दृढ़, गंभीर, साहसी, पवित्र और विवेकशील नारी को प्रस्तुत किया है, जिसके आगे रावण की उक्त पंक्तियाँ हास्यास्पद जान पड़ती हैं।

(5) अपनी बात को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने के लिये तुलसी ने अन्य दृष्टांतों को साथ नारी का भी अप्रस्तुत विधान किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का मत है कि ''काव्य का उद्देश्य शुद्ध विवेचन द्वारा सिद्धांत निरूपण नहीं होता, रसोत्पादन या भावसंचार होता है, अत: स्त्रियों के संबंध में गोस्वामीजी ने जो कहा है वह सिद्धांत वाक्य नहीं है, अर्थवाद मात्र है।''[4]

''महावृष्टि चलि फूटि किआरीं। जिमि सुतंत्र भए बिगरहि नारी।। (4/15)

पंक्तियों में अप्रस्तुत विधान के साथ ही अतिशय उच्छृंखलता का विरोध है। वास्तव में तुलसी का मूल मंतव्य नारी निंदा नहीं, वरन् वे नारी की उस उच्छृंखलता के विरोधी थे, जो उनके युग में उन्होंने देखी थी। डॉ. रामकुमार वर्मा का भी मत है कि ''यदि निष्पक्ष दृष्टि डाली जाए तो विदित होगा कि नारी के प्रति भर्त्सना के ऐसे प्रमाण उसी समय उपस्थित किये गए, जबकि नारी ने धर्म विरोधी आचरण प्रस्तुत किये।[5]

(2) नारी पात्र

तुलसी का मुख्य ध्येय नारी विमर्श नहीं, वरन् रामचरितमानस के माध्यम से आदर्श मूल्यों की प्रतिस्थापना करना था। जैसा कि सौभाग्यमल जैन ने कहा है ''मानस की वास्तविक उपयोगिता है चरित्र-निर्माण।''[6]

नारी के प्रति सम्मान जनक एवं उदार दृष्टिकोण तुलसी के मानस के नारी पात्रों से सिद्ध किया जा सकता है। उनके नारी पात्र दो प्रकार के हैं :- सत्पात्र और असत्पात्र। 'मानस' में सच्चरित्र नारी पात्रों की संख्या बहुत बड़ी है, निंदनीय कही जाने वाली गिनी.चुनीं है, जबकि निंदनीय पुरूष पात्रों की संख्या अधिक है।

निंदनीय नारी पात्रों में ताड़का, मंथरा और सूंर्पणखा है। तुलसी के अनुसार ताड़का बुरी नहीं है, उसे विश्वामित्र ने छेड़ा है -

चले जात मुनि दीन्हि देखाई। सुनि ताड़का क्रोध करि धाई।। (1/209)
'दीन' कहकर तुलसी ने उसके प्रति सहानुभूति व्यक्त की है -
''दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा।। ''(1/209)

कैकयी का चरित्र उत्तम है। सौतेले बेटों के प्रति भी उसके मन में स्नेह है। राम के अभिषेक के समाचार से वह हर्षित होती है, किन्तु मंथरा बड़े ही मनोवैज्ञानिक और तर्क सम्मत ढंग से उसे समझाती है। उसका हृदय संकुचित हो जाता है। जब भरत ने अप्रत्याशित रूप से उसकी भर्त्सना की, तब उसे

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष 'हिन्दी' शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

अपनी भूल का अनुभव हुआ। वह मौन हो गई और अंत तक तुलसी की कैकयी ने मुँह नहीं खोला, लेकिन कैकयी की ग्लानि और लज्जा को व्यक्त करते हुए मानसकार ने कहा है –

''गरइ गलानि कुटिल कैकेई। काहि कहइ केहि दूषनु देई।'' (2/273)

''प्रभु जानि कैकई लजानी। प्रथम तासु गृह गए भवानी।'' (7/10)

कैकयी की यह ग्लानि और लज्जा उसके हृदय की निर्मलता का द्योतक है, क्योंकि पातकियों के हृदय में इन वृत्तियों का उदय नहीं होता है। इस प्रकार कैकयी के चरित्रांकन में कवि की वृत्ति उदार रही है।

मंथरा बेचारी बिलकुल निर्दोष है। उसकी मति को देवी सरस्वती ने फेर दिया था –

''अजस पेटारी ताहि करि गई गिरा मति के फेरि। (2/12)

बुद्धि विपर्यय का यह कार्य एक नारी द्वारा कराया गया प्रतीत होता है, किन्तु संकोचशील सरस्वती को पुरूष देवताओं ने ऐसा करने के लिये मजबूर किया है। इस स्थान पर तुलसी ने देवताओं को बहुत भला–बुरा कहा है :–

ऊँच निवासु नीचि करतूती। देखी न सकहिं पराइ विभूती।। (5/12)

राम विरोधी कार्य करने पर तुलसी जब देवताओं को भला – बुरा कह सकते हैं तो अन्य मानवी पात्रों की बात ही क्या?

देवताओं की माया के वश में होने के कारण ही मंथरा की बातों का असर दृढ चरित्र कैकयी पर हुआ और वह कमजोर पड़ गई –

''भावी बस प्रतीती उर आई।'' (2/19)

''तन पसेउ कदली जिमि काँपी।'' (2/20)

उपर्युक्त पंक्तियों में मानसकार ने कैकयी के चित्रण में उदारता प्रदर्शित की है।

सूर्पणखा ही मात्र ऐसी नारी है, जिसका चित्रांकन कुत्सित रूप में हुआ है। उसका आचरण सामाजिक मर्यादा व नारी धर्म के विरूद्ध होने के कारण तुलसी की दृष्टि में अक्षम्य है। इस प्रकार सूर्पणखा को छोड़कर सभी निंदनीय या निकृष्ट समझी जाने वाली नारी पात्र के प्रति तुलसी ने उदारता दिखाई है।

दूसरी ओर तुलसी ने सात्विकशील नारी पात्रों के चरित्रांकन में तो अत्यंत ही उदारता से काम लिया है।

कौशल्या में तो मानवी का आदर्श है ही। वानरी तारा को भी तुलसी ने आदर दिया है। राक्षसी मंदोदरी का स्थान और भी उच्च है। पति के परमहित का संधान करने के लिये बार–बार पति को समझाने व उपदेश देने का कार्य मंदोदरी द्वारा करवाया गया है :–

''कंत समुझि मन तजहु कुमतिहि।'' (6/37)

''अहह कंत कृत राम विरोधा। काल बिबस मन उपज न बोधा।।'' (6/36)

यह कार्य एक उच्च आदर्श चरित्र सम्पन्न नारी ही कर सकती है, जो पति के क्रोध की परवाह न करके उसके हित के लिये उसका सत्य मार्ग प्रशस्त करे।

शबरी के माध्यम से सरलमना भक्त नारी का स्वरूप प्रस्तुत किया है। त्रिजटा को सीता ने 'मातु' पद दिया है, क्योंकि त्रिजटा का हृदय उदार है।

सीता और पार्वती तो आदर्श नारी पात्र हैं ही जिनकी वंदना कवि ने की है। इन संदर्भ में एक तथ्य दृष्टव्य है कि प्रत्येक वंदना में नारी का नाम उसके पति के पूर्व आया है, जैसे :–

''भवानी शंकरौ वंदे श्रद्धा विश्वास रूपिणौ।'' (1/श्लोक 2)

''सीता राम गुण ग्राम पुण्यारण्य विहारिणौ। (1/श्लोक 4)

तुलसी ने सीता और पार्वती के अतिरिक्त कौशल्या, सुमित्रा आदि नारी पात्रों की भी सादर वंदना की है, जो तुलसी के आदर्श नारी के प्रति आदर भाव को प्रदर्शित करता है।

इस प्रकार मानस चरित्रवती नारी पात्रों की विराट प्रदर्शनी है।

(3) नारी – धर्म

तुलसी के मानस के नारी विमर्श पर विचार करते समय यह जानना आवश्यक है कि उनके मत से नारी धर्म क्या है, नारी के लिये उनका उपदेश क्या है? लेकिन इसके पूर्व तुलसी की तत्कालीन सामाजिक स्थिति पर दृष्टिपात करने पर पता चलता है कि उस समय परिवार बिखर रहे थे, गृहस्थी विश्रृंखलित हो रही थी, अमर्यादित स्थितियाँ थी –

''कुलवंति निकारहि नारि सती। गृह अनहि चेरि निबेरि गती।।'' (7/101)

और अमर्यादा की परकाष्ठा कि

''गुन मंदिर सुंदर पति त्यागी। भजहि नारि पर पुरूष अभागी।।'' (7/99)

चूँकि नारी संपूर्ण समाज व्यवस्था के आधारभूत गार्हस्थ का केन्द्र बिन्दु है। उसके आदर्श से ही समाज में आदर्श रूप बना रह सकता है, इसलिये तुलसी ने नारी धर्म.व्यंजना में पति सेवा और पतिव्रत धर्म को नारी का एक मात्र धर्म बताया है –

''एकई धर्म एक व्रत नेमा। काय बचन मन पति पद प्रेमा।।'' (3/5)

नारी के लिये जहाँ पतिव्रत धर्म का आदर्श है, वहीं पुरूष के लिये एक पत्नीव्रत के आदर्श की भी स्थापना है :–

''एक नारी व्रत रत सब झारी।
ते मन बच क्रम पति हितकारी।।'' (7/22)

चूँकि मानस का मूल उद्देश्य आदर्श की प्रतिष्ठा है, इसलिये मानस में सीता वनवास की घटना का वर्णन तो क्या इशारा भी नहीं है। डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त का भी मत है ''सीता वनवास की घटना, जो राम के दांपत्य जीवन पर कलंक के समान थी, का वर्णन तुलसी ने नहीं किया है।''[7]

(4) नारी के प्रति उदार भाव

एकांगी दृष्टि के कारण 'मानस' पर नारी निंदा का कटु आक्षेप लगाकर असंतुष्ट आलोचकों की दृष्टि 'मानस' में अभिव्यक्त नारी के प्रति उदार भाव पर नहीं पड़ी या कदाचित् भावोत्तेजना के कारण वे उसे चिन्हित नहीं कर पाए। जबकि 'मानस' में कई ऐसे स्थल मिलते हैं, जहाँ तुलसी का नारी के प्रति उदार एवं सम्मानजनक दृष्टिकोण भी है और उसे पुरूष के समकक्ष भी माना गया है, ये स्थल हैं :–

(1) नारी के सती रूप, पति प्रेमरता, पतिव्रता के पावन स्वरूप उसके दृढ़ नियम के प्रति तुलसी के हृदय में ममत्व है, तभी वे शम्भु की अटलता की तुलना सती के निर्विकार चित्त से करते हैं :–

''भूप सहस दस एक हि बारा। लगें उठावन टरें न टारा।।
डिगै न संभु सरासनु कैसें। कामी बचन सती मन जैसें।। (1/251)

(2) नारी के प्रति सम्मान भाव के कारण ही नारी को कुदृष्टि से देखने वाले के वध को उचित व पापमुक्त बताते हुए तुलसी कहते हैं :–

''अनुज वधू भगिनि सुत नारी। सुन सठ कन्या सम ये चारी।।
इन्हहिं कुदृष्टि बिलोकै जोई। ताहि वधे कछु पाप न होई।।'' (4/9)

इस प्रकार तुलसी के अंतर्मन में नारी मर्यादा व उसकी पवित्रता के प्रति श्रद्धा व आदर भाव सतत् ही बना रहा।

(3) इतना ही नहीं तुलसी ने पत्नी का कहना न मानने वाले बालि को फटकार कर यह भी सिद्ध किया है कि यदि पत्नी की सलाह श्रेष्ठ है तो पति को उसका पालन करना ही चाहिये –

''मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना। नारिं सिखावनु करसि न काना।'' (4/9)

(4) राम के वनवासगमन के समय कौशल्या एवं राम द्वारा सीता से अयोध्या में ही रूकने के लिये आग्रह किया जाता है, परन्तु पति के बिना

अपना जीवन अपूर्ण मानने वाली सीता ने अपना पक्ष निर्भीक रूप से सास के समक्ष रखकर वन जाने की आज्ञा प्राप्त की थी :-

''लागि सासु पग कह कर जोरी। छमबि देबि बड़ि अविनय मोरी।।'' (2/64)

''मैं पुनि समुझि दीखि मन माहीं। पिय वियोग सम दुखु जग नाहीं।।'' (2/64)

इन शब्दों में सीता का स्त्रीत्व मुखर हुआ है और उसकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता का सम्मान मानसकार ने किया है।

(5) इसके अतिरिक्त रावण ने जिस नारी को अवगुणों की खान कहा है, वही नारी तुलसी ने राम राज्य में गुणों का विस्तार करती चतुर व गुणी दर्शायी है :-

''सब निर्दंभ धर्मरत पुनी। नर अरू नारी चतुर सब गुनी।।'' (7/21)

(6) इसी प्रकार भक्ति के क्षेत्र में भी तुलसी ने नारी को राम भक्ति में मगन दिखाया है :-

''नर अरू नारि राम गुन गानहि। करहिं दिवस निसि जात न जानहि।।'' (7/26)

(7) यहाँ तक कि भक्ति के क्षेत्र में तुलसी नारी को नर के समान मोक्ष की अधिकारी मानते हैं :-

''राम भगति रत नर अरू नारी। सकल परम गति के अधिकारी।।'' (7/21)

निष्कर्ष

समग्रत: तुलसी के 'मानस' में नारी का आदर्श रूप प्रतिष्ठित हुआ है। तुलसी ने नारी विषयक जिन विचारों को प्रस्तुत किया वह उस समय की परिस्थितियों से आबद्ध विचारणा थी। डॉ. भागीरथ मिश्र का भी मत है कि वस्तुत: तुलसी मर्यादावादी थे, रूढ़िवादी नहीं । लोक परम्परा व वेद के मंगलकारी नियमों का पालन करने में और प्रतिष्ठित गुरूजनों का आदर्श मानने में वे मर्यादावादी थे। इस मर्यादावाद की अवहेलना आज भी हम नहीं कर सकते हैं। किसी भी समाज के लिये, उसके विकास एवं स्थिति के लिये आवश्यक नियमों का निर्वाह और गुरूजन तथा अधिकारीजनों की आज्ञा का पालन आवश्यक है। हम आधुनिकता के आवेश में आकर जो प्राचीन है, उस सभी के प्रति यदि द्वेष भाव रखने लगें तो यह रूढ़िवादियों की हठधर्मी से किसी तरह कम नहीं है। हमें सदैव विवेक की दृष्टि रखनी चाहिये।[8]

तुलसी जैसे संतों के दिखाए मार्ग पर चलकर ही आज आधुनिक युग की इस पराकाष्ठा में भी हमारा भारतीय परिवार बहुत अधिक विश्रृंखलित नहीं हुआ है। मर्यादा की महत्ता के कारण दाम्पत्य-जीवन छिन्न.भिन्न नहीं होते हैं। यही कारण है कि पश्चिम के अति आधुनिक लोग भारतीय दांपत्य जीवन की सफलता की ओर ताक रहे हैं, जिसका मूलमंत्र मर्यादावाद है।

यथार्थ या आधुनिकता के व्यामोह में फँसे जो सुधिजन तुलसी को घोर नारी निदंक घोषित कर देते हैं, वे उनके मर्म में छिपे रहस्यों को अनावृत नहीं करते हैं। तुलसी की राम के प्रति अनन्य निष्ठा, उनका वैरागीपन, उनकी समकालीन परिस्थिति उनकी सुधारवादी दृष्टि और मर्यादावाद को दृष्टिपथ में रखकर उनके नारी विमर्श पर विचार आवश्यक है, जहाँ हमें नारी-निंदा के साथ निंदा का कारण भी ज्ञात होगा। आदर्श नारी का स्वरूप भी हम देख सकेंगे और नारी के प्रति तुलसी हृदय की उदारता व सम्मानजनक भाव के साथ ही नारी के भक्ति व मोक्ष के अधिकार को भी।

उपजीव्य ग्रंथ-

रामचरित मानस - तुलसी - गीता प्रेस, गोरखपुर

संदर्भ - ग्रंथ

(1) साहित्य सम्राट तुलसी - पं. गंगाधर मिश्र पृ. 290
(2) तुलसी नवमूल्यांकन - डॉ. रामरतन भटनागर पृ. 21
(3) तुलसी काव्य - मीमांसा - डॉ. उदयभानुसिंह पृ. 342
(4) तुलसी - सं. उदयभानुसिंह पृ. 163, 174
(5) हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास - डॉ. राजकुमार वर्मा पृ. 494
(6) तुलसी - सं. डॉ. राममूति त्रिपाठी पृ. 174
(7) साहित्यिक निबंध - गणपतिचन्द्र गुप्त - पृ. 665
(8) तुलसी रसायन - भागीरथ मिश्र पृ. 122

****

जयप्रकाश नारायण और भारतीय समाजवाद

डॉ. अनिल कुमार जैन *

लोकनायक जयप्रकाश नारायण का नये प्रकार का भारतीय समाजवाद, वस्तुत: गांधी और विनोबा का जनता की सेवा का ढ़ंग तथा केवल भारतीय समाज का सामाजिक और आर्थिक दर्शन ही नहीं अपितु यह भारतीय नैतिक तथा आध्यात्मिक जीवन मूल्यों के लिए भी एक अपूर्व निष्कपट प्रयत्न हैं।

जे.पी. का आधुनिक भारत में एक अग्रणी समाजवादी नेता के रूप में, राजनीतिक चिन्तक के रूप में अपना विशिष्ट स्थान है। युवा अवस्था से उन्होंने उत्कृष्ट राष्ट्रवाद से अपने को आप्लावित कर लिया था तथा असहयोग आंदोलन में सम्मिलित हो गये थे। क्रांति के प्रति उनकी प्रबल प्रवृत्ति थी। अमेरिका में विद्या अध्ययन के लिये जब वे सन् 1922 से 1929 तक रहे, इस अवधि में वे पूर्वी यूरोप के बुद्धिजीवियों के सम्पर्क में आये और मार्क्सवादी बन गये। जे.पी. तब मार्क्सवादी क्रांति को भारतीय स्वतंत्रता के लिए प्रभावी उपाय मानते थे।[1]

जयप्रकाश प्रारंभ में मार्क्सवादी अवश्य रहे परन्तु वह रूसी साम्यवाद के समर्थक कभी नहीं बने। रूसी बाल्टोविक अत्याचारों के कारण ,उन्हें रूसी साम्यवाद से विरक्ति हुई। साथ ही सभी औपनिवेशिक देशों के राष्ट्रीय आन्दोलनों से अपने को अलग कर लेने की, साम्यवादी नीति तथा गांधी और राष्ट्रीय आंदोलन को बुर्जुआवादी आन्दोलन कह कर उसकी भर्त्सना करने के कारण वे साम्यवादी विचारधारा से विरक्त हो गये। साम्यवाद व्यक्तिगत स्वतंत्रता भी प्रदान नहीं करता है, जिसके वे प्रबल समर्थक रहे है। इस स्थिति में उनके प्रजातांत्रिक समाजवाद का आरंभ हुआ।[2]

स्वतंत्रता के प्रति उत्कृष्ट आग्रह के कारण ,जे.पी. महात्मा गांधी के नेतृत्व में स्वतंत्रता सेनानियों की पंक्ति में खड़े हो गये। वहां भी वे कांग्रेसी विचारधारा को अपना सर्वांश नहीं दे सके। मार्क्सवाद तथा क्रांति के प्रति उनका आकर्षण ही उन्हें कांग्रेस और गांधी के प्रति पूरी तरह समर्पित होने में अवरोध बना रहा। अत: जे.पी. ने सन् 1934 में कांग्रेस में ही ' कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी 'का गठन किया। राष्ट्रीय कांग्रेस की नीतियों में सामाजिक सरोकार तथा आर्थिक चिन्तन को समाविष्ट करने में, उनके इस नये दल ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। नि:संदेह उन्होंने सोशलिस्ट पार्टी तथा उनके कार्यक्रम की प्रमुख विशेषताओं को ज्ञापित करने में उल्लेखनीय प्रतिभा का परिचय दिया है। साथ ही स्वयं को एक राष्ट्रीय नेता तथा भारतीय सोशलिस्ट पार्टी के संस्थापक के रूप में स्थापित कर लिया।[3]

मातृभूमि की मुक्ति के लिये एक आंदोलनकर्ता के रूप में, सन् 1942 के क्रांति आंदोलन में अपनी सक्रिय प्रशस्त भूमिका के कारण उन्हें राष्ट्र के एक अग्रणी नायक की ख्याति मिली। हजारीबाग सेन्ट्रल जेल से भाग कर भूमिगत रहकर, उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन को संगठित किया। एक उत्साही कर्मठ आंदोलनकर्ता के रूप में स्थापित होने से, गांधीजी जे.पी. से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने इनका नाम कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में प्रस्तावित किया, परन्तु कार्यकारिणी ने इसे स्वीकार नहीं किया।

अत: वे इस सम्मान से वंचित रह गये। मार्च 1948 में कांग्रेस की घोषणा से, जिसके अनुसार अन्य दल का सदस्य कांग्रेस में नहीं रह सकता। इससे कांग्रेस से इनके संबंध विच्छेद का क्रम आरंभ हुआ।

जे.पी. ने राममनोहर लोहिया के साथ सोशलिस्ट पार्टी का पुनर्गठन किया तथा 1952 के निर्वाचन में भाग लिया। चुनावों में इसका प्रदर्शन अच्छा नहीं रहा। अत: जून 1952 में किसान मजदूर प्रजा पार्टी और सोशलिस्ट पार्टी ने मिलकर नये दल प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का गठन किया।

सन् 1953 में पंडित नेहरू ने कांग्रेस तथा जे.पी. की प्रजा सोशलिस्ट पार्टी को निकट लाने का प्रयास किया था। जिसका समाजवादी नेताओं द्धारा विरोध होने से तथा पार्टी में भी पारस्परिक शत्रुता को देखकर ,जे.पी. ने दलगत राजनीति से बिदा लेकर, विनोबा के सर्वोदय आंदोलन के अंतर्गत ''जीवनदानी'' के रूप में अपने लिये एक नई भूमिका चुनी।[4]

वास्तव में सन् 1953 में सम्पन्न 'बोध्द' गया सम्मेलन का उन पर गहरा प्रभाव पड़ा था। उन्हें विश्वास हो गया कि यदि समाजवाद का रूपान्तरण सर्वोदय में नहीं किया गया तो स्वतंत्रता, समानता और भातृत्व के आलोक स्तम्भ हमारे लिये दुष्कर हो जावेगें।

विनोबा भावे के भूदान आंदोलन की चमत्कारिक सफलता ने उन्हें पुन: गांधीवादी दर्शन की सार्थकता के प्रति आश्वस्त कर दिया। उनके अनुसार ''पहले की भॉति आज भी मैं गांधीजी के साथ इस उक्ति में विश्वास रखता हूँ कि सरकार वहीं सबसे अच्छी है, जो कम शासन करती है,'' इस प्रकार जे.पी. जिन्होंने यात्रा मार्क्सवाद से आरंभ की थी, सर्वोदय के बिन्दु पर उसे विराम दिया। वे सर्वोदय को जनता का समाजवाद मानते थे।[5]

मार्क्सवाद, प्रजातांत्रिक समाजवाद, कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी, भारतीय सोशलिस्ट पार्टी तथा प्रजा सोशलिस्ट पार्टी आदि विविध राजनीतिक दलों में सक्रिय भूमिका निर्वाह करते हुए, जे.पी.सर्वोदय आंदोलन में, राजनीति छोड़कर जीवनदानी हो गये। अब वे दलहीन प्रजातंत्र और विकेन्द्रीकरण के पक्षधर हो गये। उन्होंने ग्रामीण सभ्यता प्रधान सादे समाज की कल्पना पर बल दिया तथा अति विकसित तकनीक प्रधान, आर्थिक केन्द्रीकरण वाले भौतिक समाज की निंदा की। भारतीय समाजवाद के प्रवक्ता के रूप में उन्होंने बलपूर्वक कहा कि 'केवल अहिंसक उपायों से ही समाजवादी युग लाया जा सकता है। दूसरे देशों में अनेक प्रकार के उपायों से सम्पत्ति पर निजी स्वामित्व समाप्त करने के प्रयास हुए, उनसे प्राय: समाज में अप्रसन्नता कटुता, घृणा और कष्ट ही देखने को मिले है।''[6]

जे.पी. भ्रष्टाचार के प्रबल विरोधी थे, अत: भ्रष्ट प्रशासन को उन्होंने अपने निन्दात्मक उपहास का केन्द्र बनाया। पुन: राजनीति में प्रवेश करते हुए उन्होंने समानता, प्रतिष्ठा और भ्रष्टाचार मुक्त, सत्ता और समाज वाले युग की स्थापना के लिये जब, ''समग्र क्रांति '' की अवधारणा प्रचारित की तब 20 वर्ष तक सर्वोदय के बंजर क्षैत्र के रहने में रहने के पश्चात मानो जे.पी. का सन् 1974 में सक्रिय आन्दोलनात्मक राजनीति के क्षेत्र में पुन: प्रवेश हुआ। फलस्वरूप उन्हें बन्दी बना लिया गया तथा बाद में 1975 में पेरोल पर रिहा कर दिया गया।[7]

2 जून 1975 में भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी का चुनाव, भ्रष्ट आचरण के लिये दोषी ठहराये जाने के कारण, रद्द किए जाने पर, देश में आंतरिक आपातकाल लगाया गया था तब देश के गैर कम्युनिस्ट, विरोधी

* सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

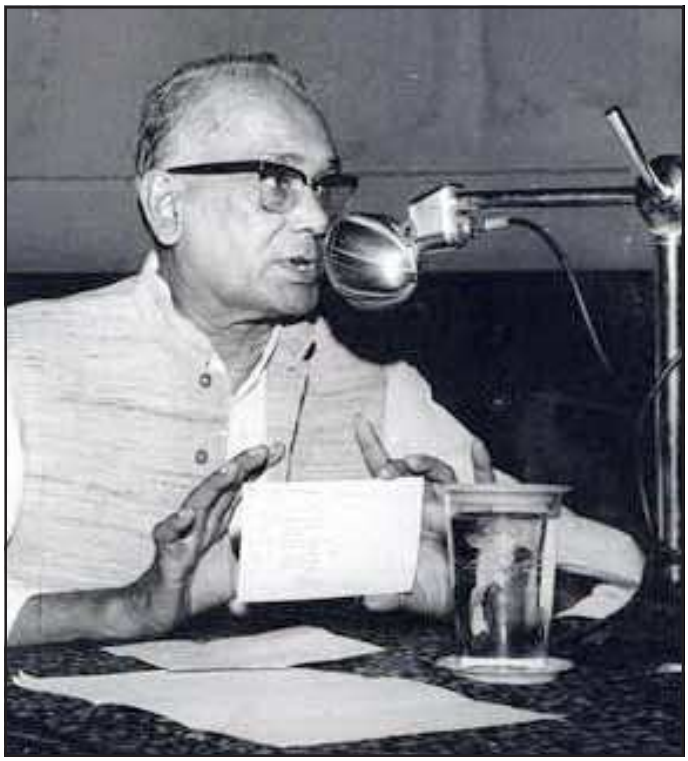

दल के नेताओं ने उन्हें अपने आंदोलन का नेता स्वीकार कर लिया। 18 जनवरी 1977 को जब लोकसभा के लिए चुनावों की घोषणा हुई तब जयप्रकाशजी एक बार फिर आगे आए और ''जनता पार्टी'' के गठन की प्रक्रिया में उन्होंने निर्णायक भूमिका का निर्वाह किया।

इस प्रसंग में उन्हें भारतीय जनता ने ''लोक नायक'' की उपाधि से अंलकृत किया। जे.पी. ने जहाँ दल विहीन लोकतंत्र की अवधारणा का विस्तृत विवेचन किया है, वहीं उन्हें आपातकाल के पश्चात् देश में गठबंधन सरकार की स्थापना के प्रमुख रचनाकार का श्रेय भी जाता है ,तथा वे भारतीय राजनीति में एक ऐसा तूफान लाने में सफल हुए जो अभूतपूर्व रहा है।

देश में कांग्रेस के तीस वर्ष के एक छत्र शासन को समाप्त कर जनता सरकार लाने में लोकनायक जयप्रकाश की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण थी। वर्षों से सक्रिय राजनीति से वे दूर थे, तदापि राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति उनकी जागरूकता तथा सकारात्मक रूप की तटस्थ निष्पक्ष दृष्टि ने, उन्हें यथार्थ रूप में लोक नायक बना दिया।[8]

सैद्धान्तिक दृष्टि से जयप्रकाश का चिन्तन मानवतावाद पर ही आधारित रहा है। यही कारण रहा है कि उनके आदर्शों से प्रेरित होकर 400 डकैतों ने आत्म समर्पण कर ,एक अनूठे इतिहास की रचना की। उनका राजनीति का त्याग और जीवनदानी बनने का निर्णय भी अपने आप में देश में अपूर्व है। उन्होंने कभी सत्ता के गलियारे में प्रवेश की कामना नहीं की। वास्तव में उनका नये प्रकार का समाजवाद भी जो कि गांधी तथा विनोबा की जनता की सेवा की एक परिकल्पना हैं वस्तुत: भारतीय समाज का सामाजिक और आर्थिक दर्शन ही नहीं है अपितु यह भारतीयों की नैतिक तथाा आध्यात्मिक प्रगति के लिये एक निष्कपट प्रयत्न है।[9]

यह सत्य है उनके कुछ विचारों के कारण, आलोचकों ने उन्हें स्वप्नवादी चिन्तक, आदर्श स्वप्न दृष्टा तथा एक उदार अन्तर्राष्ट्रीय विचारक कहा है। इसका मुख्य कारण यह रहा है कि उनका दलविहीन प्रजातंत्र तथा राज्यविहीन समाज का लक्ष्य भी एक कोरी कल्पना की हे। जे.पी. दल प्रणाली से कुछ अधिक ही दु:खी रहे है। इस संदर्भ में जबकि पं.जवाहरलाल नेहरू के अनुसार दलीय प्रणाली के बिना लोकतंत्र उसी तरह है, जिस तरह किश्ती पतवार के बिना अथवा जहाज चालक के बिना हो। अन्तोगत्वा जे.पी. ने भी विभिन्न दलों के सहयोग से ही जनता दल बनाया था।

हमें यह स्वीकार करना होगा जे.पी. के सर्वोदय चिन्तन को समाजवाद नहीं कहा जा सकता है। यह एक कल्पना है। सर्वोदय का भूदान भी असफल रहा है। इसी तरह उनकी पूर्ण क्रांति की संकल्पना पर भी आरोप है कि अहिंसा का प्रवक्ता, कैसे एक असाधारण विद्रोही बन गया।

निष्कर्ष रूप में ,महात्मा गांधी तो जयप्रकाश बाबू को भारतीय समाजवाद का सबसे बड़ा अधिकारिक विद्वान मानते थे। य़द्यपि जे.पी. ने आगे चलकर अपना संपूर्ण जीवन 'सर्वोदय' की सेवा में अर्पित कर दिया, तदापि उनके समाजवादी विचारों ने भारतीय राजनीति को गहरे से प्रभावित किया है। आज भी देश में उत्तरप्रदेश तथा बिहार में समाजवादी दलों की सरकार है। इसका कारण यह है कि भारतीय समाजवाद मूल रूप के क्रांतिकारी समाजवाद के स्थान पर लोकतांत्रिक स्वरूप तथा गांधीवादी नैतिकता से प्रभावित है। जयप्रकाश ने यह प्रतिपादित किया था कि इसके लिये लोकतांत्रिक राज्य का होना अनिवार्य है। समाजवाद की यथार्थ सफलता इसी पर आधारित है कि समाजवाद को निम्नतम स्तर पर लोक शासन में उतार दिया जावें। केवल राष्ट्रीय स्तर पर समाजवाद की चर्चा निरर्थक है। इसके लिये सत्ता, समाज और आर्थिक क्षेत्र में व्यापक रूप में विकेन्द्रिकरण ही एकमात्र उपाय है।[10]

लोकनायक जयप्रकाश नारायण का सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान यह रहा है कि उन्होंने समाजवादी आंदोलन को कांग्रेस के झण्डे के नीचे चल रहे राष्ट्रीय स्वंतत्रता संग्राम के प्रारूप में जोड़कर ऐसी गहरी नींव दी कि वह सहज ही फल-फूल गया। वस्तुत: आचार्य नरेन्द्र देव तथा जे.पी. ने ही समाजवादी विचारधारा को, जनता की, साम्राज्यवादी राजनीतिक आधिपत्य से मुक्ति आंदोलन तथा इसके साथ ही देशी सामन्तवाद की दासता से मुक्ति के संघर्ष के साथ जोड़ कर ,भारत में राजनीति के समान्तर आर्थिक, सामाजिक अहिंसक क्रांति का श्री गणेश किया।

संदर्भ ग्रंथ

1. शर्मा डॉ. नीता बोरा : जयप्रकाश नारायण के चिंतन का वैचारिक योगदान : ए जरनल ऑफ एशिया फॉर डेमोक्रेसी एण्ड डेवलपमेन्ट मुरैना : **XI (1)** 2011 पृष्ठ 123-125
2. त्यागी पी.के. : भारतीय राजनीतिक विचारक : विश्व भारती पब्लिकेशन्स नईदिल्ली (2006) पृष्ठ 07
3. अवस्थी डॉ.अमरेश्वर, अवस्थी डॉ.रामकुमार : प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक चिन्तक : रिसर्च पब्लिकेशन्स जयपुर (2009) पृष्ठ 273
4. जयप्रकाश नारायण : समाजवाद से सर्वोदय : प्रतिभा प्रकाशन नईदिल्ली (1959) पृष्ठ 102
5. वर्मा वी.पी. : पोलिटिकल फिलासाफी ऑफ महात्मा गांधी एण्ड सर्वोदय : लक्ष्मीनारायण प्रकाशन आगरा, पृष्ठ 74
6. अवस्थी डॉ. अमरेश्वर : प्रतिनिधि भारतीय राजनीतिक चिन्तक रिसर्च पब्लिकेशन्स जयपुर (2009) पृष्ठ 274
7. हिन्दुस्तान टाईम्स : 4 फरवरी 1974
8. हिन्दुस्तान टाईम्स : 13 फरवरी 1975
9. लाल डॉ.लक्ष्मीनारायण : जयप्रकाश (1984) पृष्ठ 107
10. साप्ताहिक दिनमान : 21 अप्रेल 1974, पृष्ठ 18

****

दलित चेतना के अग्रदूत - डॉ. अम्बेडकर

डॉ. पंकज माहेश्वरी *

''यह मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा हैं कि मैं उन शोषित लोगों की सेवा में रहकर अपना जीवन बलिदान करुँ, जिनमें पैदा हुआ, जिन लोगों के बीच रहकर मैं बड़ा हुआ तथा जिनमें, मैं रहा हूँ। इसमें, मैं अपनी कर्त्तव्य परायणता से एक इंच भी नहीं हटूंगा और न मैं उस आलोचना की चिन्ता करुंगा जो मेरे प्रतिद्धन्दी लोग करते हैं।'' **- डॉ. अम्बेडकर**

दलित चेतना के अग्रदूत बाबा साहेब अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 को इन्दौर के पास महू छावनी में महार जाति में हुआ था। महार जाति अछूत मानी जाती थी। स्वामी विवेकानन्द की यह पुकार थी कि देश की दलित प्रजा का कोई हाथ थामे, उन्होंने अपने भाषणों में बार-बार यह आव्हान किया था। शायद उनकी पुकार का यह फल हो कि ईश्वर ने दलित चेतना के अग्रदूत के रुप में डॉ. अम्बेडकर को इस धरती पर भेजा। भारत का दलित समाज आदिकाल से अत्याचार, अवहेलना, अस्पृश्यता, अशिक्षा और आर्थिक शोषण का शिकार रहा हैं। भारत की विभिन्न दलित जातियों को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने में और दलित आंदोलन को मजबूत बनाकर उन्हें समाज की मुख्य धारा में लाने में डॉ. अम्बेडकर ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

डॉ. अम्बेडकर हमेशा दलितों के उत्थान के बारे में सोचा करते थे। वे अछूत मजदूर व आम आदमी के बारे में सोचते थे कि कैसे इनको न्याय मिले तथा इनका जीवन किस प्रकार से सुखमय हो सकता हैं।

डॉ. अम्बेडकर तीन महापुरुषों को अपना आदर्श मानते थे - गौतम बुद्ध, कबीर और महात्मा ज्योतिबा फुले। गौतम बुद्ध के विचारों से उन्होनें छुआछूत विरोध की शिक्षा प्राप्त की एवं आगे अपना धर्म परिवर्तन करके बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया। कबीर के प्रभाव ने उन्हें धार्मिक स्वभाव के निडर एवं निष्पक्ष व्यक्ति बनाया, उनका पूरा परिवार कबीर पंथी था। महात्मा ज्योतिबा फुले के प्रभाव से वह ब्राह्मणवाद के विरुद्ध खड़े हुये तथा सामाजिक न्याय हेतु संघर्ष किया।

अम्बेडकर जी के बाल्यकाल एवं युवावस्था में बहुत सी ऐसी घटनाएँ घटी जिनमें उन्हे अपमान का घूंट पीना पड़ा और उनकी आत्मा को झकझोर दिया। इससे उन्होनें दलितों के उत्थान के लिये संघर्ष करने का दृढ़ संकल्प लिया। उनका मानना था कि दलित समाज सवर्णों की दया पर आश्रित न हो, इसके लिये दलितों को स्वयं अपने सामाजिक न्याय के लिये लड़ना होगा। उनमें समानता, स्वतन्त्रता और स्वाभिमान से जीवन व्यतीत करने की प्रबल इच्छा जाग्रत करनी होगी। अम्बेडकर का सिद्धान्त था -''स्वयं सेवा ही उत्तम सेवा हैं।'' किसी के सामने गिड़गिड़ाना उनके लिये घृणा का विषय था, वे दलितों के स्वाभिमान को जगाना चाहते थे तथा सवर्णों के विरुद्ध लड़ाई का बिगुल फूँकना चाहते थे। वे कहते थे कि बिना मस्तिष्क, हृदय और हाथ से काम किये दलितों का उद्धार नही हो सकता हैं।

दलितों के उद्धार के लिये एक संस्था 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' की स्थापना की गयी। डॉ. अम्बेडकर इसके प्रबंध मंत्री बने। इस सभा ने दलितों के उत्थान हेतु कई कार्य शुरु किये जैसे दलित के लिए स्कूल खोलना, दलित लड़कियों के लिये भी अलग स्कूल खोलना, दलितों की बस्तियों में दवा और पानी के लिये उचित प्रबंध करना और उनके मानवीय अधिकारों के लिये वैधानिक ढंग से संघर्ष करना आदि। अम्बेडकर दलितों को मानवाधिकार दिलाने हेतु निरन्तर संघर्ष कर रहे थे वे दलितों के प्रतिष्ठित नेता के रुप में चर्चित हो चुके थे। अम्बेडकर ने दलित चेतना संबंधी कार्य विचारों को व्यक्त करने हेतु 1927 में 'बहिष्कृत भारत' नामक एक पाक्षिक पत्र निकालना प्रारम्भ किया इससे वे सरकार और आम जनता के सामने दलितों की समस्याएँ एवं मानवाधिकार संबंधी विचार व सुझाव स्पष्ट रुप से प्रस्तुत करने लगे। अम्बेडकर ने ''बहिष्कृत भारत'' के माध्यम से जातिवाद का खण्डन किया तथा उन्होंने कहा कि मनुष्य जब पैदा होता है तो वह सिर्फ मनुष्य है, ईश्वर की संतान हैं न कि ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य या शुद्र। मनुष्य ने अपने स्वार्थ के लिये जातियाँ बनायी हैं न कि वे ईश्वर प्रदत्त हैं।

सामाजिक न्याय के आदर्श को सर्वोच्च मानते हुये डॉ. अम्बेडकर के अनुसार पिछले डेढ़ सौ वर्षो से ब्रिटिश राज में हमारी हालत पहले जैसी थी वैसी ही अब है ऐसी सरकार से हमारा क्या भला होगा। उन्होंने मांग रखते हुये कहा कि -''आज दलित समाज मौजूदा राज्य के स्थान पर जनता के लिए जनता का राज्य चाहते हैं। वे मजदूरों और किसानों का शोषण करने वाले पूंजीपति और जमींदारों की रक्षक सरकार नही चाहते हैं।'' अम्बेडकर के प्रयासों का ही परिणाम हुआ कि ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतीय कानून में कई महत्वपूर्ण सुधार हुये जिससे दलितों को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हुये।

1. दलित अपने प्रतिनिधि विधानसभा में भेज सकते हैं।
2. दलित कुंओं और तालाबों से पानी भर सकते हैं।
3. दलित मंदिरों में प्रवेश कर सकते हैं।
4. दलितों के बच्चे किसी भी मान्यता प्राप्त सरकारी स्कूल में शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।
5. दलित सेना में भर्ती हो सकते हैं एवं कोई भी नौकरी पाने के हकदार हो सकते हैं।

दलित समाज के उत्थान हेतु महात्मा गांधी और अम्बेडकर में वैचारिक मतभेद था। गांधीजी दलितों का एक मात्र प्रतिनिधि स्वयं को ही मानते थे तथा सबसे पहले वह देश में स्वराज्य चाहते थे। लेकिन अम्बेडकर का मानना था कि बिना सामाजिक सुधार के राजनैतिक अधिकारों को पाना बेकार ही हैं, वे पहले दलितों की सामाजिक स्थिति में सुधार चाहते थे।

नारी उत्थान, नारी विकास जैसे विषय में डॉ. अम्बेडकर ने देश में सक्रिय कार्य किया। उन्होनें समग्र भारत की सवर्ण-दलित सभी वर्गों की महिलाओं के विकास के लिये कार्य किया। डॉ. अम्बेडकर का विचार था कि ''मैं किसी समाज की प्रगति इस आधार पर मापता हूं कि उस समाज में नारी ने किस सीमा तक प्रगति की हैं।'' दलित उत्थान में अम्बेडकर स्त्रियों को पुरुषों के साथ लेकर चले थे। अम्बेडकर ने केवल दलित नारी ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारतीय नारियों के उत्थान के लिये हिन्दू कोड बिल की रचना की थी। सामाजिक समता के आन्दोलन में उन्होंने नारी मुक्ति को विशेष स्थान दिया था। आज कानून की दृष्टि से सम्पूर्ण नारी समाज को जो सुविधाएँ मिली हैं उसके पीछे अम्बेडकर का गहन मनन एवं चिन्तन था। भारत के प्रथम विधि

* सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र, शासकीय महाविद्यालय, तराना जिला-उज्जैन (म.प्र.)

मंत्री के रुप में हिन्दू कोड बिल को बनाकर अम्बेडकर ने नारी को समता व स्वतन्त्रता के अधिकार दिलाए। इसलिए अम्बेडकर को नारी मुक्ति के मसीहा, दलित नारी चेतना के सजग प्रहरी कहा जा सकता हैं।

दलित जनता आर्थिक रुप से उन्नत होने के लिये किस प्रकार का व्यवसाय अपनाये इस दिशा में अम्बेडकर चिन्तित रहते थे, उन्होनें दो प्रकार के धंधे अपनाने की दलितों को सलाह दी थी एक वंश परम्परागत पेशा और दूसरा खेती या कृषि। अगर दलित कृषि व्यवसाय करेगा तो उसके साथ वह पशुपालन, गाय, भैंस, बकरी आदि का भी पालन करेगा।

अम्बेडकर की कृषि व्यवसाय की सलाह आज दलितों को आर्थिक रुप से उन्नत बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। देश में आज दलित बड़ी संख्या में कृषि कर रहे हैं उनका हरित क्रांति को सफल बनाने में योगदान रहा है। कुछ दलित लोग फूलों की खेती, आम, आंवला, नीम्बू, चीकू, पपीता आदि की खेती से भी जुड़ रहे हैं इससे उनकी आर्थिक स्थिति में बहुत सुधार आया हैं। अम्बेडकर की भावना दलितों को आर्थिक रुप से स्वावलम्बी बनाने की थी।

3 अगस्त 1949 को अम्बेडर को नेहरु मंत्रिमण्डल में भारत का कानून मंत्री बनाया गया। संविधान सभा ने संविधान बनाने के लिए अम्बेडकर को ड्राफ्ट कमेटी का अध्यक्ष नियुक्त किया। उन्होनें बड़े परिश्रम और लगन से भारत के संविधान का निर्माण करके संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेन्द्रप्रसाद को समर्पित किया। डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने अम्बेडकर को 'संविधान के पायलट' की उपमा दी।

डॉ. अम्बेडकर ''सामाजिक न्याय' हेतु दलितों के साथ पिछड़े वर्गो, महिलाओं एवं अल्पसंख्यकों के हितों के लिए संवैधानिक उपबंधों के निर्माण हेतु पूर्ण रुप से समर्पित थे। भारतीय संविधान के माध्यम से दलित वर्गो में चेतना जगाने का संपूर्ण यश डॉ. अम्बेडकर को देना होगा।

समूचे भारत में मानव अधिकारों की मांग करने वाले एकमात्र महापुरुष डॉ. अम्बेडकर ही थे। अंत में यह कहा जा सकता हैं कि सदियों से शोषित, पीड़ित, दलित समाज में चेतना जाग्रत करके उन्हें समाज की मुख्य धारा में लाने का जो कार्य डॉ. अम्बेडकर ने किया इससे उन्हें दलित चेतना का अग्रदूत एवं मसीहा कहा जा सकता हैं।

संदर्भ ग्रन्थ-

1. डॉ. अम्बेडकर - व्यक्तित्व एवं कृतित्व- डॉ. डी. आर. जाटव
2. डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर - विजयुकमार पुजारी
3. दलित साहित्य विचार आणि वैभव- डॉ. अनिल गजभिए
4. डॉ. अम्बेडकर विचार दर्शन- डॉ. रामगोपाल सिंह
5. डॉ. अम्बेडकर का व्यक्तित्व दर्शन - डॉ. धनंजय कौर
6. गांधी अम्बेडकर और दलित- डॉ. महेश्वर दत्त
7. भारत के महान दलित नेता-डॉ. सुधा सिंह
8. दलित चेतना के आधार स्तम्भ- पी. ए. परमार
   गांधी, अम्बेडकर और बाबूजी

****

भूमण्डलीकरण और ट्रिप्स - एक एतिहासिक व राजनैतिक दृष्टि

डॉ. मंगलेश्वरी जोशी *

बारूद के ढेर को एक माचिस की तीली ध्वन्सात्मक रूप प्रदान करती है। अराजकता एवं युद्ध की विभीषिका से बचना ही भूमण्डलीय व्यवस्था की मूल मंशा है। कृमश: स्थानीय क्षैत्रीय तथा राष्ट्र राज्य व्यवस्था का अगला चरण वैश्विक व्यवस्था अर्थात भूमण्डलीय व्यवस्था है। प्रारम्भ में यूरोपीय संघ ने राजनीतिक समस्याओं को हल करने की जिम्मेदारी अपने उपर ली लेकिन अनेकों कमजोरियों के होने के बावजूद भी यूरोपीय संघ सामान्य शान्ति के संरक्षण में सबसे अधिक सफल रहा। प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति में वैश्वीकरण की स्थापना की दिशा में एक सार्थक पहल कर नये युग की शुरूआत की 1919 में राष्ट्रसंघ की स्थापना तत्पश्चात अन्तर्राष्ट्रीय संगठन का प्रभावी निकाय संयुक्त राष्ट्रसंघ अस्तित्व में आया । ऐसे कार्य परक संगठनों का विकास भी होता जा रहा है, जो किसी एक समस्या के आधार पर बने है। जिनका कार्य क्षैत्र सम्पूर्ण विश्व है। (1) बीसवी शताब्दी के अन्तिम दो दशको में दुनिया भूमण्डलीकरण की ओर अग्रसर होने लगी विभिन्न देशो की राजनीतिक सीमाओं के आर पार आर्थिक लेनदेन की प्रक्रियाओं एवं अनेक प्रबन्धन के प्रवाह से वैश्विक व्यवस्था को बल मिला। राज्य, संप्रभुता, राष्ट्रवाद के स्थान पर विश्व अर्थ व्यवस्था में महत्वपूर्ण बदलाव आने लगे। विश्व की अर्थ व्यवस्था में खुलापन आया। आप जुडाव व परस्पर निर्भरता के फैलाव से हम सार्वभौम विश्व व्यवस्था की और अग्रसर होने लगे।

भूमण्डलीकरण से आशय है ''विश्व के सारे संसाधनों, ज्ञान, जानकारी, जनशक्ति और बाजारो को एक स्तर पर लाते हुवे उन्हें निर्बाध रूप से दुनिया के लोगो को उपलब्ध कराने के लिये सभी विकसित अर्थ व्यवस्थाओं को एकीकृत व आत्म निर्भर बनाने से होता है। (2)

विभिन्न देशो के बीच मुक्त व्यापार को प्रौत्साहित करने के उद्धेश्य से हवाना में 1947-48 में एक सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन में 53 देशो में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार संगठन का गठन करने से सम्बन्धित एक चार्टर पर हस्ताक्षर किये किन्तु अमेरिका का समर्थन नही मिलने के कारण विश्व व्यापार संगठन गठित नही किया जा सका। (3)

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति गतिशील है, उसमें तेजी से बदलाव आ रहा है। आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की प्रमुख विशेषता बाजारोन्मुख अर्थ व्यवस्था है। संयुक्त राष्ट्र संघ महा सभा में नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था स्थापित करने की घोषणा का एतिहासिक प्रस्ताव एक मई 1974 को पारित किया गया। (4) विश्व व्यापार संगठन की स्थापना 1 जनवरी 1995 को गेट के उरूग्वे दौर में हुवे समझौते के फलस्वरूप हुई।

प्रशुल्क और व्यापार सम्बन्धी सामान्य करार- (गेट) :- यह बहुपक्षीय व्यापार संधि जो परस्पर सहमति के आधार पर व्यापारिक प्रतिबन्धो को समाप्त करने के उद्धेश्य से थी। 7 वर्षीय उरूग्वे दौर में 4 नये समझोते हुवे जो अब विश्व व्यापार संगठन के मूलभूत समझौते के भाग है। ये समझौते इस प्रकार है।

1. व्यापार संबंधि बौद्धिक संपदा का अधिकार - (ट्रिप्स)
2. ट्रिम्स 3. गैट 4. कृषि

ट्रिप्स - एक प्रकार का अधिकार है। जो किसी देश की सरकार अन्वेषक को एक निश्चित अवधि के लिये प्रदान करती है। यदि अन्वेषक की खोज का प्रयोग किसी अन्य के द्वारा किया जाता है तो उसे रॉयल्टी लेने का अधिकार है। वौद्धिक सम्पदा 7 प्रकार से इस व्यापार सम्बन्धि बौद्धिक सम्पदा के अर्न्तगत आती है।

1. कॉपीराईट व अन्य संबंधित अधिकार
2. ट्रेड मार्क
3. भौगोलिक स्थिति
4. औद्योगिक डिजाईन
5. पेटेन्ट
6. गुप्त सूचनाए
7. ले-आउट डिजाईन

बौद्धिक सम्पदा का अधिकार वह सुविधा है सा वह व्यवस्था है जिसमें एक और तो ज्ञान की अर्थातजानकारियो की अपनी समस्याओं को सम्पूर्णता से एवं गहराई से समझने का अवसर मिलेगा। वही दूसरी ओर नि:सन्देह उन्ही समस्यओ का समाधान भी मिलेगा। इसी आधार पर हर क्षैत्र में विशिष्ट अनुसंधानो के लिये राह भी मिलेगी।

व्यवहारवादी विचारक डेविडईस्टन ने राजनीतिक व्यवस्था के अर्न्तगत शारीरिक व मानसिक (बौद्धिक) कार्यो को इनपुट व आउटपुट के रूप में बांटा है। जिनके अंतर्गत मांग व समर्थन के माध्यम से बौद्धिक संम्पदा के तहत कई भौतिक वस्तुए व सेवाए जैसे मनोरंजन, वेतन, शैक्षणिक अवसर, काम के घन्टे, सार्वजनिक सुरक्षा व्यवस्था, बाजारो पर नियंत्रण व सम्प्रेक्षण एवं सूचना से सम्बन्धित मांगो के द्वारा बौद्धिक सम्पदा के अधिकार के प्रचार प्रसार में समर्थन मिला है। यद्यपि ट्रिप्स को चुनौतिया व समर्थन दोनो प्राप्त है। इसे इनपुट कहा जा सकता है। वैश्विक पर्यावरण में होने वाली प्रतिक्रिया को आउटपुट कहा जा सकता है। लैकिन आउटपुट फिर इनपुट के रूप में हमारे सामने नई चुनौतियां प्रस्तुत करती है। जैसे भूमण्डलीकरण की आड़ में स्वदेशी उद्योग धन्धे, क्षमता कौशल की पूर्णतया उपेक्षा की गई है। जो कि हमारे भारतीय परिवेश के लिये तो स्वालम्बन का आधार थी। निर्यात बढ़ाकर विदेशी मुद्रा कमाने की धुन ने आवश्यक वस्तुओं का अभाव पैदा कर दिया जिससे आम आदमी का जीवन आर्थिक बोझ से कठिनाई में पड गया है। (5) विश्व का कोई भी संकट चाहे इसका स्वरूप आर्थिक सांस्कृतिक या फिर राजनैतिक ही क्यो न हो उसके विश्लेषण का कैन्द्र पूरी राजनैतिक व्यवस्था है।

सूचनाओं की गोपनीयता भी एक समस्या है, ट्रिप्स के अर्न्तगत आने वाला एक प्रकार है - ''गुप्त सूचनाए'' लैकिन अर्न्तराष्ट्रीय प्रक्रिया जटिल है, जिसमें अनेक जटिल ''चर'' विद्यमान है। अन्त में कहा जा सकता है। कि भूमण्डलीकरण और बौद्धिक सम्पदा का अधिकार एक सशक्त आन्दोलन है।

सन्दर्भ ग्रन्थ -

1. फडिया डॉ.बी.एल. - राजनीति विज्ञान - साहित्य भवन आगरा पृष्ट 74 फडिया डॉ.कुलदीप
2. ..... वही .....
3. नेमा डॉ.त्रिपाठी जी.पी. डॉ.डी.सी.नेगी डॉ.एम.एस - प्रतियोगी राजनीति विज्ञान भाग 2 कालेज बुक डिपो जयपुर पृष्ट 95
4. शर्मा डॉ.गोपाल - डेविड इस्टन का व्यवस्था सिद्धान्त विश्लेषण - राजनीति विज्ञान अध्ययन शाला उज्जैन द्वारा विश्व विद्यालय नेत्रत्व कार्यक्रम (1987 - 90) के अर्न्तगत प्रकाशित पृष्ट 10
5. जोशी डॉ.आर.पी. , भारद्वाज अरूणा, - वर्तमान राजनैतिक परिदृष्य - शासन व्यवस्था संकट - पृष्ट 265

* प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

मध्यप्रदेश के ग्रामीण समुदायों में मध्यम वर्ग एवं सामाजिक परिवर्तन (नीमच जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. संजय जोशी *

भारतीय समाज का नगरीय एवं ग्रामीण समुदायों में वर्गीकरण करने पर यह तो स्वीकार करना होगा कि ग्रामीण समुदायों की बहुलता विद्यमान है। यह मानते हुए कि ''मध्यम वर्ग'' तार्किक अर्थों में एक नगरीय सामाजिक विशेषता है, फिर भी स्वतंत्रता के पश्चात् विभिन्न शासकीय योजनाओं, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, शिक्षा का प्रसार, नगरीय सम्पर्क, हरित क्रांति, संवैधानिक प्रावधान, वैश्वीकरण, उदारीकरण एवं आरक्षण की व्यवस्था ने ग्रामीण समुदाय में भी नवजात मध्यम वर्ग को उत्पन्न किया है।

भारतीय मध्यम वर्ग आधुनिक भारत की एक बड़ी एवं महत्वपूर्ण सामाजिक घटना है। यह समकालीन भारत में सार्वजनिक स्थानों, संस्थानों, संगोष्ठियों, ट्रेनों व बसों में चर्चा के मुद्दों में से एक प्रमुख विषय है।[1] यह एक हकीकत है कि मध्यम वर्ग भारत में प्रगति का एक इंजिन बन गया हैं इसलिए कहा जाता है कि दूसरे देश जहां कोयला एवं पेट्रोल रखते हैं वहीं भारत शिक्षित एवं बौद्धिक क्षमता से परिपूर्ण मध्यम वर्ग की शक्ति रखता है।[2] इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए शोधकर्त्ता द्वारा भी मध्यप्रदेश के मालवांचल में स्थित नीमच जिले के ग्रामीण समुदायों में उभरे मध्यम वर्ग एवं सामाजिक परिवर्तन का अनुशीलन किया गया है।

प्रस्तुत शोध पत्र अभी हाल ही में मेरे द्वारा पी.एचडी. शोध-प्रबंध हेतु किए गए अध्ययन एवं तथ्यों के संकलन पर आधारित है।

इस आनुभविक अध्ययन हेतु उद्देश्यपूर्ण प्रणाली के आधार पर मध्यप्रदेश के नीमच जिले में स्थित दो गांवों सरवानिया महाराज एवं रेवली-देवली को जो जिले की दो भिन्न-भिन्न तहसीलों में स्थित हैं, अध्ययन क्षैत्र के रूप में चयनित किया गया है। सम्पूर्ण अध्ययन में सूचनादाताओं को आधार मानते हुए सौद्देश्यीय एवं कोटा निदर्शन प्रणाली के माध्यम से मध्यम वर्ग के 185 सूचनादाताओं का चयन तीन श्रेणियों के अन्तर्गत किया गया।

ग्रामीण मध्यम वर्ग के व्यक्तियों के चयन हेतु सबसे पहले दोनों गांवों का जनगणना सर्वेक्षण किया गया। चयनित 185 सूचनादाताओं से सकेन्द्रित साक्षात्कार, साक्षात्कार अनुसूची, औपचारिक बातचीत, वैयक्तिक अध्ययन इत्यादि पद्धतियों का उपयोग करके विषय से संबंधित तथ्यों एवं समंको का संकलन किया गया है। स्वाधीनता के पूर्व का भारतीय समाज एक पारम्परिक समाज था, जहां व्यक्ति के जीवन की सभी, सामाजिक एवं आर्थिक गतिविधियां जाति एवं नातेदारी द्वारा निर्धारित एवं संचालित होती थी। इसलिये लम्बे समय तक भारत की पहचान जाति प्रथा पर आधारित एक बन्द व्यवस्था वाले परम्परागत समाज के रूप में रही है। परन्तु अंग्रेजों के भारत आगमन एवं स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात समतावादी प्रजातांत्रिक मूल्यों को अपनाए जाने के कारण उत्पन्न विभिन्न नवीन व्यावसायिक अवसरों यथा बैंक, न्यायालय, रेलवे, डाकघर, कल कारखाने, स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय, हॉस्पिटल, सरकारी कार्यालय, पुलिस, सेना, तारघर एवं व्यापारिक प्रतिष्ठानों इत्यादि ने भारत में भी खुली वर्ग व्यवस्था का सूत्रपात किया।[3]

अंग्रेजों द्वारा शुरू की गई सामाजिक रूपान्तरण की प्रक्रिया भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात् और भी तीव्र हुई क्योंकि आजादी के पश्चात् भारत ने शासन की प्रजातांत्रिक व्यवस्था को अंगीकार किया। प्रजातंत्र अपने आप में एक बड़ा परिवर्तन एवं राजनैतिक विकास का पर्याय है।

प्रजातंत्र की स्थापना में सामान्य आदमी के लिये भी अधिक से अधिक अधिकारों की प्राप्ति एवं परिवर्तन के द्वार खुलते है। प्रजातंत्र ने ही कृषि, मजदूरी एवं सेवा कार्य करने वाले श्रमिक वर्ग के व्यक्तियों के समक्ष शिक्षा, समानता एवं ऐसे ही अन्य अवसरों को उपलब्ध कराकर उन्हें भी मध्यम वर्ग में प्रवेश करने का अवसर प्रदान किया है।[4] यहां अब ग्रामीण समाज में मध्यम वर्ग के अभ्युदय से उत्पन्न सामाजिक परिवर्तन से संबंधित तथ्यों का विश्लेषण किया जा रहा है जो उत्तरदाताओं से प्राप्त हुए हैं। इनमें मुख्य रूप से पारिवारिक संरचना (परिवार का स्वरूप व परिवार का आकार) तथा सामाजिक प्रस्थिति इत्यादि तथ्यों की विवेचना की गई है।

सारणी 1 : परिवार के स्वरूप का परिदृश्य

सरल क्रमांक	परिवार का स्वरूप	आवृत्ति		योग
		गाँव (अ)	गाँव (ब)	
01	नाभिक	68 (68.0)	46 (54.1)	114 (61.6)
02	संयुक्त	32 (32.0)	39 (45.9)	71 (38.4)
	योग	100 (100)	85 (100)	185 (100)

उपर्युक्त सारणी सूचनादाताओं के परिवारों के स्वरूप को प्रदर्शित कर रही है। जिससे स्पष्ट हैं कि भारतीय ग्रामीण समुदाय की एक आधारभूत विशेषता रहे, संयुक्त परिवारों की संख्या अब तेजी से कम हो रही है।

गांवों में नाभिक परिवारों के बढ़ने के प्रमुख कारकों में नगरीय सामिप्य के कारण तीव्रतर नगरीय ग्रामीण अन्त:क्रिया, मूल्यों में बदलाव एवं आधुनिक शिक्षा प्राप्त युवक-युवतियां है।

सारणी 2 : परिवार में संतानों की संख्या के आधार पर वर्गीकरण

सरल क्रमांक	परिवार का स्वरूप	आवृत्ति		योग
		गाँव (अ)	गाँव (ब)	
01	एक	06 (6.0)	03 (3.5)	09 (4.9)
02	दो	44 (44.0)	31 (36.5)	75 (40.5)
03	तीन	19 (19.0)	22 (25.9)	41 (22.1)
04	चार	15 (15.0)	17 (20.0)	32 (17.4)
05	चार से अधिक	14 (14.0)	10 (11.8)	24 (13.0)
06	कोई संतान नहीं	2.0 (2.0)	02 (2.3)	04(2.1)
	योग	100 (100)	85 (100)	185 (100)

* सहायक प्राध्यापक समाजशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

सारणी 2 के माध्यम से सूचनादाताओं के परिवारों में संतानों की संख्या को परिलक्षित किया गया है। उपर्युक्त सारणी से यह प्रकाशित हो रहा है कि ग्रामीण मध्यवर्गीय परिवारों में भी छोटे परिवार की अवधारणा तेजी से प्रतिस्थापित हो रही है। सदियों से ग्रामीण समाज कृषि प्रधान होने के कारण इनमें बड़े परिवारों की प्रधानता रही हैं किन्तु आजादी के बाद शिक्षा के प्रसार, नगरीकरण, कृषि के अतिरिक्त आजीविका के अन्य साधनों की उपलब्धता, राष्ट्रीय मूल्य एवं नौकरी व्यापार से जुड़ने के कारण ग्रामीण समुदाय में भी कम संतान वाले छोटे परिवार दृष्टिगोचर हो रहे है। अध्ययित गांवों में 40.5 प्रतिशत परिवार ऐसे पाये गये जिनमें संतानों की संख्या दो है।

सारणी 3 : स्वतंत्रता पूर्व आपके परिवार की सामाजिक आर्थिक स्थिति क्या थी?

सरल क्रमांक	परिवार का स्वरूप	आवृत्ति		योग
		गाँव (अ)	गाँव (ब)	
01	वर्तमान से उच्च	09 (9.0)	00 (0.0)	9 (4.9)
02	वर्तमान के समान	21 (21.0)	04 (4.7)	25 (13.5)
03	वर्तमान से निम्न	70 (70.0)	81(95.3)	151(81.6)
	योग	100(100)	85 (100)	185(100)

स्वतंत्रता पूर्व उत्तरदाताओं के परिवार की सामाजिक- आर्थिक स्थिति का विवेचन सारणी 3 में प्रदर्शित संमकों के माध्यम से किया गया है। 81.6 प्रतिशत लोगों ने स्वीकार किया कि आजादी के पूर्व हमारे परिवार की स्थिति आज के निम्न वर्ग के समान ही निर्धनता की अवस्था में थी। वहीं 13.5 प्रतिशत लोगों का कहना था कि हमारे परिवार की सामाजक स्थिति वर्तमान मध्यम वर्ग के समान ही थी। केवल 4.9 प्रतिशत परिवार ऐसे पाये गये जिनका मानना था कि उनकी सामाजिक स्थिति आजादी के पूर्व वर्तमान की तुलना में उच्च थी।

मध्यप्रदेश के नीमच जिले के दो ग्रामीण समुदायों में तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में सम्पादित इस आनुभाविक शोध के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार हैं:-

मध्यप्रदेश के ग्रामीण समाज में उभरते हुए मध्यम वर्ग एवं सामाजिक परिवर्तन से संबंधित अपने अध्ययन में शोधकर्त्ता ने गांव के मध्यम वर्ग के व्यक्ति को ग्रामीणों के लिये एक रोल मॉडल के रूप में पाया जिसे देखकर ग्रामीण लोग प्रभावित होते हैं एवं अपने जीवन में भी विकास के मार्ग को प्रशस्त करने के विषय में प्रेरित होते है।

आजादी के पूर्व तक समाज की कवेल उच्च स्तरीय जातियों के व्यक्ति ही मध्यम वर्ग का हिस्सा हुआ करते थे। जिनमें मुख्य रूप से ब्राह्मण(पुरोहित), राजपूत(जमींदार), वैश्य (साहूकार) प्रमुख थे। किन्तु आजादी के बाद आरक्षण की सुविधा ने निम्न जातियों एवं जनजातियों के लोगों को भी धंधेगत बदलाव के द्वारा व्यावसायिक गतिशीलता के अवसर प्रदान किए हैं। मंडल आयोग की सिफारिशें लागू हो जाने के बाद अन्य पिछड़ा वर्ग की जातियों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति और भी ऊँची हुई है। इन प्रावधानों के फलस्वरूप ग्रामीण समाज की निम्न जातियों एवं मझौली जातियों में मध्यम एवं नव मध्यम वर्ग उत्पन्न हुए हैं जो पहले इन जाति समूहों में नहीं थे।[6]

इस प्रकार इन नवीन अवसरों ने सदियों से समाज के उपेक्षित वर्ग के लोगों को भी ग्रामीण समाज में उभरे मध्यम वर्ग का हिस्सा बनाकर उच्च स्तरीय जातियों के व्यक्तियों के समकक्ष ला खड़ा किया है।

ग्रामीण समाज में लम्बे समय तक व्यक्ति की सामाजिक प्रस्थिति, प्रतिष्ठा एवं जीवन शैली को निर्धारित करने में जहां केवल और केवल जाति की ही भूमिका प्रमुख होती थी वहीं अब शिक्षा, व्यवसाय, आमदानी एवं वैयक्तिक योग्यता की भूमिका महत्वपूर्ण होने लगी है।

भारतीय ग्रामीण समुदाय की एक आधारभूत विशेषता रहे संयुक्त परिवारों की संख्या उभरते हुए ग्रामीण मध्यम वर्ग में अब तीव्रता से कम हो रही है। हालांकि ग्रामीण नाभिक परिवारों की प्रकृति नगरीय नाभिक परिवारों से भिन्न है। ग्रामीण नाभिक परिवारों में से अधिकांश का निवास संयुक्त है। एक ही बड़े मकान में जिसका एक सामान्य प्रवेश द्वार होता हैं उसमें दो या दो से अधिक नाभिक परिवार निवास करते हैं। रसोई एवं आय की पृथक व्यवस्था के अतिरिक्त दैनिक जीवन के कई क्रिया-कलापों, पारिवारिक उत्सव, सामाजिक संस्कारों एवं धार्मिक आयोजन के अवसर पर इनमें संयुक्त परिवार की झलक ही परिलक्षित होती है।

ग्रामीण मध्यवर्गीय परिवार भी संतानों की संख्या का नियमन कर छोटे परिवारों के महत्व को समझने लगे हैं। 40.5 प्रतिशत परिवारों में संतानों की संख्या दो ही पाई गई। इस प्रकार स्पष्ट है कि शिक्षा एवं पर्याप्त आय जहां व्यक्ति के जीवन स्तर का उन्नयन करती हैं, वहीं उसे छोटे परिवार के महत्व के प्रति भी संवेदनशील एवं जागरूक बनाती है।

मध्यप्रदेश के गांव में उत्पन्न इन परिवर्तनों से सामाजिक स्तरीकरण का स्वरूप बदल रहा है। बदलाव का यह स्वरूप कुछ इस तरह का है कि एक प्रकार का पुनर्स्तरीकरण होता हुआ दिखाई दे रहा है। इस पुनर्स्तरीकरण की प्रक्रिया में व्यक्ति की जाति एवं वर्ग का नाम इतना महत्वपूर्ण नहीं रह गया है जितनी कि उसकी व्यावसायिक पहचान। यह पहचान भी वह मध्यम स्तरीय वर्ग स्थिति के रूप में बनाता है, और इस तरह मध्यम वर्ग गांव में एक दिशा दर्शक की भूमिका में ग्रामीणों को अपनी ओर आकर्षित भी करता है तथा इस वर्ग में सम्मिलित होने के प्रति उन्हें सम्मोहित भी करता है।

References :-

1. Misra, B.B. 1961f. The Indian Middle Class : Their Gorwth in Modern Times. London : Oxfor University Press. P. 68.
2. Sheth, Dherubhai. 2002. naye Madhyam Varg Ka Udaiy', Ed. by Abhay Kumar Dube. Lokatntra Ke Sath Addhaya. New Delhi : Vani Prakashan. P. 118.
3. Verma, Pavan. 1999. The Great Indian Middle Class : New Delhi : Penguin Books India (Pvt.) Ltd. PP. 208-212.
4. Beteille, Andre. 2006. 'The Indian Middle Class' in his New book- Indeology and Social Science. New Delhi : Pengum Books Ltd. PP. 188-190.
5. Joshi, Sanjay. 2008. Emerging Middle Classes and social change in Rural Commmunities of western Madhya Pradesh Ph.D. Thesis, M.L. Sukhadiya University, Udaipur. P.200.
6. Ibid, P. 204

****

धूम्रपान का युवाओं के चिंता स्तर पर प्रभाव का मनोवैज्ञानिक अध्ययन

डॉ. रेखा बख्शी *

संक्षेपिका:-

प्रस्तुत मनोवैज्ञानिक अध्ययन का उद्देश्य यह है कि धूम्रपान करने वाले युवा तथा धूम्रपान नहीं करने वाले युवाओं के चिंता-स्तर में क्या भिन्नता होती है ? और क्यूँ होती है ? इस उद्देश्य हेतु अपने शोध-अध्ययन के न्यादर्श में 30 युवा जो धूम्रपान करते है तथा 30 युवा जो धूम्रपान नहीं करते हैं, उन्हें शामिल किया गया हैं। युवाओं से साक्षात्कार के आधार पर उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन विधी का प्रयोग किया गया।

अध्ययन हेतु सागर शहर के शैक्षणिक संस्थाओं से 18 से 25 वर्ष के युवाओं को लिया गया है। धूम्रपान का मनोवैज्ञानिक चरों से क्या संबंध है, इस हेतु दोनों समूहों को सिन्हा एवं सिन्हा द्वारा निर्मित चिंता मापनी दी गई। प्राप्त आंकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया। परिणाम दर्शाते हैं कि धूम्रपान करने वाले युवाओं में चिंता तथा तनाव का स्तर, धूम्रपान न करने वाले युवाओं की तुलना में सार्थक रूप से उच्च पाया गया। अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला गया कि धूम्रपान, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करता है तथा इससे नकारात्मक परिणाम देखने को मिलते हैं। अत: निश्चित रूप से किसी भी प्रकार के नशा से युवा पीढ़ी को बचाने का प्रयास परिवार स्तर से प्रदेश तथा देश स्तर तक किया जाना चाहिए।

प्रस्तावना :-

मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में यह देखा गया है कि तनाव की स्थिति में व्यक्ति नशे की प्रवृत्ति की ओर अग्रसर होता है नशा, चाहे जिस रूप में किया जाए, वह व्यक्ति के लिए हानिकारक प्रभाव ही देता है। धूम्रपान भी नशाखोरी के अंतर्गत आता है। इस अध्ययन में नशाखोरी का एक प्रकार, धूम्रपान को शोध-अध्ययन में लिया गया है।

आजकल यह आमतौर पर देखने में आता है कि युवा वर्ग जब जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में असफलताओं को देखते है या अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूर्ण होता नहीं देखते, तब वे नशे की प्रवृत्ति की ओर अग्रसर होते हैं।

अध्ययनों में यह देखा गया है कि तनाव की स्थिती में युवा अधिक मात्रा में धूम्रपान करते है। इन सभी का उपयोग विभिन्न रोगों के विकास से संबंधित है। जीवन की विभिन्न विषम परिस्थितियां व्यक्ति में तनाव तथा चिंता की स्थितियॉ उत्पन्न करती हैं।

सामान्य रूप से हम तनाव का अनुभव तब करते हैं जब समस्याओं को सुलझाने के हमारे द्वारा किए गए प्रयास सफल नहीं होते। वास्तव में तनाव एवं चिंता का अनुभव एक नितान्त व्यक्तिगत मसला है और जब समस्याओं से निपटने में अवरोध आता है, तब व्यक्ति में तनाव उत्पन्न होता है।

थोड़ी मात्रा तथा थोड़े समय के लिए आने वाला तनाव व्यक्ति के लिए अच्छा होता है परन्तु अधिक मात्रा में तनाव जो कि काफी अधिक समय तक रहता है वह व्यक्ति के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। तनाव तथा चिंता के स्त्रोत व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक तथा पर्यावरणात्मक परिस्थितियां होती हैं, फलस्वरूप चिंता जनक स्थितियॉ उत्पन्न होती है।

तनाव तथा चिंता से युवाओं में शारीरिक लक्षण जैसे - हृदयगति बढ़ना, शरीर में दर्द महसूस होना, सांस लेने में तकलीफ, हाथ-पैर कांपना तथा मनोवैज्ञानिक लक्षण, जैसे निराशा, कुंठा, ध्यानएकाग्रता में कमी, आत्मविश्वास की कमी, निर्णय क्षमता की कमी आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं तथा ये सभी कारण युवाओं को नशाखोरी जैसे धूम्रपान, मद्यपान जैसी दूषित प्रवृत्तियों की ओर अग्रसर करते हैं।

धूम्रपान, युवा मन को तथा उसकी चिंतन प्रक्रिया को प्रभावित करता है, पाचनतंत्र को प्रभावित करता है। युवा निराशा तथा चिंता के कारण अनिद्रा के शिकार होते हैं। यदि तनावपूर्ण परिस्थितियों में युवाओं को परिवार, समाज, मित्रों से सहयोग नहीं मिलता तब वे विकल्प के रूप में धूम्रपान, मद्यपान जैसे नशे की ओर अग्रसर होते हैं। जब युवाओं को ऐसे नशे की आदत हो जाती है तो वे नशा करते वक्त स्वयं को आराम तथा सुकून की स्थिती में पाते हैं। निश्चित रूप से नशा नहीं करने वाले युवा संतुलित जीवन जीते हैं।

उद्देश्य :

धूम्रपान का युवाओं के चिंता स्तर पर प्रभाव का अध्ययन।

परिकल्पना:

धूम्रपान करने वाले युवाओं के चिंता स्तर तथा धूम्रपान नहीं करने वाले युवाओं के चिंता स्तर में कोई अंतर नहीं पाया जाएगा।

न्यादर्श :

30 युवा जो धूम्रपान करते है तथा 30 युवा जो धूम्रपान नहीं करते, इन्हें अपने अध्ययन हेतु न्यादर्श में लिया गया। ये युवा 18 से 25 वर्ष के मध्य चुने गये। इन्हें उद्देश्यपूर्ण प्रतिचयन विधि द्वारा चुना गया। ये युवा सागर शहर की शैक्षणिक संस्थाओं से लिए गए। साक्षात्कार विधि द्वारा यह ज्ञात किया गया है कि कौन युवा धूम्रपान करते हैं तथा कौन नहीं।

अध्ययन सामग्री -

सिन्हा एवं सिन्हा द्वारा निर्मित-सिन्हा चिंता मापनी।

परिणाम :

धूम्रपान करने वाले युवाओं का चिंता स्तर, धूम्रपान नहीं करने वाले युवाओं की तुलना में ज्यादा पाया गया। दोनों के मध्य सार्थक अंतर पाया गया। अत: शून्य परिकल्पना की अवधारण को अस्वीकृत किया गया।

निरीक्षण तालिका

चिंता स्तर

	धूम्रपान करने वाले युवा N_1 =30	धूम्रपान नहीं करने वाले युवा N_2 =30	तुलनात्मक अन्तर
मध्यमान	40.30	18.20	t = 8.50
मानक विचलन	12.50	7.43	अन्तर सार्थक

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष -मनोविज्ञान, शासकीय स्वशासी कन्या स्नात्तकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर

df - 5 level of signification
.05 - 2.00
.01 - 2.66

परिणामों की व्याख्या :

निरीक्षण तालिका को देखने से ज्ञात होता है कि धूम्रपान करने वाले युवाओं का चिंता स्तर, धूम्रपान नहीं करने वाले युवाओं की तुलना में ज्यादा पाया गया। मध्यमान तथा मानक विचलन के आधार पर दोनों समूह के मध्य अंतर की सार्थकता देखने के लिए ज.ज्मेज लगाया गया। दोनों समूहों के मध्य सार्थक अंतर दर्शाती है। धूम्रपान करने वाले युवाओं का चिंता स्तर सार्थक रूप से ज्यादा पाया गया। दोनों समूहों पर प्राप्त मान 8.50 पाया गया जो कि .05 एवं .01 विश्वास स्तर के निर्धारित मानों से काफी ज्यादा है। एवं सार्थक अंतर को दर्शाता है।

स्वास्थ्य तथा रोग के संबंध में हुए अध्ययनों से ज्ञात होता है कि व्यवहार संबंधी कारक स्वास्थ्य को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करते है। जिस प्रकार विभिन्न शारीरिक रोग व्यक्ति की जीवन शैली को प्रभावित करते हैं। उसी प्रकार ''नशा'' चाहे जिस रूप में हो, चाहे धूम्रपान हो, मद्यपान हो, औषधि व्यसन हो–ये सभी स्त्रोत व्यक्ति के शारीरिक एवं मानसिक विकास को प्रभावित करते है। अस्वास्थ्यप्रद व्यवहार जैसे धूम्रपान, मद्यपान को अकसर व्यक्ति सुखदायक व्यवहार के रूप में देखता है। इसीलिए अधिकतर लोग इन व्यवहारों को करने में संकोच नहीं करते।

तनावपूर्ण स्थितियों में व्यक्ति अधिक मात्रा में नशा करते हैं। इससे व्यक्ति का स्वास्थ्य प्रभावित होता है फलस्वरूप चिंता का स्तर भी बढ़ता है तथा समायोजनात्मक समस्याऐं पैदा होती हैं। आज के युवा को इस नशे की प्रवृत्ति से बचाना है तो नशे के मनोवैज्ञानिक कारणों को जानना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए जिम्मेदार कारक परिवार, समाज तथा अन्य पर्यावरणात्मक परिस्थितियॉ होती हैं। व्यक्ति के प्रत्येक व्यवहार का कारण होता है यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है। अत: इन्हें जानना, समझना तथा निदान में सहयोगी बनना अत्यन्त आवश्यक है। यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि वे क्या जैविक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक सांस्कृतिक कारण जिम्मेदार हैं जो युवा–पीढ़ी को नशे की ओर उन्मुख करते हैं। परिवार स्तर पर माता–पिता की भूमिका अहम होती है कि वे अपने घर में अपने बच्चे के मनोविज्ञान को समझें। उनके मन को समझें, उनसे मित्रवत हों, उनकी रूचि, क्षमता, योग्यता, महत्वाकांक्षाओं को समझें। क्योंकि मनोविज्ञान का सिद्धांत ही यही है कि प्रत्येक व्यवहार का कारण होता हैं, चाहे वो जो भी हो।

अध्ययन की सीमाएँ – धूम्रपान करने वाले युवाओं एवं धूम्रपान नहीं करने वाले युवाओं के चिंता स्तर में सार्थक अन्तर पाया गया है। धूम्रपान करने वाले युवाओं का चिंता स्तर अधिक पाया गया। जैसा कि निरीक्षण तालिका में परिणामों को दर्शाया गया है। लेकिन यह शोध अध्ययन सीमित प्रतिदर्श संख्या पर ही किया गया अत: परिणामों का सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता। बड़े प्रतिदर्श पर भविष्य में अध्ययन किया जाना चाहिए ताकि परिणामों का सामान्यीकरण किया जा सकें।

सुझाव –

युवा पीढ़ी को नशे की प्रवृत्ति से बचाने के लिए आवश्यक है कि युवा मन के मनोविज्ञान को समझा जाए। उन्हें उचित सलाह मार्गदर्शन, परामर्श दिया जाए। इस समस्या के निदान में मनोवैज्ञानिकों, मनोचिकित्सों से सलाह, परामर्श अवश्य लिया जाए। नैतिक मूल्यों व संस्कारों की स्थापना परिवार से ही होती है इसमें माता–पिता की भूमिका प्रमुख होती है।

यदि बच्चे में परिवार स्तर पर ही नैतिक मूल्य स्थापित हो जाते हैं तो सही–गलत का निर्णय करने की क्षमता स्वयं युवा में होती है। वे कभी अपने लक्ष्य से नहीं भटकेंगे तथा ऐसी पीढ़ी नशा प्रवृत्ति की ओर अग्रसर नहीं होगी और एक आदर्श समाज की स्थापना होगी।

संदर्भ ग्रंथ –

1. असामान्य मनोविज्ञान – जयगोपाल त्रिपाठी
2. असामान्य मनोविज्ञान – अरूणकुमार सिंह
3. स्वास्थ्य मनोविज्ञान – डॉ. शालिनी मिश्रा
4. **Journal of India Health Psychology.**

****

नवीन भारत के निर्माता : लौह पुरूष सरदार पटेल

डॉ. अनिल कुमार जैन *

''शताब्दियों पश्चात् आज समय आया है, जब भारत गर्व से कह सकता है कि वह पूर्णरूप से संगठित एकीकृत राष्ट्र है, सच्चे अर्थो में ''-सरदार वल्लभ भाई पटेल [1]

सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी, जन नेता, कुशल कूटनीतिज्ञ, सशक्त क्षमता वाले प्रशासक, बुद्धिमान राजनेता, परिणामवादी, व्यवहारिक राजनीतिज्ञ सरदार पटेल जिन्हें भारतीय लौह पुरूष कहते है, को स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ नवीन भारत के निर्माता होने का पूरा श्रेय जाता है।[2]

स्वतंत्रता के पश्चात् पटेल ने भारत के एकीकरण में निर्णायक भूमिका निभाई। देशी रजवाड़ों को अपने असाधारण, व्यावहारिक कौशल और विवेक के बल पर विश्वास में लेकर समझाने-बुझाने, बहलाने के उपरांत 502 देशी रियासतों का भारतीय संघ में विलय कर उन्होंने भारतीय राष्ट्र के मानचित्र का पुन: रेखाकंन किया।[3]

देशी रियासतों का स्वतंत्र भारत में विलय एक कठिन और बड़ा कार्य था, जिसे सरदार पटेल ने बड़ी चतुराई और बुद्धिमता से अति प्रशंसनीय ढ़ंग से सम्पन्न किया। जिसे देश में भौगोलिक और सांस्कृतिक एवं भाषाई विभिन्नता वाले अनेक राज्य अपने को नवीन भारत की परिवर्तित स्थिति के अनुकूल बना सके। यह ऐसा कार्य था जो असाधारण शक्ति, साहस और योग्यता की अपेक्षा रखता था, इस चुनौती पर सरदार पटेल खरे उतरे।

स्वतंत्रता के पश्चात् पटेल ने भारत के एकीकरण में जो निर्णायक भूमिका निभाई वह भारत के इतिहास का स्वर्णिम पृष्ठ है। उन्होंने विशेष रूप से अविचलित धैर्य, असाधारण दूरदर्शिता, सृदृढ़ संकल्प और अक्षमाशील कठोरता का परिचय देते हुए, सत्ता पद से उन्मत हैदराबाद के निजाम को जिस तरह घुटने टेकने के लिए विवश किया किन्तु फिर भी उसे राजप्रमुख बने रहने दिया, यह उनकी दूर दृष्टि का अद्भूत उदाहरण है।[4]

सरदार पटेल ने कुछ छोटी रियासतों का भारत के विभिन्न राज्यों में विलय कर दिया, कुछ संघ कें अंतर्गत आ गई। इस संदर्भ में उन्होंने रियासती शासकों के अहम् की तुष्टिकरण के लिये, आनुवांशिक सम्मान, अधिकार तथा वार्षिक भत्तों को भी (प्रिवीपर्स) स्वीकृत किया। पटेल की इस विलय संबंधी उपलब्धि पर लन्दन टाईम्स ने लिखा था ''रियासतों के विलय करने संबंधी उनकी उपलब्धि के कारण उन्होंने वह स्थान अर्जित कर लिया है, जो बिस्मार्क के समकक्ष अथवा उससे उच्चतर हो सकता है।''

राज्यों के विलय की इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप भारतीय संघ एक सुदृढ़ राष्ट्र में परिवर्तित हो गया तथा इन राज्यों में प्रजातंत्रीकरण की प्रक्रिया आरंभ हो गई। अब भारत ऐसे घर के रूप में नहीं रहा जिसके अनेक टुकड़े हो। प्रो.कूपलैण्ड के शब्दों में ''भारतीय राज्य में विलय का काम उत्कृष्टतम दूरदर्शिता एवं बुद्धिमतापूर्ण कार्यो में से एक है। जिसकी तुलना अन्य प्रदेशों को ,अपने राष्ट्र में मिलाने के भव्य एवं दुष्कर कार्यो से भी की जा सकती है।''

रियासतों के विलय कार्य का एक गौरवपूर्ण पक्ष यह भी रहा कि प्राय: राजाओं के मन में इसने कोई दुर्भावना और कटुता नहीं छोड़ी। वास्तव में यह एक रक्तहीन क्रांति थी। राजाओं को पर्याप्त प्रिवीपर्स की सुविधा दी गई और कुछ को राज्यों का राज्य प्रमुख अथवा उप राज्य प्रमुख के रूप में पदेन नामित किया गया। यहां तक की स्वयं गांधीजी ने भी सरदार के इस कार्य की सराहना इन शब्दों में की ''राजाओं के विलय का कार्य अतिदुष्कर था , परन्तु मुझे विश्वास था कि सरदार ही थे जो इसे हाथ में लेकर पूरा कर सकते थे।''

यह माना जाता है कि सरदार पटेल पर मध्यकालीन राजनीतिक दार्शनिक मेकियावली की कल्पना वाले ''प्रिंस'' का प्रभाव रहा है। वे इस पुस्तक के इस वाक्य से प्रेरित और प्रभावित लगते है कि '' एक दूरदर्शी नेता को वस्तुओं को यथावत दृष्टि से देखना चाहिये, न कि उस दृष्टि से जो उनकी आशाओं, अभिलाषाओं से रंजित हो।''[5]

तथ्य यह है कि सरदार विशुद्ध सीधे यथार्थवादी थे जिसके आंकलन में इच्छाओं की घुसपैठ वर्जित रही है और भावनाऐं जिसे प्रभावित नहीं कर पाती है। इस लौह पुरूष ने लौहे सी कठोरता का परिचय देते हुए हिन्दू-मुस्लिम उपद्रवियों पर भी लौह प्रहार किया। उन्होंने दिल्ली पर बलात अधिकार करने वाले षड़यंत्रकारियों पर निर्मम प्रहार किया था।

गांधीजी के आदेश के समक्ष अवनत होकर उन्होंने नेहरू को प्रधानमंत्री तो स्वीकार कर लिया, परन्तु उप प्रधानमंत्री के रूप मे भी निष्क्रियवादी बनकर नहीं बैठे रहे। वे जिसे उचित समझते थे, उसके प्रति आग्रह बनाये रखते थे। कश्मीर समस्या में उनका हस्तक्षेप आज भी चर्चा का विषय है। उस समय भारत में यह परिहासोक्ति बड़ी प्रचलित रही थी कि भारत के दो प्रधानमंत्री है। एक विदेश मंत्रालय और कश्मीर को देखता है, तो दूसरा आंतरिक प्रबंधन देखता है। एक नार्थ ब्लाक में है, तो दूसरा साउथ ब्लाक में है।

पटेल को गृह मंत्रालय का कार्य सौंपा गया था। पटेल का एक गुण जो विवाद का कारण भी बना कि पर्याप्त अंशों में गांधीवादी होने पर भी, वे कई बार अपने गुरू से भिन्न सम्मति रखते थे। अहिंसा पर नीति के रूप में आस्था रखने पर भी उसे जीवन दर्शन मानते थे। चीन ने जब तिब्बत निगल लिया तो उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा था ''हम हिंसा का उत्तर हिंसा से देगें। अपने विरूद्ध बल प्रयोग का उत्तर हम बल प्रयोग से देगें।''

आधुनिक भारत के निर्माण में, उनका योगदान गांधी और नेहरू से किसी प्रकार कम महत्वपूर्ण या न्यूनतर नहीं है। वे अपने पीछे एक ऐसा स्मारक भारत बना गये जो उन स्मारकों से कहीं अधिक स्थायी और स्मरणीय है जिसका अशोक और अकबर मात्र सपना देखते रहे और जिन्हें वे कभी पूरा नहीं कर पाये। यह सरदार पटेल का ही व्यक्तित्व था, जिसने अंग्रेजों की, इस देश को खण्डित देखने की अभिलाषा को पूरा नहीं होने दिया और भारत में एक सुगठित अस्तित्व और सर्वांगपूर्ण प्रशासन का आने वाली पीढ़ी को अद्भूत उपहार प्रदान कर गये।[6]

सरदार पटेल को विलक्षण प्रतिभा के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। लार्ड माउण्टबेटन ने कहा है कि '' उनकी स्मृति, भारतीय जनमानस का जहां तक संबंध है, सदा अमर रहेगी। देशी राज्यों के मंत्री के रूप में 1947-48 के मध्य उन्होंने उस सर्वाधिक विकट समस्याओं को जो कभी किसी नेता के समक्ष उपस्थित हुई हो, का अतीव दूरदर्शिता, बुद्धिमता और सूझबूझ के साथ समाधान किया।

* सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

यहां यह उल्लेखनीय है कि उनके विचारों में तिलक तथा गांधी के विचारों का मिश्रण रहा है। वे वस्तुत: यथार्थवादी कर्मशील व्यक्ति थे।

यही कारण है, आदर्शवादी चिंतन की भावुकता से प्रेरित नेहरू तथा गांधीजी के कई निर्णयों से उनकी असहमति जग जाहिर रही है। इस संदर्भ में डी.व्ही.तहमन्कर का कथन द्दष्टव्य है – ''संसार में ऐसे उदाहरण कम है, जब दो असमान प्रकृति वाले राष्ट्र नायकों ने अपने सहयोगात्मक तारतम्य का विस्मयकारी परिचय देते हुए राष्ट्र को उन्नति की ओर अग्रसर किया। दृष्टिकोण में अनुपेक्षणीय असमानताऐं होने पर भी अपने क्षेत्र में महान इन दो राष्ट्र विभूतियों की एकजूटता स्पृष्णीय थी।''

सरदार पटेल के लिए लौह सभा में बोलते हुए पं.नेहरू ने उनको इन मार्मिक शब्दों में स्मरण किया है – ''उनका जीवन एक गौरव गाथा है, जिसे इतिहास अंकित करेगा, अनेक पृष्ठों में। इतिहास स्मरण करेगा उन्हें नवीन भारत के निर्माता और सुद्दढ़कर्ता के रूप में। परन्तु हम उन्हें अपने महान नेता के रूप में। एक ऐसे मित्र एवं विश्वस्त सहचर के रूप में। जिस पर हम सदैव निर्भर कर सकते थे।

एक शक्ति के महान स्तम्भके रूप में, जो विपत्ति के समय कांपते ह्रदयों को स्थिर करने की क्षमता रखता था।'' पाकिस्तानी लियाकत अली खां ने भी उनकी कथनी और करनी की प्रमाणिकता को स्वीकार करते हुए कहा कि '' वह जो भी कुछ कहते थे, उसके लिए वहीं व्यवहार्य था और जिसे वह व्यवहार्य मानते थे उसे ही करते थे।''

जर्मनी के बिस्मार्क के भारतीय संस्करण लौहपुरूष सरदार वल्लभभाई पटेल कृतघ्न राष्ट्र सदैव स्मरण रखेगा।

संदर्भ ग्रंथ–

1. त्यागी पी.के. : भारतीय राजनीतिक विचारक : विश्व भारती पब्लिकेशन्स नईदिल्ली (2006) पृ.191
2. अग्रवाल डॉ. गिरिजा शरण : पटेल ने कहा था : प्रतिभा प्रतिष्ठान नईदिल्ली (1984) पृ. 03
3. अग्रवाल डॉ. गिरिजा शरण : पटेल ने कहा था : प्रतिभा प्रतिष्ठान नईदिल्ली (1984) पृ. 04
4. अग्रवाल डॉ. गिरिजा शरण : पटेल ने कहा था : प्रतिभा प्रतिष्ठान नईदिल्ली (1984) पृ. 05
5. कोहली एम.आर : ए मेन ऑफ थॉट एण्ड एक्शन : हिन्दुस्तान टाइम्स, 31 अक्टूबर 1993
6. त्यागी पी.के. : भारतीय राजनीतिक विचारक : विश्व भारती पब्लिकेशन्स नईदिल्ली (2006) पृ. 226.

****

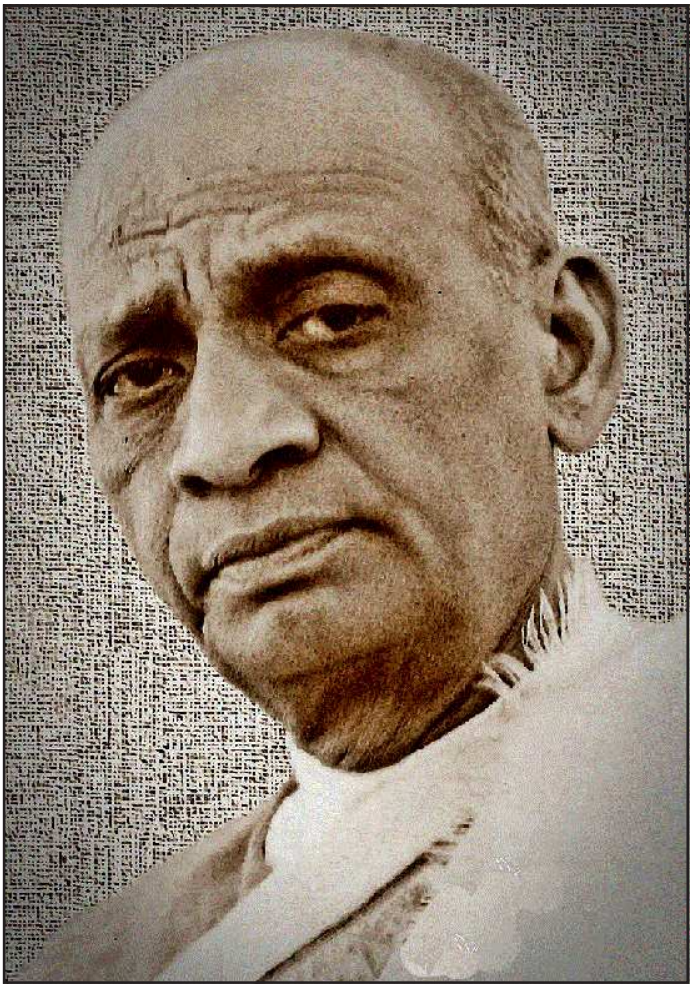

जनमाध्यमों से सामाजिक परिवर्तन

डॉ. सोनाली नरगुन्दे *

सारांश:-संचार तथा सामाजिक जीवन के बीच गहरा संबंध है। पारस्परिक जागरूकता सामाजिक संबंधों केा एक अनिवार्य तत्व है। सामाजिक संबंधों में पारस्परिक जागरूकता का संबंध होता है। पारस्परिक जागरूकता का अर्थ मैत्री से नहीं वरन् समानता, विभिन्नता, सहयोग और संघर्ष भी हो सकता है। बुद्धि, तर्क, भाषा, अभिव्यक्ति, संस्कृति मानव के नैसर्गिक गुण है। इन गुणों तथा भौतिक माध्यमों के मिश्रण से संचार मानव समाज में पारस्परिक जागरूकता की क्रिया द्वारा सामाजिक संबंधों की सृष्टि में सहायता करता है। जनसंचार माध्यमों में आज तीन प्रमुख सामाजिक प्रक्रियाएँ हैं। समाजीकरण, सामाजिक परिवर्तन, सामाजिक नियंत्रण। यह एक क्षण है जिसमें हम धन बनाने के लिए बाजारों का निर्माण कर लाभ अर्जन कर सकते हैं। व्यापार वैश्विक विकास तथा वृद्धि के लिए मील का पत्थर हो सकता है लेकिन तभी यह सतत विकास की बात करें बजाय कि सिर्फ चंद लोगों की।

सामाजिक परिवर्तन-यद्यपि मानव आदि काल से ही समाज में रहता आया है। परन्तु मानव ने इस समाज को और स्वयं को जानने तथा उस समाज के अध्ययन में काफी देर से रुचि लेना प्रारंभ किया है। सामाजिक विज्ञानों के विकासक्रम में समाजशास्त्र का एक विषय के रुप में विकास काफी बाद में हुआ। समाजशास्त्र दो शब्दों से मिलकर बना हैं जिनमें से पहला सोशियस लैटिन से लिया गया है और दूसरा लोगस ग्रीक से लिया गया है। सोशियस का अर्थ है समाज और लोगस का अर्थ है शास्त्र।

समाजशास्त्र परिवर्तनशील समाज का अध्ययन करता है। इसलिए समाजशास्त्र के अध्ययन की न तो कोई सीमा निर्धारित की जा सकती है और न ही इसके अध्ययन क्षेत्र को बिल्कुल साफ रुप से परिभाषित किया जा सकता है। परिवर्तन प्रकृति का एक शाश्वत एवं अटल नियम है। मानव समाज की उसी प्रकृति का अंग होने के कारण परिवर्तनशील है। 'समाज परिवर्तनशील एवं गत्यात्मक हैं ' समाज की कोई न कोई गति होती है। समाज में परिवर्तन क्यों और कैसे होते हैं यह हमें जानना है?

परिवर्तन का सामान्य तात्पर्य है किसी क्रिया अथवा वस्तु की पहले की स्थिति में बदलाव आ जाना। सामान्यत: सामाजिक परिवर्तन का तात्पर्य समाज में घटित होने वाले परिवर्तनों से है। सामाजिक परिवर्तन एक तटस्थ शब्द है जो समाज में होने वाले बदलाव को विभिन्न कालों के सन्दर्भ में सूचित करता है। सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा को समझने के लिए इसका सांस्कृतिक परिवर्तन से अंतर समझना आवश्यक है।

अनेक विद्धानों ने सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन में कोई भेद नहीं किया है। वे इन्हें समान अर्थो में ही प्रयुक्त करते हैं। इसलिए ही इन दोनों अवधारणाओं में भ्रम पैदा हो जाता है। जबकि वास्तव में ये दोनों पृथक पृथक अवणारणाएँ हैं। अत: सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन में भी अन्तर है। समाज में सामाजिक परिवर्तन किन कारणों से तथा किन नियमों के अन्तर्गत होता है, उसकी गति एवं दिशा क्या होती है इन प्रश्नों को लेकर प्राचीन समय से ही विद्धान अपने अपने मत व्यक्त करते रहे हैं। 18 वीं सदी में फ्रांस में यह मत प्रचलित हुआ कि विचार और चिंतन समाज में परिवर्तन उत्पन्न करते हैं।

सामाजिक प्रगति भी सामाजिक परिवर्तन है। प्रत्येक घटना के पीछे कोई न कोई कारक अवश्य होता है। सामाजिक परिवर्तन भी किसी न किसी कारक का ही परिणाम हैं। आज के युग में प्रौद्योगिकी सामाजिक परिवर्तन का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कारक है। यदि यह कहा जाए कि पिछले करीब पाँच सौ सालों में जितने परिवर्तन हुए हैं उनके पीछे सबसे प्रमुख कारक प्रौद्योगिकी है तो इसमें किसी प्रकार की अतिष्योक्ति नहीं है। प्रौद्योगिकी के अन्तर्गत उन प्रविधियों को लिया जाता है जो हमें भौतिक लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करती हैं। प्रविधि में विभिन्न प्रकार के उपकरण तथा मानवीय ज्ञान आता है। प्रौद्योगिकी का तात्पर्य आधुनिक युग में तीव्र गति से होने वाले यन्त्रीकरण से नहीं है। प्रौद्योगिकी तो प्रत्येक युग और समाज में रही है। चाहे कोई समाज सरल हो या जटिल, चाहे वह सभ्य समाज हो या असभ्य चाहे वह परम्परागत समाज हो या आधुनिक प्रत्येक की अपनी एक प्रौद्योगिकी होती है। जो लोगों की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति में योग देती है। कार्लमार्क्स ने प्रौद्योगिकी का अर्थ बताते हुए लिखा है ''प्रौद्योगिकी प्रकृति के साथ मनुष्य के व्यवहार करने के ढंग एवं उत्पादन की उस प्रक्रिया को बतलाती है जिसके द्वारा मनुष्य जीवित रहता है तथा अपने सामाजिक सम्बन्धों और मानसिक धारणाओं के स्वरुप को निर्धारित करता है।'' इस परिभाषा से ज्ञात होता है कि प्रौद्योगिकी एक प्रविधि है जो मनुष्य की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति में योग देती है और इसी के आधार पर सामाजिक सम्बन्धों का स्वरुप निश्चित होता है।

प्रौद्योगिक या प्रौद्योगिकीय कारक और सामाजिक परिवर्तन के बीच गहरा सम्बन्ध पाया जाता है। सामाजिक परिवर्तन के लिए संचार के उन्नत साधन भी जिम्मेदार है। संचार के नवीन उन्नत साधनों जो कि एक प्रभावशाली प्रौद्यौगिकीय कारक है, के विकास ने अनेक जटिल सामाजिक परिवर्तनों को जन्म दिया है। संचार की अनेक प्रविधियाँ हैं जिनमें तार, टेलीफोन, रेडियो, टेलीविजन आदि प्रमुख हैं। संचार ही तो सामाजिक सम्बन्धों का आधार है। जब तक व्यक्तियों के बीच संचार नहीं होगा, सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना संभव नहीं है। सिनेमा या चलचित्रों ने लोगों के विचारों, विश्वासों एवं मनोवृतियों को बदलने में काफी योगदान दिया है। साथ ही इसने पारिवारिक, सामाजिक एवं जातिगत सम्बन्धों को भी प्रभावित किया है। अब रेडियो की सहायता से कोई भी बात, सूचना या विचार कुछ ही क्षणों में लाखों करोड़ों व्यक्तियों तक पहुँचाई जा सकती है। संचार के विभिन्न साधनों के माध्यमों से भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक समूह के लोगों को समझने का मौका मिला है जिसके परिणामस्वरुप उनमें सांस्कृतिक दूरी कम हुई है। सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न कारकों में सांस्कृतिक कारकों का विशेष महत्व है। इसका प्रमुख कारण यह है कि संस्कृति व्यक्ति के विश्वासों, मूल्यों, विचारों, आदतों एवं व्यवहारों को बहुत कुछ सीमा तक प्रभावित करती है।

जैसा कि कहा गया है परिवर्तन एक शाश्वत सत्य है, निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। इतिहास में कोई भी ऐसा समय या काल दिखायी नहीं पड़ता जब समाज स्थिर हो या हो अथवा समाज का परिवर्तन रुक गया हो। समय के साथ साथ समूह, समाज एवं राष्ट्र बदलते हैं, उनके सोचने, विचारने कार्य करने एवं मूल्यों, आदर्शों एवं आचार, व्यवहार में परिवर्तन आते हैं। उन्नीसवीं शताब्दी तक परिवर्तन के सम्बन्ध में यह धारणा प्रचलित थी कि यह स्वत: ही होता है और जान-बूझकर या चेतन प्रयत्न के द्वारा नहीं लाया जाता है। लेकिन बीसवीं शताब्दी में इस धारणा में कुछ बदलाव आया।

आज भारत तथा अन्य आधुनिक समाजों में परिवर्तन की प्रक्रिया काफी तीव्र हो गई हैं। परिवर्तन निम्नलिखित क्षेत्रों में विशेषतया पाया जाता है। आर्थिक क्षेत्र, ग्रामीण पुर्ननिर्माण, समाज कल्याण, सामाजिक क्षेत्र, जनसंख्या नियंत्रण,

* व्याख्याता, पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

धार्मिक क्षेत्र परिवर्तन की प्रक्रिया सभी समाजों में अनिवार्यत: चलती रहती हैं। भारत में इनके अलावा अन्य परिवर्तन भी परिलक्षित होते हैं जैसे विवाह से सम्बन्धित नवीन प्रवृतियाँ, परिवार में आधुनिक परिवर्तन, संयुक्त परिवार में परिवर्तन, जाति व्यवस्था में परिवर्तन, स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन। परिवर्तन के परिणाम लाभप्रद भी हो सकते हैं और हानिप्रद भी।

कहीं परिवर्तनों को शीघ्रता से स्वीकार कर लिया जाता है और कहीं इनका विरोध किया जाता है। परिवर्तन कभी समाप्ति की ओर नहीं होता अर्थात हम विकास करते रहते हैं, विकास की ओर बढ़ते हैं लेकिन समाज का कभी पूर्ण विकास नहीं होता। वह या तो विकासशील होता है या विकास की ओर परन्तु कभी ऐसा नहीं होता कि अब समाज का विकास पूर्ण हो चुका है या समाज सम्पूर्णत: विकसित हो चुका है। विकास क्रम से होता है उसे स्पष्टत: देखा नहीं जा सकता। काल के अनुसार या समय के साथ

उसकी तुलना जरुर की जा सकती है। समाज के विकासक्रम को मीडिया द्वारा समय-समय पर अलग-अलग तरह से प्रस्तुत किया जाता रहा है। समाज का सामाजिक और सांस्कृतिक विकास किस तरह हो रहा है इस बात को मीडियाकर्मियों ने अपने अपने दृष्टिकोण से आँका है।

मीडिया को विकास से जोड़ने का मतलब है कि समाज में आमूल परिवर्तन। लेकिन यह मात्र एक के प्रयास से संभव नहीं है। इसके लिए अलख जगाना आवश्यक है। इसमें सहयोगी हो सकता है विकास संचार। मीडिया जनता को उसकी आवश्यकता की सूचना देने के लिए उत्तरदायी हैं। विकास की बात को जनता तक पहुँचाने वाली यह शाखा आवश्यकता होने के बाद भी उपेक्षा की शिकार है। विकास की अवधारणा में समय और रुचियों के अनुसार परिवर्तन आया और इसके विकास के समग्र आयामों को शामिल किया गया। इसमें आध्यात्मिक, भौतिक, मानवीय के साथ धार्मिक पहलुओं का भी समावेश किया गया। विकास संचार की इस दिशा निर्देशक की भूमिका पर उस समय जोर दिया गया जब लोगों को उनकी आवश्यकताओं के अनुसार सुविधाएँ मिलने में रुकावट आईं। विकास संचार के माध्यम से विकास के उन सभी पक्षों को उजागर किया गया जो मानव और समूचे समाज में परिवर्तन के कारक रहते हैं।

सूचना, समाज, विकास इन तीनों कड़ियों को एक साथ देखने पर तीनों का अन्तरसंबंध इस प्रकार दिखाई देता है कि सूचना के बिना समाज का विकास संभव नहीं है लेकिन किस प्रकार से यह आपस में जुड़े रहते हैं? सूचना मानव की प्राथमिक आवश्यकताओं में आती है और इसी से संभव है विकास। विकास सकारात्मक प्रक्रिया है लेकिन इसके प्रभावों को किस प्रकार प्रसारित किया जाए इसकी जानकारी मीडियाकर्मियों को होनी चाहिए। इस संबंध में उनके मत, निर्णय, और उनके द्वारा उठाए गए कदमों पर तय होगी विकास की सीमाएँ। विकास संचार की दिशाएँ तय करने से पूर्व उसके अब तक के स्वरुप पर निगााह डालना आवश्यक है। संचार के जन्म और उसके माध्यमों के विभाजन के बाद जब पत्रकारिता पर दृष्टि डाली जाए तो विकास की जानकारी को देने का काम पत्रकारिता ने बखूबी किया है।

सामाजिक परिवर्तन में मीडिया की भूमिका-सामाजिक परिवर्तन एक अनिवार्य सामाजिक घटना है, लेकिन इसकी गति प्रत्येक समाज में समरूप नहीं होती है। अधिकांश समाजों में इसकी गति इतनी धीमी होती है कि सामान्यत: आम जनों को इसका आभास नहीं होता। सामाजिक परिवर्तन, जीवन की स्वीकृत रीतियों में परिवर्तन को कहते हैं। इन परिवर्तनों के कारण इस प्रकार हो सकते हैं-

- भौगोलिक दशाओं के कारण
- सांस्कृति साधनों के कारण
- जनसंख्या की संरचना के कारण
- विचारधाराओं में परिवर्तन के कारण

सामाजिक समूह में आंतरिक अथवा बाहरी अविष्कारों के प्रसार के कारण भी परिवर्तन हो सकते हैं।

सामाजिक परिवर्तन के कारकों के विश्लेषण हेतु समाजशास्त्री एकमत नहीं है। कार्ल मार्क्स आर्थिक कारकों को, मैक्सवेबर धार्मिक कारकों को, सोरोकिन ने सांस्कृतिक कारकों को सामाजिक परिवर्तन के लिए उत्तरदायी माना। लेकिन आधुनिक समाज वैज्ञानिकों के मत में मानवीय विवेक द्वारा चेतन और सुव्यवस्थित प्रयत्नों द्वारा सामाजिक परिवर्तन किया जा सकता है। रेमंड विलियम्स, गौडफ्रे, बेस्ले, पाउलो फ्रेयर, डेनियल लर्नर, विल्बर स्कार्म, एवर्ट रोजर्स आदि कई संचार विद्धानों ने समाज में जनसंचार माध्यमों की भूमिका और सामाजिक परिवर्तन पर नई दृष्टि से विचार किया।

नई मान्यताओं के अनुसार शिक्षा और ज्ञान के माध्यम से बुद्धि भावना को जीता जा सकता है ताकि सामाजिक प्रगति की दिशा में सामाजिक परिवर्तन का प्रभावी नियोजन संभव हो सके। समाजशास्त्रियों की विभिन्न विचारआधारों के विश्लेषण से साफ है कि संचार विशेषत: आधुनिक जनसंचार माध्यम सामाजिक परिवर्तन का महत्वपूर्ण कारक है। समाज वैज्ञानिक आगबर्न के मत में प्रौद्योगिकी समाज को पर्यावरण में परिवर्तन द्वारा, जिसके प्रति हमें अनुकूलित होना पड़ता है, बदलती है। यह परिवर्तन प्राय: भौतिक पर्यावरण में पहले पहल आता है। हम इन परिवर्तनों के साथ जो अनुकूल करते हैं उससे प्रथाओं तथा सामाजिक संस्थाओं में परिवर्तन हो जाता है। यह तथ्य संचार साधनों पर भी लागू होता है। आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक माध्यम प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों की ही उपज है। इस कारण इन माध्यमों ने सामाजिक संबंधों में अनेक परिवर्तन उत्पन्न कर सामाजिक जीवन को व्यापक रूप से प्रभावित किया है।

सभी संचार विधियों का मूल कार्य संदेश प्रेषण प्रक्रिया में समय व दूरी पर विजय पाना है। आधुनिक मीडिया ने अपनी विजय यात्रा में देशों की भौगोलिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक सीमाओं को भी समेट लिया है। इसके कारण कई समूहों की पारंपरिक पहचान में बदलाव आया है। खानपान, वेशभूषा, भाषाशैली, जीवनशैली तथा रहनसहन पर इन परिवर्तनों का प्रभाव पड़ा है। संदेशों के आदान-प्रदान ने व्यापार, शिक्षा तथा मनोरंजन को भी प्रभावित किया है। सामाजिक विचारक रेमंड विलियम्स के अनुसार नई भौतिक संस्कृति विकसित हुई है। लेकिन सामाजिक परिवर्तनों में सबसे बड़ा योगदान रहता है सामाजिक अविष्कारों का। भौतिक अविष्कार मनुष्य की जीवन शैली को प्रभावित कर संपूर्ण सामाजिक संगठन को परिवर्तित कर एक नई सामाजिक व्यवस्था का प्रवर्तन करते हैं। सामाजिक आविष्कारों की परिकल्पना करते हुए समाज वैज्ञानिक आगबर्न ने कहा था ये वो आविष्कार हैं जो भौतिक नहीं हैं और न ही प्राकृतिक विज्ञान से इनका संबंध है।

लोकतंत्र, मताधिकार, स्त्रीशिक्षा का प्रसार, बंधुआ मजदूरी की समाप्ति, अंधविश्वासों का उन्मूलन जैसे नए विचारों तथा इनसे सम्बद्ध संस्थाओं के प्रोत्साहन में आधुनिक जनसंचार माध्यम महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इन सामाजिक आविष्कारों द्वारा समाज में नए मूल्य प्रचलित होते हैं, जो बाद में सामाजिक परिवर्तन का कारक बनते हैं। समाजशास्त्री एवर्ट रोजर्स के अनुसार नए विचार समाज में जनसंचार माध्यम द्वारा प्रचलित होते हैं। रोजर्स के अनुसार समाज में नए विचारों के प्रसारण व स्थापना की गति धीमी होती है। वे इस प्रक्रिया को चार चरणों में क्रमबद्ध करते हैं-

- **ज्ञान-** वह स्थिति जिसमें व्यक्ति नए विचार के संबंध में आरंभिक जानकारी प्राप्त करता है।
- **शंका समाधान तथा प्रोत्साहन-** वह स्थिति जिसमें व्यक्ति इन नए विचारों के संबंध में उपजी अपनी शंकाओं के उत्तर प्राप्त कर नए विश्वास के साथ उनके प्रति प्रोत्साहित होता है।
- **निर्णय-** इसमें व्यक्ति नए विचारों को अपनाने या ना अपनाने का निर्णय लेता है।

* **निर्णय का स्थिरीकरण–**इसमें व्यक्ति अपने पूर्व निर्णय पर पुन: विचार कर अंतिम निर्णय लेता है।

सामाजिक परिवर्तन की इस प्रक्रिया से स्पष्ट है कि किसी भी नए विचार अथवा सिद्धांत, चाहे वे भौतिक हों या अभौतिक, की स्थापना सोचे समझे नियोजित ढंग से ही हो सकती है। इस प्रक्रिया में जनसंचार माध्यमों के लिए आवश्यक है कि वे संदेश को कई विधियों से दोहरायें। यहाँ यह तथ्य समझने योग्य है कि मात्र विचारों को संदेशों के रूप में प्रचारित करने के उद्देश्य प्राप्ति नहीं हो सकती। उस विचार से संबंधित प्रश्नों, जिज्ञासाओं व शंका के समाधान की व्यवस्था भी जनसंचार माध्यमों को करनी होगी। इस व्यवस्था हेतु फीडबैक प्राप्त करने की आवश्यकता होगी। क्योंकि अगर संदेश प्रेषक जनसंचारकर्मी को यह पता नहीं होगा कि वे कौन से प्रश्न तथा शंकाएँ हैं जिनके कारण संदेश प्राप्त करने वाला उस संदेश को स्वीकार नहीं कर रहा तो वह उन शंकाओं का हल कैसे संप्रेशित करेगा? इसी कारण कहा जाता है कि संचार एकपक्षीय नहीं अपितु द्विपक्षीय अथवा बहुपक्षीय प्रक्रिया है।

जनसंचार माध्यम सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में सामाजिक विवेक तथा सामाजिक सहमति का निर्माण भी करते हैं। कोई भी समाज व्यवस्था अपने आप में पूर्ण नहीं हो सकती। कई सामाजिक समस्याओं तथा प्रश्नों के उत्तर उसके पास नहीं होते। नए विचारों के प्रसार के कारण सामाजिक, सांस्कृतिक पर्यावरण में होने वाले परिवर्तन कई नई समस्याओं, शंकाओं व प्रश्नों को जन्म देते हैं। इनका हल पूर्व प्रचलित धारणाओं के आधार पर खोजना कठिन होता है। यह भी सही है कि कोई भी सामाजिक उद्देश्य तथा उसे पूर्ण करने के साधनों को लागू करने के लिए सामाजिक सहमति आवश्यक होती है। इस सहमति की रचना में जनसंचार माध्यमों का योगदान सबसे अधिक होता है। जनसंचार साधनों के माध्यम से की गई चर्चा से, नवीन वैचारिक स्थितियों और उनकी समस्याओं को उनके व्यापक सामाजिक परिदृश्य में समझने में सहायता मिलती है। कई स्थितियों में जनसंचार माध्यम सामाजिक परिवर्तन के लिए समाज को नेतृत्व भी प्रदान करते हैं। इस स्थिति में जनसंचार माध्यम समूह के प्रवक्ता की भूमिका का भी निर्वाह करते हैं। चूँकि इस स्थिति में समूह की विभिन्न विचारधाराएँ आपसी संवाद स्थापित करती है, अत: एक सामूहिक लोकतांत्रिक सहमति द्वारा निर्णय तक पहुँचने में जनसंचार माध्यम सहायता करते हैं। इस प्रक्रिया में जनसंचार माध्यमों की कार्यप्रणाली इस प्रकार होती है– कार्य योजना का प्रचार।, सदस्यों को प्रोत्साहित करना।, कार्य योजना संबंधी सदस्यों की शंकाओं का संग्रहण, शंकाओं का निराकरण, आवश्यकतानुसार कार्य योजना में संशोधन।, तनावों को दूर करने के लिए प्रत्येक को अपने विचार अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान करना।, सामूहिक निर्णय हेतु उत्प्रेरित करना। सदस्यों को आपसी चर्चा हेतु मंच प्रदान कर, स्थितियों और समस्याओं के विस्तार, स्वरूप और विविध आयाम के संबंध में सामूहिक विवेक वातावरण का निर्माण।

इस प्रकार उत्पन्न यह सामूहिक विवेक इन समस्याओं के संभव हल के संबंध में सामाजिक सहमति और प्रयत्नों को जन्म देते हैं। इस प्रक्रिया में रेडियो और टेलीविजन द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रम सामाजिक क्रिया अथवा सोशल एक्शन प्रसारण कहलाते हैं। इस तरह के कार्यक्रमों में समसामयिक समस्याओं का विश्लेषण प्रस्तुत कर समाज का उनकी ओर ध्यान तो आकर्षित किया ही जाता है, साथ ही श्रोताओं व दर्शकों को प्रोत्साहित किया जाता है कि वे इन सामाजिक समस्याओं के प्रति अपने विचार भी व्यक्त करें। जनसंचार माध्यम न सिर्फ सामाजिक परिवर्तन के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि सामूहिक विवेक द्वारा सामाजिक विघटन रोकने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। सीधा अर्थ है कि जनसंचार माध्यम सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन के अपने सामाजिक उत्तरदायित्व की अवहेलना नहीं कर सकते। जनसंचार माध्यमों की कार्यप्रणाली में सामाजिक उत्तरदायित्व की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण है। व्यावसायिक आवश्यकताओं अथवा तथाकथित यथार्थ सूचना के त्वरित संप्रेषण की जिम्मेदारी के नाम पर ये माध्यम अपने सामाजिक उत्तरदायित्व से नहीं बच सकते। मुख्य बात यह है कि जनसंचार माध्यम जनसमाज के लिए हैं, इस कारण समग्र सामाजिक कल्याण की निगरानी उनका मुख्य उत्तरदायित्व है। यही कारण है कि संदेश के प्रसारण के पूर्व, उस संदेश के सभी पक्षों का उचित सामाजिक विश्लेषण आवश्यक है। यहाँ यह तथ्य भी रेखांकित करने योग्य है कि संदेश के सामाजिक विश्लेषण की आड़ में किसी एक वर्ग विशेष के स्वार्थों की पूर्ति के लिए चाहे वह राज्य ही क्यों न हो, उन संदेशों को रोकना अथवा उन्हें तोड़–मरोड़ कर प्रस्तुत करना भी सामाजिक उत्तरदायित्व के विपरीत काम करना माना जाएगा। इसी कारण जनसंचारकर्मियों को संदेश के मूल्यांकन पद्धति का उचित ज्ञान होना चाहिए।

ऐसे संदेशों का अत्यंत सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करना चाहिए जो समाज के सदस्यों के बीच घृणा, द्वेष, आतंक, निराशा, अंधविश्वास अथवा अपराध की भावना फेलाते हैं। प्रत्येक संदेश के प्रति संभावित सामाजिक प्रतिक्रिया तथा उसके संभावित परिणामों के प्रति जनसंचार माध्यमों को हमेशा सचेत रहना चाहिए। सामाजिक उत्तरदायित्व के संबंध में चर्चा करते समय यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि कई बार व्यर्थ की ऐतिहासिक घटनाएँ अथवा प्रसंग भी आज के समाज के लिए हानिकारक हो सकते हैं।

अत: ऐसे प्रसंगों से दूर रहना ही उचित है। कई बार यह तर्क दिया जाता है कि अगर इतिहास की पुस्तक में यह प्रसंग आ सकता है तो जनसंचार माध्यम में उसका उल्लेख के लिए आपत्ति क्यों? यह तर्क भी जनसंचार को अपने सामाजिक उत्तरदायित्व से नहीं बचा सकता, क्योंकि हो सकता है कि संदर्भित इतिहास की पुस्तक मात्र एक सी मानसिकता के सीमित वर्ग की केवल जानकारी के लिए या शोध के लिए हो। इस तरह की जानकारी सीमित वर्ग के लिए या क्लास मीडिया मात्र है। जबकि जनसंचार माध्यम समाज के सभी वर्गों के लिए है तभी तो मास मीडिया कहलाते हैं। जनसंचार माध्यमों के लक्षित पाठकों, श्रोताओं, दर्शकों की मानसिकता भिन्न हो सकती है। इस मानसिक विभिन्नता के कारण उस संदेश की प्रक्रिया संघर्ष के रूप में भी हो सकती है।

निष्कर्ष :–सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में जनसंचार माध्यमों को अपना सामाजिक उत्तरदायित्व समझते हुए केवल वही प्रयत्न करना चाहिए जो समाज के लिए सकारात्मक हो। जब तक समाज के सारे सदस्य अपने व्यक्तिगत स्वार्थों, आकांक्षाओं, भावनाओं को सारे समाज की कल्याण प्रक्रिया में नहीं समाहित करेंगे सामाजिक संगठन प्रभावी ढंग से काम नहीं कर सकेंगे।

इसलिए सामाजिक नियंत्रण द्वारा वैयक्तिक सदस्यों के व्यवहार को समाज की आवश्यकतानुसार नियंत्रित करना आवश्यक है। सामाजिक नियंत्रण के तत्वों सामाजिक सुझाव से विचारधाराएँ, सामाजिक–नैतिक मूल्य, धर्म, लोकरीतियाँ, प्रथाएँ, फैशन, कला, साहित्य, लोकमत, प्रचार, उपहार, कानून तथा शिक्षा सम्मिलित है। जनसंचार माध्यम सामाजिक परिवर्तन के प्रभावी साधन है। ये माध्यम न केवल सामाजिक नियंत्रण में सहायता देते हैं बल्कि जनमत के निर्माण द्वारा उनकी समीक्षा भी प्रस्तुत करते हैं।

संदर्भ सूची

* 'उत्तर आधुनिक मीडिया विमर्श', सुधीश पचौरी, 2006, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
* 'जनमाध्यम प्रौद्योगिकी और विचारधारा', जगदीश्वर चतुर्वेदी, अनामिका, पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2000
* Herman Edward S., Mcchesndy, Robert W.(1998), 'The Global Media; Madhyam Books
* The passing of traditional society, learner Daniel, Macmillan Pub. Co. Kumar, Keval j.(2000),
* 'Mass Communication in India, Jaico Publication, Mumbai Luthra H.R (1986), 'Indian Broadcasting, Publication Division,
* Ministry of Information and Broadcasting, Govt. of India
* Mathur, Asha Rani, 'The Indian Media Illusion Delusion and Reality, Rupa Company, 2006

समाजवादी चिन्तक स्वामी विवेकानन्द

डॉ. सुनीता त्रिपाठी *

स्वामी विवेकानंद भारत की महान आत्मा थे जिन्होंने अपनी रचनाओं और भाषणों से जहाँ एक और भारतीय सभ्यता और संस्कृति की महानता से विश्व के लोगों को परिचित कराया वहीं दूसरी और भारतीय समाज और धर्म में व्याप्त कमियों से भारत के लोगों को परिचित कराकर उसें दूर करने का प्रयास किया। अपने इसी प्रयास के अन्तर्गत जब उन्होनें भारतीय समाज तथा भारत की दुर्दशा एवं इसके समाधान के सम्बन्ध में जो विचार रखें, उसके आधार पर यह कहना उपयुक्त होगा कि वे एक समाजवादी चिन्तक भी थे। उन्होंने एक अवसर पर कहा था कि ''मैं एक समाजवादी हूँ।''(1) इस घोषणा की व्याख्या करते हुये के. दामोदरन ने लिखा है कि ''यूरोप में विकसित हो रहे पूँजीवाद की दुष्प्रवृत्ति से विवेकानन्द अत्याधिक निराश हुए और वे नये क्रांतिकारी विचारों की ओर आकर्षित हुए जो अभी निर्माण की अवस्था में थी। वे रूस के क्रांतिकारी अराजकतावादी विचारक प्रिंस क्रोपोटिकन से मिले। समाजवादी विचारों ने उनके मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डाला ओर उन्होंने स्वयं को समाजवादी कहना शुरू किया।(2)

स्वामी विवेकानन्द के दर्शन के मुख्यत: तीन स्रोत थे–प्रथम–वेद और वेदान्त, द्वितीय–रामकृष्ण परमहंस के साथ उनके सम्पर्क, तृतीय–उनके जीवन का अनुभव। इन तीन स्रोतों के माध्यम से ही विवेकानन्द के दार्शनिक, धार्मिक, समाजवादी और राष्ट्रीय विचारों का निर्माण हुआ जो अंतत: उनके राजनीतिक विचारों के आधार स्तम्भ बने। विवेकानन्द के राजनीतिक और समाजवादी दर्शन की व्याख्या के लिए तीन रचनाओं पर ध्यान केन्द्रित करना होगा – कोलंबो से अल्मोड़ा तक व्याख्यान पूर्व तथा पश्चिम और आधुनिक भारत।(3)

विवेकानन्द गरीबों, शोषितों और नि:सहाय लोगों के प्रति असीम संवेदना रखते थे। अपनी इस संवेदना को उन्होंने अपनी पुस्तकों और भाषणों में व्यक्त किया। एक बार एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा था ''जब तक मेरे देश का एक कुत्ता भी भूखा रहता है, तब तक उसको भोजन देना और उसकी देखभाल करना मेरा कर्तव्य है।''(4) एक अन्य अवसर पर उन्होंने कहा – ''जो लोग भूख से मर रहे हैं, उनकी रक्षा करना ही वेदान्त का सार है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि उन्होंने वेद तथा वेदान्त के आधार पर इस समाजवादी दर्शन को ग्रहण किया कि समाज के सभी लोगों को जीने का हक है और ज्ञानी के लिए सभी आत्मायें उनकी अपनी आत्मा है।

इसी प्रकार के कुछ अन्य वक्तव्य भी विवेकानन्द के समाजवादी भावनाओं को व्यक्त करते हैं। उन्होंने कहा था ''मैं उस भगवान या धर्म को नहीं मानता जो न तो विधवाओं के आँसू पोंछ सकता है और न अनाथों के मुँह में एक टुकड़ा रोटी ही पहुँचा सकता है। पूँजीवादी और शोषणवादी धनी लोगों की आलोचना करते हुए उन्होंने कहा ''वे लोग जिन्होंने गरीबों को कुचलकर धन पैदा किया है, वे उन 20 करोड़ देशवासियों के लिए जो इस समय भूखे और असभ्य बने हुए है यदि कुछ न करें तो वे लोग घृणा के पात्र हैं।'' विवेकानन्द के हृदय में आम जनता के लिए प्रगाढ़ प्रेम था। उन्होंने कहा था ''विश्व में एक ही ईश्वर है, एक ही ऐसा ईश्वर है जिसमें मुझे आत्मा है, वह ईश्वर सभी जातियों के दीन और गरीब लोग है।'' उन्होंने यह भी कहा ''स्मरण रखिये राष्ट्र झोपड़ियों में रहता है।''(5) उनके मुख से निकले ये शब्द भी क्रांतिकारी हैं कि ''भूख से पीड़ित मनुष्य को धर्म का उपदेश देना हास्यास्पद है एवं भारत वह देश है जहाँ दस या बीस लाख साधु तथा एक करोड़ ब्राह्मण करोड़ों लोगों का खून चूसते हैं।'' इस प्रकार विवेकानन्द ने जाति व्यवस्था की बुराईयाँ की अनियंत्रित शब्दों में निन्दा की और ब्राह्मण पुरोहितों को निम्न जातियों के उत्पीड़न के लिए उत्तरदायी ठहराया जिन्होंने जाति प्रथा एवं अस्पृश्यता का मायाजाल बना रखा था।(7)

विवेकानन्द का गम्भीर समाजवादी उनकें इस कथन से भी स्पष्ट होता है कि 'भारत की हजार वर्ष पुरानी दासता की जड़ जनता का दमन है। देश के सामाजिक अत्याचारियों ने और अभिजातीय निरंकुश वर्गों ने बहुसंख्यक जनता का शोषण किया था। उन्होनें आम जनता को इतनी घृणा और तिरस्कार की दृष्टि से देखा और उन्हें इतना अपमानित किया कि वह अपना मनुष्य तत्व ही खो बैठी है। जनता ही देश का मेंरूदण्ड होती है क्योंकि वही सम्पूर्ण धन और भोजन उत्पन्न करती है।''(8) इस प्रकार देश की अधिकांश जनता जब अपमानित और शोषित होती रहेंगी तो आर्थिक विकास अवरूद्ध हो जायेगा।

विवेकानन्द ने भारतीय समाज के शोषक वर्गों की घूर्तता, कुटिलता, और अमानवीय व्यवहार की तीव्र भर्त्सना की। उन्होंने भी आलोचना की जो ब्रिटिश सरकार के सहयोगी बने हुए थे। भारत के उच्च वर्गों, तुम शून्य हो तुम भविष्य की सारहीन नगण्य वस्तु हो। तुम अपने को शून्य में विलीन कर दो और तिरोहित हो जाओ और अपने स्थान पर नये भारत का उदय होने दो। (उसे नये भारत को) हल की मूँठ पकड़े हुए किसानों की कुटिया में से, मछुआरों, मोचियों और भंगियो की झोपड़ियों में से उठने दो। उठने दो उसे परचून वाले की दुकान से और पकौड़ी बेचने वाले की भट्टी से। उठने दो कारखाने से, हाटों से और बाजारों से।

इन साधारणजनों ने हजारो वर्षो तक उत्पीड़न सहा है, जिसके परिणाम स्वरूप उनमें आश्चर्यजनक सहनशक्ति उत्पन्न हो गयी है। उन्हें रोटी का आधा टुकड़ा ही दे दीजिए, फिर तुम देखोगे कि सारा विश्व भी उनकी शक्ति को सम्भालने के लिए प्रर्याप्त नहीं होगा। जिस क्षण तुम तिरोहित हो जाओगे उसी क्षण तुम नवजाग्रत भारत उदघाटन घोष सुनोगे।(9)

उपरोक्त वक्तव्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि विवेकानन्द का यह मानना था कि शक्तिशाली भारत के भविष्य का निर्णय जनता की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक उन्नति से ही सम्भव होगा। विवेकानन्द ने भारतीय समाज की जो व्यवस्था की उसका स्वरूप भी समाजवादी है, यद्यपि समाजवाद की यह व्याख्या मार्क्स के ''दास कैपिटल'' और मार्क्स और ऐंजेल्स के ''द कम्युनिस्ट मेंनिफेस्टो'' से भिन्न थी। उन्होंने लिखा कि ''प्राचीन भारत में राजशक्ति और ब्रह्माशक्ति के बीच संघर्ष होते रहता था। बौद्ध धर्म का आविर्भाव क्षत्रियों का विद्रोह था।

इसके कारण पुरोहितों की शक्ति में कमी आयी और राजशक्ति का उत्कर्ष हुआ। कालान्तर में कुरिमात, शंकर और रामानुज ने पुरोहित शक्ति के उत्कर्ष का प्रयास किया लेकिन मुसलमानों के आक्रमण के कारण उनका यह

* (विभागाध्यक्ष) राजनीति विज्ञान, शासकीय स्वशासी कन्या, स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

प्रयास असफल रहा।' उनकें अनुसार 'इतिहास सें यह सिद्ध हो जाता प्रत्येक समाज जब किसी समय परिपक्व अवस्था का प्राप्त होता है तब उसकें अन्तर्गत शासन शक्ति तथा सामान्य जनता के बीच संघर्ष छिड़ जाता है।

समाज में परिवर्तन लाने वाले ऐसे क्रान्ति भारत में बार-बार होते आयें है और वे इस देश में धर्म के नाम पर हुए है क्योंकि धर्म भारत का जीवन है, देश की भाषा है और उसकी समस्त गतिविधियों का प्रतीक है। चर्वाक, जैन, बौद्ध, शंकर, रामानुल, कबीर, नानक, चैतन्य, ब्रह्म समाज, आर्य समाज-वे सब तथा इसी प्रकार के अन्य पंथ धर्म की लहर में उफनती, गरजती, उमड़ती हुई आगें बढ़ती है और पीछे-पीछे सामाजिक आवश्यकता की पूर्ति होती रहती है।''[10] भारतीय समाज की यह व्याख्या इस अर्थ में मार्क्सवादी है कि ब्राह्मण तथा क्षत्रिय निरन्तर जनता के शोषण में लगे रहें है। पुन: दलित और गरीब वर्गों के शोषण की धारणा भी मार्क्सवादी है। एक अन्य अवसर पर स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि ''मै इसलिए समाजवादी नहीं हूँ कि वह पूर्ण व्यवस्था है, बल्कि इसलिए कि आधी रोटी न कुछ से अच्छी है।[11]

विवेकानन्द को दो अर्थों में समाजवादी कहा जा सकता है। प्रथम, उनमें यह समझनें की ऐतिहासिक दृष्टि थी कि भारतीय समाज में दो उच्च जातियों अर्थात् ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों का वर्चस्य रहा है और इन दोनों वर्गों ने भारत की गरीब जनता का निरन्तर शोषण किया है। यही कारण था कि उन्होनें सामाजिक समानता का समर्थन किया। यह समानता पुरातनवाद तथा ब्राह्मणों की स्मृतियों में व्याप्त ऊँच-नीच के सिद्धान्त का प्रबल प्रतिवाद प्रस्तुत करता है। इस प्रकार उनका सामाजिक सिद्धान्त तत्वत: समाजवादी है।[12]

वे समाजवादी इसलिए भी थें क्योंकि उन्होनें देश के सभी लोंगों के लिए ''समान अवसर'' के सिद्धान्त का समर्थन किया। उन्होनें कहां ''यदि प्रकृति में असमानता है, तो भी सबके लिए समान अवसर होना चाहिए-अथवा यदि कुछ को अधिक और कुछ को अधिक और कुछ को कम अवसर दिया जायें तो दुर्बलों को सबलों से अधिक अवसर दिया जाना चाहिए।'' अन्य शब्दों में, ब्राह्मण को शिक्षा की उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी की चाण्डाल को। यदि ब्राह्मण को एक अध्यापक की आवश्यकता है तो चाण्डाल को दस अध्यापक की क्योंकि जिसें प्रकृति ने जन्म से सूक्ष्म बुद्धि नहीं दी है उसे अधिक सहायता दी जानी चाहिए। पद दलित, दरिद्र और अज्ञानी इन्ही को अपना देवता समझों।[13]

समान अवसर का सिद्धान्त निष्चय ही समाजवादी सोच का प्रदर्शित करता है।

स्वामी विवेकानन्द को उस अर्थ में समाजवादी नहीं कहा जा सकता है, जिस अर्थ में हम किस आधुनिक राजनीतिक दार्शनिक को समाजवादी कहतें है। हमें कई आधारों पर विवेकानन्द के समाजवादी दृष्टिकोण एवं आधुनिक समाजवादी दृष्टिकोण के बीच अन्तर दिखाई पड़ता है-पहला, विवेकानन्द को मार्क्स के समान इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या और वर्ग संघर्ष के सिद्धान्त में विश्वास नहीं था, विवेकानन्द आध्यात्मिक पुरूष थें, वेदान्ती थे वेदान्त पर आधारित किसी भी सामाजिक दर्शन में वर्ग संघर्ष का कोई भी स्थान नहीं हो सकता था, उनका दृष्टिकोण अंतर्राष्ट्रीयतावादी था। उन्होनें अत्याचार और अन्याय का मुकाबला करने को प्ररेणा दी, लेकिन क्रांति या हिंसा का हेद समझा।[14]

दूसरा उन्होनें अन्य समाजवादी चिन्तकों की तरह वर्गहीन समाज के सिद्धांत में विश्वास नहीं किया । उन्होनें भारत में प्रचलित तत्कालीन जाति प्रथा का विरोध तो किया लेकिन जातियों के उन्मूलन की बात नहीं की। वे भूतकाल की मूल वर्ग व्यवस्था के पक्ष में थे और चाहते थे कि निम्न वर्ग को उच्चतम स्थिति तक उठने का अवसर मिलना चाहिए और यह वेदान्त का सन्देश है [15]

तीसरा उन्होनें सिर्फ आर्थिक समानता को सर्वाधिक महत्व नहीं दिया, बल्कि उनका आदर्श तो एक सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक भ्रातृत्व था जिसमें आर्थिक समाजवाद के अतिरिक्त नैतिक तथा बौद्धिक आत्मीयता भी होगी। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार भारत में किसी भी सुधार के लिए सबसे पहले धर्म में एक क्राति लाना आवश्यक है। उन्होनें कहा भी था 'हमें देश में समाजवादी विचारों की बाढ़ लागे से पहले यहाँ आध्यात्मिक विचारों की धारा प्रवाहित होनी चाहिए।[16]

चौथा, विवेकानन्द के समाजवाद तथा मार्क्सवाद में:-

आधारभूत अन्तर यह है कि यद्यापि विवेकानन्द ने समाज सुधार पर बल दिया, किन्तु उनका इस बात पर और आधिक बल था कि मनुष्य की आत्मा वसुधातल से आरोहण का स्वार्णिय देवत्व को प्राप्त करे लें। मार्क्स एक यर्थाथवादी तथा द्धन्दात्मक भौतिकवादी था, इसलिए उसनें हिंयसात्म सामाजिक क्रांति का समर्थन किया। साथ ही साथ मार्क्सवाद एक ऐसें दर्शन पर आधारित है जिसमें घृणा, तिरस्कार, ईर्ष्या आदि की बहुंलता है। मार्क्सवाद उस अर्थ में गम्भीर और तात्विक दर्शन नहीं है जिसमें प्लेटोबाद, वेदान्त, बौद्ध, दर्शन या हेगेलबाद है।[17] इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि स्वामी विवेकानन्द का समाजवादी दृष्टिकोण वेदान्ती समाजवाद था जिसमें हिंसा और वर्ग संघर्ष का कौई स्थान नहीं था। उनकें समाजवाद में न्याय, प्रेम, चरित्र, की शुद्धता और भ्रतृत्द, सामाजिक समानता, शोषक वर्गों का उन्मूलय आदि बातों का प्रमुख स्थान था।

वे भारतीय समाज में प्रचलित जातिगत उत्पीड़न और भुखमरी से भलि-भाँति परिचित थे, और इस समस्या का समाधान तत्कालीन आवश्यकता समझते थें। यही कारण था कि वे चाहते थे- ''समाजवाद को भी एक बार परख लिया जायें' , यदि और किसी लिए नहीं तो उसकी नवीनता के लिए ही सही सुख-दुख का पुनर्वितरण उस स्थिति की अपेक्षा तो अच्छा ही है जिसमें कुछ व्यक्ति सदैव दु:ख और कुछ सदैव सुख का अनुभव करते है। इस कष्टमय संसार में प्रत्येक व्यक्ति को कमी तो सुख प्राप्त होना ही चाहिए।

संदर्भ

1. दत्त.पी.एन. स्वामी विवेकानन्द, पंट्रियाट प्रोफेट. नवभारत वब्जिशर्स. 1954.
2. दामोदरन. के. इंडियन थाटँ : एक क्रिटिकल सवै
3. वर्मा. डा. विश्वनाथ प्रसाद, आधुनिक भारतीय राजनैतिक चिन्तक. लक्ष्मीनारायण आगरा 1995.
4. द लाइफ ऑफ विवेकानन्द
5. स्वामी विवेकानन्द पत्रावली, प्रथम भाग
6. द लाइफ ऑफ स्वामी विवेकानन्द।
7. वर्मा. डा. विश्वनाथ प्रसाद, आधुनिक भारतीय राजनैतिक चिन्तक
8. द कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द
9. द कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द
10. द कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द.
11. वर्मा. डा. विश्वनाथ प्रसाद, आधुनिक भारतीय राजनैतिक चिन्तक
12. कम्पलीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द
13. डॉ. अमरेश्वर अवस्थी एवं डॉ. अवस्थी' आधुनिक भारतीय सामाजिक एवं राजनैतिक चिन्तक. रिसर्च जयपुर. 1990.
14. वही. पृ. 95
15. सिंह प्रताप. आधुनिक भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास, रिसर्च जयपुर
16. वर्मा. डा. विश्वनाथ प्रसाद, मार्कसिज्म एण्ड वेदान्त. द विश्वभारती क्राटली, 1954

सामाजिक वानिकी और पर्यावरण

डॉ. अर्चना भार्गव *

पर्यावरण को स्वच्छ बनाने और सामाजिक आर्थिक उत्थान के लिए सामाजिक वानिकी को अपनाना आज की अनिवार्यता है। अकेले पर्यावरण को ही लें, यदि सामाजिक वानिकी को विस्तृत एवं सफलतापूर्वक लागू किया जाता है तो उसके कई रचनात्मक प्रभाव सामने आते हैं जैसे- जलीय संतुलन में सुधार, जलविभाजकों से जल का उत्पादन, मिट्टी की भौतिक परिस्थितियों में सुधार, उनकी जल शोषण शक्ति में सुधार, बाढ़ पर नियंत्रण, कार्बन या जैविक तत्वों का फिर से उपयोग, वाष्पोत्सर्जन के जरिये अधिक वर्षा, आक्सीजन आपूर्ति, कार्बन डाईआक्साइड तथा ओजोन परत का संतुलन, अधिक खाद्यान्न उत्पादन के लिए अनुकूल जलवायु स्थितियों का निर्माण।

'सोशल फॅारेस्टरी' यानि सामाजिक वानिकी शब्द का प्रयोग सबसे पहले वेस्टॉबी ने 1968 ई में नौवे राष्ट्रमण्डलीय वानिकी सम्मेलन में अपने भाषण में किया था। उनके अनुसार ''सामाजिक वानिकी एक ऐसी वानिकी है जिसका उद्देश्य सामुदायिक हितों का पुनर्सृजन और पर्यावरण संरक्षण पर ध्यान देना है।''

श्रीवास्तव एवं राव के अनुसार ''सामाजिक वानिकी समाज की सहभागिता के आधर पर वनीकरण की एक ऐसी बहुउद्देशीय योजना है जो पर्यावरण सुधार के साथ सहभागी लोगों की ईंधन, चारा और लकड़ी की आवश्यकता पूरी कर सके।''

अधिक सार्थक परिभाषा इस प्रकार से दी जा सकती है-''एक ऐसी वानिकी जो लोगों द्वारा लोगो के लिए हो, उनकी पांच आवश्यकताओं अर्थात- पांच F- Food, Fruit, Fiber, Fodder, Fertilizer (भोजन, फल, रेशे, चारा, उर्वरक) की पूर्ति कर सके।''

'द स्टेट आफ द फॉरेस्ट रिपोर्ट' (2011) के अनुसार भारत में कुल वनाच्छादित क्षेत्र 692027 वर्ग किमी है। जो देश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 23.11 प्रतिशत है। मध्यप्रदेश में यह सर्वाधिक 30.72 प्रतिशत है। भारतीय वनों की औसत उत्पादकता 0.5 घनमीटर प्रति हेक्टेयर है जो कि अन्तर्राष्ट्रीय औसत 2.1 घनमीटर के मुकाबले बहुत कम है।

भारतीय सर्वेक्षण और राष्ट्रीय सुदूरसंवेदी एजेंसी के अनुसार कुल वन भूमि के 12.68 प्रतिशत में घने जंगल, 7.97 प्रतिशत खुले जंगल केवल 2.48 प्रतिशत भाग सामाजिक वानिकी के अंतर्गत हैं। माना जा रहा है कि विकृत भूमि में से प्रतिवर्ष एक करोड़ हेक्टेयर भूमि को वन क्षेत्र बनाने की आवश्यकता है ताकि 2017 तक वन क्षेत्र को 33 प्रतिशत के लक्ष्य तक बढ़ाया जा सके। इस लक्ष्य प्राप्ति में सामाजिक वानिकी सहायक हो सकती है। हरित भारत मिशन जो कि राष्ट्रीय कार्य योजना (2008) का एक मिशन है, इसका लक्ष्य वर्ष 2011-12 के दौरान 80 लाख हेक्टेयर क्षेत्र को सामाजिक वानिकी के अंतर्गत लाना है।

राष्ट्रीय कृषि आयोग ने (1976) सामाजिक वानिकी को मोटे तौर पर तीन भागों में विभक्त किया है-

* कृषि वानिकी * ग्रामीण वानिकी * शहरी वानिकी।

1. कृषि वानिकी- यह कृषि को वानिकी के साथ जोड़ती है। जगदीश सिंह के अनुसार ''कृषि वानिकी सबसे कम लागत पर आर्थिक दृष्टि से अत्यंत लाभकारी वन रोपण का माध्यम है।'' यह एक नया प्रयोग है जिसका दूरगामी महत्व अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान कर कृषक समुदाय को लाभ पहुंचाना है।

(1) उनकी संतुलित अर्थव्यवस्था का विकास और उन्हें आत्मनिर्भर बनाना।

(2) ईंधन की लकड़ी, छोटी मोटी इमारती लकड़ी और चारा उपलब्ध कराना।

(3) राजस्व का अतिरिक्त स्त्रोत।

भौतिक दृष्टि से वनस्पति क्षेत्र मिट्टी को मजबूती प्रदान करता है। नमी संरक्षण में भूमि की सहायता करता है। वायु और जल प्रदूषण को रोकता है। खेतों की पुश्तों पर लगाये गये पेड़ आमतौर पर दो भूखंडो के बीच बाड़ का काम करते हैं और रेगिस्तान की आशंका वाले क्षेत्रों में सुरक्षा कवच प्रदान करते हैं। किन्तु खेतो की फसलों व पेड़ों की परस्पर सफलता के लिये कृषि फसलों के अनुरूप पेड़ों की रूपरेखा तैयार करना अत्यंत आवश्यक है।

भारत में हरित क्रांति का लक्ष्य तभी हासिल किया जा सकता है जबकि किसान ईंधन, चारे, खाद, छोटी-मोटी इमारती लकड़ी के लिये आत्मनिर्भर हो जाये अत: कृषि वानिकी हरित क्रांति को सफल बनाने का एक महत्वपूर्ण साधन है।

2. ग्रामीण वानिकी- ग्रामीण वानिकी को 'विस्तार वानिकी' भी कहा जाता है। इसके द्वारा सामुदायिक और पंचवर्ती भूमि, सड़क और रेलवे लाइन के साथ-साथ नहरों के किनारे वृक्षारोपण किया जाता है।

इस वानिकी में उत्खनन के कारण विकृत हुए क्षेत्रों को फिर से उपयोगी बनाना, सड़कों का निर्माण, ईंट बनाने जैसे कार्य भी शामिल हैं। ग्रामीण वानिकी में वृक्ष संसाधनों की सहायता से अनेक कुटीर उद्योग विकसित किए जा सकते हैं। शहद, नीम, महुआ, रेशम, कॉफी के बीजों से तेल निकालना, शीशम और सीकर की लकड़ी से घरेलू फर्नीचर बनाना, चारे से डेयरी उद्योग चलाना सम्मिलित हैं। इस वानिकी का उद्देश्य पर्यावरण संवर्धन के साथ ग्रामीण समुदाय की आवश्यकता को पूरा करना है।

3. शहरी वानिकी- शहरी वानिकी में घरों, मार्गों एवं खाली पड़ी भूमि की सजावट तथा कस्बों और शहरों में पेड़-पौधों की संख्या बढ़ाने पर बल दिया जाता है। विभिन्न मौसमो के दौरान सजावटी किस्म के फूलदार और फलदार पौधे सड़क के किनारे एवं खाली पड़ी भूमि पर लगाये जाते है।

मुम्बई में बोरीवली पार्क, लखनऊ में काकुल वन, बैंगलोर में वृंदावन पार्क ऐसी उपलब्धियों के कुछ उदाहरण है। छोटे-छोटे शहरो में भी स्थानीय लोगों की सहायता से इस प्रकार के स्वास्थ्य स्थल विकसित कर सकते हैं। वर्तमान में व्यवसायिक वानिकी जोर पकड़ रही है।

अनेक व्यवासायिक संगठन/कम्पनियाँ अपने साधनों से खुली भूमि पटटे पर लेकर वृक्षारोपण करने लगीं हैं और बदले में बीस साल बाद निवेश का प्रतिदान नकद या वृक्ष के रूप में देने का वादा कर पूंजी निवेश को बढ़ावा दे रहे हैं।

* सहायक प्राध्यापक, भूगोल विभाग, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)

उपरोक्त तीनों प्रकार की वानिकी में विस्तार कार्य की संभावनायें काफी हैं। परन्तु विस्तार जटिल हैं क्योंकि खेती–बाड़ी के परिणाम कुछ ही महिनों में सामने आते हैं, वृक्षारोपण का फल वर्षों बाद मिलता है। इस समस्या के लिए जल्दी उगने वाली प्रजातियाँ विकसित की गई हैं। तीन दशक पहले हम आयात पर निर्भर थे लेकिन अब ऐसा नहीं है। यह सफलता एक सामान्य फार्मूले पर आधारित है–

टेक्नोलॉजी + विस्तार = सफलता (गुप्ता, संजीव, पेज 210)

सफलता के दो अनिवार्य घटक हैं–

(1) ऐसी प्रजातियों के लिए टेक्नोलॉजी का विकास, जो सामाजिक आवश्यकताओं को बेहतर ढंग से पूरा कर सके।

(2) समुचित व्यवसायिक क्षमता के साथ संस्थागत विस्तार गतिविधियाँ और आम आदमी से उचित सहयोग की अपील।

सामाजिक वानिकी गतिविधियों के सम्बंध में अनुसंधान का सुदृढ़ आधार तैयार किये जाने की आवश्यकता है। वानिकी विस्तार के कुछ उपाय निम्न हैं–

(1) प्रबंध तकनीकी के प्रशिक्षण कार्यक्रम में किसानों को बीज, छोटे पौधे उपलब्ध कराना।

(2) ग्रामवासियों को समझाना कि नष्ट न होने वाले और गैर व्यवसायिक पौधों की प्रजातियों और झाड़ियों को ही ईंधन के रुप में इस्तेमाल करें।

(3) आग और पशुचारण से वनों की सुरक्षा।

(4) अधिक चारा खाने वाले मवेशी के स्थान पर जर्सी गाय आदि पाले।

(5) वन महोत्सव एवं वृक्षारोपण आदि कार्यक्रमों में अधिकाधिक बच्चों और युवाओं को शामिल करना।

(6) कृषकों को कृषि के साथ बागवानी के लिये प्रेरित करना।

(7) योजनाबद्ध विस्तार नीतियाँ, गैर सरकारी संगठन और शैक्षिक संगठनों को शामिल करते हुए भागीदारी पूर्ण दृष्टि अपनाना होगी। मानवीय अस्तित्व और मानव उत्थान के लिये चीन के अनुभव हमारे लिये प्रासंगिक हैं।

संदर्भ सूची

- 'द स्टेट ऑफ द फारेस्ट रिपोर्ट' 2011, फारेस्ट सवे ऑफ इण्डिया, देहरादून
- सिंह,जगदीश पर्यावरण एवं संविकास, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2001 पेज 201–203
- सिंह, सविन्द्र, पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 1999
- श्रीवास्तव एवं राव, पर्यावरण और पारिस्थैतिकी, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, 1995 पेज 106,
- गुप्ता, संजीव, पारिस्थैतिकी एवं पर्यावरण, लुसेंटस पब्लिकेशन्स, पटना 2012

****

लोकतंत्र और राजनीतिक सुधार

डॉ. अनिल दीक्षित *

मानव जाति के प्रारम्भिक काल से लेकर अब तक विभिन्न प्रकार की शासन व्यवस्थाए? विद्यमान रही हैं और शासन के इन विभिन्न रूपों का मानव जाति के राजनीतिक विकास में विशेष महत्व रहा है। लोकतंत्र आज के समय की सर्वाधिक लोकप्रिय धारणा है। और अपने आपको लोकतंत्रवादी कहना 20 वीं सदी के उत्तरार्द्ध का फैशन बन गया है। आज प्रत्येक व्यक्ति अपने आपको लोकतंत्रवादी कहता है। अरस्तु के समय से लेकर आज तक साधारणतया शासन के 3 रूप प्रचलित रहे है – राजतंत्र, कुलीनतंत्र और लोकतंत्र।

शासन के प्रकार के रूप में लोकतंत्र 'शासन की शक्ति' से होता है। इस प्रकार के रूप में लोकतंत्र उस शासन की प्रणाली को कहते हैं जिनमें जनता स्वयं अप्रत्यक्ष रूप से अपने प्रतिनिधियों के द्वारा सम्पूर्ण जनता के हित को दृष्टि में रखकर शासन करती है। लोकतंत्र की मूल भावना मुख्य तीन बातों पर निर्भर करती है –

- **जनता का प्रतिनिधित्व** – इसमें जनता की प्रतिनिधि सरकार द्वारा ही शासन किया जाता है।
- **जनता के हितो का रक्षण** – लोकतंत्र में सरकार सदैव एक साधन के रूप में होती है, साध्य के रूप में नहीं।
- **जनता के प्रति उत्तरदायित्व** – सरकार जनता के प्रति उत्तरदायी होती है। अगर सरकार जनता की अनदेखी करती है तो जनता को यह अधिकार है कि सर्वसाधारण द्वारा शासन में परिवर्तन किया जा सकता है।

राज्य के प्रकार के रूप में यह अनुभव किया गया कि जनता के प्रतिनिधि भी कम से कम एक निश्चित समय तक राजा या कुलीन वर्ग के समान ही शक्ति का भ्रष्ट रूप से प्रयोग कर सकते हैं। इसी बात को लक्ष्य करते हुए रूसो ने ब्रिटिश प्रजातंत्र पर कटाक्ष किया कि *'इंग्लैण्ड केवल चुनाव के दिन ही स्वतंत्र होता है'।* लोकतंत्र को वास्तविक रूप में जनता के प्रति उत्तरदायी बनाने के लिए यह आवश्यक है कि जनता न केवल अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करे वरन् वह अपने प्रतिनिधियों पर व्यवहार में नियंत्रण भी रखे और अंतिम रूप से महत्वपूर्ण राजनीतिक नियमों का निर्णय जनता द्वारा ही किया जाय।

समाज के प्रकार के रूप में लोकतंत्र से उस समाज का ज्ञान होता है जिसके अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति का मूल्य व्यक्ति रूप में ही होता है और जाति, रंग, लिंग सम्पत्ति और धर्म के भेद के बिना सभी व्यक्ति समान समझे जाते हैं तथा समान अधिकार एवं अवसर का उपयोग करते हैं। डॉ. हर्नशा के अनुसार – 'लोकतांत्रिक समाज वह है जिसमें समानता के विचार की प्रबलता हो तथा जिसमें समानता का सिद्धान्त प्रचलित हो।'

आर्थिक व्यवस्था के प्रकार के रूप में – लोकतंत्र में मानवीय जीवन में अर्थ का एक विशेष स्थान हो गया है। मानव के सभी कार्य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से –अर्थ से ही चालित होते हैं। आर्थिक लोकतंत्र का मतलब आर्थिक समानता की स्थापना से है। इसका तात्पर्य केवल यह है कि सभी व्यक्तियों को जीवन की ऐसी सामान्य सुविधाएं प्राप्त होनी चाहिए जिसके आधार पर वे अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास कर सकें। सभी व्यक्तियों को आवश्यक रूप से 'आर्थिक न्यूनतम' प्रदान किया जाना चाहिए।

लोकतंत्र मानवीय सभ्यता और व्यक्ति के रूप में महत्व पर आधारित एक ऐसा जीवन मार्ग है जिसका उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन के इन विविध क्षेत्रों में अधिकाधिक समानता की स्थापना करना और एक सहयोगी समाज की रचना करना है।

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद एक संविधान सभा की स्थापना की गई थी जिसने 26 नवम्बर, 1949 को संविधान निर्माण का कार्य पूर्ण किया और 26 जनवरी, 1950 से संविधान लागू किया गया। संविधान द्वारा भारत में एक प्रजातंत्रात्मक गणराज्य की स्थापना की गई और प्रजातंत्र के आधारभूत सिद्धान्त *वयस्क मताधिकार* को स्वीकार किया गया है। संविधान द्वारा धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना की गई और नागरिकों को शासन के हस्तक्षेप से स्वतंत्र रूप में मौलिक अधिकार प्रदान किए गए है। व्यवहार में भी भारतीय नागरिक इन स्वतंत्रताओं का पूर्ण उपयोग कर रहे हैं। भारतीय संविधान आदर्श रूप में लोकतंत्रात्मक संविधान है।

संविधान निर्माण के समय संविधान सभा के अन्दर व बाहर भारत व विदेशों में भारतीय जनता की जागरूकता के प्रति बहुत अधिक शंका व्यक्त की गई थी लेकिन अब तक जिस विवेक के आधार पर अपनी राजनीतिक शक्ति का प्रयोग किया है, उसके आधार पर कहा जा सकता है कि भारतीय नागरिक एक प्रजातांत्रिक देश के सुयोग्य नागरिकों के समान आचरण कर सकते हैं। भारतीय जनता कुछ वर्षो में कई बार अपनी राजनीतिक जगरूकता और परिपक्वता तथा लोकतंत्र के प्रति अपनी राजनीतिक जागरूकता और परिपक्वता तथा लोकतंत्र के प्रति अपनी आस्था का परिचय दे चुकी है। मार्च 1977 ई. के लोकसभा चुनाव में उसके अधिनायकवाद की ओर बढ़ती हुई प्रवृत्तियों का विरोध करते हुए लोकतंत्र का समर्थन किया गया। लेकिन जब शासन के संचालन में तत्कालीन शासक वर्ग की अक्षमता स्पष्ट हो गई और केन्द्र में राजनीतिक अस्थायित्व की स्थिति पैदा होने लगी, तब जनता ने इस राजनीतिक सत्य को समझा कि लोकतंत्रीय व्यवस्था और देश के हित में क्षमतावान शासन तथा राजनीतिक स्थायित्व आवश्यक है। भारत पहला विकासशील देश है जिसने मतपेटी के आधार पर कई बार (1977, 1980 तथा 1998) सत्तापरिवर्तन किया।

भारतीय प्रजातंत्र के मार्ग में निश्चित रूप से कई बाधाएं हैं। लगभग 66 वर्षो के समय में बार–बार और उंचे स्वरों में **समाजवादी ढांचे के समाज** की स्थापना की घोषणा करके भी आर्थिक विकास की दिशा में नहीं के बराबर ही प्रगति हुई है। जैसा कि बी.के. नेहरू ने कहा है – *'विश्व के कम विकसित देशों के स्तर से भी यदि आंका जाय, तो भारत सर्वाधिक निर्धन श्रेणी में आता है।'* शिक्षित बेरोजबारी, जनसंख्या, भ्रष्टाचार, महंगाई आज देश के विकास में बाधक बने हुए हैं।

भारत में लोकतांत्रिक और संसदीय परम्पराओं का सामान्यतया अभाव है और इसी कारण राष्ट्रपति एवं राज्यपाल आदि पदधारी व्यक्तियों के आचरण के संबंध में निरंतर विवाद उत्पन्न होते रहते है, जो स्वस्थ लोकतंत्र का परिचय नहीं देते। हड़ताल, भूख हड़ताल, प्रदर्शन और आंदोलन की प्रवृत्तियां भी समय–समय पर बहुत अधिक प्रबल हो उठती हैं जिन्हें संयमित किया जाना नितान्त आवश्यक है। भारत जैसे विकासशील देश का लक्ष्य अनुशासित लोकतंत्र ही हो सकता है।

वर्तमान में लोकतंत्र परिपक्वता की स्थिति में नजर नहीं आ रहा है। चारों तरफ राजनीतिक दल अपनी पहचान खोते नजर आ रहे है। चुनाव के समय सभी दल अपना घोषण–पत्र जारी करते हैं, लेकिन उनके पास भ्रष्टाचार से निपटने की कोई तरकीब है या नहीं ? अगर आजादी का आन्दोलन छोड़ दें तो बुराइयों को लेकर जन आक्रोश कई शताब्दियों की गुलामी और उससे जनित जुमला **'कोउ नृप होउ हमहि नहीं हानि'** के शाश्वत भाव की भेंट चढ़ता रहा है। देश में शीर्ष से लेकर नीचे तक व्याप्त भ्रष्टाचार का सांप पूरे समाज को डसता रहा है, लेकिन व्यवस्था ने कभी किसी व्यक्ति को ऐसी सजा नहीं दी जिससे भ्रष्टाचारी के मन में डर पैदा हो और जनता के मन में व्यवस्था के प्रति सम्मान। चूंकि दासत्व की जर्बदस्त भावना सत्ताके प्रति आक्रोश की जगह उदासीनता पैदा करती है। इसलिए चुनाव के समय भी भ्रष्टाचार मुख्य मुद्दा नहीं बन पाता। मुद्दा बनता है तो मंदिर–मस्जिद, जाति रॉबिन हुड इमेज वाला अपराधी नेता।

* सहा. प्राध्यापक राजनीति विज्ञान, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

भारत में प्रभावी कानून जो इस क्रांति को जन्म दे, बन ही नहीं पाता क्योंकि एक बड़ा वर्ग जो चुनाव जीतकर आता है, वह जनता का प्रतिनिधि कम, बाहुल्य, धनबल या जाति व्यवस्था की कुरीति का उत्पाद होता है। लंदन स्थित ग्लोबल करप्सन बैरोमीटर – 2013 ने दुनियां के 107 देशों के करीब 1,69,000 लोगों से उनके देश में भ्रष्टाचार के बारे में सर्वेक्षण किया।

विश्व के अन्य देशों में औसतन 27 प्रतिशत लोगों ने कहा कि पिछले 12 महीनों में उन्हें रिश्वत देनी पड़ी है, वही भारत के 54 प्रतिशत लोगों ने इस बात को कबूल किया कि यानि भारत में घूस का प्रतिशत दो गुना रहा। सर्वेक्षण के बतौर भारत में प्रमुख समस्याओं में व्याप्त भ्रष्टाचार की बात की जाय तो लोगों ने राजनीतिक दलों को सबसे ज्यादा भ्रष्टाचार और इस पैमाने पर राजनीतिक वर्ग को पांच में से 4–4 अंक मिले। भारतीय प्रजातंत्र की एक खूबसूरती है। देर से ही सही कोई न कोई संस्था अचानक जन विश्वास जीतती हुई आ खड़ी होती है और वह अन्य भ्रष्ट संस्थाओं पर लगाम कसना शुरू कर देती है। आज देश में यह काम सर्वोच्च न्यायालय कर रहा है। कुछ उदाहरण भ्रष्टाचार के लें तो मसलन 2 जी घोटाला, राष्ट्रमंडल खेल घोटाला, कोयला आदि। उ.प्र. में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन 8800 करोड़ में से 5000 करोड़ रूपये सरकारी अधिकारी, मंत्री से लेकर सन्त्री हजम कर गए।

आज लोकसभा में कुल 543 में से 162 सांसदो पर, खुद उन्हीं के हलफनामों के अनुसार आपराधिक मामले चल रहे हैं इनमें से 102 पर गम्भीर और 76 पर जघन्य अपराध के मामले हैं यानी हर तीसरा जनता का प्रतिनिधि अपराधी है। झारखण्ड में ऐसे आपराधिक छवि वाले लोगों का बहुमत (54 प्रतिशत) है।

सम्पूर्ण देश आज राजनीतिक सुधार चाहता है कहते हैं कि कलयुग में देवता 33 करोड़ तथा असुर 99 करोड़ होते हैं। चार में से तीन व्यक्ति आसुरी गुणों से ओत–प्रोत होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति के शरीर में देवता और असुर दोनों वास करते हैं, कब कौन सामने आ जाय। शायद यह तथ्य माननीय उच्चतम न्यायालय को समझ में आ गया और फैसला सुना दिया। फैसले में यह भी जोड़ देना चाहिए कि यदि ऐसे असुर खुले में घूम रहे हों, विधानसभा और संसद में बैठते हों, तब शीर्ष अधिकारियों सदन के अध्यक्षों को भी सजा दी जाएगी। पिछले कुछ वर्षों में कई न्यायाधीश भी पुलिस को सहयोग करते देखे गए है।

दुनियां के दो लोकतंत्रों की तुलना की गई है।

क्रं.	भारतीय लोकतंत्र	अमरीकी लोकतंत्र
1	भारतीय विधायिका में 31% दागी जन प्रतिनिधि है।	अमरीकी सदन में 0% दागी प्रतिनिधि हैं।
2	राजनीति में अपराधियों पर रोक के लिए कानून हैं, लेकिन वे नहीं रूकते।	यहां दोषियों को रोकने के लिए काननू नहीं हैं, लेकिन इस परिपक्व लोकतंत्र में कोई भी दागी नेता नहीं बन सकता।

भारत में 141 सांसद–विधायकों ने अपने खिलाफ हत्या के मामलों की, 352 ने हत्या के प्रयास, 145 ने चोरी, 90 ने अपहरण और 75 ने डकैती, 06 ने बलात्कार के मामलों की घोषणा की। भारत में लगभग 31 प्रतिशत सांसद–विधायकों ने हलफनामें आपराधिक मामलों की घोषणा की। देश पर उपकार करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने राजनीतिक सुधार को लेकर दो बड़े ही ऐतिहासिक फैसले दिए हैं। वैसे बड़ी राहत सुप्रीम कोर्ट ने मौजूदा अपराधी नेताओं के लिए खुद ही दे दी है कि यह फैसला आगे से लागू होगा। जो लोग भविष्य में सजा पायेंगे, वो पद पर नहीं रह पायेगे।

कानून में अभी तक यह भेदभाव था कि सांसद–विधायक सजा होने के बाद भी सदस्य रह सकते थे, पर कोई इस फैसले के बाद उनकी सदस्यता भी चली जायेगी। होना भी यही चाहिए, कोई सजा पाने वाला व्यक्ति आखिर सदन में क्यों बैठा रहे। उसकी सही जगह तो जेल है। राजनीति में अपराधीकरण को तोड़ने के लिए बहुत समय से ऐसे कानून की जरूरत थी। सुप्रीम कोर्ट का फैसला निर्वाचन सुधार की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। राजनीति और निर्वाचन व्यवस्था में जो भयंकर अपराधीकरण दश्कों से हो रहा है, उस पर कुछ रोक जरूर लगेगी। निर्वाचन प्रक्रिया में आज बड़ी समस्या धनबल की है। राजनीति और चुनाव में खर्च होने वाला करोड़ों रूपया अपराध की दुनिया से आता है, जब तक इस पर चोट नहीं होगी, तब तक न्यायालयों के छोटे–मोटे फैसलों से हालात नहीं बदलेंगे। सुप्रीम कोर्ट ने जेल में बंद लोगों के चुनाव लड़ने पर रोक लगाई है। तो इलाहाबाद हाईकोर्ट ने जातिगत रैलियों पर रोक लगाई है।

भारत में चुनाव सुधार के लिए ये पांच कदम मील के पत्थर साबित होंगे।

- हर चुनाव से पहले उम्मीदवारों को शपथ पत्र देना अनिवार्य हो। गलत सूचना दें, तो जेल भेजा जाए और जुर्माना लगाया जाय।
- चुनाव खर्च सीमा को व्यावहारिक बनाया जाय। खर्च की निगरानी हो, ज्यादा खर्च करने वालों को ब्लैक लिस्ट किया जाय।
- जन प्रतिनिधि अपनी शपथ के अनुरूप कार्य न कर रहा हो, तो मतदाताओं के पास 'राइट टू रिकॉल' का हथियार होना चाहिए।
- पार्टियों की कार्यप्रणाली पारदर्शी रहे, वे जवाबदेह बनें, उनके नेताओं की पूरी 'राजनीतिक कुंडली' वेबसाइट पर मौजूद हों।
- नो वोट की सुविधा हो। यदि किसी भी उम्मीदवार को 51 प्रतिशत वोट न मिले, तो पहले व दूसरे स्थान के उम्मीदवार के बीच चुनाव हो।

राजनैतिक सुधार का इन पर दारोमदार है। केवल समय पर चुनाव होना ही अच्छे लोकतंत्र की निशानी नहीं है। लोकतंत्र तभी सार्थक होगा, जब वह साफ–सुथरा और न्यायपूर्ण हो। लोकतंत्र में सुधार की जिम्मेदारी इन तीनों पर सर्वाधिक है –

सुप्रीम कोर्ट – अदालतों पर लोगों का बहुत भरोसा है। जजों न्यायधीशों को जनता की उम्मीदों पर खरा उतरना चाहिए, वरना दबंग वर्ग या नेताओं के प्रति अनावश्यक नरमी देश को डुबो देगी।

प्रतिनिधि राजनेता – अब शर्म आनी चाहिए। अगस्त 1997 को लोकसभा में राजनीतिक दलों ने संकल्प लिया, राजनीति को अपराधीकरण से बचायेंगे, लेकिन 1998 के चुनाव में ही सभी ने अपराधियों को भी टिकिट बाट दिए।

और हम जनता – महात्मा गांधी ने कहा था, 'उदासीनता अपराध होती है' यह समझने का समय आ गया है। हम लोग ठान लें तो कोई दागी विधानसभा–संसद तो दूर, ग्राम पंचायतों में भी कदम नहीं रख सकता।?

लोकतंत्र का हित और राजनीति की मैली होती गंगा को सुधारने के लिए राजनीतिक दलों को अपनी तरफ से पहल करके जो काम करना चाहिए था, उसे अदालत को क्यों करना पड़े ? देश के राजनीतिक व्यवस्था में आम लोगों का विश्वास कम हो रहा है, तो उसका सीधा कारण राजनीति में अपराधीकरण व भ्रष्टाचार का प्रभुत्व दिखाई दे रहा है। जिसके कारण संसद और विधानसभाओं की पहचान भी शामिल होती जा रही है। सार्थक बहस का स्थान इन सदनों में होने वाले हंगामें और शोरगुल ने ले लिया है।

अकसर देखने में आता है कि जनहित के मुद्दों पर सदनों को कोरम तक पूरा नहीं हो पाता। इसके लिए कोई दल दोषी नहीं है। अपने फायदे के लिए सभी दल मिलकर ऐसा माहौल कायम कर रहे हैं, जहाँ चुनावी जीत ही राजनीति का एक मात्र मकसद नजर आने लगा है। ऐसे में अगर सुप्रीम कोर्ट व्यवस्था को सुधारने के लिए आगे आ रहा है तो राजनीतिक दलों को उसका समर्थन करना चाहिए। सुप्रीम कोर्ट का फैसला कायम रहना लोकतंत्र को मजबूत बनाने की दिशा में अच्छी पहल है। राजनीतिक दलों की भी इस पहल का स्वागत करते हुए इसके अमल की दिशा में तैयारी शुरू कर देनी चाहिए। यह लोकतंत्र के हित में भी होगा और देश के हित में भी।

संदर्भ सूची –

(1) डॉ. पुखराज जैन व डॉ. बी.एल. फड़िया – राजनीतिक सिद्धान्त (पारम्परिक व समकालीन)।
(2) रिसर्च लिंक – सुदृढ़ लोकतंत्र का आधार। मई, 2013।
(3) रचना – 13 जुलाई, 2013।
(4) पत्रिका – 14, 15 जुलाई, 2013।
(5) पत्रिका – 5 सितम्बर, 2013।

1857 का स्वतंत्रता संग्राम ''जनक्रांति की वास्तविकता एवं दलित''

डॉ. वन्दना मालवीया *

अठारह सौ सत्तावन के विद्रोह का राष्ट्रीय विद्रोह के रूप में देखने की प्रवृत्ति की शुरूआत बीसवीं सदी के प्रथम दशक की घटना है। इसके पूर्व हिन्दी साहित्य और पत्रकारिता में इसे ''बलवा'' या ''गदर'' ही समझा जाता रहा। इतिहासकार भी मानते हैं कि उन्नीसवीं सदी के मूर्धन्य लेखकों-पत्रकारों के लिये 1857 एक ''भूल का समय'' था जिसमें तूफान ने सबकुछ तहस-नहस कर दिया।

यह विश्लेषण इसलिये जरूरी है क्योंकि 1857 का वास्तविक चरित्र निरंतर विवादों के घेरे में है। औपनिवेशक काल से लेकर आज तक इसके प्रति कई प्रकार के दृष्टिकोण अपनाए गए हैं। अंग्रेज समर्थक या सत्तासमर्थक इतिहासकारों ने इस घटना को कोरी ''सिपाही बगावत'' (सिपोय म्युटनी) से परिभाषित किया है। जबकि देशभक्त इतिहासकारों की दृष्टि में यह भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम था।

कतिपय इतिहासकार इसे जनक्रान्ति और जन विद्रोह की संज्ञा देते हैं। यह भी मानते हैं कि इसका स्वरूप अखिल भारतीय स्तर का था और इसमें समाज के सभी वर्गों ने शिरकत की थी। बल्कि पहली दफा इस घटना के माध्यम से भारतीय समाज के दो प्रमुख धार्मिक समुदायों हिन्दु और मुस्लिम की अद्धतीय एकता मुखरित हुई थी। इसने समाज के सभी वर्गों को कम-ज्यादा प्रभावित या उद्धेलित किया था। संक्षेप व स्पष्ट शब्दों में, भारतीय जन की अंतनिर्हित शक्ति आंदोलित हुई थी; शहर कस्बे और गांवों में अपने-अपने ढंग से मुक्ति की चेतना का संचार हुआ था।

वास्तव में कोई भी सामाजिक घटना अकस्मात नहीं घटती है। 1857 का विद्रोह भी अकस्मात नहीं हुआ। इसे वर्ग विशेष तक सीमित रखना भारी भूल होगी। 10 मई 1857 को जब मेरठ में सिपाहियों ने विद्रोह का झण्डा बुलन्द किया या उससे पहले मार्च के अंतिम सप्ताह में मंगल पाण्डे ने कोलकाता के पास बैरकपुर में हिंसक प्रतिरोध के स्वर बुलंद किये तो यह सब लंबे उत्पीड़न, शोषण, अन्याय एवं मानवीय स्थितियों की पराकाष्ठा थी। इस देश में 1857 से पहले भी हिंसात्मक विद्रोहों का इतिहास रहा है। इन विद्रोहों का चरित्र राष्ट्रव्यापी था। मिसाल के लिये उत्तर भारत एवं दक्षिण भारत दोनो ही जगह आदिवासियों व किसानों ने अंग्रेजों के खिलाफ हथियार उठाये थे।

इस संदर्भ में निम्न प्रमुख विद्रोहों का उल्लेख प्रासंगिक रहेगा: पहाड़िया सरदार विद्रोह (1778), सन्यासी विद्रोह (1763-1800), मिदनापुर विद्रोह (1766-67), रंगपुर व जोरहाट विद्रोह (1776-89), रंगपुर किसान विद्रोह (1783), रेशम कारीगर विद्रोह (1770-1800) वीर भूमि व विष्णुपुर विद्रोह (1788-89), मिदनापुर आदिवासी विद्रोह (1799), विजयनगरम् विद्रोह (1794), केरल में कोट्टायम विद्रोह (1794 व 1805), त्रावणकोर का वेलुथंबी विद्रोह (1808-09), वेल्लोर सिपाही विद्रोह (1806), पालीगरों का विद्रोह (1800-02), सिलहट विद्रोह (1787-99), खासी विद्रोह (1795-1805), बुन्देलखण्ड में मुखियाओं का विद्रोह (1808-12), कटक-पुरी विद्रोह (1817-18), खानदेश, धार व मालवा भील विद्रोह (1817 से 31) (1846 व 1852) छोटा नागपुर-पलामु-चाईभाष कौल विद्रोह (1820-37), बंगाल आर्मी बैरकपुर में पलाटुन विद्रोह (1828), गूर्जर विद्रोह (1824), भिवानी, हिसार व रोहतक विद्रोह (1824-26), कालपी विद्रोह (1824), खासी विद्रोह (1829-33), वहाबी आन्दोलन (1836-61) चौबीस परगना में ट्टिमीर आंदोलन (1831), मैसूर का किसान विद्रोह (1830-31), विशाखापट्नम का किसान विद्रोह (1830-33), संबलपुर का गौड़ विद्रोह (1833) सूरत का नमक आन्दोलन (1844), नागपुर विद्रोह (1848), नगा आन्दोलन (1848-78), हजारा में सैयद का विद्रोह (1852), रावलपिण्डी में नादिर खान का विद्रोह (1853), गुजरात का भील विद्रोह (1855-58), मुंडा विद्रोह (1834), महान का कौल विद्रोह (1831-32) जैसे विद्रोहों ने 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के लिये उर्वरक की भूमिका निभाई। इन विद्रोहों से भारतीयों के प्रतिरोध की राष्ट्रवादी तस्वीर भी उभरती है।''

सन् 1757 में प्लासी के युद्ध और 1857 के स्वतंत्रता संग्राम के बीच 100 वर्ष के कालखण्ड में काफी कुछ घटा। अंग्रेजों ने भारत के हर कोने में पैर जमाने का बहुआयामी अभियान चलाया। भारत की भौगोलिक विविधताओं को ध्यान में रखकर नई भू-व्यवस्थाए? लागू की गई, आदिवासी क्षेत्र में घुसपैठ की गई, देशी राजाओं के राज्य हड़पने के लिये कई प्रकार के हथकण्डों का प्रयोग किया गया। सामरिक व संचार व्यवस्थाओं के विस्तार के साथ ही विदेशी मिशनरी दूरस्थ इलाकों में पहुंचने लगी। भारत भाषाओं में पत्र पत्रिकाए निकलने के साथ ही सामाजिक सुधारों की प्रक्रिया भी शुरू हुई। बिगड़ी कृषि व्यवस्था और पड़ते अकालों के कारण हजारों लोग मरे। इन तमाम परिघटनाओं की पृष्ठभूमि में 1857 का मुक्ति संग्राम होता है।

यह सही है कि एक वर्ग राजा-महाराजाओं का, अंग्रेजों को समर्थन देता था। वही इस वर्ग का एक हिस्सा विद्रोहियों के साथ था। व्यक्तिगत एवं वर्गीय स्वार्थ में 1857 के संग्राम को असफल बनाने में भूमिका निभायी। 1857 के संग्राम के पश्चात् ही ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन का अंत हुआ और ब्रिटिश सरकार ने भारतीय औपनिवेशिक शासन की बागडोर सीधे अपने हाथ में ले ली।''

1857 की घटना से राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ यद्यपि इस सदी के अंत तक राष्ट्रीय स्तर के सशस्त्र संघर्ष के माध्यम से विदेशी हुकूमत को ध्वस्त करने की बात नहीं उठी। अंग्रेजी शासकों को समझ में आने लगा कि विभिन्न समुदायों के सामन्तों, व्यापारियों, शिक्षितों एवं समाज सुधारकों के ऐसे वर्गों को प्रोत्साहित किया जिनकी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष हमदर्दी अंग्रेजों के साथ थी।

विभिन्न धार्मिक समुदायों के द्वारा 1857 में प्रदर्शित आपसी एकता का काफी महत्व है। इससे पता चलता है कि सिक्ख एवं मुसलमानों ने किस तरह ब्राह्मणों के साथ मिलकर एक ध्येय के लिये लड़ा। तमाम समुदायों के बीच अंग्रेजी हुकूमत के विरूद्ध एक आम एकजुटता तेजी से आगे बढ़ी।

मार्क्स ने 28 जुलाई 1857 को लिखा-''भारतीय उथल-पुथल कोई सैनिक बगावत नहीं है, बल्कि यह एक राष्ट्रीय विद्रोह है उन्होंने यह भी दावा किया कि 'धीरे-धीरे ऐसे तथ्य सामने आते जाऐंगे, जिनसे स्वयं जॉन बुल को विश्वास हो जाएगा कि जिसे वह सिपाही विद्रोह समझते हैं वह वास्तव में

* सहा. प्राध्यापक राजनीति विज्ञान, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

एक राष्ट्रीय विद्रोह है।''

इन सारी बातों से बिल्कुल स्पष्ट है कि तमाम कमजोरियों, अंतर्विरोधों और अफरातफरी के बीच 1857 का विद्रोह बुनियादी तौर पर हिन्दु-मुस्लिम एकजुटता पर आधारित एक राष्ट्रीय मुक्ति युद्ध ही था।''[3]

भारत छोड़ देने के बाद अंग्रेजों के लिये 1857 भले ही एक अध्ययन का विषय भर रह गया हो, हमारे लिये आज भी यह एक जिंदा इतिहास है। याद कीजिये ''हिन्दु बहुल'' सेना के बगावती योद्धा बहादुरशाह जफर को बाइज्जत-बाइल्तजा अपना बादशाह घोषित कर रहे थे आज कुछ लोग ''बाबरी-बाबरी'' चिल्लाते हुए मस्जिदें और मजार तोड़ रहे हैं। अगर भारतीय राष्ट्र-राज्य को धर्मनिरपेक्ष-लोकतान्त्रिक राह पर बढ़ाते रहना है तो 1857 की उस कौमी जुटता को दफन होने से बचाना होगा।

लगभग 1 वर्ष तक चले इस महासमर की विरासत मंगल पाण्डे से शुरू होकर, बहादुरशाह जफर, नाना साहेब, तात्या टोपे, कुँवरसिंह, बेगम हजरत महज, रानी लक्ष्मीबाई, आदि से गुजरती हुई देश की ताकत बन पड़ती रही और 90 वर्ष बाद आजादी की ज्योति बनकर फिर चमक उठी जिसे मंद न पड़ने देने की जिम्मेदारी हम सबकी है।

हो सकता है कि 1857 की 150 वी वर्षगांठ के दौरान भारतीय जनता के इस महान संघर्ष की कई छूटी हुई कड़ियों की तलाश की जा सकेगी। खासकर दलित आदिवासी समुदाय की भूमिका उचित जगह पा सकेगी। दलित वीरांगना झलकारी बाई की चर्चा अब आगे चल पड़ी है।

इस काम को आगे बढ़ाने न केवल इतिहास अध्ययन को तथ्यपरख और समावेशी बनाने के लिये जरूरी है बल्कि भारतीय समाज में जारी ''केवल हम'' के वर्णवाद को भगाने के लिये जरूरी है। 1857 से हमें बहुत कुछ सीखना समझना है। कि हमें अहसास है कि ''देशी मन'' भूमण्डलीकरण के विदेशी मोह के इस दौर में हमें जरूर कुछ बुद्धि-विवेक स्वाभिमान दे सकता है। भारतीय इतिहास का यह विस्मयकारी क्षण को जीवंत बनाना होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. इंकलाब, 1857, पी.सी. जोशी, नेशनल बुक ट्रेस्ट, 2007
2. द इंडियन स्ट्रेगल एण्ड आफ्टर, नई दिल्ली
3. मार्क्स एजेंल्स, द फर्स्ट इण्डियन, वार ऑफ इंडिपेंडेंस
4. द वीक, साप्ताहिक, 26 नवम्बर 2006
5. द लॉस्ट मुगल, पेंगवीन, 2006
6. आजकल, मासिक, 2007 मई

****

ई-कामर्स में कॅरियर के अवसर

डॉ.लक्ष्मण परवाल *

ई-कामर्स या इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स पूरी तरह तकनीकी आधारित संचार व्यवस्था है, जो वर्तमान दौर में व्यापारिक समूह अपने ग्राहकों, व्यापार से संबंधित लोगों और आपूर्तिकर्ताओं को देते हैं। स्पष्ट शब्दों में अगर कहा जाए तो ई-कामर्स इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के माध्यम से किया जाने वाला व्यापार है, जिसे विश्व के सभी विकसित एवं विकासशील देश पूरी तरह स्वीकार कर चुके हैं। ई-कामर्स का चलन बढ़ने से व्यापारिक गतिविधियों में परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देने लगा है। आज इसी के माध्यम से देश के सभी बड़े एवं मध्यम वर्गीय व्यापारिक समूहों के बीच लेन-देन हो रहा है। व्यापार का यह तरीका कम्पनियों और उनके ग्राहकों के बीच एक मजबूत सेतु की तरह काम करता है। ई-कामर्स की ही देन है कि आज व्यक्ति जब भी चाहे देश-विदेश के किसी भी कोने बैठकर अपनी व्यापारिक गतिविधियों का संचालन कर सकता है। अब समय और दूरी का असर व्यापार पर नहीं पड़ता है। व्यापारिक संचार संवहन में होने वाला खर्च भी इससे काफी कम हो गया है और संदेश वाहक अपने संदेश दूसरों तक मिनटों एवं सेकण्डों में पहुँचा सकता है। कभी भी, कहीं भी और बहुत कम लागत के कारण ई-कामर्स अब व्यापार की अनिवार्य आवश्यकता बन गया है। जिस तरह इसका प्रचार-प्रसार हो रहा है, उसे देखकर निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि आने वाले समय में लगभग हर तरह का व्यापार पूरी तरह ई-कामर्स पर ही आधारित हो जायेगा। देश में कम्प्यूटर का उपयोग (विशेष इंटरनेट का उपयोग) करने वालों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है। कम्प्यूटरों की कीमत में प्रतिवर्ष हो रही कमी और इंटरनेट की सेवाएं देने वाली कम्पनियों के बीच तेज होती प्रतिस्पर्धा भी कहीं न कहीं ई-कामर्स के चलन को बढ़ाने का कार्य कर रही है। विदेशी कम्पनियों द्वारा प्रतिवर्ष भारत में किया जाना वाला बढ़ता निवेश देश में ई-कामर्स के उज्जवल भविष्य की ओर संकेत कर रहा है।

ई-कामर्स को आगे लाने में भारत सरकार भी लगातार प्रयास कर रही है। इसी संदर्भ में सूचना प्रौधोगिकी अधिनियम भी पास किया जा चुका है। इस अधिनियम के द्वारा किसी भी इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से किये गये व्यवहारों को सरकार ने मान्यता दी है, जिसमें इंटरनेट भी शामिल है।

ई-कामर्स में कॅरियर :- ई कॉमर्स में प्रवेश के लिये अनेक रास्ते हैं। कक्षा 12वीं के बाद देश के कई विश्वविद्यालय संयुक्त प्रवेश परीक्षा लेते हैं जिसमें कक्षा 10वीं की गणित, सामान्य ज्ञान, रिजनिंग, अंग्रेजी शब्दावली का टेस्ट होता है। इस टेस्ट को पास करने बाद युवाओं के पास ई-कामर्स में 05 वर्षीय इंटीग्रेटेड एम.बी.ए. करने का अवसर होता है। इसे करने के बाद युवाओं के पास अच्छे कॅरियर अवसर होते हैं। शैक्षणिक योग्यता 12वीं एवं स्नातक के पश्चात् देश में ई-कामर्स के संबंधित कई डिप्लोमा कोर्सेस चल रहे हैं, जो इस प्रकार हैं:-

शैक्षणिक योग्यता :-	
12वीं के पश्चात्	**स्नातक के पश्चात्**
1. ई-कामर्स एप्लीकेशन प्रोग्राम 2. सर्टिफिकेशन कोर्स इन वेब एंड ई-कामर्स टेक्नोलॉजी 3. सर्टिफि. इन वेब एंड इंटरनेट प्रोग्रामिंग 4. बैचलर ऑफ ई-कामर्स 5. बैचलर ऑफ बिजनेस एडमिनिट्रेशन इन ई-कामर्स	1. ई-कामर्स में एम.बी.ए. 2. मास्टर ऑफ बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन इन ई-कामर्स 3. मास्टर इन ई-कामर्स 4. मास्टर ऑफ इंजी. इन ई-कामर्स 5. मास्टर ऑफ सांईसइंफॉर्मेशन टेक्नोलॉजी एंड ई-कामर्स 6. मास्टर ऑफ साईंस इन ई-कामर्स एप्लीकेशन 7. मास्टर ऑफ इंफॉर्मेशन टेक्नोलॉजी ई-कामर्स 8. पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा इन ई-कामर्स एप्लीकेशन

विभिन्न क्षेत्रों में कार्य के अवसर :- ई-कामर्स से संबंधित उपरोक्त कोर्सों को करने के बाद युवाओं द्वारा निम्न क्षेत्रों में कार्य किया जा सकता है :-

❊ वेबसाईट डिजाइन और डेवलपर, ❊ कंटेट डेवलपर ❊ वेब प्रोग्रामिंग एंड एप्लीकेशन डेवलपर ❊ डाटाबेस एडमिनिस्ट्रेटर ❊ वेब मास्टर

वेबसाईट डिजाइन और डेवलपमेन्ट :- इसमें विशेष रूप से वेबसाइट लेआउट डिजाइन, वेब पेज पर ग्राफिक्स, एनिमेशन एवं आवश्यक टूल्स की मदद से वेबसाइट को आकर्षक बनाने का कार्य किया जाता है। इस कार्य के लिए युवाओं को इंटरनेट की जानकारी के साथ-साथ वेबसाईट निर्माण के उपयोग में आने वाले सभी आवश्यक टूल्स की जानकारी होना चाहिये। जिन युवाओं को कोरल ड्रा, फोटोशॉप, मैल्टीमीडिया फ्लेश आदि साफ्टवेयरों की जानकारी यदि है तो वे इस कार्य में बहुत आगे बढ़ सकते हैं।

कंटेंट डेवलपमेन्ट :- वेबसाईट और पोर्टल क्रिएशन के रिसर्च में लगे युवाओं और वेबसाईट पर प्रिंटेड मैटर देने वालों की ई-कामर्स के इस फील्ड में काफी डिमांड है। इसमें सूचनाएं निकालकर उनके विश्लेषण का कार्य किया जाता है। जिन युवाओं को अंग्रेजी, हिन्दी और कुछ क्षेत्रीय भाषाओं की जानकारी है तथा जिनकी कम्युनिकेशन स्किल अच्छी है वे कंटेंट डेवलपमेन्ट का काम बहुत अच्छी तरह से कर सकते हैं। जिन युवाओं को अंग्रेजी का ज्ञान अच्छा नहीं है उन्हें इस कार्य में परेशानी आ सकती है।

वेब प्रोग्रामिंग एंड एप्लीकेशन डेवलपमेन्ट :- यह कार्य उन युवाओं के लिये है जो एचटीएमएल, डीएचटीएमएल, जावा स्क्रिप्ट, वीबी स्क्रिप्ट आदि की अच्छी जानकारी रखते हों। इस क्षेत्र में वेब प्रोग्रामर कंपनी और उसके प्रोडक्ट को ध्यान में रखकर वेब पेज को आकर्षक बनाने का कार्य करता है। पुराने वेब पेज में नये फंक्शन डालकर उसे आधुनिक रूप देता है और उसे अधिक से अधिक उपयोगी बनाने का कार्य करता है। यह क्षेत्र ई-कामर्स का सर्वाधिक टेक्निकल जॉब माना जाता है।

डाटाबेस एडमिनिस्ट्रेटर :- डाटा बेस एडमिनिस्ट्रेटर, डाटा बेस सिस्टम की डिजाइन, डेवलपमेंट और मेंटीनेंस के लिये हमेशा व्यापारिक हितों एवं उपलब्ध सूचनाओं को ध्यान में रखकर कार्य करता है।

वेब मास्टर :- यह कार्य हार्डवेयर और साफ्टवेयर का ज्ञान रखने वाले युवा ही कर सकते हैं वेबसाईट को हैक होने से बचाना, वायरस से उसकी रक्षा करना एवं हार्डवेयर संबंधित समस्या के समाधान जैसे कार्य इस क्षेत्र में आते हैं। वेब मास्टर, वेब डिजाइनिंग और डेवलपमेंट टीम की रीढ होता है। वेबसाईट को चलाने की सम्पूर्ण जिम्मेदारी इसके कंधों पर ही होती है।

निष्कर्ष :- कॉमर्स में सीए, सीएस, आईसीडब्ल्यूए, एम.बी.ए. के साथ-साथ ई-कॉमर्स विषय में भी कॅरियर के अवसर बेहतर हुए हैं। वर्तमान में अधिकतर कंपनियां अपना व्यापार इलेक्ट्रॉनिक मीडिया या नेट पर कर रही है इससे वस्तु की खरीदी-बिक्री भी प्रतिवर्ष बढ़ रही है। नई कंपनियां अपने उत्पाद इंटरनेट के माध्यम से लोगों तक पहुँचा रही हैं। इससे इस क्षेत्र में दक्ष युवाओं की मांग भी बढ़ने लगी है। ऐसी स्थिति में ई-कॉमर्स में युवा अपना कॅरियर बना सकते हैं। ई-कामर्स में मैनेजमेंट और कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग, नेटवर्किंग का कार्य किया जाता है। इस कोर्स को करने के बाद युवाओं के लिये बड़ी कंपनियों में अच्छे पेकेज के साथ प्लेसमेंट होता है।

संदर्भ :- इंटरनेट से प्राप्त जानकारी के आधार पर

* प्राध्यापक वाणिज्य संकाय, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

भारत में ई-न्याय पद्धति

डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन *

वर्तमान शताब्दी विज्ञान और प्रोद्योगिकी की है। संसार को नये तरीके, उपकरण विभिन्न आविष्कारों और न्याय की पद्धति प्राप्त हो रही है। जीवन दिन-प्रतिदिन इन नवीन उपकरणों से जटिल होता जा रहा है। सूचना और संचार तकनीकी ने ब्रहमाण्ड साथ ला दिया है एवं दूरियॉ दिनों-दिन घट रही है। सूचना और संचार तकनीकी की सहायता से घर में बैठकर विदेशी तकनीकी और संचार की आधुनिक अविष्कारों की सहायता से अमरीका, अफ्रीका अथवा इंग्लैण्ड में निवासी अपने मित्रों से सीधा संपर्क किया जा सकता है।

वर्तमान विषय-वस्तु को समझने से पूर्व हमें सूचना एवं तकनीकी अधिनियम 2000 (एक्ट 21 से 2000) के उद्देश्य और कारणों का अध्ययन करना होगा। नवीन संचार तंत्र एवं डिजिटल तकनीकी ने हमारे जीवन जीने के तरीके में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया है। लोगों के व्यापारी एवं उपभोक्ता सूचनाओं का संग्रहण, परिवर्तन के लिये कम्प्यूटर का प्रयोग अपनी व्यापारिक शैली में घर बैठे कर रहे है।

वर्तमान युग में टेलीविजन, सेलफोन, मोबाईल, न्यूज़ पेपर एवं वीडियो कान्फ्रेसिंग, रेडियों, सूचना एवं संचार तकनीकी के महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं। इन स्त्रोंतो के द्वारा हमारा आपराधिक न्याय प्रशासन पद्धति, कामर्स, व्यापार एवं बैंकिग वर्ग में सुधार हो सकता है।

न्याय को अग्रसर करने में सूचना एवं संचार तकनीकी के रूप में कम्प्यूटर ने बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, तहसील स्तर से लेकर जिला एवं राज्य स्तर तक तुरंत न्याय प्रदान करने हेतु कम्प्यूटर ने विभिन्न न्यायालयों को एक-दूसरे से जोडा है। अपराधियों के विचारण एवं रिमाण्ड में अपराधी की विडियो- कांफ्रेसिंग द्वारा उसे गिरफ्तार करने की प्रक्रिया का अवलोकन एवं साक्षियों का परीक्षण उसके चेहरे का स्केच कम्प्यूटर द्वारा तैयार कर किया जाएगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय एवं विभिन्न उच्च न्यायालय के नवीन निर्णय पर पहुँच ई-न्याय पद्धति द्वारा संभव हो सका है। हमारे कम्प्यूटर पर हम लाइब्रेरी अपडेट कर उसमें विभिन्न कानूनों एवं संशोधनों का विस्त्रत अध्ययन कर सकते हैं। इंटरनेट पर विदेशी विधियाँ प्राप्त हो सकती है और इसके अनुसार हम अपने कानूनों का निर्वहन कर सकते हैं। यह सब सूचना एवं संचार तकनीकी के द्वारा ही संभव हो पाया हैं।

दस्तावेजों साक्ष्य, फैक्स अथवा ई-मेल से डिजिटल हस्ताक्षर द्वारा प्राप्त किये जा सकते हैं और ये वैध साक्ष्य के रूप में उपधारित होंगे। वीडियो एवं ऑडियो उपकरणों द्वारा वास्तविक अपराध की घटना देखी जा सकती है। न्यायालय को अपने निष्कर्ष तक पहुँचने हेतु अपराध की फोटोग्राफ दिखाई जा सकती है। सूचना एवं संचार तकनीकी की नवीन पद्धति द्वारा हेण्डरायटिंग साबित की जा सकती है।

नकली करैन्सी नोट, बैंकों में यू.वी. किरणों द्वारा पहचाने जा सकते हैं एव संचार तकनीकी की सहायता से, अभियोजन सबूत का भार उन्मोचित करेगा एवं अभियुक्त न्यायायाल द्वारा दण्डित होगा। सच्चाई तक पहुँचने के लिये कम्प्यूटर ग्राफिक्स तैयार किये जाएंगे एवं न्यायालय में पेश होंगे। कम्प्यूटर फोटो में चिन्हित करके विभिन्न अपराधी, ठग, डकैतों एवं आतंकवादियों को पकडा जाना संभव हो सका है। भारतीय दण्ड संहिता अधिनियम 1872 में संशोधन करने से एवं संबंधित अपराधों की रोकथाम हेतु प्रस्तावित ई-कॉमर्स पद्धति द्वारा क्रियान्वयन किया जाएगा।

अधिनियम के उदेद्श्य एवं कारण निम्न है :-

1. विभिन्न राज्यों के बीच आधुनिक व्यापार को बढावा एवं ई-कॉमर्स के क्रियान्वयन हेतु अधिनियम पारित किया गया।
2. अधिनियम वाणिज्य आधारित मुसीबतों का सामना करने हेतु तत्पर होगा।
3. विधि में परिवर्तन द्वारा डिजिटल हस्ताक्षर प्रमाण-पत्रों का भी विनिमय होगा।
4. दस्तावेजों, पेपर आधारित सौदों से संबंधित अपराधों की रोकथाम हेतु भारतीय दण्ड संहिता, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, रिजर्व बैंक साक्ष्य अधिनियम 1891 में संशोधन ई-कॉमर्स पद्धति द्वारा संभव होगा।

वर्तमान वैज्ञानिक संसार में साइबर अपराधों एवं ई-कॉमर्स कपट के द्वारा लोग भयभीत हैं, इसलिये आवश्यकता है कि भारतीय दण्ड संहिता, आपराधिक प्रक्रिया संहिता एवं साक्ष्य अधिनियम में पर्याप्त रूप से संशोधन हो।

संयुक्त राष्ट्रीय आयोग ने 1996 (UNCITRAL) इलेक्ट्रॉनिक वाणिज्य पर नवीन विधि अपनाई। संयुक्त राज्य की महासभा ने अनुशंसित किया कि सभी राज्यों को कथित मॉडल विधि, अनुकूल परिस्थितियों के अनुसार अपनाना चाहिये। जब वे इसे अधिनियमित एवं रिवाइज करते हैं। विश्व व्यापार पद्धति को बढावा न्याय के क्षेत्र में इलेक्ट्रिॉनिक वाणिज्य के आधार पर दिया जा रहा है।

ई-कॉमर्स को क्रियान्वित करने हेतु हमारे देश में व्याप्त विधियों में पर्याप्त संशोधनों की आवश्यकता है। इलेक्ट्रॉनिक माध्यम द्वारा अधिकारों एव आभारों की जानकारी, प्रमाणित प्राधिकारियों का निरीक्षण एवं अन्य कार्यवाही संचालन होगी।

प्रस्तावित विधायन के उपबंधों के अनुसार दीवानी एवं आपराधिक दायित्व के विरूद्ध वादों का निपटारा भी इसी के माध्यम से प्रस्तावित होगा। सरकारी कार्यालयों एवं एजेन्सी में इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड एवं डिजिटल हस्ताक्षरों का उपयोग ई-गवर्नेंस को बढावा देने हेतु क्रियान्वित है। इसके द्वारा नागरिकों का सीधे सरकारी कार्यालयों से संपर्क बिना मुसिबतों के हो सकेगा।

वर्तमान में साइबर अपराध तेजी से बढ रहे हैं और अभियुक्त परिवहन व्यवस्था द्वारा अपराध वाले स्थान से दूसरे स्थान पुलिस को धोखा देकर आसानी से पहुँच सकता है। इस प्रकार ये अपराध सूचना एवं संचार तकनीकी द्वारा आसानी से चिन्हित हो सकते हैं। जहाँ तक कारपोरेट अपराध का संबंध है वेब-साइटों को हेक किया जाना एक अपराध के रूप में यू.एस.ए. एवं यूरोप में प्रचलित है। भारत में सूचना तकनीकी का प्रयोग अच्छी क्वालिटी की फिल्मों हेतु किया गया है। परंतु कुछ अपराधी इस तकनीक का दुरूपयोग कर एवं रिश्वत के लिये देश को नुकसान पहुँचा रहे हैं।

सूचना तकनीककर्ताओं द्वारा विकसित बायो-इन्फोरमेटिक्स कहलाती है, इस तकनीक द्वारा अपराध के फिंगर-प्रिन्ट्स मिलान किये जाते हैं। बायो-टेक्नोलॉजी के अंतर्गत डी.एन.ए. परीक्षण होता है। यदि अपराधी

* प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू विधि महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)

अपराध करने से इंकार करता है।

मोटर यान से संबंधित अपराध एवं गाड़ियों की ओवर-स्पीड नियंत्रण को घूमते केमरों द्वारा चिन्हित किया जा सकता हैं एवं गाड़ियों को प्रभावी रूप से चेक किया जाना सूचना एवं संचार तकनीकी के माध्यम से संभव हो पाया है। शॉपिंग मॉल की सुरक्षा, एयरपोर्ट, रेल्वे स्टेशन एवं अन्य जगहों को छूपे कैमरों द्वारा निगरानी में लिया जाता है जिससे अभियुक्त को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जा सके।

फिल्म बेन करने की दशा में मामला निर्णय हेतु न्यायालय पहुँचता है। न्यायाधीश सही निर्णय देने हेतु आपत्तिजनक फिल्मों पर कार्यवाही ई-न्याय पद्धति द्वारा सम्पादित करते हैं। ''न्याय में देरी हो सकती है परंतु वंचित नहीं'' इस कथन द्वारा न्याय के प्रशासन में लम्बी देरी को रोकने में सूचना एवं संचार तकनीकी वादियों के लिये वरदान है, जिससे उन्हें त्वरित एवं शीघ्र न्याय बिना किसी मुसीबत के उपलब्ध हो सके।

अंत में हम यह कह सकते हैं कि सूचना एवं संचार तकनीकी ने हमें न्याय की प्राप्ति में, पराक्रम लिखत में छल को रोकने हेतु भरसक प्रयास किये हैं।

अन्वेषण के दौरान, पुलिस द्वारा एवं विचारण के दौरान न्यायाधीश द्वारा यदि आई.टी. कानून का प्रयोग नहीं किया जाता तो यह कहा जाता है कि उन्होंने साक्ष्य का अभिनिर्णयन अपराधी की दोषसिद्धि अथवा दोषमुक्ति के लिये पर्याप्त रूप से नहीं किया है।

उपचार :-

भारत में सभी जिला न्यायालय, सत्र न्यायालय, कम्प्यूटर से सुसज्जित है। वर्तमान में उच्चतम न्यायालय/सत्र न्यायालय इसे देश में वाद-सूची कम्प्यूटर द्वारा निर्मित कर रहा है।

वर्तमान में अभी जयपुर, दिल्ली, चण्डीगढ एवं राजस्थान में, डिजीटल कला अकादमी स्थापित है। इसके माध्यम से स्टूडियों द्वारा 3-डी एनीमेशन एवं विज्युल प्रभाव है। इसमें केवल यही सम्भाव्यता अपराध को उत्पन्न करने में विचारण के समय उत्पन्न हो रही है।

अब सूचना एवं जन संबंधी डिपार्टमेन्ट न्यायालय के समक्ष कॉम्पेक्ट ऑडियो, वीडियो प्रस्तुत कर रही है। न्यायालय वादों को प्रस्तुत करने से ऑडियों कैसेट आवाज का निर्धारण गेम्स एवं विज्ञापन द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है एवं सर्टिफिकेट उपलब्ध किया जा रहा है।

इन दिनों इंटरनेट चेटिंग एवं सर्फिंग द्वारा लडके एवं लडकी अपने विचारों का आदान-प्रदान करके नजदीक आ रहे है एवं लाईफ - पार्टनर बन रहे हैं।

पारिवारिक न्यायालयों के निर्णयों में भी यह बात सामने आई है कि मुम्बई डिविजन की उच्च न्यायालय बैंच जिसने "Sacred evil" फिल्म के विरूद्ध याचिका सूनी थी, ने याचिकाकर्ता अधिवक्ता से फिल्म को देखने एवं विचारों को प्रस्तुत करने की अनुमति अगली सुनवाई में प्रदान की।

याचिकाकर्ता गेरी कोले हो कैथोलिक सेक्युलर के साथ जो कि बुराई के विरूद्ध थे, फिल्म को देखने पर अपनी प्रक्रिया दी।

याचिका में क्रिश्चयन समूह द्वारा कहा गया कि यह फिल्म धर्म को मानने वाले लोगों की धार्मिक श्रद्धा को ठेस पहुंचाने वाली है और यह व्यक्ति के कब्जे की वैज्ञानिक थीम पर आधारित है।

उपसंहार :-

अंत में मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय के कम्प्यूटराइजेशन के मामले में बहुत कुछ किया जा चुका है। पंरतु मेरा यह मानना है कि हमारे देश भारत में यदि हम न्याय को जड़ स्तर तक नहीं पहुंचाएंगे तो हम कभी भी सफल नहीं हो पाएंगे। हमें तेजी से बहने वाली तकनीकियों को समझना होगा। इसके लिये हमें इससे संबंधित न्यायाधिशों, वकिलों एवं अभियोजको को परिपक्व बनाना होगा। मैं यह बात जोडना चाहुंगा कि इसका एक भाग एलएल.बी. के क्युरिकलम में भी सम्मिलित किया जाना चाहिये।

संदर्भ ग्रन्थ

01. भारतीय दण्ड संहिता 1860
02. भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872
03. दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973
04. सूचना एवं प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 (एक्ट नं. 21 से 2000)
05. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया एक्ट 1934
06. बैंकर्स पुस्तक साक्ष्य अधिनियम 1891
07. टाईम्स ऑफ इण्डिया
08. दैनिक भास्कर (डेली न्यूज पेपर)
09. सूचना प्रौद्योगिकी (सर्टिफाईंग अथॉरटीज) नियम 2000
10. द साईबर रैग्युलेशन अपिलेट अधिकरण (प्रोसिजर) नियम 2000

****

''उच्च शिक्षा में गुणवत्ता एक चुनौती''

डॉ. सुमन रोहिला *

भारतीय उच्च शिक्षण संस्थानों (जैसे आई.आई.टी. व आई.आई.एम.) का शैक्षिक स्तर पूरे विश्व में उच्च कोटि एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होने की वैश्विक मान्यता का खंडन तब हो गया जब गत वर्ष विश्व के 100 शीर्ष विश्व-विद्यालयों की तीन सूचियाँ प्रकाशित की गई थी। खेद की बात यह है कि इन शीर्ष विश्वविद्यालयों में एक भी भारतीय विश्वविद्यालय नहीं था, यहाँ तक कि चीन, जापान, सिंगापुर, हांगकांग, दक्षिणी कोरिया, इजराईल और थाईलैण्ड जैसे देशों के विश्वविद्यालयों को भी उपर्युक्त 100 शीर्ष विश्वविद्यालयों की सूची में सम्मिलित किया गया है। अत: यहाँ यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि उच्च शिक्षा के क्षैत्र में ऐसी चुनौतीपूर्ण स्थितियाँ क्यों बनी हुई है?

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान् (आई.आई.टी.) के विषय में अनिल काकोड़कर समिति ने हाल में एक सर्वेक्षण कार्य किया है:-''समिति ने 3785 विशिष्ट व्यक्तियों के साथ मिलकर एक अनुसंधान का अध्ययन किया है। इसकी रिपोर्ट के अनुसार 63 प्रतिशत व्यक्तियों का मानना है कि इन सर्वोच्च तकनीकी संस्थानों से भारतीय समाज को कोई लाभ नहीं मिला है।'' प्रश्न यह उठता है कि यदि आई.आई.टी. जैसे संस्थानों को भी कसौटी पर खरे उतरने में सफलता नहीं मिली, तो अन्य विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों से आशान्वित होना, उनसे अत्यधिक अपेक्षा करने वाली बात है।

भारत में प्रति वर्ष 13 लाख अभियंताओं और 4 लाख प्रबंधकों और विज्ञान व कला 22 लाख छात्रों को शिक्षित करके उपाधि प्रदान करना है, पर इन पेशेवर प्रशिक्षित युवाओं में से बस 25 प्रतिशत ही निगम क्षेत्र के भर्ती मानकों को पूरा कर पाते हैं और रहे अन्य विज्ञान कला के क्षैत्र योग्य डिग्रीधारी छोटी-मोटी सर्विस लेकर हार मान लेते हैं या बेरोजगार रहकर हीनता से ग्रसित हैं। यह हर उस व्यक्ति के लिए चिंता का विषय है, जिसमें सोचने योग्य बुद्धि हैं और जो भारत को अपना देश समझता है और उसकी प्रतिष्ठा में अपनी प्रतिष्ठा देखता है। अत: इसका विचार तो होना चाहिये कि शिक्षा का स्तर कैसे सुधरे?

यह भी कटु सत्य है कि अभी भी उच्च शिक्षा और उद्योग-धंधों के बीच एक गहरी व्यापक संवादहीनता है इसका तत्काल समाधान आवश्यक है। दरअसल उच्च शिक्षा प्रदान करने का वास्तविक उद्देश्य अच्छी मानव-शक्ति के निर्माण के साथ-साथ ऐसे पेशेवर प्रबंध को, अभियंताओं, वैज्ञानिकों, शिक्षकों तथा कलाकारों की सृष्टि करना है जो सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का रचनात्मक समाधान कर सके ताकि आम आदमी से लेकर समाज, सरकार और उद्योग-धंधों तक सभी की व्यापक सहायता करने में सफल हो सके।

वर्तमान में महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में अनुभवी अच्छे शिक्षकों, अच्छी प्रयोगशालाओं, उच्चस्तरीय पुस्तकालयों और आधारभूत (बुनियादी) सुविधाओं का नितांत अभाव है। शिक्षण की तुलना में अनुसंधान अध्ययनों की उपेक्षा, स्वायत्तता का न होना।

सत्तर के दशक के बाद भारत में उच्च शिक्षा का जो व्यापक विस्तार हुआ उसके सुपरिणामस्वरूप लाखों मध्यवित्तीयवर्गीय युवाओं को कालेजों और विश्वविद्यालयों में प्रवेश के अवसर प्राप्त हुए। गत 40 वर्षों में उच्च शिक्षा के क्षैत्र में व्यापक प्रगति तो की, परन्तु गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी की दिशा के मसले पर प्रश्न-चिन्ह अवश्य बना रहा। भारतीय विश्वविद्यालयों में राजनीतिकरण, सामाजिकता से अलगाव, गुणवत्ता के मानदण्डों में कमी इत्यादि की खामियाँ उभर कर आई हैं।

यह कटु सत्य है कि विभिन्न उच्च शिक्षा केन्द्रों, विश्वविद्यालय, संस्थानों, अनुसंधान केन्द्र इत्यादि को महज डिग्रीधारी युवाओं की उत्पाादक फैक्टरियों के रूप में सिद्ध होने की बात कदापि उपलब्धिपूर्ण लक्ष्य नहीं हो सकता।

इस संदर्भ में न्यूपा (उच्च शिक्षा अनुसंधान की राष्ट्रीय संस्था) ने एक विशेष आंकलन किया जिसके अनुसार भारत में 2020 तक उच्च शिक्षा पाने वालों की वर्तमान संख्या 1.30 करोड़ से बढ़कर 4.20 करोड़ तक करने की आवश्यकता है। न्यूपा के एक अनुसंधान अध्ययन के अनुसार उच्च शिक्षा के क्षैत्र आगामी 10 वर्षों में 1500 नए विश्वविद्यालयों तथा 27,000 नये महाविद्यालयों को खोलना होगा। इस महान चुनौती पूर्ण लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वर्ष 2020 तक उच्च शिक्षा के क्षैत्र में 5 लाख करोड़ रू. निवेश की आवश्यकता पड़ेगी।

ये सभी लक्ष्य उच्च शिक्षा की वर्तमान नीतियों के द्वारा प्राप्ति कठिन सिद्ध हो सकती है।

यह भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि बारहवीं पंचवर्षीय योजना में उच्च शिक्षा के विस्तार पर बल प्रदान किया गया था। इस अवधि 30 नए केन्द्रीय विश्वविद्यालयों 08 नए आई.आई.टी., 07 आई.आई.एम., 37 अन्य तकनीकी संस्थानों और इसके अलावा 323 नए महाविद्यालयों (जिला स्तर पर) की स्थापना का प्रावधान किया गया था। इस महत्वपूर्ण लक्ष्य हेतु 80,000 करोड़ रू. की राशि आवंटित की गई थी। इन संस्थानों में से अधिकतर संस्थानों की औपचारिक स्थापना कर दी गई है, परन्तु अभी भी उनमें पर्याप्त भवन, अनुभवी शिक्षक एवं समुचित संख्या में विद्यार्थियों का अभाव बना हुआ है। इन नए संस्थानों के आवंटित 80,000 करोड़ रू. में से अभी तक मात्र 30,000 करोड़ रूपये का ही उपयोग हो पाया है। यह सर्वथा सत्य है कि उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में तभी सुधार संभव होगा जब शिक्षण और अनुसंधान की वर्तमान प्रणालियों के स्थान पर विश्व-स्तर पर स्वीकृत और उपयोगी प्रणालियों को अपनाया जाएँ।

आजादी के 65 वर्ष बाद भी हमारी सरकार और हमने दृढ़ संकल्पित होकर लक्ष्य सुनिश्चित नहीं किए हैं कि उच्च शिक्षा की दिशा को किस ओर ले जाना हैं? और शिक्षित युवा पीढ़ी किस प्रकार स्वयं को समाज और राष्ट्र को उन्नत बनाने में योगदान दे सकेगी।

अब महती आवश्यकता यह है कि उच्च शिक्षा द्वारा विभिन्न क्षैत्रों में युवा शक्ति को शिक्षित-प्रशिक्षित किया जाए। इसलिये अन्य संस्थाओं के साथ जुड़कर समन्वय बनाया जाए जो विश्व-विद्यालय एवं महाविद्यालय स्थलपर ही प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था करें।

हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि भारत एक विकासशील एवं अति जनसंख्या वाला देश हैं। आने वाले भविष्य में भौतिक वस्तुओं और सेवाओं के आपूर्ति स्त्रोत क्या होंगे, कैसे उत्पाद प्रबंधन किया जावेगा, कीमत स्तर क्या होगा?

* प्राध्यापक अर्थशास्त्र, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

राष्ट्रीय उत्पाद मात्रा का वर्तमान व भविष्य का अनुमान किसी भी सरकारी अथवा निजी संस्थाओं द्वारा नहीं किया गया है।

इस मुद्दे पर चीन की छात्र उत्पादन तकनीकों का प्रयोग करते हुए शिक्षण संस्थाओं में प्रति सप्ताह छात्रों से 10 घण्टे अनिवार्य राष्ट्र-सेवा में भौतिक वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन किया जाएँ। इसका दोहरा लाभ छात्र एवं राष्ट्र को मिलेगा। उत्पाद विक्रय हेतु सार्वजनिक एवं निजी (मोल) विपणन संस्थाओं का सम्बद्ध किया जाएँ। यह सर्वविदित है कि हमारी उच्च शिक्षा संक्रमण में लकवा ग्रस्त है, जिसका उद्देश्य मात्र डिग्री भर देना है जिसका दुष्परिणाम यह हो रहा है कि बड़े पैमाने पर युवाओं को पंगु और ठलुआ बना रहा हैं, क्योंकि अभी उनमें स्वयं का व्यापार-उद्योग खोलने की योग्यता हाँसिल नहीं है, कुछ अपवादों को छोड़कर।

आज भी उच्च शिक्षा को रोजगार के साथ कहाँ जोड़ा है और चिन्ता करते हैं हमारी शिक्षण संस्थाओं का नाम विश्व-स्तर पर हो, और अपेक्षा करते हैं कि यह दायित्व छात्र एवं शिक्षकों का है।

भारत में प्रचलित वर्तमान पाठ्यक्रम से लेकर प्रवेश परीक्षा पद्धति, मूल्यांकन, शिक्षण-प्रशिक्षण, योग्यता आदि विषयों पर राष्ट्र-समाज की आवश्यकता के अनुरुप मापदण्ड पर कभी चिंतन-मनन नहीं किया है। अत: आवश्यकता है - उच्च शिक्षा को समाज एवं राष्ट्रापयोगी बनाने के लिए संरचनात्मक परिवर्तन एवं दायित्वों का निर्धारण योजनाबद्ध तकनीकों द्वारा हर स्तर पर करने की, तभी उच्च शिक्षा सृजनात्मक होगी।

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ. अजय शुक्ला - परिवर्तन की अन्तर्दृष्टि, प्रकाशक-मानवीय विकास संस्था, भोपाल (म.प्र.)
2. दत्त, रूद्र एवं सुन्दरम् - भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रकाशन एस. चन्द्र एंड कंपनी लि., नई दिल्ली।
3. डॉ. अजय शुक्ला - विकास का मनोविज्ञान, प्रकाशक-मानवीय विकास संस्था, भोपाल (म.प्र.)
4. प्रतियोगिता साहित्य- साहित्य भवन, आगरा।
5. आर्थिक समीक्षा, 2012, वित्ता मंत्रालय, नई दिल्ली।
6. Annual Report of the U.G.C., New Delhi.
7. Ministry of Human Resource Development Govt. of India.

****

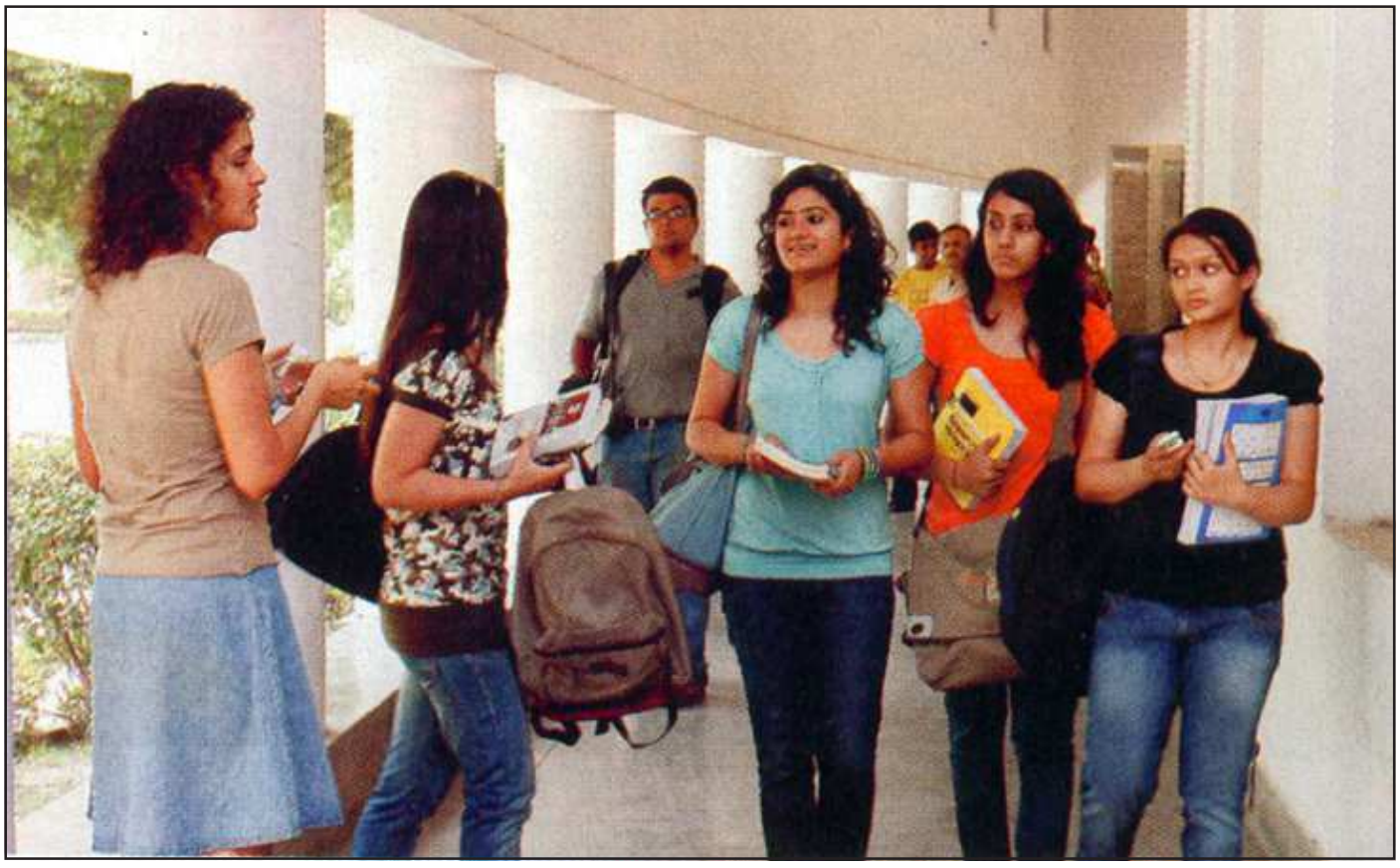

राजशाही में लेखा व्यवस्था विधान (कौटिल्य के अर्थशास्त्र के संदर्भ में)

डॉ. विम्मी बहल * डॉ. अनिल शिवानी **

प्रचीनकाल में मुद्रा के प्रचलन में आने पर तथा इसके पूर्व भी व्यापारियों द्वारा अपना लेखा-जोखा रखा जाता रहा है और आज के युग में भी वैज्ञानिक प्रगति के अनुसार रखा जा रहा है। विकास का प्रभाव लेखा पद्यतियों पर भी पड़ा, समयानुसार आवश्यकतानुसार लेखा प्रणालियाँ भी परिष्कृत होतीं गईं। हाथ से लेखाबही लिखने, गणनाएँ करने की जगह अब यंत्रों का प्रयोग होने लगा है। संगणक (कंप्यूटर) और केलकुलेटर का उपयोग होने लगा है, लेखांकन के नये साफ्टवेयर विकसित होते जा रहे हैं।

अब लेखांकन की किताबों के स्थान पर डीवीडी और पेन-ड्राइव में हिसाब-किताब रखा जा रहा है। अभिलेखों के संधारण में भी अब सरलता हो गई है। कई वर्षों के आंकड़े एक डीवीडी या पेन-ड्राइव मे रखे जा सकते हैं। यह पेन-ड्राइव अपनी जेब में आसानी से रखी जा सकती है। अभिलेख संधारण हेतु बड़ी-बड़ी आलमारियों-संदूकों की आवश्यकता नहीं रही। रोशनाई (स्याही) के मिटने फैलने का भय समाप्त हो गया है। डीवीडी/ पेन-ड्राइव में से संधारित आंकड़ों में से पूर्व संदर्भ ज्ञात करने, तिथि विशेष के सौदे आदि ज्ञात करने के लिए अब मात्र कुछ ही क्षण लगते हैं, जबकि परंपरागत तरीके के लेखों से यह ज्ञात करने में लंबा समय लगता था तथा अभिलेख के क्षतिग्रस्त होने का डर भी बना रहता था। नि:संदेह आधुनिक लेखा उपकरणों ने समय बचाने का बहुत महत्वपूर्ण कार्य तो किया ही है साथ में लेखों में सटीकता, शुद्धता भी उच्चतम स्तर तक पहुँच गई है।

प्रस्तुत शोधपत्र में राजकीय आय-व्यय के अभिलेख लिखने, संधारित करने तथा इसमें संलग्न गाणनिक (गणन करने वाले) के कार्य व्यवहार व्यवस्था को प्रस्तुत किया जा रहा है। आज के युग में सरकार बजट प्रस्तुत कर राज्यसभा, लोकसभा या विधानसभा (यथास्थिति अनुसार) में प्रस्तुत कर पारित कराती है, किन्तु राजकाल मे यह व्यवस्था भिन्न थी।

कौटिल्य द्वारा अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'अर्थशास्त्र' में इसका वर्णन निम्नलिखित अनुसार किया है -

अक्षपटल - राजकीय आयव्यय या राजकोष का लेखा जिस स्थान/ भवन में बैठकर किया जाता है उसे कौटिल्य द्वारा अक्षपटल कहा गया है। इस अक्षपटल में कार्य करने वाले जो मुख्यत: गणनाओं, संख्याओं से संबंधित कार्य करते हैं, गाणनिक कहलाते हैं और गणनकार्य को गाणनिक्य कहा जाता है। गाणनिकों को राजा द्वारा कुछ अधिकार प्रदान किये जाते है ये गाणनिक्याधिकार कहलाते हैं। ग्रंथ में अक्षपटल के बारे में उल्लेखित है -

अक्षपटलयध्यक्ष: प्राड्मुखमुदड्मुखं वा विभक्तेपस्थानस
निबंधपुस्तकस्थानं कारयेत। (अध्याय-7, प्रकरण 25/94)

आयव्यय का प्रधान निरीक्षक अधिकारी पुरुष (अध्यक्ष) आयव्यय लेखा कार्यालय (अक्षपटल) का निर्माण कराएगा। इसका दरवाजा पूरब अथवा उत्तर दिशा की ओर होना चाहिए तथा प्रत्येक छोटे बड़े लेखकों (गाणनिकों या वर्तमानकाल अनुसार लिपिकों) के लिए पृथक-पृथक स्थान निश्चित होना चाहिए। हिसाब-किताब की पुस्तकों या आयव्यय के लेखा रजिस्टरों को रखने, उनकी सुरक्षा आदि का समुचित प्रबंध होना चाहिए।

अक्षपटल के क्या कार्य होना चाहिए ? यह बताते हैं कि - द्रव्यों के उत्पत्ति स्थानों के नाम निर्देशपूर्वक संख्या, जनपद तथा जनपद की प्रत्येक प्रकार की उपज को रजिस्टरों में इस प्रकार लिखा जाए कि यह स्पष्ट हो सके कि जनपद विशेष में किन-किन स्थानों में कितना-कितना धन प्राप्त हुआ है।

रजिस्टर में समस्त प्रकार के कारखानों के आयव्यय, वृद्धि (ब्याज), ब्याजी (धन का छठवाँ हिस्सा) आदि समस्त कार्यों का उल्लेख किया जाये।

रत्न, सार, फाल्गु और कुप्य पदार्थ (चंदन, बाँस, साल सागौन आदि सभी) समस्त वस्तुओं का गुण, तौल, लंबाई, चौड़ाई, ऊँचाई आदि का उल्लेख रजिस्टरों में किया जावे। इनमें ग्राम, जाति, कुल, सभा, समितियों के धर्म व्यवहार चरित्र आदि का उल्लेख किया जावे।

राजोपजीवी पुरुषों के प्रग्रह (पूजा, मंत्री, पुरोहित का विशेष सत्कार) व्यय, निवास स्थान व्यय, भोग भेंट व्यय, परिहार (कर न लेना), भक्त (उनके घोड़े, हाथी सहित) व्यय तथा वेतन व्यय आदि भी यथायोग्य लिखे जावें।

महारानी, राजपुत्र, राजपरिवार सदस्यों के रत्न, भूमि आदि प्राप्ति का उल्लेख के साथ राजा महारानी राजपुत्रों राजपरिवार सदस्यों के नित्य दिये जाने वाले धन (व्यय) के अतिरिक्त दिया गया धन, विशेष उत्सवों से प्राप्त धन, रोग शांति उपचार हेतु जनता द्वारा एकत्र धन भी रजिस्टर में लिखा जावे। मित्र तथा शत्रुओं के साथ संधि विग्रह में प्राप्त या दिया गया धन का भी उल्लेख किया जावे।

उपर्युक्त समस्त कार्य अक्षपटल में ही होना चाहिए। समस्त अधिकरणों (उत्पत्ति स्थानों) के करणीय1, सिद्ध2, शेष3, आय4, व्यय5, नीवी6, उपस्थान आदि समस्त लिखकर प्रजा को दिए जावें। उत्तम, मध्यम तथा नीच कार्यों पर उनके अनुकूल अध्यक्षों की नियुक्ति की जावे।

1. **करणीय -** यह छ: प्रकार का होता है :- संस्थान, प्रचार, शरीर व्यवस्थापन, आदान, सर्वसमुदय पिण्ड एवं संजात।
2. **सिद्ध** - यह भी छ: प्रकार का होता है :- काषर्पित, राजहार, पुरव्यय (ये तीन प्रविष्ट नाम से) तथा परम संवत्सरानुवृत, शासनमुक्त, मुखाक्षप्त (ये तीन आपातनीय नाम से) कुल छ: प्रकार के सिद्धधन हैं।
3. **शेष -** शेष भी छ: प्रकार का होता है:- सिद्ध प्रकर्म योग तथा दण्ड शेष (इन दोनों का नाम आदरणीय है) राजा के प्रियों द्वारा जानकर नहीं चुकाया गया धन तथा नगर मुखिया लोगों से न लिया गया धन (इन दोनों का नाम प्रशोध्य है) तथा असार एवं अल्पसार इन दोनों को मिलाकर कुल छ: प्रकार का होता है।
4. **आय :-** आय तीन प्रकार का होता है - वर्तमान (दिन-प्रतिदिन की आय), पर्युषित (पूर्व के समय का) तथा अन्य ज्ञात आय।
5. **व्यय :-** व्यय चार प्रकार का होता है - नित्य, नित्योत्पादिक, लाभ एवं लाभोत्पादिक।
6. **नीवी :-** अच्छी तरह गणना पश्चात व्यय होने से बचा हुआ शेष धन नीवी कहलाता है। यह नीवी दो प्रकार की होती है - प्राप्त (खजाने में जमा) तथा अनुवृत खजाने में जमा हेतु तैयार धन।

* शास. राजीव गांधी स्नातक महाविद्यालय,काला पीपल, भोपाल ** अध्यक्ष वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग, अटल बिहारी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल(म.प्र.)

सामूदायिकेष्वलक्तृसिकं यमुंपहत्य ना राजानुतायेत।

(अध्यक्ष प्रचार अध्याय 7/95)

समान कार्य करने वाले कर्मचारियों में से उसे ही अध्यक्ष नियुक्त करना चाहिए जो कार्य संपादन में सबसे निपुण हो। समान निपुणता वाले कर्मचारियों में से जो अधिक गुणी हो तथा समान गुणीजनों में से जो यशस्वी हो, को अध्यक्ष नियुक्त किया जाना चाहिए। अध्यक्ष को दण्डित किये जाने की दशा में राजा को अनुताप या पश्चाताप न हो, अत: ऐसे अध्यक्ष की नियुक्ति न की जावे जो राजा का निकट संबंधी हो, ब्राह्मण हो, क्योंकि इन्हें दण्डोपरांत राजा को दु:ख हो सकता है।

सहग्राहिण: प्रतिभुव: कर्मोपजीविन:
पुत्रा भ्रातरो भार्या दुहितरो भृत्याश्चास्य कर्मच्छेदम् बहेयु:।
त्रिशतं चतु:पंचशाच्याहोरात्राणां कर्मसंवत्सर:।

(कौटिल्य अर्थशास्त्र अधिकरण 2, अध्याय 7 प्रकरण 25)

यदि कोई अध्यक्ष अपहृत राजकीय धन को राजकोष में वापस न करे या वापस करने में असमर्थ हो तो वह धन उसके साथियों (जिन्होंने अपहृत धन का हिस्सा लिया था) से वसूल किया जाएगा। अन्यथा (साथी न होने पर) क्रमश: प्रतिभू (जामिन), गणक (कर्मोपजीवी), अध्यक्ष के पुत्र, भाई, स्त्री, लड़की अथवा नौकर अपहृत धन वसूल किए जाने हेतु नियत रहेंगे।

यदि अपहृत धन का कुछ भाग शेष रह जाता है तो ये उत्तरदायी क्रमश: उसकी पूर्ति करेंगे। जब तक अपहृत धन की पूर्ति नहीं हो जाती। तीन चौथाई दिन का एक संवत्सर माना जाएगा। यह संवत्सर आषाढ़ मास की पूर्णमासी के समाप्त समझा जाएगा। यदि अध्यक्ष की नियुक्ति संवत्सर के बीच में हुई है तो उपस्थिति के गाणनिक द्वारा कार्य दिवसों की संख्या लेकर आनुपातिक वेतन दिया जाना चाहिए। प्रतिमास किस पुरुष द्वारा कितना कार्य किया गया है इसका धारण हाजिरी का गाणनिक (लिपिक) करेगा।

अध्यक्ष को चाहिए कि वह गुप्तचरों के माध्यम से लगातार यह ज्ञान प्राप्त करता रहे कि जनपद कार्यालयों में क्या हो रहा है। अनावश्यक विलंब, विधि विरुद्ध कार्य, राजाज्ञा के विपरीत दोषपूर्ण कार्य, छल कपट, आलस्य, क्रोध, काम, प्रमाद, लोभ, अपव्यय, उत्कोच (रिश्वत) की जानकारी लगातार प्राप्त करता रहे तथा राजा को संज्ञाान में लावे। तद्नुसार राजाज्ञा लेकर दण्ड कार्यवाही करे। उपर्युक्त वर्णित कार्य न करने वाला अध्यक्ष अपनी अज्ञानता से धन उपार्जन में रुकावट डालने वाला हो जाता है और अक्षपटल में दोष उत्पन्न होने लगते हैं। आमदनी में रुकावट प्रारंभ होने लगती है।

अर्थ उत्पत्ति में बाधा डालने वाले आठ दोष बताये गये हैं :-

1 अज्ञान, 2 आलस्य, 3 प्रमाद, 4 काम, 5 क्रोध, 6 लोभ, 7 मोह, 8 दर्प

अज्ञानता (जानकारी प्राप्त करने मे विफलता), आलस्य (विलम्ब), प्रमाद (गाना-बजाना, स्त्रियों पर आसक्ति), काम (भोग-विलास), क्रोध (क्रूरता से उत्पन्न), लोभ (धन-वस्तुओं पर आसक्ति), मोह (वस्तुओं के प्रति लगाव) तथा दर्प (राजा का प्रिय होने के कारण उत्पन्न गुमान) आदि से अर्थ उत्पत्ति में बाधा होती है।

तेषामानुपूर्व्या यावानर्थोपधानस्यतावानेकोन्तरो दण्ड इति मानवा:।

(कौटिल्य अर्थशास्त्र, अध्यक्ष प्रचार अध्याय 7, प्रकरण 25, पृष्ठ 97)

ऐसे पुरुषों को दण्ड दिया जावे जो किसी भी प्रकार से राजकीय धन का नाश या उपार्जन में बाधा करते हैं। मनु आचार्य के अनुनायियों ने दण्ड की राशि को तय करने के लिए कहा है कि दण्ड अधिकतम आठ गुना तक होना चाहिए अर्थात् उपर्युक्त वर्णित आठ दोष में प्रथम दोष (अज्ञान) के कारण उत्पन्न राजकीय हानि के बराबर दण्ड देना, आलस्य के कारण राजकीय हानि का दुगुना दण्ड, प्रमाद के कारण तिगुना दण्ड इसी प्रकार आगे भी समझना चाहिए और अंतिम दोष पर आठ गुना दण्ड दिया जाना चाहिए।

यहाँ अन्य आचार्यों में मतांतर भी है। पाराशर आचार्य के अनुगामी समस्त प्रकरणों में आठ गुना दण्ड उचित मानते हैं एवं इसका आधार अपराध की समानता बताते हैं। बृहस्पति आचार्य के अनुगामी एक ही सिद्धांत को मानने के लिए आग्रह करते हैं वह है दस गुना दण्ड। शुक्राचार्य के शिष्यों द्वारा समस्त अपराधों पर बीस गुना दण्ड दिया जाना बताया गया है। कौटिल्य इन समस्त पर समान दण्ड की अभिकल्पना से उठकर जिसका जितना अपराध उसको उतना दण्ड दिए जाने की अनुशंसा करते हैं।

हिसाब दिखाना (वर्तमान में अंकेक्षण) - छोटे-छोटे समस्त कार्यालयों के अध्यक्ष अपना हिसाब दिखाने के लिए प्रति वर्ष आषाढ़ के माह में अक्षपटल प्रधान कार्यालय आवें, इनको आपस में मिलने से तब तक प्रतिबंधित किया जावे जब तक कि उनसे अपने राजकीय मोहर लगे रजिस्टर, अव्ययित राशि, अभिलेख आदि प्राप्त करके मिलान न कर लिया जावे। पूर्ण प्रक्रिया पश्चात् ही आपस में मिलने की अनुमति दी जावे। अध्यक्ष द्वारा प्रस्तुत हिसाब-किताब में राशि का अंतर (अधिक या कम) होने पर अंतर की राशि के आठ गुने के बराबर रकम जुर्माना स्वरूप वसूल की जावे।

शेष धन लेकर हिसाब-किताब हेतु उपस्थित नहीं होने वाले अध्यक्ष पर शेष का दस गुना दण्ड दिया जाना चाहिए। हिसाब देखने के लिए प्रधान अध्यक्ष के ठीक समय पर उपस्थित हो जाने पर जो अध्यक्ष हिसाब न दिखाये उसे प्रथम साहस दण्ड दिया जावे। यदि प्रधान अध्यक्ष ठीक समय पर हिसाब नहीं दे तो उसे प्रथम साहस दण्ड का दुगुना दण्ड दिया जावे। राजा के प्रधान कर्मचारी महामात्र आदि आय-व्यय की नीवी संबंधित संपूर्ण अनुकूल प्रवृत्तियों को जनपद के साथ ठीक तरह समझावे। इनमें जो भी मिथ्या कथन करे उसे उत्तम साहस दण्ड दिया जावे।

आकृताहोरूपहरं मासमाकांक्षेत मासाइर्ध्व मायद्धिशतोत्तरं दह्यात।
अल्पशेलनीविकं पंचरात्रमाकांक्षेत तत: परम्।

(अभिकरण 2, अध्याय 27, प्रकरण 25, पृष्ठ 98)

समस्त द्रव्य नियत समय तक एकत्र कर लिए जावें। संग्रहकर्ता का दायित्व है कि विलंब की दशा में अधिकतम एक मास तक द्रव्य एकत्र अवश्य कर लें। इसमें विफल रहने पर प्रतिमास दो सौ मुद्रा का जुर्माना लगाया जावे। जिस अध्यक्ष के पास थोड़ा भी राजदेय धन पाँच दिवस से अधिक रखा रहे उसे भी उपरोक्तानुसार दण्ड का भागी माना जावे।

परीक्षण - आय-व्यय परीक्षण के लिए कौटिल्य द्वारा अर्थशास्त्र में आठ बिंदु बताये हैं। इसमें प्रथम है धर्म। वह धर्मात्मा है या दम्भी है ? उसका व्यवहार कैसा है ? आचार-विचार एवं कार्य देखा जावे तद्नुसार दूसरे कार्य के बारे में अनुमान लगाया जावे। औचक रूप से गुप्तचरों द्वारा भी जानकारी एकत्र की जावे अपव्यय लेखा प्रतिदिन, प्रतिपाँच दिन, पक्ष (पंद्रह दिन), एक माह, चार माह एवं एक साल इस प्रकार अपव्यय लेखा करके नीवी ज्ञात की जावे। रजिस्टर में कर देने वाले का नाम, कर दिलाने वाले अधिकारी का नाम, लेखक का नाम और लेने वाले का नाम भी उल्लेख करना आवश्यक है।

इसी प्रकार व्यय लेखा में भी व्युष्ट, देश, काल, मुख, लाभ, कारण (निमित्त व्यय), देय धन या वस्तु, प्रदान करने वाले का नाम, ग्रहण करने वाले का नाम, आज्ञापक (आज्ञा देने वाला), भण्डागारिक, प्रतिग्राहक (लेने वाले का वर्ण) भी उल्लेख किया जावे।

नीवी का लेखा भी अनुवर्तन रूप (द्रव्य का स्वरूप), लक्षण (द्रव्य चिन्ह आदि), मात्रा (परिमाण), निक्षेप भाजन (जिस पात्र में रखा है),

गोपायक (उसका रक्षक पुरुष) आदि का उल्लेख करते हुए भी किया जावे। जो गाणनिक (लिपिक) राजा के हरिण्य आदि का लाभ पुस्तकों में न लिखें या राजाज्ञा का उल्लंघन करें या नियम विपरीत कल्पना करें, उसे प्रथम साहस दण्ड दिया जावे।

क्रमावहीनमुत्क्रमम्विज्ञातं, पुनरुक्तं वस्तु कम लिखतो द्वादशपणो दण्डः।

(अध्यक्ष प्रचार अधिकरण 2, अध्याय 7, पृष्ठ 99)

क्रमविरुद्ध (जिस क्रमानुसार लेखा किया जाना चाहिए वो छोड़कर इधर उधर लिख देना), उत्क्रम (उलट पुलट के दिखाना), अविज्ञात (जाने बिना लिख देना) तथा पुनरुक्त (दुबारा तिबारा लिख देना इत्यादि) लिखने वाले गाणनिक को बारह पण का दण्ड दिया जावे।

यदि नीवी इस प्रकार लिखी जावे तो दण्ड बढ़कर द्विगुणित अर्थात् चौबीस पण हो जावेगा। यदि उत्क्रम लिखकर गबन कर लिया गया हो तो दण्ड आठ गुना (96 पण) बढ़ा दिया जावेगा।

यदि नीवी का नाश कर दिया गया हो (अपव्यय) तो पाँच गुना दण्ड अर्थात् 60 पण दण्ड लिया जावेगा, साथ ही वह वस्तु या राशि भी वापस ली जावेगी जिसका अपव्यय किया गया है।

मिथ्यावादे स्तेयदण्डः। पश्चात्प्रतिज्ञाते द्विगुणः प्रस्मृतोत्पन्ने च।।

(कौटिल्य अर्थशास्त्र, अध्याय 7, पृष्ठ 100)

मिथ्यायवर्णन पर चोरी का दण्ड दिया जावे। हिसाब में किसी तथ्य को अस्वीकार करें किंतु जाँच में मान लेवे तो चोरी के दण्ड से दुगुना दण्ड दिया जावे। स्मृतिलोप कहकर मना करे बाद में स्मृति आ गया कह कर मान ले तो भी चोरी के दण्ड से दुगुना दण्ड दिया जाना चाहिए।

अध्यक्ष एवं राजा के बीच व्यवहार के बारे में कौटिल्य द्वारा लिखा गया है कि राजा को चाहिए कि वह अध्यक्ष के थोड़े अपराध को सहन करे इसकी सीमा राजा को स्वयं तय करना चाहिए। यदि अध्यक्ष आमदनी बढ़ाता है तो राजा उस पर प्रसन्नता संतुष्टि व्यक्त करे। जो अध्यक्ष राज्य के प्रति महान उपकार करे, राजा द्वारा उसे सदैव सम्मान एवं सत्कार दिया जाता रहे और यह सत्कार अध्यक्ष के जीवन पर्यन्त चलता रहे।

निष्कर्ष स्पष्ट होता है कि पूर्व काल में भी धन का महत्व आज की तुलना में कम नहीं था। अधिक धन कमाने वाले अध्यक्षों को शनैः-शनैः राजा सम्मानित करता था। यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इस प्रथा से धन कमाने वाले अध्यक्षों को अन्य अनुचित तरीके अपनाने की ओर भी प्रेरित किया होगा।

संदर्भ सूची

1) अक्षपटलयध्यक्षः प्राङ्मुखमुदङ्मुखं वा विभक्तेपस्थानस निबंधपुस्तकस्थानं कारयेत। (अध्याय-7, प्रकरण 25/94)
2) सामूदायिकेष्वलक्तृप्तिकं यमुंपहत्य ना राजानुतायेत। (अध्यक्ष प्रचार अध्याय 7/95)
3) सहग्राहिणः प्रतिभुवः कर्मोपजीविनः पुत्रा भ्रातरो भार्या दुहितरो भृत्याश्राच्स्य कर्मच्छेदम् बहेयुः। त्रिशतं चतुःपंचशाच्याहोरात्राणां कर्मसंवत्सरः। (कौटिल्य अर्थशास्त्र अधिकरण 2, अध्याय 7 प्रकरण 25)
4) तेषामानुपूर्व्या यावानर्थोपधानस्यतावानेकोन्तरो दण्ड इति मानवाः। (कौटिल्य अर्थशास्त्र, अध्यक्ष प्रचार अध्याय 7, प्रकरण 25, पृष्ठ 97)
5) आकूताहोरूपहरं मासमाकांक्षेत मासाइर्ध्व मायद्धिशतोत्तरं दह्यात। अल्पशेलनीविकं पंचरात्रमाकांक्षेत ततः परम्। (अभिकरण 2, अध्याय 27, प्रकरण 25, पृष्ठ 98)
6) क्रमावहीनमुत्क्रमम्विज्ञातं, पुनरुक्तं वस्तु कम लिखतो द्वादशपणो दण्डः। (अध्यक्ष प्रचार अधिकरण 2, अध्याय 7, पृष्ठ 99)
7) मिथ्यावादे स्तेयदण्डः। पश्चात्प्रतिज्ञाते द्विगुणः प्रस्मृतोत्पन्ने च।। (कौटिल्य अर्थशास्त्र, अध्याय 7, पृष्ठ 100)

****

शौर्य एवं पराक्रम के प्रतीक - आल्हा - ऊदल

डॉ. वन्दना जैन*

''आल्हखण्ड'' वीर रस की कालजयी अनुपम कृति है। इस लोक महाकाव्य में उस युग का शौर्य एवं पराक्रम अपने सम्पूर्ण वैभव के साथ प्रतिबिम्बित होता है, और यह प्रत्येक युग को प्रेरणा देने में समर्थ है।

आल्हखण्ड पराक्रम और शौर्य का प्रतीक है। ''आल्हा'' को सुनकर आज भी बच्चों एवं वृद्धों की भी भुजाएं फड़कने लगती है, मन में बिजलियां कडकती है, उनकी नसों में जोश एवं उत्साह का रक्त दौड़ने लगता है। वास्तव में आल्हा हमारे इतिहास की हुंकार है। ''आल्हखण्ड में वीर गाथाकालीन शौर्य की आरती उतारी गई है।

आल्हाखण्ड ''ऊर्जा'' का महाकाव्य है। यही कारण है कि अपनी भीतरी ऊर्जा और असाधारण प्रेषणीयता के कारण लोक को सदैव उर्जस्वित करता रहेगा, इसलिए उसकी उपादेयता हर समय प्रासंगिक रहेगी।'' आल्हाखण्ड की प्रशंसा करते हुए म.प्र. के भूतपूर्व मुख्यमंत्री स्व. डॉ. द्वारिकाप्रसाद मिश्र ने कहा था

''जनता जगनिक को इसी कारण अपनाये हुए है, कि उन्होने आल्हा और ऊदल जैसे सामान्य जनवर्ग के दो उदभट् वीरों की कथा द्वारा उस युग के जनसाधारण की आशा व आकांक्षाओं को वाणी दी, जो आज भी उतना ही प्रेरणादायक और जीवंत है, जितनी तब थी। ''

ग्रामीण जन वर्षा ऋतु में अधिक कार्य न होने के कारण फुरसत में रहता है, इसलिए विशेषकर बुन्देलखण्ड, कन्नौज के ग्रामीणजन इस ऋतु में कजरी, झूला और ''आल्हा'' से अपना मनोरंजन करते है। रात्रि के समय गांवो में चौपालों में ढोलक पर थाप देते हुए मधुर परन्तु ओजस्वी व बुलन्द स्वरों में ' आल्हा ' गाया जाता है। ऐसा लगता है कि इन अवकाश के दिनो में ग्रामीणजन ''बावन गढ़ो'' की लड़ाईयां निपटा देने को तत्पर रहते है। जब आकाश में घटाएं घिरी हो, बिजली कौंधती हो, मेघ रिमझिम बरसते हो ऐसे समय अल्हैतो की जोशभरी वाणी द्वारा युद्ध का साकार रूप उपस्थित करने में प्रकृति भी अपना भरपूर सहयोग प्रदान कर रही हैं-

ब्नसर सर सर चल रही सिरोही,, जैसे मधा नक्षत्र घहराय
कट कट सीस गिरे ज्वानन के, उठ उठ कर रूण्ड करे तलवारब्न

मैने स्वयं महोबा में होने वाली 'आल्हा प्रतियोगिता में अल्हैतो से आल्हा सुना और मंत्रमुग्ध हो गई, आल्हा बुंदेलखण्डी साहित्य का प्राण है, यह निर्विवाद कह सकते हैं।

लोकगाथा आल्ह खण्ड की जगनिक द्वारा लिखित मूल प्रति (पॉडुलिपि) जब तक उपलब्ध नहीं हो जाती तब तक इसके लेखन के श्रीगणेश का, और लेखक का प्रमाणिक परिचय प्राप्त किया जा सकना बहुत कठिन है, क्योकि आल्हा का जन्म यद्यपि बुन्देल खण्ड में ही हुआ, उसकी गौरव गाथा भी बुन्देलखण्ड में लिखी गई, परन्तु वह वेदमन्त्रो की तरह केवल अल्हैतो (आल्हा गाने वालो) की मौखिक परम्परा तक ही सीमित रहा। इसके लिपिबद्ध किये जाने का प्रशस्ति कार्य सन् 1865 ई. में फर्रूखाबाद के तत्कालीन सेटेलमेन्ट आफीसर चार्ल्स इलियट ने गांव के लोगो से सुनकर सम्पन्न किया था। इससे एक लाभ यह हुआ कि मौखिक परम्परा में आल्हा गाने वाले लोग जो कथाओं का क्रम भंग कर दिया करते थे उससे बचाव हो गया।

कन्नौजी लोक साहित्य में डॉ. संतराम अनिल ने लोक गायकों द्वारा गायी जाने वाली मुख्य लड़ाईयों की संख्या निम्न प्रकार दी है-

आल्हा को ब्याह, उदल को ब्याह, भुजरियन की लड़ाई, चन्द्रावली की चौथी, आल्हा मनौआ, फुलवा-हरन, नवेले का ब्याह, जागन को ब्याह, देवा को ब्याह, मलिखान समर, इन्दल को ब्याह या बखल बुखारे की लड़ाई नदिया बितबै की लडाई, माडौ की लड़ाई, लाखन को ब्याह, सुलिखान को ब्याह, गांजर की लड़ाई, दिल्ली की लडाई, बेला गौनो, इन्दल हरण, आल्हा की निकासी, नरबगढ़ की लड़ाई, और लाखन को गौनो।

इन लड़ाईयों को देखते हुए तो ऐसा लगता है कि जिस प्रकार काव्य की आत्मा रस को माना गया है। उसी प्रकार आल्हा की आत्मा खट-खट, खट-खट तेगा बाजे बोले छपक-छपक तलवार के वीर रस में ही समाविष्ट है।

आल्ह-खण्ड की कथा का संक्षिप्त रूपान्तर -

समग्र आल्ह खण्ड की कथा का संक्षिप्त परिचय देना भी कठिन कार्य है। अत: संक्षिप्त का भी सारांश यहां प्रस्तुत है -

दिल्लीश्वर पृथ्वीराज और कन्नौज के सम्राट जयचन्द्र के समकालीन राजा परमाल महोबा के राजा थे और आल्हा और ऊदल इनके सामन्त। आल्हा ऊदल की वीरता दिखाना ही इस लोक महाकाव्य का लक्ष्य था।

अत: इसमें वर्णित सारी घटनाएं एवं लड़ाईयां प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष महोबा के आसपास केन्द्रित है। या तो महोबा के आसपास युद्ध होते है या महोबा की किसी समस्या के कारण सुदूरवर्ती देश बलख बुखारे तक इनके कथानक का विस्तार हो जाता है। इस पंवारे में आल्हा ऊदल और परमाल के अनेक कुटुम्बियों की वीरगाथाओं का अतिरंजित वर्णन मिलता है।

इन दोनों वीरो ने पृथ्वीराज जैसे सम्राट को भी छठी का दूध याद दिलाया है। इसमें मुख्यत: विवाहो का वर्णन है। विवाह बलपूर्वक कन्या अपहरण द्वारा सम्पन्न होते है।

अत: प्रत्येक विवाह के साथ युद्ध अनिवार्य हो जाता है। आद्योपान्त मुख्य रूप से वीरता और गौण रूप से श्रृंगार भावना की रम्य झांकी परिव्याप्त हैं। अन्त में बनाफर बंशी वीरों का युद्ध में सर्वनाश हो जाता है। आल्हा और उनका पुत्र इन्दल कजरी वन की ओर चले जाते है। वे अमर है आल्हा अमर है, दुनियां में इनको कोई मरईया नइयां और महोबे के दु:ख को दूर करने के लिए वे वापस आयेगें, लोगों को ऐसा विश्वास है।

रचनाकार के सम्बन्ध में विचार -

हिन्दी साहित्य के वीरगाथा काल के अंतर्गत आल्हा का उल्लेख आता है। ऐसा माना जाता है कि महोबा के राजा परमर्दिदेव के भान्जे जगनिक ने सम्वत 1230 में इसकी रचना की थी।

जगनिक राजा परमर्दिदेव (राजा परमाल) के दरबार में थे। जगनिक को अपने मामा मामी की ओर से आत्मरय स्नेह मिलना स्वाभाविक था। रानी मल्हना जब कोई अत्यावश्यक मंत्रणा का अनुभव करती थी तब जगनिक उनके पुत्र की अपेक्षा अधिक निकट होते थे। सात लाख सेना को लेकर पृथ्वीराज ने महोबा को आ घेरा तब महोबा की संकटापन्न स्थिति बहुत दयनीय थी -

* प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म. प्र.)

घेरा डारो चार दिसा सो, फाटक बंदी दई कराय।
बाहर को भीतर जावे ना, ना भीतर को बाहर जाय।।
ऐसे समय परौ महुबे पे, विपदा कछू कही ना जाय।
उडै चिरैया जो महुबै से, चौड़ा बाज देत छुडवाय।
तुल तुल पानी महुबै जावै, दुख को कछू ठिकानो नाय।
रौवे रैयत चंदेले की, हा हम कौन देश भग जाये।
सेजै छोड़ दई पुरूशन ने, तिरियन तजे सबै सिंगार।
विपदा पर गई चंदेले पै, ना घर मंडलीक औतार।

ऐसे भीषण संकट के समय रानी मल्हाना ने पहले अपने पति से परामर्श करके और उनकी आज्ञा लेकर जगनिक के पास जाकर मंत्रणा की थी और जगनिक को आत्म विश्वास के साथ कन्नौज से आल्हा को मनाने के लिए भेजा था। मल्हना का आत्म विश्वास देखिये जगनिक के प्रति कैसा दृढ़ है।

विपत हमारी मेंटन के हित, तुम आल्हा को ल्याव मनाय।
मल्हना बोली कातर होके, जगनिक संकट होहु सहाय।
लाज काज सब हाथ तुम्हारे नैया खेय लगईयो पार।

आल्हा मनौआ प्रकरण की उपर्युक्त पंक्तियां हमारे कथन की प्रमाण है। जगनिक भी रानी के अगाध विश्वास के कारण घोर से घोर संकटों का सामना करते हुए अपने कर्तव्य का निर्वाह करते थे। आल्हा को मनाने आते समय बेतवा के तट पर चौड़ा और धांधू के साथ संघर्ष और कुड़हरी ग्राम के ठाकुर गंगासिंह से संघर्ष तो जगनिक ने सहा ही कन्नौज पहुंचने पर उन्हें राजा जयचन्द से बहुत स्नेह नहीं मिला।

उन्होनें तो बन्दीगृह में डालने का उपहासास्पद प्रयत्न भी किया परन्तु अन्त में बहादुर जगनिक की वीरता से प्रभावित होकर रानी मल्हना के सहयोग के लिए आल्हा को सहर्ष भेज दिया। आल्हा ऊदल सहयोगियों के साथ आये और युद्ध में विजय प्राप्त हुई।

लोक गाथात्मक महाकाव्य आल्हखण्ड की लोक प्रियता बुन्देलखण्ड में होना तो आश्चर्यकारी नहीं है, परन्तु कन्नौज और भोजपुर आदि में आल्हखण्ड को यहां जैसी ही लोकप्रियता प्राप्त हो जाना बहुत आश्चर्य की बात है। बुन्देल खण्ड बुन्देली भाषा के ही बनाफर क्षेत्र के अंतर्गत बनाफरी में रचा हुआ माना जाता है। महोबा की परिनिष्ठित बुन्देली में अद्यान्त अब तक लिखित रूप में उपलब्ध नहीं हो सका। परन्तु बुन्देलखण्ड के पार्श्ववर्ती प्रदेश कन्नौजी क्षेत्र में आल्हा वहां की परिनिष्ठित कन्नौजी बोली में मिलता है। और उससे भी अधिक आश्चर्य की बात है कि भोजपुरी क्षेत्र में तथा उसमें भी आगे बिहार आदि में भी आल्हा गाया जाता है। इस महाकाव्य में बुन्देली बनाफरी रूप में कानपुर के अल्हैतो ने कन्नौजी में भी इसे महोबा में सुनाया है।

आल्ह-खण्ड के संबंध में कन्नौजियों के अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष यह है कि आल्हा एक महान कथा है, जिसमें अनेक प्रकार के चरित्रो का वर्णन किया गया है। वाटर फील्ड दी ले ऑफ आल्हा ग्रियर्सन की भूमिका पृ. 20 इसमें वीर चरित्रो की प्रधानता है। आल्हा, ऊदल, मलखान, सुलखान, रूपानबारी, इन्दल, ब्रम्हा और ढेबा के चरित्र वीर भाव से ओत प्रोत है। ये राजपूती शौर्य एवं साहस का उच्चतम आदर्श प्रस्तुत करते है, मल्हना धैर्य और बुद्धिमत्ता की प्रतीक बन गई है। तथा बेला का चरित्र जन मानस में जौहर और करूण भाव का सहज उद्रेक कर देता है।

आल्हा और ऊदल भारतीय वीरता की परंपरा को अक्षुण्ण रखने के लिए ही मानो उत्पन्न हुए खडग उनका चिर मित्र है और उसी की नोक से वे सारी समस्याओं का समाधान करते है। स्थान-स्थान पर उन्हें भीषण युद्ध करने पड़ते है और वे अपनी वीरता और व्यक्तित्व से महोबा के सैंनिकों को भी युद्ध में प्रेरित करतें है। युद्धों की सजीवता तो इस लोक काव्य में पग-पग कर दृष्टिगोचर होती है। इन्दल के विवाह के समय हुये युद्ध का एक छोटा सा शब्द चित्र कन्नौजी में प्रस्तुत -

पैदर के संग पैदर अभिरे, औ असवारन ते असवार।
झुके सिपाही महुबे बाले, रहिगओ डेढ़ कदम मैदान।।
खैंचि सिरोही लई छत्रिन ने, दल में झुके बाँकुरे ज्वान।
मिले बखौरा है छत्रिन के, कल्ला मिले बछेरन क्यार।।
छप-छप-छप-छप तेगा बाजे, बोले खटक खटक तरवार।

आल्हा और ऊदल अपना जीवन ऐसे ही युद्धो को करते करते यशस्वी बनाते रहें। अपनी स्वामीभक्ति, रणकुशलता और उदारता को ही सर्वस्व मानकर चलते रहे। कारण की उन्हे महोबा की प्रतिष्ठा अपने प्राणो से प्रिय है। आल्हा लोक गाथा का भोजपुरी रूप बैसबारी से छोटा है। बैसबारी रूप की कथा बहुत वृहद है तथा उसमें छोटी-छटी अनेक उपकथाऐं वर्णित है। क्षण-क्षण में कथानक बदलता रहता है, परन्तु अन्त दोनो ही रूपो का एक समान है। सामान्य भोजपुरी आल्हा प्रकाशित बैसबारी से थोड़ी भिन्नता रखता है, जो अधिक भिन्नता दिखाई देती है। वह दोनो भाषाओं में भिन्नता के कारण है, परन्तु कथा के प्रधान चरित्रों एवं कथा के अन्त में समानता है।

प्रचार व्यापकता और लोकप्रियता की दृष्टि से कन्नौज और भोजपुरी आदि प्रदेशों के पंवारे या लोकगाथाओं में आल्हा का स्थान सर्वोपरि है। इसी का परिणाम है कि इसकी सूक्ष्म घटना की भी जानकारी सर्व साधारण को रहती है। वह सुनने और पढ़ने में लोगों को इतना रूचिकर प्रतीत होता है कि बार-बार सुनने और पढ़ने में व्यस्त व्यक्ति के घर के अन्य कार्य बाधक प्रतीत होने लगते है। इसकी ओजस्वता सर्व साधारण में वीरता का ऐसा संचार करती है कि सुनने वालो को लगता है जैसे वे युद्ध स्थल में बैठे हुए है तथा सारी घटनाओं को टेलीविजन पर आने वाले दृश्यों की तरह देख रहे हो। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि महाकाव्यों में चरित्र नायक के रूप में राम को जो प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है, पवारों में वहीं प्रतिष्ठा आल्हा और ऊदल को देने में लोग हिचकिचाते नहीं है।

मेरी कामना है कि एक बार लाखन जैसे आदर्श वीर और मल्हना रानी जैसी बुद्धिमती पतिवृता नारी देवलादेवी जैसी मातृभूमि की रक्षा हेतु समर्पित माता और उनके भान्जे महाकवि जगनिक पुन: आल्हा ऊदल के साथ इस राष्ट्र में जन्म ले और वे इस भारत भूमि के नवनिर्माण में सहायक हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. मधुकर पत्रिका मई 1941
2. आर्कोलिजीकल सर्वे रिपोर्ट भाग 21 पू. 174
3. बुन्देली लोक संस्कृति - डॉ. वंदना जैन का अप्रकाशित पी.एच-डी. का शोध प्रबंध
4. मामुलिया पत्रिका सम्वत 2039
5. कन्नौजी लोक साहित्य - डॉ. संतराम अनिल

****

भारत की अर्थव्यवस्था में शहरी-ग्रामीण अंतर को कम करने में ग्रामीण पर्यटन की भूमिका

डॉ. बिन्दु श्रीवास्तव*

समय की अनंतकाल धारा में जिसे कि हम शताब्दियों के कालखण्ड में विभाजित करके पहचानते हैं। समय के इसी कालखण्ड को अपनी महिमामयी प्रकृति के कारण हमने इसे आधुनिक युग भी कह रखा है। इस आधुनिक युग में विश्व के समस्त राष्ट्र विकास कार्यों और योजनाओं में संलग्न हैं। भारत भी इन विकास कार्यों एवं योजनाओं के आइने से बाहर नहीं है। विश्व के सबसे बड़े उद्योग के रूप में उभरा पर्यटन उद्योग के संबंध में भी भारत पीछे नहीं है।

भारत में एक विषय के रूप में पर्यटन हमारे संविधान में सम्मिलित नहीं है। 1950 में परिवहन मंत्रालय के एक अंग के रूप में इसे मान्यता प्राप्त हुई थी। पर्यटन विभाग की स्थापना 1965 में हुई उसी समय पर्यटन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से भारतीय पर्यटन विकास निगम गठित हुआ उसी समय राज्य सरकारों ने भी अपने पर्यटन विभागों और पर्यटन विकास निगमों की स्थापना की। विश्व पर्यटन संगठन ने सन् 1980 में मनीला में सम्पन्न हुई कान्फ्रेंस में प्रत्येक वर्ष 27 सितम्बर को विश्व पर्यटन दिवस के रूप में मानने का निर्णय लिया। भारत में 1982 में प्रथम पर्यटन नीति की घोषणा की गई जिसमें पर्यटन के महत्व को स्वीकारा गया। पर्यटन के विकास के लिए एक राष्ट्रीय समिति का गठन किया गया (परिप्रेक्ष्य योजना 1988)। 1992 में एक राष्ट्रीय कार्य योजना तैयार की गई। इस योजना के अंतर्गत पर्यटन के माध्यम से विदेशी मुद्रा अर्जन करना एवं रोजगार सृजन के अवसर प्राप्त करने के लिए नीतियां बनाई गई।

1994-95 में ''समग्र विश्व बाजार'' योजना बनाई गई। 2002 में फिर पर्यटन नीति बनाई गई और दसवीं पंचवर्षीय योजन (2002-2007) में पर्यटन को देश के संतुलित आर्थिक विकास का स्त्रोत माना गया और इस क्षेत्र से प्राप्त आय को ग्रामीण विकास में व्यय का लक्ष्य रखा गया। इन्हीं प्रयासों से भारत में अन्तराष्ट्रीय पर्यटकों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है और विदेशी मुद्रा कोष बढ़ रहा है। 2006 में 35 लाख अन्तराष्ट्रीय पर्यटक आए और 374 करोड़ अमेरिकी डालर की आय प्राप्त हुई। 2011 में 6.29 मिलियन अन्तराष्ट्रीय पर्यटक आए और 77591 करोड़ रु. की आय प्राप्त हुई 2012 जून तक 43760 करोड़ रु. की आय प्राप्त हुई और भारत में ही 2011 तक 850.86 मिलियन व्यक्तियों ने भ्रमण किया। ये आँकड़े बताते हैं इस ओर ग्रामीण पर्यटन का भी विकास किया जाए तो भारतीय ग्रामों की स्थिति को सुधारा जा सकता है।

भारत ग्रामों का देश है यहां की आत्मा गांवों में निवास करती है महात्मा गाँधी का यह कथन ग्रामीण विकास के उद्देश्य एवं महत्व पर बल देता है। ग्रामीण विकास के बिना भारत का विकास संभव नहीं है क्योंकि 2011 की जनगणना के अनुसार देश की 68.84 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है शेष 31.16 प्रतिशत ही शहरों में निवास करती है। यही नहीं 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में 6 2 लाख 40 हजार 867 गांव हैं और 7935 शहर हैं इस अंतर के बावजूद शहरी विकास गांवों से अधिक है। अत: गांवों के विकास के लिए ग्रामीण पर्यटन महति भूमिका अदा कर सकता है क्योंकि भारतीय गांवों की सामाजिक, आर्थिक संरचना के कई अनूठे आयाम हैं। ग्रामीण जीवन-खेत खलिहान, पकवान, वेषभूषा, संस्कृति, मेले, त्यौहार, रीति रिवाज, बोलियां, लोक संगीत और लोक नृत्य जैसे तत्वों से निर्मित होता है। आज भी शहरी समाज के लिए ग्रामीण समाज एक कौतूहल पूर्ण जनसमुच्चय है। ग्रामीण जन जीवन के सुनहरे, बहुरंगी आयामों से साक्षात्कार करने की सहज जिज्ञासा शहरी समाज में हमेशा से रही है परंतु काल के अंतराल की अवधारणा ने दोनों को हमेशा दूर रखने की कोशिश की है परंतु आज आवश्यकता इस बात की महसूस की जा रही है कि भारत की अर्थव्यवस्था में शहरी एवं ग्रामीण अंतर को कम कैसे किया जाए इसी बोधानुभूति जिज्ञासा और कोतूहल से उपजी है ''ग्रामीण पयर्टन की अवधारणा।'' भारत जैसे प्रगतिशील राष्ट्र के लिए ग्रामीण पर्यटन शहरी ग्रामीण अंतर को कम करने के लिए एक संभावनाशील क्षेत्र बन सकता है और भविष्य में ग्रामीण पर्यटन भारत के घरेलू पर्यटन का अत्यंत महत्वपूर्ण घटक सिद्ध हो सकता है।

ग्रामीण पर्यटन से ग्रामीण अर्थव्यवस्था गतिशील बनेगी और विदेशी पर्यटकों को भी ग्रामीण आंचल में लाया जा सकता है जिससे ग्रामीण अंचलों में आधारभूत अधोसंरचना के निर्माण में सफलता मिलेगी और इस तरह हम ग्रामों को शहरों से जोड़ने में सफल हो सकते हैं और ग्रामीण शहरी अंतर को कम कर सकते हैं। पं. जवाहर लाल नेहरू जी ने भी कहा था- गांवों का रक्त शहरों के ढाँचे को मजबूत बनाने का सीमेंट बनाता है। मैं चाहता हूं कि यह रक्त जो शहरों की धमनियों को फुला रहा है पुन: गांवों की धमनियों में बहने लगे। उपरोक्त कथन की सार्थकता आज के परिवेश में यदि पूर्णत: लागू हो जाए तो निश्चित ही हम शहरी ग्रामीण अंतर की खाई को पाटकर ग्रामीण पर्यटन की महती भूमिका को रेखांकित करने में सफल हो सकते हैं। इसलिए अविलम्ब उन कतिपय सुझावों के साथ ग्रामीण पर्यटन का क्रियान्वयन किया जावे। ऐसे कतिपय सुझाव निम्नानुसार हैं :-

(1) सर्वप्रथम जो अत्याधिक जरूरी कदम है और ग्रामीण पर्यटन में संजीवनी का काम कर सकता है वह यह है कि भारत सरकार ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए विभिन्न प्रकार की जो योजनाएं बना रही हैं उन योजनाओं को ग्रामीण पर्यटन विकास से भी जोड़ा जाए क्योंकि ये योजनायें जो विकास के लिए बनी हैं ग्रामीण जन-जन से जुड़ी हैं। ग्रामीण स्तर की जन समस्याओं से परिचित हैं वे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने के साथ-साथ ग्रामीण पर्यटन विकास में सक्रिय सहयोग दे सकती हैं और ग्रामों को शहरों से जोड़ने का काम बखूबी कर सकती हैं।

(2) ग्रामीण पर्यटन की नींव आवागमन के साधनों पर निर्भर करेगी इसकी सफलता के लिए जरूरी ही नहीं वरन् अपरिहार्य है कि सरकार को सभी मार्गो रेल, सड़क, हवाई की समूची व्यवस्था करनी होगी जिससे शहर-ग्रामीण अंचलों से जुड़ जाएंगे और इसका अंतर कम

* सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म. प्र.)

हो सकेगा। इन मार्गों की व्यवस्था में सरकार को दोहरा लाभ भी प्राप्त हो सकेगा एक ओर तो वह अपने राष्ट्र के बेरोजगारों को रोजगार दे सकेगी दूसरी ओर सरकार इन मार्गों पर कर लगाकर आय प्राप्ति का साधन भी प्राप्त कर सकती है। 3

(3) ग्रामीण पर्यटन के अविवेकपूर्ण विकास पर प्रतिबंध और संवेदनशील क्षेत्रों - पहाड़ी ढालों, तटीय क्षेत्रों, प्रदेशीय उद्यानों और अभ्यारण्यों में पर्यटन गतिविधियों के सख्त नियम बनाए जाएं। वन्य जीव अधिनियम 1972 एवं वन संरक्षण अधिनियम 1980 के तहत् सुरक्षा का कार्य किया जाए। ग्रामीण अंचलों में तो भी ग्रामीण पर्यटन को बढ़ाया जा सकता है।

(4) भारत का होटल ओबेराय ग्रुप 35 लक्जरी होटलों का स्वामित्व रखता है 7 देशों में प्रथम श्रेणी के अन्तराष्ट्रीय होटल संचालित करता है इस समूह के पास दो ब्रांड के होटल हैं - (1) डीलक्स ओबेरॉय ब्रांड (2) ड्रायडेन्ट ब्रान्ड जब देश में ही इतने अच्छे होटल निर्माता हैं तो इन्हें ही ग्रामीण क्षेत्रों के होटलों के निर्माण में आगे आकर ग्रामीण क्षेत्रों की बेकार पड़ी भूमि का उपयोग कर आवास की समुचित व्यवस्था के मतंव्य को पूरा करके ग्रामीण पर्यटन की अवधारणा को सार्थक करना होगा।

(5) ग्रामीण ऐतिहासिक एवं पौराणिक स्थलों का विकास किया जाए स्मरणीय स्थलों को आकर्शक एवं सुन्दर बनाने की कोशिश की जाए इसमें जो श्रम शक्ति का प्रयोग होगा उसमें ग्रामीण श्रम शक्ति कार्य कर सकती है। इस प्रकार से ऐतिहासिक स्थलों को सुरक्षित भी रखा जा सकता है और संरक्षण भी मिलता रहेगा।

(6) ग्रामीण पर्यटन के विकास के बहु आयामी कार्यों में शहरी अर्थव्यवस्था का सहारा लिया जाए ताकि शहरी व्यक्ति गांवों के विकास के लिए ग्रामवासियों के साथ कार्य करने को तैयार हो जाए फलस्वरूप शहरी ग्रामीण अंतर कम होता चला जाएगा।

(7) ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष अवसरों पर मेला की परम्परा रही है उन मेलों में शहरी वस्तुओं को रखा जाए ताकि शहरी व्यक्ति गांवों में जाकर अपना व्यापार करें जिससे उनका लगाव ग्रामीणता की ओर बढ़े।

(8) संचार और कम्प्यूटर के क्षेत्र में तकनीकी विकास को पर्यटक सूचना नेटवर्क के लिए लाभदाय ढंग से उपयोग में लाना चाहिए।

(9) ग्रामीण के विकास को निजी क्षेत्र के नेतृत्व में छोड़ देना चाहिए। जिसमें शहरी निजी वर्ग भी हिस्सेदारी कर सकेगा।

(10) पर्यटन नीति तैयार करने, परिप्रेक्ष्य योजना बनाने और ग्रामीण पर्यटन की परियोजनाओं और स्कीमों की देख-रेख और उन्हें समन्वित करने का उत्तरदायित्व राज्यीय पर्यटन बोर्ड के पास होना चाहिए ताकि ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों को विकास के योगदान का पूरा-पूरा लाभ मिल सके।

(11) ग्रामीण पर्यटन के विकास में पंचायतों और राजनेताओं की भूमिका को भी रेखांकित किया जाना चाहिए क्योंकि वे ही ग्रामीण पर्यटन विकास की क्या-क्या सम्भावनाएं हो सकती हैं भली-भांति बता सकते हैं इस दृष्टि से पर्यटन मंत्रियों की एक समिति स्थापित करनी चाहिए जो ग्रामीण पर्यटन के विकास के संगठित दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती रहे।

(12) ग्रामीण पर्यटन के विकास से मौसमी बेरोजगारी जो ग्रामीण क्षेत्रों में विशेष रूप से पाई जाती है दूर की जा सकती है पर्यटक गाइड के रूप में। ग्रामीण पर्यटक गाइड पर्यटकों को आसानी से उन्हें अपने क्षेत्र में घुमा सकते हैं।

(13) पर्यटन को शहरी एवं ग्रामीण विकास का साधन बनाने के लिए शहरी एवं ग्रामीण जन समूह को पर्यटन उद्योग के विकास में सम्मिलित करने का संगठित प्रयास करना चाहिए ताकि अधिकाधिक पर्यटकों का उद्यानों और आरक्षित क्षेत्रों में आगमन होने लगेगा जिससे उद्यान प्रबंध के लिए दान प्राप्ति के द्वारा इन क्षेत्रों के संरक्षण में सक्रियता के साथ जुट जाने का अवसर मिलेगा।

राष्ट्र की अर्थव्यवस्था में ग्रामीण और शहरी अंतर को कम करने में ग्रामीण पर्यटन महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है क्योंकि जब इन सुझावों के साथ और सरकारी उपायों के साथ कार्य किए जाएंगे तो नि:संदेह शहरी अर्थव्यवस्था ग्रामीण अर्थव्यवस्था की अधोसंरचना के निर्माण के लिए निवेशक कुछ अंश उपलब्ध करा सकेगी और श्रम शक्ति का निवास गांवों में बढ़ सकेगा। ग्राम आत्म निर्भर बन सकेंगे और ग्रामीण पर्यटन शहरी ग्रामीण अंतर को कम करने के लिए एक अत्यंत उपयुक्त उद्योग बन जाएगा।

यदि ग्रामीण पर्यटन शहरी ग्रामीण अंतर को कम करने की अमीश्ट संकल्पना के साथ समसामयिक चुनौतियों के परिप्रेक्ष्य में स्वयं को सामर्थ्यवान बनाकर नूतन उत्साह और अदम्य संकल्प के साथ नई जिजीविर्षो लेकर अपनी आगामी जय यात्रा शुरू करें तो कोई कारण नहीं कि उसकी सफलता का शंखनाद ग्राम, शहर, राज्य, राष्ट्र एवं विदेश के पर्यटकों के मानस को उल्लासित न कर सकें तब ग्रामीण पर्यटन नए-नए शिखरों पर नए-नए मानदण्ड स्थापित करता हुआ स्वयं को ग्रामीण शहरी अंतर को कम करने का पर्याय भी बना सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ-

1. नागर विमानन एवं पर्यटन मंत्रालय : नेशनल एक्शन फॉर टूरिज्म मई, 1992, भारत सरकार
2. सिंह, रतनदीप : टूरिज्म टुडे मार्केटिंग एण्ड प्रोफाइल कनिश्क, दिल्ली, 1992, भाग 1 और 2
3. मध्यप्रदेश सन्देश : जनसम्पर्क भवन, वाणगंगा, भोपाल, दिसम्बर 2004 जनवरी 2005
4. कुरुक्षेत्र : कमरा नं. 655/661 ए विंग ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, अक्टूबर 2004
5. पारिस्थितिकी पर्यावरण और पर्यटन : इंदिरा गांधी राष्ट्रीय युक्त विश्वविद्यालय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
6. पन्त डॉ. डी.सी. : भारतीय अर्थव्यवस्था, 2012
7. पन्त डॉ. जे.सी. : भारत में ग्रामीण विकास, 2011
8. इन्टरनेट से प्राप्त आंकड़ों की जानकारी

****

समाजवादी दर्शन : एक दृष्टि

डॉ. पुष्पा कपूर *

सारांश : समाजवाद 'सोशलिज्म' का हिन्दी अनुवाद है। समाज समता की यह अवधारणा पश्चिमी देशों की देन है, जिसमें शोषण मुक्त समाज की संकल्पना निहित है। भेदभावरहित आर्थिक एवं सामाजिक नीतियाँ समाज में सभी को प्रगति के समान अवसर सुलभ कराऐं जिससे उच्च लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। भारत के संदर्भ में डॉ. राममनोहर लोहिया ने पाया कि यहाँ राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ-साथ सामाजिक एवं आर्थिक नीतियों का भी पुनर्निर्माण होना आवश्यक है। ''जब आजादी मिल गई तब उस समाजवाद का सिर्फ एक मतलब रह गया था और वह था औद्योगिकरण। इसमें शह नहीं कि सचमुच औद्योगिकरण हिन्दुस्तान में हो जाए तो बड़ा भारी फर्क आ जाएगा। मैं इस बात को मानता हूँ कि खेती-प्रधान देश अगर कहीं मशीन-प्रधान देश बन जाए तो इसमें बड़े फर्क आऐंगे।''

इस प्रकार लोहिया दिखावटी आधुनिक होने एवं आधुनिकता के नाम पर बुरी आदतों के गुलाम होने की मानसिकता का विरोध करते हैं। तभी वे कहते हैं, ''समाजवाद का असली मतलब या समाजवाद जिस आर्थिक उन्नपंथ से निकला था, वह यह था कि कारखानों के ऊपर करोड़पतियों की मिलकियत न होकर, पूंजीपतियों की न होकर, समाज की होगी।'' लोहिया का समाजवाद से अभिप्राय यह था कि समाज का प्रत्येक सदस्य समान है, उनमें ऊँच-नीच का कोई भेद नहीं है। अत: सभी को समान अधिकार मिले, जिससे सर्वांगीण उन्नति हो सके। अपने इस समाजवादी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हर महत्वपूर्ण मुद्दे पर वे क्रान्ति के लिए आगे रहे, चाहे वह मुद्दा राष्ट्र-भाषा का हो, जाति-भेद का हो या आर्थिक-असमानता की जड़ दाम-नीति का हो।

लोहिया समाज के द्वारा मानव के समग्र जीवन में आमूलचूल परिवर्तन चाहते रहे। केवल आर्थिक विकास को केन्द्र-बिन्दु मानने से नीतिहीन सत्ता, राष्ट्र का पतन कर देगी। अत: वे मार्क्स के विचारों के यहाँ विरोधी हैं। वे राज+नीति को अभिन्न मानते रहे। नीति के बिना चरित्र का पतन होता है तो नीतिविहीन राजनीति भी पतन की ओर अग्रसर होगी।

लोहिया की उदारतावादी दृष्टि आम-जन को अत्यन्त निकट से जानती थी। यही कारण है कि ''लोहिया समाजवाद को आर्थिक नीतियों से ऊपर एक जीवन-दर्शन मानते थे। वह जीवन के हर क्षेत्र तथा समुन्नति का सिद्धांत है। कोई भी सच्चा समाजवादी केवल आर्थिक सुधारों से ही संतुष्ट नहीं होता है अपितु वह अपनी एक विशिष्ट शैक्षणिक, नैतिक एवं सौन्दर्यात्मक नीति का भी प्रतिपादन करता है। इस प्रकार जीवन के विविध पक्षों के विकास के साथ ही, समग्र मानवता की पीड़ा को बिना भेदभाव के दूर करने का प्रयास लोहिया ने किया जो प्रमाणित करता है कि प्रतिभा एवं उदारता का समन्वय जिस मानव में हो वह देशह ाल की सीमा से ऊपर उठ जाता है।

लोहिया के मानववादी चिंतन में सामाजिक पक्ष के साथ-साथ आर्थिक पक्ष का भी समावेश है। आर्थिक स्तर पर उन्होंने चाहा कि आय का अधिकतम एवं न्यूनतम स्तर जो देश में पाया जाता है, उसमें अंतर कम से कम हो। जितना ये अंतर घटेगा उतनी विशमताऐं भी घटेंगी और यह अंतर जितना अधिक होगा अलगाव की खाई गहरी होती जाएगी। लोहिया कहते हैं, ''सम्पत्ति के मोह और सम्पत्ति की असलियत दोनों को घटाना पड़ेगा। एकांगी काम से दुनिया नहीं बनेगी। बिना सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण किये हुए, बिना सम्पत्ति को पंचायती बनाये हुए हिन्दुओं ने सम्पत्ति के मोह को खत्म करने की कोशिश की, वह बेकार है। उसी तरह से बिना सम्पत्ति के मोह का नाश किये हुए सम्पत्ति के राष्ट्रीयकरण की जो कोशिश समाजवादी या साम्यवादी कर रहे हैं, वह भी बेकार साबित हुई। मुझे ऐसा लगता है कि हमको इस तरह का मन और इस तरह के कार्यक्रम बनाने पड़ेंगे, जिसमें एक तरफ तो सम्पत्ति के मोह का नाश हो और दूसरी तरफ राष्ट्रीयकरण हो।''

देश में एक धनाढ्य वर्ग है, जहाँ तिजोरियाँ भरी पड़ी है, तो दूसरी ओर विपन्न वर्ग है, जहाँ न भरपेट भोजन है, न तन ढकने को वस्त्र हैं, न ही रहने को घर है। अत: लोहिया चाहते हैं कि आमजन के हितों को ध्यान में रखते हुए सरकारी नीतियाँ बनें। वे देश की सम्पत्ति पर देश की जनता का अधिकार मानते हुए जन-हित में उस सम्पत्ति का उपयोग करने के पक्षधर थे। जीवन के अंतिम दिनों में भी मानव धर्म के इस मसीहा ने कहा, ''जो पैसा ज्यादा खर्च करने वाले लोग हैं, वे पचास लाख हैं, खर्च की सीमा बांध दी जाए। कोई हजार रूपये से ज्यादा खर्च न कर पाए। तब बहुत बचत हो सकेगी।'' लोहिया चाहते थे कि देशवासियों की बचत देश के आर्थिक विकास में लगाई जाए और नैतिक आधार पर आर्थिक समृद्धि लाई जाए। आम-जन की आवश्यक आर्थिक जरूरतों को जन-सहयोग के द्वारा पूरा किया जाए।

लोहिया ने साम्यवादी प्रणाली को अनुपयुक्त माना क्योंकि यह मानव समानता की स्थापना, बिना नैतिकता के करने का प्रयास करती है। लोहिया साम्यवाद एवं पूँजीवाद दोनों को ही मानव जाति का जीवनस्तर उन्नत करने एवं एक जीवन पद्धति के रूप में अपूर्ण मानते हैं। ये दोनों ही प्रणालियाँ सीमित मनुश्यों के उत्थान के मार्ग हैं। आम-जन की स्वतंत्रता एवं समृद्धि इनसे सम्भव नहीं है। पूँजीवाद में उत्पादन के साधनों पर व्यक्तिगत स्वामित्व बना रहता है, जबकि साम्यवाद में सामाजिक स्वामित्व कायम रहता है। लोहिया इन दोनों व्यवस्थाओं को अल्पविकसित देशों के लिये उचित नहीं मानते। जहाँ पूँजी कम है, वहाँ छोटी मशीनों के इस्तेमाल से विकास तो होगा ही, साथ ही ज्यादा लोगों को रोजगार मिलने से सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव होगी।

इस प्रकार लोहिया जनतांत्रिक समाजवाद का समर्थन करते हैं। यह लोहिया का मानव सेवा का संकल्प ही था, जब उन्होंने आम-जन को राष्ट्र की उन्नति से जोड़ने हेतु प्रेरित किया कि, ''एक घण्टा देश को अर्थात् मातृभूमि का हर सपूत अपनी दिनचर्या में से एक घण्टा मातृभूमि की सेवा के लिए दे।'' वे भेदभाव, चरित्रहीनता एवं शोषण से समाज को मुक्त करके मानवमात्र को उन्नति के समान अवसर सुलभ कराने का प्रयत्न करते हुए विश्व-मानववाद की नींव रखते हैं। लोहिया मानव की भीतरी शक्ति को जगाना चाहते है, क्योंकि यह शक्ति मानव को उसका गौरव दे सकती है।

संदर्भ ग्रंथ

1. सम्पादक ओंकार शरद : लोहिया के विचार, पृश्ठ 27,37
2. राजेन्द्र मोहन भटनागर : समग्र लोहिया - पृश्ठ 46, 47, 141।
3. राजेन्द्र मोहन भटनागर : डॉ. लोहिया का जीवन दर्शन
4. डॉ. राममनोहर लोहिया, अुनवाद श्री भगवान : दृष्टि, संकल्प, कर्म
5. डॉ. राममनोहर लोहिया, अनुवाद ओंकार शरद : इतिहास चक्र (1977)
6. ओंकार शरद : लोहिया (1977)
7. राजेन्द्र मोहन भटनागर : समग्र लोहिया (1982)

* प्राध्यापक - दर्शनशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म. प्र.)

प्राचीन वर्णाश्रम व्यवस्था में नारी शिक्षा की समीक्षा

प्रो.के.आर. सूर्यवंशी*

प्राचीन भारत में अनेक दृष्टियों से नारी का स्थान महत्वपूर्ण था । शिक्षा के क्षेत्र में तो नारियों की स्थिति विशेष दर्शनीय है । वे यज्ञ कार्य में सम्मिलित होती थी और बिना किसी लिंग भेद के शिक्षा ग्रहण भी उपलब्ध है., जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि नारियां विद्याध्ययन करती थीं और यज्ञ भी करती थीं । विदुषी नारियों ने ऋग्वेद के अनेक मन्त्रों की रचना का कार्य भी किया है । हिन्दू अनुश्रुतियों के अनुसार 20 कवयित्रियों की रचनाएं पायी जाती है । उनमें से विश्ववारा, सिकता, निवावरी, घोषा, रोमशा, लोपामुद्रा, अपाला तथा उर्वशी अधिक प्रसिद्ध थीं । पुरूष पत्नी के साथ ही यज्ञ कर सकता था[1]। यज्ञ के पूर्व पति-पत्नी दोनों को एक विशिष्ट प्रकार का उपनयन करना पड़ता था[2] । नारियां भी यज्ञ कार्य में पुरूष के ही समान सक्रिय रहती थी [3]। मौर्यकाल के अन्त तक पत्नी को अकेले प्रतिदिन संध्या के समय गृहाग्नि में हविष् डालना पड़ता था[4] । आग्रहायणा विधि को स्रस्तरारोहण संस्कार में पत्नी को कई वैदिक मन्त्रों का पाठ करना पड़ता था[5] । रामायण से यह ज्ञात होता है कि राम के युवराज पद पर अभिषेक के लिए प्रात: काल से कौशल्या यज्ञ कर रही थी[6] । रावण के यहां बन्दी रहने के समय जानकी संध्योपासना करती थी [7] । पाण्डवों की जननी अथर्ववेद की ज्ञाता थी [8] ।

स्त्रियों के द्वारा संध्योपासना और वैदिक मन्त्रों के पाठ से यह सिद्ध होता है कि इनका भी उपनयन किया जाता था । अथर्ववेद में कन्याओं के द्वारा ब्रह्मचर्य व्रत के पालन का विवरण मिलता है[9] । सूत्र साहित्यों और स्मृतियों से भी बालिकाओं के लए उपनयन संस्कार की अनिवार्यता की पुष्टि हो जाती है । यद्यपि ईसा की आरंभिक शताब्दियों में बालिकओं का उपनयन बन्द हो गया था, किन्तु स्मृतिकारों ने पूर्व काल में बालिकाओं का उपनयन किया जाना स्वीकार किया है [10] ।

वैदिककाल में बाल-विवाह का प्रचलन नहीं था, किन्तु बालिकाएं उतनी उम्र तक अविवाहित नहीं रह सकती थीं, जितनी उम्र तक युवक रहते थे युवतियों का विवाह 16 या 17 वर्ष की आयु में हो जाता था और इसके पश्चात् अध्ययन जारी रखने वाली युवतियों को ब्रह्मवादिनी कहा जाता था । सद्योवधू को यज्ञों के लिए आवश्यक वैदिक मन्त्रों का ज्ञान करा दिया जाता था और उनको संगीत तथाा नृत्य कला की शिक्षा दी जाती थी [11] । ब्रह्मवादिनी युवतियां अध्ययन समाप्त कर लेने के पश्चात् विवाह करती थीं । कुछ ऐसी भी बालिकायें थी जो आजीवन विवाह नहीं करती थीं [12] ।

ब्रह्मवादिनी नारियां बहुमुखी योग्यता रखती थी और वे मन्त्र की रचना भी करती थीं । वैदिक-ज्ञान एवं यज्ञ संबंधी अध्ययन के लिए मीमांसा शाखा का उदय हुआ । यद्यपि यह गणित से भी शुष्क विषय था, किन्तु काशकृत्स्नी ने मीमांसा पर एक पुस्तक की रचना की थी, जिसका नाम उसी के नाम के आधार पर रखा गया था । इसका अध्ययन करने वाली छात्राओं को काशकृत्स्ना कहते थे । इससे यह स्पष्ट होता है कि नारियों का एब बड़ा समुदाय शिक्षा लेता था । हम यह भी निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि साधारण साहित्यिक एवं सांस्कृतिक शिक्षा ग्रहण करने वाली नारियों की संख्या पर्याप्त रही होगी ।

उपनिषद्-काल में नारियां दर्शन के अध्ययन में भी रूचि लेने लगी । याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी ऐसी ही नारी थी । वह दर्शन से संबंधित गंभीर समस्याओं में रूचि लेती थी[13] । जनक के यज्ञ के अवसर पर आयोजित दार्शनिक शास्त्रार्थ में गर्मी के प्रश्न सर्वाधिक दुरूह थे [14] । गार्गी के प्रश्न इतने सूक्ष्म एवं कठिन थे कि याज्ञवल्क्य ने सार्वजनिक दुरूह थो [14] । गार्गी के प्रश्न इनते सूक्ष्म एवं कठिन थे कि याज्ञवल्क्य ने सार्वजनिक स्थान में उत्तर देने से इनकार कर दिया । इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि वह न्यायशास्त्र एवं दर्शन में निष्णात थी । उत्तर-रामचरितम् की आत्रयी भी इसी प्रकार की विदुषी नारी थी, जिसने वाल्मीकि एवं अगस्त्य से वेदान्त की शिक्षा ग्रहण की [15] । ऐसा प्रतीत होता है कि इस काल में सुलभा, बढ़वा, प्रार्थितेयी आदि नारियां भी अत्यधिक विदुषी थीं, क्योंकि ब्रह्मयज्ञ में वर्णन दिये जाते समय ऋषियों में इनके भी नाम लिये जाते है [16] ।

प्राचीन काल में नारियों के लिए परदे की बाध्यता नहीं थी और यह प्रथा बारहवीं शताब्दी तक कायम रही । अत: महिलाओं के लिए शिक्षा में कोई कठिनाई नहीं होती थी । बहुधा बालिकाओं को उपाध्यायें पढ़ाती थी [17] । पाणिनि ने कन्या विद्यालयों का उल्लेख किया है [18] । सम्भवत: विदुषी नारियां ही इनकी संरक्षिकाएं होती थी । संस्कृत साहित्य में उपाध्याय और उपाधयायानी शब्दों की उपस्थिति इस कल्पना के बल प्रदान करती है । उपाध्याया शब्द का तात्पर्य महिला शिक्षिकाओं से ही है ।

नारियों की सहशिक्षा से संबंधित साक्ष्य बहुत कम मिलते हैं । भवभूति के मालती-माधव (आठवीं शताब्दी) से यह होता है कि भूरिवसु तथा देवराट् के साथ कामन्दकी की शिक्षा एक ही पाठशाला में हुई थी । इसे यह पुष्टि हो जाती है कि भवभूति के समय में भले ही यह न रहा हो किन्तु उसके कुछ शताब्दी पूर्व बालिकायें भी बालकों के साथ उच्च शिक्षा ग्रहण करती थीं । इसके परिणामस्वरूप कभी-कभी गान्धर्व विवाह भी होते थे । ऐसा प्रतीत होता है कि योग्य शिक्षिकाओं के न मिलने पर लड़कियों को शिक्षा-दीक्षा के लिए आचार्यो के पा जाना पड़ता था । यह प्रथा उस समय प्रचलित थी, जिस समय गांधर्व विवाह असामान्य नहीं था [19] ।

वैदिक साहित्य में ऐसे उल्लेख मिलते हैं, जिनसे यह ज्ञात होता है कि विदुषी पुत्रियों की उत्पत्ति के लिए अभिभावक यज्ञ भी करते थे [20] । अत: स्पष्ट है कि उस काल में ऐसे जनकों की कमी नहीं थी, जो अपनी पुत्रियों को सुशिक्षित देखने के लिए उत्सुक थे । साधारण परिवार में भी महिला शिक्षा उपेक्षित नहीं थी । सम्पूर्ण आर्य कन्यायें कुछ न कुछ वैदिक और साहित्यिक शिक्षा अवश्य ग्रहण करती थीं । यह स्थिति ईसा पूर्व 500 तक बनी रही [21] ।

धीरे-धीरे धर्मशास्त्र काल में नारियों का स्तर गिरने लगा और आलोच्य शास्त्रों से यह ज्ञात होता है कि बालिकाओं के उपनयन पर क्रमश: प्रतिबन्ध लगने लगा । मनुस्मृति (ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी) में यह लिखा गया है कि बालिकाओं के उपनयन में वैदिक मन्त्र नहीं पढ़ने चाहिये [22] । अगले श्लोक में यह भी कहा गया है कि स्त्रियों का विवाह ही उनका उपनयन है [23] । याज्ञवल्क्य ने बालिकाओं के उपनयन पर ही प्रतिबन्ध लगा दिया और शूद्रां के समान उनके अनुयायियों ने नारियों को वेदोच्चारण एवं यज्ञ के लिए अयोग्य घोषित कर दिया [24] । तब से गृह्मयज्ञों मं पत्नी का पति से सहयोग केवल दिखाने के लिए रह गया । कुछ धर्मशास्त्र ऐसे भी थे, जो इसके भी विरोधी थे [25] ।

स्त्रियों के लिए वैदिक शिक्षा पर लगाये गये प्रतिबन्ध का आकलन करने

* विभागाध्यक्ष संस्कृत, राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)

से ऐस प्रतीत होता है कि वैदिदक साहित्य का विस्तार हो जाने के कारणा मन्त्रों को शुद्ध रूप में कण्ठस्थ करने के लिए पर्याप्त समय की आवश्यकता थी जबकि सम्पन्न परिवारों की बालिकाओं का विवाह सोलह या सत्रह वर्ष की अवस्था में हो जाता था। इसलिए उन्हें मंत्रों की आवृत्ति एवं शुद्धता बनाये रखना कठिन कार्य हो गया था। इसलिये वेदाध्ययन की पूर्णता एवं मन्त्रोच्चारणा की शुद्धता इनमें नहीं आ पाती । वेदों का अल्प ज्ञान भयंकर समझा जाता था। इसलिए इनको वेद की शिक्षा से वंचित हो जाना पड़ा [26]।

उपनयन बन्द करने के अनेक दुष्परिणाम हुए और इनके विवाह की आयु न्यून होने लगी । मनु के वैदिक काल में प्रचलित 26 व 17 वर्ष की आयु को कम करके विवाह के लिए 12 वर्ष की आयु यथोचित बतलाई[27]। याज्ञवल्क्यूं , सम्वर्त, यम आदि धर्मशास्त्रकारों ने रज-दर्शन तक बालिकाओं का विवाह न करने वाले सरंक्षकों की अत्यधिक निंदा की है [28]।

धर्मशास्त्र काल में भी धनी, सुसंस्कृत, सामंत और राजघरानों में नारी-शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता था। इन परिवारों में बालिकाओं को यद्यपि वैदिक शिक्षा नहीं दी जाती थी, तथापि साहित्य की शिक्षा उन्हें पर्याप्त मिलती थी। नारियां संस्कृत एवं प्राकृत समझ लेती थी, एवं व्याकरण सम्बंधी दोष खोज लेती थी। साधारणतया गृहविज्ञान तथा ललितकलाओं यथा गीत, चित्रकला, नृत्य, माला बनाना आदि की उन्हें विशेष शिक्षा दी जाती थी[29]। धनी परिवारों में बालिकाओं की शिक्षा के लिए अध्यापक नियुक्त होते थे। अग्निमित्र के महलों में सोमदत्त और गणदास इस कार्य के लिए नियुक्त थे। भास की 'स्वप्नवासवदत्तम्' के वीणा वादन एवं माल्यग्रंथन कला का वर्णन मिलता है। भारतीय परम्परा में नारी को सृष्टि तथा सामाजिक संतुलन का कारणभूत आवश्यक अंग माना गया है। पुराणों में इनको धारिणी, वसुंधरा, वैन्य के रूप में कहा गया है[30]। अथर्ववेद के एक मंत्र में वीर पुत्र की प्रार्थना की गई है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् में भी शकुन्तला के विदा होते समय वीरप्रसवा का आशीर्वाद दिया गया है[32]।

प्राचीन काल में सभी वर्णो में कन्या के प्रति बड़े ही उदार विचार थे और इनको रत्नकोटि में माना जाता था। मतस्यपुराण में शीलसम्पन्न कन्या को 10 पुत्रों के बराबर माना गया है[33]। कन्या के प्रति पिता के स्नेह की पराकष्ठा देवयानी के वर्णन में दिखलाई पड़ती है। नारी की प्रतिष्ठा माता के रूप में सर्वोच्च थी और माता की आज्ञा अनतिक्रमणीय मानी जाती थी[34]। धर्मशास्त्रों में यह भी मिलता है कि मातृ रक्षा धर्म प्रेरित कर्तव्य था[35]। पार्वती के आदेश के अनुपालन में शिव-गणेश युद्ध इसका उदाहरण है।

नारियों को अवध्य समझा जाता था। वर्णन में क्रम में शत्रु पक्ष की स्त्रियों को भी अवध्य बताया गया है। इस अवध्यता का प्रतिपादन वैदिक कला में ही हो चुका था। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार स्त्री साक्षात लक्ष्मी है, जिसकी हत्या करना उचित नहीं है[36]। यह परम्परा उत्तरकाल में भी सजीव थी और मनुस्मृति में स्त्रीहन्ता को राजदण्ड का भागी माना गया है [37]।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्राचीन वर्णाश्रम, शिक्षा व्यवस्था के अंतर्गत नारियों के लिए भी शिक्षा की उपयुक्त व्यवस्था थी। प्रत्येक वर्ण की बालिकाएं अपने स्वभाव एवं गुण के आधार पर वर्णगत कर्मो की शिक्षा प्राप्त करती थी। इसीलिए नारी शिक्षा के अंतर्गत नारियों की प्रवीणता, आध्यात्मिक, रचनात्मक एवं कलात्मक सभी क्षैत्रों में दिखलाई पड़ती है। वैदिक परम्परा के अंतर्गत बालिकाओं के भी विधिवत उपनयन संस्कार किए जाते थे और वे भी विकास पर्यन्त वर्णोचित शिक्षा ग्रहण करती थी।

नारी शिक्षा व्यवस्था के अंतर्गत राष्ट्रोचित, समाजोचित, परिवारोचित शिक्षा विषयों के साथ-साथ स्त्रियोचित विषयों की भी शिक्षा प्रदान की जाती थी। इनको गृहशास्त्र के साथ-साथ नृत्य-संगीत आदि की शिक्षा प्रदान की जाती थी।

वैश्य एवं शुद्र वर्णो की कन्याएं पितृगत कार्यो की शिक्षा के द्वारा अनेक प्रकार के व्यावसायिक शिल्पों में पारंगत हो जाती थी। नारियों में भी सम्पूर्ण प्रकार के शिल्पों का ज्ञान पाया जाता है। कुछ साक्ष्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि नारियां पुरूषों के ही समान शिल्पों के क्षैत्र में विशिष्ट ज्ञान रखती थी। छात्रा अपने अध्ययन काल में छात्र के ही समान ब्रह्मचर्य का पालन करती थी।वह भी नियमों का पूर्णरूपेण अनुसरण करते हुए निर्धारित पाठ्यक्रम की शिक्षा ग्रहण करती थी। इससे यह प्रकट हो जाता है कि वर्णाश्रम शिक्षा में नारी शिक्षा का भी एक सुदृढ़ रूप था। नारी शिक्षा उनके सर्वांगीण विकास में पूर्णतया सफल थी और वे भी राष्ट्र एवं समाज के उत्थान में पूर्ण सहयोग प्रदान कर रही थी।

संदर्भ ग्रंथ-

1. शतप-ब्राह्मण, 5/1,6/10
2. तैत्तिरीय-ब्राह्मण, 3/8/3
3. ऋग्वेद, 8/3/1
4. पणिनि, अष्टाध्यायी, 4/1/33
5. पाराशर-गृहसूत्र, 3/12
6. रामायण, 2/20/15
7. रामायण, 5/15/48
8. महाभारत, 3/105/20
9. अथर्ववेद, 11/5/18
10. मनुस्मृति, 2/66
11. शतपथ-ब्राह्मण, 3/2/4-6
12. रामायण, 7/17
13. बृहदाण्यकोपनिषद, 2/4,4/5
14. बृहदारण्यकोपनिषद, 3/6/1
15. भवभूति, उत्तरामचरितम्, अंक-2 तेभ्योऽधिगन्तुं निगमान्तशिक्षां वाल्मीकिपाश्वांदिह सचरामि।
16. आशवनायन-गृहासूत्र 3/4
17. पतंजलि का महाभाष्य, 3/822
18. पाणिनी-अष्टाध्यायी, 6/12/68
19. कामन्दकीय नीतिशास्त्र, सुखत्वादबहुक्लेशादपि चावरणादिह। अनुरागात्मकत्वाच्च गांधर्वः प्रवरो मतः। 3/5/30, बौधायन-धर्मसूत्र, 1/11-13:7
20. बृहदारण्यकोपनिषद्, 6/4,17
21. अलतेकरअनंत सदाशिव-प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति, पृ.161
22. मनुस्मृति-अमत्रिका तु कार्येयं स्त्रीणामावृदशेषतः। (2/56)
23. मनुस्मृति, वैवाहिको विधिः स्त्रीणां संस्कारो वैदिको मतः। (2/67)
24. पुराणतंत्र, वीरमित्रोदय, परिभाषा, पृ.40
25. पूर्वमीमांसा, 1/2/2
26. अल्तेकर डॉ.अनंत सदाशिव, प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति, पृ.162
27. मनुस्मृति, 9/89
28. याज्ञवल्क्यस्मृति, 1/64
29. वात्स्यायन (कामसूत्र-1/3/16) ने लिखा है कि बालिकाओं को 64 कलाओं की शिक्षा देनी चाहिए।
30. वायुपुराण, 62/156
31. अथर्ववेद, 3/23/2
32. अभिज्ञानशाकुन्तलम, अंक4, वीरप्रसविनि भव।
33. मत्स्यपुराण, 154/157
34. विष्णुपुराण, 4/20/38
35. वायुपुराण, 69/107
36. शतपथ-ब्राह्मण, 11/4//3-2
37, मनुस्मृति, 9/230

डॉ. बाबा साहेब का दर्शन- समतामूलक समाज की स्थापना

डॉ. एच.एल. फुलवरे*

प्रस्तावना-

भारत रत्न डॉ. बाबा साहेब भीमराव आम्बेडकर का जन्म ऐसे समय में हुआ जब पराधीनता व पराजय के दीर्घकाल के उपरांत भारतीय समाज पुर्नजागरण के दौर से गुजर रहा था। डॉ. बाबा अम्बेडकर ने उस युग व समाज में पूर्व से स्थापित व्यवस्था एवं वैचारिकी को न तो स्वीकार की और न ही उससे समझौता किया। वे परम्परागत समाज की अन्याय एवं शोषणकारी शक्तियों के विरूद्ध जीवन पर्यन्त संघर्ष करते रहे है।

डॉ. अम्बेडकर समाज को लोकतांत्रिक आधार पर गठित करना चाहते थे, वे समतामूलक और एक आदर्श समाज की स्थापना करना चाहते थे, जिसमें व्यक्ति और व्यक्ति के बीच जन्म, वंश तथा लिंग के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए तथा सभी को शिक्षा, विचार अभिव्यक्ति और व्यवसाय के समान अवसर मिलना चाहिए। क्योंकि भारत को दुनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक राष्ट्र होने का गौरव प्राप्त है। लेकिन वास्तव में देखा जाए तो हमारी आजादी के 67 वर्ष बीत जाने के बाद भी हम पाते है कि सामाजिक स्तर पर विषमता कम होने के बजाय और अधिक बढ़ती जा रही है।

समता मूलक समाज की कल्पना-

डॉ. अम्बेडकर वर्तमान सामाजिक परिवेश में अमानवीय व्यवहार के स्वरूप को बदलना चाहते थे। इसलिए वे समाज सुधार, मानव कल्याण तथा जनजागरण कर राष्ट्रीय विकास करना चाहते थे। डॉ. बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर पाश्चात्य दर्शन से प्रभावित होकर उन्होंने संवैधानिक यांत्रिकी के माध्यम से ही समाज का वातावरण सुधारने की योजना बनाई।

इसलिए उन्होंने व्यक्तिगत जीवन के स्थान पर संगठित जीवन को अधिक महत्व दिया है। वर्तमान में आवश्यकता इस बात की है कि आज भी समाज में हो रही विषमताओं का जहां इन विचारकों के वैचारिकी सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता है वहां-वहां इन विचारों को प्रतिकूल रूप से निरूपति कर समाज को सुदृढ़ करवाना ही समाज व राष्ट्र को उन्नत स्थान स्थान दिलवाना होगा तभी डॉ. बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर के विचारों का सही-सही मूल्यांकन होगा तथा उनके स्वप्न को पूरा कर सम्पूर्ण समाज आगे गतिमान हो सकेगा।

इस कारण से डॉ. बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर का व्यक्तिगत एक समाज वैज्ञानिक और समाज सुधारक दोनों ही रूपों में परिलक्षित होता है। समाज से सम्बंधित विभिन्न तथ्यात्मक अवधारणाओं व समाजवाद मौलिक अधिकार, धर्मनिरपेक्षता, संसदीय प्रजातंत्र वर्ग संरचना, सहकारी भावना तथा प्रजातांत्रिक सरकार राजनैतिक वर्ग संरचना आदि पर उन्होंने अपना व्यापक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। इसलिए मूलत: डॉ. अम्बेडकर समाज सुधारक के रूप में अधिक सुस्थापित हुए। क्योंकि उन्होंने समाज के प्रत्येक वर्ग के उत्थान को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया है और इस हेतु वे सभी स्तरों पर प्रयासरत रहे है।

भारतीय समाज के प्रति उनका गहरा चिंतन सामाजिक भेदभाव और असमानता की ओर सभी का ध्यान आकर्षित करने तथा इससे पीड़ित वर्ग में इसके विरूद्ध संघर्ष करने और जागरूक होने की प्रेरणा देता है। उन्होंने भारतीयों को मानवीय जीवनयापन के लिए सामाजिक क्रांति का दर्शन देकर उनमें नई चेतना और जागृति पैदा की है। आधुनिक भारतीय समाज की उन्नति एवं स्वास्थ्य विकास के लिए महत्वपूर्ण सिद्धांतों जैसे-समानता, स्वतंत्रता तथा बंधुत्व की भावना, सामाजिक न्याय, मूलाधिकार और धार्मिक पुनरूत्थानवादी विचारों को उन्होंने बहुत महत्व दिया और संविधान निर्माण में इन्हीं सभी का विशेष ध्यान रखा है।

डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर ने भारतीय समाज को अन्य विकसित समाज की बराबरी पर लाने के लिए अपने जीवन पर्यन्त कई संघर्ष किए है और राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय मौलिकता का संदेश दिया है।

सन् 1891 से 1956 तक के 65 वर्षो के कार्यकाल में डॉ. अम्बेडकर ने व्यक्तिगत, शैक्षणिक, आर्थिक, राजनैतिक, संवैधानिक, साहित्यिक, धार्मिक, प्रशासनिक और अनुसूचित जाति/जनजाति या अल्पसंख्यकों तथा महिलाओं के उत्थान हेतु कार्य किया और भावी पीढ़ी को प्रेरणा दी है। उनका सामाजिक संघर्ष मानव अधिकार के मूलभूत जरूरतों से वंचित लोगों के लिए उपलब्ध करवाने हेतु सदैव रहा है।

उपसंहार-

डॉ. बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर के जीवन में जिस तन्त्रामयी की झलक सबसे अधिक और उपयुक्त है वह है समतामूलक समाज, स्वतंत्रता और बंधुत्व की भावना ये तीनों तत्व प्रथम नहीं बल्कि परस्पर अवलम्बित है। डॉ. अम्बेडकर ने बंधुत्व का संदेश देकर विश्व की वर्तमान परिस्थिति एवं उज्जवल भविष्य के हित में प्रथम पर्याय को ही स्वीकार करने का हमें मार्गदर्शन दिया है। काश हम उनके बताए रास्ते पर चलते और दूसरों को भी चलाते तो वास्तव में आज हमारा समाज समतामूलक समाज ही होता।

संदर्भ ग्रंथ-

1. डॉ. रामगोपालसिंह- डॉ.भीमराव अम्बेडकर के सामाजिक विचार
2. डॉ.सत्यनारायण- डॉ. भीमराव अम्बेडकर
3. डॉ. सी.डी. नाईक- बुद्धत्व के अग्रदूत डॉ. अम्बेडकर
4. डॉ. जाटव बी.आर.- डॉ. अम्बेडकर की राजनीति और दर्शन
5. डॉ. जाटव बी.आर.- राष्ट्रीय आंदोलन में डॉ. अम्बेडकर की भूमिका

****

* प्राध्यापक समाजशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)

मालवी कहावतों में कृषि विज्ञान

कु.रचना जैन *

भारत कृषि प्रधान देश है। आज भी हमारे देश की एक बहुत बड़ी जनसंख्या ग्रामों में निवास करती है। यहाँ कृषि व्यापार ही नही बल्कि जीवन निर्वाह का साधन है। भारत वर्श के अन्य प्रदेशों के समान मालवा अंचल में भी कृषि सम्बन्धित अनेक कहावतें कहने-सुनने को मिलती है। कई कृषक का मार्गदर्शन करती थी।

कहावतें बताती है कि कब फसल बोना, कब काटना, कितने अंतर में बोना, इत्यादि का ज्ञान कराती है। आज भी ग्रामीण निवासी परम्परा से चली आ रही हमारी अमूल्य धरोहर पर उतना ही विश्वास करते है, जितना पहले करते थे क्योंकि यंत्र भले ही हमें धोखा दे सकते है, लेकिन कहावतें नही अत: कह सकते है कि वर्तमान परिवेश में भी जनमानस का अटूट विश्वास बना हुआ है।

कृषि सम्बन्धी कहावतों में हल और बैल, के साथ खाद, जोताई, बोआई, सिंचाई, कटाई, आदि विषयों की कहावतें सुलभ है। कृषि कार्य में उपयोगी होने के कारण वृषभ किसानों का सबसे मद्दगार साथी माना गया है। एक अच्छा किसान इनका पालन-पोषण अपने पुत्र के समान बड़ें लाड़ प्यार से करता है। वर्तमान परिवेश में ट्रेक्टर, मशीनें आदि उपकरण है, लेकिन ग्रामीण परिवेश में बैलों का महत्व यथावत बना हुआ है। अत: कृषि उपयोगी होने के कारण हिन्दू धर्म ग्रन्थों में भी वृषभ सबसे पुज्यनीय है तभी कहा गया है -

'खेती बैल की ने राज घोड़ा को'

(अर्थात् खेती बैल की और शासन घोड़े के द्वारा अच्छा होता है।)

बैलों में भी किस प्रकार के वृषभ कृषि के लिए उत्तम होते हैं। इनका उल्लेख भी लोकोक्तियों में मिलता है। सामान्य लोकाधारणा है। कि -

'सींग मुड़े माथा उठा, मुंह का होबई मोला।
रोये नरम कान चपल, ऐसो बल्दया अमोला।।'

(अर्थात् जिस बैल के सींग मुडे, माथा उठा हुआ, मुंह का आकार गोल, राये नरम और कान तीव्र हो ऐसा बैल शीघ्र खरीद लेना चाहये यह लाभप्रद होता है।)

साथ ही यदि मेवाती किस्म के बैल हो तो फसल भरपूर मात्रा में प्राप्त होगी ऐसी लोक धारणा भी प्रचलित है, जिसे लोकोक्ति द्वारा देखा जा सकता है यथा -

'है उत्तम खेती वाकी। होय मेवाती गोई जाकी।।'

किसानों की माली हालत उनकें हलों से देखी जा सकती है। एक लोकोक्ति में हलों के आधार पर कृषक के वैभव की व्याख्या इस प्रकार की गई है -

'दस हर राव आठ हर राना। चार हरों का बड़ा किसाना।।
दुई हर खेती एक हर बारी। एक बैल से भली कुदारी।।
एक हर हत्या दुई हर काज। तीन हर खेती चार हर राज।।'

(अर्थात् दस हल चलाने वाले गृहस्थ के यहाँ लक्ष्मी पाँच हल वाले के यहाँ धन और तीन हल वाले के यहाँ आहार तथा एक हल वाला हमेशा कर्जदार ही बना रहता है)

बैलों और हलों के अलावा खाद भी खेती के लिये अनिवार्य होती है। यह कृषि के लिये अनिवार्य होती है, जो कृषक खाद नही डालता वह व्यर्थ ही मेहनत करता है। खाद के विषय में अनेक उक्तियाँ जनसमाज में प्रचलित है। यह छोटी-छोटी और बोलचाल के शब्दों में होने से आसानी से समझ में आ जाती है, कुछ उदाहरण द्दष्टव्य है :-

'खाद पडे तो खेत नी तो बालू रेत'

(अर्थात् जिस खेत में खाद होगी वहां पर्याप्त मात्रा में उपज की प्राप्ति होगी अन्यथा बालू के ढेर के अलावा और कुछ नही मिलेगा।)

खाद के साथ ही फसल को पानी की भी आवश्यकता होती है, जो कुषि पर निर्भर करता है। वृष्टि सम्बन्धित हजारों लोकोक्तियाँ वर्षो से चली आ रही है, जिसके आधार पर वायु की गति, वर्षा का होना और न होना आदि अनेकों जानकारी मिलती है। कुछ प्रसिद्ध कहावतें इस प्रकार है -

'कलसे पाणी गरम हो, चिड़ियां न्हावे धूल।
अंडा ले चिंटी चढे, बरसा हो भरपूरा।।

(अर्थात् यदि गर्मी के दिनों में घडे का पानी गरम होने लगे, चिड़िया अपने ऊपर धूल-मिट्टी डालने लगे और चिंटी अण्डे को लेकर सुरक्षित स्थान पर जाने लगे तब समझ लेना कि बहुत वर्षा होगी।)

अब फसल को खाद, पानी देने के बाद बीज की बोवाई, कटाई अनेक प्रकार के कार्य किये जाते है, इन से सम्बन्धित लोकोक्तियाँ प्रचलित है -

'जेतना गहरा जौते खेत, बीज परै फल अच्छा देत।'

(अर्थात् खेत को जितना गहरा जोतेगे उसमें बीज डालने पर फल अच्छा प्राप्त होगा।)

इसके साथ कहावतें यह भी बताती है कि खेती कम होने पर भी यदि कृषक परिश्रम करता है तो उसके घर अनाज की कमी नही होती है, इस विषय में प्रसिद्ध उक्ति देखिये -

'खेती तो थोरी करै, मेहनत करे सिवाय।
राम करै वा मनुज का टोटा कबहूं न आय।।'

अब जोताई के बाद बोबाई की जाती है। गेंहू मक्का, मटर, मैथी, अरहर, तिल्ली, सोयाबीन आदि फसलें विशेष रूप से बोई जाती है। इन्हें किस तिथि, नक्षत्र, वार में बोना अत्यधिक लाभप्रद होता है। अनुभवी व्यक्तियों का मानना है कि बुवाई के लिये बुध एवं शुक्रवार कटाई के लिये अच्छा होता है -

'बुध बउनी, सुक लउनी।'

नक्षत्र सम्बन्धी जन श्रुति भी लोकजीवन में व्याप्त है -

'चित्रा गोहूं, अद्रा धान इनहीं गिर आ न उनहिं धाम।'

(अर्थात् यदि चित्रा नक्षत्र में गेंहू, आद्रा में धान बोयी जाती है तो गेरूआ रोग नही होता।)

गेंहू और धान के अलावा मक्का, उडद, चना सम्बन्धी लोक उक्ति भी प्रचलित है, यथा -

'रोहिणी मिगसिरा बोबई मक्का।
उरद मडुवा नहिं आबइ टका।।'

(अर्थात् रोहिणी, मृगषिरा में मक्का बौवे तो अधिक और उडद बोने पर कुछ भी प्राप्त नही होता है।)

इसके साथ ही अनाज को कितनी मात्रा में, कितनी दूरी पर बोना

* शोधार्थी (हिन्दी अध्ययनशाला) विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

उचित होता है इसकी जानकारी भी लोकोक्तियों के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है, कुछ उक्तियाँ दृष्टव्य है –

'जो गेंहू बौवे पांच पसेर।
मटर बीघा मा तीस सेर।।'

(अर्थात् एक बीघा में पाँच पसेर गेंहू और जौ तथा मटर तीन सेर बौया जाता है)

'पांच पसेरी बीघा मा धान।
ने तीन पसेरी जडहन का भात।।''

(अर्थात् पांच पसेरी धान, तीन पसेरी जडहन का भात ठण्ड में पकने वाला धान बोया जाता हैं)

बौवाई करने के बाद सिंचाई की आवश्यकता होती है। कृषि प्राय: वर्षा पर आधारित है। सिंचाई की कोई उत्तम वैकल्पिक व्यवस्था नही है। नदियों, नहरों, तालाबों के द्वारा ही कृषि कार्य किया जाता है।

'जब बरसैं तब बाँधे क्यारी।
बड़ा किसान जो हाथ कुदारी।।'

(अर्थात् जब वर्षा हो तब ही क्यारी बांध दी जाये और जिस किसान के हाथ में कुदारी होती है वही बड़ा हैं।)

'पानी बरसे वहैं न पावैं,
तब खेती का मजा उठावैं।

(अर्थात् जब वर्षा हो और उसे संचित कर लिया जाये तब खेती का मजा बढ जाता है।)

अब अन्त में फसल की कटाई की जाती है। कुछ कहावतें देखिये –

'चना अधपका जौ पका काटै।
गेहूं बाली लटका काटै।।'

(अर्थात् चना जब अधपका हो तब, जौ पूरा पक जाये और गेहूं की बालें लटक आयें तब काट लेने पर अधिक लाभ मिल पाता है।)

निष्कर्ष रूप में कह सकते है कि भारत का लोकजीवन प्रकृति पर आश्रित है। कृषकों को कृषि संबंधी व्यावहारिक ज्ञान कहावतों के माध्यम से हो जाता है। यही कारण है कि उन्हें किसी कृषिशास्त्र की आवश्यकता नहीं लगती। वे अनुभव के आधार पर कृषि कार्य सफलातपूर्वक सम्पन्न करते हैं।

सन्दर्भ सूची –

1. मालवी कहावत कोश – निर्मला राजपुरोहित
2. मालवी लोक साहित्य – डॉ श्याम परमार
3. हमारा ग्राम साहित्य – श्री रामनरेश त्रिपाठी

****

आलेख: भारत में गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के अंतर्गत गठित स्व सहायता समूह का योगदान

डॉ.आर.सी. गुप्ता *

सारांश:– ग्राम सभा द्वारा अनुमोदित गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों की सूची में से स्वरोजगारी स्वसहायता समूहों का गठन किया जायेगा इस योजना में स्वसहायता समूहों के गठन, पोषण एवं उनके बैंक के साथ लिंकेज की व्यवस्था है।

समूह गतिविधियों को प्राथमिकता दी जायेगी और अधिकांश सहायता स्व सहायता समूहों को दी जायेगी। ग्रामीण गरीबों का कमजोर वर्ग इस योजना का केन्द्र बिन्दु है तदानुसार लाभान्वित हितग्राहियों में 50 प्रतिशत अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन जाति, 40 प्रतिशत महिलायें, 3 प्रतिशत विकलांगों को लाभान्वित किया जाना अपेक्षित है।

हमारे देश में गरीबों की सहायता के लिए बड़े पैमाने पर एकीकृत दृष्टिकोण अपना कर ग्रामीण गरीबों के स्वरोजगार के अवसर प्रदान करने की दिशा में एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम पहला बढ़ा प्रयास था। इसी प्रकार लागू किये गये अन्य प्रमुख कार्यक्रमों में ''ग्रामीण स्वरोजगार प्रशिक्षण **(Trysem)** ग्रामीण क्षेत्र महिला और बाल विकास, गंगा कल्याण योजना, मिलियन बेल स्कीम प्रमुख है किन्तु यह सभी योजनायें अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकी।

संसाधनों की खपत एवं उपलब्धियों के बीच की खाई को देखते हुए भारत सरकार ने टिकाऊ आधार पर ग्रामीण परिवारों के जीवन स्तर को बेहतर बनाने के लिए बड़े पैमाने पर स्वरोजगार के अवसर व स्थानीय समुदायों की सहभागिता निर्धारित करने हेतु 1 अप्रैल 1999 से ''स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना'' शुरू की जिसका उद्देश्य स्व सहायता समूहों के द्वारा गरीबों की आर्थिक स्थिति सुधारना है।

गरीब परिवार आपस में मिलकर एक स्व सहायता समूह बनाते है सरकार द्वारा उन्हें प्रशिक्षण दिया जाता है फिर उन्हें उस धंधे को शुरू करने हेतु कर्ज दिया जाता है। इसके अलावा सरकार आधारभूत सुविधाएँ तकनीकी भी उपलब्ध करवाती है इस योजना का लक्ष्य बैंक ऋण और सरकारी सब्सिडी के माध्यम से गरीबों की आय अर्जक परिसंपत्तियाँ प्रदान की जाए एवं इन स्वरोजगारियों को गरीबी रेखा के ऊपर लाया जाए।

स्वसहायता समूह से आशय :–

''स्व–सहायता समूह'' अवधारणा का सूत्रपात बंगलादेशवासी लघु वित्त माइक्रो क्रेडिट सिद्धांत के जनक मोहम्मद युनुस खान ने 1990 के पहले दशक में किया। इन्होने बताया कि एक गरीब आदमी अपनी छोटी–छोटी जरूरतों के लिए जो कर्जा अधिक ब्याज पर साहूकारों से लेता है वह राशि इतनी बड़ी नहीं है जिसके लिये वह साहूकारों व अन्य लोगों के ऊपर निर्भर रहे बल्कि यह राशि स्वयं जरूरतमंद लोग ही एक निश्चित बचत के माध्यम से कुछ अवधि पश्चात पूरा कर सकते हैं ।

इसी विचार को साकार करने के लिए मोहम्मद युनुस खान ने एक गाँव के कुछ लोगों को समूह बनाकर काम शुरू किया जिसमें इन्हें काफी सहायता मिली। चूँकि सरकार द्वारा स्वीकृत ऋण कार्यक्रमों से निर्धनों की छोटी लेकिन तात्कालिक ऋण की आवश्यकता पूरी नहीं होती है और यह कर्ज साहूकारों से तत्काल मिल जाता है। अत: ये साहूकार निर्धनों की इसी कमजोरी का फायदा उठाकर शोषण करते हैं।

स्व–सहायता समूह योजना का उद्देश्य :–

इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले परिवार हितग्राहियों का समूह से संघटित कर सहायता देना है तथा उन्हें तीन वर्षो में गरीबी रेखा से ऊपर लाना है।

विभिन्न योजनाओं में स्वयं सहायता समूह :–

निर्धन, महिलाएँ, ग्रामीण एवं समाज के अन्य अविकसित वर्ग को भारतीय अर्थव्यवस्था में सरकारी बैकों से ऋण लेने और अपना रोजगार स्थापित करने में सदैव ही कठिनाई होती है।

इन परेशानियों से सरकार भी भली–भांति अवगत रही है और समय–समय पर इन वर्गों के लोगों के विकास के लिए नई योजनाएँ संचालित की जाती रही है, जिससे कि इन निम्न–स्तरीय वर्गों के लोगों को संस्थागत वित्त और स्वरोजगार से जोड़ा जा सके। किन्तु कई वर्षो के प्रयासों एवं प्रयोग के बाद भी इस दिशा में कोई ठोस सफलता सरकार को नहीं मिल मिल पाई। इन सब कठिनाईयों और विफलताओं को ध्यान में रखते हुए, सरकार ने पाया कि 'समूह' के माध्यम से विकास की योजनाओं एवं बैंक ऋण को इस वर्ग तक सफलतापूर्वक पहुँचाया जा सकता है।

आज देश भर में स्वयं सहायता समूह गठनकर्ताओं के कई प्रतिरूप हैं और कई संस्थाएँ अपनी–अपनी योजनाओं के अंतर्गत समूह गठित कर रहीं है। स्वयं सहायता समूहों के गठन को तीन प्रमुख श्रेणियों में वर्गीकृत कर समझना उपयुक्त होगा।

1. गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के अंतर्गत गठित स्वयं सहायता समूह:–

स्वर्ण जयंती ग्रामीण स्व–रोजगार योजना **(SGSY)**
राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक **(NABARD)**
राष्ट्रीय अल्पसंख्यक वित्त एवं विकास निगम **(NMDFC)**
स्वच्छकार विमुक्ति व पुनर्वास योजना **(SLRS)**
पिछड़ा वर्ग सहकारी वित्त निगम लिमिटेड **(MMLBC)**
प्रधानमंत्री रोजगार योजना **(PMRY)**
भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक **(SIDBI)**
जिला गरीबी उन्मूलन परियोजना **(DPIP)**

2. विशेष क्रिया–कलाप हेतु गठित स्वयं सहायता समूह :–

बाबा साहेब अम्बेडकर हस्तशिल्प विकास योजना **(AHVY)**
कृषि विविधीकरण योजना **(DASP)**
भूमि विकास निगम **(LDC)**
स्वर्ण जयंती ग्रामीण स्व–रोजगार योजना **(SGSY)**
उ.प्र. वाटर सेक्टर रिस्ट्रक्चरिंग योजना **(UPWSRP)**
रिथू मित्र समूह **(RMG)**
खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग **(KVIC)**

3. केवल महिलाओं के लिए गठित स्वयं सहायता समूह :–

राष्ट्रीय महिला कोष **(RMK)**
शहरी क्षेत्र में महिला और बाल विकास **(DWCUA)**
स्वयंसिद्धा

* प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बीना (म.प्र.)

कृषक महिला हेतु केन्द्र सरकार की समूह योजना **(CSSWA)**
स्व-शक्ति **(Swa-Shakti)**

समूह की संरचना :- स्व सहायता समूह की संरचना में कोई निश्चित नियम नहीं है, लेकिन एक आदर्श समूह हेतु कुछ बिंदु इस प्रकार है -

- समूह में सदस्यों की संख्या 18-20 हो सकती है।
- समूह के सदस्यों की आयु 18-60 वर्ष के मध्य होना चाहिए।
- सदस्यों को गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन करने का प्रमाण हो।
- समूह के सभी सदस्य निर्णय लेने में सक्रिय भूमिका निभाएँ।
- सदस्यों में स्व-विकास की इच्छा होना चाहिए।
- समूह को पारस्परिक मतभेद सुलझाने में सहायक होना चाहिए।
- समूह को शोषण का विरोध करने में सक्षम होना चाहिए।
- समूह के सदस्यों को अपना नाम लिखने में समर्थ होना चाहिए।
- समूह द्वारा समूह के संचालन हेतु नियम कानून बनाये जाना चाहिए।

स्वयं सहायता समूह के प्रमुख कार्य :-

1. बचत और किफायत :- भले ही बचत की राशि कम हो, लेकिन सभी सदस्यों की यह एक नियमित आदत होनी चाहिए। सभी समूहों का ध्येय पहले बचत, फिर ऋण होना चाहिए।बचत के माध्यम से ही समूह स्वावलम्बन की ओर पहला कदम बढ़ाते हैं और कुल बचत से कुछ जरूरतमंद सदस्यों को ऋण देकर वित्तीय अनुशासन भी सीखते हैं। यह अनुभव बैंक के साथ ऋण संबंधी व्यवहार करते समय काम आता है।

2. आंतरिक ऋण प्रदान करना :- बचत राशि का उपयोग सदस्यों को ऋण प्रदान करने के लिए किया जाता है। ऋण का प्रयोजन, राशि, ब्याज दर, चुकौती के तरीके आदि का निर्धारण स्वयं सहायता समूह स्वयं ही करते हैं। स्वयं सहायता समूह आंतरिक ऋण का उचित हिसाब-किताब रखते हैं।

3. समस्याओं पर चर्चा :- प्रत्येक बैठक में समूह अपने सदस्यों की समस्याओं पर विचार-विमर्श करते हैं और उनका निदान करने का प्रयास करते हैं। गरीब व्यक्तियों में अपनी समस्याओं से निपटने के लिए पर्याप्त संसाधनों का अभाव होता है। जब कोई समूह अपने सदस्यों की मदद करने का प्रयास करता है तो सदस्यों के लिए कठिनाइयों का सामना करना आसान हो जाता है और वे उनका हल ढूँढ पाने में सफल होते हैं।

4. बैंकों से ऋण प्राप्त करना :- स्वयं सहायता समूह बैंक से ऋण प्राप्त करके सदस्यों में वितरित करता है। स्वयं सहायता समूहों के स्वरूप में जैसे-जैसे विविधता आयेगी तथा उनकी संख्या बढ़ती जायेगी, यह भी आवश्यक होगा कि हम उनका कानूनी दर्जा भी तय करें। इस समय स्वयं सहायता समूहों का पंजीकरण किसी संगठन के रूप में नहीं हो रहा है। दूसरा मुद्दा यह है कि विभिन्न प्रकार के स्वयं सहायता समूहों को एक ऐसे बड़े संगठन के रूप में किस प्रकार संगठित किया जाये जिसकी और अधिक प्रतिष्ठा हो तथा जिसके बल पर वह और ज्यादा ऋण प्राप्त करने की स्थिति में हो सके। गरीबों के जीवन में व्यापक बदलाव आ सकता है। उनकी आमदनी में इससे बहुत भारी उछाल तो नहीं भी आ सकता है लेकिन फिर भी इससे गरीबों के लिए उनकी आय में उपयुक्त वृद्धि सुनिश्चित करना अवश्य संभव है। ऐसी परिस्थितियों में स्वयं सहायता संवर्धक संस्थाओं की भूमिका हमेशा महत्वपूर्ण बनी रहेगी।

स्व सहायता समूह के गठन से समूह सदस्यों को लाभ :-

- आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं का निराकरण
- आय अर्जक गतिविधियां
- छोटे-छोटे व्यवसाय एवं उद्योगों का विकास
- जीवन स्तर में सुधार
- प्रति सदस्य आय में वृद्धि
- साहूकारों पर निर्भरता में कमी
- सामुदायिक परसम्पत्तियों का सृजन
- सशक्तिकरण
- एकता एवं सहभागिता की भावना का विकास एवं लाभ

****

अपभ्रंश साहित्य में भारत की सभी भाषाओं का अधिकार : एक अवलोकन

डॉ. अमित शुक्ल *

हिन्दी का विकास शौरसेनी अपभ्रंश से माना जाता है। डॉ. वीरेन्द्र वर्मा ने लिखा है-शौरसेनी अपभ्रंश से हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, और पहाड़ी, भाषाओं का संबंध है। इनमें से गुजराती, राजस्थानी तथा पहाड़ी भाषाओं का सम्पर्क विशेषतया शौरसेनी के नागर अपभ्रंश रूप से है। पर्वी हिन्दी का पर्यायवाची अपभ्रंश से तथा मराठी का महाराष्ट्री अपभ्रंश से संबंध है। शौरसेनी अपभ्रंश से हिन्दी का विकास माना गया है, किन्तु इस अपभ्रंश के दो रूप प्रचलित हैं-एक वह जिसमें साहित्य का निर्माण हुआ है और दूसरा वह जिसका प्रयोग जनता करती रही होगी। इसे दूसरे रूप-यानी लोक अपभ्रंश से पुरानी हिन्दी या आदिकालीन हिन्दी भाषा का विकास हुआ। चन्द्रधर शर्मा गुलेरी का यह कथन सही है-विक्रम की सातवीं से ग्यारहवीं शताब्दी तक अपभ्रंश की प्रधानता रही और फिर वही पुरानी हिन्दी में परिणित हो गई है। यद्यपि यह कहना कठिन है कि कहाँ पर परवर्ती अपभ्रंश समाप्त हुआ है और कहाँ पुरानी हिन्दी प्रारम्भ हुई। गुलेरी जी ने जिस संस्कृतिकालीन भाषा को पुरानी हिन्दी कहा है, उसका काल निर्धारण उन्होनें भी नहीं किया है। उन्हानें लिखा है-अपभ्रंश कहाँ समाप्त होता है, और पुरानी हिन्दी कहाँ आरम्भ होती है, इसका निर्णय करना कठिन किन्तु रोचक और बड़े महत्व का है। इन दो भाषाओं के समय और देश के विषय में कोई स्पष्ट रेखा नहीं खींची जा सकती।[1] इसीलिए कुछ विद्धानों ने हिन्दी के आदिकाल को अपभ्रंश का काल ही माना है। हिन्दी काव्य-भाषा के पुराने रूप का पता हमें विक्रमी की सातवीं शताब्दी के अन्तिम चरण में लगता है। **डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी** आदिकाल की हिन्दी भाषा का समय दसवीं शताब्दी मानते हैं उन्होनें लिखा है-वस्तुत: छन्द, काव्य रूप, काव्यगत रूढ़ियों और वक्तव्य वस्तु की दृष्टि से दसवीं से चौदहवीं शताब्दी तक का लोक भाषा का साहित्य परिनिष्ठित अपभ्रंश में प्राप्त साहित्य का ही बढ़ाव है। यद्यपि उसकी भाषा उक्त अपभ्रंश से थोड़ी भिन्न है। इसीलिए दसवीं से चौदहवीं शताब्दी के उपलब्ध लोक भाषा साहित्य को अपभ्रंश से थोड़ा भिन्न भाषा का साहित्य कहा जा सकता है।[2]

इस प्रकार हिन्दी के आदिकाल का समय-विस्तार दसवीं शताब्दी से चौदहवीं शताब्दी तक मानना उचित है। इस कालावधि में जिन बोलियों के देशी शब्दों ने साहित्यिक हिन्दी का रूप निर्धारण किया उनमें से पांच मुख्य है- 1. पूर्वी प्रदेश में पाई जाने वाली परवर्ती अपभ्रंश जिनका प्रतिनिधित्व बंगला, असमिया, मैथिली, मगही कर रही थी। 2. वाराणसी और उसके आस-पास की अपभ्रंश बोली तथा पुरानी हिन्दी। 3. ब्रज क्षेत्र में प्रचलित पुरानी हिन्दी। 4. पश्चिम भारत में प्रचलित पुरानी पश्चिमी राजस्थानी।5. खड़ी बोली का आदिरूप जो दोहों में मिलता है।[3]

जिन बोलियों का उल्लेख ऊपर किया गया है, उसमें देशी शब्द स्वाभाविक रूप से आये हैं। इस काल के देशज शब्दों का अपना महत्व है।

विभिन्न प्रान्तों में प्रचलित लोक-अपभ्रंश का ऐतिहासिक परिदृश्य

अपभ्रंश भारत के विशाल भू-भाग की भाषा थी। वह लगभग 1000 वर्ष तक इस देश में या तो लोक अपभ्रंश या परिनिष्ठित अपभ्रंश के रूप में प्रचलित रही है। यह एक निरन्तर गतिशील भाषा रही है, इसीलिए स्थान भेद के कारण इसमें विविधता आ गई थी। प्राचीन काल के पण्डितों का भी ध्यान अपभ्रंश के विभिन्न भेंदों की ओर गया था उन्होनें अपभ्रंश के विविध भेदों की चर्चा की है। विष्णु धमोसर में देशी भाषा विशेषण 'तस्वां तो मेव विद्यते' कहकर देशी भेद से अपभ्रंश के अन्त भेदों की ओर संकेत किया है।[4] रुद्रट के द्वारा अपभ्रंश के तीन भेद हैं- 1. उपनागर, 2. अभीष्ट और 3. ग्राम्य। लोक अपभ्रंश या देशी भाषा अपभ्रंश के विभिन्न भेदों का सबसे प्रामाणिक विवेचन उद्योतन सुरि ने किया है। प्रान्त भेद का दृष्टि से अपभ्रंश की विभिन्न विभाषाओं का इतने विस्तार से वर्णन अन्यत्र कहीं नहीं मिलता। उद्योतन सुरि ने देशी अपभ्रंश की उन्नीस विभाषाओं का उल्लेख किया है- 1. गोरल, 2. मध्यदेश, 3. मगध, 4.अन्तवेद 5. कीर 6. टक्क 7. सिन्ध 8. मरु 9. गुर्जर 10. लाट, 11. मालव, 12.कर्नाटक, 13. तमिल, 14. कोसल, 15. महाराष्ट्र 16. आन्ध्र, 17. सिख 18. पारसी, 19. वव्वर। भाषाओं के उदाहरण भी उन्होंने दिये हैं। विभिन्न प्रान्तों में बोली जाने वाली अपभ्रंश के प्रान्तीय भेदों के आधार पर देशी अपभ्रंश के भेद किये गये हैं। प्राकृतानुशासन के लेखक पुरूषोत्तम ने 12वीं शताब्दी में अपभ्रंश को शिष्टों के प्रयोग से जानने की सलाह देते हुए अपभ्रंश के तीन भेदों का उल्लेख किया है- 1.नागर, 2. व्राचड़ और 3. उपनागर। साथ ही पुरुषोत्तम ने पांचालादिकों की सूक्ष्मान्तर और लोकगम्य बताकर वैदमा, ठाटा, लट्टी, गाड़ी आदि का भेदक विशेषताओं का भी उल्लेख किया है। उन्होनें टक्क, बव्वर, कन्तल, पाण्डि। सिंहलादि भाषाओं की ओर भी इंगित किया है। राम शर्मा वागीश ने प्राकृत कल्पतक पुस्तक के द्वितीय पुस्तक में नागर अपभ्रंश और तृतीय पुस्तक में व्राचड़ अपभ्रंश का उल्लेख किया है।5 टक्की को इन्होने नागर और व्राचड का मिश्रण माना है। रामशर्मा वागीश ने यह स्वीकार किया है कि इन्होंने तीनों के विभेद ही समूचे भारत में विभिन्न रूपों में प्रचलित रहे हैं। उन्होंने इन लोक अपभ्रंशों के बीस भेदों का उल्लेख किया है- 1. पांचालिका, 2. मागधी, 3. वैदर्भिका, 4. लाटो, 5. ओडक्डी, 6. कैकीयिक, 7. गौंड़ी, 8. कौन्तली, 9. पाण्डो, 10. सैहली, 11. कालिंगजा, 12. प्राच्या, 13. आभारिका, 14. कर्नाटिका, 15. मध्यप्रदेश, 16. गांजरी, 17. द्राविड़ी, 18. पाश्चात्यजा, 19. वैतालिकी, 20. कांची। वास्तव में प्राकृत के व्याकरणों ने विभिन्न प्रान्तों में प्रचलित विभिन्न अपभ्रंशों को उनके अनुरूप नामों से सम्बोधित किया है। मार्कण्डेय ने प्राकृत सर्वस्व में अपभ्रंश के सत्ताइस भेदों का उल्लेख किया है- 1. व्राचड, 2. वाणर,3. लाट, 4.आवत्य, 5. वेदर्भ, 6. मागध, 7. उपनागर, 8. पांचाल, 9. नागर, 10. टाक्क, 11. मालव, 12. कातिल, 13. कैकम, 14. सैहल, 15. गौंड, 16. कलिंग, 17. आर्द्र, 18. प्राच्य, 19. वैवपाश्चात्य, 20. पाण्डव, 21. काणट, 22. कांच्य, 23. द्राविड़, 24. गार्जर, 25. आभार, 26. मध्यदेशीय और 27. वैसाल।

मार्कण्डेय का विवेचन अधिक व्यवस्थित और वैज्ञानिक है। मार्कण्डेय में नागर अपभ्रंश के लिए तीन पाद (17, 18 और 10) व्राचड़ के लिए 11 सूत्र और उपनागर के लिये केवल एक सूत्र का विधान किया है। व्राचड़ को उन्होनें सिन्ध देशोद्भव कहा है तथा उपनागर को नागर और व्राचड़ को संकर। हेमचन्द्र के समय में अपभ्रंश-साहित्यिक तथा परिनिष्ठित भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो गई थी। लोक भाषा के रूप में इस अपभ्रंश की स्थिति किसी प्रकार भी नहीं स्वीकार की जा सकती। यह निश्चित है जैसे-जैसे समय आगे बढ़ता है, मनुष्य के वर्गों का विस्तार होता जाता है, वैसे-वैसे भाषा में विविधता की गुंजाइश बढ़ती जाती है, इस भाषा-वैज्ञानिक तत्व पर कहा जा सकता है कि हेमचन्द्र के समय में अपभ्रंश के विविध प्रान्तीय भेद अवश्य रहे होंगे। हेमचन्द्र ने ऐसे शब्दों का संकलन विविध प्रान्तों में बिखरी हुई बोली को सूत्रबद्ध करने के लिए किया। भारतीय आर्य भाषाएँ सर्वदा सभी प्रान्तों की बोलियों से विकसित हुई हैं। चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और राहुल सांस्कृत्यायन एवं हेमचन्द्र ने अपभ्रंश को पुरानी हिन्दी स्वीकार किया है। निष्कर्ष यह है कि अपभ्रंश केवल हिन्दी की अपनी चीज नहीं है। उस पर भारतीय या भारत की सभी भाषाओं का समान अधिकार है। वह मराठी, गुजराती, पंजाबी, हिन्दी क्षेत्र की भाषाओं, राजस्थानी, मालवी, बुन्देली, हरियाणी, कौरवी, पहाड़ी, ब्रज, अवधी, मगही, भोजपुरी, मैथिली, असमिया, बंगला, और उड़िया की अपनी निधि है। इन सभी भाषाओं के क्षेत्र में अपभ्रंश साहित्य की रचना हुई, उसको अपना समझा गया।[6]

संदर्भ सूची (1) हिन्दी भाषा का इतिहास, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा दारागंज इलाहाबाद पृ. 36, 48 (2) पुरानी हिन्दी (चन्द्रधर शर्मा गुलेरी) नागरी प्रचारिणी सभा काशी पृ. 7 (3) देशी कोष की भूमिका, जनसत्ता समाचार पत्र जून 2000 पृ. 5 (4) हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, दरियागंज नई दिल्ली (डॉ. नामवर सिंह) पृ.-42 (5) ब्रजभाषा और उसका साहित्य (ज्ञानोदय नई दिल्ली) दिसम्बर 2008 पृ.-36 (6) स्वयं का सर्वेक्षण व निष्कर्ष।

* सहायक प्राध्यापक हिन्दी, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

आलेखः मध्यान्ह भोजन योजना का मूल्यांकन (म.प्र. के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. रविप्रकाश पाण्डेय *

भारत सरकार द्वारा लागु यह योजना का जन्म तमिलनाडु में सन् 1950 में हुआ था जिसका मुख्य उद्देश्य प्राथमिक शालाओं में स्कूली बच्चों को दिन में एक बार भोजन दिया जाएगा, सुप्रीम कोर्ट द्वारा वर्ष 2001 में यह योजना पूरे भारत वर्ष में लागु करने का निर्देश दिया गया जिसमें प्रतिदिन बच्चों को 300 (तीन सौ कैलोरी) और 8-12 ग्राम प्रोटीन प्राथमिक शालाओं के बच्चों को दिया जाना चाहिये। इस योजना के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए इसे कक्षाओं के विद्यार्थियों को 20 ग्राम प्रोटीन प्रतिदिन दिया जाएगा। इस योजना को निम्न प्रतिष्ठानों (संस्थाओं) पर लागु किया गया है -

1. शासकीय विद्यालयों पर
2. मदरसों पर।

इस योजना को सर्व शिक्षा अभियान एवं राष्ट्रीय बाल श्रमिक परियोजना के माध्यम से यह योजना पूरे भारतवर्ष में चलाई जा रहीं है एवं मध्य प्रदेश में यह योजना वर्ष 1995 से लागु है तथा यह योजना म.प्र. पंचायत और ग्रामीण विकास विभाग द्वारा यह योजना संचालित की जाती है जिसमें राज्य स्तर पर संगठन की व्यवस्था है। इसमें भारतीय प्रशासनिक सेवा (आइ.ए.एस.) स्तर के अधिकारी इसके समन्वयक रहते हैं तथा जिला स्तर पर भी इसके संगठन की व्यवस्था की गई है। विद्यालयों में ही भोजन बनाया जाएगा तथा विद्यालय स्तर पर ही इसका निरीक्षण किया जाएगा।

संगठनात्मक ढाँचा मध्यान्ह भोजन योजना का

भारत सरकार मानव संसाधन विभाग
↓
राज्य सरकार
↓
जिला स्तर सरकारी एजेन्सी
↓
ब्लॉक स्तर
↓
ग्राम पंचायत
↓
विद्यालय

भारत में मध्यान्ह भोजन योजना 1265000 स्कूलों में यह योजना लागु की जाती है। वर्ल्ड बैंक की रिपोर्ट के आधार पर 42 प्रतिशत से कम वजन के बच्चे भारत में निवास करते हैं। म.प्र. कृषि आधारित आर्थिक नीति वाला राज्य है तथा म.प्र. की करीब 76 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आधारित है। मध्यान्ह भोजन योजना के माध्यम से दैनिक स्तर पर प्राथमिक शालाओं में प्रोटीन की कमी दूर हुई है तथा कैलोरी की कमी 30 प्रतिशत तक कम हुई है, तथा लौह तत्व की कमी 10 प्रतिशत तक कम हुई तथा विद्यालयों में छात्र एवं छात्राओं की उपस्थिति का प्रतिशत भी बढ़ा है।

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने केन्द्र और राज्य सरकारों से मिड् डे मील खाकर बच्चों की मौत जैसे हादसों को रोकने के लिए उठाए गए कदमों की जानकारी मांगी है। बिहार के छपरा हादसे में जहरीला मिड् डे मील खाकर 22 बच्चों की मौत हो गई थी, चीफ जस्टिस पी. सदाशिवम की अध्यक्षता वाली बेंच ने जनहित याचिका पर सरकारों से रिपोर्ट मांगी है इसमें बच्चों को पोषक आहार देने के सम्बन्ध में पूछा गया है। याचिका में कहा गया है कि मिड् डे मील योजना में स्कूली बच्चों को दिये जाने वाले आहार पर प्रभावी निगरानी और उसके मूल्यांकन की व्यवस्था नहीं है। इस योजना में सुप्रीम कोर्ट के आदेश का पालन नहीं किया जा रहा आदेश के मुताबिक बच्चों को साल में कम से कम 200 दिन तक हर एक बच्चों को खाना नहीं दे रहे।

मध्यान्ह भोजन योजना को क्रियान्वित करने की जो मुख्य समस्या आ रही है उसे सरकारी नियन्त्रण से मुक्त कर देना चाहिए एवं सरकार को सिर्फ राशि उपलब्ध कराना चाहिए जिसमें समाजसेवी संस्थाओं (एन.जी.ओ.) को इसकी जिम्मेदारी दे देनी चाहिए जैसा कि कर्नाटक आदि राज्यों में केन्द्रीय कृत किचन की व्यवस्था करके एक दिन में एक लाख से अधिक बच्चों को शुद्ध स्वच्छ खाना बनाकर उन्हें अच्छी तरह पैक करके स्कूलों में भेजा जा रहा है जो कि इस योजना की सफलता को दर्शा रहा है।

नवीन संशोधनों के आधार पर म.प्र. शासन स्तर पर निम्न दिशा निर्देश वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए म.प्र. में लागु किये गये हैं जो निम्न हैं -

1. स्कूली बच्चों की माताओं से भी गुणवत्ता, मात्रा और स्वच्छता का निरीक्षण करायें।
2. हर माह के दस दिन प्रभारी अधिकारी, टॉस्क मैनेजर एवं क्वालिटी मॉनीटर द्वारा निरीक्षण की व्यवस्था की गयी है।
3. वर्षा काल के बचे हुए दो माह (अगस्त,सितम्बर) में कलेक्टर निरीक्षण करें।
4. अनुविभागीय अधिकारी 20 स्कूल, जनपद पंचायत सी.इ.ओ., 25 स्कूल तथा राजस्व अधिकारी 25 स्कूलों का निरीक्षण करें।
5. रसोइये को स्कूल ऑफ होम सांइस विभाग की सहायता से प्रशिक्षण (ट्रेनिंग) दी जाय।
6. एगमार्क वाली खाद्य सामग्री का उपयोग किया जाय।
7. वर्षा काल के दौरान पत्ते दार सब्जियों का इस्तेमाल न हो।
8. रोटेशन के आधार पर शिक्षक नियुक्त किये जांय तथा वह नियमित रूप से भोजन को वितरित करने से पूर्व चखें, मिड्डे मील को लेकर शाला प्रबंधन समिति हर माह समीक्षा करे।
9. रसोइया भी साबुन से हाथ धोये तथा छात्र-छात्रा के भी हाथ धुलवायें जायें।

म.प्र. में शुरूआती स्तर पर दाल एवं दलिया सरकारी विद्यालय के बच्चों को दिया जाता था। आज 94 प्रतिशत बच्चे जो कि 6 से 9 वर्ष मध्य आयु के हैं उनका वजन सामान्य से भी कम हैं आज बच्चों में 67.5 प्रतिशत की आबादी एनीमिया एवं गम्भीर बीमारियों से ग्रसित हैं जिससे उनमें लौह तत्व एवं अन्य तत्वों की कमी है।

इसलिए भारत सरकार ने वर्ष 2004 में इस मध्यान्ह भोजन योजना की समीक्षा की तथा इसे सभी प्रदेशों में लागु किया गया। म.प्र. सरकार इस योजना के प्रति कॉफी संवेदनशील है इसीलिए सरकार ने सप्ताह में एक दिन एवं विशेष पर्वों पर (पूड़ी, सब्जी, पुलाव, खीर, मीठा इत्यादि) स्वादिष्ट

* वाणिज्य विभाग, शारदा महाविद्यालय सरलानगर, मैहर (म.प्र.)

पौष्टिक भोजन की व्यवस्था की है जिससे कि स्कूली बच्चों को स्कूली शिक्षा के प्रति आकर्षित किया जा सके, इस योजना के बाद स्कूल में छात्रों की उपस्थिति का प्रतिशत बढ़ा है।

निष्कर्ष यह योजना भारत वर्ष में सफलता पूर्वक लागु है यद्यपि इसमें बिहार एवं अन्य प्रदेशों से गम्भीर समस्याएं आती रहती हैं जिससे यह साफ है कि योजना के क्रियान्वयन में कहीं न कहीं कुछ कमी है लेकिन योजना में कोई खराबी नहीं है। इसे दूर करने के लिए काफी प्रयास की जरूरत होगी तथा इसमें कुछ स्वयं सेवी संस्थाओं की मदद ली जा सकती है। इसमें केन्द्रीयकृत किचन की व्यवस्था करने से बच्चों को स्वस्थ्य एवं पौष्टिक भोजन मिल सकेगा। म.प्र. में यह योजना सफलता पूर्वक चल रही है तथा म.प्र. सरकार ने मध्यान्ह भोजन की योजना को सुचारू रूप से चलाने के लिए नये दिशा निर्देश जारी किये हैं।

इस योजना के समस्या एवं उपायों पर प्रकाश डालना आवश्यक है –

क्र.	समस्या	उपाय/सुझाव
1	सरकारी नियंत्रण से नौकरशाही विद्यमान है।	तकनीक के माध्यम से सरकार को ईमानदारी से प्रयास की जरूरत है।
2	योजना की कार्यशीलता एवं जवाब देही तय नहीं है।	अभिभावक एवं स्कूल के प्राचार्य, समाजसेवी संस्थाओं द्वारा समय–समय पर जाँच करते रहना चाहिए।
3	खाने की गुणवत्ता की जाँच नहीं होती है।	खाद्य निरीक्षकों द्वारा अचानक एक माह में दो बार निरीक्षण होना चाहिए।
4	भण्डारण अर्थात् सामग्री रखने की व्यवस्था स्कूलों में नहीं है।	सरकारी गोदामों में एवं बड़ी स्कूलों में खाद्य सामग्री का भण्डारण किया जाना चाहिए।
5	मध्यान्ह भोजन योजना जमीनी स्तर पर रखरखाव की व्यवस्था नहीं है।	जमीनी स्तर पर अधिकारियों की नियुक्ति की जाय या समाजसेवी संस्थाओं की मदद ली जानी चाहिए।
6	उचित प्रकाश की व्यवस्था नहीं है।	प्रकाश की व्यवस्था की जानी चाहिए।
7	म.प्र. में कुछ स्कूलों में मध्यान्ह भोजन का वितरण किया जाता है लेकिन उपस्थिति झूठी दर्शायी जाती है।	प्रभावी तंत्र के माध्यम से एवं तकनीकि के माध्यम से छात्र उपस्थिति सुनिश्चित की जानी चाहिए।
8	खाद्यान्न की चोरी रोकी जानी चाहिए।	पुलिस प्रशासन के माध्यम से चोरी रोकने की व्यवस्था की जानी चाहिए।
9	स्कूलों में या विद्यालयों में खाना बनाने के लिए अलग रसोई की व्यवस्था नहीं हैं।	अलग रसोई की व्यवस्था की जानी चाहिए।

इस योजना के समस्याओं एवं उपायों पर विचार करने के पश्चात यह नि:संदेह कहा जा सकता है कि इस योजना को कुछ सुधार के साथ चलाते रहना चाहिए जिससे सरकार के अनिवार्य शिक्षा तथा गरीब बच्चों को उत्तम भोजन भी प्राप्त होता रहेगा और यह इस योजना के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए एक मील का पत्थर साबित होगा।

आलेख : व्यक्तित्व विकास में शिक्षकों की भूमिका

डॉ. हरिकृष्ण बडोदिया * डॉ. किशोर कुमार डावर **

व्यक्तित्व क्या है ?

व्यक्तित्व शब्द अंग्रेजी के शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। शब्द की व्युत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द से हुई है जिसका अर्थ है बनावटी स्वरूप।

साधारण भाषा में व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के बाह्य रूपरंग तथा आकार से लगाया जाता है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार यह व्यक्ति का केवल बाह्य अर्थ है। व्यक्तित्व का एक आन्तरिक अर्थ भी होता है, क्योंकि इसके अन्दर व्यक्ति के आन्तरिक गुण भी सम्मिलित होते है। संक्षेप में व्यक्तित्व मानव के आन्तरिक तथा बाहरी गुणों का गठन है।

प्रचीन समय में व्यक्ति को कोई विशेष महत्व नहीं दिया जाता था अत:' उस समय लोग व्यक्तित्व के संबंध में कोई रूचित नहीं लेते थे। लेकिन वर्तमान समय में व्यक्तित्व और व्यक्तित्व विकास पर अत्यधिक ध्यान दिया जा रहा है। मानव समस्याओं और जनवादी सरकारों में व्यक्ति और उसके सामाजिक कार्यो में विशेष रूचि लेना प्रारंभ कर दिया है। यही कारण है कि आज व्यक्तित्व की धारणा अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गई है।

व्यक्तित्व के सम्बन्ध में वर्तमान में कई दृष्टिकोण विकसित हुये हैं। पहला दृष्टिकोण व्यक्ति की सभी प्रवृत्तियों के संग्रह को व्यक्तित्व कहा जाता है। दूसरा दृष्टिकोण व्यक्ति की सभी प्रवृत्तियों के समन्वय को व्यक्तित्व मानता है और तीसरा दृष्टिकोण व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिकों का है जो मानता है कि व्यक्तित्व व्यक्ति के उन अभ्यासों को समन्वय है जो वातावरण के प्रति उसके विशिष्ट चारित्रिक अभियोजन का निर्देशन करते हैं। स्पष्टत: इस दृष्टिकोण में व्यक्ति के विशिष्ट अभियोजन पर ज्यादा बल दिया गया है। चौथा दृष्टिकोण व्यक्तित्व के दृष्टिकोण विकास में सामाजिक एवं सांस्कृतिक पक्ष की प्रधानता पर बल दिया गया। कुल मिलाकर व्यक्तित्व विस्तृत एंव विविध अर्थ वाली एक अवधारणा है।

डिक्शनरी आफ साइकोलॉजी में डेवर के अनुसार –''व्यक्तित्व शब्द का प्रयोग भिन्न–भिन्न अर्थो में हुआ है, परन्तु सबसे अधिक व्यापक और सन्तोषजनक परिभाषा के अनुसार यह व्यक्ति के उन शारीरिक,मानसिक, नैतिक और सामाजिक गुणों का सुसंगठित और गत्यात्मक संगठन है जो व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के साथ नित्य के आदान प्रदान में एक–दूसरे के साथ प्रदर्भित करते हैं।''

इस प्रकार किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और सांस्कृतिक गुणों का समावेश होता है।

वारेन के अनुसार–''व्यक्तित्व व्यक्ति का सम्पूर्ण मानसिक संगठन है जो उसके विकास की किसी अवस्था में होता है।''

उक्त परिभाषा मनौवैज्ञानिक की दृष्टि में उचित नहीं मानी गई , क्योंकि व्यक्तित्व केवल मानसिक संगठन नहीं है। व्यक्तित्व की प्रक्रिया जटिल है। और पर्यावरण से घनिष्ठ रूप से संबंधित है। परन्तु उक्त परिभाषा मानसिक और शारीरिक संगठन को एक–दूसरे से प्रथक करती है जिसे उचित नहीं माना जा सकता।

मन के अनुसार –''व्यक्तित्व को एक व्यक्ति के ढांचे, व्यवहार करने के ढंग, रूचियॉ, अभिरूचियॉ, क्षमताऍ, योग्यताऍ तथा विशेषता पूर्ण संगठन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।''

वस्तुत: प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व में एक विशेषता पाई जाती है। जिसके आधार पर ही एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति से अलग किया जा सकता है। नि:सन्देह किसी व्यक्ति के सभी कार्य उसके व्यक्तित्व का आईना होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति के कार्य करने का ढंग एक दूसरे से अलग होता है, उसकी जीवन शैली विशिष्ठ ढंग की होती है।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व की अपनी विशेषताऍ होती है उसके आन्तरिक गुण उस व्यक्ति के व्यक्तित्व के रूप में दिखाई देते हैं। 21 वीं सदी में व्यक्तित्व निर्माण के विभिन्न पक्षों को प्रोत्साहित करने के लिए सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक संस्थाओं को प्रोत्साहित किया जा रहा है कि ये संस्थाऍ देश में ऐसे नागरिकों का निर्माण करें जिससे न केवल व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास हो बल्कि एक अच्छे नागरिक के रूप में उसकी पहचान सुनिश्चित हो सके। समाजिक सांस्कृतिक संस्थाओं द्वारा व्यक्तियों के व्यक्तित्व के विकास में जो सहयोग दिया जा रहा है वह अपनी जगह है किन्तु सबसे महत्वपूर्ण सहयोग शैक्षणिक संस्थाओं के द्वारा सुनिश्चित किया जा रहा है।

शैक्षणिक संस्थाऍ चाहे तो व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकती है। अनौपचारिक शिक्षा व्यक्तित्व के विकास में जितना योगदान देती है उससे कहीं अधिक योगदान औपचारिक शिक्षा का हो सकता है। इसी को दृष्टि में रखते हुए देश की सरकारें अपनी शिक्षण संस्थाओं से यह अपेक्षा करती है कि वे व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करें। शैक्षणिक संस्थाऍ शिक्षा के द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास में जो भूमिकाऍ निभाती हैं उसका माध्यम शिक्षक होते हैं।

किसी देश के विकास में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगिंण विकास की आधारशिला है। शिक्षा के बिना जहॉ एक ओर व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास की कल्पना नहीं की जा सकती वहीं दूसरी ओर राष्ट्र की उन्नति की कल्पना भी नहीं की जा सकती। शिक्षा वह अस्त्र है जिसके द्वारा अज्ञानता के अंधकार को नष्ट कर ज्ञान की रोशनी का प्रसार किया जाता है। शिक्षा का तात्पर्य केवल पुस्तकीय ज्ञान से नहीं बल्कि विभिन्न संस्थाओं द्वारा संचित अनुभवों से समाज को व्यवहारिक ज्ञान प्रदान किया जाता है। वस्तुत: शिक्षा ज्ञान और विज्ञान का आधार है।

महात्मा गॉधी के अनुसार –''शिक्षा से मेरा अभिप्राय बच्चे के शरीर , मन और आत्मा में विद्यमान सर्वोत्तम गुणों का विकास करना है।'' इस कथन से स्पष्ट है कि व्यक्ति के अंदर अच्छी और बुरी दोनों क्षमताऍ होती है। इनमें से शिक्षा के द्वारा व्यक्ति के अंदर अच्छी और रचनात्मक क्षमताओं को विकसित करना ही शिक्षा है।

व्यक्तित्व विकास में शिक्षकों की भूमिका –

समाज में औपचारिक शिक्षा के प्रसार में शिक्षकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से शिक्षक व्यक्तियों के व्यक्तित्व विकास में अपना योगदान देते हैं। शिक्षक व्यक्ति के अंदर छिपे अच्छे गुणों

*सहायक प्राध्यापक,समाजशास्त्र ** सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना (म.प्र.)

, जो समाज के विकास में महत्वपूर्ण होते है, को विकसित करने और उनका उपयोग सामाजिक हित में करने का कार्य करते हैं। शिक्षक जहॉ एक ओर व्यक्तियों में सामाजिक, सांस्कृतिक गुणों का विकास करते हैं। पश्चिमी सभ्यता के प्रसार के फलस्वरूप आज देश सांस्कृतिक एवं नैतिक संकटों के दौर से गुजर रहा है। इस विषम स्थिति को दूर करने और व्यक्तियों के नैतिक, सामाजिक और चारित्रिक विकास में शिक्षकों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षकों की नैतिक जवाबदारी है कि वे युवाओं को अच्छा नागरिक बनाने में अपना सर्वोत्तम योगदान दें।

गुणवत्ता विस्तार के अंतर्गत उच्च शिक्षा में विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में शिक्षकों की भूमिका –

वर्तमान युग आर्थिक उदारीकरण और वैश्वीकरण का है। ऐसे में प्रतिस्पर्धा भी बहुत कठीन है जिसके लिए विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में शिक्षकों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आर्थिक उदारीकरण ने शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन किये हैं। आज विद्यार्थियों को एकांगी ज्ञान के स्थान पर बहुआयामी ज्ञान की आवश्यकता है। जिसकी पूर्ति परम्परागत शैक्षणिक परिपाठी से नहीं हो सकती। विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास के साथ–साथ उन्हें रोजगार के लिए तैयार करना आज वक्त की मांग है। इसलिए राज्य सरकार की अपेक्षाओं में परिवर्तन दिखाई दे रहा है। राज्य सरकार चाहती है कि वह अपने उच्च शिक्षा के तहत शिक्षकों के माध्यम से विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास के साथ उन्हें रोजगार के योग्य बनाने का कार्य करें।

आज वैश्वीकरण के कारण शिक्षा में अनेक आयामों का विकास हुआ है परम्परागत शिक्षा पाठ्यक्रमों में तीव्र गति से बदलाव हुआ है। विकास के नये क्षेत्र दिखाई दे रहे हैं इन क्षेत्रों में स्वयं को स्थापित करने के लिए विद्यार्थियों को परम्परागत विषय से अलग हटकर नये क्षेत्रों में रोजगार हेतु प्रतिस्पर्धा करना होगी। ऐसे में आवश्यक है कि शिक्षकों को भी उन विषयों के अनुरूप स्वयं को अद्यतन करना होगा। वर्तमान में मेनेजमेन्ट, वित, बैंकिंग, बीमा, विधि, ऑडिटिंग, बजटिंग, कन्सलटेंसी, पब्लिक रिलेशन, काउन्सलिंग, पत्रकारिता, प्रकाशन, अनुवादक, डिजाईनिंग, विज्ञापन, एक्टिंग, फिल्म, संगीत, मनोरंजन, एवीएशन, पर्यटन, होटल एवं कुकिंग आदि क्षेत्रों में रोजगार के नये अवसर दरवाजे पर दस्तक दे रहे हैं। ऐसे में यह आवश्यक है कि नये विषयों और रोजगार के अनुरूप विद्यार्थियों को तैयार किया जाये।

शिक्षकों का एक बडा दायित्व विद्यार्थियों को इस प्रकार तैयार करना है कि वे अपनी बात अच्छी तरह से रख सकें। इस हेतु उनमें अभिव्यक्ति की क्षमता, संवाद की क्षमता विकसित करने के लिए लिखित और मौखिक सम्प्रेषण क्षमता का विकास करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। पिछले दो वर्षो से उच्च शिक्षा में गुणवत्ता प्रसार के संदर्भ में यह कार्य प्राथमिकता के आधार पर किया जा रहा है। इससे पहले महाविद्यालयों में विद्यार्थी मंच पर आकर दो शब्द बोलने में हिचक महसूस करते थे किन्तु मौखिक तथा लिखित सम्प्रेषण की क्षमता के विकास में शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाने के बाद यह सम्भव हो सका है।

शिक्षकों का एक और महत्वपूर्ण दायित्व है कि विद्यार्थियों में नेतृत्व क्षमता का विकास करना। विद्यार्थी के विकास में नेतृत्व क्षमता की बडी भूमिका होती है। शिक्षक यदि विद्यार्थियों में नेतृत्व करने का आत्मविश्वास कर सके तो यह समाज के लिए उनका महत्वपूर्ण योगदान तो होगा ही साथ ही उनके व्यक्तित्व विकास में यह मील का पत्थर साबित हो सकता है। नेतृत्व क्षमता के साथ समूह के साथ काम करना, समस्याओं के समाधान की क्षमता विकसित करने, संगठन की क्षमता एवं कार्यक्रम आयोजन एवं संचालन करने की क्षमता विकसित करने में शिक्षक की प्रेरणा महत्वपूर्ण है। ये ऐसे क्षेत्र हैं जिससे व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास तीव्र गति से होता है। तथा उनमें एक आत्मीय विश्वास जागृत होता है जो उनकी उन्नति के लिए महत्वपूर्ण है।

वर्तमान समय में तकनीकी विकास जिस तेजी से हुआ है उसका स्पष्ट प्रभाव बडे म़हानगरों की शिक्षण संस्थाओं में देखा जा सकता है। कम्प्यूटर, एलसीडी प्रोजेक्टर, स्लाइड़र प्रोजेक्टर, आडियो विजुअल तकनीक, पॉवर प्वाइंट प्रेजेन्टेशन जैसी नई विधाओं से शिक्षण विद्यार्थियों को जहॉ एक ओर उपयोगी साबित हो रहे हैं वहीं दूसरी ओर वे इन्टरनेट की सुविधा से मिनटों में दुनियाभर की जानकारी के साथ–साथ विषय की विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। आज यदि विद्यार्थी इन सब से अपने को नहीं जोड पाता तो वह तेज रफ्तार से हो रहे शिक्षा में परिवर्तनों को अंगीकार नहीं कर सकता। उच्च तकनीकी भी व्यक्तित्व के विकास में अति महत्वपूर्ण है।

इस हेतु आवश्यक है कि शिक्षक स्वयं को तकनीक सक्षम बनाये जिससे विद्यार्थियों को ज्ञान के नये क्षेत्रों को कम समय में जानने में मदद मिल सके। राज्य सरकार इस हेतु निरंतर सुविधाएँ उपलब्ध करा रही है जिसका लाभ विद्यार्थियों को शिक्षकों के माध्यम से मिल सकता है। इस तकनीकी प्रविधि के माध्यम से विद्यार्थियों को रोजगार के नये अवसर तो प्राप्त होंगे ही साथ ही उनके व्यक्तित्व का विकास भी संभव हो सकेगा। शिक्षकों को इस क्षेत्र में स्वयं को अद्यतन करने की अत्यंत आवश्यकता है। इन नई तकनीकों के माध्यम से विद्यार्थी स्वयं को प्रतियोगी परीक्षाओं में सक्षम बना सकते हैं।

एक महत्वपूर्ण कार्य शिक्षकों का यह भी है कि विद्यार्थियों में महत्वकांक्षा विकसित हो जब विद्यार्थी महत्वकांक्षी होगा तभी वह उन्नति की ओर कदम बढ़ा सकता है। शिक्षकों की इस क्षेत्र में भी बडी भूमिका है। महत्वाकांक्षा व्यक्तित्व विकास का एक पक्ष है, जो शिक्षकों के माध्यम से सम्पन्न हो सकता है।

राज्य शासन ने उच्च शिक्षा में गुणवत्ता विस्तार के लिए सेमेस्टर पद्यति लागू इसलिए की कि वह एक साल के दो सेमेस्टरों में विषय का अधिक ज्ञान प्राप्त कर सके। शिक्षकों से यह अपेक्षा की जाती है कि शासन की मंशा के अनुरूप वह सेमेस्टर प्रणाली को कारगर बनाकर विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में सहयोग करें। सतत् मूल्यांकन प्रणाली और प्रोजेक्ट कार्य दोनों ही विद्यार्थियों के हित में तब ही हो सकता है जब शिक्षक कठिन परिश्रम कर विद्यार्थियों को इस योग्य बना सके।

परिवर्तन प्रकृति का नियम है। परिवर्तन जब सकारात्मक होते हैं तो देश और व्यक्ति का विकास होता है। शिक्षा वह है जो सकारात्मक परिवर्तनों को विद्यार्थियों को अंगीकार करने के योग्य बनाए।

विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में शिक्षकों को महती भूमिका है बशर्ते शिक्षक स्वयं को अद्यतन करें और विद्यार्थियों को इस योग्य बनाने की दिशा में प्रयत्नशील करके योग्य बना सकें।

****

आलेख : ''गुणवत्ता एवं बेस्ट प्रेक्टिसेस'' में पाठ्यक्रम के पहलू या दृष्टिकोण का महत्व

प्रो. एस. के. सिकरवार *

संक्षेपिका

म.प्र. शासन द्वारा गुणवत्ता विस्तार वर्ष सत्र 1011-12 में प्रारंभ हुआ व वर्तमान में भी सफलतम् प्रयासों द्वारा जारी है, जिसका उद्देश्य छात्रों के सर्वांगीण विकास एवं गुणवत्ता में वृद्धि करना है । छात्र अपने शैक्षणिक गतिविधियों के साथ-साथ नवाचारों से जुडकर सफलता की ओर निरन्तर अग्रसर हैं।

उच्च शिक्षा में गुणवत्ता एवं बेस्ट प्रेक्टिसेस के अंतर्गत **''पाठ्यक्रम के पहलू या दृष्टिकोण''** एक महत्वपूर्ण बिंदु है। किसी भी महाविद्यालय का संचालन निश्चित पाठ्यक्रम के अभाव में असम्भव है। ऐसे में संस्थाओं के सृजन, परिमार्जन, विकास एवं विस्तार में पाठ्यक्रम की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। विद्यार्थियों के समग्र व्यक्तित्व विकास के द्वारा एक श्रेष्ठ समाज के निर्माण हेतु महाविद्यालय का पाठ्यक्रम **''लक्ष्य''** निर्धारण का कार्य करता है। अत: उत्कृष्ठ पाठ्यक्रम के पहलू ही श्रेष्ठ व्यक्ति, समाज एवं विश्व का निर्माण कर सकते हैं। पाठ्यक्रम में शैक्षणिक एवं शैक्षणेत्तर विधाओं का समुचित समावेश ही विद्यार्थियों के विकास के लिए वर्तमान में अपेक्षित है। मानव संसाधनों की कुशलता, योग्यता एवं गुणवत्ता में वांछित सामंजस्य स्थापित कर उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रमों को अधिक उपयोगी बनाना समय की महत्ती आवश्यकता है जिससे विद्यार्थी प्रतियोगिता परीक्षाओं में अधिक से अधिक सफल हो और अपने ज्ञान व सुसंस्कारित व्यक्तित्व से प्रदेश एवं देश के विकास में सहभागी बन सकें। पाठ्यक्रम का लक्ष्य केवल बेहतर जीवन-प्रबंध ही नहीं बल्कि विद्यार्थियों की चेतना का उन्नयन भी करना है जिससे वे इस वैश्वीकरण के युग में स्वयं को स्थापित कर सकें और उनमें मानवीय संवेदनाओं का गुणात्मक विकास हो। इसलिए बदलते सामाजिक ताने-बाने में नैतिकतापूर्ण एवं राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत पाठ्यक्रम ही उन्हें बेहतर नागरिक बना सकता है।

परिचय व उद्देश्य : उच्च शिक्षा का प्रयोजन व्यक्ति के जीवन में उच्च मूल्यों की स्थापना करना है । इसके लिए अध्ययन व प्रबंधन करने वाले सभी हितग्राहियों ने समेकित प्रयास की जरूरत है । उच्च शिक्षा में परिवर्तन की लहर है जिसका श्रेय विद्यार्थी, प्राध्यापक एवं प्रबंधन की श्रेणी को दिया जा सकता है । आज विश्व परिदृष्य में चुनौतियों से निपटने के लिये संधारणीय विजय के साथ-साथ गुणात्मक विकास भी आवश्यक है । परम्परा एवं प्रगति के बीच आज उच्च शिक्षा द्वन्दग्रस्त है । केवल डिग्री मात्र से युवा अपनी जीविका की ग्यारंटी नहीं पा सकता । अत: उच्च शिक्षा में प्रोद्योगिकी परिवर्तन के साथ ही जीवन मूल्यों एवं विशाल कौशल की जानकारी दी जाना आवश्यक हैं अत:हमारे विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में उन बातों का समावेश होना आवश्यक है जो कि विद्यार्थियों में इन गुणों एवं नैतिक मूल्यों को विकसित कर सकें, जैसे :-

1. सहनशीलता में वृद्धि एवं सहयोग की भावना का विकास।
2. साहसी प्रवृत्तियों एवं सहयोगात्मक दृष्टिकोण को बढ़ावा मिले।
3. वैज्ञानिक सोच एवं नई तकनीक को समझने की क्षमता विकसित हो।
4. प्राणिमात्र के प्रति सम्मान की भावना बढ़े।
5. अभिव्यक्ति, भाषा विकास आदि विशिष्ट चारित्रिक गुणों का निर्माण हो सके।
6. विद्यार्थियों में प्रस्तुतीकरण की क्षमता का विकास हो सके। ।
7. सांस्कृतिक गतिविधियों में सक्रिय सहभागिता विकसित करने में सहयोगी हो।
8. पर्यावरण, प्राकृतिक संसाधनों एवं ससांस्कृतिक विरासत को समझने तथा उसे संरक्षित करने की क्षमता विकसित हो।
9. पाठ्यक्रम ज्ञानार्जन एवं प्रतियोगी परीक्षाओं की सफलता का आधार हो।
10. नेतृत्व के गुणों को आत्मसात करते हुए उनमें नेतृत्व क्षमता विकसित हो।
11. हमारी सभ्यता, संस्कृति, रीति रिवाज और देश की परम्राओं के अनुसार मर्यादित आचरण विकसित हो आदि महत्वपूर्ण बिन्दू हैं जिन्हें पाठ्यक्रम निर्धारण के समय ध्यान में रखा जाना उपयुक्त होगा।

व्यवहार/कार्यप्रणाली (Practices) :-

पाठ्यक्रम के पहलूओं (Curricular Aspects) को ऐसा होना चाहिए जिसे व्यवहार में लाया जा सके और वो विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास में सहायक हों। इस दिशा में उच्च शिक्षा विभाग सतत् नवाचार की ओर अग्रसर है :-

1. रोजगारोन्मुखी कार्ययोजना का पाठ्यक्रम में समावेश – उच्च शिक्षा विभाग द्वारा विद्यार्थियों की अभिरूचियों के अनुरूप स्नातक एवं स्नातकोत्तर स्तर पर पाठ्यक्रम में सम्मिलित किये गये कार्यस्थल प्रशिक्षण एवं परियोजना कार्य निश्चित ही एक सराहनीय नवाचार है। विद्यार्थियों से विचार-विमर्श के उपरान्त प्राध्यापकों द्वारा परियोजना के विषयों का निर्धारण किया जाता है ताकि चयनित विषय उन्हें प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता के बेहतर अवसर और रोजगार प्राप्त करने में उपयोगी सिद्ध हों।

2. पाठ्येत्तर गतिविधियों का संचालन:- महाविद्यालय में पाठ्येत्तर गतिविधियों के माध्यम से छात्रों की बहुमुखी प्रतिभा को निखारने का सार्थक प्रयास किया जाता है। एन.सी.सी. व एन.एस.एस. में सहभागिता से जहाँ विद्यार्थियों में देशभक्ति का जज़्बा, चरित्र निर्माण एवं सामुदायिक भावना निर्मित हो रही है वहीं युवा उत्सव एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अंतर्गत वाद-विवाद, प्रश्नमंच, निबंध पैंटिंग, गायन, नृत्य, कार्टुनिंग एवं क्ले मॉडलिंग आदि प्रतियोगिताओं में विद्यार्थियों को ऐसे समसामयिक एवं महत्वपूर्ण विषय प्रदान किए जाते हैं जिससे न केवल उनके व्यक्तित्व का विकास बल्कि भविष्य में उन्हें रोजगार प्राप्त करने में सहायक हो रहें हैं। इस प्रकार पाठ्येत्तर गतिविधियों के द्वारा विद्यार्थियों को निरन्तर प्रोत्साहित एवं पुरुस्कृत कर उनकी छुपी हुई प्रतिभा को मंच प्रदान किया जाता है।

3. नवीनतम तकनीकों का प्रयोग :- पाठ्यक्रम के प्रभावी क्रियान्वयन के उद्देश्य से प्राध्यापकों द्वारा अध्ययन अध्यापन की नवीन

* सहा.प्रा.रसायनशास्त्र, शहीद चन्द्रशेखर आजाद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय झाबुआ (म.प्र.)

तकनीकों के अंतर्गत श्रव्य एवं दृष्य तकनीकों को अपनाया जा रहा है। कुछ विभागों में अध्ययन-अध्यापन में ओवर हेड प्रोजेक्टर, एल.सी.डी. प्रोजेक्टर एवं व्यक्तिगत लेपटॉप आदि द्वारा एम.एस.पावर पांइट का प्रयोग सफलतापूर्वक किया जा रहा है। निश्चित ही इससे विद्यार्थियों की विषय प्रति रूचि बढ़ रही है। शीघ्र ही उच्च शिक्षा विभाग की वर्चूअल कक्षाओं की अवधारणा मूर्तरुप लेने जा रही है, निश्चित रुप से प्रदेश का छात्र समूह इससे लाभान्वित होगा।

4. शोध कार्य हेतु सतत् प्रोत्साहन:- हमारे यहाँ स्नातकोत्तर विभागों के विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा में शोध कार्य हेतु निरन्तर प्रोत्साहित किया जाता है जिसके परिणाम स्वरूप कई विद्यार्थी शोध कार्य हेतु चयनित होकर शोध कार्य में संलग्न हैं। शैक्षणिक स्टॉफ भी नवीनतम पाठ्यक्रमों के अनुरूप अपने आपको अद्यतन करने में सतत् प्रयत्नशील है।

5. महाविद्यालय में गठित विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन योजना द्वारा समय-समय पर विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम जैसे :- कम्प्यूटर सॉफ्ट वेयर प्रशिक्षण, दुग्ध उत्पाद, बागवानी, वर्मी कम्पोस्ट, लघु उद्योग प्रशिक्षण कार्यक्रमों द्वारा प्रशिक्षण दिये जाते हैं। जो उनमें रोजगार के नये क्षैत्रों व अवसरों को प्राप्त करने में सहायक हैं।

सफलता के प्रमाण (Evidence of success) :

1. सेमेस्टर प्रणाली :- पाठ्यक्रम में बदलाव से शिक्षक एवं विद्यार्थी के बीच की संवादहीनता समाप्त हो कर निरन्तर जीवंत संपर्क से स्वस्थ्य शैक्षणिक वातावरण निर्मित हो रहा है। इससे रैगिंग व अनुशासनहीनता में कमी आई है।

2. सतत् व्यापक मूल्यांकन के अंतर्गत आलेख रचना, चार्ट निर्माण, समूह वार्ता, समूह चर्चा, सहसा कक्षा परीक्षण, कक्षा अध्यापन, जीवनी लेखन, पुस्तकालय एवं संदर्भ पुस्तकों की सूची तैयार करना एवं उनका प्रस्तुतीकरण आदि सेमेस्टर प्रणाली की विभिन्न विधाएँ विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास में अभूतपूर्ण ढंग से प्रभावी सिद्ध हुई हैं। यह अभ्यास पाठ्यक्रम में निरन्तर जारी रखने की आवश्यकता है बल्कि इसमें ओर भी विभिन्न विधाओं का समावेश कर इसे सार्थक एवं समृद्ध परम्परा के रूप में विकसित किया जा सकता है।

3. अंतिम सेमेस्टर में परियोजना का समावेश :- स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर पर अंतिम सेमेस्टर में परियोजना का समावेश करना लाभदायक एवं सराहनीय प्रयास है। पूर्व प्रचलित सेमेस्टर पद्धति की परियोजना प्रणाली की अपेक्षा अब इसे अधिक मितव्ययी, समय की बचत, उपयोगी, रूचिकर, ज्ञानवर्धक एवं व्यवहारिक स्वरूप दिया गया है। यह इसकी सफलता का प्रमाण है कि छात्र इसे करने के लिए अब उत्साहित है।

4. प्रतियोगी परीक्षा हेतु प्रोत्साहन :- विद्यार्थियों को प्रतियोगी परीक्षा हेतु प्राध्यापकों के द्वारा निरन्तर प्रोत्साहन व सतत् मार्गदर्शन के फलस्वरुप इस महाविद्यालय के कई छात्रों ने विगत 03 वर्षों में शिक्षक, लेब परिचारक, अनुवादक, कम्प्युटर ऑपरेटर, वनरक्षक, पटवारी, सहायक प्राध्यापक एवं प्रशासनिक सेवाओं इत्यादि अनेक सेवाओं में चयनित होकर महाविद्यालय को गौरवान्वित किया है।

5. विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन योजना :- करीकुलर एस्पेक्ट्स की सफलता का परिणाम ही है कि वर्ष 2012-13 में विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन योजना के अन्तर्गत अंग्रेजी सीखो योजना द्वारा छात्र लाभान्वित हुए हैं। शासन एवं जिला प्रशासन के सहयोग से महाविद्यालय स्तर पर छात्रों की एयरफोर्स में भर्ती प्रक्रिया आगामी 15 व 18 फरवरी 2013 को आयोजित होने जा रही है।

6. पुस्तक लेखन एवं शोध कार्य :- कई प्राध्यापकों द्वारा पाठ्यक्रमानुसार पुस्तक लेखन का कार्य भी संपादित किया गया है। कई प्राध्यापक शोध निर्देशक एवं कई स्वयं शोधार्थी के रूप में शोध गतिविधियों में अपनी सहभागिता बनाए हुए हैं।

7. शोध गतिविधियां :- कई प्राध्यापकों के राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की शोध पत्रिकाओं में शोध पत्र प्रकाशित हो रहें हैं और साथ ही राष्ट्रीय संगोष्ठियों, सेमीनार, कार्यशालाओं, इत्यादि में सहभागिता कर शोध पत्रों का वाचन किया गया है।

संसाधानों एवं अनुसंधान की आवश्यकता

1. पाठ्यक्रम निर्धारण में त्रिस्तरीय पद्धति :- संबंधित विश्वविद्यालय द्वारा पाठ्यक्रम निर्धारण के पूर्व एक व्यवहारिक प्रक्रिया अपनाते हुए त्रिस्तरीय सेमीनार या विचार पद्धति को अपनाना चाहिए जिसमें स्थानीय, जिला व विश्वविद्यालय स्तर के विषय विशेषज्ञों को आमंत्रित कर उनके बहुमूल्य सुझावों पर चर्चा कर पाठ्यक्रम का निर्धारण किया जाए। परम्परागत एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अनुपयोगी प्रश्नपत्रों के स्थान पर रोजगारोन्मुखी, ज्ञानोन्मुखी एवं वर्तमान आवश्यकता के अनुरूप हो।

2. स्थाई प्राध्यापकों की नियुक्तियां :- महाविद्यालय में स्वीकृत पदों के विरुद्ध स्थाई प्राध्यापकों की नियुक्तियां की जाना चाहिए। एवं व्यावसायिक पाठ्यक्रमों हेतु नवीन पद सृजित करने की आवश्यकता है।

3. नैतिक मूल्यों पर आधारित शिक्षा :- प्रचलित आधार पाठ्यक्रमों के साथ भाषा एवं रोजगार के साथ-साथ नैतिक मूल्यों पर आधारित शिक्षा का समावेश करना अतिआवश्यक है। जिससे स्वस्थ्य समाज का निर्माण हो सके।

4. अंक आधारित शैक्षणिक भ्रमण अनिवार्य :- पाठ्यक्रमों में अंकों पर आधारित शैक्षणिक भ्रमण अनिवार्य होना चाहिए जो शासकीय व्यय पर हो। जिससे विद्यार्थियों को सैद्धांतिक अध्ययन के साथ-साथ व्यवहारिक ज्ञान का अवसर प्राप्त हो तथा विद्यार्थी संबंधित शैक्षणिक भ्रमण का सारगर्भित प्रतिवेदन प्रस्तुत कर निर्धारित अंक प्राप्त कर सके।

5. अंतर-विषय अध्ययन का समावेश :- विद्यार्थियों की बहुमुखी प्रतिभा के उन्नयन को दृष्टिगत रखते हुए अंतर-विषय अध्ययन (Inter Disciplinary Study) का प्रावधान हो, जिसके लिए वर्कशॉप, सेमीनार को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

6. परीक्षा प्रणाली में सुधार :- पाठ्यक्रम के अनुसार परीक्षा कार्यकम ऑनलाईन व प्रतियेगी परीक्षाओं की भांति वस्तुनिष्ठ प्रश्न प्रणाली होने से विद्यार्थियों पूरे पाठ्यक्रम को गंभीरता से पढ़ेगें।

7. शासन द्वारा महाविद्यालयों में प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी हेतु मार्गदर्शक कक्षाएँ आयोजित की जाये।

अवरोध/रूकावट (Obstacle faced / Problem encountered)

पाठ्यक्रम के निरंतर अद्यतन एवं अपग्रेडेशन में कतिपय बाधाएं एवं रूकावटें भी है यदि उन बाधाओं को दूर कर दिया जाए तो पाठ्यक्रम संचालन में और अधिक प्रभावशीलता एवं व्यवहारिकता का समावेश हो सकता है क्योंकि करीकुलर एस्पेक्ट्स वो पहलू या दस्तावेज है जो विद्यार्थियों का मार्ग प्रशस्त कर उन्हें भविष्य के सुनहरे सपनों में सफल होने का आधार प्रदान करता है। यह सही है कि पाठ्यक्रम संरचना का कार्य विश्वविद्यालय स्तर पर होता है परन्तु स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरुप महाविद्यालय को ही उनमें से किस कोर्स को अपने यहाँ लागू करना है, का चुनाव करना पड़ता है, ऐसे में कुछ अवरोध अवश्य आते हैं। विद्यार्थियों की मांग, प्रयोगशालाओं,

तकनीकी सामग्री, विषय विशेषज्ञों, नियमित स्टॉफ, पुस्तकों व संसाधनों की उपलब्धता कितनी है, इसको ध्यान में रखकर ही संस्था को नये पाठ्यक्रम का चयन करना पड़ता है। फिर भी करीकुलर एस्पेक्ट्स के अंतर्गत शासन को निम्न अवरोधों/रूकावटों की ओर ध्यान देना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों की हर स्तर पर सहभगिता बढ़ सके।

1. अधोसंरचना व संसाधनों की कमी पाठ्यक्रमों के सफल संचालन में एक महत्वपूर्ण अवरोध है। इस संबंध में शासकीय प्रक्रियाओं का सरलीकरण अनिवार्य है।
2. जनभागीदारी द्वारा संचालित नये पाठ्यक्रमों के शिक्षण शुल्क का अधिक होना निर्धन विद्यार्थियों के लिए एक प्रकार का अवरोध ही है। इसलिए नये पाठ्यक्रमों के संचालन का दायित्व जनभागीदारी की अपेक्षा शासन स्तर पर हो तो विद्यार्थियों को इसका अधिक लाभ मिल सकेगा।
3. नियमित स्टॉफ की कमी भी पाठ्यक्रम के प्रभावी संचालन में एक समस्या है क्योंकि अनेक वरिष्ठ प्राध्यापकों को पुस्तकालय, खेलकूद एवं अन्य विभागों का प्रभार सौंपा जाता है जिससे निश्चित ही उनकी शैक्षणिक एवं शोध कार्य करने की कार्यक्षमता प्रभावित होती है।
4. पाठ्येत्तर गतिविधियों में सहभागिता करने वाले विद्यार्थियों का मूल्यांकन अंको के द्वारा नहीं होता है जिसके कारण उनकी पाठ्येत्तर गतिविधियों में सक्रिय सहभागिता में रुचि नहीं रहती। कई बार तो जिला स्तरीय गतिविधियों में उनकी उपस्थिति नगण्य रहना चिंता का विषय हो जाता है। अत: पाठ्येत्तर गतिविधियों में विद्यार्थियों की उपस्थिति के मापदंड एवं अंक निर्धारण अनिवार्य रूप से तय किये जाएं।
5. शासन द्वारा महाविद्यालय स्तर पर खेलकूद, साहित्यिक व साँस्कृतिक गतिविधियों को अनिवार्य कर अंक निर्धारण किये जायें, जिससे सभी विद्यार्थी अपने में निहित गुणों को विकसित कर सकें व उक्त गतिविधियों से प्राप्त बोनस अंक उन्हें प्रतियोगी परीक्षाओं में चयन हेतु एक सशक्त आधार बन सकें, का प्रावधान उच्च शिक्षा के माध्यम से किया जायें।
6. आंतरिक एवं बाह्य परीक्षकों को परियोजना/प्रायोगिक परीक्षा, प्रश्न पत्र निर्माण एवं उत्तर पुस्तिकाओं के मूल्यांकन का मानदेय भुगतान समय पर नहीं होना करिकुलम की सफलता में बहुत बड़ी बाधा है। बाह्य परीक्षकों द्वारा मूल्यांकन हेतु आने में अरुचि जाहिर की जाती है और परीक्षा परिणाम प्रणाली में अनावश्यक विलम्ब होता हैं तथा निर्धारित समय पर विद्यार्थियों को उपाधि नहीं मिल पाती है।
7. प्रत्येक कक्षा में प्रायोगिक परीक्षा केवल एक बार सम सेमेस्टर में ही आयोजित किये जाने का प्रावधान पाठ्यक्रम में हो, जिससे विद्यार्थियों पर पड़ने वाला अनावश्यक दबाव कम होगा। साथ ही पाठ्यक्रम छोटा एवं पुनरावृत्ति रहित हो।
8. पाठ्यक्रम में शैक्षणिक भ्रमणों की अनिवार्यता के अभाव में विद्यार्थी सैद्धांतिक अध्ययन तक ही समिति रह जाते हैं और कई बार विषय के व्यवहारिक पक्ष को अच्छे से समझ नहीं पाते हैं।
9. विद्यार्थियों में जागरुकता के उद्देश्य से विश्वविद्यालय क्षेत्राधिकार में आने वाले जिलों में व्याप्त अंधविश्वास एवं रूढ़िवादी परम्राओं को चिन्हित कर उन्हें पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाना चाहिए तभी हम उनमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास कर पाने में सक्षम हो सकेंगें। फिर किसी ग्रामीण को अपराधबोध लेकर नहीं जीना पड़ेगा।
10. व्यावसायिक स्तर पर छात्रों के जुड़ाव हेतु पाठ्यक्रम में ऐसी व्यवस्था की जाए कि समय-समय पर प्रदेश के व्यावसायिक उद्यमियों द्वारा प्रशिक्षण कार्यक्रम व उच्च शिक्षा विभाग द्वारा प्लैसमैंट के आयोजन महाविद्यालयों में किये जायें।
11. ऐम्बेसेडर प्राध्यापक योजना का विस्तार हो -ऐम्बेसेडर प्राध्यापक योजना में अग्रणी महाविद्यालय से विषय विशेषज्ञ अधिनस्थ महाविद्यालयों में जाते हैं। जरूरत यह भी है कि विश्वविद्यालय स्तर से भी विषय विशेषज्ञ अग्रणी महाविद्यालयों में आकर मार्गदर्शन दें।

उपसंहार (Conclusion)

उच्च शिक्षा में गुणवत्ता आवश्यक है। इसलिए शासन स्तर पर यह प्रयास निरंतर जारी है।। मूलभूत संरचना एवं शिक्षण संसाधन द्वारा छात्रों के व्यक्तित्व विकास में सुधार की संभावना हैं। शिक्षण संसाधनों का उपयोग कर हम विद्यार्थीयों के उच्च स्तर पर काफी सुधार ला सकते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में यदि सुधार लाना हो तो आधुनिक युग में हमें शिक्षण के आधुनिक संसाधनों का प्रयोग अनिवार्य रूप से करना चाहिए। विद्यार्थियों में नवाचार हेतु ई-लायब्रेरी, वाईफाई कम्प्यूटर लैब, ऑडिटोरियम, एल.सी.डी., ओवर हेड प्रोजेक्टर (ओएचपी) के नियमित प्रयोग हेतु निरंतर प्रयास किये जाए।

उच्च शिक्षा विभाग के अंतर्गत गुणवत्ता प्रबंधन के तहत्। अब यह स्वीकार किया जाने लगा है कि मूलभूत संरचनाएँ एवं शिक्षण संसाधनों के प्रयोग से हमें गुणवत्ता प्रबंधन के बारे में जानना बहुत ही आवश्यक है शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य केवल एक बार सीखना नहीं हैं बल्कि यह जीवनभर सीखते चलने का उपक्रम है। सतत् अध्ययन निरंतर अधिगम् और सतत् मूल्यांकन के बिना किसी काम में गुणवत्ता नहीं आ सकती। सेमेस्टर पद्धति अपने हितग्राहियों के कार्य को मात्र सम्पन्न नहीं करती, बल्कि उसमें गुणवत्ता की सुगंध भी पैदा करती है। यह सभी लोगों के सामूहिक एवं स्वैच्छिक क्रियाकलापों का नतीजा है।

''अपनी भावना को कार्य मेंए और कार्य को सम्पूर्ण चेतना और मन से करने पर गुणवत्ता स्वयं आती है।''

****

महिला सशक्तिकरण दशा एवं दिशा- मानव अधिकार एवं उनके अनुपालन के सन्दर्भ में

डॉ. सीताराम गोले *

भारत देश में स्त्री को देव तुल्य एवं मातृत्व का स्थान दिया जाता है तथा उसको घर की लक्ष्मी कहा जाता है, यहां तक की उसको पूजा जाता था, इसीलिए कहा जाता है'

''यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवता:
यत्रैतास्तु न पूज्यंते सर्वास्तत्रफला: क्रिया:॥''-मनुस्मृति 3.56

अर्थात् प्राचीन वेदशास्त्र ऋचाओं निवदो तथा उपनिषदों में अध्ययन से यह स्पष्ट है कि उस समय समाज में स्त्री को गरिमामयपूर्ण स्थान प्राप्त था तथा यह वन्दनीया थी। मनुस्मृति तथा याज्ञवल्क्य कृत शास्त्रों में तो यह स्पष्ट हुआ है कि बिना स्त्री के कोई भी सामाजिक एवं धार्मिक कार्य नहीं किया जा सकता। यदि हम रामायण या महाभारत की बात करें तो नारायण के साथ लक्ष्मी को दर्शाया गया है शिव के साथ पार्वती को तथा राम के साथ सीता को सिंहासन पर बैठने का समान अधिकार प्रदान किया गया।

मध्यकालीन समाज में जो कई वीरांगनाओं ने पुरुष प्रधान समाज को धता बताते हुए उत्कृष्ट कार्य किया है। रजिया सुल्तान जहां सम्पूर्ण देश पर प्रशासन करने वाली बनी वहीं रानीलक्ष्मी बाई की कहानी को आज सभी लोग जानते हैं। यहां स्त्री करुणा दया तथा ममता की मूरत थी। आवश्यकता पड़ने पर उसने अपनी सोई शक्ति को पहचान कर इतिहास में अमीट छाप छोड़ दी।

समय में परिवर्तन हुआ साम्राज्यवादी शक्तियों से विश्व के अनेक राष्ट्र स्वतंत्र हुए। राष्ट्रों ने विकास के लिए वैश्वीकरण तथा भूमण्डलीकरण को अपनाया ताकि विश्व आपस में जुड़ जाएं। राष्ट्रों ने भौतिक विकास किया। परिणामत: समाज में शिक्षित लोगों ने अपनी स्थिति सुदढ़ बना ली। कुल मिलाकर भौतिक जगत् के लिए हमने सृजनात्मक वर्ग (महिला) की बलि चढ़ा दी और उसको विवर्ष तथा मजबूत कर दिया घर की चार दीवारी में रहने को।

आज हम 21 वीं शताब्दी में हम। हर राष्ट्र सभ्य होने का दावा कर रहा है, परन्तु वास्तविक परिदृश्य में आज भी स्त्री का शोषण हो रहा है। आज सभी राष्ट्र लगभग सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक दृष्ट्रि से स्वतंत्र हो चुके हैं, परन्तु फिर भी महिलाओं की स्थिति चिंताजनक बनी हई है। आज हमारा समाज आधुनिक जीवन जी रहा है और हम भी सर्वोत्तम को प्राप्त करने की दौड़ में रहे हैं। परन्तु फिर भी समाज में स्त्री आज भी अपने आपको पिछड़ी तथा कुंठित महसूस कर रही है।

बहरहाल यदि भारतीय सन्दर्भ में महिलाओं की स्थिति की बात की जाए तो लोगों में यह चेतना जागी है कि लड़कियों को पढ़ाना-लिखाना चाहिए। विभिन्न अध्ययनों तथा सर्वे से ज्ञात हुआ है कि लोग अब लड़कियों को आगे बढ़ना चाहते हैं, वे चाहते है कि हर क्षेत्र में लड़कियां, लड़कों के साथ कंधों से कंधा मिलाकर आगे बढ़े। समाज और देश के निर्माण में अपना योगदान दें आज स्कूलों, कॉलेजों में लड़कियों की संख्या पहले की अपेक्षा बढी हैं। परन्तु इसके बावजूद महिलाओं के प्रति आये दिन अपराध बढ़ रहे हैं। नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरों के मुताबिक भारत में 2009 में दुष्कर्म के मामले 5.9 प्रतिशत है जो 2010 में 7.1 व 2011 में 9 प्रतिशत हो गए। 94.2 प्रतिशत मामलों में महिला के प्रति दुष्कर्म के दोषी उसके अपने सगे संबंधी मित्र पास, पड़ोसी ही निकले हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि जब महिला पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर समाज निर्माण का कार्य कर सकती है तो आखिर वहीं किसी की हवस की शिकार क्यों हो ? क्यों उसकी अस्मत लुटी जाती है। ऐसी स्थिति में वह असहाय व दयनीय नजर आती है। इसलिए आवश्यकता है महिलाओं को सशक्त बनाने की। उसके सशक्तिकरण की दिशा में ठोस सक्रिय प्रयासों की।

महिला सशक्तिकरण

महिला सशक्तिकरण एक अवधारणा बनकर रह गया जहां महिलाओं को आज निश्चिंत तथा चिन्ता मुक्त जीवन जीना चाहिए वैसा स्वतंत्र जीवन वह नहीं जी पा रही है। उसे भय है न जाने किस चौराहें पर उसके साथ कुछ अघटित हो जाए। कहां उसके गले की चैन खींच ली जाएं ? कहां से उसका अपहरण हो जाए ? और कहां ज्यादती हो जाए ? उसको कोई भूखे भेड़िये की भांति उसकी इज्जत को तार-तार करने की घात लगाये बैठा हो वह खुद नहीं जानती ? परिणामस्वरूप वह घर की चार दीवारी में ही कैद होकर अपने आप को महफूज समझती है।

महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य यह है कि समाज के हर स्तर पर उसको स्वतंत्रता, समानता तथा आर्थिक सुरक्षा प्राप्त हो ताकि वह अपना सम्मानपूर्वक जीवन जी सके। कुल मिलाकर सशक्तिकरण का तात्पर्य यह है कि महिलाएं राजनैतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक रूप में शक्ति सम्पन्न हो। सशक्तिकरण को हमारा समाज स्त्री उसके सम्मानजनक जीवन जीने के आवश्यक अधिकार प्रदान करें और उनको व्यवहारिक रूप से जीवन में लाये ताकि महिलाओं में आत्मविश्वास के साथ जीवन जीना आ जाएं तथा निर्भय होकर जीवन जी सके। इसके लिए आवश्यक है कि महिलाओं के मानव अधिकारों का कठोरता के साथ अनुपालन करवाया जाय।

महिला सशक्तिकरण एवं मानव अधिकार

महिलाओं को शक्ति सम्पन्न बनाने के लिए आवश्यक है कि जो अधिकार हमारी संविधानिक संस्थाओं ने प्रदान किये हैं उनमें ओर अधिक प्रगाढता लायी जाय। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों की घोषणा 10 दिसम्बर 1948 को की गई जिसमें विश्व के सभी मानव स्त्री एवं पुरुष दोनों के लिए 30 से अधिक प्रकार के अधिकारों की विवेचना की गई है। इनमें स्वतंत्रता, समानता, राजनैतिक समानता, समान वेतन तथा समान सांस्कृतिक जीवन के अधिकारों की व्याख्या की गई है। इस आधार पर 50-60 वर्ष पूर्व महिलाओं को कुछ अधिकार दिये गये थे फिर भी उनका शोषण जारी रहा हैं। उन्हें दिये गये अधिकार व्यवहारिक रूप में निष्क्रिय रहे। इसका कारण है कि इन अधिकारों का कानून की दृष्टि से सशक्त रूप से लागू न किया जाना या यूं कहे कि इनका कठोरता के साथ अनुपालन नहीं किया गया।

वैश्विक स्तर पर जैसे-जैसे लोकतांत्रिक व्यवस्था सुदृढ़ होती गई महिलाओं को पुरुषों के समकक्ष लाने की मुहिम भी तेज होती गई। विधि व न्याय के समक्ष समानता लोकसेवाओं में नियुक्ति हेतु समान अवसर, विचार अभिव्यक्ति, निवास, रोजगार आदि की स्वतंत्रता, पारिवारिक सम्पत्ति में हिस्सेदारी, निर्णयन के प्रत्येक स्तर पर समानता, खानपान, रहन सहन आदि क्षेत्र में समानता स्थापित करने के प्रयास किये गये। फिर भी महिलाएं

* 10, मौलाना आजाद मार्ग, बड़वानी (म.प्र.)

अपने आप को असुरक्षित महसूस करती हैं। यू.एन.ओं. के सविधान में स्पष्ट रूप से मानव अधिकारों की चर्चा तथा स्त्री–पुरुष को समान अधिकार प्रदान करने की बात कही गई। सन् 1948 के घोषणा पत्र में अनुच्छेद 2, 16 (1), 23 (2), 26 (1) में महिलाओं के प्रति अधिकार प्रदान करने की कवायद की गई। महिलाओं के विकास तथा उत्थान के प्रति चेतना जगाने के लिए यूएनओ की महासभा द्वारा सन् 1975 को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित किया गया। महिलाओं के लिए कल्याणकारी भावना को महत्वपूर्ण मानते हुए यूएनओ ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सन् 1975 से सन् 1995 तक विश्व महिला सम्मेलन कार्यक्रम की शुरूआत की ताकि महिलाएं अपने अधिकारों के प्रति सजग तथा जाग्रत हो सके। ये सारे अधिकार लिखित रूप में यूएनओ के संविधान में वर्णित है परन्तु उनका व्यावहारिक धरातल पर कितनी सजगता से पालन किया जाता है यह देखने की बात है। जैसे– कि यदि महिलाओं के इन अधिकारों का उल्लंघन होता है तो महिलाएं किस प्रकार अपने इन अधिकारों के प्रति संरक्षण का दावा कहा व कैसे प्रस्तुत करें तथा किस माध्यम से वह अपने इन अधिकारों को सुरक्षित रखे, इसके प्रति भी संयुक्त राष्ट्रसंघ को अब सजगता दिखानी होगी। तभी सही मायनों में यूएनओ महिलाओं के अधिकारों का सच्चा संरक्षक बन सकता है।

यूएनओं की तर्ज पर ही भारत में भी महिलाओं को अधिकार प्रदान किये गये। भारतीय संदर्भ में ये बात अच्छीं रही कि भारतीय संविधान में प्रारंभ से ही महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार प्रदान किये गये। परन्तु स्वतंत्रता के पूर्व समाज में महिलाओं को किसी प्रकार की कोई आजादी प्राप्त नहीं थी। सदियों तक भारत में दहेज प्रथा, सती प्रथा, घूंघट प्रथा, रूढ़िवादिता व अंधविश्वासों से महिलाएं घिरी रही। पश्चिमीकरण के कारण महिलाओं की शिक्षा पर थोड़ा ध्यान दिया जाने लगा। इन कार्यों को कराने के लिए कई महिला संगठनों का निर्माण स्वतंत्रता के पूर्व व स्वतंत्रता के बाद हुआ। जैसे सन् 1882 में बंगाल में स्वर्ण कुमारी देवी ने, सखी समाज की, पंडिता रमाबाई ने, सन् 1882 में आर्य समाज की, सन् 1901 में भारतश्री महामंडल जैसी संस्थाओं की स्थापना अखिल भारतीय स्तर पर महिलाओं की दशा सुधारने के लिए कदम उठाये गये।

भारतीय संविधान में आज भी महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक विकास के लिए समान अधिकार तथा अवसर प्रदान करने के लिए संविधान में कुछ महत्वपूर्ण व्यवस्थाएं इस प्रकार से की हैं– भारतीय संविधान का अनुच्छेद क्रमांक 14 महिलाओं को पुरुषों के समान कानून के समक्ष समानता तथा समान संरक्षण प्रदान करेगा, परन्तु आज हम यह देखते है कि महिलाओं को नाममात्र का यह अधिकार प्राप्त है। क्योंकि महिलाओं पर जब भी कोई पुरुष अत्याचार करता है तो महिला को न्याय मिलने में बहुत समय लग जाता है जो कि महिलाओं के साथ अन्याय है। अनुच्छेद 16 में स्पष्ट रूप से कहा कि बिना किसी भेदभाव के महिलाओं को लोकसेवा में समान अवसर प्राप्त होंगे। अनुच्छेद 23 व 24 नारी के क्रय–विक्रय तथा बेगार पर रोक लगाता है। भारत के नीति निर्देशक तत्व भी महिलाओं को सबल तथा सशक्त बनाने का प्रयास कर रहे हैं। अनुच्छेद 42 में प्रसूति के समय सहायता की व्यवस्था की गई है। मध्यप्रदेश की सरकार ने तो प्रसूति के दौरान महिलाओं के लिए विशेष नीतियों का निर्माण किया है।

संविधान के कर्तव्यों की धारा 51 (घ) में यह व्यवस्था की कि हम ऐसी कोई प्रथा का पालन नहीं करेंगे जो महिला सम्मान के विरुद्ध हो। इसके अलावा महिलाओं को ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में सशक्त बनाने के लिए 73 वां व 74 वां संविधान संशोधन किया गया जिससे ग्राम पंचायतों तथा नगरीय संस्थाओं में महिलाओं के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की जिससे महिलाएं अपना राजनैतिक विकास कर सके।

भारतीय संसद ने तो महिलाओं की दशा सुधारने के लिए कुछ अधिनियमों को कानून के तौर पर लागू किया। सन् 1954 विशेष विवाह अधिनियम, 1956 हिन्दू उत्तराधिकार नियम, 1961 प्रसूति सुविधा अधिनियम, 1976 बाल विवाह निषेध अधिनियम, 1986 दहेज निषेध अधिनियम, 1987 सती प्रथा निषेध अधिनियम तथा 2005 में बनाया गया महिला घरेलू हिंसा अधिनियम ये अधिनियम हैं जिनका शत प्रतिशत कानूनन पालन किया जाय तो समाज में से महिलाओं पर जो अत्याचार हो रहे हैं वे समाप्त हो सकते है। इसी तरह हर सरकार महिलाओं पर आये दिन बढ़ते अत्याचारों को रोकने के लिए कृत संकल्प है। शासन के द्वारा समय–समय पर महिलाओं की समृद्धि तथा विकास के लिए महत्वपूर्ण योजनाओं का निर्माण गया गया हैं जैसे– सन् 1982 में डवाकर योजना, सन् 1989 में नौराड़ प्रशिक्षण योजना, सन् 1992 में किशोरी बालक योजना, सन् 1992 की ही मातृ व शिशु कार्यक्रम योजना, सन् 1993 महिला समृद्धि योजना जो ग्रामीण महिलाओं को सशक्त बनाती है। सन् 1995 की इंदिरा गांधी योजना, सन् 1996 की ग्रामीण महिला विकास योजना, सन् 1997 की बालिका समृद्धि योजना जो मां तथा बालिका को पौष्टिक आहार प्रदान करने की व्यवस्था करती है, सन् 1998 की महिला स्त्री शक्ति योजना। यह योजना आज ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं को सशक्त बना रही हैं। इस योजना में स्व सहायता समूह द्वारा सामाजिक तथा आर्थिक रूप से महिलाओं को सशक्त बनाने का कार्य किया जा रहा हैं। आशा स्वसहायता समूह की एक प्रमुख योजना है जो ग्रामीण महिलाओं को आत्मनिर्भर होना सिखा रही हैं। मध्यप्रदेश शासन ने तो महिलाओं तथा बालिकाओं के सशक्तिकरण के लिए कई योजनाएं चलाई हैं जिनका उनको लाभ भी मिला है।

उपरोक्त समस्त अधिकार, योजनाएं तथा अधिनियम समाज में महिलाओं की सुरक्षा व उनके आत्मसम्मान तथा विकास के लिए निर्मित की गई है। विश्व का शायद ही कोई ऐसा देश होगा जहां महिलाओं के उत्थान के लिए इतनी योजना व नीतियां बनाई गई हों। परन्तु इनके बावजूद भी महिलाएं अपने आप को असहाय तथा कमजोर महसूस करती है आखिर ऐसा क्यों ? महिलाओं को यदि सशक्त बनाना है तो उनको अपने अन्दर छिपी आत्मशक्ति को पहचानना होगा। महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए जो कानून, अधिनियम व योजनाएं बनाई गई हैं उनका पूर्णरूपेण ज्ञान अशिक्षित महिलाओं को कराया जाना आवश्यक है। केवल कागज पर लिख देने मात्र से महिलाएं सशक्त नहीं होगी। जरूरी है व्यवहारिक जगत् में, समाज में नारी को उनके अधिकारों के लिए पुरुष प्रधान समाज उनको प्राप्त कराने में वैसी संस्थाओं का निर्माण कराया जाय जो महिलाओं की समस्याओं को तत्परता से समाधान कर सकें। इसके लिए स्थानीय स्तर पर भी महिला बालविकास की छोटी–छोटी उपशाखाएं खोली जानी चाहिए ताकि स्थानीय स्तर पर यदि महिलाओं पर अत्याचार होता है तो उसे उसी स्तर पर जल्द से जल्द समाधान किया जा सके। हमारे समाज में महिलाएं तभी सशक्त व आत्मनिर्भर होगी जब उनको आत्मसम्मानपूर्वक जीने का अवसर समाज प्रदान करेगा। महिलाएं तभी सशक्त होगी जब वह मन से स्वतंत्र होगी।

संदर्भ ग्रन्थ

1. *आशा कौशिह – नारी सशक्तिकरण विमर्श एवं यथार्थ। पौइन्टर पब्लिशर्स जयपुर।*
2. *कुरूक्षेत्र– इरा जोशी, प्रकाशन विभाग सूचना भवन, लोधी रोड़ नई दिल्ली।*
3. *योजना– इरा जोशी, प्रकाशन विभाग सूचना भवन, लोधी रोड़ नई दिल्ली।*
4. *प्रतियोगिता दर्पण– 2/11 ए स्वदेशी बीमा नगर आगरा।*

सोश्यल नेटवर्किंग एवं समाज

डॉ. निशा जैन *

सोश्यल नेटवर्किंग आधुनिक समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा बन गया है विशेष कर युवा वर्ग की दैनिक जीवन शैली का। महानगरों एवं नगरों में रहने वाले अधिकांश युवा वर्ग रोजमर्रा के जीवन में प्रतिदिन चेटिंग करते हैं या सोशल नेटवर्किंग से जुड़े रहते हैं। इससे उनका सामाजिक दायरा भी विस्तृत हुआ है एवं सामाजिकता भी बढ़ी है। आज दुनिया के किसी भी कोने में बैठे व्यक्ति के हाल जानना बहुत आसान हो गया है। कम्प्युटर ऑन करो और स्वयं तथा अन्य की उपलब्धियों का आदान-प्रदान करो कितना आसान, कम समय एवं कम धन में उपयोगी संचार तंत्र। परिवार में युवाओं के साथ-साथ स्कूली बच्चों मे भी सोश्यल नेटवर्किंग की आदत देखी जा रही है, वहीं परिवार के बुर्जुग भी कम्प्युटर सीखने एवं सोश्यल नेटवर्किंग से जुड़ने की कोशिश कर रहे हैं। सोश्यल नेटवर्किंग से हमारा व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन आसान होता जा रहा है। वर्तमान व्यस्त जीवन में हम अपने नाते रिश्तेदारों एवं मित्रों से सम्पर्क में रहते हैं। सोश्यल नेटवर्किंग के महत्वपूर्ण लाभ निम्नानुसार है :-

(1) ***शीघ्रतम जानकारी प्राप्त होना –*** सोश्यल नेटवर्किंग के माध्यम से सूचनाओं का आदान-प्रदान शीघ्रतापूर्वक हो जाता है। सुख एवं दुख की खबरों का वर्तमान युग के युवा वर्ग तुरंत पोस्ट कर देते हैं उस पर अपने साथियों की प्रतिक्रिया भी प्राप्त हो जाती है एवं दुखपूर्ण स्थितियों में उन्हें सहानुभूति भी प्राप्त होती है। महत्वपूर्ण निर्णय लेने में साथियों की प्रतिक्रिया बहुत मददगार साबित होती है। आज का शहरी युवा जब परिवार से दूर नौकरी या पढ़ाई के सिलसिले में अपने शहर से दूर रहता है तब सोश्यल नेटवर्किंग साईट उसको भावनात्मक सुरक्षा का आभास करवाती है।

(2) ***नवीनतम सूचनाओं की प्राप्ति –*** प्रतिस्पर्धा के युग में यदि प्रतियोगी परीक्षा के फार्म भरना हो, साक्षात्कार के लिए जानकारी चाहिए या किसी पाठ्यक्रम में प्रवेश लेना हो या नौकरी के लिए आवेदन करना हो, कैरियर संबंधी सभी सूचनाएं सोश्यल नेटवर्किंग साईट पर शीघ्रतम प्रसारित हो जाती है।

(3) ***बड़े समूह तक उपलब्धियों का प्रदर्शन –*** युवाओं का सामाजिक दायरा बहुत विस्तृत हो जाता है। स्कूल अध्ययन से लेकर नौकरी करने तक कई सहयोगी मिलते एवं बिछड़ते हैं किंतु सभी से सम्पर्क बनाये रखना आसान नहीं होता है। मोबाईल नम्बर न हो या परिवर्तन होने की स्थिति में तो और भी नहीं किंतु सोश्यल नेटवर्किंग एवं फेसबुक पर हर कोई अपने पुराने मित्र एवं सहयोगी को ढूंढ लेना है उसकी वर्तमान आर्थिक सामाजिक स्थिति, शैक्षणिक एवं शैक्षणोत्तर, उपलब्धियों को बढ़े मित्र समूह में शेयर कर (बॉट) सकता है। जिससे उसे मित्रों एवं रिश्तेदारों की सराहना एवं प्रेरणा भी प्राप्त हो जाती है।

(4) ***तनाव नियंत्रण–*** व्यक्तिगत जीवन की असफलता व्यक्ति को अवसादग्रस्त बना देती है किन्तु बहुत से लोगों के ब्लाग सोश्यल नेटवर्किंग पर होते हैं जो अपने जीवन के अनुभवों को उसमें डालते हैं। इस ब्लाग पर सकारात्मक एवं प्रेरक प्रसंग भी होते हैं जो व्यक्तियों को विपरीत परिस्थिति में सम्बल प्रदान कर मानसिक ऊर्जा से भर देते हैं। अत: निराशाजनक स्थिति में सोश्यल नेटवर्किंग व्यक्ति के तनाव प्रबंधन में सहायक होती है।

(5) ***परिवार के महत्वपूर्ण कार्यों एवं दायित्वों का निर्वहन –*** इंटरनेट एवं सोश्यल नेटवर्किंग के द्वारा परिवार के कार्यों में भी हस्तक्षेप हुआ है। हमारी बहुत सी पारिवारिक समस्याएं जैसे - विवाह योग्य युवाओं के लिए जीवन साथी का चयन, भ्रमण एवं तीर्थ यात्रा संबंधी जानकारियां एकत्र करना, ट्रेन एवं होटल की बुकिंग, टिकिट बुक करना आदि कार्यों में इंटरनेट एवं सोश्यल नेटवर्किंग महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है।

(6) ***स्वरूचि समूहों का विस्तार –*** सोश्यल नेटवर्किंग द्वारा एक समान रूचि रखने वाले व्यक्ति आपस में जुड़ते चले जाते हैं, एक समान कार्य व व्यवसाय करने वाले लोगों का एक समूह बनता चला जाता है एवं वे निरतंर अपनी रूचियों को विकसीत कर कौशल का विस्तार करते रहते हैं। कई समाज सुधार के कार्य भी सोश्यल नेटवर्किंग साईट्स के द्वारा आसानी से किये जा सकते हैं।

(7) ***वृद्धों के लिए वरदान –*** सोश्यल नेटवर्किंग साइट्स परिवार के बुर्जुगों के लिए वरदान बन कर आयी है। हमारे रिश्तेदार जो कोसों दूर है उनसे प्रत्यक्ष वार्तालाप का आनन्द, उनके यहाँ आये नवागत शिशुओं को देखना, उन नन्हें मुन्नों का अपने दादा-दादी एवं नाना-नानी से परिचय एवं आपसी वार्तालाप मन को बहुत सुकुन से भर देता है।

जब भौगोलिक दूरी के कारण या शारीरिक अक्षमता के कारण हम अपनों से निरतंर मिल नहीं पाते हैं। तब यह दूरी हमें खलती नहीं है बल्कि अपनों की निकटता का आभास करवाती है। बहुत से बुर्जुग अपने निकट रिश्तेदारों के यहां मांगलिक अवसरों पर जा नहीं पाते हैं। विवाह या बच्चों के जन्मोत्सव पर जाना उनके लिए शारीरिक रूगणता के कारण संभव नहीं हो पाता।

ऐसे में सोश्यल नेटवर्किंग साईट्स उनको परिवार के नये सदस्यों से परिचय करवाने में मददगार साबित होत है। अनेक तीर्थस्थल जो दुर्गम स्थानों पर होते हैं वहां जाना वृद्धावस्था में संभव नहीं होता है उन पवित्र स्थानों के दर्शन एवं पूजापाठ आरती का आनंद घर बैठे बुजुर्गों द्वारा लिया जा सकता है।

(8) ***अनुभवी से मार्गदर्शन –*** विद्यार्थियों को नौकरी प्राप्त करने में, कोर्स चयन करने में अनेक असमंजस्य रहता है। जीवन के कठिन मोड़ पर उन्हें मार्गदर्शन की आवश्यक महसूस होती है किंतु अपने वरिष्ठों से प्रत्यक्ष मिलना आसान एवं संभव नहीं होता है ऐसे में चेटिंग एक श्रेष्ठ माध्यम है जिसके द्वारा वे अपने महाविद्यालय के सीनियर्स के अनुभवों का लाभ प्राप्त कर स्वयं को समाज में स्थापित कर सकते हैं एवं मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

(9) ***सोश्यल मीडिया और रोजगार –*** सोश्यल मीडिया में ब्लागर्स को नौकरी मिल सकती है जो नये कन्टेंट पोस्ट करते हैं इसके अलावा कम्युनिटी मैनेजर, सोश्यल मीडिया प्लानर, वेब एनालिटिक्स

* प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शा. महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला भवन, इन्दौर (म.प्र.)

स्पेशलिस्ट सोश्यल मीडिया स्ट्रेटिजिस्ट आदि कार्यों के द्वारा होनहार युवाओं को रोजगार मिल सकता है।

इस प्रकार हमने देखा कि सोश्यल नेटवर्किंग साईट्स हमारे जीवन का आवश्यक अंग बन गया है। किन्तु प्रत्येक अच्छाई के पृष्ठ में कुछ बुराई भी होती है उसी प्रकार सोश्यल नेटवर्किंग के सामाजिक जीवन पर कुछ दुष्प्रभाव भी हैं जो इस प्रकार हैं –

(1) ***दिखावेपन की प्रवृत्ति –*** युवाओं में अपनी उपलब्धियों को लेकर बहुत ज्यादा उत्साह होता है। वे अपनी उपलब्धियों का प्रदर्शन सोश्यल नेटवर्किंग पर तुरंत कर देते हैं जिससे आपसी ईर्ष्या की प्रवृत्ति एवं दिखावापन समाज में बढ़ता है।

(2) ***प्रत्यक्ष वार्तालाप एवं सम्पर्क के अभाव में भावनाओं की अभिव्यक्ति नहीं –*** बहुत से शुभकामना प्रसंग एवं सहानुभूति के पलों में व्यक्तिगत उष्णता की आवश्यकता होती है किन्तु सोश्यल नेटवर्किंग के द्वारा युवाओं द्वारा औपचारिकता का निर्वहन कर दिया जाता है वे फेसबुक पर शुभकामना देकर या संवेदना प्रकट कर अपने कर्तव्यों की इतिश्री कर देते हैं जबकि कुछ प्रसंगों पर स्वयं जाना आवश्यक होता है।

(3) ***संवेदनशील सामाजिक मुद्दों पर राय व्यक्त करना हानिकारक –*** हम प्रजातांत्रिक राष्ट्र में निवास करते हैं हमें बोलने की आजादी है किन्तु समाज के बहुत सारे ऐसे मुद्दे होते हैं जिस पर राय व्यक्त नहीं की जा सकती। सोश्यल नेटवर्किंग के द्वारा युवा वर्ग उन संवेदनशील विषयों पर भी चर्चा करते हैं एवं ब्लाग लिखते हैं जो समाज में माहौल खराब करने के लिए उत्तरदायी होते हैं एवं प्रशासन द्वारा उनके खिलाफ कार्यवाही भी की जाती है इस प्रकार सोश्यल मीडिया सामाजिक अशांति एवं विद्रोह उत्पन्न करने का कार्य भी करता है।

(4) ***व्यसन होने पर बीमारी का रूप धारण कर लेती है –*** सोश्यल नेटवर्किंग युवाओं में लत का रूप धारण कर चुकी है ऐसे युवा वर्ग जो दिनभर अपने कार्यों को छोड़कर सोश्यल नेटवर्किंग से जुड़े रहते हैं उन्हें इन इनसोमिया नामक बीमारी हो जाती है जो उनके विकास में बाधक होती हैं।

(5) ***समाज से अलगाव –*** कम्प्युटर पर व्यस्त रहने के कारण किसी भी सामाजिक कार्यक्रम में सहभागिता न होना समाज के लोगों से सम्पर्क न रखना जैसी आदत युवाओं में बड़ रही है। वे अकेलेपन के शिकार होते जा रहे हैं। यहां तक कि परिवार के साथ बैठकर वार्तालाप करने की अपेक्षा वे कम्प्युटर पर चेटिंग में ज्यादा रूचि लेते हैं।

एक शोध के मुताबिक 18 शहरों के करीब 25 प्रतिशत पेरेंट्स को शिकायत थी कि उनके बच्चे अधिकतर समय ऑनलाईन रहते हैं। इन्दौर के 40 प्रतिशत पेरेंट्स मानते हैं कि उनके बच्चे जरूरत से ज्यादा ऑनलाईन रहते हैं। जयपुर के 34 प्रतिशत पेरेंट्स की भी यही शिकायत है। 19 प्रतिशत पेरेंट्स ऐसे हैं जो कभी बच्चों की गतिविधियों पर गौर नहीं करते हैं कि उनके बच्चे क्या कर रहे हैं। जबकि 56 प्रतिशत को उनके बच्चों से कोई शिकायत नहीं हैं। इस प्रकार सोश्यल नेटवर्किंग परिवार को तनावग्रस्त बना रहा है। बच्चों को पढ़ाई से दूर करता जा रहा है।

(6) ***प्रतिस्पर्धा को बढावा –*** जब फेस बुक पर फ्रेंडस लिस्ट में कोई किसी को पसंद करता है या नापसंद करता है तो युवाओं में प्रतिस्पर्धा दिखाई देती है।

(7) ***समय की बर्बादी –*** वह युवा जो रचनात्मक कार्य को करने में अपनी ऊर्जा एवं समय लगा सकता है, किशोर अपने कैरियर निर्माण में समय लगा सकता है। वह समय सोश्यल नेटवर्किंग द्वारा बिगड़ता जा रहा है। जीवन का अधिकांश महत्वपूर्ण हिस्सा चेटिंग में बर्बाद हो जाता है।

(8) ***व्यक्तिगत ईर्ष्या में वृद्धि –*** अपनी उपलब्धियों को सोश्यल नेटवर्किंग पर डालने से असफल व्यक्तियों में निराशा आती है एवं वे सफल व्यक्तियों के प्रति ईर्ष्या की भावना से भर जाता है इससे समाज में एक अस्वस्थ वातावरण निर्मित होता है।

(9) ***अपराधिक गतिविधियों में वृद्धि –*** युवा वर्ग एवं किशोरावस्था में भावुकता चरम सीमा पर होती है जबकि सहनशीलता शून्य होती है। ऐसे में छोटी–छोटी सी घटनाऐं उन्हें आहत कर देती हैं तथा वे अपराधी गतिविधियों से जुड़ जाते हैं।

(10) ***स्मरणशक्ति की अपेक्षा कम्प्युटर पर निर्भरता में वृद्धि –*** जो कार्य पहले मस्तिष्क द्वारा किया जाता था वह सभी कुछ अब कम्प्युटर की मदद से होने लगा है जिससे स्मरण शक्ति क्षीण होने लगी है, एकाग्रता में कमी आती है। मस्तिष्क के व्यायाम न होने से मानसिक स्मरणशक्ति कम होती जा रही है।

इंटरनेट ने भले ही हमारी रोजमर्रा की जिंदगी को बहुत आसान बना दिया है लेकिन इस पर इतनी निर्भरता को किसी भी हालत में समाज के लिए बेहतर संकेत नहीं माना जा सकता खासकर हमारे स्वास्थ्य के लिए भी इंटरनेट पर अधिक सक्रियता हमारी शारीरिक गतिविधियों के बहुत हद तक सीमित कर देती है। बिजनेस न्यूज की एक रिर्पोट के अनुसार एक वर्ष पहले की तुलना में आज हर व्यस्क औसत 3.1 ईमेल एड्रेस का इस्तेमाल करता है और इंटरनेट का इस्तेमाल करने वाले 35 प्रतिशत लोग हर रोज केवल सोश्यल साईट्स पर 31 मीनिट व्यतीत करते हैं।

निष्कर्ष के तौर पर कह सकते हैं कि वेब वर्ल्ड काफी बड़ी दुनिया है इसमें जितना पाजीटीव नॉलेज है उतनी ही खतरनाक जानकारियां भी होती है ऐसे में आवश्यकता इस बात की है कि हम सीमित मात्रा में उपयोगी जानकारियों एवं कार्यों तक ही सोश्यल नेटवर्किंग साईट्स से जुड़े किशोरों पर अभिभावक नजर रखें एवं अनावश्यक साईट्स से युवा वर्ग स्वयं को दूर रखें तभी यह हमारे लिए उपयोगी साबित होगा।

संदर्भ ग्रन्थ

(1) दैनिक नई दुनिया आईनेक्सट 27 जुलाई 2013 पृ. 11
(2) पत्रिका 11 जुलाई 2013 पृ.सं. मीनेक्सड
(3) कम्प्युटर संचार सूचना अगस्त 2012 पृ. 11–12

आलेख : आध्यात्मिकता और आधुनिकता

दिनेश तिवारी *

आध्यात्मिकता और आधुनिकता दोनो ही शब्द हमारे लिये नये नही है। सामान्यता ये दोनो ही परस्पर विरोधी स्वभाव वाले माने जाते है,परन्तु ऐसा नही है। आज हम आधुनिकता की इस दौड़ में इतना आगे निकल चुके है कि, लौटने का सवाल ही नही उठता। प्राय: आधुनिता को भौतिकवाद से जोड़ कर देखा जाता है, और आधुनिक होने का अर्थ यही माना जाता है कि हम कितने भोगवादी है ? इस पर भी सभी के अपने – अपने तर्क है।

विज्ञान के इस युग में जहां सुविधा की चाहना सभी को है,वही आध्यात्मिकता के महत्व को कम नही ऑका जा सकता। आधुनिक जीवन शैली में जहाँ समय के उचित प्रबन्धन का विशेष महत्व है,वही उसी समय प्रबंधन के द्धारा हम आध्यात्मिकता को जीवन में उतार सकते है। हमारे दैनिक के सभी कार्यो में आध्यात्मिकता को विभिन्न रूप से जीवन में उतार सकते है। यथा–प्रत्येक मिलने वाले मनुष्य को ईश्वर का ही रूप मानकर उसके साथ यथायोग्य बर्ताव करना,प्रकति के सभी रूप में ईश्वर के दर्शन करना,गृहस्थ में स्वयं को सेवक ही समझना, कार्य स्थल पर श्रेष्ठ आचरण का परिचय देना,प्रत्येक कार्य को पुरस्कार मानकर ही करना,प्रात: काल जल्दी उठकर ध्यान करना और संतो व महापुरूषो के प्रवचनानुसार जीवन जीना आदि। ये सभी गुण किसी न किसी रूप में आध्यात्मिकता से जुडे हुए है और हमारे आधुनिक जीवन को तनाव मुक्त बनाते है।

जिस तरह से सर्दी के साथ गर्मी दिन के साथ रात व तीखे के साथ मीठे की आवश्यकता होती है उसी प्रकार आधुनिकता के साथ आध्यात्मिकता की भी अनिर्वाय आवश्यकता है। क्योंकि केवल आधुनिकता के बल पर ही जीवन पूर्ण नही किया जा सकता है। यदि ऐसा होता तो विज्ञान जीवन के सभी तथ्य उजागर कर देता जो आज तक रहस्य है।

जीवन अनंत है,और यह विज्ञान हमें केवल दिशा दे सकता है। और आध्यात्मिकता जीवन को नई उंचाईया प्रदान करती है। जिसको प्राप्त करके कुछ भी शेष नही रह जाता। आधुनिकता एक तृष्णा है,प्यास है वही आध्यात्मिकता एक संतुष्टि है,तृप्ति है। अगर आधुनिकता को साधन माना जाता है तो आध्यात्मिकता लक्ष्य जरूर होना चाहिए।

आधुनिकता व विज्ञान के योगदान से हम आसानी से ज्ञान प्राप्त कर सकते है और उसी ज्ञान को अपने जीवन में उतारकर आध्यात्मिक बन सकते है। अत: हमारा जीवन एक संतुलित जीवन होना चाहिए जिसमें आधुनिकता के साथ–साथ आध्यात्मिकता का भी समावेश हो।

****

* व्याख्याता–श्री कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.), शोधकर्ता–पेसिफिक विश्वविद्यालय,उदयपुर (राज.)

तृतीय संस्करण के सम्माननीय सदस्यों की सूची (1 July to 30 June 2013)

(01) पदेन प्राचार्य ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) पदेन प्राचार्य ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) पदेन प्राचार्य ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला–नीमच (म.प्र.)
(04) पदेन प्राचार्य ..... ज्ञानमंदिर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(05) पदेन प्राचार्य ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेन्धवा (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. देवेश सागर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(07) प्रो. डॉ. रश्मि वर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो.डॉ. बीना चौधरी ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. हिना हरित ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. प्रशान्त मिश्रा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ. संजय जोशी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(12) प्रो. दीपा कुमावत ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(13) प्रो. आयरिश रामनानी ..... अतिथि, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. के.एल. जाट ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. प्रभावती भावसार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(16) प्रो. राजेश तम्बोली ..... ज्ञानोदय इंस्ट्यूट ऑफ टेक्नालॉजी एण्ड मैनेजमेन्ट नीमच (म.प्र.)
(17) डॉ. राजाराम आर्य ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. अखिलेश बर्वे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(19) प्रो.डॉ. मुकामसिंह भवंर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(20) प्रो. प्रेमसिंह मोरे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(21) प्रो.डॉ. कैलाश राय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(22) प्रो.डॉ. रूपेश कुमार जगरे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(23) प्रो. सुरेश अवासे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(24) प्रो. राजू देसाई ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(25) प्रो. भालचन्द्र भाटे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(26) प्रो.डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(27) प्रो. गीता मेहरा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(28) श्री दिलीप पाटीदार ..... ग्राम कवाड़िया, तहसील महेश्वर, जिला खरगौन (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. मोहन निमोले ..... शासकीय माधव कला, वाणिज्य, विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. जी.एल. खागोड़े ..... शासकीय माधव कला, वाणिज्य, विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. ममता पंवार ..... शासकीय माधव कला, वाणिज्य, विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(32) श्री अरूण शुक्ला ..... अध्ययन शाला भौतिकी विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(33) डॉ. एच.जी. वरूधकर ..... आर.डी. गांधी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(34) डॉ. सोदानसिंह मकवाना ..... 163/1 सांईधाम कॉलोनी, उज्जैन (म.प्र.)
(35) प्रो. गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरोद जिला उज्जैन (म.प्र.)
(36) श्री विजय कुमार सोनिया ..... शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... अध्यक्ष विद्यार्थी कल्याण विभाग, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(38) डॉ. बलवीरसिंह ठाकुर ..... अध्ययन शाला वाणिज्य विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(39) डॉ. कुसुम वास्केल ..... अध्ययन शाला अर्थशास्त्र विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(40) डॉ. नर्मता दुबे ..... आर.डी. गांधी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(41) डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना जिला उज्जैन (म.प्र.)
(42) प्रो.डॉ. अनिल दीक्षित ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(43) डॉ. वन्दना मण्डोर ..... 30/34 अब्दालपुरा, उज्जैन (म.प्र.)
(44) सुश्री रचना जैन ..... शोधार्थी, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़–ब्यावर (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. लक्ष्मीचन्द गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़–ब्यावर (म.प्र.)
(47) प्रो.डॉ. राजेन्द्र कुमार शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़–ब्यावर (म.प्र.)
(48) प्रो.डॉ. आभा आनन्द ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़–ब्यावर (म.प्र.)
(49) डॉ. अंजली ए.जैन ..... अतिथि, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)
(50) डॉ. ज्योति डोसी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)
(51) श्रीमती चन्दनबाला सोनी ..... शोधार्थी, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. जुझारलाल आर्य ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. प्रभुदयाल ज्ञानानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)
(54) प्रो. डॉ. तुषारकान्त झाला ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)
(55) प्रो.डॉ. के.आर. सूर्यवंशी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)
(56) प्रो.डॉ. आर.के. वर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)
(57) प्रो.डॉ. उमा गगरानी ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मन्दसौर (म.प्र.)
(58) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नन्दनी सरवरे ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अनुराधा अवस्थी ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(61) प्रो. डॉ. ज्योति कुलकर्णी ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. निशा जैन ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. मनीषा जोशी ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. कहकशा खान ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(65) डॉ. अंजना जैन ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(66) डॉ. अदिति देसाई ..... श्री अरविन्दो इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल सांइस, इन्दौर (म.प्र.)
(67) प्रो.डॉ. अलका जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. रामबाबु गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. हेमलता आचार्य ..... शासकीय माता जीजा बाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(70) प्रो. बिन्दू गांधी ..... शासकीय माता जीजा बाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. रश्मि गुप्ता ..... शासकीय माता जीजा बाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. सुमन रोहिला ..... शासकीय माता जीजा बाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. मनीषा शर्मा ..... शासकीय माता जीजा बाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा ..... शासकीय माता जीजा बाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(75) श्रीमती ममता खपेड़िया ..... शोधार्थी, देवीअहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(76) डॉ. किशोर जॉन ..... अतिरिक्त संचालक कार्यालय, उच्च शिक्षा विभाग, इन्दौर (म.प्र.)
(77) डॉ. सुजाता पारवानी ..... आई.आई.पी.एस. देवीअहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(78) डॉ. जिनेन्द्र जैन ..... रिजाइनेन्स संचालक कॉलेज एण्ड कॉमर्स, मैनेजमेन्ट, इन्दौर (म.प्र.)
(79) डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययन शाला, इंदौर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. राज श्री शाह ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. पुष्पा कपूर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. मलिका खान ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(83) प्रो. डॉ. सुप्रिया पैंथकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. सरोज खरे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(85) सुश्री खुशबू राठी ..... शोधार्थी, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. प्रिशिला अन्द्रेय्स ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. मंगलेश्वरी जोशी ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनिल जैन ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(89) डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(90) डॉ. मीना सिसोदिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(91) डॉ. प्रदीपसिंह राव ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना (म.प्र.)
(92) प्रो. डॉ. हरिकृष्ण बड़ोदिया ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना (म.प्र.)
(93) प्रो. डॉ. किशोर कुमार डाबर ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना (म.प्र.)
(94) डॉ. एस.सी. मेहता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जावरा (म.प्र.)
(95) प्रो.डॉ. संजय खरे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(96) प्रो.डॉ. आनन्द तिवारी ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(97) प्रो.डॉ. सुनीता त्रिपाठी ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(98) प्रो.डॉ. रेखा बक्सी ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(99) प्रो.डॉ. बिन्दू श्रीवास्तव ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(100) प्रो.डॉ. अंजना चतुर्वेदी ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(101) प्रो.डॉ. अमर कुमार जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(102) प्रो.डॉ. विजय कुमार त्रिपाठी ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(103) प्रो.डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(104) प्रो.डॉ. सुधीर दीक्षित ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(105) प्रो. डॉ. ममता गर्ग ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(106) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृहविज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(107) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हरे ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सनावद (म.प्र.)
(108) प्रो. डॉ. औंकारसिंह मेहता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सनावद (म.प्र.)
(109) प्रो. डॉ. इन्दरसिह पंवार ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सनावद (म.प्र.)
(110) प्रो.डॉ. शशीप्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर मालवा (म.प्र.)
(111) श्रीमती गायत्री वर्मा ..... शोधार्थी, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर मालवा (म.प्र.)
(112) प्रो.डॉ. स्वाति चन्द्रावत ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(113) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(114) प्रो. मधुसूदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंज बसौदा (म.प्र.)
(115) प्रो. डॉ. विवेक कुमार पटेल ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(116) डॉ. नितिन सहारिया ..... अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(117) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही जिला बैतूल (म.प्र.)
(118) प्रो. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय, सिंहावल जिला सीधी (म.प्र.)
(119) डॉ. राजेश कुमार स्वामी ..... अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, अमरपारन जिला सतना (म.प्र.)
(120) प्रो. डॉ. अमित शुक्ला ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(121) प्रो. डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय,काला पीपल जिला सिहोर (म.प्र.)
(122) डॉ. सुनील मोरे ..... शासकीय महाविद्यालय, अजड़ जिला बड़वानी (म.प्र.)
(123) डॉ. सीताराम गोले ..... 10, मौलाना आजाद मार्ग, बड़वानी (म.प्र.)
(124) प्रो.डॉ. के.एस. बघेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(125) डॉ. उमेश कुमार चरपे ..... शोधार्थी,बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(126) प्रो.डॉ. अनिल शिवानी ..... हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(127) प्रो.डॉ. भावना श्रीवास्तव ..... शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महा., भोपाल (म.प्र.)
(128) प्रो. डॉ. विनीता रघुवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(129) डॉ. कृष्णा मोरे ..... अतिथि विद्वान, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेन्धवा (म.प्र.)
(130) डॉ. एस.आर. अहिरे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालसय, सेन्धवा (म.प्र.)
(131) प्रो.डॉ. कंचन डीगरा ..... शासकीय कन्या गृहविज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
(132) सुश्री नेहा चौरसिया ..... शोधार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)
(133) डॉ. शलीन डींगरा ..... जबलपुर (म.प्र.)
(134) प्रो.डॉ. लक्ष्मीकान्त चन्देला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(135) प्रो.डॉ. धर्मदास विश्वकर्मा ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(136) प्रो.डॉ. अर्चना भार्गव ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(137) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरें ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(138) डॉ. दीपक शिन्दे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(139) प्रो. अखिलेश जाधव ..... शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)
(140) प्रो.डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)
(141) डॉ. जोगेन्द्र सिंह ..... पेसिफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.)
(142) श्री पंकज साहू ..... पेसिफिक यूनिवर्सिटी, उदयपुर (राज.)
(143) डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी पारीख पी.जी. कॉलेज जयपुर (राज.)
(144) श्री गुनराज (शोधार्थी) ..... जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(145) श्री मदन मोहन ..... जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(146) प्रो.डॉ. मीनाक्षी माथुर ..... जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(147) अंकित दीक्षित (शोधार्थी) ..... जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(148) प्रो.डॉ. मंजु शर्मा ..... एम.एस.जे. राजकीय महाविद्यालय, भतरपुर (राज.)
(149) हजरा मेम्बर सा. ..... सिंघानिया यूनिवर्सिट पचेरी बासी, झुंझनू (राज.)
(150) प्रो. डॉ. ध्यानेश्वर खड़से ..... धनवते राष्ट्रीय महाविद्यालय, नागपुर (महाराष्ट्र)
(151) उषा पी ओमन ..... सी.एच.एम. महाविद्यालय उल्लास नगर, मुम्बई (महाराष्ट्र)
(152) डॉ. बी.एस. झरे ..... श्री शिवाजी महाविद्यालय, अकोला (महाराष्ट्र)
(153) सुश्री प्राची त्यागी ..... नेशनल एकेडमी ऑफ लिगल साईंस एण्ड रिसर्च, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश)
(154) श्री दिनेश त्यागी ..... श्री कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)

****

शोधार्थियों के लिये आवश्यक निर्देश–

- शोधपत्रों के उच्च स्तर हेतु शोध पत्रों के संदर्भों का स्पष्ट उल्लेख करते हुए संदर्भ सूची संलग्न करें जिसमें लेखक, पुस्तक का शीर्षक, पृष्ठ क्रमांक अनिवार्यत: लिखे।
- समाचार पत्र/पत्रिकाओं को संदर्भ के रूप में उपयोग लाने पर समाचार पत्र का शीर्षक व दिनांक व प्रकाशन स्थान अवश्य लिखें तथा पत्रिका का शीर्षक अवधि/दिनांक व पृष्ठ क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- शोध पत्र/शोध आलेख की मौलिकता के संबंध में समस्त जवाबदारी शोधार्थियों की है, अत: मौलिकता का प्रमाण पत्र अवश्य संलग्न करें।
- सदस्यता एवं शोध पत्र प्रकाशन राशि बैंक खाते में जमा कराने के पश्चात 09617239102/09425974314 पर अपना नाम, महाविद्यालय का नाम, पता व जमा राशि के साथ S.M.S. अवश्य करें।

Naveen Shodh Sansar
(An International Multidisciplinary Refereed Journal)
RNI No.-MPHIN28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320 - 8767

MEMBERSHIP CUM AUTHOR'S BIO-DATA FORM

(Photocopy of this form may be used) (1 Oct 2013 - 30 Sept 2014)

NAME (Author / Member) : Mr/Mrs/Ms/Prof/Dr : .....

NAME of of Co-Author(s) : .....

DESIGNATION : ..... SUBJECT: .....

NAME OF College/University/Institution : .....

HOME / Official Address : .....

.....

STATE : .....PIN : ..... COUNTRY : .....

Tel. No. (Res. /Office) : .....MOB : .....

E-mail Address : .....

Sign......

1. MEMBERSHIP will be valid for individual, University/College Institute Library-One Year SUBSCRIPTION RATES For printing/publication of one research paper.
   * Institutions Rs. 1,200/- per annum (without publication of paper)
   * Membership for Author Rs. 700/- for 1 Year.
   * Membership for Co-Author Rs. 700/- for 1 Year.
   * Publication of paper each after membership Rs. 800/- (2000 Words)
2. For Remittances can pay printing amount through DD/Cheque in favor of **'NAVEEN SHODH SANSAR'** payable at Neemuch (M.P) and send it by Registered Post. Fill information regarding Demand Draft.

   D.D. No. : .....Amount ..... Name of Bank .....Date : .....

   OR

   You can cash deposit / Online fund transfer on **NAVEEN SHODH SANSAR** Current A/c.

Bank Detail :-
NAVEEN SHODH SANSAR
Current A/c. no.:- 32768184328
Bank Name :- State Bank Of India
Branch :- Neemuch (M.P)
IFSC code:- SBIN0030055

Editor - Ashish Sharma
Add:- "Shri Shyam Bhawan"
795, Vikas Nagar Extension 14/2, Neemuch
(M.P) - 458441 Mob:- 09617239102
Email ID :- nssresearchjournal@gmail.com
Website :- www.nssresearchjournal.com

{All disputes are subject to exclusive jurisdiction of NEEMUCH Court Only (M.P.)}

Naveen Shodh Sansar

RNI No. - MPHIN28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320 - 8767

(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

COPYRIGHT AGREEMENT FORM:

(Photocopy of this form may be used)

For the submission of an research paper.

(mention Title of Manuscript): ----------

Name of Author :----------

Name of Co-Author ----------

I hereby declare, on behalf of myself and my co-authors (if any), that:

[1] I/we have taken due care that the scientific knowledge and all other statements contained in the research paper conform to true facts and authentic formulae and will not, if followed precisely, be detrimental to the user.

[2] No responsibility is assumed by **NAVEEN SHODH SANSAR** and the Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR** , its staff or members or the editorial board for any injury and/or damage to persons or property as a matter of products liability, negligence or otherwise, or from any use or operation of any methods, products instruction, advertisements or ideas contained in a publication by **NAVEEN SHODH SANSAR** and by the Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR.**

[3] I/we permit the adaptation, preparation of derivative works, oral presentation or distribution, along with the commercial application of the work.

[4] The research paper contains no such material that may be unlawful, defamatory, or which would, if published, in any way whatsoever, violate the terms and conditions as laid down in the agreement.

[5] The research paper submitted is an original work of mine/ours and has neither been published in any other peer-reviewed journal/ news paper/magazine/periodical/book nor is under consideration for publication by any of them. Also, the research paper does not contravene any existing copyright or any other third party rights.

[6] I am/we are the sole author(s) of the research paper and maintain the authority to enter into this agreement and the granting of rights to The Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR** ,Neemuch India and this does not infringe any clause of this agreement.

COPYRIGHT TRANSFER

Copyright to the above work (including without limitation, the right to publish the work in whole, or in part, in any and all forms) is here by transferred to **NAVEEN SHODH SANSAR**, Neemuch and to the Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR**, Neemuch proprietary right other than copyright is proclaimed by **NAVEEN SHODH SANSAR** and the Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR.**

Under the Following Conditions: Attribution :(i) The services of the original author must be acknowledged; (ii). In case of reuse or distribution, the agreement conditions must be clarified to the user of this work; (iii) Any of these conditions can be ignored on the consent of the author.

SIGN HERE FOR COPYRIGHT AGREEMENT & COPY RIGHT TRANSFER AGREEMENT :

I hereby certify that I am authorized to sign this document either in my own right or as an agent of my employer, and have made no changes to the current valid document supplied by **NAVEEN SHODH SANSAR** and the Publisher of **NAVEEN SHODH SANSAR.**

Write Authors Name and Designation :----------

Signature:----------Date:----------Place:----------

Write Co-Authors Name and Designation :----------

Signature:----------Date:----------Place:----------

My/Our above name research paper is originally written by me/us and all information are true. I/we will fully responsible for this research paper.

Name: ----------

College/ University :----------Subject:----------

Signature:----------Date:----------Place:----------

Guideline for Authors/Research Scholars

* This is a national/international refereed **NAVEEN SHODH SANSAR** Research Journal for all subjects.
* The selection and publication of research paper are done after recommendation of referees and subject experts.
* Your research papers should be original and unpublished.
* The research papers should be written according to **RESEARCH METHODOLOGY**. Although this is a national/international registered research journal but in any case or circumstances if any university/college/ institute/society denies to accept or recognize author's/research scholar's published research papers in the journal, then it will not be the responsibility of editor, publisher, management, editorial board, referee or subject experts.
* The research papers should have bibliography, footnotes, references, suggestions and findings.
* Only one printed copy of research journal will be sent to the author. No extra or second copy for co-author will be sent but if anybody requires extra copy of issue then in that case individual has to give an amount of Rs. 400/- for each single issue.
* The titles of your research papers should be appropriate.
* If your research paper is not accepted in that case **NAVEEN SHODH SANSAR** will refund your amount without any interest rate within 90 days after rejection of paper.
* You can also send your Research Papers by Website & Email id.
* Authors/Researchers should sent hardcopy of research paper with copyright form at **NAVEEN SHODH SANSAR** official Address.

Double Blind Peer Review Policy

Review System: Every article is processed by a masked peer review of double blind or by three referees and edited accordingly before publication. The criteria used for the acceptance of article are: contemporary relevance, updated literature, logical analysis, relevance to the global problem, sound methodology, contribution to knowledge and fairly good command on language. Selection of articles will be purely based on the experts' views and opinion. Authors will be communicated within Two months from the date of receipt of the manuscript. The editorial office will endeavor to assist where necessary with English/Hindi language editing but authors are hereby requested to seek local editing assistance as far as possible before submission. Papers with immediate relevance would be considered for early publication. The possible expectations will be in the case of occasional invited papers and editorials, or where a partial or entire issue is devoted to a special theme under the guidance of a Guest /Advisor Editor.

Compulsory Guidelines for Research Scholar Lecturers and Professors

* Research paper should be typed in MS Word 2007.
* Paper should be typed in A4 Size paper with standard margins of (2 cm/0.787 inches in all four sides)
* Title of Research Paper should be typed in 14 Size font and Bold with Underline.
* Authors / Research Scholar Names with College Address should be typed in 12 Size Font and Bold.
* Line Space Between should be 1.0 line spaces.
* Reference should be in Vancouver style at End of the paper (Endnote).
* For HINDI and SANSKRIT papers, use only these fonts : Kruti Dev-11 (Font size : 12)
* For ENGLISH papers, use only these fonts : Arial (Font size : 10).

'उच्च शिक्षा के गौरव'

माननीय श्री जयनारायणजी कान्सोटिया

(प्रमुख सचिव- उच्च शिक्षा, म.प्र. शासन, भोपाल)

मध्यप्रदेश में शोध कार्य के लिये नवाचार को प्रोत्साहित करने वाले व्यक्तित्व के रूप में आदरणीय जयनारायण कान्सोटियाजी को पहचाना जाता है। देश-विदेश में अध्ययन शोध की नवीन योजनाओं को गरीब, पिछड़े, अनुसूचित जाति-जनजातिय युवकों तक पहुंचाने का कार्य आप कर रहे है।

वर्ष 1989 के आई.ए.एस. अधिकारी होकर छतरपुर, राजगढ़, होशंगाबाद में कलेक्टर के पद पर रहे। विभिन्न विभागों में आयुक्त एवं सचिव के पद पर रहे। वाणिज्य उद्योग, एग्रो इन्डस्ट्रीज, आदिम जाति कल्याण विभाग, स्कूल शिक्षा व लोक स्वास्थ्य विभाग में सचिव रहे। वर्तमान में उच्च शिक्षा में प्रमुख सचिव पद पर उच्च शिक्षा के क्षेत्र में पहली बार अनुसूचित जाति-जनजाति के विद्यार्थियों को प्रतियोगिता परीक्षा की तैयारी हेतु पुस्तकों का सुझाव एवं क्रियान्वयन आपकी ओर से हुआ है। आपका प्रदेश के महाविद्यालयीन विद्यार्थियों के लिए पुस्तकों का अधिक बजट दिलाने का प्रयास रहा। आपकी प्रेरणा से शिक्षकों को शोधवृत्ति एवं टीचर फेलोशिप का लाभ मिल रहा है।

आपके मार्गदर्शन में उच्च शिक्षा विभाग नवाचारों की ओर अग्रसर हो रहा है। शिक्षा को प्रत्येक क्षेत्र में आपकी गहन अन्तर्दृष्टि से विभाग की समस्याओं का समाधान तीव्र गति से हो रहा है।

प्रशासनिक क्षेत्र के अधिकारी होने के साथ ही ईमानदारी, स्पष्टता, अनुशासन एवं समयबद्धता आपके व्यक्तित्व की विशेषता है। राजस्थान की समर भूमि के सपूत होने के कारण आपके भीतर समस्याओं को सुलझाने और समझने की अदम्य क्षमता है। संघर्ष की अपार शक्ति से इतने समय में प्रत्येक विभाग में आपने श्रेष्ठ कीर्तिमान स्थापित किये है। अकादमिक क्षेत्र में ऐसे व्यक्तित्व की उपस्थिति विभाग में नवीन स्फूर्ति दे सकेगी।

शिक्षा जैसे विभाग में जो सहिष्णुता, सहृदयता और चिन्तन होना चाहिये वह आपकी कार्यशैली में सहज ही उपलब्ध है। अपनी सहृदय कार्यशैली और मानवीय दृष्टिकोण के कारण विभाग के हजारों कर्मचारी- अधिकारी आपके प्रति श्रद्धावनत है। आपके यशस्वी जीवन की कामना करते हैं।

आशीष शर्मा

सम्पादक- नवीन शोध संसार

Reg. No. - 01/01/17206/06

NCTE भोपाल से मान्यता एवं विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन व माध्यमिक शिक्षा मण्डल भोपाल से सम्बद्धता प्राप्त

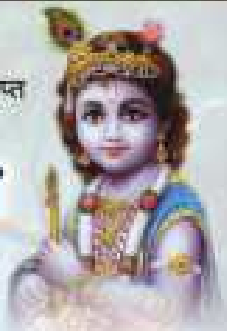

श्री कृष्णा कॉलेज ऑफ एजुकेशन, जावी

पाठ्यक्रम- बी.एड., डी.एड.

शिक्षा के आधुनिक युग में नीमच जिले में शिक्षा के स्तर को ऊंचा उठाने व ग्रामीण परिवेश में शिक्षा का प्रसार करने के उद्देश्य से श्री एस.आर. तिवारी शिक्षा प्रसार एवं जनकल्याण समिति भोपाल (म.प्र.) द्वारा ग्राम जावी में सत्र 2007 में श्री कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय की स्थापना की गई जिसमें बी.एड. तथा डी.एड. पाठ्यक्रम प्रारंभ किये गये। महाविद्यालय में अध्ययन कर अनेक छात्र-छात्राएँ वर्तमान में शासकीय सेवा में सेवारत है।

संस्था की विशेषताएँ

- संस्था का विशाल भवन खेल का मैदान
- विषय विशेषज्ञों द्वारा अध्यापन कार्य
- समय-समय पर विद्वानों के सेमिनार
- शिक्षा की गुणवत्ता पर विशेष ध्यान
- निर्धन व पिछड़े वर्ग के छात्र-छात्राओं के लिये छात्रवृत्ति की योजनाएँ का लाभ
- शत प्रतिशत परीक्षा परिणाम
- छात्रों के सृजनात्मक विकास हेतु सांस्कृतिक गतिविधियों का आयोजन

विगत 6 वर्षों से शिक्षा जगत् में कई नये आयाम छुते हुए निरंतर शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत संस्था

सम्पर्क - **श्री कृष्णा कॉलेज ऑफ एजुकेशन**

प्राईवेट बस स्टेण्ड के पास, जावी, जिला- नीमच (म.प्र.) ☎ 07423-269251, 269252

मो. 09425813678, 09685806338, 09752528637, 09425368551, 09928492892